Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

षष्टम खण्ड

भारत का इतिहास

इलियट एवं डाउसन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भारत का इतिहास

[Hindi Translation of "HISTORY OF INDIA"
Vol. VI by Elliot & Dowson]

षष्ठम खण्ड

मूल सम्पादक
ईलियट एवं डाउसन
अनुवादक
डॉ० मथुरालाल शर्मा
भूतपूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
पुनरीक्षक
डॉ० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव

शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी
पुस्तक-प्रकाशक एवं विक्रेता : आगरा-3

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

[केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय (शिक्षा तथा युवक सेवा मन्त्रालय) द्वारा प्रकाशकों के सहयोग से कार्यान्वित योजना के अन्तर्गत प्रकाशित]

प्रधान कार्यालय

अस्पताल रोड, आगरा-3

●

शाखाएँ

चौड़ा रास्ता, जयपुर ● खजूरी बाजार, इन्दौर

प्रथम संस्करण : 1971

●

मूल्य : पन्द्रह रुपये

राष्ट्रीय आर्ट प्रिन्टर्स, मोतीलाल नेहरू रोड, आगरा-3

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दो शब्द

हिन्दी के विकास और प्रसार के लिए शिक्षा विभाग तथा शिक्षा मन्त्रालय के तत्त्वावधान में पुस्तकों के प्रकाशन की विभिन्न योजनाएँ कार्यान्वित की जा रही हैं। हिन्दी में अभी तक ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में पर्याप्त साहित्य उपलब्ध नहीं है, इसलिए ऐसे साहित्य के प्रकाशन को विशेष प्रोत्साहन दिया जा रहा है। यह तो आवश्यक है ही कि ऐसी पुस्तकें उच्चकोटि की हों, किन्तु यह भी जरूरी है कि वे अधिक महँगी न हों ताकि सामान्य हिन्दी पाठक उन्हें खरीदकर पढ़ सकें। इन उद्देश्यों को सामने रखते हुए जो योजनाएँ बनायी गयी हैं, उनमें से एक योजना प्रकाशकों के सहयोग से पुस्तकें प्रकाशित करने की हैं। इस योजना के अधीन भारत सरकार प्रकाशित पुस्तकों की निश्चित संख्या में प्रतियाँ खरीदकर उन्हें मदद पहुंचाती है।

कुछ वर्ष पहले इसी योजना के अन्तर्गत मानक ग्रन्थों के प्रकाशन की भी व्यवस्था थी। किन्तु अब केवल लोकप्रिय पुस्तकें ही स्वीकार की जाती हैं। तभी प्रस्तुत पुस्तक 'भारत का इतिहास खण्ड 6' स्वीकृत की गई थी। प्रकाशक खण्ड 6 तब प्रकाशित नहीं कर पाए थे। फिर भी चूंकि हम प्रतिबद्ध थे इसलिए इसे हमने योजना के अन्तर्गत ले लिया।

हमें विश्वास है कि शासन और प्रकाशकों के सहयोग से प्रकाशित साहित्य हिन्दी को समृद्ध बनाने में सहायक सिद्ध होगा और साथ ही इसके द्वारा ज्ञान-विज्ञान से सम्बन्धित अधिकाधिक पुस्तकें हिन्दी के पाठकों को उपलब्ध हो सकेंगी।

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय

(गोपाल शर्मा)
निदेशक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भूमिका

पाँचवी जिल्द में अकवर के राज्य का इतिहास समाप्त नहीं हुआ था। वह इस जिल्द में समाप्त हुआ है। इसमें अबुल फजल के अकबरनामा से वहुत उद्धरण लिए गए हैं। यह महान ग्रन्थ है परन्तु अब तक योरोपीय पाठकों को इसका बहुत कम ज्ञान है। उन्होंने इसकी केवल अस्पष्ट सी प्रसिद्धि ही सुनी है। अकवर के राज्य के अन्तिम वर्षों से सम्बन्ध रखने वाले अवतरण इनायतुल्ला के अकवरनामे से लिए गए हैं। इससे भी छोटा एक अकवरनामा और है जो शेख इल्लाहदाद ने लिखा है। इसे फौजी सरहिन्दी भी कहते हैं। परन्तु इस ग्रन्थ से जितनी आशा थी उतनी पूरी नहीं होती क्योंकि यह तबकात-ए-अकवरी और अबुल फजल के महानतर ग्रन्थ का संकलन-मात्र प्रतीत होता है। असदवेग के संस्मरणों से कुछ विलक्षण और रोचक व्यक्तिगत विवरण लिए गए हैं। यह लेखक अकबर की सेवा में एक अधिकारी था। इसके वयान से शाही सरकार पर अच्छा प्रकाश नहीं पड़ता और बादशाह का व्यक्तिगत चरित्र भी ऊँचा नहीं प्रतीत होता। अकवर के जीवन के और काल पर लिखने वाले लेखक अब समाप्त हो चुके हैं। उन सबके ग्रन्थों को परिश्रमपूर्वक खोज लिया गया है और अब अधिक बात मालूम होने की कोई सम्भावना नहीं है।

इस जिल्द के अधिकांश भाग में सर एच० एम० ईलियट के वे लेख हैं जो उसने मूल प्रथम जिल्द में लिखे थे। उस प्रकाशन के सब विषय अब दुबारा छापे गए हैं।

जहाँगीर के राज्य का इतिहास प्राय: उसी के लिखे हुए या उसके निर्देश के अनुसार तैयार किए हुए संस्मरणों पर निर्भर है। यद्यपि इस शासन के और भी इतिहासकार हैं परन्तु उन सबने अपनी सामग्री इस संस्मरणों से ही जुटाई है और केवल कहीं-कहीं ही स्वतन्त्र बात लिखी है। वहुत अर्से से इस बात का पता है कि ऐसे कई विभिन्न ग्रन्थ हैं जो जहाँगीर के आत्म-चरित्र या आत्म-जीवनी होने का दावा करते हैं। इस जिल्द में कई अवतरण दिए गए हैं। इनसे इस बात का सन्देह नहीं रहता कि इनमें कौनसा ग्रन्थ अधिक मान्य और प्रामाणिक है।

परिशिष्ट में स्वयं सर एच० एम० ईलियट ने 'भारतवर्ष में बारूद का प्रारम्भिक उपयोग' विषय पर एक नोट लिखा है। इसमें कुछ परिवर्धन और परिवर्तन किए गए हैं। जहाँगीर की संस्थाओं पर सर एच० एम० ईलियट ने कुछ अपने विचार प्रकट किए हैं। दूसरे नोट उसके निर्देश के अनुसार तैयार किए गए हैं। सर एच० एम० ईलियट ने इस जिल्द में फरिश्ता के महान इतिहास पर कुछ लिखा है। इस ग्रन्थ की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भूमिका का पहले कोई अनुवाद नहीं हुआ है। सम्पादक ने इस अभाव की पूर्ति कर दी है।

निम्नलिखित सूची में इस जिल्द में दिए हुए लेखों और उनके लेखकों के नाम दिए हुए हैं :

XLII अबुलफजल का अकबरनामा—सम्पादक
XLIII तकमील-ए-अकबरनामा—लेखक चामर्स
XLIV फैजी सरहिन्दी का अकबरनामा—सम्पादक आर० एफ० मेकेन्जी
XLV वाकियात-ए-शेख फैजी—ले० प्रीचर्ड
XLVI वीकाय असद वेग के वीकाय—बी० डब्लू० चेपमेन
XLVII तारीख-ए-हक्की—पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित
XLVIII जुब्दात-उत्त-तवारीख ,,
XLIX रोजत-उत्त-ताहिरीन ,,
XLX मुन्तख्वाब-उत्त-तवारीख ,,
XLXI तारीख-ए-फरिश्ता ,,
XLXII मआसिर-ए-रहीमी ,,
XLXIII अन्फा-उल-अखबार
XLXIV तारीख-ए-सलीमशाही या तुजुक-ए-जहाँगीरी—मेजर प्राइस
XLXV वाकियात-ए-जहाँगीरी—सर एच० एम० ईलियट, सम्पादक और अन्य लोग
XLVI ततिम्मा-ए-वाकियात-ए-जहाँगीरी—सम्पादक
XLVII इकवालनामा—सम्पादक
XLVIII मआसिर-ए-जहाँगीरी—सर एच० एम० ईलियट और सम्पादक
XLIX इन्तख्वाब-ए-जहाँगीरशाही—सर एच० एम० ईलियट और एक मुन्शी
XLX सुवह-ए-सादिक—सर एच० एम० ईलियट

परिशिष्ट

(क) भारत में बारूद का प्रारम्भिक प्रयोग—पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित
(ख) अबुल हक देहलवी के ग्रन्थ से अवतरण—मेजर ए० आर० फुलर
(ग) जहाँगीर के आदेशों की समीक्षा—सर एच० एम० ईलियट
(घ) शश फतह-ए-कांगड़ा से अनुवाद—एक मुंशी और सर एच० एम० ईलियट
(च) फरिश्ता के इतिहास की भूमिका का अनुवाद—सम्पादक
(छ) ग्रन्थ सूची—पुरानी ज़िल्द से पुनर्मुद्रित।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विषय-सूची

अकबरनामा
(सम्पादक) 1

इनायतउल्ला का तकमील-ए-अकबरनामा
(चार्मर्स) 79

फैजी सरहिन्दी का अकबरनामा
(आर० एफ० मैकेन्जी) 89

वाकियात-ए-शेख फैजी
(प्रीचर्ड) 113

वीकाय-ए-असदबेग
(वी० डब्ल्यू० चेपमेन) 115

तारीख-ए-हक्की
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 134

जुब्दात-उत्त-तवारीख
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 139

रोजत-उत्त-ताहिरीन
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 148

मुन्तखबाब-उत्त-तवारीख
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 153

तारीख-ए-फरिश्ता
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 157

मआसिर-ए-रहीमी
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 178

अन्फा-उल-अखबार
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 183

तारीख-ए-सलीमशाही या तुजुक-ए-जहाँगीरी
(मेजर प्राइस) 193

द्वाजदा-साल-जहाँगीरी या वाकियात-ए-जहाँगीरी
(सर एच० एम० ईलियट, सम्पादक तथा अन्य लोग) 207

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ततिम्मा-ए-वाकियात-ए-जहाँगीरी
(सम्पादक) 293
इकबालनामा-ए-जहाँगीरी
(सम्पादक) 299
मआसिर-ए-जहाँगीरी
(सर एच० एम० ईलियट तथा सम्पादक) 329
इन्तखाब-ए-जहाँगीरशाही
(सर एच० एम० ईलियट तथा एक मुंशी) 334
सुबह-ए-सादिक
(सर एच० एम० ईलियट) 339
परिशिष्ट
(क) भारत में बारूद का प्रारम्भिक प्रयोग
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 341
(ख) अबुल हक देहलवी के ग्रन्थ से अवतरण
(मेजर ए० आर० फुलर) 359
(ग) जहाँगीर के आदेशों की समीक्षा
(सर एच० एम० ईलियट) 366
(घ) शश फतह-ए-काँगड़ा से अनुवाद
(सर एच० एम० ईलियट तथा एक मुंशी) 387
(च) फरिश्ता के इतिहास की भूमिका का अनुवाद
(सम्पादक) 399
(छ) ग्रन्थ-सूची
(पुरानी जिल्द से पुनर्मुद्रित) 430

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अकबरनामा

लेखक : शेख अबुलफजल

अबुलफजल अल्लामी शेख मुबारक का पुत्र और शेख खिजर का पौत्र था। शेख खिजर सिन्ध से हिन्दुस्तान में आकर बस गया था। शेख मुबारक का जन्म नागौर में हुआ था और बचपन में ही इसकी महान बौद्धिक प्रतिभा प्रकट होने लग गई थी। वह अपने समय का एक बहुत बड़ा विद्वान हुआ और अकबर के समय में अपने पाण्डित्य और धार्मिक विषयों पर उदार विचार के लिए बड़ा प्रसिद्ध हुआ। उसके कई पुत्र थे परन्तु उनमें से दो अत्यन्त प्रसिद्ध हुए। सबसे बड़ा शेख अबुलफैज था जो फैजी के नाम से प्रसिद्ध है। वह अपने समय का सबसे अधिक लोकप्रिय कवि था। वह सदा अकबर के साथ रहता था और उसका बड़ा कृपापात्र था। अकबर ने उसे 'कविराज' की उपाधि दी थी। उसकी कविताओं का इस समय भी बड़ा आदर है और प्रधानतम भारतीय कवि अमीर खुसरो के बाद इसी की गणना होती है।

अबुलफजल (शेख मुबारक का) दूसरा पुत्र था। उसका जन्म 14 जनवरी 1551 को हुआ था। उसकी शिक्षा पिता के ही निरीक्षण में हुई थी और वह बड़ा ही लगन वाला छात्र था। उसका अध्ययन बड़ा विस्तृत था। बीस वर्ष की अवस्था से पूर्व ही उसने गहन और आलोचनात्मक पाण्डित्य की प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। फिर उसकी विद्वत्ता के ही कारण उसे अल्लामी कहा जाने लगा। फैजी की कविताओं की ओर बादशाह का ध्यान जल्दी ही आकर्षित हुआ और उसने इस युवक कवि को अपने दरबार में बुलाया। यह उसके राज्य का बीसवाँ वर्ष था और उस समय वह चित्तौड़ के घेरे में व्यस्त था। फैजी शीघ्र ही उसका पूर्ण कृपापात्र बन गया और उसका बड़ा प्रभाव जम गया। उसके द्वारा ही अबुलफजल का सत्रह वर्ष की अवस्था में दरबार में परिचय हो गया। उसके पाण्डित्य की तत्काल धाक जम गई और प्रतिवर्ष उसके प्रति बादशाह की कृपा बढ़ने लगी और उसके प्रभाव में भी वृद्धि होने लगी। अन्त में वह साम्राज्य का प्रधानमन्त्री और चार हजारी मनसबदार बन गया। दरबारी और मन्त्री की हैसियत से अबुलफजल पर बादशाह का असीम विश्वास था। उसने एक नागरिक और सैनिक दोनों ही रूपों में अपने कर्त्तव्य का पालन बड़ी योग्यता और सफलता के साथ किया। अगले पृष्ठों में कुछ ऐसे अवतरण हैं जिनसे विदित होगा कि दक्षिण में उसने कैसी सेवाएँ की थीं। असीरगढ़ के घेरे के समय एक घटना घटी जिसका यहाँ उल्लेख करना असंगत न होगा। यह उसके लिए

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सम्मान की बात है। दुर्ग स्वामी बहादुरखाँ अबुलफजल की कृपा प्राप्त करना चाहता था और उसे आशा थी कि उसके प्रभाव से बादशाह की अप्रसन्नता टल जायगी। इसलिए उसने अबुलफजल के पास कुछ भेंटें भेजीं। परन्तु उसने यह कहकर वे वापिस कर दीं कि "मैंने यह प्रण कर लिया है कि जब तक ये चार शर्तें पूरी न हो जाएँगी तब तक मैं कोई भेंट स्वीकार नहीं करूँगा : 1. मित्रता, 2. मैं किसी भी भेंट को अत्यधिक मूल्यवान नहीं समझूँगा, 3. मुझे भेंट प्राप्त करने के लिए उत्सुक नहीं होना चाहिए, 4. मुझे यह देखना चाहिए कि भेंट की क्या आवश्यकता है। अब यदि प्रथम तीन शर्तें पूरी भी हो जाएँ तो भी सम्राट की मेरे ऊपर इतनी कृपा है कि मुझमें किसी से कोई भेंट लेने की इच्छा ही नहीं रही।"

फैजी और अबुलफजल दोनों ने अपने पिता के से उदार विचार सीखे थे और उनको ही अधिक अपनाया। मुसलमान लोग इन्हें धर्म विरोधी और काफिर, स्वतन्त्र विचारक और सत्यनाशक तथा मुसलमानों को धोखा देने वाला समझते थे। दोनों भाइयों के दरबार में आने से पहले ही अकबर की सहिष्णुता, प्रारम्भिक शंकाएँ और अन्य धर्मों के सिद्धान्तों के प्रति जिज्ञासा प्रकाश में आ चुकी थीं। दोनों भाइयों ने उसमें अग्नि तो जाग्रत नहीं की, परन्तु उसको और बढ़ाया और उसे जीवित रखा। ये दोनों सम्राट के बड़े ही प्रिय मित्र थे। इनकी भावनाएँ और सम्मतियाँ उसी की सी थीं बल्कि अपेक्षाकृत अधिक निश्चित थीं। उनके साथ वह प्रायः चर्चा किया करता था और धार्मिक विषयों पर खूब बहस हुआ करती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि वे एक-दूसरे से प्रभावित हुए और उन्हें अनेक प्रकार की शंकाएँ और सन्देह उत्पन्न हुए और अन्त में उन्होंने इस्लाम का परित्याग कर दिया और दीन-ए-इलाही की स्थापना की। अकबर इस नये धर्म का अधिष्ठाता था और उसके बाद अबुलफजल और फैजी की गणना थी।

शहजादा सलीम को, जो बाद में बादशाह जहाँगीर बना, अबुलफजल से बड़ी घृणा थी। यह मन्त्री अपने स्वामी का बहुत ही वफादार था और युवराज की आकांक्षाओं को इसने ऐसी सफलता के साथ मटियामेट कर दिया था कि वह उसका घृणा का पात्र बन गया। जहाँगीर ने अपने संस्मरणों में लिखा है कि यह उसका मित्र नहीं था। शहजादा ने अवसर देखकर इस व्यक्ति को, जिससे वह डरता था और जिसके प्रति वह घृणा करता था, समाप्त कर दिया। शहजादा एक बार ही नहीं, कई बार विद्रोह के चिह्न प्रकट कर चुका था और उसका इरादा स्वतन्त्र होने का था। पिता के सैंतालीस वर्ष के शासन-काल में शहजादे की महत्त्वाकांक्षा स्पष्ट रूप से प्रकट हो गई और सम्राट को उसके प्रति अविश्वास हो गया। इस समय अबुलफजल दक्षिण में सेना का नेतृत्व कर रहा था। अकबर ने सोचा कि उसकी सहायता और सलाह आवश्यक है। इसलिए उसने सन्देश भेजा कि वह तुरन्त दरबार में आये। अबुलफजल ने तुरन्त आज्ञा का पालन किया और थोड़े-से आदमियों के साथ आगरे के लिए रवाना हो गया। इससे शहजादे को उसका अन्त

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करने का अवसर मिल गया । शहजादे ने बुन्देला राजा वीरसिंह को उकसाया कि मन्त्री को मार्ग में ही रोककर मार डाले । अबुलफजल को इस खतरे से सचेत कर दिया गया था परन्तु उसने मार्ग में एक तरफ मुड़ने से इन्कार किया । शुक्रवार, 4 रबी-उल-अव्वल (12 अगस्त, 1602) को उस पर नरवर से छः कोस की दूरी पर बुन्देला ने आक्रमण किया । अबुलफजल ने थोड़ी देर वीरतापूर्वक सामना किया परन्तु वह धराशाई हो गया । उसका सिर काटकर शहजादे के पास भेज दिया गया । जहाँगीर के राज्य के आरम्भ में ही हत्यारे की बड़ी पदोन्नति हुई और जहाँगीर ने अपने संस्मरणों में लिखा कि उसने पुरस्कार का वचन देकर यह हत्या करवाई थी और यह आवश्यक भी थी । अपने मन्त्री की मृत्यु पर अकबर को असीम सन्ताप हुआ और उसने वीरसिंह को दण्ड देने के लिए सक्रिय प्रयत्न किया । उसे स्थान-स्थान से खदेड़ा गया परन्तु वह बाल-बाल बचता रहा । फिर सम्राट की मृत्यु हो गई जिससे उसके खतरे का अन्त हो गया और उसके पुरस्कार और सम्मान का मार्ग खुल गया ।

मआसिर-उल-उमरा के लेखक ने अपने संस्मरणों में यह लिखा है : "प्रायः यह कहा जाता है कि अबुलफजल काफिर था, कुछ कहते हैं कि वह हिन्दू था या अग्निपूजक था या स्वतन्त्र विचारक था और कुछ तो यहाँ तक कहते हैं कि वह नास्तिक था । परन्तु अन्य लोग अधिक न्याय की बात कहते हैं । वे कहते हैं वह सब धर्मों को मानता था और सूफियों की भांति वह अपने आपको पैगम्बर के कानून से ऊपर समझता था । इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसका चरित्र बड़ा ऊंचा था और वह सब लोगों के साथ शान्तिपूर्वक रहने का इच्छुक था । उसने कभी कोई अनुचित बात नहीं कही । उसके घर में गाली, वेतन रोकना, अर्थ-दण्ड आदि का अस्तित्व नहीं था और उसके नौकर कभी अनुपस्थित नहीं रहते थे । यदि वह किसी भी आदमी को नियुक्त कर देता जो बाद में बेकार सिद्ध होता तो वह उसको हटाता नहीं था परन्तु जहाँ तक सम्भव होता वहाँ तक उसे बने रहने देता था क्योंकि वह प्रायः कहा करता था कि यदि वह उसको हटाएगा तो लोग कहेंगे कि उसमें व्यक्ति को परखने की बुद्धि का अभाव है । इसलिए उसने अनुपयुक्त व्यक्ति की नियुक्ति की । जिस दिन सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता था, उस दिन वह अपने सारे घर का निरीक्षण करता था और सूची अपने पास रखा करता था । वह गत वर्ष की हिसाब बहियों को जला देता था । वह अपने कपड़ों की सब सन्दूकें अपने नौकरों को दे दिया करता था और अपने पाजामे अपने सामने जलवा देता था ।"

"उसकी भूख बड़ी असाधारण थी । ऐसा कहा जाता है कि पानी और शोरबे के अतिरिक्त वह बाईस सेर भोजन करता था । उसका पुत्र अब्दुल रहमान उसके साथ बैठता था । उसके रसोई का जमादार एक मुसलमान था वह भी हाजिर रहता था और वे दोनों देखा करते थे कि अबुलफजल एक ही चीज को दुबारा खाता है या नहीं । यदि वह खाता था तो वही चीज दूसरे दिन बनायी जाती थी ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यदि उसे किसी चीज में स्वाद नहीं आता था तो वह अपने पुत्र से कहता था कि इसको चखो और फिर उसे दरोगा को दे देता था। परन्तु इस विषय में एक भी शब्द नहीं बोला जाता था। जब अबुलफजल दक्खिन में था तो उसके खाने का विलास इतना बढ़ गया था कि लोगों को विश्वास नहीं होता था। एक बहुत बड़े डेरे में एक हजार चीजें बनाकर रखी जाती थीं और अमीरों में विभक्त कर दी जाती थीं। उसी के पास एक दूसरा डेरा लगता था जिसमें गरीब और अमीर सब लोग खाने के लिए आते थे और दिन-भर खिचड़ी पकती रहती थी और जो माँगता था उसे दी जाती थी।"

"लेखक की हैसियत से अबुलफजल अद्वितीय है। उसकी शैली महान है और दूसरे मुंशियों की भाँति उसमें न पारिभाषिकता है और न सारहीन अलंकरणता है। उसके शब्दों में ओज है, उसके कार्यों की रचना सुन्दर है, उसके समास उपयुक्त हैं और उसकी यति बड़ी मधुर है। वास्तव में किसी अन्य लेखक के लिए उसका अनुकरण करना बहुत कठिन है।"

दूसरे देशी लेखकों ने भी इसी प्रकार की सम्मतियाँ प्रकट की हैं। **ब्लोचमैन** ने उपर्युक्त अनुवाद किया है। वह कहता है कि "अबुलफजल की शैली के विषय में जो उपर्युक्त बात कही गयी है उसके बाद और कुछ लिखना अनावश्यक है। बुखारा का बादशाह अब्दुल्ला कहा करता था कि वह अकबर के तीर से उतना नहीं डरता जितना अबुलफजल की कलम से डरता है। भारतवर्ष में सर्वत्र उसको महान् मुंशी माना जाता है। उसके साहित्य का सब मदरसों में अध्ययन किया जाता है। प्रारम्भ में छात्र को वह कठिन और परेशान करने वाला प्रतीत होता है परन्तु वे सब प्रकार से अच्छी शैली के नमूने हैं। यदि फारसी भाषा का अच्छा ज्ञान हो और अबुलफजल की शैली में अच्छी गति हो तब उसके ग्रन्थों को पढ़ने में आनन्द आता है। उसकी रचना अद्वितीय है। उसका अध्ययन तो सर्वत्र होता है परन्तु उसका अनुसरण न कोई कर सकता है और न अभी तक किसी ने किया है।" 'अकबरनामा' को पूरा करने वाले लेखक इनायतउल्ला ने एक उचित आलोचना की है जो ध्यान देने योग्य है। वह कहता है कि इस ग्रन्थ की अगली जिल्दों में पहली जिल्दों की अपेक्षा अधिक खींचतान और कठिनता है। शैली वास्तव में बहुत जटिल और भव्य है और कितने ही असाधारण और विदेशी शब्दों का प्रयोग किया गया है। इसलिए लेखक के भाव को समझने के लिए अविराम ध्यान की आवश्यकता है।

"अबुलफजल कई प्रसिद्ध ग्रन्थों का लेखक है। जब सम्राट से उसका परिचय हुआ तो उसने कुरान की सूरत पर लिखी हुई अपनी एक टीका जिसका नाम उसने 'आयातुल्ला कुर्सी' रखा था, भेंट की थी। परन्तु बदायूँनी यह बात कहने से नहीं चूकता कि लोग कहते थे कि यह उसके पिता ने लिखी थी। अबुलफजल ने कितने ही बादशाहों को और सरदारों को पत्र लिखे थे जिनका संग्रह 'मकतुबातुल्लअलामी'

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहलाता है परन्तु यह 'इन्शाम-ए-अबुलफजल' के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। उसका ग्रन्थ 'अलार-ए-दानिश' 'कलीला और दमना' नामक अरबी पुस्तक का अनुवाद है। उसने कई छोटे-छोटे ग्रन्थ भी लिखे थे जो प्रसिद्ध नहीं हैं। उसकी सबसे बड़ी कृति अकबरनामा है जो दो जिल्दों में है। 'आइने अकबरी' भी उसी ने लिखी है और यह अकबरनामा की तीसरी जिल्द मानी जाती है परन्तु आईन को पृथक पुस्तक मानना चाहिए। इसका अनुवाद **"ग्लेडिविन'** ने किया था जो 1800 ई० में प्रकाशित हुआ था। उस समय यह बड़ी ही श्रेष्ठ कृति मानी जाती थी परन्तु इसमें कई कमियाँ व अशुद्धियाँ थीं। इसकी प्रथम जिल्द का नया अनुवाद ब्लोचमैन ने किया है। ब्लोचमैन कलकत्ता, मदरसा में अध्यापक है। यह अभी प्रकाशित हुआ है। यह ठीक और प्रशंसनीय अनुवाद है और कई टिप्पणियों से अलंकृत है जिनसे लेखक का गहन पाण्डित्य और महाशोध प्रकट होता है। इसमें अकबर के समय के सब अमीर और प्रसिद्ध पुरुषों के जीवन-वृत्तान्त भी हैं। जब यह अनुवाद पूरा हो जायगा तो यह मूल के समकक्ष माना जायगा। अकबरनामा की प्रथम जिल्द में केवल इतिहास है और इसमें तैमूर से बाबर तक अकबर के पूर्वजों का वृत्तान्त है। इसमें हुमायूँ के राज्यकाल का पूरा इतिहास है जिसमें से अगले पृष्ठों में अवतरण दिए जाएँगे। अकबर के राज्य का इतिहास वर्ष-क्रम से और उसके राज्यारोहण से उसके राज्यकाल के छियालीसवें वर्ष तक अर्थात् 1602 तक पूरा लिखा गया है। इसमें से बहुत-से अवतरण लिए गए हैं।

भारतवर्ष की अपेक्षा यूरोप में 'अकबरनामा' की अधिक प्रसिद्धि है। 'मआसिर-उल-उमरा' से उद्धत किए हुए उपर्युक्त अवतरण से एशिया निवासियों की इस पुस्तक के विषय में गम्भीर सम्मति प्रकट होती है पर सर हेनरी इलियट के विचार एलफिन्सटन से मिलते-जुलते हैं। मोरले ने भी उसको स्वीकार किया है। वह लिखता है "यूरोप में अकबरनामा की प्रामाणिकता ऊँची नहीं मानी जाती है और सरलता या स्पष्ट-वादिता की दृष्टि से अबुलफजल की एक क्षण के लिए भी कौमीनीज, सलै, क्लेरेन्डन और अन्य मन्त्रियों से तुलना नहीं की जा सकती जिन्होंने अपने समय का इतिहास लिखा है। यद्यपि उसकी दृष्टि बड़ी व्यापक और उदार थी और उसकी प्रतिभा असाधारण थी तो भी एलफिन्सटन के मतानुसार वह ओजप्रिय था। उसकी शैली अस्वाभाविक थी जिसको भारतवर्ष में अच्छा माना जाता है। इसके अतिरिक्त वह परिश्रमशील दरबारी था। वह गुणों का गान करने के लिए और दोषों को छिपाने के लिए तथा अपने स्वामी की और जिनसे उसका स्नेह था उनकी प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिए सदा उत्सुक रहता था। उसने तारीखें सही लिखी हैं। घटनाओं का वर्णन ठीक किया है परन्तु वह खुले दिल से पक्षपात करता है। इसका हमको निरन्तर ध्यान रखना पड़ता है। इससे भी अधिक वह अपने कृपापात्रों की बड़ी ही प्रशसा और चाटुकारिता करता है और वह बेईमान तरीके से कहानियाँ गढ़ता है और सन्देह उत्पन्न करता है। वह इस बात की चिन्ता नहीं करता कि कार्यक्षमता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और कर्त्ता का कोई दोष नहीं था। उसके कथानक निर्वल और अस्पष्ट हैं और साधारण सम्मितियों और विचारों से लदे हुए हैं और सबका अन्त अपने स्वामी की प्रशंसा के साथ करता है। जिस बात से बादशाह की भलाई, बुद्धि या शक्ति में कोई कमी प्रकट हो उसको वह छोड़ देता है या और ही ढंग से लिख देता है। वह आदि से अन्त तक इतनी प्रशंसा करता है कि पाठक को लेखक से और प्रधान पात्र से घृणा होने लगती है। इन साहित्यिक उड़ानों में अकबर के गुण छिप जाते हैं। दूसरे लेखकों से हमें पता लगता है कि अकबर के क्या उद्देश्य थे और उसे क्या कठिनाइयाँ थीं और किन साधनों से उन्हें पार किया। अकबर के स्वभाव से पूर्ण परिचित लेखक की पुस्तक जिसमें इतनी चाटुकारिता भरी हुई थी उसी को भेंट की गई थी और उसी ने उसको जांचा था। इससे ऐसा प्रकट होता है कि इस शासक में बड़ा अभिमान था और शायद उसके चरित्र पर यही एक धब्बा था और दूसरी दृष्टि से उसका चरित्र प्रशंसनीय था।

सम्पूर्ण ग्रन्थ की ध्यानपूर्वक परीक्षा करने पर और उसके अनेक अवतरणों का अनुवाद करने पर इस ग्रंथ के सम्पादक को बाध्य होकर इस खुली निन्दा को अस्वीकार करना पड़ता है। यह सच है कि कुछ अवतरणों में अबुलफजल ने लिखा है कि अकबर को आगे की बात पहले ही सूझ जाती थी। इससे प्रकट होता है कि वह उसको भविष्यवक्ता और दैवी-शक्ति सम्पन्न समझता था। **प्राईस** ने लिखा है कि वह बादशाह का इतना सम्मान करता था कि मानो पूजा कर रहा हो। इन इने-गिने धब्बों के अतिरिक्त उसके दोष ओजप्रिय लेखक के हैं, चाटुकार के नहीं और उसकी शैली को भी एशिया के पैमानों से जाँचना चाहिए। उसकी यूरोपीय जीवन-चरित्रों से तुलना नहीं करना चाहिए। यद्यपि सम्पादक इस निर्णय पर पहुंच चुका था तो भी वह इसको प्रकट करने में हिचकता था, परन्तु एक योग्य अधिकारी की स्वतन्त्र सम्मति से उसके विचारों की पुष्टि होती है। इसलिए उसने यह लिखा है। 'आइन-ए-अकबरी' की भूमिका में जो अभी इङ्गलैण्ड पहुँची है **ब्लोचमैन** ने लिखा है, "प्रायः यूरोपीय लेखकों ने अबुलफजल पर यह दोष लगाया है कि वह चाटुकार है और जान-बूझकर ऐसी बातें छिपाई हैं जिससे उसके स्वामी की कीर्ति पर धब्बा लगे परन्तु अकबरनामा के अध्ययन से प्रकट होगा कि यह दोषारोपण निर्मूल है और यदि हम उसके ग्रन्थों की पूर्व के दूसरे इतिहासों में तुलना करें तो हमें पता लगेगा कि वह प्रशंसा तो करता है परन्तु अन्य भारतीय इतिहासकारों और कवियों की अपेक्षा वह कम करता है। उसमें अधिक सौन्दर्य और आत्मसम्मान है। किसी भी भारतीय लेखक ने उस पर चाटुकारिता का आरोप नहीं किया है। हमको यह ध्यान रखना चाहिए कि नीतिशास्त्र के सब भारतीय ग्रन्थों में यह लिखा हुआ है कि बादशाह की सम्मति को बिना शर्त के स्वीकार करना चाहिए, चाहे वह ठीक हो या असंगत। क्योंकि पूर्व की समस्त कविता में चाटुकारिता भरी हुई है जिसके सामने वर्तमान कृतियाँ फीकी पड़

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जाती हैं। इस दृष्टि से अबुलफजल क्षम्य है। वह प्रशंसा इसलिए करता है कि उसे सच्चा नायक मिल गया है।

मेजर प्राईस ने अपने "रिट्रोस्पैक्ट ऑफ मोहम्मडन हिस्ट्री" में तैमूर और अकबर के बीच के काल के लिए अकबरनामा का संक्षेप किया है। दूसरे स्थान पर उसने चित्तौड़-विजय का भी अनुवाद किया है। **मेजर स्टुअर्ट** ने सूरत विजय का अनुवाद किया है। रायल एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में एक हस्तलिखित पुस्तक है। यह मद्रास आर्मी के लेफ्टीनेन्ट **चेम्बर्स** का किया हुआ इस सम्पूर्ण ग्रन्थ का संक्षिप्त अनुवाद है। **एलफिन्सटन** ने अपने इतिहास के लिए इस अनुवाद का उपयोग किया था और जब इस ग्रन्थ का सम्पादक अकबरनामा पर काम कर रहा था तो कुछ समय के लिए उसने भी इससे लाभ उठाया था। आगे जो अवतरण दिए हुए हैं उनका अनुवाद सम्पादक ने किया है।

अकबरनामा का एक अश्ममुद्रित संस्करण तीन जिल्दों में पटियाला के राजा के खर्च से सन् 1867 में लखनऊ में छपा था। यह सुन्दर और मूल्यवान ग्रन्थ है। परन्तु इसमें बड़ी-बड़ी और स्पष्ट भूलें भरी पड़ी हैं और कई स्थल छूट गये हैं। राज्य के सत्रहवें महत्वपूर्ण वर्ष के छः महीने का हाल बिलकुल छोड़ दिया गया है क्योंकि अब तक यही प्रकाशित हुआ है, इसका निम्नलिखित अवतरणों में हवाला दिया गया है परन्तु उसने मुख्यतः रॉयल एशियाटिक सोसायटी के एक उत्तम और शिकस्त हस्तलिखित प्रति का आश्रय लिया है। उसने इण्डिया आफिस के पुस्तकालय की हस्तलिखित प्रति का भी उपयोग किया है और दूसरी भी जिल्दें देखी हैं जिनमें इसके कुछ अंश दिए हुए हैं। बिब्लियोथिका इण्डिका नामक पुस्तकमाला में इसका एक नया संस्करण निकलने की आशा है।

अकबरनामा का हिन्दुस्तानी अनुवाद मोहम्मद खलील अलीखाँ ने किया है। इसका नाम वाकियात-ए-अकबरी है।

अवतरण

बादशाह हुमायूँ का राज्य

कालिंजर

[मूल पाठ जिल्द 1, पृष्ठ 152] अपने राज्यारोहण के पाँच या छह मास पश्चात् कालिंजर दुर्ग को जीतने के लिए हुमायूँ ने कूच किया। वह लगभग एक मास तक इस स्थान को घेरे रहा। तब दुर्गरक्षक बड़े परेशान हो गए और दुर्गाध्यक्ष ने अधीनता स्वीकार कर ली। उसने कर रूप में बारह मन सोना और अन्य वस्तुएं दीं और बादशाह ने उसकी प्रार्थनाएँ और रोना सुनकर उसे क्षमा कर दिया और चुनार दुर्ग को विजय करने के इरादे से उधर की ओर कूच किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मिर्जाओं का विद्रोह

[मूल पाठ, जिल्द 1, पृ० 153] हिजरी 940 (सन् 1533-34 ई०) में मोहम्मद जमान मिर्जा, मोहम्मद सुल्तान मिर्जा, उसका पुत्र और उलूक मिर्जा ने विद्रोह कर दिया। तब हुमायूं ने उनके विरुद्ध प्रयाण किया। उसने गंगा के एक पार्श्व पर भोजपुर के निकट अपना डेरा लगाया और यादगार नासिर मिर्जा को एक सेना देकर नदी पार विद्रोहियों के विरुद्ध रवाना किया। यादगार ने उन पर आक्रमण किया, विजय प्राप्त की और मोहम्मद जमान मिर्जा, मोहम्मद सुल्तान मिर्जा तथा वलीखूब मिर्जा को बन्दी बना लिया। मोहम्मद जमान मिर्जा को बन्दी बनाकर बयाना भेज दिया और दूसरे दो व्यक्तियों को अन्धा किया तथा अपमानित करके रवाना कर दिया। मोहम्मद जमान मिर्जा ने उस दया का ध्यान नहीं रखा जो उसके प्रति प्रदर्शित की गयी थी। वह अधीनता का बहाना करता रहा और भागकर सुलतान बहादुर गुजराती के पास चला गया।

शहजादा कामरान का लाहौर पर अधिकार

[मूल पाठ, जि० 1, पृ० 153] जब शहजादा कामरान ने बादशाह बाबर की मृत्यु का समाचार सुना तो उसने कन्धार मिर्जा असकरी के सुपुर्द किया और भारतवर्ष की ओर कूच किया। वह देखना चाहता था कि उसकी हितवृद्धि किस प्रकार हो सकती है। उस समय मीर यूनस अली लाहौर का हाकिम था। इसको स्वर्गीय बादशाह ने नियुक्त किया था। मिर्जा कामरान ने लाहौर पर अधिकार करने के लिए अपने मन में एक योजना बनाई। एक रात्रि को उसने कराचबेग के साथ मत-भेद हो जाने का बहाना किया और उससे कठोरता के साथ बातचीत की। इसलिए कराचबेग अपने सैनिकों के साथ मिर्जा के डेरों को छोड़कर लाहौर चला गया। उसके आगमन से मीर यूनस अली को प्रसन्नता हुई और उसने उसकी तरफ बड़ा ध्यान दिया। वह उसको प्रायः अपने मकान पर निमन्त्रित किया करता था और उसकी संगति में उसे आनन्द आता था। कराचबेग अवसर की प्रतीक्षा में था। एक दिन वे मद्यपान कर रहे थे और मीर के सब सैनिक अपने-अपने घर चले गए थे तो कराचबेग ने उसको पकड़कर बन्दी बना लिया और दुर्ग के द्वारों पर अपने आदमी नियुक्त कर दिए। तब उसने एक सन्देशवाहक भेजकर मिर्जा कामरान को बुलाया। वह ऐसे बुलावे की प्रतीक्षा ही कर रहा था। इसलिए उसने तुरन्त ही रवाना होकर लाहौर पर अधिकार कर लिया। उसने मीर यूनस को कारावास से निकाला और लाहौर का शासन उसके सुपुर्द करना चाहा, परन्तु मीर ने यह स्वीकार नहीं किया और वह बादशाह हुमायूं के पास चला गया। मिर्जा कामरान ने सतलज या लुधियाना की नदी तक पंजाब के परगनों पर अपने अधिकारी नियुक्त कर दिए और बादशाह के पास अपने दूत भेजकर उसे अपने सद्विचारों के विषय में विश्वास दिलाया और प्रार्थना की कि शासन उसके सुपुर्द कर दिया जाय। हुमायूं ने दयालुता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में आकर यह बात स्वीकार कर ली और उसको काबुल, कन्धार और पंजाब का हाकिम मान लिया। 933 हिजरी में मिर्जा कामरान ने मिर्जा असकरी को कन्धार के शासन से हटा दिया और ख्वाजा कलामबेग को उसके स्थान पर नियुक्त कर दिया। कारण यह था कि काबुल आते हुए असकरी को हजारा जाति के लोगों के साथ एक लड़ाई लड़नी पड़ी थी जिसमें वह हार गया था। इससे कामरान उससे नाराज हो गया था।

बंगाल के विरुद्ध प्रयाण

[मूल पाठ, जि० 1, पृ० 155] 941 हिजरी में हुमायूँ ने पूर्वी देशों को जीतने की ओर ध्यान दिया और बंगाल की विजय के लिए प्रयाण किया। जब वह कालपी के निकट किनार नामक कस्बे में पहुँचा तो उसे सूचना मिली कि सुलतान बहादुर गुजराती ने चित्तौड़ को घेर लिया और तातारखाँ के नेतृत्व में एक बहुत बड़ी सेना रवाना की है। तातारखाँ के मन में बड़ी महत्त्वाकांक्षाएं थीं और बड़ी-बड़ी योजनाएँ थीं। इसलिए जुमाद-अल-अव्वल के मास में हुमायूँ अपने शत्रुओं का सामना करने के लिए वापस लौटा।

तातारखाँ ने अपने स्वामी सुलतान बहादुर को ऐसी सलाह दी जिससे हुमायूँ धोखे में आ जाए। उसने इस बात पर जोर दिया कि उसको शाही राज्य की ओर कूच करने की अनुमति दी जाय। उसने यह भी प्रकट किया कि हुमायूँ की सेना आलस्य और विलास में डूबी हुई है। सुलतान बहादुर ने विद्रोहियों की योजनाओं को आगे बढ़ाने के लिए उपाय किया। तातारखाँ को तैयार करके उसने बीस करोड़ गुजरात के पुराने सिक्के, जो दिल्ली के साधारण चालीस करोड़ के बराबर होते हैं, रणथम्भोर को भेजे। ये तातारखाँ के लिए थे और उसको वहाँ सेना खड़ी करनी थी। उसने तातारखाँ के पिता अलाउद्दीन को भी एक बड़ी सेना का नेतृत्व देकर कालिंजर के विरुद्ध रवाना किया और आदेश दिया कि उधर आसपास वह विद्रोह की भावनाएँ उत्पन्न करे। बुरहान-उल-मुल्क बुनियानी को एक गुजराती सेना देकर नागौर के मार्ग से पंजाब के विरुद्ध प्रदर्शन करने के लिए रवाना किया। उसका यह विचार था कि शाही सेना अब तितर-बितर हो जायगी। इसलिए उसने अपनी सेना भी विभक्त कर दी। यद्यपि बुद्धिमान और अनुभवी सलाहकारों ने उससे कहा कि सेना को एकत्र रखे परन्तु उनके शब्दों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। जब तातारखाँ ने पागलपन में आकर दिल्ली के विरुद्ध प्रयाण किया तो सुलतान बहादुर ने चित्तौड़ का घेरा डालने के लिए कूच किया। तातारखाँ के पास जो रुपये थे उससे उसने चालीस हजार अफगानों और अन्य लोगों की सेना खड़ी कर ली और फिर प्रयाण करके बयाना छीन लिया। जब यह घटना घट रही थी तो हुमायूँ पूर्वी प्रदेश का आक्रमण करने में व्यस्त था। जब उसे इन घटनाओं की सूचना मिली तो वह तुरन्त वापस आगरा लौट आया। उसने दिल्ली पर आक्रमण करने वाले विद्रोहियों की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सेना का सामना करने के लिए मिर्जा असकरी, हिन्डाल और यादगार नासिर मिर्जा को अठारह हजार घुड़सवार देकर रवाना किया क्योंकि यह आवश्यक था कि पहले इस सेना को हराया जाय। जब शाही सेना विद्रोहियों के निकट पहुँची तो उनके सैनिक प्रतिदिन भागने लगे। अन्त में केवल तीन हजार सवार शेष रह गए। जो लोग इतना परिश्रम और इतने खर्च के बाद एकत्र हुए थे उनमें न तो आगे बढ़ने के लिए साहस था और न युद्ध करने के लिए उत्सुकता थी। अन्त में तातारखाँ ने अपने जीवन से हाथ धोकर तथा अपनी पूरी शक्ति लगाकर मन्द्राइल के पास युद्ध किया और वहीं काम आया।

सुलतान बहादुर के विरुद्ध अभियान

[मूल पाठ, जि० 1, पृ० 159] गुजरात पर चढ़ाई करने के लिए जुमाद-अल-अव्वल, 941 हिजरी में हुमायूँ ने आगरे से प्रयाण किया। जब रायसिंह के दुर्ग के निकट उसका डेरा लगा हुआ था तो दुर्गरक्षक ने भेंटें भेजकर कहलाया कि दुर्ग बादशाह का ही है और दुर्गरक्षक उसके सेवक हैं और जब तक सुलतान बहादुर का मामला तय न हो जायगा तब तक वे दुर्ग की रक्षा करते रहेंगे। बादशाह गुजरात को जीतने पर तुला हुआ था। इसलिए वह यहाँ न ठहरा और मालवा की ओर कूच करके उसने सारंगपुर के निकट अपना डेरा लगाया। सुलतान बहादुर चित्तौड़ के घेरे में व्यस्त था। जब उसने सुना कि बादशाह आगे बढ़ता हुआ आ रहा है तो उसने अपने अधिकारियों से सलाह की। उनमें से अधिकांश ने यह राय दी कि घेरा उठाकर बादशाह के विरुद्ध कूच किया जाय परन्तु सदरखाँ ने, जो एक बुद्धिमान और दूरदर्शी सलाहकार था, कहा कि दुर्ग आत्मसमर्पण करने वाला ही है, इसलिए हमको घेरा और आगे बढ़ाना चाहिए और काम समाप्त करना चाहिए क्योंकि जब वे काफिरों के साथ युद्ध कर रहे हैं तो कोई भी मुसलमान सुलतान उन पर आक्रमण नहीं करेगा। यह सलाह मानी गयी और 3 रमजान 941 हिजरी को चित्तौड़ दुर्ग पर अधिकार कर लिया गया।

बहादुर का पलायन

[मूल पाठ, जि० 1, पृ० 162] 21 शव्वाल को सुलतान बहादुर को कोई आशा नहीं रही। उसने आदेश दिया कि बड़ी और छोटी तोपों में इतना बारूद भरा जाए कि जब वे चलाई जाएँ तो फट जाएँ। जब रात्रि हुई तो उसने मीरान मोहम्मद शुजा और पाँच या छः निजी साथियों के साथ डेरे के पीछे से निकलकर आगरे की ओर कूच किया और बाद में वह माण्डू की ओर मुड़ा। सदरखाँ और इमाद-उल-मुल्क बीस हजार सवारों सहित सीधे माण्डू की ओर गया और मोहम्मद जमान मिर्जा दूसरी सेना के साथ लाहौर की ओर रवाना हुआ। वह वहाँ पर उत्पात खड़ा करना चाहता था। गुजराती डेरे में रात्रि के समय बड़ी चिल्लाहट और शोर हुआ लेकिन इस बात का पता शाही सेना को न लगा। बादशाह सवार होकर प्रातःकाल तक सशस्त्र खड़ा रहा। एक पहर रात व्यतीत हो गई तब तक सुलतान बहादुर के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भाग जाने की सूचना मिली। तब सेना ने डेरे में प्रवेश किया और बड़ी लूट की। सुलतान बहादुर का मन्त्री और अध्यापक खुदावन्दखाँ बन्दी बना लिया गया। उसके साथ सद्व्यवहार किया गया और उसको शाही सेना में प्रविष्ट कर लिया गया। जो लोग भाग गये थे उनका पीछा करने के लिए यादगार, नासिर मिर्जा, कासिम, सुलतान और हिन्दूबेग को भेजा गया। सदरखाँ और इमाद-उल-मुल्क सीधे माण्डू गये और हुमायूँ उनके पीछे-पीछे रवाना हुआ और उसने किले के सामने अपना डेरा लगाया। रूमीखाँ गुजरातियों को छोड़कर भाग गया और बादशाह के पास चला गया जिसने उसको एक खिलअत प्रदान की। 14 तारीख ? को सुलतान बहादुर ने दुर्ग में प्रवेश किया और सन्धि के प्रश्न पर चर्चा की। यह प्रस्ताव हुआ कि गुजरात और चित्तौड़ सुलतान बहादुर के अधिकार में रहें और माण्डू बादशाह को दे दिया जाय। अन्त में दोनों ओर के वार्त्ताकारों ने ये शर्तें स्वीकार कर लीं। परन्तु उसी रात को दुर्गरक्षक कुछ शिथिल हो गये और शाही सेना के दो सौ सैनिक पीछे की ओर से सीढ़ियों और रस्सियों की सहायता से दुर्ग-प्राचीरों पर चढ़ गए और दरवाजा खोल दिया और अपने सवार और दूसरे लोग अन्दर घुसा लिए। माण्डू-निवासी मल्लूखाँ, जो तोपखाने का अधिकारी था और जिसे कादिरशाही की उपाधि प्राप्त थी, स्थिति को जान गया और घोड़े पर सवार होकर सुलतान बहादुर के पास पहुँचा। वह उस समय सो रहा था परन्तु मल्लूखाँ के चिल्लाने से वह जगा और तीन-चार अनुचरों के साथ दौड़कर बाहर निकला। मार्ग में उसको सिलहादी का पुत्र भूपतराय मिला जो उसका एक सलाहकार था। उसके साथ लगभग बीस सवार थे। ये सब साथ हो गये। जब ये लोग मैदान के सिरे पर दरवाजे के पास पहुँचे तो उनको शाही रिसाले के दो सौ सैनिकों का सामना करना पड़ा। सबसे पहले सुलतान बहादुर ने आक्रमण किया। उसके बाद दूसरों ने आक्रमण किया। वह रास्ता चीरकर मल्लूखाँ और एक-दूसरे साथी के साथ सूनगर[1] के किले पर पहुँच गया। उसने रस्सों से बाँधकर कस्बे की चट्टानों के नीचे अपने घोड़े उतारे और हजार कठिनाइयों को पार करके वह भी पीछे-पीछे गया और उसने गुजरात का रास्ता लिया। एक शाही अधिकारी, जिसका नाम कासिम हुसैनखाँ था, दुर्ग के निकट नियुक्त था और उसके बोरी नामक एक उजबेक दास ने जो पहले सुलतान बहादुर की सेवा में था अपने पुराने मालिक को पहचान गया। उसने इस विषय में कासिम हुसैन से कहा परन्तु उसने ध्यान न दिया। इसलिए सुलतान बहादुर बचकर चम्पानेर पहुँच गया और रास्ते में पन्द्रह सौ आदमी उसके साथ हो गये।

गुजरात से हुमायूँ की वापसी

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 172] अहमदाबाद की विजय और गुजरात के मामलों के निबटाने के पश्चात् हुमायूँ ने सुलतान बहादुर का पीछा करने के लिए दियू के

---

1 माण्डू का दुर्ग।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बन्दरगाह की ओर कूच किया परन्तु जब वह डण्डूका से रवाना हुआ, जो अहमदाबाद से लगभग तीस कोस पर है तो आगरे से ऐसे पत्र आये कि राजधानी से जब बादशाह रवाना हुआ था उसके बाद वहां की स्थिति बहुत बिगड़ गई है और कई स्थानों पर विद्रोह हो गये हैं। मालवे से भी खबर आई कि सिकन्दरखाँ और मल्लूखाँ ने विद्रोह करके हिन्दिया के जागीरदार मिहतर जम्बूर पर, जो अपनी सम्पत्ति के साथ भागकर उज्जैन चला गया था, आक्रमण कर दिया है। इस प्रान्त में स्थान-स्थान पर जो सेनाएँ थीं वे सब उज्जैन चली गई हैं और वहाँ विद्रोहियों ने उनको घेर लिया है। दरवेश अली किताबदार एक तोप का गोला लगने से मर गया है और दुर्ग-रक्षकों ने आत्म-समर्पण कर दिया है। यह सूचना मिलने पर हुमायूं ने निश्चय कर लिया कि पीछे हटना चाहिए और कुछ समय के लिए माण्डू में रहना चाहिए। इस अर्से में मालवा से विद्रोहियों को हटा दिया जायगा और गुजरात के मामले भी तय हो जाएँगे तथा राजधानी के पास के विद्रोह दब जाएँगे। इसलिए उसने मिर्जा असकरी को गुजरात का सूबेदार नियुक्त कर दिया।

सुलतान बहादुर का गुजरात पर पुनः अधिकार

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 173] जब सम्राट के चले जाने के बाद लगभग तीन मास व्यतीत हो गए तो सेना एकत्र हुई और युद्ध आरम्भ हुआ। खानजहाँ शिराजी और रूमीखाँ ने, जिसका नाम शफ़र था और जिसने सूरत के दुर्ग का निर्माण करवाया था, सेना को सहयोग दिया। शाही अधिकारियों ने नौसारी पर अधिकार कर लिया जो उस समय अब्दुल्लाखाँ के हाथ में था। यह हुसैनखाँ का एक अफसर था। वह पीछे हटकर भड़ौंच चला गया था। इसी समय शाही अफसरों ने सूरत भी ले लिया। तब खानजहाँ ने भड़ौंच पर कूच किया और रूमीखाँ ने अपनी तोपें और तुफंग युद्ध-पोतों में रवाना कर दिए और फिर जल-मार्ग से उसने भी उधर की ओर प्रस्थान किया। वहाँ का हाकिम कासिमखाँ सामना न कर सका और चम्पानेर चला गया और फिर वहाँ से वह अहमदाबाद रवाना हो गया। वह मिर्जा असकरी और हिन्दूबेग से सहायता लेना चाहता था। सईद इशाक ने, जिसको सुलतान बहादुर से शिताबखाँ की उपाधि प्राप्त हो चुकी थी, केम्बे पर अधिकार कर लिया। फिर मिर्जा असकरी ने यादगार नासिर मिर्जा को पट्टन से अहमदाबाद बुलाया। उस समय दरियाखाँ और मुआफिजखाँ रायसिन से सुलतान बहादुर के पास दियू जा रहे थे। उन्होंने देखा कि पट्टन सूना पड़ा है तो उस पर अधिकार कर लिया।

मिर्जा असकरी का अहमदाबाद से पीछे हटना

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 174] जब मिर्जा असकरी अहमदाबाद से पीछे हटा तो सुलतान बहादुर को बड़ी आशंका और चिन्ता थी परन्तु अब उसमें साहस आ गया। उसने हटती हुई सेना का पीछा किया और जब वह उनके पास पहुंचा तो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यादगार नासिर मिर्जा ने, जो पृष्ठ भाग का अध्यक्ष था, उस पर आक्रमण किया। तेज युद्ध हुआ जिसमें बहादुर की अग्र सेना के बहुत से लोग या तो मारे गए या कैद कर लिए गए। तब सुलतान बहादुर महमूदाबाद के निकट ठहरा और मिर्जा उसकी सेना में आ मिला। मिर्जा असकरी ने लड़ने का विचार छोड़ दिया था और उसका कूच जारी था। महिन्द्री नदी को पार करते हुए उसके बहुत से सैनिक मारे गए थे। सुलतान बहादुर उसका पीछा करता हुआ वहाँ आ पहुँचा था।

मिर्जा असकरी चम्पानेर में

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 175] जब मिर्जा लोग चम्पानेर पहुंचे तो तारदी बेगखाँ ने उनका आतिथ्यपूर्वक स्वागत किया और फिर वह अपने निवास-स्थान पर चला गया। अगले दिन मिर्जाओं ने बुरे इरादे से उसको कहला भेजा कि वे और उनकी सेना बड़ी ही विपन्न स्थिति में हैं इसलिए दुर्ग के कोष में से उन्हें कुछ रुपया दे दिया जावे। इसके द्वारा वे वापस मुड़कर शत्रु का सामना कर सकेंगे और माण्डू में हुमायूँ से जा मिलेंगे। सन्देशवाहक को इसमें छः दिन लग गए। तारदी बेग ने उनकी प्रार्थना नहीं मानी। तब मिर्जाओं ने उसको पकड़ लेने का और समस्त कोष पर अधिकार कर लेने का तथा मिर्जा असकरी को बादशाह घोषित करने का विचार किया। उनका विचार था कि उसके बाद वह सुलतान बहादुर से सन्धि की बातचीत करेंगे और यदि इसमें उनको असफलता हुई तो वे आगरे की ओर कूच करेंगे क्योंकि इस समय हुमायूँ मालवे की सुखद ऋतु का आनन्द ले रहा था और आगरा अरक्षित था। तारदी बेग किले के बाहर मिर्जाओं से मिलने के लिए आया परन्तु मार्ग में ही उसको उनके विचारों की सूचना मिल गई और वह तुरन्त वापस दुर्ग में चला गया। तब उसने मिर्जाओं से कहलाया कि वे वहाँ नहीं ठहरें। उन्होंने कहलाया कि वे जा रहे हैं और वह आकर उनसे मिले और उन्हें विदा करे परन्तु उसे उनके उद्देश्य का पता था। इसलिए उसने उन्हें केवल उपर्युक्त उत्तर भेज दिया। दूसरे दिन प्रातःकाल तारदी बेग ने एक तोप चलाई जो इस बात की सूचक थी कि वह युद्ध करने के लिए तैयार है। तब मिर्जाओं ने घाट करजी के मार्ग से अपनी अविवेचित योजना की पूर्ति के लिए आगरे के विरुद्ध प्रयाण किया। जब वे चम्पानेर में थे तो सुलतान बहादुर ने महिन्द्री नदी पार नहीं की। यह लगभग पन्द्रह कोस दूरी पर है। परन्तु जब उसने सुना कि मिर्जा लोगों ने आगरे की ओर कूच कर दिया है और उन्होंने एक मूर्खतापूर्ण योजना बनाई है तो नदी पार करके वह चम्पानेर के विरुद्ध चला। यद्यपि यह दुर्ग बड़ा दृढ़ है और उसमें युद्ध-सामग्री भरी पड़ी थी तो भी तारदी बेग दुर्ग को खाली करके हुमायूँ के पास माण्डू चला गया और मिर्जा लोगों के दुर्विचारों से उसे सूचित किया।

मोहम्मद सुलतान मिर्जा और उलूग मिर्जा का विद्रोह

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 176] एक लज्जाजनक कार्यवाही जिसके कारण हुमायूँ को आगरा वापस आना पड़ा यह थी कि सुलतान मिर्जा और उसके पुत्र उलूग

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मिर्जा ने विद्रोह कर दिया था। यह लिखा जा चुका है कि पहले उन्होंने किस प्रकार विद्रोह किया था और उन्हें अन्धा करने के लिए किस प्रकार आदेश दिया गया था। परन्तु जिन लोगों को यह आदेश कार्यान्वित करने के लिए कहा गया था उन्होंने यह पूरा नहीं किया और वे बचकर भाग गए। अब उन्होंने अपनी विद्रोहात्मक कार्यवाहियाँ पुनः शुरू कर दी थीं और बिलग्राम पर हमला करके वे कन्नौज पहुँचे जो उस समय खुशरू कोकलताश के पुत्रों के हाथ में था। इन्होंने आत्म-समर्पण कर दिया और उनके स्थान पर कन्नौज में दूसरे लोग नियत कर दिए। उस समय मिर्जा हिन्दाल आगरे में था। उसने उन लोगों पर आक्रमण किया और बिलग्राम के पास गंगा पार करके उसने एक लड़ाई की जिसमें विद्रोही हार गए। हिन्दाल ने पीछा करके उनको अवध के पास जा दबाया। यहाँ उलूग बेग और उसके पुत्र एकत्र होकर फिर लड़ने के लिए तैयार हो गए। अब समाचार मिला कि बादशाह गुजरात से आगरा वापस आ गया है। तब विद्रोही लोग एक बार पुनः लड़े परन्तु हार गए। तब हिन्दाल विजयी होकर वापस आगरा लौट आया।

सुलतान बहादुर की मृत्यु

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 177] जब हुमायूँ आगरा लौट आया तो बीजागढ़ (माण्डू से साठ मील) के राजा भूपालराय ने देखा कि माण्डू का दुर्ग अब खाली है तो उसने साहस करके उस पर अधिकार कर लिया। कादिरशाह भी वहाँ वापस आया और मीरान मोहम्मद फारुकी भी बुरहानपुर से आ गया। सुलतान बहादुर एक पखवाड़े तक चम्पानेर में रहा और फिर दियू लौट गया। इस बन्दरगाह पर पहुँचने पर उसे पता लगा कि पुर्तगाली सेनानायक जहाज और सैनिक लेकर वहाँ आ पहुँचे हैं। पुर्तगाली हाकिम को यह भय था कि अब सुलतान को किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं है, इसलिए वह कुछ दगाबाजी की बात सोच रहा होगा। इसलिए उसने सुलतान से कहलाया कि वह आदेशानुसार आ तो गया है परन्तु अब अस्वस्थ है और तट पर आने में असमर्थ है और जब तक उसका स्वास्थ्य अच्छा न हो जाय, तब तक के लिए मुलाकात स्थगित रखी जाय। सुलतान ने सुरक्षा की चिन्ता न की और 3 रमजान, 943 हिजरी को थोड़े से आदमी साथ लेकर नाव के द्वारा वह पुर्तगाली हाकिम से मिलने के लिए रवाना हो गया। वहाँ जहाज में पहुँचते ही उसे मालूम हुआ कि बीमारी का केवल बहाना था। अब उसको वहाँ आने पर बड़ा खेद हुआ। उसने तत्काल ही वापस आने का यत्न किया परन्तु पुर्तगाली लोग नहीं चाहते थे कि उनके हाथ से इतना अच्छा शिकार निकल जाय और उनको यह आशा थी कि उसको बन्दी बनाकर वे कुछ और बन्दरगाह भी प्राप्त कर सकते हैं। पुर्तगाली हाकिम ने आकर सुलतान से प्रार्थना की कि कुछ दिन ठहरे और उन विचित्र वस्तुओं को देखे जो वह भेंट करना चाहता है। सुलतान ने कहा कि इन चीजों को उसके पास भेज दिया जाय और वह तुरन्त ही अपनी नाव की ओर जाने लगा। परन्तु एक यूरोपीय पादरी सुलतान के रास्ते में खड़ा हो गया और उसे ठहरने के लिए

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहा। सुलतान ने चिढ़कर अपनी तलवार निकाली और उसके दो टुकड़े कर दिए और फिर कूदकर अपनी नाव में बैठ गया। तब चारों ओर के पुर्तगाली जहाजों ने उसकी नाव घेर ली और लड़ाई शुरू हो गई। सुलतान और रूमीखाँ पानी में कूद पड़े। पुर्तगाली लोगों में से एक मित्र ने हाथ बढ़ाकर रूमीखाँ को तो बचा लिया परन्तु सुलतान लहरों में डूबकर मर गया। उसके साथी भी नष्ट हो गए।

हुमायूँ की बंगाल की ओर कूच

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 184] जब बादशाह पटना पहुँचा तो उसकी सेना तो कुछ जलमार्ग से और कुछ थलमार्ग से आयी थी। उसके सलाहकारों ने कहा कि वर्षाऋतु की समाप्ति तक युद्ध स्थगित रखा जाय परन्तु बंगाल का सुलतान जल्दी कर रहा था। इसलिए हुमायूँ को उसकी बात माननी पड़ी। जब वह भागलपुर पहुँचा तो उसने अपनी सेना को दो हिस्सों में बाँट दिया और पाँच हजार सैनिक देकर मिर्जा हिन्दाल को नदी पार कूच करने के लिए रवाना किया। मुंघेर पहुँचने पर हुमायूँ को पता लगा कि शेरखाँ अपने पुत्र जलालखाँ को, जो बाद में सलीमखाँ या सलीमशाह कहलाने लगा, खवासखाँ के साथ पन्द्रह हजार सेना देकर गढ़ी की रक्षा करने के लिए छोड़ गया है और स्वयं झारखंड की ओर चला गया है। गढ़ी बंगाल का द्वार है। जब शाही सेना गढ़ी पहुँची तो जलालखाँ ने अपने पिता के आदेश की अवहेलना करके बाहर निकलकर उस पर आक्रमण किया और उसे हरा दिया। तब हुमायूँ तुरन्त आगे बढ़ा और अफगान लोग उस स्थान को छोड़कर भाग गए।

शेरशाह की प्रगति

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 186] जब हुमायूँ गौड़ में था तो शेरखाँ ने इस अवसर से लाभ उठाकर अपनी शक्ति में वृद्धि की। उसने बनारस को घेर लिया और थोड़े समय में ही उस पर अधिकार करके वहाँ के हाकिम मीर फजली को मार डाला। वहाँ से उसने जौनपुर की ओर कूच किया जो शाहमखाँ के पिता बाबा बेग जलाइर के अधिकार में था। इसकी नियुक्ति हिन्दू बेग की मृत्यु के पश्चात् की गई थी। इसने इस स्थान की रक्षा करने की व्यवस्था की। उसी समय इब्राहीम बेग का पुत्र युसूफ बेग अवध से बंगाल की ओर कूच कर रहा था। वह उससे आ मिला। युसूफ बेग ने पड़ौस के इलाके को लूटा और लड़ने के लिए उत्सुक हो गया। जलालखाँ ने यह सुनकर दो हजार आदमियों के साथ शीघ्र कूच किया। जब यूसुफ बेग दिखाई देने लगा तो वह तत्काल लड़ने के लिए तैयार हो गया। उसके अफसरों ने बहुत मना किया क्योंकि दोनों ओर की सेनाओं में बड़ी विषमता थी परन्तु उसने कुछ न सुना। वीरतापूर्वक लड़ने के बाद वह मारा गया और अगले दिन जौनपुर को घेर लिया गया। उसकी रक्षा करने के लिए बाबा बेग जलाइर ने बड़ा जोर लगाया और मिर्जा तथा अमीर लोगों को और बादशाह को इस स्थिति से अवगत किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शेरशाह का बंगाल पर अधिकार

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 194] शेरखाँ ने (चौसा की लड़ाई के बाद) बंगाल पर अधिकार करने का दृढ़ निश्चय कर लिया और वह कूच करता हुआ विहार की सीमा तक पहुँच गया। वहाँ जाकर वह ठहर गया और कुछ सेना देकर अपने पुत्र जलालखाँ को इस काम के लिए आगे भेजा। थोड़ी देर में ही उसका जहाँगीर कुली वेग से सामना हुआ जो बड़ी वहादुरी से लड़ा। इसको हुमायूँ ने बंगाल का हाकिम नियुक्त किया था। परन्तु भाग्य का विधान उसके विपरीत था। बंगाल के अमीरों ने कोई साहस का परिचय न दिया और विद्रोहियों का सामना न किया। इनको आराम पसन्द था। इसलिए जहाँगीर कुली की सहायता न की। जब वह रणभूमि में सफल न हुआ तो उसने जमींदारों के पास शरण ली। फिर वह तथा उसके बहुत से साथी मारे गए। तब शेरखाँ आसानी से आगे बढ़ा और उसने जौनपुर पर कब्जा कर लिया। फिर उसने अपने छोटे पुत्र कुतुवखाँ को कालपी और इटावा के विरुद्ध रवाना किया।

गंगा पर हुमायूँ द्वारा निर्मित पुल

[मूल पाठ जि० 1, पृ० 198]। जब हुमायूँ भोजपुर पहुँचा तो उसे पता लगा कि शेरखाँ बहुत बड़ी सेना के साथ गंगा के दूसरी ओर पड़ा हुआ है। बादशाह ने आदेश दिया कि एक पुल बनाया जाय और भोजपुर के नाव घाट पर यह शीघ्र ही बना दिया गया। अफगान लोग पुल को नष्ट करने के लिए गर्दवाज नामक हाथी को लाए जो उन्होंने चौसा के युद्ध में छीन लिया था। इस हाथी ने पुल के सिरे पर टक्कर मारी और उसे गिरा दिया। अब यह उचित समझा गया कि नदी के किनारे-किनारे कन्नौज पहुँचा जाय।

बादशाह अकबर का राज्य

दुर्भिक्ष

[मूल पाठ जि० 2, पृ० 42] इस समय (अकबर के राज्य के प्रथम वर्ष में) हिन्दुस्तान में बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा। कुछ जिलों में और विशेषकर दिल्ली प्रान्त में इसने भयावह स्थिति धारण कर ली। लोगों के पास रुपया होता था तो भी उन्हें अन्न के दर्शन नहीं होते थे। लोग एक-दूसरे को खाने लगे ओर लोगों ने अकेले-दुकेले आदमियों को मारकर खाने के लिए टोलियाँ बना लीं।

हेमू के कुटुम्ब का विनाश—अलवर और अजमेर

[मूल पाठ जि० 2, पृ० 56] जब अकबर को सूचना मिली कि शेरखाँ अफगान (शेरशाह) का एक गुलाम हाजीखाँ, जो वीर और योग्य सेनापति था, अलवर में राज्य करने का दावा कर रहा है और हेमू का पिता, पत्नी और उसकी समस्त सम्पत्ति उस प्रदेश में हैं, बादशाह ने नासिर-उल-मुल्क (पीर मोहम्मद सरवानी) को एक चुनी हुई सेना देकर उस पर आक्रमण करने के लिए रवाना किया। हाजीखाँ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शाही सेना से डर गया और उसके पहुँचने से पहले ही भाग गया। इस प्रकार अलवर और मेवात का प्रदेश शाही नियंत्रण में आ गया। भगोड़े देवती माजारी पहुँचे जहाँ अच्छा दृढ़ दुर्ग था और हेमू के कुटुम्ब का निवास-स्थान था। वहाँ पर खूब सामना हुआ और लड़ाई हुई। हेमू के पिता को जीवित ही पकड़ लिया गया और नासिर-उल-मुल्क के सामने उपस्थित किया गया। नासिर ने उसको मुसलमान बनाना चाहा। परन्तु उस वृद्ध पुरुष ने उत्तर दिया "अस्सी साल से मैं अपने धर्म के अनुसार ईश्वर पूजा करता आया हूँ। अब मैं अपने धर्म का परित्याग कैसे कर सकता हूँ। क्या मृत्यु के भय से अब तुम्हारे धर्म को बिना समझे ही मैं स्वीकार कर सकता हूँ।" मौलाना पीर मोहम्मद ने सुनी-अनसुनी करके अपनी तलवार के वार से उसका उत्तर दिया। फिर वह बहुत सारी लूट और पचास हाथी लेकर बादशाह के पास वापस लौटा। अलवर छोड़कर हाजीखाँ अजमेर की ओर रवाना हुआ। उसने सोचा था कि वहाँ उसका कुटुम्ब सुरक्षित रहेगा। उसने लड़ाई के लिए अपने सैनिक तैयार किए। राणा बहुत बड़ा जमींदार था और उस राणा का पुत्र था जिसने हुमायूँ के प्रति अनुचित व्यवहार किया था और हार खाई थी। हाजीखाँ ने उससे कुछ माँगें कीं और उसे बुरी तरह दुखी किया। इसलिए अजमेर के निकट उन दोनों में युद्ध हुआ। हाजीखाँ और उसके वकील मुजफ्फरखाँ सरवानी ने युद्ध में बड़ी वीरता दिखाई। राणा को अपनी सेना की संख्या पर अत्यधिक विश्वास था पर वह हार गया। तब हाजीखाँ ने अजमेर और नागोर और उधर के सब इलाकों पर अधिकार कर लिया। जब हाजीखाँ की विजय का समाचार बादशाह के पास पहुँचा तो उसने सईद मोहम्मद कासिमखाँ नैशापुरी और अन्य लोगों को उसके विरुद्ध कूच करने के लिए नियुक्त किया। अब समाचार मिला कि हाजीखाँ इतना शक्तिशाली है कि अपने विरुद्ध भेजी हुई सेना का सामना कर सकता है। इसलिए बादशाह ने हिसार की ओर कूच करके वहाँ से सहायक सेना भेजने का निश्चय किया। सरहिन्द में अपने पिता की कब्र पर जाकर उसने बहरामखाँ के साथ हिसार की ओर कूच किया। जब हाजीखाँ को इसकी सूचना मिली तो उसकी सेना तितर-बितर हो गई। हर एक आदमी अपनी-अपनी जगह पर चला गया और हाजीखाँ स्वयं तुरन्त गुजरात की ओर चला गया। मोहम्मद कासिमखाँ को बादशाह ने इसलिए रवाना किया कि वह अजमेर अपने हाथ में ले ले। सईद मोहम्मद बरहा और शाह कुली खाँ महरम को एक सेना देकर जीत सारन को जीतने के लिए रवाना किया और उन्होंने बहुत से राजपूतों को मारकर उस दुर्ग पर अपना अधिकार कर लिया।

शासन का दूसरा वर्ष

अदली की मृत्यु

[मूल पाठ जि० 2, पृष्ठ 72] बंगाल के शासक मोहम्मदखाँ के पुत्र सदरखाँ ने जलालुद्दीन की उपाधि धारण करके अब निश्चय किया कि मुबारिजखाँ (अदली) से रणभूमि में अपने पिता को मारने का बदला लिया जाय। अतः उसने मुबारिजखाँ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पर कूच करके उसे युद्ध-भूमि में हराकर मार डाला। वह चार वर्ष और कुछ दिन शासन कर चुका था।

शासन का तीसरा वर्ष

हथकान्त में आदमखाँ

[मूल पाठ जि० 2, पृष्ठ 97] इस वर्ष की घटनाओं में आदमखाँ की नियुक्ति उल्लेखनीय है। उसको कुछ सैनिक देकर हथकान्त[1] के विरुद्ध नियुक्त किया। हथकान्त आगरे के समीप एक दृढ़ दुर्ग है। यहाँ के जमींदार भदौरिया और अन्य लोग थे जो अपनी संख्या और साहस के लिए प्रसिद्ध थे। ये लोग हिन्दुस्तान के बादशाह के विरुद्ध निरन्तर विद्रोह किया करते थे। बहरामखाँ को आदमखाँ के प्रति गहरा अविश्वास था। इसलिए उसने उसको हथकान्त की जागीर दी। इसमें उसके दो उद्देश्य थे : 1. आदमखाँ को दरबार से दूर भेजना और 2. पड़ोस के विद्रोही लोगों को दण्ड देना।

शासन का चतुर्थ वर्ष

बहरामखाँ का पतन

[मूल पाठ जि० 2, पृष्ठ 112] बहरामखाँ को हुमायूँ ने अपने पुत्र अकबर का अध्यापक नियुक्त किया था और यह नेक नवयुवक उसको बाबा के नाम से सम्बोधित किया करता था। बादशाह को इस स्थिति का खूब पता था। इसलिए उसने बहरामखाँ के अनेक अनुचित कार्यों की ओर से आँखें बन्द कर ली थीं। परन्तु अन्त में बहरामखाँ की कार्यवाहियाँ असह्य हो गई और उसने अलीबेग जुलकदर और शेर गदाई काम्बू जैसे दुष्ट चाटुकारों के साथ षड्यंत्र करके दुष्ट योजनाएँ रचीं। जब इन षडयन्त्रकारियों के दुष्ट विचारों का बादशाह को पता लगा तो उसने माहम अंका जैसे स्वाभिभक्त और बुद्धिमान सलाहकारों से इस विषय में बात की। अभी षडयन्त्र कार्यान्वित नहीं हो सका था। माहम अंका अपनी बुद्धिमत्ता, निर्णय-शक्ति और स्वामिभक्ति के लिए प्रसिद्ध थी। बादशाह ने षडयन्त्र की बात आदमखाँ, मिर्जा शरफुद्दीन हुसैन और अन्य लोगों से भी कही। बादशाह शिकार करने के लिए नदी पार करके बयाने की ओर चला गया और माहम अंका ने ये सब बातें दिल्ली के हाकिम शाहबुद्दीन अहमदखाँ को सुनाई। यह व्यक्ति अपनी निर्णय-शक्ति, चतुरता और स्वामिभक्ति के लिए प्रसिद्ध था। अब बहरामखाँ को छोड़कर लोग जाने लगे। इनमें प्रथम व्यक्ति कियाखाँ गंग था। यह राजसिंहासन का बड़ा स्वामिभक्त सेवक था। तदनन्तर एक-एक, दो-दो करके दूसरे लोग दरबार में चल दिए। माहम अंका ने शाह-बुद्दीन अहमदखाँ से मिलकर सब महत्त्वपूर्ण बातों से बादशाह को अवगत कर दिया और मन्त्री पद का दायित्व अपने ऊपर ले लिया। काम चलाने के लिए और शासन

---

1 चम्बल के दायें तट पर स्थित।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

का संचालन करने के लिए माहम अंका ने अली कुलीखाँ के भाई बहादुरखाँ को मन्त्री के उच्च पद पर नियुक्त करने की सिफारिश की। बादशाह ने उसकी नियुक्ति कर दी। यद्यपि बहादुरखाँ को इटावे की जागीर और मन्त्री की उपाधि प्राप्त हो गई परन्तु वास्तविक कार्य माहम अंका के हाथ में रहा।

शासन का पाँचवाँ वर्ष

बहरामखाँ का चरित्र

[मूल पाठ जि० 2, पृष्ठ 164] बहरामखाँ का स्वाभाविक चरित्र अच्छा और मधुर था परन्तु कुसंगति के कारण, जो मनुष्य का सबसे बुरा दुर्भाग्य है, उसके स्वाभाविक सद्गुण तिरोहित हो गये और चाटुकारिता के कारण उसमें दम्भ बढ़ गया। जो व्यक्ति अपसे गुणों के विषय में आत्म-सन्तोष कर लेता है उस पर चाटुकारों की चालाकियों का प्रभाव पड़ता है।

शासन का छठा वर्ष

आदमखाँ

[मूल पाठ जि० 2, पृष्ठ 181] आदमखाँ की मूर्खता और धृष्ठता प्रसिद्ध थी। उसकी माता माहम अंका शाही अन्तःपुर की अध्यक्षा थी। आदमखाँ ने अपनी माता के सेवकों के साथ षडयन्त्र करके उन दो सुन्दर लड़कियों को उड़ा ले जाना चाहा जो पहले बाजबहादुर के पास थीं और जो अभी हाल में सम्राट को नजर की गई थीं। जब प्रत्येक व्यक्ति कूच करने की तैयारी में लगा हुआ था और जो कुछ हो रहा था उधर किसी का ध्यान नहीं था तब इन लड़कियों को फरार कर दिया गया। जब सम्राट को इस लज्जाजनक कार्य का पता लगा तो उसने दो तेज सवारों को भगोड़ों के पीछे भेजा जो उनको पकड़ कर वे वापस ले आये। माहम अंका को यह भय था कि इन दो लड़कियों को सम्राट के सामने उपस्थित किया गया तो उसका चरित्र और उसके लड़के की दुष्टता सामने आ जाएगी, इसलिए उसने इन दोनों को मरवा डाला, क्योंकि मृत व्यक्तियों से कोई भेद प्रकट नहीं होता। अभी बादशाह की आँखों के सामने से पर्दा नहीं हटा था। इसलिए उसने इस घोर पाप की ओर ध्यान नहीं दिया।

शासन का सातवाँ वर्ष

युद्ध-बन्दी दास न बनाए जाएँ

[मूल पाठ जि० 2, पृष्ठ 202] शासन के सातवें वर्ष में बादशाह ने एक अनुग्रहपूर्वक कार्य यह किया कि युद्ध-बन्दियों को दास बनाने का निषेध कर दिया। भारतवर्ष में यह प्रथा थी कि विजय के समय शाही सैनिक हिन्दुस्तानियों के स्त्री, बच्चों और आश्रितों को या तो दास के रूप में बेच देते थे या दास बनाकर स्वयं रख लेते थे। परन्तु बादशाह ने धार्मिक और दया की भावनाओं से प्रेरित होकर आदेश

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जारी किया कि शाही सेना के किसी सैनिक को ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए। यद्यपि दुर्भावना से लोग बुद्धिहीन मार्ग ग्रहण करें और बादशाह के विरुद्ध शस्त्र उठाएं और हार जाएँ तो भी उनके बच्चों और आश्रितों को शाही सैनिक किसी प्रकार न सताएं और चाहे वह बड़ा हो या छोटा हो उसे दास न बनाया जाय। सब लोग स्वतन्त्रतापूर्वक अपने या अपने रिस्तेदारों के घर जाने दिए जाएँ। यद्यपि धृष्ट विद्रोहियों का दमन और विनाश करना और उन्हें दण्ड देना शासक का कर्त्तव्य है तो भी न्याय के ज्ञाता और न्यायपरायण लोग उनके निरपराध स्त्री-बच्चों के दण्ड को न्याय के विपरीत समझते हैं क्योंकि यद्यपि पति बुरे मार्ग का अनुसरण करता है परन्तु उसकी पत्नी ने क्या अपराध किया है और यदि पिता विद्रोह करता है तो उसके बच्चों का इसमें क्या अपराध है।

शमशुद्दीन मोहम्मद अतका की आदमखाँ द्वारा हत्या

[मूल पाठ जि० 2, पृष्ठ 218] आदमखाँ माहम अंका का सबसे छोटा पुत्र था। यह महिला पतिव्रत धर्म का आदर्श थी परन्तु आदमखाँ का न तो मस्तिष्क व्यवस्थित था और न स्वभाव अच्छा था। उसमें जवानी की जल्दबाजी थी और सम्पदा का मद था। वह शमशुद्दीन अतकाखाँ से बड़ी ईर्ष्या करता था। खानखाना मुनीमखाँ की भावना भी इसी प्रकार की थी और वह उसको इस भाँति प्रकट किया करता था जो उससे छोटे दर्जे के व्यक्ति के लिए भी उपयुक्त नहीं थी। वह आदमखाँ को चिढ़ाया और उत्तेजित किया करता था। अन्त में 12 रमजान को बहुत बड़ा अपराध हो गया। मुनीमखाँ, अतकाखाँ, शाहबुद्दीन, अहमदखाँ और अन्य सरदार राजकाज में लगे हुए शाही दीवान खाने में बैठे हुए थे। उसी समय आदमखाँ कुछ बदमाशों के गिरोह के साथ क्रोधपूर्वक वहाँ आया। उसके साथी उससे भी अधिक हिंसक थे। वहाँ बैठे हुए सब लोग सम्मान प्रकट करने के लिए खड़े हो गए और अतकाखाँ भी खड़ा हो गया। वहाँ घुसते ही आदमखाँ ने धमकी के साथ अपने खंजर पर हाथ रखा और अतकाखाँ का सामना किया। फिर उसने खुशाम उजबेग की ओर क्रोधपूर्वक देखा जो उसका एक अफसर था और उन निर्दय बदमाशों की ओर भी इसी भाँति देखा जो इस हत्याकांड में उससे शामिल थे। मानों वह उनसे यह पूछना चाहता था कि वे क्यों हिचक रहे हैं? तब निर्दयी खुशाम उजबेग ने अपना खंजर निकाला और मन्त्री के सीने में घोंप दिया। अतकाखाँ अत्यन्त भयभीत होकर बादशाह के निवास की ओर दौड़ा परन्तु वहाँ पहुँचते-पहुँचते भी उसके तलवार के दो घाव लगे और वह महल के चौक में गिरकर मर गया। सभी उपस्थित लोग भयभीत हो गये और बड़ा शोर मच गया।

रक्त रंजित हत्यारे ने उधर की ओर अपने कदम बढ़ाए जहाँ बादशाह सो रहा था। वह समझता था कि उसकी कार्यवाहियों को बादशाह क्षमा कर देगा। हाथ में तलवार लिए हुए वह उस दीवार पर चढ़ गया जो आदमी की ड्यौढ़ी ऊँचाई के समान महल के चारों ओर थी। उसने अन्दर घुसने का प्रयास किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दरवाजे पर एक नाजिर पहरा दे रहा था। उसने ताला बन्द कर दिया। आदमखाँ ने उसे बहुत धमकाया परन्तु उसने द्वार नहीं खोला। शाही दरबार के सेवकों ने यह बड़ा अपराध किया कि उन्होंने हत्यारे को तुरन्त ही उचित दण्ड देकर उसकी कार्य-वाहियों को न रोका। परन्तु शायद ऐसा निश्चय इसलिए नहीं किया गया कि बादशाह की हिम्मत और न्यायपरायणता छोटे और बड़े सब पर प्रकट हो सके। शोर के कारण बादशाह जगा और उसने पूछा मामला क्या है, परन्तु अन्दर के सेवकों में से कोई भी उसको सूचना न दे सका। तब वास्तविकता का पता लगाने के लिए वह स्वयं बाहर आया और महल के एक वृद्ध कर्मचारी ने उसको स्थिति से अवगत कराया।

उसके भयप्रद कथन से अचम्भित होकर बादशाह ने स्पष्ट बात बताने को कहा। तब सेवक ने अपने शब्दों की पुष्टि करने के लिए रक्त रंजित शव की ओर इशारा किया। जब बादशाह ने स्थिति की वास्तविकता जान ली तो उसका क्रोध भमक उठा और सहसा प्रेरित होकर वह दूसरे द्वार से बाहर निकला न कि उसी द्वार से, जिधर की ओर हत्यारा व्यर्थ आशा करके भागा था। जब वह बाहर निकला तो एक सेवक ने बिना माँगे ही उसके हाथ में तलवार दे दी। वह तलवार लेकर आगे बढ़ा और जब वह दीवार के कोने से मुड़ा तो उसने कृतघ्न अपराधी को देखा और उसने पूछा "ए कुतिया के बच्चे तूने यह क्या किया।" वह घृष्ट दुष्ट आगे झपटा और बादशाह के दोनों हाथ पकड़ कर उससे प्रार्थना की कि मामले पर विचार किया जाय और बिना जाँच किये उसको अपराधी न माना जाय। बादशाह ने तलवार डाल दी और अपराधी के चंगुल से अपने आपको छुड़ा कर उसकी तलवार छीननी चाही परन्तु उस बदमाश ने बादशाह की चंगुल को ढीला करके अपनी तलवार संभालनी चाही। तब बादशाह ने तलवार छीनने का प्रयत्न तो छोड़ दिया और उसके चेहरे पर ऐसा घूंसा मारा कि वह अचेत होकर धरती पर गिर गया। वहाँ फरहदखाँ और संग्राम होशनाक उपस्थित थे। बादशाह ने क्रोधपूर्वक उनकी ओर देखा और पूछा कि वे खड़े-खड़े क्या देख रहे हैं। उसने उन्हें आदेश दिया कि उस पागल आदमी को बाँध दिया जाय। तब अन्य लोगों ने आदेश का पालन किया। तब उसने उन्हें आदेश दिया कि उसको दीवार से सिर के बल नीचे फेंक दिया जाय। इन मूर्खों ने कुछ नर्मी की। वास्तव में इस स्थिति में नर्मी न करना हजार गुना अच्छा था उन्होंने उसको जैसे चाहिए था वैसे नहीं फेंका और वह केवल अधमरा ही रह गया। तब उन्हें आदेश हुआ कि वे उसे ऊपर लाएँ और फिर नीचे फैंकें। इसलिए वे उसे बाल पकड़कर घसीट लाए और अब उन्होंने उसे अधिक ध्यान से फेंका जिससे उसकी गर्दन टूट गई और उसका दिमाग फट गया। इस प्रकार अपराधी को अपने कर्मों का उचित पुरष्कार मिल गया। बादशाह के बलवान हाथ की ऐसी चोट लगी थी कि जिनको इसका पता नहीं था उन्होंने समझा कि उसको गुर्ज से मारा होगा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मुनीमखाँ खानखाना और शाहबुद्दीन अहमदखाँ जो पास ही खड़े थे बादशाह के क्रोध से सहमकर भाग गए। जब अतकाखाँ के ज्येष्ठ पुत्र यूसुफ मोहम्मदखाँ को अपने पिता के अन्त की सूचना मिली तो उसने सशस्त्र अतकाखाँ को एकत्र किया और आदमखाँ तथा माहम अंका का रास्ता रोक दिया। अभी उनको पता न था कि बादशाह ने उचित दण्ड दे दिया है और उसने माहम अंका के साथ अपने सम्बन्ध की कोई चिन्ता नहीं की। परन्तु उनमें से एक ने जाकर देखा कि बादशाह के हाथों अपराधी को क्या दण्ड मिल चुका है। तब उनका क्रोध शान्त हो गया।

माहम अंका उस समय अपने मकान में बीमार थी और बिस्तर पर पड़ी हुई थी। जब उसने सुना कि उसके पुत्र ने हत्या कर दी है और बादशाह ने उसको कैद में डाल दिया है तो अपने मातृ-प्रेम से प्रेरित होकर वह उठी और बादशाह के पास पहुँची। उसको आशा थी कि वह अपने पुत्र को छुड़ा लेगी। तब बादशाह ने उसको देखा तो उसने कहा कि आदम ने उसके अतका को मार डाला था इसलिए बदला लेने के लिए उसको दण्ड दे दिया गया है। इससे माहम अंका नहीं समझ सकी कि उसका पुत्र मर गया है। अतः उसने उत्तर दिया कि बादशाह ने ठीक किया। तब दरबार की एक महिला ने जिसका नाम तख्तबेगी था उससे सच बात कह दी कि वह मारा गया है और उसके चेहरे पर गुर्ज की चोट का चिह्न है। वास्तव में यह चिह्न बादशाह के घूँसों का था।

माहम अंका ने अपने आपको विवेक के साथ इतना रोका कि उसने बादशाह के प्रति अनादर का एक भी शब्द नहीं कहा परन्तु उसको घोर सन्ताप हुआ। उसके हृदय पर हजारों घाव लग गए और उसका चेहरा फक हो गया। वह अपने पुत्र के शरीर को देखना चाहती थी परन्तु बादशाह ने उसे नहीं जाने दिया और कृपापूर्ण शिष्ट शब्दों द्वारा उसे सान्त्वना देने की कोशिश की। उसी दिन दोनों शव देहली भेज दिए गए और माहम अंका को खूब सान्त्वना देकर अपने घर जाने की अनुमति दे दी। इस बुद्धिमत्ती और शोक-संतप्त स्त्री ने आदरपूर्वक विदा ली। उसने अपने आपको ईश्वर के भरोसे छोड़ दिया और अपने दिन शोक और संताप में व्यतीत किए परन्तु उसका रोग बढ़ता गया और चालीस दिन पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई। इस महिला की मृत्यु पर जो पतिव्रत-धर्म का आदर्श थी, बादशाह को घोर संताप हुआ। उसके शरीर को आदर और सम्मान के साथ देहली भेज दिया गया और स्वयं बादशाह उसके साथ कुछ कदम चला। साम्राज्य के अमीरों और अधिकारियों ने भी आदर प्रकट किया और बादशाह ने आदेश दिया कि उसके और उसके पुत्र का भव्य स्मारक बनाया जावे।

शासन का आठवाँ वर्ष

तीर्थयात्रा-कर की माफी

[मूलपाठ जि० 2, पृष्ठ 239] हिन्दुस्तान के शासकों में यह प्रथा चली आ रही थी कि यात्रियों से जो पवित्र स्थानों को जाते थे उनकी हैसियत के अनुसार

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कर लिया जाता था। यह करमी कहलाता था। बादशाह ने अपनी न्याय-बुद्धि के अनुसार इसे निन्दनीय समझा और इसे लेना बन्द कर दिया यद्यपि इससे करोड़ों रुपए प्राप्त होते थे। एक आदेश जारी करके इसको समस्त साम्राज्य में बन्द कर दिया गया और कहा गया कि यह कर लोगों के अन्धविश्वास पर लिया जाता था और जब वे यात्रा करते थे तब ही वे इसको देते थे। परन्तु यह उनकी ईश्वर-भक्ति का तरीका था। इसलिए इनके मार्ग में इस प्रकार की रुकावट पैदा करना ईश्वर की दृष्टि में उचित नहीं था।

शासन का नवाँ वर्ष

जजिया की माफी

[मूलपाठ जि० 2, पृ० 257] नवें वर्ष के आरम्भ में उदारता का एक कार्य यह हुआ कि हिन्दुओं से जो जजिया कर लिया जाता था वह बन्द कर दिया गया। भारत जैसे विस्तृत देश में इससे बहुत बड़ी धनराशि एकत्रित होती थी।

गढ़ कंटक की विजय

[मूलपाठ जि० 2, पृ० 263] यद्यपि ख्वाजा अब्दुलमजीद आसफखाँ ताजिक और माली अफसर था तथापि बादशाह के सौभाग्य की सहायता से उसने ऐसे कार्य किए थे जो तुर्कों को भी मात करते थे। अब उसने गढ़ कंटक की विजय के लिए प्रयास करने का निश्चय किया। हिन्दुस्तान के प्रदेशों में एक गोंडवाना नामक प्रदेश है। यहाँ पर गोंड जाति निवास करती है। इन लोगों की संख्या बहुत बड़ी है। ये जंगलों में रहते हैं और अपना अधिकांश समय खाने-पीने और संतान उत्पन्न करने में व्यतीत करते हैं। यह बहुत छोटी जाति है और हिन्दुस्तान के लोग इनको हीन दृष्टि से देखते हैं तथा अपने धर्म के अनुसार इन्हें बहिष्कृत समझते हैं। इस देश के पूर्व की ओर रतनपुर स्थित है जो झारखंड के अधीन है। पश्चिम की ओर यह प्रदेश रायसिन से मिला हुआ है जो मालवे का एक प्रदेश है। गोंडवाना एक सौ पचास कोस लम्बा है। इसके उत्तर में पन्ना है और दक्षिण में दक्खिन है। इसकी चौड़ाई अस्सी कोस है। इस प्रदेश को गढ़कंटक कहा जाता है। इसमें कई बड़े-बड़े दुर्ग हैं। सच्चे लेखकों ने लिखा है कि इसमें अनेक नगर और कस्बे हैं और गाँवों की संख्या सत्तर हजार है। गढ़ प्रधान नगर का नाम है और कंटक इसी के पास स्थित एक स्थान को कहते हैं। इन दोनों स्थानों के नाम पर इस प्रदेश का नाम पड़ा है। इसकी राजधानी चौरागढ़ थी।

पिछले जमाने में इस प्रदेश का कोई एक सर्वोच्च शासक न था। इसमें कई राजा और रानी थे। इस समय भाग्य के फेर से यह प्रदेश इस जाति के हाथ में नहीं है परन्तु कई राजा राज्य करते हैं। इनमें एक राजागढ़ का राजा है। यहाँ के सैनिक प्रायः पदाति हैं। सवार बहुत कम हैं। भारत में मुसलमानों की शक्ति स्थापित हुई तब से अब तक इस प्रदेश के दुर्गों को कोई नहीं जीत सका और न इसको कोई अपने राज्य में मिला सका।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जब आसफखाँ को कर्रा की जागीर मिली और उसने पन्ना को जीता तो इस प्रदेश का शासन रानी दुर्गावती के हाथ में था। वह अपने साहस, कुशलता, उदारता आदि गुणों के कारण बड़ी प्रसिद्ध थी और इन्हीं साधनों से उसने समस्त प्रदेश पर अपना शासन स्थापित कर लिया था। लेखक ने ऐसे बुद्धिमान आदमियों से जो वहाँ हो आये हैं सुना है कि इस रानी के राज्य में तेईस हजार गाँव ऐसे थे जिनमें से बारह हजार का शासन इसी के शिकदार करते थे। शेष गाँव उसके सामन्तों के अधिकार में थे। विविध जातियों में मुख्य लोग उसकी अधीनता स्वीकार करते थे। यह रानी राता और महोबा के राजा शालिवाहन की पुत्री थी जो चन्देल जाति का मुखिया था। उसने इसका विवाह अमनदास के पुत्र दलपत से कर दिया था। यह ऊँची जाति का नहीं था परन्तु बड़ा सम्पन्न था। इस समय राजा शालिवाहन विपत्ति में पड़ा हुआ था इसलिए उसने यह विवाह सम्बन्ध कर दिया था।

इस अमनदास ने रायसिन को जीतने में सुलतान बहादुर गुजराती की बड़ी सहायता की थी। इसलिए उसकी पदोन्नति की गई और उसको संग्रामशाह की उपाधि दी गई थी। यह अर्जुनदास का पुत्र, सुखनदास का पौत्र और गोरखदास का प्रपौत्र था। गोरखदास खरजी का पुत्र था। प्राचीनकाल से गढ़ के शासक घराने की अच्छी प्रतिष्ठा चली आ रही थी परन्तु खरजी ने अपनी बुद्धि और युक्ति के द्वारा इस प्रदेश के दूसरे मुखियाओं से कर संग्रह करना शुरू कर दिया और एक सौ सवार तथा दस हजार प्यादों की सेना बना ली। उसके पौत्र सुखनदास ने अपने बाबा की योजना जारी रखी और अपनी सेना में पाँच सौ सवार तथा साठ हजार प्यादे भर्ती कर दिए। उसके प्यादों और सवारों में बहुत से राजपूत भी थे। उसको दो अच्छे सहायक भी मिल गए। एक हमीरपुर में निवास करने वाली खरचली जाति का था और दूसरा परिहार जाति का था। उसके समय में शासन का संचालन बड़ी बुद्धि और शक्ति के साथ होता था। फिर चालीस वर्ष की अवस्था में अर्जुन गद्दी पर बैठा और उसके बाद अमनदास राजा हुआ।

अमनदास चालाक आदमी था और उसका स्वभाव भी खराब था। वह अपने पिता की इच्छा का सदा विरोध किया करता था और दुष्ट कामों में लगा रहता था। उसके पिता ने उसे कई बार कैद में डाल दिया था और फिर उससे कई प्रकार के वचन भरवाये थे परन्तु यह अपनी बुरी आदतों को नहीं छोड़ता था। कुछ लज्जाजनक कार्य करने के बाद वह पन्ना के राजा रामचन्द्र के दादा राजा नृसिंहदेव के पास भागकर चला गया। राजा नृसिंह देव ने उसके साथ पुत्रवत् व्यवहार किया। जब नृसिंह देव सुलतान सिकन्दर लोदी की सेवा करने के लिए गया तो वह अमनदास को अपने नाबालिग पुत्र परविहन के पास छोड़ गया। तब उसने बड़ी बुद्धिमत्ता से काम किया। अर्जुनदास अपने दुश्चरित्र पुत्र से असन्तुष्ट था। इसलिए उसने अपने दूसरे पुत्र जोगीदास को अपना उत्तराधिकारी बना दिया। परन्तु जोगीदास ने अपने बड़े भाई के अधिकार पर घात नहीं किया और उत्तराधिकार स्वीकार नहीं किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अपने पिता के इरादे का समाचार सुनकर अमनदास तुरन्त ही वहाँ पहुँच कर अपनी माता के निवास में छिप गया और राजा के एक नौकर की सहायता से, जिसके साथ उसका पुराना सम्बन्ध था, उसने अपने पिता को मार डाला। तब वहाँ के लोगों ने एकत्र होकर उसे बन्दी बना लिया और एक आदमी के द्वारा यह सूचना उसके भाई के पास भेजी। फिर भी छोटे भाई ने उनकी बात न मानी। उसने अपने बड़े भाई के विरुद्ध कोई कार्य नहीं किया और उसे अपने पिता के तुल्य समझा। परन्तु साथ ही यह कहा कि उसने नारकीय कार्य किया है। इसलिए वह उसका मुँह नहीं देखना चाहता है। उसे बहुत समझाया गया परन्तु सब निष्फल हुआ और वह जंगलों में चला गया।

उसके पिता के दो विश्वसनीय मित्र कर्तव्य-पथ पर आरूढ़ रहे। उन्होंने अमनदास का उत्तराधिकार स्वीकार नहीं किया। उन्होंने सारा वृत्तान्त राजा नृसिंहदेव के पास भेजा और आग्रह किया कि इस प्रदेश पर वह अपना अधिकार कर ले। राजा ने सुलतान सिकन्दर से छुट्टी लेकर एक बड़ी सेना के साथ प्रयाण किया। अमनदास पर्वतों में छिप गया परन्तु वह राजा की शक्ति के सामने नहीं टिक सकता था। इसलिए उसने राजा के साथ पत्र-व्यवहार शुरू किया और कहलवाया कि अपनी मूर्खता और दुष्टता के वश उसने एक पिता को तो मार डाला है परन्तु अब दूसरे पिता के विरुद्ध युद्ध कैसे कर सकता है। जब राजा ने सारे प्रदेश को खूंद डाला और शासन के लिए अपने आदमी नियत कर दिए तो थोड़े से आदमियों के साथ अमनदास रास्ते में उससे आकर मिला और खूब रोया पीटा। तब राजा ने उसे क्षमा कर दिया और उसका देश वापस लौटा दिया। अमनदास अपने अपराध पर रोता रहा। यह कहना कठिन है कि यह उसका केवल ढोंग था या वह अपने लोगों के प्रति हार्दिक दु:ख प्रकट करता था। जब अमनदास मरा तो उसका पुत्र दलपत गद्दी पर बैठा और सात वर्ष राज्य करके मर गया।

ऐसा कहा जाता है कि अमनदास के, जिसने संग्राम का नाम धारण कर लिया था, कोई पुत्र नहीं था। इसलिए उसने अपने एक सेवक गोविन्ददास कछवाहा से कहा कि वह अपनी गर्भवती स्त्री को उसके जनाने में भेज दे और वहाँ प्रसव हो। यदि पुत्री होगी तो वह गोविन्ददास को दे दी जाएगी और यदि पुत्र होगा तो अमनदास उसको अपना पुत्र मानेगा और किसी को उसका पता नहीं लगेगा। गोविन्ददास ने यह बात मान ली और पुत्र उत्पन्न हुआ जिसको राजा का पुत्र प्रकट किया गया। इसका नाम दलपत रखा गया और उसका विवाह दुर्गावती से हुआ। जब उसकी मृत्यु हुई तो उसके वीरनारायण नामक एक पुत्र था। अधार कायथ की सहायता से रानी ने शासन अपने हाथ में ले लिया। उसमें साहस और कौशल की कोई कमी नहीं थी। दूसरे राज्यों के साथ भी वह अपना सम्बन्ध दूरदर्शिता के साथ निभाती थी। उसने बाजबहादुर और उसके सेनापतियों से कई लड़ाइयाँ लड़ीं और हमेशा विजयी हुई। उसके पास बहुत अच्छे बीस हजार घुड़सवार व एक हज़ार

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उत्तम हाथी थे। उस राज्य के राजाओं का सारा कोप उसके हाथों में था। वह बन्दूक और तीर का निशाना बहुत अच्छा लगाती थी और प्रायः शिकार करने जाया करती थी और अपनी ही बन्दूक से जानवरों को मारा करती थी। जब उसको किसी शेर की खबर मिलती थी तो उसे मारे बिना उसे चैन नहीं पड़ता था। उसके साहस की हिन्दुस्तान में कई कहानियाँ प्रचलित थीं। उसमें एक बहुत बड़ा अवगुण भी था। वह चाटुकारों की बातों पर अत्यधिक ध्यान देती थी। अपनी शक्ति से फूलकर उसने बादशाह की अधीनता स्वीकार नहीं की थी।

जब आसफखाँ ने पन्ना का प्रदेश जीत लिया तो रानी ने अपने नये पड़ोसी की ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। उसको अपने साहस, सेना और योग्यता का बड़ा दम्भ था। आरम्भ में तो आसफखाँ ने उसके साथ मित्र भाव रखा परन्तु वह उसके राज्य में गुप्तचर और बुद्धिमान व्यापारियों को भेजता रहा जो उसको आने-जाने के मार्गों के विषय में सूचना देते रहे। जब उसको इस स्त्री के धन और कोष का पूरा पता लग गया तो उसने उस प्रदेश को जीतने का विचार किया। शुरू में तो उसने सीमा के गाँवों को लूटा फिर उसको शाही आदेश प्राप्त हो गया कि गढ़ प्रदेश को जीत लिया जाय।

शासन का बारहवाँ वर्ष

बंगाल का सुलेमान किरानी

[मूल पाठ जि० 2, पृ० 409] जब बादशाह चित्तौड़ के घेरे में व्यस्त था तो बंगाल वाले सुलेमान किरानी ने पुनः बादशाह के नाम का खुतुबा पढ़वाया और मुनीमखाँ खानखाना से ऊपरी सुलह कर ली। इस विषय में घटनाएँ इस प्रकार घटीं—जब मुबारिजखाँ ने, जो अदली के नाम से प्रसिद्ध था, बंगाल में राजसत्ता का दावा किया तो ताजखाँ किरानी अपने भाइयों के साथ बिहार में भाग गया। वहाँ पर उसने चालाकी के मार्ग का अनुसरण किया। उसका यह ढंग बंगाल के शासक मोहम्मदखाँ के समय में चलता रहा जिसने पहले विद्रोह किया था और बाद में बहादुरखाँ के समय भी यही चाल रही। फिर बहादुरखाँ के विरुद्ध लड़ता हुआ अदली मारा गया। जब कुछ समय के बाद बहादुरखाँ मर गया तो उसके भाई जलालुद्दीन ने बंगाल और बिहार की राजसत्ता का दावा किया। ताजखाँ और उसके भाई कभी उसका विरोध करते थे और कभी उसके साथ हो जाया करते थे। उसने खानजमा के साथ चालाकी और मिथ्याचार के साथ मित्रता कर ली। जब जलालुद्दीन की मृत्यु हो गई तो ताजखाँ ने बंगाल और बिहार पर अधिकार प्राप्त कर लिया। थोड़े अर्से बाद वह मर गया और उसके छोटे भाई सुलेमान ने गद्दी पर बैठकर इन दोनों प्रान्तों पर अपनी सत्ता जमा ली। सुलेमान ने भी खानजमा के साथ एक प्रकार की मित्रता बनाए रखी परन्तु अपने हितों का बड़ा ध्यान रखा और अपनी स्थिति दृढ़ कर ली। अनेक लुटेरे अफगान उसके पास आकर एकत्र हो गए और उसने बहुत

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सारी सम्पत्ति जुटा ली तथा बहुत से हाथी एकत्र कर लिए। जब खानजमा को अपने कर्मों के अनुसार दण्ड मिल गया तो बादशाह ने मुनीम खानखाना को जौनपुर का हाकिम नियुक्त किया। खानजमा का एक अधिकारी जिसका नाम असदुल्लाखाँ था, जमानिया का शासक था। यह स्थान खानजमा ने बनवाया था। जब खान की मृत्यु हो गई तो असदुल्ला ने मूर्खतावश सुलेमान के पास अपना आदमी भेजकर कहलाया कि वह इस स्थान को उसे देकर उसकी प्रजा बनना चाहता है। मुनीमखाँ को इसकी सूचना मिल गई। इसलिए उसने असदुल्ला के पास कुछ आदमी भेजे और उसको अपना निश्चय छोड़ देने पर तैयार कर लिया और वह खानखाना के पास जाने के लिए राजी हो गया। जो अफगान सेना जमानिया पर अधिकार प्राप्त करने के इरादे से आई थी वह निराश होकर वापस चली गई। लोदीखाँ, जो सुलेमान का प्रधानमन्त्री था और अपनी बुद्धि के लिए प्रसिद्ध था, इस समय सोन नदी के किनारे पर था। वह जानता था कि मुनीमखाँ खानखाना शान्तिप्रिय व्यक्ति है। इसलिए उसके साथ मैत्री सम्बन्ध स्थापित कर लिया। उसे आशा थी कि इस प्रकार वह अपने प्रदेश को शाही सेना के आक्रमणों से सुरक्षित रख सकेगा। उन दोनों ने आपस में पत्र लिखे, भेंटें भेजीं और मित्रता को दृढ़ किया। इस अर्से में बादशाह चित्तौड़ के दुर्ग में व्यस्त था और सुलेमान उड़ीसा के राजा और इब्राहीम को दबाने में लगा हुआ था।

परन्तु सुलेमान को खानखाना की ओर से चैन न था। इसलिए बादशाह चित्तौड़ के दुर्ग को घेरे हुए था तो उसने खानखाना के साथ मैत्री स्थापित करने का प्रयत्न किया और लोदी के द्वारा बातचीत शुरू की। कुछ पत्र-व्यवहार के बाद यह तय हुआ कि खानखाना सुलेमान से मिले और बादशाह तथा सुलेमान के बीच सुलह करके ऐसी व्यवस्था करे कि बादशाह के नाम का खुतुबा पढ़ा जाय और सिक्कों पर उसका नाम खुदे। खानखाना ने इस उद्देश्य को दृष्टि में रखकर जाने का निश्चय किया। परन्तु कितने ही बुद्धिमान और दूरदर्शी व्यक्तियों ने यत्न किया कि वह न जाय। परन्तु उसने कुछ ध्यान न दिया और पटना की ओर कूच किया। उसके साथ तीन सौ चुने हुए आदमी थे और कई अफसर और सेवक थे। सबकी संख्या मिलकर एक हजार के लगभग थी। लोदी उससे मिलने आया और उसके प्रति उचित आदर प्रकट किया। फिर सुलेमान का ज्येष्ठ पुत्र बायजिद भी आया और सुलेमान स्वयं भी पटना से पाँच कोस की दूरी पर उसका स्वागत करने के लिए उपस्थित हुआ। फिर सुलेमान उसको अपने निवास-स्थान पर ले गया और वहाँ उसका खूब आतिथ्य किया। बादशाह के नाम का खुतुबा पढ़ा गया और सिक्के जारी हुए और बादशाह के लिए उपयुक्त भेंट भी तैयार की गई। परन्तु सुलेमान के कुछ उत्पाती अनुचरों ने खानखाना को पकड़ने की युक्ति रची। इस समय बादशाह अपने बड़े-बड़े अमीरों के साथ चित्तौड़ के घेरे में व्यस्त था। राजधानी में भी कोई नहीं था। इसलिए खान के विरुद्ध जो युक्ति रची गई उसका कौन विरोध करता। जब

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लोदी को इस षड्यन्त्र का पता चला ,तो उसने यत्न किया कि इन लोगों को इस इरादे से हटाया जाय । सुलेमान ने उसकी बात मान ली परन्तु तीन भयंकर अफगान ऐसे थे जिन्होंने उसकी बात नहीं सुनी । खानखाना को इस षड्यन्त्र का पता लग गया और लोदी की सलाह से वह एक युक्ति करके डेरे से चला गया और घोड़े पर सवार होकर जल्दी ही चलता बना। उसके साथ सात बहुत अच्छे सवार थे। अफगानों को उसके बचकर भाग जाने का पता लगा तब तक तो वह बहुत दूर चला गया था । जब उनका इरादा सफल नहीं हुआ तो उन्होंने मैत्री-भाव बनाये रखने का दिखावा किया। बायजिद और लोदी शीघ्रता से खान के पीछे-पीछे गये और उसके प्रति आदर और सम्मान प्रकट करके वे वापिस आ गए। खानखाना ने गंगा पार की और दो-तीन मन्जिल जाने के बाद उसको चित्तौड़ विजय का समाचार मिला ।

अब सुलेमान निर्भय होकर बंगाल को वापिस लौटा और उसने सारा ध्यान अपने निजी काम पर लगा दिया । उसने छलपूर्वक उड़ीसा प्रदेश छीन लिया । यहाँ पर जगन्नाथ का मन्दिर स्थित है । उसने दगा करके राजा को मार डाला । दिल्ली का सुलतान इब्राहीम जिसका दिमाग इस समय ठीक नहीं था और जो अपने पद से च्युत होने के कारण कुछ विक्षिप्त सा था, उड़ीसा के राजा की शरण में रहता था और अब भी राजसत्ता प्राप्त करने के स्वप्न देखा करता था। सुलेमान ने शपथपूर्वक वायदे करके इब्राहीम को अपने चंगुल में फँसा लिया और फिर उसे परलोक भेज दिया।

शासन का सहत्रवाँ वर्ष

सरनाल की लड़ाई

रात्रि होने के दो घण्टे पहले एक ब्राह्मण मिला जिसने उन्हें सूचित किया कि शत्रु एक बहुत बड़ी सेना के साथ सरनाल के कस्बे में पड़ा हुआ है । यह स्थान चार कोस की दूरी पर सकानीर नामक नदी के तट पर स्थित है । यह सूचना मिलने पर बादशाह ने युद्ध समिति से सलाह की तो जलालखाँ ने आग्रह किया कि अभी अपनी सेना नहीं आई है और शत्रु की शक्ति बहुत बड़ी है इसलिए दिन में लड़ाई करना उचित नहीं है । या तो जब तक सहायक सेना आ जाय तब तक प्रतीक्षा करनी चाहिए या लड़ाई रात में करनी चाहिए। यह युक्तियुक्त और दूरदर्शी सलाह बादशाह को पसन्द नहीं आई । उसने कहा कि यह वीरोचित कार्य नहीं है और तुरन्त ही हमला कर देना उपयुक्त है। उसने कहा कि "हममें से हर एक अपना-अपना प्रतिद्वन्द्वी चुन ले और उसको समाप्त करे ।" भगवान पर भरोसा करके ये लोग चल दिए और सरनाल दिखाई देने लगा। बादशाह कुछ आगे बढ़ा और महिन्द्री[1] नदी के तट पर पहुंच कर उसने अपने आदमियों को व्यवस्थित किया । उसने आदेश दिया कि सब लोग अपने-अपने कवच पहन लें । जिस समय उसने आक्रमण शुरू किया तो उसके पास चालीस आदमियों से अधिक न थे ।

---

1 महिन्द्री ही माही नदी है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अब सूचना मिली कि सेना भी आ पहुँची है। परन्तु वह उनकी सुस्ती के कारण बड़ा नाराज था। इसलिए उसने कहा कि इस युद्ध के सम्मान में उनमें से किसी को भी शामिल नहीं होना चाहिए परन्तु उससे कहा गया कि सेना अपना रास्ता भूल गई है और शाहबाजखाँ, जो उनको जल्दी ले आने के लिए भेजा गया था, उनके पास बहुत देर में पहुँचा। इससे बादशाह का क्रोध शान्त हुआ। सेना के साथ जो अमीर आये थे उनमें खान-ए-आलम, सईद महमूदखाँ बरहा, राजा भगवान दास, शाह कुलीखाँ, महरम, कुँवर मानसिंह, बाबाखाँ काकशाल, भूपत, सलीमखाँ काकर, भुजहाजी यूसुफखाँ और अन्य लोग थे। अब सारी सेना में दो सौ आदमी हो गए थे। जब नदी पार की जा रही थी तो मानसिंह ने प्रार्थना की कि उसको सेना के अग्र भाग का अध्यक्ष बनाया जाय परन्तु बादशाह ने कहा कि सेना इतनी थोड़ी सी है कि विभाजन नहीं किया जा सकता। इसलिए सबको साथ-साथ दिल से लड़ना चाहिए। परन्तु मानसिंह ने बहुत ही प्रार्थना की कि उसको स्वामिभक्ति प्रदर्शित करने का अवसर दिया जाय और कुछ कदम आगे बढ़कर लड़ने की अनुमति प्रदान की जाय। उसे यह अनुमति दे दी गई और कुछ वीर पुरुषों के साथ वह आगे बढ़ा। अकबर और उसके साथी पीछे-पीछे चले और एक थाह के द्वारा उन्होंने सुरक्षित रूप से नदी पार कर ली।

इब्राहीम हुसैन मिर्जा ने पहले ही सरनाल के कस्बे में प्रवेश कर लिया था। जब उसने आती हुई सेना की धूलि देखी और उसे यह भी मालूम हुआ कि सवारों ने नदी को किस प्रकार पार किया है तो उसने अपने साथियों से कहा कि बादशाह इन लोगों में अवश्य ही मौजूद है। परन्तु इस अभागे मूर्ख ने अपनी सेना कस्बे से बाहर निकाल कर एक ऊँचे स्थान पर जमा कर दी। जब बादशाह ने नदी पार की तो उसके लोग छोटे-छोटे झुण्डों में बिखरे हुए थे और ज्यों-त्यों आगे बढ़ रहे थे। स्वयं बादशाह के साथ थोड़े से आदमी थे। वह सरनाल के नदी-द्वार के पास पहुँचा और वहाँ उसे विद्रोहियों के एक गिरोह का सामना करना पड़ा। परन्तु मुकबीलखाँ नामक एक कल्मक दास कुछ वीर पुरुषों के साथ आगे झपटा और उसने रक्त से जमीन लाल कर दी। नगर में प्रवेश करने पर देखा गया कि वहाँ आदमी मरे पड़े हैं और इब्राहीम हुसैन मिर्जा दूसरे द्वार से लड़ाई की तैयारी करने के लिए भाग गया है।

बादशाह ने कस्बे की गलियों और लोगों के झुण्डों में से रास्ता निकालकर अपने आदमियों को उत्साहित करने का तथा सेना में भय उत्पन्न करने का प्रयत्न किया। कुछ वीर पुरुषों के साथ बाबा खान काकशाल ने हमला करके शत्रु को पीछे धकेल दिया। नगर की गलियों में से निकलने के बाद अन्य लोग भी सब ओर से आकर लड़ाई में शामिल हो गए। इनमें राजा भगवन्तदास का भाई भूपत भी था। उसका शत्रु के एक समूह से सामना हो गया और वह वीरतापूर्वक लड़ता हुआ मारा गया। भूमि ऊबड़-खाबड़ थी और काँटेदार झाड़ियों से ऐसी ढकी हुई थी कि दो सवार बराबर आगे नहीं बढ़ सकते थे। तो भी बादशाह धीरे-धीरे आगे बढ़ता गया। राजा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भग़वन्तदास उसकी सहायता कर रहा था। उन पर शत्रु पक्ष के तीन लोगों ने हमला किया। एक ने भगवंतदास पर अपना भाला उठाया परन्तु राजा अपनी रकाब पर ही खड़ा हो गया और वार को वचाकर उसने अपने शत्रु पर अपने भाले का ऐसा प्रहार किया कि वह वापस हट गया। पर अन्य दो ने वादशाह पर आक्रमण किया तो वीच में ऐसी वड़ी झाड़ी आ गई जिसके कारण खान-ए-आलम और अन्य लोग वादशाह की कोई सहायता न कर सके। परन्तु वादशाह ने झाड़ी में से ही शत्रुओं पर ऐसा भयंकर आक्रमण किया कि वे वापस मुड़कर भाग गये। इब्राहीम हुसैन वीरतापूर्वक लड़ रहा था परन्तु वह हार कर वापस मुड़कर भाग गया। शाही सैनिकों ने उसका पीछा किया और अनेक भगोड़ों को मार गिराया।

बंगाल के मामले

जव सुलेमान किरानी की मृत्यु का समाचार फैल गया तो खानखाना मुनीमखाँ ने चुनार के दुर्ग से विहार के प्रान्त के विरुद्ध कूच किया। लगभग इसी समय सिकन्दर उजवेग मर गया। तव खानखाना ने एक सेना देकर तंगड़ी कुली को हाजीपुर के विरुद्ध रवाना किया और दूसरी सेना देकर तालिवी को पटना के विरुद्ध भेजा। गूजर सामना नहीं कर सका और भेंट भेजकर उसने अधीनता का प्रस्ताव किया। उसने शाही नौकरी करने का ओर बंगाल की विजय में सहायता देने का भी प्रस्ताव किया। शर्त यह रखी कि उसके और उसके कुटुम्व के निर्वाह के लिए गोरखपुर उसे दे दिया जाय और विहार का प्रान्त शाही अमीरों को जागीर में दे दिया जाय या हाजीपुर और विहार सरकार उस वर्ष के लिए उसके पास रहने दिया जाय और वहाँ की मालगुजारी शाही कोष में जमा करने का उत्तरदायित्व उस पर रख दिया जाय और अगले वर्ष उसको बंगाल की जागीर मिल जाय। मुनीमखाँ ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। वह गोरखपुर को उसके सुपुर्द करने ही वाला था तो लोदी ने, जिसकी चालाकी उस देश के प्रत्येक मामले में प्रकट होती थी, हासिमखाँ के साथ षड्यंत्र करके यह व्यवस्था भंग कर दी। जव गूजर ने देखा कि उसको मुनीमखाँ से कुछ प्राप्ति की आशा नहीं है तो वह वाध्य होकर लोदी से मिल गया।

लोदी से कर प्राप्त करके मुनीमखाँ वापस लौटने लगा तो उसको सूचना मिली कि यूसुफ मोहम्मद ने गोरखपुर पर अधिकार कर लिया है। मुनीमखाँ सुलेमान उजवेक के पुत्र यूसुफ मोहम्मद को दरवार में ले गया था और उसके दुष्टाचरण की ओर उसने वादशाह का ध्यान आकर्षित किया था और बादशाह ने यह उचित समझा था कि उसको कैद में रखा जाय। परन्तु जब वादशाह गुजरात की लड़ाई पर रवाना हुआ तो यूसुफ आगरे के बन्दीगृह से भाग गया और पाइन्दा मोहम्मद बंगश के आदमियों के हाथों से उसने गोरखपुर छीन लिया। जब मुनीमखाँ को इस वात का पता लगा तो उसने तुरन्त ही खानमोहम्मद बसूदी और पाइंदा मोहम्मद बंगश को इस विद्रोह का दमन करने का आदेश दिया। वह स्वयं भी मोहम्मद कुलीखाँ बिरलास,

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मजनूखाँ काकशाल और अन्य अमीरों के साथ मोहम्मदावाद के कस्बे से रवाना हुआ। परन्तु कूच के समय मजनूखाँ तमाम काकशालों के सहित उसको छोड़ कर चला गया। इसका कारण यह था कि मजनूखाँ को यह झूँठी खवर मिली थी कि बाबाखाँ जव्वारी, मिर्जा मोहम्मद शाह और अन्य काकशाल, जो गुजरात की लड़ाई में बादशाह के साथ गए थे, शाहवाजखाँ को मार कर मिर्जाओं से मिल गए हैं। इसके परिणामस्वरूप ऐसा आदेश आया है कि मजनूखाँ को गिरफ्तार कर लिया जाय। खानखाना ने अफसरों को भेजकर मजनूखाँ को विश्वास दिलाना चाहा और उसे अपने पास बुलाया परन्तु इन लोगों के प्रयत्न सफल नहीं हुए। जब बाबाखाँ के पत्र आए कि बादशाह ने उस पर क्या-क्या कृपाएँ की हैं और उसने लड़ाई में क्या-क्या सेवाएँ की हैं तब उसको विश्वास हुआ। इन शंकाओं से लज्जित होकर वह वापिस लौट आया और खानखाना की सेना में सम्मिलित हो गया परन्तु उसके आने से पहले ही खानखाना ने गोरखपुर पर कब्जा कर लिया था।

इसी दौरान घमंड से फूलकर दाऊद ने जौनपुर पर प्रयाण कर दिया था और लोदी को एक चुनी हुई सेना और हाथियों के साथ आगे भेज दिया था। मुहरदार मोहम्मद कासिम ने आत्मसमर्पण कर दिया था; इसलिए जमानिया पर उसका अधिकार हो गया। खानखाना ने अपने अधीन अमीरों को इकट्ठा किया और दाऊद के विरुद्ध एक बहुत बड़ी सेना भेजी और वह स्वयं धीरे-धीरे पीछे से चला। जमानिया पर अधिकार हो जाने से लोदी बहुत फूल गया था और उसने पाँच या छः हजार आदमी यूसुफ मोहम्मद के नेतृत्व में गंगा पार उतार दिए थे। यूसुफ मोहम्मद गोरखपुर से भागकर अफगानों में जा मिला था। उसके गंगा पार करने के बाद मिर्जा हुसैनखाँ और राजा गजपति ने हमला करके उसको हरा दिया और उसको बड़ी क्षति पहुँचाई। गाजीपुर में मोहम्मद कुलीखाँ बिरलास और अन्य अमीर विजेताओं से आ मिला। उनके साथ एक बड़ी सेना थी। खानखाना भी एक बड़ी सेना लेकर आ पहुँचा। लोदी ने शाह नदी और गंगा नदी के बीच मिट्टी की दीवार बनाई और उसके पीछे अपनी सेना जमा दी। दोनों सेनाओं के वीर सिपाहियों में प्रतिदिन मुठभेड़ होने लगी। यद्यपि शाही सेना वीरतापूर्वक डटी रही तथापि उनके पास अच्छे आदमी, हाथी और तोपें नहीं थीं। इस समय बादशाह सूरत के घेरे में व्यस्त था इसलिए मुनीमखाँ ने सन्धि का प्रस्ताव किया परन्तु लोदी ने अभिमानपूर्वक यह अस्वीकार किया। शाही सेना के अमीरों का उत्साह टूट चुका था। वे लड़ने के लिए तैयार नहीं थे। परन्तु पीछे भी नहीं हटना चाहते थे। फिर भाग्य ने शाही सेना का साथ दिया और लोदी उनके सन्धि-प्रस्ताव को स्वीकार करके पीछे हट गया।

कारण यह था कि जब बंगाल से दाऊद मुंघेर आया तो उसने ताज के पुत्र और अपने भतीजे यूसुफ को मार डाला क्योंकि उसको यह भय था कि शायद लोदी उसकी सहायता करेगा। लोदी ताज का एक पुराना सेवक था और उसने अपनी पुत्री का विवाह यूसुफ से कर दिया था। परन्तु उसके बीच-बचाव से कोई लाभ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नहीं हुआ। जब लोदी को इस घटना का पता लगा तो उसने दाऊद का साथ छोड़ दिया और वह मुनीमखाँ से जा मिला और बादशाह की सेवा में उसने उपयुक्त भेंट भेजी। जब दाऊद को इसका पता लगा तो वह वापस हट गया और गढ़ी के दुर्ग में बन्द हो गया। वहाँ पर उसने अपने पिता का कोष अपने सैनिकों में बाँट दिया। अब जलालखाँ सईद हूरी और काला पहाड़ जिसका नाम राजू था, लोदी से अलग हो गए और उसकी सेना में फूट पड़ गई। तब लोदी ने दाऊद पर आक्रमण करने का विचार त्याग दिया और वह रोहतास के किले में छिप गया। वहाँ से उसने बादशाह के प्रति मुनीमखाँ को अपनी स्वामिभक्ति का विश्वास दिलाया और उससे सहायता माँगी। खान ने उसको सहायता दी और वह चिन्तापूर्वक बादशाह की वापसी की प्रतीक्षा करने लगा।

सूरत में ईसाई लोग

जब सूरत का घेरा चल रहा था तो ईसाइयों की एक बड़ी मण्डली गोआ से आई। वे बादशाह के सामने उपस्थित हुए। यद्यपि यह बहुत सम्भव था कि वे घिरे हुए लोगों की सहायता करने के लिए आए हों और किले पर शायद स्वयं ही वे अपना अधिकार करना चाहते हों, परन्तु जब उन्होंने शाही सेना की शक्ति को देखा और यह भी समझा कि घेरा कैसी शक्ति के साथ चल रहा है तो उन्होंने अपने आपको राजदूत बतलाया और बादशाह से भेंट करने के सम्मान की कामना की। उन्होंने अपने देश की कई बहुमूल्य वस्तुएँ भेंट स्वरूप दीं। अकबर ने उनमें से प्रत्येक व्यक्ति के साथ अनुग्रहपूर्वक बर्ताव किया और पुर्तगाल के मामलों पर तथा अन्य यूरोपीय विषयों पर उनके साथ बातचीत की।

शासन का अठारहवाँ वर्ष

ईडर और डूंगरपुर

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 8] जब बादशाह गुजरात से आगरा लौटने के लिए रवाना हुआ तो उसने मुजफ्फरखाँ को मालवा का सूबेदार नियुक्त किया। उसने मानसिंह, शाह कुलीखाँ महरम और अन्य लोगों को एक बहुत बड़ी सेना के साथ ईडर के मार्ग से डूंगरपुर और उसके पास के इलाके में इस उद्देश्य से भेजा कि जमींदारों को अधीन करके वे आगरा वापिस लौटें। बादशाह 2 शफर 981 हिजरी को राजधानी में पहुँचा और कुछ अर्से बाद मानसिंह और अन्य अमीर, जो ईडर के रास्ते से गए थे, वापस शाही झण्डे के नीचे आ गए। जब यह सरदार और उसके अनुचर डूंगरपुर पहुँचे तो उन्होंने देखा कि वहाँ के जमींदार सामना करने के लिए तैयार थे। मानसिंह ने उन्हें हरा दिया, उनको बड़ी क्षति पहुँचाई। देश को लूटने के बाद वह आदेशानुसार राणा के प्रदेश में उदयपुर पहुँचा। राणा उससे मिलने के लिए आया और उसने बड़ी अधीनता के साथ शाही खिलत, जो उसके वास्ते भेजी गई थी, स्वीकार की। वह मानसिंह को अपने महल में ले गया और वहाँ उसका

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आतिथ्य किया। राणा के मन में कुछ धोखे की बात आई परन्तु उसके हितैषियों ने उसको ऐसा करने से रोक दिया और मानसिंह शान्तिपूर्वक वहाँ से रवाना हो गया।

मुजफ्फरखाँ

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 8] मुजफ्फरखाँ बादशाह की सेवा में उपस्थित होने के लिए आया और उसे मन्त्री का पद प्रदान किया गया। गुजरात से आदेश भेज दिया गया था कि वह अपने वर्तमान पद को छोड़कर शाही दरबार में तुरन्त हाजिर हो। इसलिए वह सारंगपुर से राजधानी की ओर तुरन्त रवाना हुआ और उसे मन्त्री पद पर नियुक्त कर दिया गया। परन्तु थोड़े समय में ही वह दम्भी और घमन्डी हो गया। वह किसी की बात नहीं सुनता था और समझता था कि उसको वर्तमान पद उसकी योग्यता के कारण मिला है, बादशाह के अनुग्रह के कारण नहीं। कुछ समय के बाद जब दाग (घोड़ों को दागने) के मामले पर विचार हुआ तो वह इतना फूल गया था कि उसने इस विषय की कोई जाँच नहीं की और मूर्खतापूर्ण बातें करने लगा। जब बादशाह पटना के विरुद्ध लड़ाई करने के लिए नावों द्वारा रवाना होने वाला था तो मुजफ्फरखाँ को शाही घराने का प्रबन्धक बनने के लिए कहा गया परन्तु उसने इस पद को ग्रहण करने में कई आपत्तियाँ कीं जिससे बादशाह की अप्रसन्नता और भी बढ़ गई।

शासन का उन्नीसवाँ वर्ष

हाजीपुर की विजय

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 75] खान-ए-आलम ने कई अनुभवी मल्लाह एकत्र किए और 24वीं अमुरदाद की शाम को नावें रवाना हुईं। मल्लाहों ने नावें ऐसी चतुरता के साथ चलाईं कि शत्रु को कुछ पता नहीं चला। तब वे उस नदी के ऊपर गए जो गंगा से निकल कर हाजीपुर के पास होकर जाती है। शाही सेना को देखकर शत्रु को बड़ा अचम्भा हुआ और उसने तोपें और बन्दूकें चलानी शुरू कीं। आक्रमण करने वाले हारने ही वाले थे कि बादशाह ने कई घराब, जो उसके पास थीं, उनकी सहायता के लिए भेजे। शत्रुओं ने उनको रोकना चाहा परन्तु नदी के बहाव के विरुद्ध वे कुछ न कर सके और उनका प्रयत्न विफल हुआ। तब गण्डक नदी के द्वारा शाही नावें हाजीपुर की ओर चलीं। उन पर जोर की अग्नि-वर्षा की गई परन्तु वे रुकी नहीं। सैनिकों ने नावों में से उतर कर उस स्थान पर आक्रमण किया। जोर की लड़ाई के बाद वह स्थान छीन लिया गया। कुछ बदमाशों ने गाँवों में आग लगा दी और उनको लूटना शुरू किया। परन्तु किले पर शाही सेना ने अधिकार कर लिया।

गढ़ी और टांडा

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 84] गढ़ी बंगाल का द्वार है। इसके एक ओर बड़े ऊँचे पहाड़ हैं जिन पर कोई आदमी पैदल भी कठिनता से ही चढ़ सकता है, फिर सवार का तो कहना ही क्या। दूसरी ओर कई नदियाँ गंगा में आकर गिरती हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इसके बीच में बड़ा दृढ़ दुर्ग है जिसको इस देश के शासकों ने बनाया था। अब एक युद्ध-समिति में विचार हुआ कि इस पर किस प्रकार आक्रमण किया जाए और यह निश्चय हुआ कि वहाँ तक पहुँचने के लिए कोई मार्ग ढूँढ़ना चाहिए। आसपास के जागीरदारों ने कहा कि तेली राजा के इलाके में होकर एक गुप्त मार्ग है उससे लद्दू जानवर तो नहीं जा सकते परन्तु सतर्क और होशियार सवार जा सकते हैं। इस रास्ते से मजनूखाँ को भेजा गया। उसके साथ एक छोटी-सी वीर और साहसी सेना थी। कियाखाँ गंग को आदेश हुआ कि कुछ मित्र जमींदारों के साथ वह गढ़ी की ओर कूच करे। शेष सेना प्रयाण करने ही वाली थी कि शाही सेना को देखकर शत्रु भयभीत हो गया। खानखाना की सेना से वे डगमगा गए और जब कियाखाँ की सेना दिखाई देने लगी तो वे भयभीत होकर भाग गए। ईश्वर की सहायता से ऐसा दृढ़ स्थान संघर्ष किए बिना ही हाथ में आ गया।

23वीं मिहर को बादशाह माणिकपुर के निकट स्कन्दरपुर पहुँचा जहाँ उसको खानखाना का पत्र मिला कि दाऊदखाँ भाग गया है और शाही सेना ने उसकी राजधानी टांडा पर अधिकार कर लिया है। जब गढ़ी का पतन हो गया तो दाऊदखाँ विजयी सेना के सामने नहीं टिक सका और पीछे हट गया। टांडा के पास गंगा नदी की दो शाखाएँ हो जाती हैं—एक सतगाँव और उड़ीसा की ओर जाती है और दूसरी महमूदाबाद, फतहाबात, सुनार गाँव और चटगाँव की ओर चलती है। दाऊद सतगाँव की नदी के किनारे-किनारे चला और उड़ीसा की सीमा पर पहुँच गया। उसे आशा थी कि वह वहाँ से सामना कर सकेगा। तब खानखाना ने प्रवेश करके टांडा पर अधिकार कर लिया जो बंगाल का केन्द्र है।

शासन का बीसवाँ वर्ष

बंगाल में विद्रोह

[मूलपाठ प्रति जि० 3, पृ० 109] जब खानखाना कटक में दाऊद के विरुद्ध युद्ध करने के लिए गया हुआ था तो काला पहाड़, बाबूई मंगली और कुछ असन्तुष्ट अफगानों ने सशस्त्र होकर काकशालों पर आक्रमण किया। इन लोगों ने थोड़ा-सा सामना किया और कायरता से अपने-आपको कलंकित कर लिया। अफगानों ने घोरा घाट के प्रदेश पर अपना कब्जा कर लिया और फिर काकशालों का पीछा किया और टाँडा पहुँचने तक उन्हें घोड़े की लगाम भी नहीं खींचने दी। खानखाना शीघ्रता से वापिस लौटा और टांडा में प्रवेश किए बिना ही एकदम शत्रु के पीछे चल दिया। उसने देखा कि विद्रोही सेना गंगा के दूसरी ओर खड़ी हुई थी। यहाँ से थोड़ी दूर पर नदी की दो शाखाएँ हो जाती हैं। इनमें से एक पर उसने जल्दी से पुल बनाया और दूसरी पर भी वह पुल बना रहा था कि शत्रु डरकर भाग गया। तब खानखाना मालदा की ओर चला और मजनूखाँ के नेतृत्व में एक छोटी-सी सेना उसने घोड़ा घाट की ओर भेजी जिसने तुरन्त ही उस स्थान को पुनः शाही अधिकार में कर लिया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बिहार में युद्ध की तैयारियाँ

[मूलपाठ प्रति जि० 3, पृ० 109] यह पहले ही कहा जा चुका है कि जब अकबर पटना को जीत कर वापस आया तो उसने यह उचित समझा कि मुजफ्फरखाँ को रोहतास के घेरे में फरादखाँ का सहायक बनाकर भेजा जाय और उसको भेंट करने का सम्मान प्रदान नहीं किया जाय। इस अपमान से खान हक्का-बक्का रह गया। परन्तु वह ख्वाजा शमशुद्दीनखाँ की नेक सलाह मानकर अपने धन से सेना इकट्ठी करने में लग गया। उसने शीघ्र ही जूंध और सहसराम पर कब्जा कर लिया। अब तक ये परगने किसी की जागीर में नहीं दिए गए थे क्योंकि बादशाह अन्य कामों में अत्यन्त व्यस्त था। उसने अपनी सेना को बहुत अच्छी तरह से तैयार किया और प्रशिक्षित किया और जब फरहतखाँ और दूसरे अमीर रोहतास के घेरे में लगे हुए थे तो उसने बड़ी तत्परता से सेवा की और अपनी वीरता का परिचय दिया। हैबतखाँ के पुत्र बहादुरखाँ ने किले में से निकलकर आक्रमण किया तो मुफफ्फरखाँ ने उसका सामना किया और उसको पीछे धकेल दिया तथा उसका बहुत सा गोला-बारूद और हाथी छीन लिए। तब अमीरों ने किले को घेर लिया और उसने फरहतखाँ से मिलकर बड़ा परिश्रम किया।

थोड़े समय में ही अपने कार्यों से मुजफ्फरखाँ पुनः बादशाह का कृपापात्र बन गया। बादशाह ने उसको पत्र लिखा और निर्देश किया कि यदि वह और उसके साथी अमीर समझते हों कि किला कुछ निश्चित समय में जीत लिया जायगा तब तो घेरा जारी रक्खा जाय, परन्तु यदि उसकी यह सम्मति हो कि घेरा बहुत दिन तक चलेगा तो उसको उठाकर सेना को अफगानों के विरुद्ध लगा दिया जाय, जो बिहार में गड़बड़ मचा रहे हैं और उन्हें शाही तख्त की वफादार प्रजा बनाने के लिए बाध्य किया जाय और यदि ऐसा न हो सके तो उन्हें घोर दण्ड दिया जाय। मुजफ्फरखाँ ने उत्तर दिया कि सेना के पास घेरा जारी रखने के लिए सामग्री नहीं है और यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि किला कब जीता जा सकेगा। इसलिए यह अधिक वांछनीय प्रतीत होता है कि इस प्रान्त को उन शत्रुओं से मुक्त किया जाय जो इसको सता रहे हैं। अतः वह मीरजादा अलीखाँ और दूसरे योद्धाओं के पास चला गया जिनको बादशाह इस प्रान्त में छोड़ गया था। वह मुहसिनखाँ अरब बहादुर और उस सेना से जा मिला जिनको मुनीमखाँ अपनी जागीर में रक्षा के लिए वहाँ छोड़ गया था। इनके साथ उसने अच्छी सेवा की और प्रान्त के समस्त दुष्ट तत्वों का दमन कर दिया। उसने आदमखाँ मुतब्बी को इब्राहीमपुर से निकाल दिया और दरियाखाँ को जसरकानूर नामक कस्बे से झाड़खण्ड की ओर धकेल दिया।

जब इस प्रकार शान्ति स्थापित हो गई तो मुनीमखाँ के अफसर उससे ईर्ष्या करने लगे और उसे वहाँ से निकाल दिया। उसके पास कोई जागीर नहीं थी जिसके द्वारा वह अपने साथियों का निर्वाह कर सकता। इसलिए वह खुदादाद बिरलास

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और ख्वाजा शमशुद्दीन के साथ जूंध और सहसराम की ओर चला गया। जब वह जा रहा था तो उसे समाचार मिला कि इन दोनों स्थानों पर भी रोहतास की सेना ने कब्जा कर लिया है। इसलिए उसने कूच करना जारी रक्खा तथा वीरता और सुप्रबन्ध के द्वारा उसने उन स्थानों से शत्रु को निकाल भगाया। उसने यह काम पूरा किया ही था कि बिहार में फिर गड़बड़ शुरू हो गई। बिहार के राजकर्मचारियों के कृतघ्न व्यवहार की उपेक्षा करके उसने फिर एक बार हस्तक्षेप किया और बहुत अच्छी सेवा की।

इस मामले की परिस्थितियां इस प्रकार थीं—मुनीमखाँ खानखाना अरब बहादुर को महीर में छोड़ गया था जो बिहार और झारखण्ड के बीच में स्थित एक दुर्ग है। गाजी और हाजी दो भाई उपद्रवी अफगानों के एक गिरोह के साथ झारखण्ड आए और उन्होंने इस स्थान पर कब्जा कर लिया। बहुत से दुर्गरक्षक तलवार के घाट उतार दिए गए परन्तु अरब बहादुर बच कर भाग गया और उस प्रान्त के अमीरों के पास चला गया। तब उन्होंने सेना इकट्ठी करके इस विद्रोह का दमन करने के लिए कूच किया। अफगान लोग पहाड़ों में चले गए और उनका सामना करने लगे। उनके पीछे अमीरों को भेजा गया परन्तु अन्त में उन्होंने देखा कि वे न तो आगे बढ़ सकते हैं और न पीछे हट सकते हैं। लगभग तीन सौ राजपूत, जो राजा भववानदास के अधीन थे, बड़ी वीरता से आगे बढ़े परन्तु हार गए और उनमें से लगभग सौ मारे गए। तब उन्होंने मुजफ्फरखाँ से सहायता के लिए कहलाया। जो अपने विजयी अनुचरों के साथ उनसे शीघ्र जा मिला।

इसी समय खानखाना का पत्र आया जिसके कारण वह अपनी गतिविधि के विषय में आगा-पीछा करने लगे। इस पत्र में यह समाचार था कि झारखण्ड के रास्ते से जुनेद शीघ्रतापूर्वक बिहार की ओर आ रहा है। इसलिए यह बड़ा आवश्यक था कि उसको सहायक सेना मिले उससे पहले ही उसको हरा दिया जाय। मुजफ्फरखाँ ने इस विषय में बड़ा साहस किया और निश्चय किया कि जुनैद के आने से पहले विद्रोही अफगानों का दमन करना अधिक उचित है। यह पता नहीं था कि जुनेदखाँ दस दिन से पहले समीप आ पहुंचेगा या नहीं और यह आशा थी कि उनके सामने के शत्रु एक ही दिन में भगा दिए जाएंगे। उसके बाद शाही सेना आक्रमणकारियों का अधिक अच्छा सामना कर सकेगी। इसलिए यह निश्चय किया गया कि सेना का एक भाग शीघ्रता और सावधानी से आगे बढ़े और शत्रु के बिल्कुल पीछे पहुंच जाय और प्रधान सेना सामने से लड़ने के लिए तैयार हो। मुजफ्फरखाँ मध्य भाग का नेतृत्व कर रहा था, फरदाखाँ दायीं ओर था और ख्वाजा शमशुद्दीन उस सेना का नेतृत्व कर रहा था जो शत्रु पर पीछे से हमला करने वाली थी।

शत्रु एक पहाड़ी पर जमे हुए थे। उनको अपनी संख्या पर और अपनी स्थिति की दृढ़ता पर बड़ा भरोसा था। जब उन्होंने देखा कि उनको आगे और पीछे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

से दबाया जा रहा है तो वे भयभीत होकर भाग गए। शाही सेना को विजय प्राप्त हुई और बड़ी लूट मिली। वे पीछा करते हुए झारखण्ड में रामपुर के पास एक पहाड़ी के निकट पहुंच गए जहाँ शत्रु लड़ने के लिए तैयार हो गया। मुजफ्फरखाँ सामने खड़ा हो गया और ख्वाजा शमशुद्दीन पहले की भाँति शत्रु के पीछे चला गया और उसने वीरतापूर्वक आक्रमण किया। शत्रु पक्ष से हुसैनखाँ और कई सेनानायक धराशायी हो गए तो विद्रोही भाग गए और शाही सेना को निश्चित विजय प्राप्त हो गई। अपनी विजय के लिए ईश्वर को धन्यवाद देने के बाद वे वापस हट कर अपने-अपने डेरों में चले गए।

इस विजय के समाचार से जुनैदखाँ ने कुछ अर्से के लिए विहार पर आक्रमण नहीं किया परन्तु कुछ दिन पश्चात् उसको उस प्रान्त में नजहतावाद पहुंचने का साधन मिल गया और वहाँ जाकर उसने विद्रोह खड़ा कर दिया। उस प्रान्त के अमीर वापस हट कर पटना चले गए और इस विपत्ति में उन्होंने मुजफ्फरखाँ से पुनः सहायता के लिए प्रार्थना की। इसलिए वह उनकी सहायता करने के लिए चला। जब वह कूच कर रहा था तो उसको बादशाह के पत्र मिले जिनमें उसकी सेवाओं की प्रशंसा की गई थी और उसको हाजीपुर की जागीर दी गई थी जो पहले मोहम्मद कुलीखाँ बिरलास के हाथ में थी। इससे उसको और अधिक परिश्रम करने के लिए प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। उसने अन्य अमीरों से मिल कर विद्रोहियों के विरुद्ध कार्यवाही करनी शुरू की। एल पुल बनाकर उसने पुनपुन नदी पार की। परन्तु अब उसको खानखाना से निदेश प्राप्त हुआ कि जुनैद पर हमला करते समय सावधानी की जाय क्योंकि वह स्वयं उस पर हमला करने का विचार कर रहा था। इस विलम्बन नीति पर अमीर लोग सहमत हो गए। यद्यपि मुजफ्फरखाँ की सलाह थी कि एकदम हमला कर दिया जाय परन्तु उसकी सलाह नहीं मानी गई। वह शान्त रहने या वापस लौटने के विरुद्ध था और जुनैद पर आक्रमण करने ही वाला था। उसी समय हाजीपुर में गड़बड़ मच गई जिससे आतंक फैल गया और उसको वहाँ जाने के लिए बाध्य होना पड़ा।

ताजखाँ पवार और दूसरे लोगों ने मीर मोहम्मद शौकीती पर आक्रमण कर दिया था। इसने मुजफ्फरखाँ की ओर से हाजीपुर की रक्षा की थी। उन्होंने उसको और उसके लगभग सौ सैनिकों को मार डाला इसलिए मुजफ्फरखाँ ने जुनैद के विरुद्ध कार्यवाही करने का विचार छोड़ दिया तथा खुदादाद बिरलास तथा अन्य लोगों के साथ हाजीपुर की ओर चला। उसके विरोधियों की संख्या बहुत बड़ी थी तो भी उसने उन पर आक्रमण करने का निश्चय किया। उनकी ओर सीधा नहीं जाया जा सकता था इसलिए वह गंगा पार करके सवानी नामक कस्बे में पहुंचा। इसके और हाजीपुर के बीच में गण्डक नदी का बहाव बड़ा तेज है। अफगानों को अपनी संख्या पर तथा शत्रु की निर्बलता पर बड़ा विश्वास था। परन्तु मुजफ्फरखाँ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में संकल्प-दृढ़ता थी जो विजय और सफलता की कुन्जी है। चम्पारन का जमींदार उदयकरण भी उससे आ मिला।

शत्रु नदी के एक तट पर था और मुजफ्फर दूसरे तट पर। दोनों नदी पार करना चाहते थे। तव जमींदार ने इस कठिन कार्य को करने के लिए एक सुझाव दिया। उसने कहा कि नदी के ऊपर की ओर उसके आदमियों के पास कुछ अच्छी मजवूत नावें हैं जिनके द्वारा सैनिकों को पार ले जाया जा सकता है। तव रात में कासिम अली सिस्तानी के नेतृत्व में तीन सौ आदमी भेजे गये। इनके साथ सन्देश वाहक भी थे जिनसे यह कहा गया था कि जव सैनिक सुरक्षित पार उतर जायँ तो समाचार दिया जाये। जव यह समाचार मिला कि सेना का वह भाग नदी पार करके शत्रु के निकट पहुँच रहा हैं तो मुजफ्फरखाँ ने आदमियों से भरी हुई नावें नदी पार शत्रु पर सामने से हमला करने के लिए भेजीं। इनका नेतृत्व ख्वाजा शमशुद्दीन और खुदादाद विरलास कर रहे थे। अफगानों ने उन पर तोड़ेदार बन्दूकों से गोलियाँ और तीर बरसाना शुरू किया परन्तु लड़ाई के समय अफगानों के पीछे ढोल भेज दिये गये थे जो बजाए जाने लगे। इससे अफगानों में आतंक छा गया और वे भाग गये। उनमें से बहुत से मारे गये। हाजीपुर उनसे खाली हो गया और विजेताओं के हाथ में वहुत बड़ी लूट आई। पटना के लोग इस गति को बड़ी द्वेषपूर्ण नीति से देख रहे थे। यद्यपि उनमें निराशा छाई हुई थी तो भी उन्होंने विद्रोहियों को किसी प्रकार की सहायता नहीं दी।

इस सफलता के बाद मुजफ्फरखाँ को सूचना मिली कि उपद्रव करने के विचार से फतखाँ मुसाजाई और कुछ अन्य लोगों ने गंडक नदी के दूसरी ओर अफगानों की एक बड़ी सेना एकत्र करली है। मुजफ्फरखाँ ने उत्साह और दूरदर्शिता से उनका सामना करने के लिए तुरन्त ही प्रयाण किया। नदी पर पहुँच कर उसने कुछ लोगों को जाँच करने के लिए भेजा और यह भी देखने के लिए कहा कि नदी पार करने का स्थान तलाश करें। यहाँ नदी तंग तो है परन्तु बड़ी गहरी है। जव वह इस काम में व्यस्त था तो शत्रु के लगभग दो सौ सवार दिखाई दिये। उसने तुरन्त ही ख्वाजा शमशुद्दीन और अरव वहादुर को आदेश दिया कि कुछ चक्कर लगा कर नदी पार करे और शत्रु को पता लगने से पहिले ही आक्रमण करे। उन्होंने आज्ञा का पालन किया परन्तु शत्रुओं को उनके आने का पता लग गया तथा वे और सहायता प्राप्त करने के निमित्त पीछे हट गये। तब मुजफ्फरखाँ ने अपनी अग्रसेना में जा मिलने के लिए नदी पार की। शत्रु भाग रहे थे परन्तु अब उनकी सहायक सेना आ गई इसलिए उन्होंने पीछे मुड़ कर लड़ाई लड़ी। शत्रु की संख्या बहुत बड़ी थी। इसलिए शाही सेना त्रस्त हो गई और भाग कर तितर-वितर हो गई। बहुत से नदी में कूद पड़े और डूब कह मर गये। मुजफ्फरखाँ भी नदी में कूदने ही वाला था कि ख्वाजा शमशुद्दीन ने उसके घोड़े की लगाम पकड़ ली और वह पहाड़ों की ओर भाग गया। उसने एक तेज सवार डेरे में भेजा कि और भी लोगों को ले आने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

का यत्न करे। शत्रु ने पीछा किया परन्तु ख्वाजा शमशुद्दीन अरब बहादुर और अन्य लोगों ने जिनकी संख्या पचास के लगभग थी पीछे मुड़कर तीरों की वर्षा की और उनकी गति रोक दी। अब रात होने वाली थी और मुजफ्फरखाँ की ऐसी दशा थी कि एकदम शाही भाग्य चमक उठा। मुजफ्फरखाँ के डेरे में यह खबर पहुँची थी कि वह मारा गया। उसके लोग भागने ही वाले थे। तब वह सन्देशवाहक आया जिसको वापस भेजा गया था और इससे उनमें उत्साह का संचार हुआ। खुदादार बिरलास, मिहिर अली और लगभग दो सौ आदमियों ने शीघ्रता से नदी को पार किया और जो सन्देशवाहक उनके पास भेजा गया था उसने वापस जाकर उनके आने की खबर दी। यद्यपि शत्रु को सफलता मिल चुकी थी और उनकी संख्या भी बड़ी थी परन्तु अब इस वीर दल के आक्रमण के आगे वे नहीं ठहर सकते थे। इसलिए वे भागने लगे। इस प्रकार पराजय विजय में परिणित हो गई और बहुत बड़ी लूट हाथ आई। अगले दिन उन्होंने अफगानों के डेरों को लूटा और बहुत माल प्राप्त किया। इस प्रकार शत्रु के प्रपंच विफल हो गये। जो बच कर भाग गये थे ताज़खाँ पँवार की शरण में पहुँचे। वहाँ पर वे दुष्ट विचार करते रहे। उनके पास धन की प्रचुरता थी परन्तु बुद्धि का अभाव था। लड़ने वालों की संख्या काफी बड़ी थी। इसलिए वे पुनः लड़ाई के लिए तैयार हो गये।

मुजफ्फरखाँ दूरदर्शिता करके गन्डक नदी के पार पीछे हट गया और ऐसी जगह जा कर जम गया जहाँ तीन ओर नदी थी और चौथी ओर दलदल था। यहाँ पर वह सैनिक और सामान जुटाने में लग गया। उसके पीछे हटने से उत्साहित होकर शत्रुओं ने आकर मुजफ्फरखाँ की सेना को घेर लिया परन्तु इससे उसकी सेना पर कोई असर नहीं हुआ। इसलिए उनके दिल टूट गये। कुछ ही दिनों में मुजफ्फरखाँ के सैनिकों की संख्या बढ़ गई और उनके उत्साह में भी वृद्धि होने लगी। आसपास के जमींदारों में बड़ा उत्साह था। उन्होने आवश्यक वस्तु लाने में बड़ा परिश्रम किया। तब नदी पर एक पुल बनाया गया। नदी पार करते समय कोई विपत्ति न आ जाये इस पर सावधानी करके यह निश्चय किया गया कि रात के समय लोगों का एक दल भेजा जाये जो शत्रु के सामने अपनी रक्षा करने के लिए एक दीवार बनाए ताकि जब सेना नदी पार पहुँचे तो वह उससे पीछे खड़ी रह सके। परन्तु जब इस काम को हाथ में लेने के लिए कोई तैयार न था तो ख्वाजा शमशुद्दीन खाफी ने साहसपूर्वक इस खतरनाक काम को करने के लिए अपनी सेवा अर्पित की। उसने तुरन्त ही नदी पार की तो उसके सामने से अफगान लोग पीछे हट गये। उनको यह आशा थी कि जब शाही सेना उन्हें पीछे हटते हुए देखेगी तो वह लूटने के लिए तितर-बितर हो जायगी और तब उन पर आक्रमण करने का अनुकूल अवसर मिलेगा, परन्तु मुजफ्फरखाँ ने सब प्रकार की सावधानी की और स्थान को सुरक्षित करने के लिए उसने एक बड़ी सेना नदी पार भेजी। अफगानों को इस गति का पता लग गया तब वे बाहर निकले और इस अग्र सेना के विरुद्ध उन्होंने अपनी एक बड़ी सेना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भेजी। प्यादों के पैर उखड़ गये और उनकी भगदड़ से सवारों में भी त्रास मच गया। जब वे पीछे भागने लगे तो पुल टूट गया और लगभग तीन सौ पैदल और सवार नदी में गिर कर नष्ट हो गये। ख्वाजा शमशुद्दीन खुदादाद विरलास और अन्य कई प्रसिद्ध सैनिक खड़े रहे और बाणों की वर्षा के द्वारा उन्होंने दो बार शत्रु की गति रोकी। शत्रु ने तीसरी बार आक्रमण किया परन्तु इस बार उनके सेनानायक हुसैनखाँ का घोड़ा एक बाण से छिद गया और हुसैनखाँ गिर पड़ा। तब शत्रु सेना बिखर गई और पीछे हट गई। वीर शाही सैनिकों की कोई क्षति नहीं हुई। बड़ा परिश्रम करके पुल की मरम्मत कर दी गई और सारी सेना पार उतर गई। तब अफगान लोग वापस हट कर अपनी मुख्य सेना में जा मिले जो ताजखाँ के नेतृत्व में थी।

मुजफ्फरखाँ ने उनका पीछा किया और उसके एक गुप्तचर ने उसे सूचना दी कि विद्रोहियों के एक दल को उसके आगमन का कुछ पता नहीं है और वह मिट्टी की दीवार बनाने के लिए उपयुक्त स्थान ढूंढ़ रहे हैं। मुजफ्फरखाँ ने खुदादाद को एक छोटी सी सेना के साथ छोड़ा कि वह डेरे की रक्षा करे और शत्रु के आदमियों को बन्दी बनाने के विचार से उसने आगे कूच किया। वह एकाएक उन पर टूट पड़ा। उन्होंने थोड़ा सामना किया और फिर वे भाग निकले। बहुत से मारे गये। उनमें ताजखाँ पँवार भी था। हाजी पहलवान उसके सिर को काट कर लाया था। परन्तु वह नहीं जानता था कि वह कौन है। उनका एक परमवीर सरदार जलालखाँ गजनी बन्दी बना लिया गया था और अन्य बहुत से लोग या तो पकड़ लिए गए थे या मार दिए गए थे। इस प्रकार पूर्ण विजय प्राप्त हुई। यद्यपि रात के कारण और गहरे जंगल के कारण शत्रुओं के घर नष्ट नहीं किए जा सके परन्तु अनेक वीर सिपाहियों को खूब लूट का माल मिला। अगले दिन प्रातःकाल सेना ने प्रयाण किया परन्तु शत्रु इधर-उधर फैल गए और नदी में कूद पड़े। बहुत से नष्ट हो गए। परन्तु लगभग एक सौ वीर सैनिक दूसरे किनारे पर जा पहुंचे। इस प्रकार यह विद्रोह शान्त हो गया। इसके बाद तुरन्त ही सतरी और जतरी दो अफगानों ने एक अफगान दल की सहायता से मौका पाकर बकर नामक प्रदेश पर अधिकार कर लिया। यह खूब घना बसा हुआ जिला है जो तीस कोस लम्बा और बीस कोस चौड़ा है और गंगा नदी के निकट मुंघेर के पास स्थित है। जब मुजफ्फरखाँ को इस उत्पात का पता लगा तो वह उसका दमन करने के लिए रवाना हुआ। तब एक जोर की लड़ाई हुई जिसमें विद्रोहियों का सेनापति फतखाँ और उसके उन्यासी आदमी धराशायी हो गए। तब मुजफ्फरखाँ ने इस इलाके पर अधिकार कर लिया।

मुजफ्फरखाँ की इस विजय के कारण मुनीमखाँ खानखाना ने सोचा कि उसको उस प्रदेश में रखना ठीक नहीं है। इसलिए उसने आदेश जारी किया कि वह तुरन्त दरबार में हाजिर हो। जब इस आदेश से मुजफ्फर दुखी हो रहा था तो उसे बादशाह का आदेश मिला कि वह वहीं रहे और जब तक शाही आदेश न

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मिले वहीं काम करता रहे। इसलिए वह प्रसन्नतापूर्वक हाजीपुर को लौट गया और कुछ समय बाद दूरदर्शी बादशाह ने उसके गुणों और सेवाओं की कद्र करके उसको चौसा की थाह से गढ़ी तक का प्रदेश जागीर में दे दिया।

राजा टोडरमल

[मूलपाठ जि० ३, पृ० १३८] अब राजा टोडरमल दरबार में आया और अपने साथ चौवन हाथी लाया जो उसने बंगाल में तकरोही की लड़ाई में छीने थे। ये सब बादशाह को नजर किए और उस प्रदेश की स्थिति पर अपनी रिपोर्ट दी। उस पर अनेक प्रकार से कृपा की गई और उसको दीवान के पद पर नियुक्त करके साम्राज्य के दीवानी काम उसके सुपुर्द कर दिए गए। वह ईमानदार, निष्ठावान और निर्लोभी पुरुष था। क्या ही अच्छा होता कि उसमें घृणा और बदले का भाव भी न होता और उसके चरित्र में कठोरता न होती।

शासन का इक्कीसवाँ वर्ष

सिवाना की विजय

[मूलपाठ जि० ३, पृ० १४७] अजमेर के प्रान्त में सिवाना एक प्रसिद्ध दुर्ग है। यह चन्द्रसेन का था और मठा राठौड़ यहाँ का दुर्ग रक्षक था। शाह कुलीखाँ महरम और रायसिंह ने अपना कार्य चतुरता से नहीं किया था। उनके सवारों के घोड़ों की दशा बहुत बुरी थी तथा अन्न और घास का अभाव हो जाने से उनकी सेना बड़ी विपत्ति में थी। इसलिए सैयद अहमद और अन्य लोगों को उनकी सहायता करने के लिए और किले को छीनने का भरसक प्रयत्न करने के लिए भेजा गया ताकि सेना वापस आ सके। इस घेरे में काम करने के लिए अपनी-अपनी जागीरों से अमीर शीघ्र रवाना हुए। इसी समय जलालखाँ मारा गया। इससे उत्साहित होकर विद्रोहियों ने और भी अधिक सिर उठाया विशेषकर रायराम के पुत्र और मालदेव के पौत्र कल्ला ने जिसने विकूर के दुर्ग में बहुत से आदमी इकट्ठे कर लिए थे। बाढ़ा के सैयदों और सेना के अन्य अमीरों को आदेश दिया गया कि इन विद्रोहियों का दमन किया जाय। सिवाना का घेरा स्थगित कर दिया गया। शाहबाजखाँ को आदेश हुआ कि वह सहायक सेना का संचालन करे और वापस दरबार में जाय। जब वह घटनास्थल पर पहुँचा तो उसे मालूम हुआ कि शाही सेना ने दुर्ग को पहले से ही घेर रक्खा है और खूब जोर लगाया जा रहा है। शाहबाजखाँ बड़े जोश के साथ आगे बढ़ा। वह इस घेरे में काम करना चाहता था। बड़ी शक्ति और परिश्रम के बाद दुर्ग छीन लिया गया और दुर्गरक्षक बन्दी बना लिए गए। वहाँ बाढ़ा के सैयदों के नेतृत्व में कुछ सेना छोड़ दी गई और उसने सिवाना के विरुद्ध प्रयाण किया।

सिवाना से आठ कोस के अन्तर पर वह दुनारा नामक एक किले पर पहुँचा जो पत्थर का बना हुआ था। उसने देखा कि वहाँ पर राठौड़ जाति के कुछ राजपूत हैं। उसके कहने पर उन्होंने आत्मसमर्पण नहीं किया। इसलिए उसने दुर्ग का घेरा

डा. दिलवरराम स्मारक कल्याणी रेग्मी पुस्तकालय 7471

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

डाला और सावात तैयार किए। थोड़े समय में ही दुर्ग छीन लिया गया और वहुत से राठौड़ मारे गए। तव उसने सिवाना के विरुद्ध कूच किया। यहाँ के दुर्गरक्षकों को दुनारा के दुर्ग का पता लग चुका था। यहाँ भी उसने सावात बनवाए और घेरे को ऐसी शक्ति और वीरता के साथ आगे वढ़ाया कि कुछ विलम्व के वाद दुर्गरक्षकों ने आत्मसमर्पण किया।

दाऊद की मृत्यु

[मूलपाठ जि० ३, पृ० १५८] जव शाही सेना की विजय हो गई तो दुर्वल चित्त दाऊद वन्दी बन गया। उसका घोड़ा कीचड़ में फँस गया था और वीर पुरुषों के एक दल ने उसको पकड़ लिया था। उसको वन्दी वनाकर वे उसे खानजहाँ के पास लाए और खान ने उससे कहा "तुमने सन्धि की थी और शपथ ली थी वह कहाँ है।" सारी लज्जा को ताक में रखकर उसने उत्तर दिया "मैंने वह सन्धि खानखाना से की थी। अगर तुम घोड़े से उतरो तो हम कुछ मित्र भाव से वातचीत करें और दूसरी सन्धि करें।" खानखाना इस धोकेवाज आदमी की चालाकी और वेईमानी से खूब परिचित था। उसने आदेश दिया कि उसका विद्रोही सिर उसके धड़ से तुरन्त अलग कर दिया जाय। इसलिए उसको काट डाला गया और उसका सिर वड़ी शीघ्रता के साथ वादशाह के पास भेजा गया। राजधानी टांडा में एक सूली पर उसका धड़ लटका दिया गया।

गजपति के विरुद्ध युद्ध, रोहतास की विजय

[मूलपाठ जि० ३, पृ० १६१] गजपति अपने डेरे व सामान को नहीं ले जा सकता था। इसलिए उसने विद्रोह कर दिया और गाजीपुर को लूटने का विचार किया। परन्तु शाहवाजखाँ शाही सेना के साथ आ पहुँचा जिससे उसकी स्थिति हिल गई। वह चौसा की थाह पर भाग गया। शाही सेना ने उसका पीछा किया। वहाँ उसने गंगा पार करके लड़ाई जारी रक्खी। शाही सेना को भी नदी पार करने का साधन मिल गया। इसलिए उसका पीछा किया और उसे खूब हरा दिया। उसकी नावें, तोपें, डेरे और सामान छीन लिया गया। उसका पीछा करते-करते शाही सेना महवा के किले पर आ पहुँची, जो रोहतास से अट्ठाइस मील की दूरी पर है, इसको इन्होंने घेर लिया और दुर्गरक्षक संग्राम ने तुरन्त ही आत्मसमर्पण कर दिया। शाहवाजखाँ ने वहाँ दुर्ग रक्षक रख दिए और विद्रोही का पीछा जारी रखा जो भोजपुर के जंगल और ऊँचे-नीचे इलाके में भाग गया था। उसको पकड़ने के सव प्रयास निष्फल हुए। इसलिए शाही सेना वापिस लौट गई। अगले दिन विद्रोही ने लौटती हुई सेना पर नदी के किनारे पर हमला किया और रात तक लड़ाई जारी रही। वहाँ की भूमि ऐसी ऊवड़ खावड़ थी कि शाही सेना विद्रोहियों के सामने नदी पार नहीं कर सकती थी। परन्तु संग्राम के पथ-प्रदर्शन से वे शत्रु के सामान पर टूट पड़े। शत्रु दिन में तो कुछ नहीं कर सका परन्तु रात में उसने हमला किया। वह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुनः हार गया और भाग कर जगदीशपुर चला गया जो उसका बड़ा प्रसिद्ध दुर्ग था। किले के चारों ओर के जंगल को काटने में शाही सेना दो मास तक व्यस्त रही। अन्त में दुर्ग का पतन हो गया और विद्रोही की सम्पत्ति और कुटुम्ब को छीन लिया गया परन्तु वह बचकर भाग गया।

इस पराजय के पश्चात् गजपति विपन्न और भयभीत होकर रोहतास की पहाड़ियों के नीचे भाग गया और वहाँ छिप गया। उसका भाई बैरीसाल ने भी बहुत से विद्रोहियों को साथ लेकर जंगलों की घाटियों में शरण ली परन्तु शाही सेना ने पता लगा कर उनको मार डाला और बहुत सा सामान लूट लिया। जब गजपति पहली बार हारा था तो उसने अपने पुत्र श्रीराम को कुछ विद्रोहियों के साथ और शस्त्रास्त्र के साथ शेरगढ़ के किले में रक्खा था। यह जगदीशपुरी से पैंसठ मील दक्खिन पूर्व में है। शाहबाजखाँ ने इस किले को घेर लिया और शाबात बना कर इसके निकट पहुँच गये। आसपास के लोग आकर शाही दरबार की अधीनता स्वीकार करने लगे। इसी समय उस पर अचानक एक विपत्ति आई। जब इस प्रदेश के शासन के लिए कोई शाही अमीर नहीं था तो रोहतास का किला जुनैद के हाथ में आ गया और उसने इसको सैयद मोहम्मद के सुपुर्द कर दिया जो उसका एक विश्वसनीय अनुचर था। जुनैद की मृत्यु के बाद कुछ दिन तक सैयद ने इस किले पर शाही सत्ता के विरुद्ध विद्रोही के रूप में कब्जा रक्खा परन्तु अन्त में उसने अपने आदमी को इस बात पर राजी कर लिया कि किसी स्वामिभक्त नौकर के द्वारा बादशाह के पास खिराज भेजा जाय। जब शाही सेना मार्ग-दर्शकों की सहायता से इस किले के निकट पहुँची तो उन्होंने अधीनता प्रकट करने और आत्म-समर्पण करने का निश्चय कर लिया। इन मार्ग-दर्शकों की सहायता के बिना शाही सेना इस किले तक नहीं पहुँच सकती थी। मुजफ्फरखाँ भी बिहार की सेना के साथ इस किले पर आक्रमण करने के लिए आ रहा था। दुर्गरक्षकों ने सन्धि करने और दुर्ग को समर्पण करने के लिए शाहबाजखाँ के पास आदमी भेजे। उसने उनकी शर्तें प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लीं और दुर्ग पर अधिकार कर लिया। आत्म-समर्पण का समाचार सुन कर मुजफ्फरखाँ निराश होकर वापस लौट गया।

इस प्रकार जब किले का पतन हो गया तो पहाड़ी लोगों में त्रास मच गया। श्रीराम ने शेरगढ़ की चाबियाँ शाहबाजखाँ को दे दीं।

शासन का बाईसवाँ वर्ष

टकसाल

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 195] 2 आजर को मुजफ्फरखाँ, राजा टोडरमल और ख्वाजा शाह मन्सूर को कोट पकाली में सलाह करने के लिए बुलाया गया। यहाँ पर बहुत से महत्त्वपूर्ण विषयों पर चर्चा हुई और निश्चय हुआ। बिहार का शासन सुजातखाँ मीर मुइज्जुलमुल्क और अन्य अमीरों के सुपुर्द किया गया। अब

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तक शाही टकसाल का काम एक चौधरी के अधीन था। अब उसको विभक्त कर दिया गया। फतहपुर की टकसाल ख्वाजा अबुस समद के सुपुर्द की गई जो बड़ा ही सीरी कलम था। लाहौर की टकसाल मुजफ्फरखाँ को, बंगाल की राजा टोडरमल को, जौनपुर की ख्वाजा शाह मन्सूर को, गुजरात की ख्वाजा इमाद-उद्दीन हुसैन और पटना की असद को सौंपी गई। उसी दिन यह भी आदेश हुआ कि चौकोर रुपये ढाले जायें।

यूरोप की अनूठी वस्तुएँ

[मूलपाठ जि० 3 पृष्ठ 196] हाजी हबीब को बहुत साधन और कुशल कारीगर देकर गोवा के बन्दरगाह पर भेजा गया था कि वह वहाँ जाकर देखे कि वहाँ क्या-क्या चीजें बनाई जाती हैं और उस नगर में क्या-क्या हुनर हैं। इनका ज्ञान प्राप्त करके वह बादशाह से निवेदन करे। अब वह वापस दरबार में आया और अपने साथ कितने ही आदमियों को लाया जो ईसाईयों के से कपड़े पहने हुए थे और जो यूरोपीय बाजे बजाते हुए आये थे। वह कई प्रकार के कपड़े लाया था जो नजर किए गए। वहाँ पर कई कारीगर भेजे गए थे जो वहाँ से काम सीखकर आये। उन्होंने अपनी कला का प्रदर्शन किया। बादशाह ने उनकी प्रशंसा की। वहाँ के संगीतज्ञों ने विविध प्रकार के बाजे विशेषकर ऑरगन बजाए जिससे श्रोताओं का बड़ा विनोद हुआ।

माधगढ़ के राजा की पराजय

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 196] इस जमींदार ने कुछ अवांछनीय काम करने का अपराध किया था इसलिए सादिकखाँ को एक बहुत बड़ी सेना के साथ भेजा गया कि उदार वचनों के द्वारा उसको समझाकर पुनः स्वामिभक्त बनाया जाय और यदि आवश्यकता हो तो उसे बाध्य किया जाय। शाही सेना ने जंगल के मार्ग से ऊँदचा नामक कस्बे को कूच करने की तैयारी की। यह उस राजा का मुख्य स्थान था।[1] जब सेना करहरा के दुर्ग के निकट पहुँची तो उन्होंने देखा कि परमानन्द पंवार ने किला बन्द कर लिया है और वह घेरे का सामना करने के लिए तैयार है। शाही सेना ने उस स्थान को घेर लिया और थोड़े ही समय के बाद उससे आत्म-समर्पण करवा लिया। तब सेना ने कूच जारी रखी परन्तु सघन वन के कारण उसकी प्रगति में बहुत बाधा पड़ी। अपना रास्ता काटते हुए वे ऊँदचा के उत्तर में सतधारा के निकट पहुंचे। इसके किनारे पर विद्रोही सेना तैयार खड़ी थी। एक दो दिन तक तो झपटें होती रहीं। अन्त में शाही सेना को आदेश हुआ कि वह नदी पार करे। तब बड़ी लड़ाई हुई जिसमें कभी हार होती थी कभी जीत होती थी। अन्त में शत्रु हार कर भाग गया और डेरा लूट लिया गया। राजा का ज्येष्ठ पुत्र होरलदेव मारा गया

---

1 ऊरछा बुन्देलखण्ड में है और बुन्देलों का मुख्य स्थान है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और दूसरा पुत्र रामशाह आहत होकर भाग गया और लगभग दो सौ राजपूत मारे गये।

शासन का तेईसवाँ वर्ष

कुम्भलमेर की विजय

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 205] कुम्भलमेर का दुर्ग एक ऊँचे पर्वत पर वना हुआ है और वड़ा दुर्गम है। यहाँ राणा के आश्रित लोग रहते थे। पिछले समय में इस किले पर किसी का प्रभाव नहीं पड़ा था। अब शाहवाजखाँ को एक सेना देकर इस पर भेजा गया। राजा भगवन्तदास, कुंवर मानसिंह और दूसरे सरदारों को उसके साथ जाने का आदेश हुआ। ४ फरवरदीन को शाहवाजखाँ ने इस किले को घेर लिया। शत्रु भयभीत और परेशान हो गया। संयोग से किले की एक वहुत बड़ी तोप फट गई जिससे बारूदखाना नष्ट हो गया। तव आक्रमणकारी तत्काल पहाड़ी पर चढ़ गये। दुर्ग-द्वार पर मन्दिर के निकट राजपूतों के एक दल ने उनका सामना किया और खूब डटे, परन्तु उनके टुकड़े-टुकड़े कर दिये गए और किला छीन लिया गया। तब राणा भागकर बाँसवाड़े की पहाड़ियों में चला गया। शाहवाजखाँ ने गाजीखाँ वदखशी को दुर्ग-रक्षक वनाया और फिर राणा का पीछा किया। कोकन्दा (गोगूंदा) का दुर्ग भी उसके हाथ में आ गया और उसने उदयपुर का दुर्ग भी छीन लिया जहाँ उसे वहुत लूट का माल मिला।

बंगाल का कर, एक यूरोपीय और उसकी पत्नी का आगमन

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 207] जव वादशाह का डेरा बेया नदी पर था तो खानजहाँ के पत्र आये और साथ ही बंगाल का कर तथा कूच के जमींदार राजा माल गुसाईं का कर आया। यह राजा शाही तख्त के प्रति पुनः अपनी अधीनता का प्रदर्शन करने लग गया था। बंगाल के कर में वहाँ की उत्तम से उत्तम वस्तुएँ और 54 हाथी थे। इन्हीं के साथ एक यूरोपियन आया जिसका नाम परताप बार था और जो बंगाल के वन्दरगाहों का एक मुख्य व्यापारी था। उसके साथ उसकी पत्नी थी जिसका नाम वसूरवा था। दरवार में उसका अनुग्रहपूर्वक स्वागत हुआ। उसकी वुद्धि और सदाचरण के कारण बादशाह ने उस पर कृपा की और आदर किया।

इबादतखाने में शास्त्रार्थ

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 215] जब बादशाह की वापसी से राजधानी चमक उठी तो पुराने नियमों का फिर पालन होने लगा और शुक्रवार की रातों को पवित्र दिमागों के प्रकाश से बुद्धिग्रह प्रकाशित हो गया। 20 मीर को उस सभाग्रह में सभा के एकान्त को चमकाने के लिए दीपक जलाया गया और विद्यालयों तथा मठों के दार्शनिकों के गुणों को कसौटी पर कसा गया। सूफी मुल्ला उपदेशक अदीस के ज्ञाता सुन्नी, सिया, ब्राह्मण, जैन, बौद्ध, चारवाक, ईसाई, यहूदी, पारसी और प्रत्येक धर्म के विद्वान लोगों को राजसभा में एकत्र किया गया जिससे उनको बड़ा हर्ष हुआ। प्रत्येक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

व्यक्ति ने अपने मत का निर्भय होकर प्रतिपादन किया और बहुत लम्वे-लम्वे शास्त्रार्थ हुए। प्रत्येक सम्प्रदाय ने दम्भ और मिथ्याभिमान के साथ अपने विरोधियों के मन्तव्य का विरोध करने का प्रयास किया। एक दिन इवादतखाना पादरी रडाल्फ की उपस्थिति से प्रकाशित हो गया। यह ईसाई विद्वानों में प्रतिभा और बुद्धि के लिए अद्वितीय था। अनेक कट्टर और द्वेषपूर्ण व्यक्तियों ने उस पर आक्षेप किए जिससे उस सभा को शान्त निर्णय और न्याय के प्रदर्शन का अवसर मिला। इन लोगों ने अपने प्राचीन मन्तव्य उपस्थित किए और तर्कबुद्धि से सत्य के अन्वेषण का प्रयास नहीं किया। उनके वक्तव्यों के टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए और वे बड़े लज्जित हुए। तब उन्होंने बाइविल के परस्पर विरोधों पर आपत्तियाँ कीं परन्तु वे अपने वक्तव्यों को सिद्ध नहीं कर सके। बड़ी शान्ति और सत्यनिष्ठा के साथ पादरी ने उनकी दलीलों का उत्तर दिया और फिर वह कहता रहा "यदि इन व्यक्तियों की सम्मति हमारी पुस्तक के विषय में ऐसी है और यदि ये कुरान को ईश्वर का सत्य वचन मानते हैं तो एक भट्टी जलाई जाय और फिर उसमें हम बाइविल को हाथ में लेकर, और ये उलमा अपनी पवित्र पुस्तक को हाथ में लेकर, उस सत्य की परीक्षा भूमि पर चलें, तब सत्य प्रकट हो जाएगा।" कलुषित हृदय वाले हीन विवादी इस प्रस्ताव से पीछे हट गए और केवल क्रोधपूर्ण शब्दों में उत्तर देने लगे। इस पक्षपात और हिंसा प्रवृत्ति से बादशाह का निष्पक्ष मस्तिष्क बड़ा परेशान हुआ और बड़े विवेक और ज्ञान के साथ उसने कहा "किसी मनुष्य का केवल बाह्य विश्वास और मुस्लिम धर्म का मात्र-ज्ञान निष्फल है। यदि उसमें हार्दिक विश्वास नहीं है तो वह कुछ नहीं है। मैंने अनेक ब्राह्मणों को अपती शक्ति के भय से अपने पूर्वजों के धर्म को स्वीकार करने के लिए बाध्य किया है। परन्तु अब मेरा मस्तिष्क सत्य की किरणों से प्रकाशित हो चुका है। इसलिए मुझे विश्वास हो गया है कि दम्भ के काले बादलों में और आत्म-धारणाओं के कोहरे ने तुमको घेर रखा है। सत्य के दीपक के बिना एक भी कदम आगे नहीं बढ़ा जा सकता। वही मार्ग हितकारी हो सकता है जो विवेक के द्वारा ग्रहण किया जाय। कलमा का पाठ, खतना या शाही शक्ति के डर से सिजदा करना, ईश्वर की दृष्टि में निष्फल है। भूमि पर साष्टांग दण्डवत करना आज्ञा पालन नहीं है। लगन के साथ व्यवहार करना चाहिए। औचित्य भौहों पर नहीं बैठा रहता।"

शासन का पच्चीसवाँ वर्ष

जनगणना

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 324] एक शाही फरमान जारी हुआ कि जागीर-दार, शिकदार और दरोगा साम्राज्य भर में प्रत्येक गाँव के निवासियों की सूचियाँ तैयार करें जिसमें उनके नाम और व्यवसाय का उल्लेख हो और फिर इन सूचियों का संग्रह किया जाय। अफसरों को चाहिए कि किसी ऐसे आदमी को न रहने दें जो कोई काम या व्यवसाय न करता हो और वे इस बात की भी जाँच करें कि कौन होशियार आदमी आते-जाते हैं और उनके विचार अच्छे हैं या बुरे हैं जिससे थोड़े

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समय में पता लग सके कि जो प्रत्यक्ष में प्रतिष्ठित जान पड़ते हैं उनका चरित्र कैसा है और जो अन्दर से द्वेष रखते हैं उन लोगों की परीक्षा हो सके। यह नियम शान्ति की स्थापना के लिए और विस्तृत हिन्दुस्तान में सुरक्षा का प्रवन्ध करने के लिए था।

शासन का सत्ताईसवाँ वर्ष

राजस्व के नियम

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 368] इस वर्ष के आरम्भ में बादशाह ने अपने साम्राज्य के शासन को उन्नत बनाने की ओर ध्यान दिया और दीवानी तथा राजस्व सम्बन्धी कामकाज के लिए नियम बनाये। इससे पहले राजा टोडरमल वजीर कहलाता था परन्तु इस पद के साथ बड़े खतरे और विपत्तियाँ थीं और उसका बड़ा विरोध था। इसलिए उसने यह पद स्वीकार नहीं किया। इस व्यक्ति में महत्त्वाकांक्षा नहीं थी और वह प्रशासन के सब रहस्यों से परिचित था। अब इसको दीवान के पद पर नियुक्त किया गया। वास्तव में यह वकालत का पद था। उसकी शुद्ध निर्णायक बुद्धि के कारण सब मामले ठीक हो गये। उसने दीवानी और राजस्व सम्बन्धी मामलों की ओर विशेष ध्यान दिया। वह स्वार्थ से दूर रहा और साम्राज्य का काम उसने निष्ठा के साथ किया। इसलिए उसने अमर कीर्ति उपार्जित की। साम्राज्य के नियमों को सरल करने में उसने अपनी बुद्धि की चतुराई और शक्ति लगा दी और वह स्वार्थी और प्रपंची आदमियों के प्रभाव में नहीं आया। अब उसने ऐसे कई नये नियम बनाए जिससे सरकार की कीर्ति और शक्ति बढ़ने वाली थी।

अब आदेश दिया गया कि खालिसा के संग्राहक और जागीरदार दस्तुर उल-अमल के अनुसार माल और जिहात वसूल करें। यदि कृषकों से धोखा देकर या दबाकर निश्चित राशि से अधिक ली जाएगी तो यह उचित प्राप्ति से अधिक माना जाएगा और जो इस प्रकार की प्राप्ति करेंगे उन पर जुर्माना होगा और यह मासिक हिसाब में लिखा जाएगा। फसल के समय निम्न वर्ग के लोगों के अधिकारों का ध्यान रखा जाय। ये लेन-देन के मामले दो प्रकार से तय किए जाते थे। शिकायतों की सुनवाई होती थी और अपराधियों को दण्ड दिया जाता था।

खालिसा के आमिलों के पास एक कारकून और एक खास नवीस होता था। ये लोग अत्याचार किया करते थे और मालदारों से मिलकर गरीब लोगों को सताया करते थे। इसलिए यदि इन दो बदनाम राज्यकर्मचारियों के स्थान पर एक योग्य और ईमानदार आदमी की नियुक्ति कर दी जाय तो देश की सम्पदा बढ़ेगी और लोग सन्तुष्ट रहेंगे।

ऐसा पता चला है कि खालिसा के जिलों में कृष्ट जमीन प्रतिवर्ष कम होती जाती है परन्तु यदि कृषि योग्य भूमि एक बार नाप ली जाय तो वह रैयत की शक्ति के अनुपात से प्रतिवर्ष बढ़ती जायगी। नियम के अनुसार उन लोगों को काम मिलना चाहिए। रैयत एक-दूसरे की जमानत दे और फिर उनको लिखित दस्तावेजें दी जाएँ और बकाया के सब मामले सोच-समझकर निपटाये जायें।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जो भूमि चार वर्ष से नहीं जुती है उसके लगान में किसानों को प्रथम वर्ष आधी छूट दी जाय और दूसरे वर्ष एक चौथाई दी जाय तथा तीसरे वर्ष नियमानुसार लगान लिया जाय। जो भूमि दो वर्ष से नहीं जुती है उस पर प्रथम वर्ष एक चौथाई लगान की छूट दी जाय। जो भूमि कभी जुती ही नहीं है उसके लिए कृषकों को कुछ अन्न दिया जाय जिससे वह भूमि जुत सके और उसका लगान आने लगे। जब गरीब किसानों को तकावी दी जाए तो प्रतिष्ठित लोगों से जमानत ली जाए। तकावी का एक भाग खरीफ के समय और एक भाग रवी के समय लिया जाए। इस व्यवस्था के अनुसार थोड़े समय में ही जमीन जुतने लगेगी, रैयत सन्तुष्ट होगी और कोष सम्पन्न हो जायगा। जब तहसीलदार भू-राजस्व बढ़ाएं तो छोटे-छोटे खातेदारों से पिछले वर्षों का कर नहीं लिया जाए।

प्रतिवर्ष तहसीलदार लोग बादशाह को सूचना दें ताकि योग्य अफसरों के वेतन में वृद्धि हो सके और उनको सम्मान और पुरस्कार दिया जाय और जो स्वामी भक्तिपूर्वक अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं करते हैं उन्हें दण्ड मिले और लज्जित होना पड़े।

जब यह तय हो जाय कि कितनी जमीन को नापना है तो उसके विस्तार के अनुपात से निरीक्षक नियुक्त कर दिए जाएं। पहले वे भूमि को नापें और फिर देखें कि उसकी किस्म कैसी है और उसमें कितनी पैदावार होती है। तहसीलदारों को चाहिए कि वे किसी मध्य स्थान पर ठहरें। सर्वत्र वे अपना काम परिश्रमपूर्वक करें और स्थितियों से अवगत रहें। जिस ऋतु में पर्याप्त वर्षा हो और खेतों की अच्छी सिंचाई हो तो एक बीघे में ढाई बिस्वा भूमि पर कर लगाया जाय। जंगलों और रेतीले मैदानों में इसी प्रकार तीन बिस्वा छोड़े जाएं। जब्ती का साप्ताहिक और वसूली का दैनिक विवरण प्रतिमास शाही अर्थ-विभाग में भेजा जाय। एक शाही फरमान जारी किया गया कि जब भूमि पर ईश्वर का कोप हो और उसकी क्षति हो तो क्षति का विवरण तैयार करके दरबार में पेश किया जाय ताकि बादशाह उचित आदेश प्रदान कर सके।

यदि पहाड़ी किलों में रहने वाले अपनी सुरक्षा पर भरोसा करके लूट-मार करने लगे तो सेनापति, फौजदार और सामन्त लोग तथा तहसीलदारों को आदेश था कि वे मिलकर इसका प्रतिकार करें। पहले तो अपराधियों को डाँटें और यदि इससे काम न चले तो फिर उन्हें दण्ड देने के लिए उपाय करें, उनके इलाके को नष्ट कर दें और उनकी जमीनों को जागीरदारों को दे दें और फिर माल के कर्मचारी उनसे कोई भू-राजस्व न लें। यदि शाही सेना की कोई क्षति हो तो अपराधियों पर जुर्माना किया जाय।

जो कुछ रैयत से लिया जाय वह कोष में जमा किया जाय और रैयत को इसकी रसीद दी जावे। तहसीलदार लोग एक मास में चार वार वसूली शाही कोष

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में भेजें और इसके अन्त में रैयत पर कोई वाकी न रहने दें। रैयत के साथ ऐसा व्यवहार हो कि वे आपसे आप ही शाही खजाने में भू-राजस्व जमा कर दिया करें। विरोधी और उपद्रवी लोगों से सन्तोषप्रद जमानतें ली जाँय और यदि वे जमानत न दे सकें तो उनके खेतों पर चौकीदार विठाकर भू-राजस्व वसूल किया जाय।

प्रत्येक व्यक्ति की वसूली का हिसाव तैयार किया जाय। यह उसकी काश्त और मेहनत के अनुसार हो। निश्चित समय से पहले वसूली न की जाय और न वसूली स्थगित की जाय। प्रत्येक गाँव का पटवारी अपने अधीन लोगों में गाँवों के खाते विभक्त कर दे और तहसीलदार, प्राप्त की हुई, धनराशि को पटवारी की मुहर लगाकर कोष में भेजे। यह देखा जाय कि किसी पर अत्याचार न हो और प्रत्येक व्यक्ति के साथ उसकी योग्यता के अनुरूप व्यवहार हो। कोषाध्यक्ष मोहरों, रुपयों और दामों का विवरण तैयार करें और प्रत्येक वर्ग के सिक्कों का मूल्य नाम-वार वतलाएँ और पुराने सिक्कों का मूल्य नए शाही सिक्कों में प्रकट करें जिससे तहसीलदार और शर्राफ लोग पुराने और नए सिक्कों का मूल्य जान सकें। पूरे तोल वाले लाल-ए-जलाली का मूल्य चार सौ दाम था। चाहर गोशा (चौकोर रुपया) चालीस दाम का होता था। साधारण (दस्तूरी) अशर्फी ओर अकवरशाही रुपया जो उपयोग के कारण घिसते जाते थे इस कीमत के थे। यदि अशर्फी केवल दो विरिंज (चावल के दाने) कम होती थी तो वह पूरी कीमत की मान ली जाती थी। उसका मूल्य तीन सौ साठ दाम था। यदि वह तीन विरिंज से एक सुरख तक वजन में कम होती थी तो वह 350 दाम की मानी जाती थी और यदि वह एक सुरख से डेढ़ सुरख तक कम होती थी तो उसका दाम 350 दाम माना जाता था। यदि रुपया एक से अधिक सुरख कम होता था तो उसका मूल्य 39 दाम होता था यदि वह एक से डेढ़ सुरख तक कम होता था तो उसका मूल्य 38 होता था। कोष में ये सिक्के लिए जाते थे—पूरे वजन वाला लाल-ए-जलाली, जलाला रुपया जो डेढ़ सुरख या दो सुरख से अधिक कम न हो, अकबरशाही सिक्का जो तीन बिरिंज से एक सुरख तक कम हो अधिक नहीं, जो सिक्के इससे अधिक कम होते थे उनका मूल्य कोषाध्यक्ष आँकता था। कारकून लोग इनका विवरण रोजनामचों में लिखते थे और इनका हिसाब प्रतिदिन सरकारी मुआफिजखाने में भेजा जाता था। जागीरदारों, कोषाध्यक्षों और शर्राफों को उपर्युक्त नियमों का पालन करना पड़ता था। खालिसा और जागीरदारों के कर्मचारियों को अपने-अपने इलाकों के सदाचारी, दुराचारी, आज्ञापालक और विरोधी आदमियों का हाल भेजना पड़ता था ताकि सबके साथ उनकी योग्यता के अनुसार व्यवहार हो और इलाके की शान्ति बनी रहे। पहले के खर्च के बजाय अब यह तय हुआ कि एक बीघा कृष्ट भूमि पर एक दाम खर्च कर दिया जाय। अब यह आशा की जाती थी कि इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक किसान से 24 दाम खर्च के लिए लिये जाएँगे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शासन का अट्ठाईसवाँ वर्ष

बंगाल की तृतीय विजय

[मूलपाठ प्रति जि० 3, पृ० 390] गत वर्ष खान-ए-आजम मिर्जा कोका को शाही आदेश मिला था कि वह विहार के विद्रोहियों को दण्ड देने का कार्य छोड़ कर अपनी समस्त शक्ति बंगाल की विजय में लगाए। सौभाग्यवश शाही सेना के आगमन से पहले ही विहार के विद्रोहियों को भगा दिया गया था, परन्तु अब वर्षा आरम्भ हो गई इसलिए इस वर्ष लड़ाई का कार्य स्थगित रक्खा गया। जब वर्षा कम होने लगी तो सादिकखाँ, शेख इब्राहीम और शेख फरीद बुखारी ने दरबार से विदा ली। विभिन्न मार्गों से इलाहाबाद, अवध और बिहार की सरकारों के पास अफसर भेजे। थोड़े ही समय में हाजीपुर में एक बड़ी सेना एकत्र हो गई और वह आगे बढ़ने के लिए उत्सुक हुई। खान-ए-आजम कुछ चुने हुए सिपाहियों को साथ लेकर गढ़ी के दूसरे किनारे पर सहयोग करने के लिए तरसूमखाँ और अन्य लोगों ने नदी पार की परन्तु वृक्षों, नालों, पानी और कीचड़ के कारण उनकी गति बहुत रुकी। इसलिए वे नदी को पुनः पार करके मुँघेर के पास सेना से जा मिले। तब तरसूमखाँ और अन्य लोग एक या दो मंजिल आगे बढ़े। विद्रोहियों ने काली गंग के निकट अपनी सेना जमाई और लड़ने के लिए तैयार हो गए। मिर्जा शरफुद्दीन हुसैन, बाबाखाँ काकशाल और अन्य कई अग्रणी विद्रोही मर चुके थे इसलिए मासूम काबुली ने सेना का नेतृत्व करना शुरू किया। कतलू लोहानी उड़ीसा के विद्रोहियों का अध्यक्ष था और बंगाल के भी कुछ विद्रोही उसके वश में थे। जब उसने यह सुना कि शाही सेना आगे बढ़ती आ रही है तो मासूम काबुली कतलू की ओर पीछे हट गया और उससे बातचीत करना शुरू किया तथा उससे यह वचन ले लिया कि जब शाही सेना आएगी तो वह उसे आदमियों की और सामग्री की सहायता देगा। इस समझौते के बाद मासूल शीघ्रता से घोराघाट की ओर गया और उसने जब्बारी, मिर्जा बेग और समस्त काकशालों को अपनी ओर मिला लिया। उन लोगों में सुरक्षा की भावना उत्पन्न करने के लिए उसने अपने कुटुम्ब और बच्चों को उन्हीं के मकानों में छोड़ा। यह स्वयं विद्रोहियों के एक दल के साथ कालीगंग की ओर गया और वहाँ युद्ध करने के लिए तैयार हो गया।

9 फरवरदीन को शाही सेना के अग्रभाग ने गढ़ी को आसानी से छीन लिया। यह उस प्रदेश का द्वार है। अमीर लोग आगे बढ़े और सौभाग्य से 16 तारीख को शत्रु दिखाई देने लगा। तब उन्होंने अपनी सेना युद्ध के लिए जमाई। कालीगंग के किनारे पर तोप-मंच बनाए गए और युद्धपोत तैयार किए गए। सेनापतियों को यह भय था कि कतलू आक्रमण करेगा इसलिए उन्होंने वजीरखाँ के नेतृत्व में चार हजार सवार एकत्र करके बलकाना की ओर भेजे और यह सेना शाही डेरे से बारह कोस आगे गई और उसने शत्रु की गतियों आदि को देखा कि कहीं वह अचानक हमला न कर दे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बन्दूकों और बाणों से कुछ लड़ाई होती रही और कुछ बड़ी वीरता के कार्य हुए परन्तु कुछ व्यर्थ बातों का और कायरता के सुझावों का सेनानायकों पर प्रभाव पड़ने लगा। शत्रु की शक्ति के विषय में बड़ी अत्युक्ति की गई थी इसलिए बादशाह के पास प्रार्थना-पत्र भेजा गया कि सहायक सेना भेजी जाय। बादशाह ने यह सम्मति प्रकट की कि विजय का समाचार शीघ्र ही आएगा। परन्तु उसने मिर्जा खान, ज़ेनखाँ कोका और कितने ही दूसरे अमीरों को और सेना देकर पूर्व के लिए कूच करने का आदेश दिया। वे लोग कूच के लिए तैयार हुए उससे पहले ही विजय का और शत्रु के पलायन का समाचार आ गया।

शाही सेना शत्रु के सामने एक महीने से पड़ी हुई थी और प्रतिदिन तोपें और बन्दूकें एक-दूसरे पर चलती थीं। दोनों पक्षों ने बड़ी वीरता के कार्य किये परन्तु अन्त में शत्रु त्रस्त हो गया और इस महीने की 4 तारीख को शाही सेना ने विजय प्राप्त की। तब शत्रु भागकर तितर-बितर हो गया। जब गर्मागर्म लड़ाई हो रही थी तो विद्रोहियों का एक मुखिया काजीजादा फतहाबाद से आया और अपने साथ बहुत सी जंगी नावें और गोलाबारूद लाया। उसके तोप का एक गोला लगा जिससे वह मर गया। तब मासूमखाँ ने एक प्रसिद्ध विद्रोही काला-पहाड़ को आदेश दिया कि इसका स्थान ग्रहण कर ले परन्तु उसकी भी वही गति हुई। अब शत्रुओं में मत-भेद हो गया और मासूमखाँ काकशाल लोग और खालीदीन एक-दूसरे पर अविश्वास करने लगे। इस फूट का शाही अमीरों ने लाभ उठाया। पहले तो खारीदीन को उन्होंने अपनी ओर मिला लिया और उसको स्वामिभक्ति की शपथ दिलाई। मिर्जा बेग काकशाल और जब्बारी ने भी सन्धि कर ली। उन्होंने उसको यह वचन दिया कि वे युद्ध नहीं करेंगे और अपने घर चले जायेंगे। कुछ दिन बाद वे शाही डेरे में आ गये। शत्रुओं का साहस टूट गया और वे हतोत्साह हो गये तथा भाग गये। आजमखाँ ने उनका पीछा करने का प्रयास किया। परन्तु उसके कुछ अफसरों ने जिनका दिल कमजोर था, थोथी आपत्तियाँ कीं जिससे उसका प्रयास सफल नहीं हुआ। इस प्रकार हारे हुए शत्रु भी बचकर भाग गये। जब इस विजय का समाचार दरबार में पहुंचा तो सहायक सेना के नाम आदेश हुआ कि वह आगे न बढ़े।

पराजय के बाद मासूम अपने कुटुम्ब और बच्चों को क्षति से बचाने के लिए काकशालों के प्रदेश में भाग गया। उस समय उसमें और काकशालों में वैमनस्य था परन्तु मिर्जा मोहम्मद काकशाल ने उसका मित्रभाव से स्वागत किया। परन्तु अन्य काकशालों ने घोराघाट के आसपास अपनी सेना जमा रक्खी थी और वे लड़ने के लिए तैयार थे। मासूम ने घोराघाट लूट लिया और वह काकशालों पर आक्रमण करने के लिए तैयार हो गया। परन्तु खान-ए-आजम ने तरसूमखाँ के नेतृत्व में चार हजार सवार भेज दिये। जब काकशालों की स्थिति बिगड़ने ही वाली थी तो वह आ पहुंचा और उसने शत्रु को हरा कर घोराघाट की ओर भगा दिया। मिर्जा बेग

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

खालीदीन, वजीर जामिल और अन्य लोगों ने अपने वचन दोहराये और वे शाही डेरे से चले गये।

मासूमखां की इस पराजय के पश्चात् शाही सेना ने कतलूखां के विरुद्ध कूच करने की तैयारी की परन्तु खान-ए-आजम का उधर की जलवायु के कारण स्वास्थ्य बिगड़ने लग गया था। इसलिए उसने चाहा कि सेना के नेतृत्व से उसे मुक्त कर दिया जाय। शाही आदेश हुआ कि कोई एक अमीर सेना का नेतृत्व और उस प्रदेश का शासन कुछ दिन के लिए अपने हाथ में ले ले और या तो वापस बिहार लौट आवे या वहीं ठहरा रहे। कुछ दिन बाद 8 खुरदाद को शाहबाजखां को सेनाध्यक्ष नियुक्त कर दिया गया।

सती प्रथा

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 395] हिन्दुस्तान के आन्तरिक भागों में यह प्रथा है कि जब पति की मृत्यु होती है तो उसकी विधवा राजी-राजी और प्रसन्नता-पूर्वक उसकी चिता की ज्वालाओं में प्रवेश करती है, चाहे जीवितावस्था में उसको उसके साथ सुख न भी मिला हो। कभी-कभी जीवन के मोह के कारण वह हट भी जाती है। तब पति के रिश्तेदार एकत्र होकर चिता जलाते हैं और उसको उस पर रख देते हैं। उनका ऐसा विचार है कि इस प्रकार वे अपने कुटुम्ब के सम्मान और चरित्र की रक्षा करते हैं। परन्तु जब से यह देश कृपालु बादशाह के शासन में आया है तब से प्रत्येक नगर और जिले में निरीक्षक नियुक्त कर दिये गये हैं जो इन मामलों को ध्यानपूर्वक देखा करते हैं कि किसी स्त्री को बलपूर्वक जलाया तो नहीं जाता। इसी समय मालदेव का पुत्र जयमल अपनी सेना के साथ बंगाल के अमीरों के साथ साथ लड़ने के लिए भेजा गया था। वह चौसा के पास लू लगने से मर गया। उसकी पत्नी, जो मूना राजा की पुत्री थी, सती नहीं होना चाहती थी परन्तु उसके पुत्र उदयसिंह ने अपने कट्टर मित्रों के दल की सहायता से निश्चय किया कि उसे सती होना चाहिए। यह मामला बादशाह तक पहुंचा और अपने न्याय और मानव-बुद्धि से प्रेरित होकर उसने यह समझा कि इस कार्यवाही को रोकने के लिए सन्देश-वाहक भेजे जायेंगे तो कुछ विलम्ब हो जायगा इसलिए वह स्वयं ही शीघ्रता से रवाना हुआ और उस स्थान पर पहुंच गया। इस बात का लोगों को पता न था। इसलिए अपनी विचारहीनता के कारण कुछ लोग सामना करके उत्पात करना चाहते थे। जब बादशाह पहुँचा तो जगन्नाथ और रायसाल उससे मिलने के लिए आये और मूर्ख लोगों के इस अगुवा को पेश किया। उन्होंने पश्चात्ताप किया और विश्वास दिलाया जिसको स्वीकार करके बादशाह ने उनको बन्दी मात्र बना लिया।

कतलू उड़ीसा में

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 401] जब शेख फरीद बचकर कतलू के सामने से भाग गया और शाही डेरे में जा पहुँचा तो अमीरों की नींद खुली और उन्होंने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दामोदर नदी को पार करके अपनी सेना को लड़ाई के लिए व्यवस्थित करने हेतु दो कोस कूच किया। कतलू ने अपने डेरे के आस-पास दीवार खड़ी की और वहां डटे रहने के लिए तैयार हो गया। अन्य बहुत से लोगों ने उसके पास शरण ली। दूसरे स्थान पर बहादुर अपनी एक अलग सेना के साथ खड़ा था। जब अमुरदाद का नया चाँद उदय हुआ तो सादिकखाँ और शाह कुलीखाँ ने उस पर आक्रमण किया। वे उसकी दीवारों में घुस गये और वह भागकर कतलू के पास पहुंच गया। अगले दिन शाही सेना ने पीछा किया और जब उन्होंने उसका स्थान देखा तो उन्होंने कुछ ऊँचाई पर अपनी तोपें जमाईं। इन कार्यवाहियों से त्रस्त होकर शत्रु उड़ीसा से भाग गया। शाही सेनानायकों में पीछा करने के लिए साहस और दृढ़ता नहीं थी इसलिए वे नदी के निकट ठहर गये।

बुरहान-उल-मुल्क का दरबार में आगमन

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 401] बुरहान-उल-मुल्क मुर्तजा निजाम-उल-मुल्क का छोटा भाई था। जब हुसैन निजाम-उल-मुल्क मर गया तो उसका राज्य उसके ज्येष्ठ पुत्र को प्राप्त हुआ। परन्तु वास्तविक शासन छोटे शहजादे की माँ के हाथ रहा। अपने पिता की भाँति उसने भी अन्य मित्रों की अपेक्षा बुरहान को ही अच्छा समझा परन्तु कुछ समय बाद स्वार्थी लोगों ने उसमें और उसके रिश्तेदारों में झगड़ा करवा दिया। इसलिए उसने अपनी माँ और अपने भाई को पकड़कर दुर्ग में कैदकर दिया। उसकी मूर्खता और दुष्ट प्रवृत्तियों ने उसको सज्जनों और स्वामिभक्तों से अलग रक्खा और दुष्ट लोगों की संगत में डाल दिया जिनकी बुरी सलाह से उसका मस्तिष्क फिर गया। उसने हुसैन नामक एक मुर्गा लड़ाने वाले को अपना दोस्त बना लिया और उसे आसफखाँ की उपाधि प्रदान की। इस नीच आदमी ने बिदर के साथ युद्ध करवा दिया और कन्दहार[1] में एक भयंकर युद्ध होता रहा। इन मूर्खतापूर्ण कार्यवाहियों का समाचार चारों ओर फैल गया और एक पहरेदार की सहायता से कैद से निकलकर बुरहान उत्पात करने लगा, परन्तु उसकी बुद्धि पर बेड़ियाँ पड़ी हुई थीं और उसका भाग्य सोया हुआ था। उसने दूसरों की सम्पत्ति पर दृष्टि डाली और उनको सताना शुरू किया। जब इस उत्पात का पता निजाम-उल-मुल्क को लगा तो वह शीघ्रता से वापस आया और वांछित दिन अहमदनगर पहुँचा। बहुत से लोग बुरहान को छोड़ गये। इसलिए उसे लड़े बिना ही भाग जाना पड़ा। तब वह विजयनगर में आदिलखाँ के पास पहुंचा परन्तु जब वह कुछ नहीं कर सका तो वह जोगी का वेष धारण करके अहमदनगर गया। वहाँ वह छिपा रहा और बदमाश लोगों का एक दल बनाने का यत्न करता रहा। परन्तु जब उसका पता लग गया तो वह भाग कर बगलाना के हाकिम के पास पहुंचा। वहाँ भी वह कुछ नहीं कर सका। इसलिए वह बीदर में कुतुबुद्दीनखाँ के पास चला

---

1 बिदार से उत्तर में साठ मील दूर स्थित।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गया । वहाँ से वह शाही दरबार में गया और वहाँ उसका अनुग्रहपूर्वक स्वागत हुआ । (इससे पहले एक बहुरूपिया आ चुका था और उसने प्रकट किया था कि वह बुरहान-उल-मुल्क है । उसका वृत्तान्त भाग 5 में देखें) ।

मासूम काबुली की शाहबाजखाँ से हार

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 412] विद्रोहियों की पराजय के बाद विजयी सेना के एक भाग ने उड़ीसा की ओर कूच किया और दामोदर नदी के निकट अपना डेरा लगाया । वहाँ उन्होंने विश्राम किया और सेना का एक भाग घोराघाट भेजा गया कि वहाँ काकशालों की सुरक्षा करे । कुछ समय के बाद एक प्रबल विरोधी सेना के साथ मासूमखाँ भाटी प्रदेश में से मिर्जा बेग काकशाल के विरुद्ध चढ़ाई करने आया । तब मिर्जा बेग काकशाल ने ताजपुर में तरसूनखाँ के पास शरण ली । मासूम ने पड़ौस के इलाके को लड़ने के लिए छोटे-छोटे दल भेजे और तरसूमखाँ एक किले में बन्द हो गया । टांडा से सात कोस तक का इलाका रौंध डाला गया । जब शाहबाजखाँ को इसकी खबर मिली तो विद्रोहियों को दण्ड देने के लिए उसने कूच किया । बड़ी शीघ्रता के साथ एक अग्रिम सेना भेजी गई और उसने स्वयं अपनी सेना के साथ पटना से प्रयाण किया । वह स्थल मार्ग से चला और थोड़े समय में ही विद्रोहग्रस्त जिलों में पहुँच गया । विद्रोही लोग उसके सामने से हट गये । मासूमखाँ जमुना के निकट था । वहाँ उसने विश्राम किया । शाहबाजखाँ ने टांडा से सब अमीरों को लिखा जिनका इस समय उड़ीसा पर अधिकार था और कहलाया कि कतलू में शाही सेना का सामना करने का साहस नहीं है । इसलिए वे लोग अपनी सेना का कुछ भाग उसकी (शाहबाजखाँ) सहायता के लिए भेजें । इसलिए वजीरखाँ और अन्य लोग शाहबाजखाँ से आ मिले । तब उस अफसर ने गंगा पार की । इस समय भाटी के तीन हजार बन्दूकची उसके पास आ गये । यह (भाटी) पहले शाह-बरदी की सेवा में था और अब बरदी मर गया था । इस सहायक सेना के कारण विजय की आशा बहुत बढ़ गई । यह सेना तरसूमखाँ और मिर्जाबेग काकशाल की सेना के साथ हो गई । फिर शाह कुलीखाँ और दो तीन अन्य प्रसिद्ध अमीर आकर शाही सेना से मिल गये । अब खबर आई कि बाबा मकरी ने विद्रोही सेना के साथ सन्तूष कस्बे में जाकर तरसूमखाँ को हरा दिया है । तब शाहबाजखाँ ने तरसूम की सहायता के लिए मुहिब्बअलीखाँ के नेतृत्व में सेना का एक भाग भेजा और उसने भी शीघ्रता से पीछा किया तब शत्रु भाग गया और शाही सेना के हाथ में लूट का बहुत-सा माल पड़ा । मासूमखाँ ने देखा कि नदी पार करना बड़ा कठिन कार्य है इसलिए शाही सेना के सामने दूसरे किनारे पर वह जम गया ।

सन्धिवार्ता—अन्त में शाहबाजखाँ ने सन्धि वार्ता समाप्त कर दी और तीर और गोलियों की वर्षा करते हुए नदी पार की । शीघ्र ही जोर की लड़ाई होने लगी, विद्रोही पछाड़ दिये गये और 4 आजुर को वे भाग गये । शाही नौ सेना की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नावें इस युद्ध में भाग लेने के लिए नहीं आ सकीं। परन्तु नारायण भूमि और मुराद काकशाल अपनी-अपनी नावें लाये जिससे विजय प्राप्ति में सहायता मिली। मुहिब्ब-अलीखाँ को भागने वालों का पीछा करने के लिए भेजा गया परन्तु उनका एक दल लड़ने के लिए तैयार हो गया और पीछा करने वालों से भिड़ गया। इस रुकावट का हाल सुनकर स्थिति को सुधारने के लिए शाहबाज ने कूच किया। तब एक दूसरी जोर की लड़ाई हुई। इसमें शत्रु फिर हार गया और (मासूम) फरनखुदी बन्दी बना लिया गया। बहुत-सी लूट मिली और शत्रु परेशान होकर भाग गया। मिर्जा बेग, संग्राम और दलपत ने सबल सहायता दी। शाही सेना ने शत्रुओं का घोराघाट तक नदियों और दलदलों को पार करके पीछा किया और घोराघाट को एक बार फिर लूट लिया। मासूमखाँ अपने साथियों के साथ भागकर भाटी के पास पहुँच गया और जब्बारी कूच चला गया। लगभग 150 आदमी बन्दी बना लिए गये।

शासन का उन्तीसवाँ वर्ष

मासूमखाँ के विरुद्ध कार्यवाहियाँ

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 432] मासूमखाँ की पराजय के पश्चात् शाबासखाँ ने भाटी की ओर उसका पीछा किया और वर्षा तथा चढ़ी हुई नदियों की कुछ परवाह न की। उस प्रान्त का शासक ईसाखाँ शाही तख्त का स्वामीभक्त सेवक होने का दावा करता था। शाबासखाँ ने अब निश्चय किया कि इसकी परीक्षा की जाय। उससे कहा जाय कि मासूमखाँ को सुपुर्द कर दो। तब उसके चेहरे का पर्दा दूर हो जाएगा और यदि उसने इन्कार किया तो उसे दण्ड दिया जायगा। भाटी एक ऊँचा प्रदेश है और इस हिन्दी नाम से प्रसिद्ध है। यह बंगाल से नीचे की ओर स्थित है। यह पूर्व से पश्चिम की ओर लगभग चार सौ कोस लम्बा है और दक्षिण से उत्तर की ओर लगभग तीन सौ कोस चौड़ा है। इसके पूर्व की ओर समुद्र और जैसोर का प्रदेश है और पश्चिम की ओर पहाड़ी इलाका है जो टांडा से दक्षिण की ओर है। उत्तर में खारा समुद्र है और तिब्बत की पहाड़ियों का सिरा है। इस प्रान्त के सरदार का पिता बेस राजपूत था जो प्रायः दम्भों का प्रदर्शन किया करता था और विद्रोह कर देता था। सलीमखाँ, ताजखाँ और दरियाखाँ के समय में इस प्रान्त में शक्तिशाली सेनाएँ भेजी गई थीं और जोर की लड़ाई के बाद इस सरदार को सन्धि की प्रार्थना करने के लिए बाध्य होना पड़ा था। कुछ समय के बाद उसने प्रायः विद्रोह कर दिया परन्तु उसे बन्दी बनाकर मार डाला गया। उसके दो पुत्र ईसाखाँ और इस्माइल व्यापारियों को बेच दिए गए। जब सलीमखाँ की मृत्यु हो गई और ताज खाँ ने बंगाल प्रान्त दबा लिया तो ईसाखाँ के चाचा कुतुबखाँ ने अच्छी सेवा करके प्रसिद्धि प्राप्त की। बहुत प्रयत्न करके वह दोनों भाइयों को तूरान देश से निकाल लाया। ईसा ने अपनी बुद्धि और दूरदर्शिता के द्वारा अच्छी प्रसिद्धि प्राप्त की और बंगाल के बारह जमींदारों को अपने अधीन कर लिया। अपनी दूरदर्शिता और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चतुराई से वह बंगाल के शासकों के प्रति अपनी अधीनता प्रकट करता रहा और कर भी भेजता रहा। परन्तु उसने यह सावधानी की कि उनसे मिला कभी नहीं।

शाहबाजखाँ की सेना गंगा के तट पर खिजरपुर के निकट पहुँच गई इस स्थान पर एक नाव घाट है इसलिए नदी के दोनों ओर दो दृढ़ दुर्ग हैं। उसने इन दोनों दुर्गों पर कब्जा करके सुनार गाँव को दबा लिया। इसके पश्चात् उसने कतरा-पुर ले लिया और उसको लूटा। यहाँ पर बारूद घर थे। फिर उसकी सेना ने मशहदी नामक एक बड़े नगर की ओर कूच किया और यहाँ पर उन्हें बड़ी लूट मिली। इसके पश्चात् उन्होंने ब्रह्मपुत्र के किनारों पर डेरे लगाये जो बहुत बड़ी नदी है और खटा की ओर से बहती हुई आती है। अग्र सेना के सामने से भागकर मासूम ने एक टापू में शरण ली और वह बन्दी होते-होते बच गया। इसी दौरान में ईसा, जो कछचला गया था, एक बड़ी सेना और अच्छी सामग्री लेकर आ पहुँचा। तब शाही अफसरों ने कुमार समुद्र के कस्बे के सामने ब्रह्मपुत्र नदी पर दोतक के पास अपनी सेना जमाई और अपनी स्थिति को दृढ़ किया। उन पर स्थल और जल मार्ग से जोर का आक्रमण हुआ परन्तु प्रति बार उन्हें विजय प्राप्त हुई। अब तरसूनखाँ को शत्रु को परेशान करने के लिए अलग किया गया ताकि वह बजरपुर में उनकी सामग्री पर धावा करने की धमकी दे। भोवाल से दो रास्ते थे। एक शत्रु के स्थान से कुछ दूरी पर था और दूसरा नदी के किनारे-किनारे चलता था। भाग्यवश तरसूनखाँ ने यह दूसरा मार्ग पसन्द किया। मासूम को इतना पता लग गया। इसलिए एक बड़ी सेना लेकर उसने आक्रमण करने के लिए प्रयाण किया। शाहबाज खाँ ने मुहब्ब अलीखाँ को शीघ्रगामी हरकारों के साथ रवाना किया कि तरसून को खतरे की सूचना दे और उससे कहे कि किसी दृढ़ स्थान पर पहुँचे और सहायक सेना न आ जाय तब तक लड़ाई न करे। जब उसको सूचना मिली कि एक सेना आ रही है तो तरसून खाँ ने दूरदर्शिता ताक में रखकर यह अनुमान लगाया कि यह सहायक सेना है और वह उनका स्वागत करने के लिए आगे बढ़ा। वह बहुत आगे नहीं गया था तो उसे पता लगा कि वे शत्रु हैं। उसके मित्रों ने उसे सलाह दी कि वापस डेरे को लौटा जाय और चारों ओर आदमियों की रक्षा के लिए रखे और सहायक सेना की प्रतीक्षा करे। परन्तु यह सलाह निष्फल हुई। वह साहस और वीरता के साथ लड़ने के लिए तैयार हो गया। उसके कुछ साथी उसे छोड़कर भाग गए। पन्द्रह आदमियों से अधिक ने उसका साथ न दिया तो भी उसने लड़ाई की। उसके दो रिश्तेदार वीरतापूर्वक लड़ते हुए मारे गए और वह स्वयं बन्दी बना लिया गया। मासूम प्रत्यक्ष में उससे कृपा और मित्रता के साथ मिला और उसे अपनी ओर मिलाने के लिए प्रयत्न किया। परन्तु उसके प्रस्ताव को घृणा के साथ ठुकरा दिया गया। तब इस संकुचित मस्तिष्क वाले विद्रोही का स्वप्न दूर हुआ। उसका क्रोध जाग्रत हुआ और उसने वृद्ध और अमर कीर्तिवान तरसूनखाँ को मार डाला।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कतलू किरानी

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 436] जब शाहबाजखाँ ने भाटी के विरुद्ध प्रस्थान किया तो वजीरखाँ में नेतृत्व में एक सेना कतलू के विरुद्ध वर्दवान को भेजी गई। परन्तु यह यूँही अपना समय व्यतीत करती रही। तब सादिखाँ आ पहुँचा। वह चुस्त और होशियार अफसर था। उसके आते ही स्थिति बदल गई। विद्रोही लज्जित होकर उड़ीसा की ओर भाग गया और शाही अफसरों ने तकरोही तक उसका पीछा किया और उसको इतना दवाया कि उसे धर्मपुर के जंगलों में शरण लेनी पड़ी। अव अमीर उसको अधिक नहीं सताना चाहते थे और युद्ध करते-करते थक भी गए थे। इसलिए उन्होंने पिछला प्रस्ताव दोहराया कि उसे उड़ीसा का शासक बना रहने दिया जायगा और वह साम्राज्य का सामन्त बनेगा। उसने ये शर्तें मन्जूर कर लीं और अपने भतीजे को दरवार में स्वामिभक्ति प्रकट करने के लिए भेजा और साठ चुने हुए हाथी नजर किए।

भाटी में शाहबाजखाँ की विफलता

[मूलपाठ जि० 3, 437]। शाहबाजखाँ ने पनार नदी के तट पर जो ब्रह्मपुत्र की एक शाखा है, अपनी सेना ठहराई और यहाँ से वह विद्रोहियों के साथ सन्धि-वार्ता करने लगा। उसे आशा थी कि वे उसकी बात मान लेंगे। ईसा ने सम्मानपूर्वक उसके प्रस्ताव का स्वागत किया और कुछ समय तक चर्चा जारी रखी परन्तु यह प्रकट हो गया कि उसके भावों और शब्दों में मेल नहीं था। इसलिए लड़ाई फिर शुरू हो गई। सात मास तक शाही सेना को समय-समय पर विजय प्राप्त होती रही और विद्रोहियों का हार के कारण दिल टूट गया। परन्तु शाहबाजखाँ वड़ा दम्भी था और अपनी सेना के अमीरों की भावनाओं की उपेक्षा करता था। इसलिए उन्होंने मिलकर उसे विफल करना चाहा। इससे वड़ी दुर्भावनाएँ उत्पन्न हो गईं। कइयों की मृत्यु होने लगी और स्थिति नहीं सँभल सकी। शत्रु जानता था कि शाही सेना का उत्साह टूट गया है। सौभाग्य से वर्षा तो कम हुई परन्तु लोगों में उत्साह न था। शत्रु ने बहुत से मजदूर लाकर पन्द्रह स्थानों पर ब्रह्मपुत्र के किनारे कटवा दिये और शाही सेना में पानी चला दिया। तव तोपमंचों में पानी फैल गया तो वे नावें लाये जिन्हें उस देश में बियारा कहते हैं। दोनों ओर से तोपें और बन्दूकें चलाई जाने लगीं। फिर शीघ्र ही शाही सेना का भाग्य चमक उठा। उनकी गोली से विद्रोहियों का सेनापति मारा गया। कुछ नावों में मुठभेड़ हुई। फिर पानी भी उतरने लगा। इससे उन्हें लड़ने के लिए वाध्य होना पड़ा। उनके बहुत से आदमी डूब कर मर गये। उनकी सब ओर हार हुई। केवल ढाका के थानेदार सैयद हुसैन का तोपमंच शेष रहा। उसको बन्दी बना लिया गया।

अब ईसा की मूर्खता का स्वप्न समाप्त हुआ और उसने इस बन्दी के द्वारा सन्धि-वार्ता शुरू की। शाहबाजखाँ ने प्रस्ताव का अनुग्रहपूर्वक स्वागत किया और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ईसा बादशाह की सत्ता के अधीन होने के लिए और अपने को उसका सेवक मानने के लिए तैयार हो गया। यह निश्चय हुआ कि सुनार गाँव बन्दरगाह में शाही दरोगा रहा करेगा। मासूमखाँ मक्का की यात्रा करेगा और बादशाह के पास खिराज भेजा जायगा उसने उदारतापूर्वक भेंटें दीं और अमीरों के हृदयों को जीत लिया। तब शाही सेना वापिस लौट गई।

शाहबाजखाँ ने नदी पार की और भोपाल की सीमा पर पहुंचा। वह सन्धि की पूर्ति की आशा कर रहा था वरन्तु दुष्ट सलाहकारों ने ईसा के मस्तिष्क को फेर दिया था। अब उसने नये प्रस्ताव और शर्तें प्रस्तुत कीं जिससे वड़ा विवाद खड़ा हो गया। पुनः युद्ध करने की तैयारी होने लगी और 19 मिहिर को उसने लड़ाई शुरू कर दी। शाही सेना के अमीरों की दृष्टि इतनी छोटी थी और उनकी समझ इतनी निर्बल थी कि शाहबाजखाँ की विफलता में वह अपना लाभ समझते थे। उनका ख्याल था कि उसके पराजय से उनको लाभ होगा। सबसे पहले मुहिब्ब अलीखाँ उसको छोड़ गया। उसके बाद दूसरे अमीर उसको छोड़ गये। सबने अपना-अपना मार्ग लिया। शाह कुलीखाँ महिरम ने शत्रु का सामना किया परन्तु वह आहत हो गया और उसके आदमियों ने उसका साथ नहीं दिया। इसलिए उसने भोवाल खाली कर दिया। अब शाहबाजखाँ को अपने खतरे का ज्ञान हुआ और उसने अपने अफसरों को शान्त करना चाहा परन्तु अब पश्चात्ताप का समय निकल चुका था। उसको अपना सामान छोड़कर टाँडा की ओर पीछे हटना पड़ा। मीर-ए-अदल के पुत्र और अन्य कितने ही लोग बन्दी बना लिए गये। शेख मुहम्मद गजनीवी और कई अन्य लोग डूबकर मर गये। आठ दिन तक पीछे हटते रहने के बाद सेना ने शेरपुर के पास विश्राम किया। शाहबाजखाँ ने अपनी सेना एकत्र करने का यत्न किया। उसका इरादा था कि अपनी पराजय का बदला लिया जाय परन्तु उसके साथी उससे नाराज थे। उन्होंने साथ नहीं दिया। टाँडा पहुंचने पर वजीरखाँ स्वामिभक्तिपूर्वक उसकी सहायता करने के लिए आया। परन्तु शाहबाजखाँ की पुरानी आदत प्रकट हुई और उनमें कोई समझौता नहीं हो सका। इसलिए शाहबाजखाँ को दरबार में जाने के लिए बाध्य होना पड़ा। ज्योंही इसकी खबर बादशाह को मिली तो उसने असफल अफसरों को वापस आने से रोकने के लिए और उन्हें सलाह देने और बुरा-भला कहने के लिए अपने अफसर भेजे। सैयदखाँ और विहार के तथा बंगाल के दूसरे जागीरदारों को आदेश हुआ कि वे अपनी सेना उन्हें दें और विद्रोही जमींदार को दण्ड देने में सहायता दें।

ईसा इतना सावधान था कि वह अपने देश से रवाना नहीं हुआ परन्तु उसने मासूमखाँ को प्रेरित किया कि शेरपुर जावे। विद्रोहियों की सेना के एक भाग ने उस इलाके को मालदा तक और टाँडा से दस या बारह कोस तक रौंध डाला। वजीरखाँ को इतना आत्म-विश्वास नहीं था कि वह उधर जाकर उन पर आक्रमण करता परन्तु वह अपने स्थान पर डटा रहा और उस नगर की रक्षा करता रहा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अव शाही सन्देशवाहक आ पहुंचे और उन्होंने बुरा-भला कहकर शाहवाजखाँ को वापस कर दिया। उससे कहा गया कि यदि अधिक सेना की आवश्यकता हो तो राजा टोडरमल और दूसरे सरदारों को आदेश दिया जाय कि वे उसके पास आवें। परन्तु उसने उत्तर दिया कि अब उसकी सेना खूब बढ़ गई है और उसमें उत्साह भरा हुआ है। 18 दे को उसने भाटी की विजय का निश्चय करके बंगाल में प्रवेश किया और विद्रोही उसके सामने से पीछे हट गये। जब वह जमुना[1] पर पहुंचा तो उसने सुना कि मासूम शेरपुर में है और उसे यह उम्मीद नहीं है कि उसके प्रतिद्वन्द्वी नदी को पार करेंगे। शाहवाजखाँ ने तुरन्त ही नदी को पार करके आगे बढ़ने का निश्चय कर लिया परन्तु अमीर लोग उसकी युक्ति से सहमत नहीं थे। तो भी उसने बड़े कौशल से कुछ सैनिक इस बड़ी नदी के पार उतार दिये और उनके आते ही शत्रु भाग गया और अपने पीछे बहुत से कैदी तथा लूट का माल छोड़ गया। सैयदखाँ और कुछ लोगों ने शत्रु का पीछा किया तो ज्यों-ज्यों वह आगे बढ़ता था त्यों-त्यों शत्रु पीछे हटते जाते थे। जब इलाका विद्रोहियों से खाली हो गया तो अमीर लोग शेरपुर मिराज को वापस लौट गये।

जब शाही सेना शेरपुर में थी तो मासूमखाँ उड़ीसा में फतहाबाद की ओर रवाना हुआ और दस्तखाँ काकशाल भी वहाँ आस-पास रहा। उसे यह आशा थी कि यदि शाही सेना के विभाग हो जायेंगे तो उसे प्रहार करने का अवसर प्राप्त होगा परन्तु मासूम के विषय में कोई समाचार आये उससे पहले ही इस विद्रोही दस्तमखाँ काकशाल ने शाही डेरे से बारह कोस के फासले तक के इलाके को रौंध डाला। फिर उसके विरुद्ध एक सेना भेजी गई तो वह पीछे हट गया। (शाहवाजखाँ और उसके अमीरों में मतभेद)।

अन्त में यह तय हुआ कि शत्रु के पास दो सेनाएँ हैं इसलिए शाही सेना के दो भाग होने चाहिए। एक भाग वजीरखाँ के नेतृत्व में मासूमखाँ के विरुद्ध कूच करे और दूसरा शाहवाजखाँ के नेतृत्व में वहाँ बना रहे, जहाँ वह है। यह उस भाग के विद्रोहियों को देखता रहे और रोकता रहे।

शासन का तीसवाँ वर्ष

बंगाल में विद्रोही

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 466] जब मासूमखाँ ने सुना कि शाही सेना आ रही है तो उसने नई तैयारी की। एक दृढ़ स्थान तलाश करके उसने तरमहानी पर, जहाँ गंगा, जमुना और शक्ति मिलती है किलावन्दी करना शुरू किया। यहाँ उसने दो दुर्ग बनवाए। जब शाही अमीरों ने आवश्यक तैयारी कर ली तो सचेत ईसा ने सन्धि करने की कोशिश की परन्तु उसके प्रस्तावों पर किसी ने ध्यान नहीं दिया।

---

1 ढाका से कुछ कोस नीचे की ओर गंगा की दो शाखायें हो जाती हैं एक पद्मावती कहलाती है जो चटगाँव के पास समुद्र में गिरती है और दूसरी उत्तर की ओर चलती है और फिर उसकी तीन शाखायें हो जाती हैं जिनके नाम सरस्वती, जमुना और गंगा हैं—आराइश-ए महफिल।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अमीरों ने दुर्गों पर आक्रमण करने का निश्चय किया और कार्यवाही शुरू कर दी। तब शत्रु उनके सामने से पीछे हटने लगा। 21 फरवरदीन को एक दुर्ग पर आक्रमण किया गया और नावों की सहायता से उसे ले लिया गया। अगले दिन प्रातःकाल दूसरा दुर्ग भी छीन लिया गया। तब उन्होंने मासूमखाँ पर आक्रमण किया। वह उनको न रोक सका और नदी के द्वारा बचकर भाग गया।

अमीर लोगों को यह आशा थी कि ईसा अपनी सन्धि का पालन करेगा। उन्होंने उड़ीसा की ओर अपना ध्यान दिया जहाँ सुलेमान सरवानी ने विद्रोह कर दिया था और अपने पास बहुत से अफगानों को एकत्र करके वह इलाके को लूट रहा था। वर्धमान के पास उन्होंने वजीरखाँ के पुत्र पर हमला किया और एक तेज लड़ाई के बाद उसे उस स्थान में धकेल दिया। तब शाही अमीर तुरन्त उसकी सहायता के लिए चले तब विद्रोही घेरा उठाकर चल दिए तथा मंगलकोट नदी के तट पर उन्होंने अपनी सेना जमाई। शादिकखाँ ने आक्रमण करके उनको हरा दिया। उनके तीन सौ आदमी इस लड़ाई में मारे गए और एक हजार पीछा करने में नष्ट हो गये।

जब शाही अमीर बंगाल से बिहार लौट आए तो दस्तम काकशाल ने घोराघाट को घेर लिया। बाबू मंगली अब शेरपुर मिराज को आया और उसका घेरा उठवा दिया।

बंगाल में शान्ति स्थापना

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 490] जब बादशाह ने पंजाब की ओर कूच किया तो उसे समाचार मिला कि वजीरखाँ अकेला बंगाल में शान्ति स्थापित नहीं कर सकता तथा विद्रोही लोग अब भी सक्रिय हैं। इसलिए शाहबाजखाँ के नाम आदेश जारी किया गया कि वह बिहार से बंगाल को कूच करे। यद्यपि शाहबाजखाँ ने प्रार्थना की कि उसे दरबार में लौटने की अनुमति दी जाय तथापि उसके पास आवश्यक आदेश भेजा गया कि वह अपने कर्तव्य-पालन के लिए रवाना हो जाय। यह सन्देश उसके पास 20 बहमन को जौनपुर पहुंचा। तो वह अपना कर्त्तव्य-पालन करने के लिए बंगाल की ओर रवाना हो गया। उसने बुद्धिपूर्वक प्रोत्साहन देकर तथा समझा-बुझाकर विद्रोहियों को शान्त कर दिया। इसलिए वे अधीन और शान्त हो गए। तब ईसा के विरुद्ध भाटी प्रदेश में एक सेना भेजी गई और जो इलाका सादिकखाँ ने छोड़ दिया था वह वापस ले लिया गया। ईसा नम्रतापूर्वक अधीन हो गया और उसने शाही दरबार में भेंटें भेजीं। मासूमखाँ ने इतना प्रबल विरोध किया था कि वह उपस्थित होने से डरता था परन्तु अपनी अधीनता के चिह्नस्वरूप उसने शाही दरबार में अपने पुत्र को भेजने का प्रस्ताव किया और वह शान्तिपूर्वक छिपा रहा। तब यह निश्चय किया गया कि उसके लिए सबसे अच्छा यह होगा कि वह मक्का जाए और बाद में दरबार में हाजिर हो। कतलू के बहुत से अफगान उसका साथ छोड़कर शाही सेना में प्रविष्ट हो गए। कतलू ने स्वयं विनम्र प्रार्थना की और शाहबाजखाँ ने अपने सीधेपन में आकर उड़ीसा उसे वापस दे दिया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इसी समय कोकरा के विरुद्ध एक छोटी सी सेना भेजी गई। कोकरा उड़ीसा और दक्षिण के बीच में एक सम्पन्न इलाका है। वहाँ का भूमिया माधोसिंह समझता था कि पर्वत दुर्गम है। इसलिए उसने सामना किया। फिर भी शाही सेना वहाँ पहुँच गई और उसने इलाके को रौंधकर उसे अधीन कर लिया।

शाही सेना की पराजय—राजा बीरबल की मृत्यु

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 494] जब कोकलताश (जैनखाँ) स्वाद (स्वात) और बाजोर को दबाने के लिए रवाना हुआ तो उसने पहले बाजोर को दबाया जिसमें युसूफजाई जाति के तीस हजार घर थे। तत्पश्चात् उसने स्वात के विरुद्ध कूच किया जो पर्वतीय प्रदेश है और जिसमें इसी जाति के चालीस हजार घर हैं। जब वह नदी तट पर पहुँचा तो वहाँ के निवासियों ने जोर का सामना किया और कुछ समय के लिए उसकी सेना के अग्रभाग को रोक लिया परन्तु अलतमाश के वीर उनकी सहायता करने के लिए आ पहुँचे और उनकी वीरता को देखकर शेष लोगों को ऐसा उत्साह हुआ कि वे वीरतापूर्वक लड़े और उन्होंने शत्रु को भगा दिया। कोकलताश ने इस इलाके के बीच जबदरा में एक दुर्ग का निर्माण करवाया और फिर वह शत्रु को दण्ड देने में लग गया। उसको तेईस बार विजय मिली और उसने सेनाएँ नष्ट कीं सारा इलाका करागर की पहाड़ियों और बुचीर के इलाके के अतिरिक्त उसके हाथ में आ गया। परन्तु पर्वतों पर चढ़ने से और निरन्तर लड़ते रहने से उसकी सेना थक चुकी थी। फलतः विवश होकर सहायक सेना के लिए प्रार्थना की। उसकी सहायता के लिए बादशाह ने राजा बीरबल, हकीम अब्दुलफतह और अन्य अफसरों को भेजा। उनके वहाँ पहुँचते ही उनमें मतभेद शुरू हो गया। कोकलताश और राजा एक-दूसरे से कठोर शब्द कहने लगे और परस्पर नाराज होकर देखने लगे। राजा और हकीम में भी परस्पर अनबन थी। जब वे मालकन्द पहुँचे तो कोकलताश ने सबको राजी करने का यत्न किया और बहुत देर तक वे लोग यह बहस करते रहे कि विभिन्न सेना का विभाग किस प्रकार किया जावे। हकीम अब्दुलफतह कुछ सेना लेकर तुरन्त ही जगदरा के दुर्ग को चला गया। उसके चले जाने से राजा क्रुद्ध हुआ और अपनी क्रोध भावना को पुष्ट करने लगा।

प्रातःकाल वे लोग दुर्ग में मिले। कोकलताश ने दावत की तैयारी की और अपने सहकारियों को निमन्त्रित किया परन्तु राजा ने आने से इन्कार किया और कहलाया कि उत्तम बात यह होगी कि अनुभवी लोग मिलकर निश्चय करें कि कौन से मार्ग का अनुसरण करें। कोकलताश अपने क्रोध को दबाकर राजा के पास गया। अन्य अमीर भी उसके साथ थे। उन्होंने निवेदन किया कि कोकलताश को मुखिया मान लेना उत्तम होगा और फिर उसी के स्थान पर परामर्श करना उचित होगा। इस समिति में राजा और हकीम में गरमागरम बातचीत हुई और फिर एक ने दूसरे को गालियाँ दीं। परन्तु कोकलताश ने शान्ति रखी जिससे वे शान्त हो गए। तब उसने प्रस्ताव किया कि दुर्ग पर अधिकार बनाए रखने के लिए वहाँ कुछ सेना छोड़ी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जाय और शेष सेना शत्रु के विरुद्ध कूच करे। उसने सोचा था कि यह काम ताजा सेना करे और वह पुरानी सेना के साथ इलाके में मध्य भाग की रक्षा करे या यदि उन्हें पसन्द हो तो वे जगदरा में ठहरे और वह पहाड़ी लोगों को दण्ड देने के लिए जावे। राजा और हकीम ने इन दोनों प्रस्तावों को नहीं माना और कहा कि बादशाह की इच्छा यह है कि वह इलाके पर कब्जा नहीं करे। बल्कि शत्रु को दण्ड दे और फिर वापस दरबार में आ जाय। कोकलताश ने कहा कि जिस देश को इतनी कठिनता से प्राप्त किया है उसको छोड़ देना अनुचित होगा और पर्वतों की घाटियों में होकर वापस लौटने का प्रयास करना जल्दबाजी होगी। यदि उसके प्रस्तावित दोनों मार्गों को वे पसन्द नहीं करते हैं और वापस लौटने पर तुले हुए हैं तो सर्वोत्तम योजना यह होगी कि वे उसी मार्ग से वापस जावें जिससे वे आये हैं क्योंकि सेना के लिए वही ठीक मार्ग है। तब शत्रु उनको रोक नहीं सकेगा परन्तु वे अपने ही विचार पर अड़े रहे ओर कोकलताश ने निर्बलता दिखाकर सेनापति का काम छोड़ दिया। उसको यह भय था कि कहीं उसके साथी बादशाह से शिकायत करके उसके क्रोध को भड़का दें। इन लोगों को यह भय था कि यदि उन्होंने पृथक-पृथक प्रयाण किया तो उसका प्रयास विफल होगा और उन्हें लज्जा उठानी पड़ेगी। इसलिए जो भाग्य ने चाहा वही हुआ। समस्त सेना को प्रयाण करने का आदेश दिया गया और राजा ने सेना के दाहिने पक्ष का और हकीम ने वामपक्ष का नेतृत्व ग्रहण किया।

2 इसफनदारमुज को उन्होंने जगदरा से करागर की ओर कूच किया और पाँच कोस जाकर वे कानडाक नामक गाँव के निकट ठहरे। अगले दिन का रास्ता घाटियों से भरा हुआ था और दाहिना पार्श्व पीछे से रक्षा के लिए रह गया और आधे कोस के अन्तर पर सेना ठहर गई। सेनाग्र भाग को उस दिन आगे कुछ छोटी सी लड़ाई कर वापस लौटना था। दूसरे दिन प्रातःकाल जब सेनाग्र भाग ने घाटी में प्रवेश किया तो लड़ाई शुरू हो गई। अनेक मुठभेड़ों में शाही सेना को सफलता मिली और थोड़े ही समय में उसने घाटी पर कब्जा करके कुछ लूट का माल हथिया लिया। इस जाल में हजारों सैनिक मर गए। लूट का शोर सुनकर अल्तमश भी उसमें हिस्सा बँटाने के लिए आगे दौड़े। मुख्य सेना के बहुत से लोग अलग होकर शीघ्रता से आगे बढ़े। कोकलताश ने यह स्थान डेरा लगाने के लिए पसन्द किया था। आगे बढ़कर जब वह अफगानों के सामने पहुँचा तो उसने देखा कि सेना लूट में लगी हुई है। हसनखाँ तबती आहत हो गया था और लोग उसको ले गये थे। स्थिति बड़ी गम्भीर प्रकट होती थी। इस बात का पता लगने पर कोकलताश लड़ने में व्यस्त हो गया और खूब डटा रहा। रात और दिन और दूसरे दिन प्रातःकाल तक लड़ाई होती रही। कोकलताश ने अपने हाथ से शत्रु को वापस धकेल दिया। दिन के अन्त में विजय प्राप्त हुई परन्तु ऊँटों और बैलों का सामान लुट चुका था। जो सामान हाथियों या खच्चरों पर था वह आ गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अगले दिन उन्होंने खानपुर तक छः कोस कूच करके वहां मुकाम किया। कोकलताश ने स्वयं सेना के पृष्ठ भाग का नेतृत्व किया और रास्ते भर लड़ता हुआ वह डेरे के स्थान पर पहुंचा। तब वह राजा के पास पहुंचा और सलाह की कि अब क्या करना चाहिए। उसने पिछली गतिविधि को बहुत दूषित बतलाया और जोर के साथ अपनी सम्मति प्रस्तुत की। अब उनके बीच का अन्तर कम हो गया था और मार्ग ऊबड़-खाबड़ था। परन्तु दिखाई नहीं देता था। इसलिए प्रायः यह सम्मति थी कि पहाड़ियों को छोड़कर कुछ दिन के लिए विश्राम किया जाय और फिर अपने विपक्षियों को दबाने के लिए योजना बनाई जाय। कोकलताश ने प्रकट किया कि आगे की भूमि बड़ी दुर्गम है। इसलिए ऐसा प्रयास करना निष्फल होगा। उसकी राय यह थी कि वे जहाँ के तहाँ रहें और अपनी रक्षा करें। अन्तर भी काफी बड़ा था और इस बात का खतरा नहीं था कि शत्रु ऐसे स्थान पर पहुंच सकेगा जहाँ से उन पर हावी हो सके। पानी और घास का बाहुल्य था और आड़ बनाने के लिए लड़कियों की भी कमी नहीं थी। इस प्रकार वे उस भयंकर शत्रु को दण्ड दे सकेंगे जिसने चारों ओर की पहाड़ियों पर कब्जा कर रखा है। यदि यह बात स्वीकार नहीं है तो बन्दी और लूट का माल वापस लौटा दिया जाय और जमानत के लिए शत्रु के आदमी अपने पास रखकर सन्धि की कोशिश की जाय या कुछ समय के लिए प्रतीक्षा की जाय। इस दौरान उनकी स्थिति का समाचार बादशाह के पास पहुंच जायगा और वह सेना भेज देगा जिसके द्वारा उधर की पहाड़ियों पर कब्जा किया जा सकेगा। परन्तु विधि का विधान कुछ और ही था। वे अपनी राय पर डटे ही रहे और उन्होंने सोचा कि इसी में उनकी सुरक्षा है। वास्तव में इसमें उनका विनाश था।

6 इसफनदारमुज को उन्होंने बुलन्दराय के ऊँचे पर्वत की ओर प्रयाण किया। कोकलताश ने बुद्धिपूर्वक पृष्ठ सेना का नेतृत्व किया। पुनः पहले से भी अधिक लड़ाई शुरू हो गई। वे कुछ आगे बढ़े थे कि शाम हो गई और अपने सामने एक विशाल पर्वत को देखकर वे रुक गये। जब कोकलताश आया तो यह बात स्पष्ट हुई कि अभी एक घाटी और पार करनी है। उसके बाद वे सुरक्षित होंगे। इस घाटी के दोनों ओर पास ही बड़े ऊँचे पर्वत थे इसलिए उसने आगे बढ़ने की जल्दी की। अग्र सेना को आदेश दिया गया कि ऊँचाइयों पर चढ़कर मार के स्थानों को साफ किया जाय और फिर कुछ दूरी पर नीचे उतरकर प्रातःकाल इस दुर्गम पर्वत में मार्ग बतलाए। जब इन लोगों को अफगानों ने धकेल दिया तो कोकलताश ने कुछ वीरों के साथ उनको व्यवस्थित किया परन्तु फिर दूसरे लोग वापस हट गये और सब व्यवस्था बिगड़ गई। यद्यपि कोकलताश ने बड़ा जोर देकर उन्हें भरोसा दिलाकर पुनः व्यवस्था करनी चाही परन्तु यह सब निष्फल हुआ। अफगानों ने उन पर सब ओर से तीर और पत्थर बरसाये और वे ऊँची पहाड़ियों पर से त्रस्त और अव्यवस्थित हालत में धकेल दिए गये। नीचे हाथी, घोड़े और पुरुष सब इकट्ठे हो गए और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गड़बड़ मच गई । कितने ही वीर और उदार पुरुषों ने वहाँ डटे रहकर अपने जीवन बलिदान कर दिए । एक दल को मार्ग मिल गया और वह बचकर भाग निकला । सायंकाल एक दूसरा दल भी उस दुर्गम पर्वत पर होकर निकल गया । कोकलताश इस दल के साथ था । इस लड़ाई में उसने आत्म-बलिदान करने का निश्चय कर लिया था । परन्तु एक वीर मित्र ने उसके घोड़े की लगाम पकड़कर उसको लड़ाई में से बाहर खींच लिया । अन्त में अनेक कठिनाइयाँ सहकर वह पैदल डेरे पर पहुंचा। मूर्ख और भयभीत लोगों ने शोर मचा दिया कि अफगान उन पर आक्रमण कर रहे हैं इसलिए बड़ी विपन्न अवस्था में उस अनुपयुक्त समय में वे उस स्थान से चल दिये। अँधेरे में कई लोग अपना मार्ग भूल गए और पहाड़ियों की चोटियों से गिर पड़े । अफगानों ने पीछे रहकर लूट का माल आपस में बाँट लिया ।

अगले दिन बहुत से भ्रांत लोग नष्ट हो गये और कुछ कैद कर लिए गये । इस लड़ाई में पाँच सौ आदमी मारे गये । इनमें राजा बीरबल भी था जिसकी मृत्यु पर बादशाह को बड़ा शोक हुआ ।

शासन का इकत्तीसवाँ वर्ष

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 503] बरार एक राजपूत रियासत है जो मालवा से मिली हुई है । दक्षिण के शासक शाही सरकार की आज्ञा का यथोचित पालन नहीं करते थे । इसलिए खान-ए-आजम, मिर्जा कोका के नाम आदेश हुआ कि बहुत से अन्य अमीरों को साथ लेकर वह उन शासकों को दण्ड देने के लिए कूच करे । इस लड़ाई की तैयारी करने के लिए वह हिन्दिया के लिए रवाना हुआ और सेना का का एक भाग उसने आगे भेज दिया जिसने नाहिरराव से साँवलीगढ़ छीन लिया । दूसरे जमींदारों ने भी अधीनता प्रकट की परन्तु शाही सेना के अमीरों में एकाएक फूट हो गई । सेनापति ने अपने ही अनुचरों को मालवे में छोटी-छोटी जागीरें देदीं और जिन अमीरों को इस लड़ाई में भेजा गया था, उनकी कहा-सुनी हो गई । इस-लिए फूट पड़ गई और युद्ध-कार्य रुक गया । शाहबुद्दीन अहमदखाँ क्रुद्ध होकर अपनी जागीर पर चला गया और सहायता करने के बजाय उसने विद्रोह की तैयारी कर ली । बुद्धिमान लोगों के प्रयास से संघर्ष तो रुक गया परन्तु दोनों अमीरों ने परस्पर सहयोग नहीं किया । तोलकखाँ को, जो एक मुख्य अमीर था झूठा अपराध लगाकर कैद में डाल दिया गया । अमीर फतुल्लाशिरासी को कई प्रकार से चिढ़ाया गया । इसलिए वह खानदेश के शासक के सामने से पीछे हटकर गुजरात में खानखाना की शरण प्राप्त करने के लिए चल दिया । अनावश्यक विलम्ब के कारण और सैनिकों के इधर-उधर फैल जाने से शाही सेना थोड़े ही समय में क्षीण हो गई और शत्रु में, जो पहले काँप रहा था, अब नया साहस आ गया । खानदेश के राजा अलीखाँ और अन्य लोग बरार और अहमदनगर की सेनाएँ एकत्र करके युद्ध के लिये आगे बढ़े । शाही अमीरों का स्वप्न अब समाप्त हुआ और वे कुछ योजना बनाने का प्रयत्न करने लगे । परन्तु मित्र और शत्रु का कोई पता नहीं था और सहायकों तथा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विरोधियों में कोई अन्तर नहीं था। ढिलमिल ढंग और विभिन्न सम्मतियों के कारण एकता की कोई आशा नहीं थी और शत्रु का सामना करना निष्फल था। इसलिए वे अपना सामान छोड़कर शत्रु के सामने से वरार की ओर पीछे हट गये। जब वे कूच कर रहे थे तो उनको अपने मार्ग-दर्शक हथ्याराव भूमि पर विश्वासघात का सन्देह हो गया। इसलिए उसे मार डाला गया। खेरला के पास दुर्गम प्रदेश में एक सेना भेजी गई परन्तु उधर के विषय में कोई जानकारी नहीं थी इसलिये उसको बड़ी क्षति उठानी पड़ी। यह देखकर कि वरार पर किसी का कब्जा नहीं है उन्होंने उसको लूट लिया और नये वर्ष के दिन वहाँ की राजधानी ऐलिचपुर को भी लूट लिया। एक दल अहमदनगर जाने के पक्ष में था और दूसरा दल चाहता था कि इस इलाके पर कब्जा बनाये रखने का प्रयत्न किया जाय। इस प्रस्ताव को किसी ने न सुना। इसलिये वे लूट के माल के साथ गुजरात की ओर रवाना हो गये। जब शत्रु को उनके पीछे हटने का पता लगा तो अपना तोपखाना और भारी सामान छोड़कर उसने हिन्दिया की ओर कूच किया और उस कस्वे को लूटकर जला दिया। खान-ए-आजम शीघ्र ही खानखाना की सेना से सहायता के लिए गुजरात की ओर गया।

शासन का पैंतीसवाँ वर्ष

दरबार में यूरोपीय लोग

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 602] इसी समय गोआ से पादरी फर्मालियन शाही दरबार में आया और उसका सम्मानपूर्वक स्वागत हुआ। यह वड़ा प्रगल्भ विद्वान था। उसके पास शिक्षा प्राप्त करने के लिए कुछ बुद्धिमान युवक रखे गए जिससे यूनानी पुस्तकों का अनुवाद करने की और ज्ञान के विस्तार की सुविधा हो सके। उसके साथ कई यूरोपीय और अर्मेनियन लोग आए थे जो चीन का रेशम और अन्य देशों की चीजें अपने साथ लाए थे। ये वस्तुएँ वादशाह के देखने योग्य समझी गईं।

उड़ीसा

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 604] बिहार के सूवेदार राजा मानसिंह ने अपनी योग्यता से उस प्रान्त में विद्रोहियों को दण्ड देकर शान्ति स्थापित कर दी थी। अतः वर्ष के अन्त में उसने झारखण्ड के मार्ग से उड़ीसा पर आक्रमण करने की योजना बनाई। वह भागलपुर ठहरा और वहाँ से बंगाल के सूवेदार सईदखाँ से सहयोग करने के लिए कहलवाया। परन्तु वर्षा ऋतु निकट थी, इसलिए उसने सहायता देना स्थगित रखा। वर्तमान वर्ष के आरम्भ में राजा ने वर्दवान के मार्ग से कूच किया। उसके साथ बिहारखाँ और अन्य लोग तथा बंगाल का तोपखाना था। वह वर्षा के अन्त तक और सईदखाँ के आगमन तक राजा जहानाबाद ठहरा परन्तु कतलू ने उड़ीसा में अपना झंडा खड़ा कर दिया था और अब वह धारपुर की ओर साहस-पूर्वक आगे बढ़ा। वह लड़ाई करना चाहता था। धरपुर शाही सेना से पच्चीस कोस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के अन्तर पर था। एक बड़ी सेना देकर उसने बहादुर को रायपुर की ओर आगे भेजा। इसको रोकने के लिए राजा ने जगतसिंह के नेतृत्व में सेना का एक भाग रवाना किया। विद्रोही ने पहले तो दुर्ग में शरण ली और फिर नम्रतापूर्वक सन्धि-प्रस्ताव पेश किया। परन्तु साथ ही उसने छलपूर्वक कतलू को सहायता के लिए बुलाया। कतलू ने सहायतार्थ कुछ आदमी भेजे। जगतसिंह को इस खतरे से सचेत किया गया परन्तु उसने ध्यान नहीं दिया। अन्त में विद्रोहियों ने उस पर आक्रमण किया और उसको अपना डेरा छोड़कर भागना पड़ा। परन्तु उसको अमीर नामक जमींदार ने, जिसने उसे चेतावनी दी थी, बचा लिया और वह उसको बिशनपुर ले गया। इस विपत्ति का समाचार सुनकर मानसिंह ने युद्ध समिति से सलाह ली और अधिकांश लोगों ने यह सम्मति दी कि सलीमाबाद की ओर पीछे हटना चाहिए, जहाँ सैनिकों के कुटुम्ब हैं, और वहाँ सेना को पुनः व्यवस्थित करना चाहिए। परन्तु राजा ने यह सलाह न मानी और आक्रमण करने का निश्चय किया। अब शाही सौभाग्य ने उसकी सहायता की और दस दिन की बीमारी के बाद कतलू मर गया। उसका छोटा पुत्र उसका उत्तराधिकारी बना और अब अफगानों ने समझौते के लिए प्रार्थना की। इस समय भारी वर्षा हो रही थी और शाही सेना क्षीण हो चुकी थी। इसलिए समझौता करना वांछनीय था। अतः यह तय हुआ कि बादशाह के नाम का खुतुबा पढ़ा जाय, सिक्कों पर उसका नाम अंकित हो और इलाका उसकी आज्ञा माने और स्वामिभक्त रहे तथा जगन्नाथ का प्रसिद्ध मन्दिर और उसके अधीन इलाके बादशाह के अधीन हो जाएँ और स्वामिभक्त जमींदारों को कोई क्षति न पहुँचे। उन सबने चालाकी और चतुराई से इस दस्तावेज पर अपने हस्ताक्षर कर दिए। 4 शहरयूर को कतलू का पुत्र 150 हाथियों और अनेक बहुमूल्य वस्तुओं के साथ आया और ये सब चीजें भेंटस्वरूप दे दी गईं। तब राजा मानसिंह बिहार वापस आया।

शासन का छत्तीसवाँ वर्ष

बुरहान-उल-मुल्क

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 612] जब बुरहान-उल-मुल्क ने दक्षिण के प्रदेश के लिए प्रथम प्रयास किया और वह विफल हो गया तब वह अपनी जागीर को लौट गया। परन्तु अब खान-ए-आजम गुजरात चला गया था और शाहबाजखाँ की मृत्यु हो चुकी थी। इसलिए वह खानदेश के शासक राजा अलीखाँ के पास गया जो शाही आदेश के अनुसार उसकी सहायता करने के लिए उत्सुक था। वह बीजापुर के सुलतान आदिलखाँ के साथ इस बात पर सहमत था कि वहाँ से जब वे अहमदनगर के निकट पहुँचे तो सेना भेजी जाय। इसलिए सीमा पर एक सेना भेजी गई और उसे आदेश दिया गया कि वह राजा अलीखाँ की सेना की प्रतीक्षा करे। अहमदनगर के शासक जमालखाँ ने निश्चय किया कि इन दोनों सेनाओं के सम्मिलन को रोका जाय। बुरहान-उल-मुल्क निकट आया उससे पहले ही जमालखाँ ने उसके पुत्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस्माइल को हरा दिया और फिर वह बीजापुर की सेना पर आक्रमण करने के लिए शीघ्र चल दिया और उसको सरलता से हरा दिया। इसके पश्चात् जब बुरहान-उल-मुल्क ने बरार में प्रवेश किया तो मोहम्मद-उल-मुल्क और अन्य अमीर उसमें शामिल हुए। जमालखाँ अपनी पूर्व विजय से फूला हुआ था, इसलिए उसका सामना करने के लिए उसने बिना सोचे समझे कूच किया। राजा अलीखाँ ने बरार के अमीर बुरहान-उल-मुल्क के सुपुर्द किए और जमालखाँ से लड़ाई लड़ी। बड़ी जोर की लड़ाई हुई परन्तु जमालखाँ एक गोली का शिकार हो गया और उसकी सेना भंग हो गई और बड़ी विजय प्राप्त हुई। इसके बाद ही उसके पुत्र इस्माइलखाँ को बन्दी बनाकर कैद में डाल दिया गया। तब खानदेश के शासक ने सेना का एक भाग अहमदनगर भेजा और शीघ्र ही समस्त प्रदेश पर अधिकार कर लिया। जब बुरहान-उल-मुल्क का अहमदनगर पर अधिकार स्थापित हो गया तो उसको कृतज्ञता और स्वामिभक्ति प्रकट करने का अच्छा अवसर मिला। वह दूसरों के लिए एक उदाहरण उपस्थित कर सकता था परन्तु विजय के मद ने उस पर काबू कर लिया। वह उन कृपाओं को भूल गया जो उस पर की गई थीं और अपने आदमियों पर अत्याचार करने लगा और दूसरों को दुख देने में अपना लाभ समझने लगा। बादशाह ने पहले तो विचार किया कि राजा अलीखाँ के पास एक दूत भेजा जाय क्योंकि उसने ही बुरहान को इस पद पर पहुँचाया था। उससे और उधर के अन्य शासकों से सलाह की जाय कि वे स्वयं क्या उसके राज्य पर हमला करेंगे। यदि वे सहमत हों तो दूत वापस आ जाय और यदि नहीं तो फिर शाही सेना भेजी जाय। इसलिए कविराज शेख अब्बुल फैजी को राजा अलीखाँ और बुरहान-उल-मुल्क के पास भेजा गया।

शासन का सैंतीसवाँ वर्ष

उड़ीसा की विजय

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 640] इस प्रदेश पर सदा से स्वतन्त्र राजाओं का शासन था। इनमें एक परताब राव था जिसके पुत्र नृसिंह ने विद्रोह किया और अवसर पाकर उसे विष दे दिया। तब स्वर्गीय राजा का एक सेवक मुकुन्द देव, जो तेलिगाना का निवासी था, नए राजा का विरोध करने के लिए खड़ा हो गया। उसने यह प्रकट किया कि उसकी पत्नी नए राजा से मिलने के लिए जा रही है। उसने कितने ही डोलियों में शस्त्र और सक्रिय आदमी भर दिए और यह दर्शाया कि वे लोग भेंट की रक्षा के लिए हैं। उनको दुर्ग में प्रवेश करने की अनुमति मिल गई और उन्होंने तुरन्त ही अनधिकारी राजा का अन्त कर दिया। यद्यपि यह नियम था कि नए राजा को पिछले राजाओं द्वारा एकत्र किया हुआ कोष खर्च नहीं करना चाहिए परन्तु मुकुन्द ने सन्दूकें तोड़कर सब रुपया निकाल लिया और उसका बड़ी उदारता से उपयोग किया किन्तु इस कार्य के कारण लोगों की भावना उसके विपरीत हो गई।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जब सिकन्दरखाँ उजबेग शाही सेवा छोड़कर सुलेमान किरानी के पास आ गया तो किरानी ने उसके पुत्र बायजीद को झारखण्ड के मार्ग से जो उस देश का बनारस कहलाता था, उड़ीसा के विरुद्ध भेजा और सिकन्दर को भी उसके साथ रवाना किया। राजा ने अपने दो सरदारों को उसका सामना करने के लिए रवाना किया परन्तु उनमें से अनेक रुपए के लोभ में आकर उन्हें छोड़ गए और अपने स्वामी के पक्ष को त्याग गए। कुछ लड़ाई हुई जिसमें मुकुन्द और उसका सेनापति इशतराय मारे गए। तब रखबंज के हाथ में शक्ति आ गई परन्तु सुलेमान ने उसे दबाकर समाप्त कर दिया और फिर समस्त प्रदेश पर अपना नियंत्रण स्थापित कर दिया।

खानखाना मुनीमखाँ और खानजहाँ के समय में इस प्रदेश का एक बड़ा भाग शाही शासन में ले लिया गया था। परन्तु अमीरों की अयोग्यता के कारण कतलू लोहानी ने उसको उनसे वापिस छीन लिया था। जब कतलू मर गया तो राजा मानसिंह ने अपनी सेना हटा दी थी। इसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। बहुत से बुद्धिमान लोगों ने उसके तरीके को पसन्द नहीं किया था परन्तु उसने जल्दी से एक सन्धि कर ली थी। उस प्रदेश के दुष्ट लोगों ने अब एक-दूसरे को दबाने का यत्न किया परन्तु जब तक कतलू का वकील ईसा जीवित रहा तब तक सन्धि का पालन होता रहा। जब वह मर गया तो उत्पाती अफगानों ने जगन्नाथ के मन्दिर पर कब्जा कर लिया और हमीर के मुल्क को लूट लिया। हमीर तो स्वामिभक्त था।

राजा मानसिंह को पिछली सन्धि का अफसोस हुआ और उसने दूसरे युद्ध की योजना बनाई। इसके लिए उसको शाही अनुमति प्राप्त हो गई। बंगाल और बिहार की सेना को इस सेवा के लिए आदेश हुआ। 23 आबान को वह जलमार्ग द्वारा रवाना हुआ परन्तु तोलकखाँ और अन्य अमीर स्थल मार्ग से चले। मधु और लक्खीराय को कश्मीर के सुलतान यूसुफखाँ के नेतृत्व में झारखण्ड के रास्ते से भेजा गया। जब यह सेना बंगाल पहुंची तो उस प्रान्त का शासक सईदखाँ बीमार था। परन्तु काम बड़ा जरूरी था। इसलिए राजा उसके बिना ही आगे बढ़ा। जब सईद स्वस्थ हो गया तो वह भी पीछे से रवाना होकर अनेक सरदारों और 6500 सवारों सहित सेना में जा मिला। प्रदेश के अधिकांश भाग पर कब्जा कर लिया गया। चालाक अफगानों ने सन्धि करानी चाही परन्तु अनुभव से प्रकट हो गया था कि उनकी बातों में कितना सार है। इसलिए उनके प्रस्तावों की ओर कोई कान नहीं दिया गया। परन्तु बगाल के कुछ अमीर उनके साथ समझौता करने के पक्ष में थे। शत्रु ने मिदनापुर के जंगलों में अपनी सेना जमाई। मिदनापुर उड़ीसा के मध्य में है।

शाही सेना की व्यवस्था—31 फरवरदीन को राजा मानसिंह ने आदेश दिया कि आगे बढ़ा जाय। तब शत्रु ने नदी पार करके अपनी सेना व्यवस्थित की। उनका मध्य भाग नसीबखाँ और जमालखाँ के नेतृत्व में था। ये दोनों कतरू के पुत्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

थे। उनकी सेना में तीन हजार सवार और पच्चीस हाथी थे। बाजुओं में दो हजार सवार और पच्चीस हाथी थे और अग्रसेना में बारह सौ सवार और अस्सी हाथी थे। दोनों पक्षों में खूब लड़ाई हुई और कुछ समय तक ऐसी स्थिति रही कि न जाने परिणाम क्या होगा। परन्तु विजय शाही सेना की हुई। अफगानों के तीन सौ आदमी और शाही सेना के चालीस आदमी मारे गए।

जूनागढ़ पर अधिकार

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 651] जब खान-ए-आजम गुजरात में अपनी सत्ता जमा चुका तो उसने अपने राज्य को बढ़ाने का तथा उस प्रदेश के और अधिक भाग को अपने अधीन करने का निश्चय किया। पहले तो उसके काम में उसके अनुचरों की कायरता से रोक लगी परन्तु जब वे विश्राम कर चुके और उनमें पुनः साहस का संचार हुआ तो उसने अपनी योजना पुनः शुरू की। सोमनाथ, कोका, मंगलौर, माहू, पारों और सत्रह अन्य स्थान बिना लड़े ही उसके हाथ में आ गए। तब उसने जूनागढ़ की विजय का निश्चय किया। यह सूरथ के प्रान्त में प्रसिद्ध दुर्ग था और इस समय अमीनखाँ के पौत्रों के हाथ में था। पिछले शासकों का इस पर कोई असर नहीं हुआ था। 23 खुरदाद को उसकी सेना निकट पहुँच गई और उस विशाल दुर्ग के आसपास 17 तोपमंच खड़े कर दिए गए। नूरबेगखाँ और कुछ अन्य लोगों को काठी लोगों को रोकने के लिए भेजा गया क्योंकि ये लोग दुर्ग में सहायता पहुँचाते थे। फिर किले के अन्दर आग लग गई जिससे बड़ा विनाश हुआ और तोपखाने का यूरोपीय अफसर जिसने इस्लाम-धर्म ग्रहण कर लिया था, इस गड़बड़ में खाई में गिरने से मर गया। इससे आक्रमणकारियों का उत्साह बढ़ गया परन्तु दुर्ग-रक्षकों के पास विपुल सामग्री थी और उनको इस स्थान की दृढ़ता पर भरोसा था। उनके पास एक सौ तोपें थीं उनमें से कुछ डेढ़ मन का गोला दिन में कई बार फेंकती थीं। अन्त में खान-ए-आजम ने कुछ तोपें ऐसे स्थान पर जमा दीं जो किले से ऊँचा था और वहाँ से गोले फेंके जाने लगे। इससे दुर्गरक्षकों का विश्वास डगमगा गया और उन्होंने आत्मसमर्पण का प्रस्ताव किया। घेरा तीन महीने से चल रहा था परन्तु अब 7 शहरयूर को चाबियाँ दे दी गईं। सब मिलाकर सत्तावन प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने आत्मसमर्पण किया। इन सबके साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार हुआ और उन्हें खिलत और जागीरें मिलीं।

शासन का अड़तीसवाँ वर्ष

दक्षिण में आक्रमण की तैयारी

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 683] बुरहान-उल-मुल्क को सलाह दी गई और उपालम्भ भी दिया गया, परन्तु इसका उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसलिए बादशाह ने निश्चय किया कि आगरा जाकर दक्षिण के लिए सेना संगठित की जाए। 25 मिहिर को शहजादा दनियाल के नाम आदेश हुआ कि वह उधर की ओर कूच

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करे। खानखाना, रायसिंह और अन्य अनेक अमीरों को आदेश दिया गया कि वे कोष, तोपखाना और हाथियों सहित उसके साथ जावें। शाहरुख मिर्जा, शाहवाजखाँ और मालवे के अन्य अमीरों को भी अपनी सेना के साथ उसका साथ देने के लिए हुक्म दिया गया। राजा मानसिंह को फरमान भेजा गया कि बंगाल से रवाना होने में कोई हानि न हो तो वह वहाँ से कूच करे। शहजादा मुराद को भी आदेश हुआ कि इस युद्ध में सम्मिलित होने की तैयारी करे। शेखपुर के कस्बे पर खानखाना को दरबार में बुलाया गया। तब उसने निवेदन किया कि दक्षिण के आक्रमण के लिए सबसे उपयुक्त समय वर्षा के बाद का है, जब अन्न और घास प्रचुर मात्रा में मिल सकते हैं। इसलिए शहजादा दनियाल को वापस बुला लिया गया और बादशाह ने निश्चय किया कि वर्षा के अन्त में वह स्वयं ही इस लड़ाई का नेतृत्व करेगा। खानखाना को आदेश दिया गया कि आगरा जाकर सेना एकत्र और व्यवस्थित करे और बादशाह ने भी अपने निवास-स्थान की ओर कूच किया।

शासन का चालीसवाँ वर्ष

अहमदनगर और बीजापुर के बीच युद्ध

[मूलपाठ जि० 3 पृ० 713] बादशाह ने दक्षिण में जबसे अपना अनुग्रहपूर्ण ध्यान हटाया तब से उस मुल्क में नई-नई विपत्तियाँ आ चुकी थीं और असन्तोष खूब बढ़ गया था। निजाम-उल-बुरहान की मृत्यु हो चुकी थी और उसके पुत्र इब्राहीम ने जो उसका उत्तराधिकारी बना था कुत्सित मार्ग ग्रहण कर लिया था। उसके विरुद्ध बीजापुर से एक सेना रवाना हुई और 16 अमुरदाद को अहमदनगर से लगभग चालीस मील के अन्तर पर एक लड़ाई हुई जिसमें वह एक तीर से मारा गया। बीजापुर की सेना विजयी होकर वापस लौट गई और निजाम-उल-मुल्क की सेना भंग होकर तितर-बितर हो गई।

दक्खिन पर चढ़ाई

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 741] आदेशानुसार शहजादा मुराद ने अब दक्खिन के आक्रमण के लिए तैयारी की परन्तु खानखाना को कुछ विलम्ब हो गया। उसको अपने आदमियों को एकत्र करने में देर लग गई। उसके शामिल होने से पहले ही इन दोनों में कुछ मतभेद हो गया था। शहजादा चाहता था कि सेना के सब नायक उसके साथ मिलें और फिर गुजरात से दक्खिन को कूच करें। प्रधान सेनापति खानखाना की सम्मति थी कि वह मालवा से रवाना हो। इन दोनों की राय एक नहीं हुई, इसलिए शहजादा ने 20 आबान को अहमदाबाद से कूच करके भड़ौंच में कुछ विश्राम किया। उसे आशा थी कि और अधिक सैनिक आ पहुँचेंगे। 22 खुरदाद को वह भड़ौंच से रवाना हुआ और खानखाना कुछ समय तक भीलसा में ही टिका रहा, जो उसका इकता था। वह वहाँ सेना एकत्र करना चाहता था। 9 अमुरदाद को उसने उज्जैन की ओर प्रस्थान किया। इससे शहजादा बहुत नाराज हुआ और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसके पास एक क्रोधपूर्ण सन्देश भेजा। खानखाना ने उत्तर में लिखा कि खानदेश के शासक ने सेना देने का वायदा किया है। उस सेना के आते ही वह शहजादा के पास पहुँच जाएगा। इस अर्से में शहजादा गुजरात में ठहरे और शिकार करके अपना मनोविनोद करे। इस उत्तर से शहजादा को बड़ा क्रोध आया और उसके चाटुकारों ने उसको और भी उकसाया। उसने अपनी सेना के साथ अहमदनगर की ओर प्रयाण किया।

प्रधान अमीर और राजा अलीखाँ शहजादे की ओर झुके हुए थे। जब खानखाना को इसका पता लगा तो उसने अपनी सेना, तोपखाना और हाथी मिर्जा शाहरुख और अन्य अमीरों के पास छोड़े और वह स्वयं राजा अलीखाँ के साथ शीघ्रता से शहजादा से मिलने के लिए रवाना हुआ। 19 अजुर को यह चाँद के दुर्ग में शहजादे से मिला जो अहमदनगर से तीस मील दूर स्थित है। उनकी भेंट हार्दिक नहीं थी। बहुत कुछ बातचीत के बाद दरबार लगा। जब सेना ने प्रस्थान किया तो सबके विचारों में एकता न थी। खानखाना और उसकी असंख्य सेना नाराज थी। वह व्यवस्था से पृथक रहा। सादिकखाँ ने शाहबाजखाँ के विरुद्ध एक पुरानी शिकायत प्रस्तुत की। वह दरबार में भी कभी-कभी जाता था। 8 दे को सेना ने नगर से आधे कोस की दूरी पर डेरा डाला और उस दिन खानखाना और शाहबाजखाँ दोनों नगर में गए। उनकी उपेक्षा के कारण सेना के सामान पर एक हमला किया गया जिसको कठिनता से धकेला और परस्पर फूट के इन प्रत्यक्ष चिह्नों से नगर के लोगों में भी बड़ा उत्साह बढ़ा। 8 तारीख को दुर्ग घेर लिया गया। बुरहान की बहिन चाँदबीबी ने सामना करने की तैयारी की। वे लोग पुत्र अहमदखाँ[1] को ले गए थे इसलिए इकलासखाँ मोती के साथ अहमदनगर आया और जब हार गया तो पट्टन की ओर भाग गया।

जब शाही सेना निकट आई तो वजीर मंझू अहमद कुछ कोष और कुछ हाथियों को बीजापुर ले गया। परन्तु वह कैद होते-होते बचा। युद्ध-सामग्री की कमी के कारण घेरा बहुत अर्से तक चला। चाँदबीबी को डर था कि कहीं वह कैद न कर ली जाय परन्तु जब उसको हमला करने वालों की स्थिति का पता लगा तो उसको उत्साह हुआ और वह नगर की रक्षा करने लगी। 9 तारीख को शाहअली और अभंगखाँ ने खानखाना के तोपमंच पर सेना के साथ रात्रि में आक्रमण किया परन्तु रक्षक लोग वीरतापूर्वक लड़े और उन्होंने कितने ही आक्रमणकारियों को मारकर वापस धकेल दिया। यदि इसके बाद वे लोग पीछा करते तो भगोड़ों के पीछे-पीछे वे दुर्ग में घुस सकते थे और उसी दिन किले का पतन हो जाता।

---

1 अहमदखाँ शाही वंशज होने का दावा करता था। इसलिए उसको गद्दी पर बिठा दिया गया था। एक बाजारू लड़का जिसका नाम मोती था उसका विरोधी था। जब उसको कैद कर लिया गया तो इकलासखाँ ने एक दूसरा लड़का प्रस्तुत किया। इसका नाम भी मोती था। ब्रिग्ज फरिश्ता जि॰ 2, पृ॰ 270, जि॰ 3, पृ॰ 291-92।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अब घेरा आगे बढ़ रहा था और खाद्य-सामग्री की कमी होती जाती थी जिसका दुर्गरक्षकों पर प्रभाव पड़ रहा था। 13 तारीख को उन्होंने बाहर डेरे पर आक्रमण किया जो विफल हुआ। 16 तारीख को गुजरात से एक कारवाँ आया परन्तु सादतखाँ ने उसे लूट लिया। 19 तारीख को शेर ख्वाजा, शेख दौलत, कामरान बेग और दौलतखाँ को एक सेना के साथ पट्टन की ओर भेजा गया। उन्होंने इकलासखाँ को हराकर बहुत-सा माल लूट लिया। तत्पश्चात् और अधिक लूट करने के लिए उन्होंने पट्टन नगर को लूटा। इस नगर को लिखित आश्वासन दिया गया था कि उसकी रक्षा की जाएगी। 11 स्फन्दाद मुर्ज को नगर प्राचीर का एक हिस्सा तोड़ दिया गया। शहजादे के तोपमंच से एक खाई खोदी गई और प्राचीर के नीचे एक बड़ा सुराख कर दिया गया। इसमें बारूद भरकर आग लगाई गई जिससे लगभग तीस गज दीवार टूट पड़ी। अब सैनिक लोग हमला करने के लिए तैयार थे परन्तु दूसरी खाई, जो शाहबाजखाँ के तोपमंच से दीवार के नीचे तक बनाई गई थी उसका दुर्गरक्षकों को पता लग गया और उन्होंने उसे खाली कर दिया। अब वैसी ही विपत्ति की आशंका होने लगी जैसी चित्तौड़ में हुई थीं। इसलिए आक्रमणकारी पीछे हटे और इतना विलम्ब हो गया कि सारा दिन व्यतीत हो गया और रात्रि के समय दुर्गरक्षकों ने टूटी हुई दीवार की मरम्मत कर ली। परन्तु हमला करने वालों में बड़ी सरगर्मी थी जिससे दुर्गरक्षक हतोत्साह हो गए, और अब उन्होंने समझौते के लिए प्रस्ताव किया। उन्होंने कहा कि बुरहान-उल-मुल्क के पुत्र बहादुर को निजाम-उल-मुल्क की उपाधि देकर तख्त पर बिठाया जाय और वह शाही तख्त का सामन्त बन जाय। अहमदनगर का इलाका उसको दिया जाय और बरार का प्रान्त बादशाह के सुपुर्द कर दिया जाय। जवाहरात, उत्तम हाथी और दूसरी चीजें कर के रूप में बादशाह के पास भेज दी जाएँ। दुर्ग के बचने की कोई आशा नहीं थी और सामग्री का अभाव था। तो भी ये अनुपयुक्त शर्तें स्वीकृत कर दी गईं और 17 स्फन्दार्मुज को एक सन्धि हुई।

शासन का इकतालीसवाँ वर्ष

दुर्भिक्ष

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 744] इस साल वर्षा बहुत कम हुई और चावल का मूल्य बहुत बढ़ गया। आसमान की रंगत भी अशुभ थी और नक्षत्र-विद्या के ज्ञाताओं ने घोषणा कर दी थी कि अनावृष्टि और अभाव होगा। दयालु हृदय बादशाह ने सब दिशाओं में अफसर भेजे कि प्रतिदिन गरीब लोगों को खाना दिया जाय। इसलिए शाही आदेश के अनुसार गरीब लोगों को सन्तोषप्रद सहायता प्राप्त होने लगी और प्रत्येक वर्ग के गरीब लोग उन लोगों के सुपुर्द कर दिए जो उनकी रक्षा कर सकते थे।

दक्खिन के संघ-सदस्यों की पराजय

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 764] अहमदनगर के मामले और दूसरी शोचनीय घटनाएँ दक्खिन की सेनाओं के लिए बड़ी लज्जाजनक बातें थीं। इसलिए

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नायकगण अब स्थिति को सुधारने की इच्छा करने लगे और शाही सेना से लड़ने की तैयारी करने लगे। शाही सेना का अध्यक्ष मुराद था। वह लड़ना चाहता था परन्तु अनुभवी अमीर आपत्ति और विरोध करते थे। फिर मिर्जा शाहरुख को प्रधान सेनापति नियुक्त किया गया और खानखाना तथा प्रसिद्ध अफसर और कामों में लगा दिए गए। सैनिक, कोष, हाथी और तोपखाने की बड़ी ध्यान से निगरानी की जाने लगी और सब बात में उचित व्यवस्था कर दी गई। मिर्जा शाहरुख और खानखाना मध्य भाग का नेतृत्व कर रहे थे। सेना ने शाहपुर से कूच करके पठारी से बारह कोष की दूरी पर अपना जमाव किया।

शत्रु भी लड़ने के लिए तैयार था। निजाम-उल-मुल्क की सेना मध्य में थी। आदिलखानी सेना दाहिनी ओर थी और कुतुब-उल-मुल्क की सेना बाईं ओर थी। 28 बहमान को एक पहर दिन बीतने पर गंग (गोदावरी) नदी पार की गई और शत्रु के दाहिने पार्श्व पर आक्रमण किया गया। इस प्रकार युद्ध शुरू हो गया परन्तु वे लोग बड़ी दृढ़ता से अपने स्थान पर डटे रहे और खूब अग्नि वर्षा करते रहे। दोनों पक्षों ने बड़ी वीरता दिखाई और अर्से तक प्राणपण से युद्ध होता रहा। शत्रु की संख्या बहुत बड़ी थी और उसका तोपखाना भी अधिक अच्छा था। इससे शाही सेना को रोक लगी और वह डगमग होने लगी। जगन्नाथ और कितने ही अन्य राजपूत रुक गये और आगे नहीं बढ़े। परन्तु आदिलखानी सेना ने खानदेश के राजा अलीखाँ पर प्रहार किया। उसने बड़ी दृढ़ता से सामना किया परन्तु अपने पैंतीस प्रसिद्ध अफसरों और पाँच सौ स्वामिभक्त सेवकों के साथ उसने वीरगति प्राप्त की।

मिर्जा शाहरुख और खानखाना युद्ध के अपने-अपने भाग में सफल हुए और इसी प्रकार सैयद कासिम और अन्य नायकों को भी सफलता प्राप्त हुई। शत्रु का यह ख्याल था कि खानदेश का शासक सेना के मध्य भाग में है और मिर्जा शाहरुख और खानखाना उसके साथ पराजित हो गये हैं। रात के अँधेरे में दोनों सेनाएँ एक-दूसरे से अलग रहीं और प्रत्येक सेना यह समझती रही कि उसकी विजय हो गई। रात्रि में बहुत से सैनिक जो इधर-उधर बिखर गये थे अपने-अपने झण्डे के नीचे आ गये। शाही सेना ने यह समझकर कि खानदेश के राजा अलीखाँ शत्रु से जा मिला है उसका सामान लूट लिया। सेनाग्र भाग का नायक द्वारकादास और बाएँ भाग का नायक सईद जलाल पीछे हटकर नीलापी में चले गए। रामचन्द्र बड़ी वीरता से लड़ा। वह राजा अलीखाँ की सेना में था। उसके बीस घाव लगे। वह रात्रि के समय आहत लोगों में पड़ा रहा और थोड़े दिन बाद ही उसकी मृत्यु हो गई।

जब प्रातःकाल हुआ तो सात हजार शाही सैनिकों को पच्चीस हजार शत्रु सेना का सामना करना पड़ा। ये लोग रात भर के प्यासे थे। परन्त अब वे सुगाम नदी पर पहुंच गये। शत्रु में थोड़ा-सा उत्साह था। अब इस प्रदर्शन को देखकर वे भाग गए और सामना नहीं किया। लम्बे संघर्ष से थक जाने के कारण शाही सेना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ने भी उनका पीछा नहीं किया। युद्ध के आरम्भ में शाही सेना पन्द्रह हजार और शत्रु सेना साठ हजार थी तो भी उन्हें यह विजय प्राप्त हो गई और उन्होंने चालीस हाथी और बहुत-सी तोपें छीन लीं।

शासन का तेतालीसवाँ वर्ष

अबुलफजल को दक्षिण भेजा गया

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 802] जब बादशाह पंजाब से वापस लौट आया तो उसने योजना बनाई कि राजधानी गये बिना ही सीधे दक्षिण की ओर कूच किया जाय परन्तु शहजादे अबुलफजल नहीं आए थे, इसलिए उसके चित्त को परेशानी रही। कई प्रकार की कहानियाँ भी उसने सुन रखी थीं। इसलिए उसने सुविवेचित विलम्ब किया और पुनः शहजादों को अपने पास बुलाया। 25 तारीख को इस ग्रन्थ के लेखक को आदेश हुआ कि दक्षिण जाकर शहजादा सुलतान मुराद को दरबार में लाए। यदि दक्षिण के अमीर लोग मुल्क का प्रबन्ध अपने हाथ में लेने को तैयार हों तो उसे उनके सुपुर्द करके लेखक शहजादे के साथ वापस लौट आएँ। यदि ऐसा न हो सके तो शहजादे को दरबार में भेज दिया जाय और लेखक वहीं ठहरकर मिर्जा शाहरुख की सहायता करने के लिए अन्य अफसरों को साथ ले। मिर्जा को नकारा और निशान प्रदान किया गया और मालवा का प्रान्त उसके सुपुर्द कर दिया गया, ताकि वह अपने ही प्रान्त में सेना खड़ी करे और उसको सजाए और जब बुलाया जाय तो दक्षिण को लौट आए।

दौलताबाद

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 803] इसफन्दारमुज के आरम्भ में दक्षिण में दौलताबाद के पास का लोहागढ़ दुर्ग जीत लिया गया। मिर्जा अलीबेग अकबरशाही इसको एक मास तक घेरे रहा और जब दुर्ग में पानी और अन्न का अभाव हो गया तो दुर्गरक्षकों ने आत्म-समर्पण करके चाबियाँ देदीं।

शासन का चौवालीसवाँ वर्ष

खेरला और नासिक

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 805] इसी वर्ष बरार का खेरला दुर्ग 13 आबान को हाथ में आ गया। यह बरार और गोंडवाना के मध्य में स्थित है। दुर्गरक्षकों के पास अन्न कम हो गया था। इसके बाद तुरन्त ही अहमदनगर के निकट नासिक का दुर्ग भी जीत लिया गया।

शहजादा सुलतान मुराद की मृत्यु

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 806] खेद है कि मदिरा पर विनाश मंडराता है और इसका मधुर अमृत घातक विष है। 17 उरदीबिहश्त को दीहबारी के निकट और पूर्ता के तट पर दौलताबाद से बीस कोस दूर शहजादा सुलतान मुराद को चिन्ताजनक मूर्छा आने लगी और 22 तारीख को वह अचेत होकर मर गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शासन का पैंतालीसवाँ वर्ष

आसीर

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 837] 22 इसफन्दारमुज को खान-ए-आजम आसफखाँ, शेख फरीद और इस पुस्तक के लेखक के नाम आदेश हुआ कि असीरगढ़ को घेर लिया जाय और उसके आसपास तोप मंच बनाए जाएँ। परन्तु इस काम के लिए शेख फरीद के नेतृत्व में जो सेना भेजी गई थी वह शत्रु की अपेक्षा बहुत छोटी थी। इसलिए यह उचित समझा गया कि दुर्ग से तीन कोस दूर ठहरा जाय। इस निश्चय के कारण कुछ अनुभव शून्य और दुष्ट लोगों ने बादशाह के क्रोध को उकसाया। परन्तु लेखक ने उसके पास उपस्थित होकर वास्तविक स्थिति समझा दी जिससे उसका क्रोध शान्त हो गया। उसी दिन लेखक को खानदेश का हाकिम नियुक्त किया गया। तब उसने इस प्रान्त में 22 थाने स्थापित किए और प्रत्येक थाने पर एक उत्तरदायी कर्मचारी नियुक्त किया। एक थाने पर उसने अपने भाई शेख अब्दुल बरकत को नियुक्त किया और उसके नीचे कुछ अनुभवी अफसर रखे। दूसरे थाने में उसने अपने पुत्र शेख अब्दुल रहमान को नियुक्त किया और थोड़े ही समय में विद्रोही लोग आज्ञापालन करने लग गए और अन्य बहुत से लोग प्रसन्नतापूर्वक बादशाह की प्रजा बन गये। सैनिक लोगों ने शान्तिपूर्वक अधीनता स्वीकार कर ली और कृषकगण अपने कृषि-कार्य में लग गए।

बंगाल

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 828] अब बंगाल प्रान्त में गड़बड़ होने लगी। इसमें राजा मानसिंह की असावधानी थी। यद्यपि वह अजमेर प्रान्त में थी और बंगाल में नहीं था तो भी उसने बंगाल का शासन अपने हाथ में रखा और सोचा कि सब काम शान्तिपूर्वक उसकी इच्छानुसार होता रहेगा। उसमान, शुजान और अन्य अफसरों ने विद्रोह कर दिया। महासिंह और प्रतापसिंह ने इसे एक तुच्छ घटना समझा और उन पर भदरक में आक्रमण किया। परन्तु वे हार गये। प्रान्त तो हाथ से नहीं गया परन्तु कई स्थानों पर विद्रोहियों ने अधिकार कर लिया।

शहजादा सलीम का आज्ञोल्लंघन

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 831] प्रमुख शहजादा सलीम को राणा (उदयपुर) के विरुद्ध भेजा गया था। वह आराम पसन्द था। उसके साथियों ने उसको इस ओर उत्साहित किया जिससे उसने कुछ समय अजमेर में विलास करते हुए नष्ट कर दिया। कुछ समय बाद वह शीघ्रतापूर्वक उदयपुर गया और उसने बालपुर तथा अन्य स्थानों को लूट लिया। उस समय राणा अपनी सेना को दूसरी दिशा में ले गया था। तब माधोसिंह को उसके विरुद्ध भेजा गया जिसने उसको हरा दिया। परन्तु इस सम्मानित सेवा की पूर्ति से पहले ही शहजादे को उसके दुष्ट सलाहकारों ने समझाया कि पंजाब जाकर आनन्द मनावे। परन्तु इसी समय बंगाल में अफगानों ने विद्रोह कर दिया और राजा मानसिंह की सलाह से उसने उधर की ओर कूच किया। एक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अमुरदाद को आगरे का चार कोस की दूरी पर उसने जमुना पार की। उस समय वह बादशाह की माता मरियम मकानी से मिलने नहीं गया। इसलिए उसे बड़ा दुःख हुआ। वह कृपापूर्वक उससे उसकी उपेक्षा के लिए बुरा-भला कहने के लिए उसके पीछे गई। परन्तु शिकार से वापस लौटने पर जब उसने उसके आगमन की सूचना सुनी तो वह नाव में बैठकर यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र चल दिया और वह आदरणीय महिला दुखित हृदय के साथ वापस लौट गई। शहजादा इलाहाबाद पहुँचा और वहाँ उसने कई जागीरें छीन लीं। उसने बिहार का भूमिकर भी ले लिया जो तीस लाख रुपये का था और उसने शाही उपाधि धारण कर ली। बादशाह ने कृपापूर्वक यह सहन किया, बल्कि इस बात पर विश्वास नहीं किया। उसके बड़े-बड़े अमीर भी उससे सहमत थे। अनर्गल कार्यवाहियों के विषय में शहजादे से पत्र लिखकर पूछा गया। उसने उत्तर दिया कि वह बहुत अच्छी सेवा कर रहा है और उसे किसी बुराई का पता नहीं है।

अहमदनगर

[मूलपाठ जि० 3, पृष्ठ 832] अहमदनगर के विरुद्ध कार्यवाहियाँ बहुत लम्बी हो गईं और शाही सेना में सामग्री के विषय में समस्या उपस्थित हो गई। बदमाश लोग सर्वत्र हलचल करने लगे। इसलिए इस मास की 4 तारीख को मिर्जा रुस्तम को एक लाख मोहरों के साथ शहजादा दनियाल के पास भेजा गया। लगभग इसी समय नासिक शाही अफसरों के हाथ में आ गया।

वर्षा ऋतु के पश्चात् बादशाह ने अहमदनगर को दबाने का निश्चय किया। और आदेश दिया कि इसके लिए सब यत्न किए जाएँ और फिर स्वयं उसने भी बुरहानपुर की ओर प्रयाण किया। चाँदबीबी ने इस पुस्तक के लेखक के साथ सन्धि कर ली थी और वह इसका पालन करना चाहती थी। परन्तु अभंग, जो एक बड़ी एबीसीनियन और दक्षिणी सेना का अध्यक्ष था, चाँदबीबी के विरुद्ध लड़ रहा था। 26 फरवरदीन को शाही सेना आ पहुँची। अब दक्षिणी सेना में सन्देह फैल गया। लोग आपस में कानाफूसी करने लगे कि उनके नेताओं ने शाही सेनाओं से समझौता कर लिया है। इससे अभंग की सेना का साहस जाता रहा और वह सामना किए बिना ही तितर-बितर हो गई। 2 उरदीबिहिश्त को विभिन्न अमीरों के सुपुर्द सेना के विविध स्थान किये गये। चाँदबीबी सन्धि के पालन के पक्ष में थी। तब दुर्ग के अन्दर कई नेताओं ने मामला अपने हाथ में ले लिया और उन्होंने बाहर निकलकर कई आक्रमण किये। परन्तु सब विफल हुए। शहजादे के निर्देश से खाई को भरने के लिए और दुर्ग प्राचीर तक पहुंचने के लिए खाकरेज के निर्माण के लिए बड़े यत्न किये गये। यह तीस से चालीस गज तक चौड़ा था और सात गज गहरा था। दुर्ग प्राचीर नीले पत्थर की बनी हुई थी और 27 गज ऊँची थी। शहजादे और मिर्जा यूसुफखाँ की खाइयों के पास सुरंग बनाये गये परन्तु किले वालों ने उनको तोड़ डाला और भर दिया। फिर उन्होंने किले के अन्दर इसके विरुद्ध एक सुरंग

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वनाई और उसमें आग लगाई परन्तु खाकरेज में कारण वह घुटकर रह गया और उससे कोई क्षति नहीं हुई। इसके धक्के से दुर्ग की एक बुर्ज टूट गई। जब इसका पता लगा तो यत्न करके बुर्ज की दरार को साफ किया गया और फिर उसमें 180 मन बारूद भरा गया। 6 शहरदूर को इसमें आग लगाई गई। तब बुर्ज और तीस गज लम्बी दीवार हवा में उड़ गई। पत्थरों के गिरने से दुर्गरक्षकों की वड़ी क्षति हुई। परन्तु घेरे वालों पर पत्थर का एक भी टुकड़ा नहीं गिरा। दरार में होकर आक्रमणकारी एकदम अन्दर घुस गये और फिर मिर्जा यूसुफखाँ की खाइयों से एक दूसरे दल ने मार्ग बना लिया। पन्द्रह सौ दुर्गरक्षक तलवार से मार डाले गये। शेष उनके मित्रों की प्रार्थना के कारण वच गये। इब्राहीम का पुत्र और बुरहान का पौत्र बहादुर जिसको निजाम-उल-मुल्क बना दिया गया था, कैद कर लिया। लूट में बड़े बहुमूल्य अलंकार, शस्त्र, बहुत अच्छा पुस्तकालय, बारीक रेशम और पच्चीस हाथी मिले। वन्दूकों और बारूद का तो कोई हिसाब ही नहीं था। यह घेरा वर्षाकाल में चला था। परन्तु सौभाग्य से उधर पानी नहीं आया और खाकरेज के निर्माण में कोई रुकावट नहीं हुई। विजय के दूसरे दिन भारी वर्षा हुई। यह घेरा चार मास और चार दिन चला।

सचिव जलाला की मृत्यु

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 835] लोहानियों का एक दल गजनी में किसी काम से आया था। उस पर लोगों ने छिपकर आक्रमण किया। सात दिन तक लड़ने के बाद प्यास के कारण उनको पीछे हटना पड़ा। फिर उन्होंने जलाला से सहायता माँगी। वह उनके साथ व्यापारी का वेष बनाकर गजनी गया। जब उन पर शरीफखाँ के आदमियों ने और रैयत ने हमला किया तो जलाल ने उन्हें वापस अपने घरों पर पहुँचाने का यत्न किया। पुनः हजारा लोग उन पर टूट पड़े और उन्हें तितर-बितर कर दिया। जलाला आहत हो गया और पहाड़ियों में ले जाया गया जहाँ मुरादबेग और अन्य बुद्धिमान आदमियों ने उसको मार डाला।

दक्षिण में गड़बड़ें

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 844] यद्यपि अहमदनगर का शाही सेना के सामने पतन हो गया था परन्तु अन्न के अभाव के कारण इस सेना की शक्ति क्षीण होने लगी। तब विरोधी लोगों ने एकत्र होकर विद्रोह कर दिया। उन्होंने मुर्तजा निजाम-उल-मुल्क के एक चाचा शाहअली के पुत्र अली को अपना मुखिया नियुक्त किया। इस स्थिति में खानखाना को अहमदनगर के पास पड़ी हुई शाही सेना के नेतृत्व में सौंपा गया और इस इतिहास के लेखक को नासिक भेजा गया।

शासन का छियालीसवाँ वर्ष

[मूलपाठ जि० 3, पृ० 849] इस इतिहास का लेखक नासिक न जा सका। उसने शाहअली के पुत्र के विरुद्ध प्रयाण किया क्योंकि यह कार्य अधिक महत्वपूर्ण

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समझा गया था। पिछले वर्ष के इस्फन्दरमुज में वह बारन गाँव के निकट खानखाना के पास चला गया था परन्तु यह खबर आई कि आदिलखाँ बीजापुरी का एक बड़ा सामन्त पाँच हजार सवार और बारह सौ प्यादों के साथ अहमदनगर की ओर आ रहा है। खानखाना ने यह आवश्यक समझा कि उसकी गति को देखते रहना चाहिए। इसलिए वह जालनपुर चला गया और इस लेखक को शाहअली के पुत्र के विरुद्ध कूच करने के लिए छोड़ गया। 27 तारीख को लेखक गंगा (गोदावरी) के तट पर पहुंच गया। 29 तारीख को उसने कालना के दुर्ग पर कब्जा कर लिया जो अहमदनगर का एक मुख्य दुर्ग है। शाही सेना का अध्यक्ष अली मर्दानखाँ तेलिंगाना में हार गया और उसको कैद कर लिया गया।

इसलिए लेखक का सारा प्रयत्न अब इस विद्रोह के दमन की ओर लग गया और उसने अपने पुत्र को बारह सौ सवारों के साथ शत्रु के विरुद्ध भेजा। 6 खुरदाद को उसने उन्हें हरा दिया और उनके चार सौ आदमी मारे गये और बहुत से आहत हो गये।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तकमील-ए-अकबरनामा

लेखक : इनायतउल्ला

यह ग्रन्थ अकबरनामा का पूरक है। इसमें अकबर के राज्य के शेष चार वर्ष का इतिहास है। इसकी रचना शेख इनायतउल्ला ने की थी। यह यदा-कदा अकबरनामे की जिल्द में शामिल मिलता है।

सर एच० एम० इलियट के कागजों में तकमील-ए-अकबरनामा के विषय में इतना ही उल्लेख मिलता है। उसके पुस्तकालय में इस ग्रन्थ की कोई प्रति नहीं है और अनुवाद का एक भी पृष्ठ नहीं है। ऐसा जान पड़ता है कि इस ग्रन्थ को इंगलैंड में कोई नहीं जानता था क्योंकि ब्रिटिश म्यूजियम के ईस्ट इण्डिया आफिस के या रायल ऐसियाटिक सोसायटी के पुस्तकालयों में यह नहीं मिलता है। अकबरनामा के हस्तलिखित अनुवाद के अन्त में इसका पूरा अनुवाद दिया हुआ है और यह अकबरनामा का अनुवाद रायल ऐसियाटिक सोसायटी का है। यह मद्रास की एक सेना के लेफ्टीनेन्ट चामर्स का किया हुआ है और एलफिन्सटन ने इसका उपयोग किया था। निम्नलिखित अवतरण इसी अनुवाद से लिए गये हैं और ये ठीक समझे जा सकते हैं।

अगले पृष्ठों में यह लेखक अपने विषय में कुछ लिखता है। इसके अतिरिक्त हमें उसके विषय में कुछ पता नहीं है। अन्त में, यह अपने आपको इनायतुउल्ला या मुहम्मद सालिह कहता है।

अवतरण

बादशाह ने प्रशंसनीय आदेश दिया कि अभी अकबरनामा समाप्त नहीं है और अबुलफजल इस संसार में नहीं है। वह इसको पूर्ण करने का सुख प्राप्त नहीं कर सका था। इसलिए मैं तुच्छ व्यक्ति इनायतुल्ला उन चार वर्षों का वृतान्त लिखूं जो अभी नहीं लिखा गया है। शेख की दूसरी जिल्द की शैली में सौन्दर्य की कमी थी और इसमें ऐसे विस्मृत शब्दों का उपयोग किया गया था जिनको साधारण लोग नहीं समझ सकते थे। यह बादशाह को पसन्द नहीं था। इसलिए इस (तुच्छ इनायतुल्ला) को यह भी आदेश हुआ कि दूसरी जिल्द की शैली और शब्दों को प्रथम जिल्द के ढंग पर दोहरा दिया जाय। उसका अभिप्राय तो उच्च और आश्चर्यजनक था। इसे साधारण भाषा में व्यक्त किया जाय ताकि उसको छोटे और बड़े सब समझ सकें और उसकी प्रशंसा कर सकें। मुझे आशा है कि इस आज्ञा का पालन करने से मुझे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सफलता का प्रभात दिखाई देगा और मुझे विपुल मात्रा में प्रशंसा और उन्नति प्राप्त होगी।

शासन का सैंतालीसवाँ वर्ष

यह वर्ष वीरवार 27 रमजान को शुरू हुआ। लगभग इसी समय शहजादा दानियाल का पत्र आया जिसमें यह सूचना थी कि मालिक अम्बर ने बिदर में सेना इकट्ठी करके उस दल पर विजय प्राप्त करली है जो मलिक बरीद ने उसका सामना करने के लिए भेजी थी। उससे बलपूर्वक कर लेकर मलिक अम्बर ने पहले तो कुतुब-उल-मुल्क के राज्य पर सफलतापूर्वक आक्रमण किया और फिर तेलिंगाना की ओर आगे जाकर पथरी में मीर मुर्तजा को घेर लिया। शाहअली से अहमदनगर में उसके सम्मेलन को रोकने के लिए शाहजादा ने खानखाना को उसके विरुद्ध रवाना किया है और शेख अबुलफजल को राजू के विरुद्ध जाने का आदेश दिया है।

शहजादा सलीम

पहले ही वर्णन किया जा चुका है कि शहजादा सलीम अजमेर के राजा के विरुद्ध प्रयाण कर चुका था और उसके साथ नक्षत्रों के समान अगणित अनुचर थे। परन्तु अब अकबर ने सुना कि बंगाल में गड़बड़ हो गई है। इसलिए उसने शहजादे को आदेश दिया कि वह अपनी सेना को राजा मानसिंह की सेना से मिलाकर इन पूर्वी विद्रोहियों का दमन करे। परन्तु शहजादा रवाना नहीं हुआ और इलाहाबाद की ओर शिकार करता रहा।

जब बादशाह अकबराबाद (आगरा) में था तो शहजादे ने लिखा कि उसकी सेवा में उपस्थित होने का सम्मान प्राप्त करना चाहता है और इस हेतु वह इटावे तक आ गया। परन्तु यहाँ पहुँचने पर कुछ दुष्ट लोगों ने उसके मन में सन्देह उत्पन्न कर दिया और इसलिए वह आगे बढ़ने से डर गया। ज्योंही इस स्थिति से बादशाह को अवगत किया तो उसने लिखा, 'यदि शहजादा मिलने के लिए आ रहा है तो वह अकेला आवे और अपने साथियों को अपनी-अपनी जागीरों पर भेज दे। इस प्रकार वह विश्वास उत्पन्न करे। परन्तु यदि वह सन्देह के कारण रुकना चाहता है तो अच्छा यह होगा कि वह वापस इलाहाबाद लौट जाय और इस प्रकार अपने दिल को तसल्ली दे और जब उसको पूरा विश्वास हो जाय तब वह आवे।" यह कृपा-पूर्ण किन्तु घृणायुक्त पत्र था। इसकी प्राप्ति से शहजादा भयभीत हो गया और तुरन्त ही साम्राज्य के प्रधान न्यायाधीश मीर सदर-ए-जहाँ को, जो उस समय उसके पिता की ओर से शहजादे के पास रहता था, अपने पिता के पास भेजा और उसके द्वारा अत्यन्त विनीत भाव से क्षमा माँगी और कहलाया कि मीर स्वयं उसकी भक्ति और कर्तव्य के विषय में निवेदन करेगा। तब वह इलाहाबाद की ओर रवाना हुआ। इसी बीच में एक शाही फरमान जारी हुआ जिसके द्वारा बंगाल और उड़ीसा का शासन उसके सुपुर्द कर दिया और शाहजादे को आदेश दिया कि इन प्रान्तों का अधिकार

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लेने के लिए वह अपने अफसरों को भेज दे साथ ही राजा मानसिंह को आदेश हुआ कि इन प्रान्तों को उसे देकर वह दरबार में लौट आवे।

मलिक अम्बर की पराजय

खानखाना ने मलिक अम्वर पर शानदार विजय प्राप्त की। मीर मुर्तजा और शेरख्वाजा ने यह सूचना भेजी थी कि दो हजार सवारों के सहित फरहाद अम्वर से आ मिला है जिससे नन्देर में अम्बर की शक्ति वहुत बढ़ गई है। तब खान ने कुछ वीर सैनिकों के दल सहित अपने पुत्र मिर्जा ईरिच को उसके विरुद्ध भेजने का निश्चय किया। भाग्य का विधान था कि अम्वर को दण्ड मिले। इसलिए उसने साहस करके अपनी सेना निकाली और नन्देर के निकट लड़ाई करने के लिए वह तैयार हो गया। उसकी दुष्टता से मिर्जा ईरिच चिढ़ गया और अपनी वीर सेना को व्यवस्थित करके उसने उस पर आक्रमण किया। मध्य और बाईं सेना ने तुरन्त ही विरोधियों को दबा दिया। यदि दाईं ओर की सेना भी इसी प्रकार साहस दिखाती तो उसकी भी इसी प्रकार कीर्ति होती और यह विल्कुल सम्भव था कि शत्रु की समस्त सेना घिर जाती और विद्रोह दब जाता तो भी शत्रु के वीस हाथी और सामान छीन लिया गया।

बंगाल में अफगान

उस्मान अफगान ने विद्रोह का मार्ग ग्रहण किया और ब्रह्मपुत्र नदी को पार किया। शाही थानेदार वाजवहादुर ने उसका सामना किया परन्तु उसे भोवाल की ओर पीछे हटना पड़ा। जब राजा मानसिंह ने सुना कि वाजवहादुर पीछे हट गया है तो रात भर कूच करके दूसरे दिन प्रातःकाल उससे जा मिला और शत्रु पर आक्रमण करके उसे भगा दिया और उसकी तोपें और सामान छीन लिया। उस प्रान्त को बाजबहादुर के सुपुर्द करके राजा वापस ढाका लौट गया। परन्तु इस जिले के हाकिम ने नदी को पार करके ईसा के इलाके को और शरीपुर और वकरमपुर को छीनने का विचार कर लिया था। इसलिए अफगानों ने पुनः सामना करने की तैयारी की और रास्तों को तोपों से और नावों से रोक दिया। यह लड़ाई कुछ समय तक चली। इसलिए राजा ने अपनी चुनी हुई सेना आगे भेज दी और आदेश दिया कि अवसर मिलते ही नदी को पार किया जाय। परन्तु अफगानों ने अपनी नावों से उन पर गोलियाँ चलाईं और बहुत से वीर मारे गये। अब राजा स्वयं आ पहुँचा और अपने आदमियों के साथ उसने हाथियों के द्वारा नदी पार की। उनके साहस से अचम्भित होकर शत्रु भाग गया और राजा ने भी घोड़े की लगाम खींची। वह पीछा करता हुआ तीरा और महवाडी तक पहुँच गया। तब महवाडी के सरदार गजनी से अधीनता स्वीकार की और आगे बढ़ा। उसने वकरमपुर और सारीपुर छीन लिये तथा सारे इलाके में अपने विश्वस्त सैनिक नियुक्त कर दिए। तब अफगान लोग सुनार गाँव की ओर पीछे हटे और राजा विजयी होकर ढाका लौट आया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शेख अबुलफजल की मृत्यु

शेख अबुलफजल पर बादशाह की बड़ी कृपा थी इसलिए वह बड़ा स्वामिभक्त था। उसने बादशाह को सूचना दी कि युवराज शहजादा सलीम मिर्जा कुछ जवानी की बेसमझियां कर रहा है। वह इस बात को भूल गया है कि सम्मान और प्रतिष्ठा का रास्ता खतरे से भरा हुआ है और जो शाखा टेढ़ी-मेढ़ी चलती है और कड़वे फल लगते हैं।

बादशाह का स्वभाव स्नेहमय था। उसको यह सूचना अच्छी नहीं लगी और सब लोगों में यह बात बहुत शीघ्र फैल गई। तब अकबर ने शेख को दरबार में बुलाया और उसे आदेश दिया कि वह अपनी सेना अपने पुत्र अब्दुलरहमान के नेतृत्व में छोड़ आवे। 1 शहरयूर को अबुलफजल ग्वालियर से दो मंजिल दूर सराय बंगा पहुंच गया। वहाँ शहजादा सलीम का कृपापात्र बनने के लिए बरसिंह देव बुन्देले ने मार्ग में घात जमा रखी थी। अबुलफजल के आदमियों ने उसे इस खतरे से अवगत किया और सलाह दी कि अपनी रक्षा के लिए वह राय रायान और राजा रायसिंह के पास चला जाय। ये दोनों दो हजार सवारों के साथ उस समय ओतारी में थे जो दो कोस दूर थी परन्तु शेख की मृत्यु सन्निकट थी। उसका विवेक-रत्न फीका पड़ गया था इसलिए उसने उत्तर दिया : "मृत्यु का भय निष्फल है क्योंकि यह टाली नहीं जा सकती। मैं वीरता के कारण ही ऊँचा हुआ हूं और अमीर के पद पर पहुंचा हूँ अन्यथा मैं एक दरवेश का पुत्र था। तो मैं दूसरे की रक्षा में जाकर अपने आपको छोटा क्यों बनाऊँ।" इसके बाद शीघ्र ही राजपूतों ने अपने कर्कश हाथों से उसके कंठ को दबा दिया और उसके साथियों को और उसे मार डाला। बरसिंहदेव ने उसका कटा हुआ सिर युवक शहजादे के पास भेजा। उसकी मृत्यु का समाचार सुनकर बादशाह को बड़ा दुःख हुआ और उसने ईश्वर से अपने पापों की क्षमा मांगी। फिर आदेश दिया गया कि बरसिंहदेव को दण्ड दिया जावे।

शहजादा दानियाल

यौवन की तरंग में शहजादा दानियाल ने अपना वायदा भुला दिया जो उसने अपने पिता के सिर की कसम खाकर किया था कि वह मद्य-व्यसन छोड़ देगा। वह पुनः मद्यपान करने लगा। अकबर ने उसे पत्र लिखा और बड़ा आग्रह किया कि वह शहजादा सुलतान मुराद के उदाहरण से चेतावनी ले और अपने सांसारिक पिता की खातिर इस विष की अपवित्रता से अपना हाथ खींच ले।

शहजादा सलीम

सुलताना सलीमा बेगम इलाहाबाद के लिए रवाना हुई। वह चाहती थी कि वह अपने प्रभाव से शहजादा सुलतान सलीम को दरबार में लाए। वह अपने अपराधों पर किए हुए पश्चात्ताप को बार-बार भूल जाता था। इसलिए उसको आग्रहपूर्वक और कृपापूर्वक बादशाह के सामने बुलाया गया था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बरसिंह देव

अबुलफजल के हत्यारे बरसिंह देव का पहले तो भांडर तक राय रायाण ने पीछा किया और फिर वहाँ से ईरिच तक पहुंचा जो उस नदी पर एक दृढ़ दुर्ग है। जब शाही सेना के अग्रभाग ने इस स्थान की ओर चढ़ाई की तो वह बाहर निकला और उस नदी (बेतवा) के किनारे पर शाही सेना को रोकने के लिए तैयार हुआ। राय रायाण ने नदी पार करके उस पर आक्रमण किया तथा उसे वापस दुर्ग में धकेल दिया। तब शाही सेना ने उस किले को घेर लिया। शत्रु की विपत्ति बढ़ती गई। तब रात हो गई और वह अपराधी रात में ही जंगल में भाग गया। उसका हाथी वहीं मारा गया परन्तु रात के अँधेरे में वह युक्ति करके भाग गया।

शासन का अड़तालीसवाँ वर्ष

शहजादा सलीम से मेल-मिलाप

सुलताना सलीमा बेगम ने बादशाह और युवक शहजादा सलीम में बीच-बचाव किया तथा बादशाह को समझाया कि वह पुनः पुत्र से स्नेह करे। साथ ही अकबर की माता से भी उसने सलीम को क्षमा दिला दी। जब शहजादा राजधानी के निकट पहुँचा तो पूज्य माता ने उससे मिलने के लिए कुछ दिन की यात्रा की तथा अपने महल में ले आईं। अपने पुत्र को समझाने के लिए बादशाह भी उसके स्वागतार्थ कुछ कदम आगे चला। कुछ देर बाद बादशाह ने उसको एक शाही रत्न प्रदान किया। यह दरबार और राजसत्ता का मुख्य अलंकार था और शाही शान का मुख्य प्रकाश था।

मघ राजा की पराजय

इस राजा ने अभी हाल बंगू का इलाका जीत लिया था और कितने ही वर्षों से एकत्रित किए हुए सोने पर अपना अधिकार कर लिया था। यह अदूरदर्शी था इसलिए अपने कोष के परिमाण से और हाथियों की संख्या से फूल गया। उसने अपनी युक्तियों से किरमपुर के जमींदार कँदराय को, जिसको मानसिंह ने बलपूर्वक दबा लिया था, अपनी ओर मिला लिया। फिर उसने खुले तौर से विद्रोह कर दिया और सुनार गाँव में सेना इकट्ठी करके पास ही के एक दुर्ग को घेर लिया। दुर्गरक्षक सुलतान कुलीखाँ ने वीरतापूर्वक अपनी रक्षा की और अन्त में बाहर निकलकर घेरे वालों को भगा दिया। तब एक दूसरा विद्रोही अहमद अपनी सेना के साथ राजा से आ मिला तथा उसने दूसरी बार सुलतान कुली को ललकारा। शत्रु की संख्या बढ़ती हुई देखकर राजा मानसिंह ने इब्राहीम अतका, रघुदास और दलपतराय के नेतृत्व में उसकी सहायता के लिए एक सेना भेजी। इन्होंने शीघ्र मघ राजा और उसकी सेना को लड़ने के लिए बाध्य किया। शाही ध्वज सदा ही विजय प्राप्त करता आया है। उन्होंने राजा की नाव-सेना और तोपखाने की शक्ति की परवाह न करके उस पर आक्रमण किया और पूर्ण विजय प्राप्त की। विभिन्न प्रकार की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एक सौ नावें छीन ली गईं। शाही सेना के आक्रमणों से बचने के लिए राजा ने उनके सामने एक दीवार बनाई और उसके पीछे जम गया।

बाँसवाड़ा का राजा

इसी समय बाँसवाड़ा के राजा ने विद्रोह किया तो मिर्जा शाहरुख ने उसको हरा दिया। मिर्जा में प्रशंसनीय आवेश था। यद्यपि उसका स्वास्थ्य निर्बल था तो भी वह रणभूमि में आ खड़ा हुआ। कुछ लड़ाई के बाद ही राजा हार गया। उसका दुर्ग छीन लिया गया और उसको पहाड़ियों में धकेल दिया गया। फिर उसने मालवे में एक दल खड़ा किया। तब मिर्जा ने समझा कि उसके राज्य को छीनने की अपेक्षा उसका दमन करना महत्वपूर्ण है। इसलिए उसने वहाँ भी पीछा किया। तब विद्रोही तत्काल ही वापस लौट आया और पुनः अपने राज्य पर अधिकार करके और भी अधिक धृष्टता करने लगा। वर्षा के कारण मार्ग दुर्गम हो गये थे। मिर्जा अपनी सेना को उधर नहीं ले जा सकता था। इसलिए उसने बाध्य होकर उस समय उसका पीछा करना छोड़ दिया।

शहजादा सलीम

बादशाह ने एक बार पहले शहजादा सलीम को विद्रोही राणा का दमन करने के लिए नियुक्त किया था और विजयी ध्वजों की छाया से उदयपुर दब गया था। उस पहाड़ी प्रदेश को जीतने के लिए एक और दूसरी सेना भेज दी गई थी। परन्तु राणा बचकर पर्वतों में चला गया। इसलिए इस महत्वपूर्ण काम की पूर्ति में विलम्ब हुआ। अब पुनः शहजादे के नाम आदेश हुआ कि वह इस काफिर का विनाश करने के लिए पुनः साहस करे। परन्तु शहजादे युवक की इस काम की ओर हार्दिक अभिरुचि नहीं थी। उसने सूचित किया कि उसकी सेना तैयार नहीं है। उसने सेना और कोष की वृद्धि के लिए अत्यधिक माँग प्रस्तुत की। इसके अतिरिक्त उसने यह भी इच्छा प्रकट की कि यदि उसकी ये माँगें पूरी नहीं की जा सकें तो उसको अपनी ही जागीर को लौट जाने की अनुमति देदी जाय। बादशाह ने अनुमान लगा लिया कि उसके इस व्यवहार का क्या उद्देश्य है और आदेश दिया कि वह इलाहाबाद को वापस लौट सकता है तथा जब उसकी इच्छा हो दरबार में उपस्थित हो सकता है। शहजादे ने यह अनुमति स्वीकार कर ली और 6 अजूर को कूच करके मथुरा के पास जमुना पार की तथा इलाहाबाद की ओर मुड़ गया।

बीजापुर

इसके थोड़े दिन बाद शहजादा सुलतान दानियाल और खानखाना के नाम आवश्यक आदेश हुआ कि बीजापुर के आदिलखाँ के विरुद्ध कूच करे क्योंकि उसने कर भेजने में बड़ी देरी की है और विद्रोह प्रकट किया है। युवक शहजादा बीमार था और स्वयं कूच नहीं कर सकता था परन्तु अपने सलाहकारों की सलाह से उसके इनायतुल्ला को बीजापुर के लिए नियुक्त किया तथा उसके पास ऐसा पत्र भेजा जिससे आदिलखाँ के हृदय में आशाएँ और भय दोनों जागृत हो सकें।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बंगाल का कैंदराय

मघराजा को हराने के बाद राजा मार्नासह ने बंगाल के कैंदराय की ओर ध्यान दिया जिसने लगभग पाँच सौ नावें एकत्र करके श्रीनगर में शाही नायक किलमक को घेर लिया। राजा ने उसकी रक्षा के लिए सेना भेजी। तब तक वह डटा रहा। अन्त में सेना ने शत्रु को दबा लिया और भयङ्कर गोलाबारी के बाद कैंदराय को बन्दी बना लिया तथा राजा के सामने उपस्थित किया। वह थोड़ी देर बाद ही अपने घावों के कारण मर गया।

भिक्षु-गृह और सरायें

इस समय आदेश दिया गया कि समस्त साम्राज्य में भिक्षु-गृह स्थापित किए जावें और हर एक मंजिल पर यात्रियों के लिए कारवाँ सराएँ बनाई जाएँ तथा यहाँ थके हुए मुसाफिरों के लिए सदा खाना तैयार रखा जाय क्योंकि प्रायः मुसाफिर लोग थक जाने के कारण अपने लिए भोजन नहीं बना सकते।

बादशाह के भतीजे को कैद

मिर्जा हकीम के पुत्र शहजादा केकूबाद को मद्यव्यसन हो गया था। इसलिए उसको राजा जगन्नाथ की निगरानी में रणथन्भौर के दुर्ग में भेज दिया गया और आदेश दिया कि जब तक दण्ड और कुसंगति से पृथक रहने के कारण उसका सुधार न हो जाय तब तक उसे वहीं रखा जाय।

शासन का उन्चासवाँ वर्ष

बीजापुर

शाही राजपूत मिर्जा शरफुद्दीन बीजापुर के आदिलखाँ से साम्राज्य के प्रति वफादारी नहीं करा सका। यह सम्मान मिर्जा ईरिच को प्राप्त हुआ। इसको आदेश हुआ कि वह कर वसूल करे और उसकी पुत्री का शहजादा सुलतान दानियाल से विवाह करे। वह खिराज देने पर सहमत हो गया और युवक शहजादे को प्रेरित किया कि पाँच हजार सवारों के साथ विवाह के लिए अहमदनगर जाए।

राजा मार्नासह की बहिन

इसी समय राजा मार्नासह की बहिन की मृत्यु हुई। वह शहजादा सुलतान सलीम के अन्तःपुर में प्रधान महिला थी। यह अन्तःपुर की अन्य स्त्रियों के ऊपर रहना चाहती थी और जब इसकी इच्छा का कुछ भी विरोध होता था तो क्रोध के आवेश में आ जाती थी। एक दिन वह अन्तःपुर में किसी प्रतिद्वन्द्वी स्त्री से लड़ पड़ी। उस समय शहजादा शिकार पर गया हुआ था। इस अवसर का लाभ उठाकर वह बहुत अधिक अफीम निगल गई। उसके जीवन के मधुरजल की अपेक्षा घातक विष का घूंट अच्छा समझा। शहजादा उसकी बीमारी का समाचार सुनकर वापस लौट आया परन्तु उसके पहुंचने से पहिले ही उसकी मृत्यु हो गई, जिसके कारण शहजादे को कुछ दिन बहुत दुख रहा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शहजादा दानियाल

अब यह आवश्यक हो गया था कि सुलतान दानियाल के दरबार में अबुल फजल के भाई शेख अबुल खैर को भेजा जाय। इसमें अपने भाई के समान बादशाह की सेवा के लिए लगन थी। इसको इसलिए भेजा जा रहा था कि वह किसी न किसी प्रकार शहजादे को दरबार में लाए ताकि उसका मद्यपान व्यसन जिसके कारण उसका स्वास्थ्य अत्यन्त बिगड़ चुका था, छुड़ाया जाय।

शहजादा सलीम

अब समाचार मिला कि शहजादा सुलतान सलीम बहुत मद्यपान करने लग गया है और अफीम भी बहुत खाता है। इससे उसका स्वास्थ्य बिगड़ गया है और स्वभाव में ऐसा चिड़चिड़ापन तथा क्रूरता आ गई है कि तुच्छ से तुच्छ अपराध के लिए वह कठोर दण्ड देता है। क्षमा का कभी विचार नहीं किया जाता जिससे उसके अनुचर अवाक् और भयभीत हैं। बादशाह ने सोचा कि यथासमय उपदेश देना अधिक लाभदायक होगा। दूर से यह काम नहीं चलेगा। इसलिए उसने शहजादे के सुधार के लिए इलाहाबाद की ओर कूच करने का निश्चय किया।

बादशाह की माता की मृत्यु

जब बादशाह इलाहाबाद जा रहा था तो उसे अपनी माता की चिन्ताजनक बीमारी की खबर मिली और उसकी दुःखदस्थिति से उसका प्रेमपूर्ण हृदय शोक से दब गया। 20 शहरयूर को वह इस लोक से चल बसी जिससे भारत संतप्त हो गया। अकबर ने गहन शोक-सूचक पोशाक पहनी। अपना सिर और दाढ़ी मुड़ाई और कोई जेवर नहीं पहना। उसकी लाश देहली भेजी गई और बादशाह ने स्वयं जनाजे से कन्धा लगाया और कई कदम तक चला। साम्राज्य के अमीरों ने भी ऐसा ही किया। उसको अपने यशस्वी पति के निकट ही दफनाया गया।

अबुलफजल की हत्या

अबुलफजल के हत्यारे वरसिंह देव के निवास को हमला करके कई बार लूटा जा चुका था और शेख अब्दुर्रहमान उससे बदला लेने के लिए उसका पीछा करता था परन्तु वह हमेशा बचकर भाग जाता था। अब आदेश हुआ कि यह अफसर जितनी शाही सेना चाहे अपने साथ ले ले और जिन्हें वे वीरता और व्यवहार में योग्य समझता हो उनको इस बदले के काम में अपना साथी बना ले। राजा विक्रमाजीत को भी उसके साथ कर दिया गया।

शासन का पचासवाँ वर्ष

ओरछा-विजय

शेख अब्दुर्रहमान और ख्वाजा अब्दुल्ला ने सूचना दी कि उन्होंने ओरछा दुर्ग[1] को, जो हिन्दुस्तान का एक अत्यन्त दृढ़ दुर्ग है, छीन लिया है और विद्रोही

---

1 झांसी से आठ मील दूर।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बरसिंहदेव शाही सैनिकों से बचने के लिए साँप की भाँति जंगलों में छिप गया है। कुछ समय बाद इन्हीं अधिकारियों से सूचना मिली कि शत्रु ने सब कुंओं में विष डाल दिया है और एक हजार आदमी ज्वर-ग्रस्त होकर मर गये हैं। इसलिए उन्हें ओरछा छोड़ना पड़ा है।

शहज़ादा दानियाल की मृत्यु

क्या मैं इस संसार की परिवर्तनशीलता का वर्णन करूँ। इस नवयुवक की करुण कहानी कहूँ या मैं अपनी कलम से उस व्यसन का वृत्तान्त लिखूँ जो उसने अपनी मूर्खता और हठ के वश अपने ऊपर लाद लिया था। उसकी प्राकृतिक योग्यता का प्रकाश मद्यपात्र से बुझ गया था और उसका बुद्धि दीपक इस पेय के बाहुल्य में नहीं चमक सकता था। बादशाह ने प्रेमपूर्वक दलीलें दीं परन्तु शहजादे ने उपेक्षा की और शनैः-शनैः मद्य की भाप से उसके शरीर की शक्ति क्षीण हो गई। उसके शरीर के अवयव काँपने लगे और फिर उनका काम बन्द हो गया। खानखाना और ख्वाजा अब्दुल हसन ने शाही आज्ञा का पालन करने के लिए शहजादे के प्रति स्नेहवश भरसक प्रयत्न किया कि यह मादक माद्य उसके पास न पहुंचे। इसके प्रवेश को रोकने के लिए उन्होंने पहरेदार बिठा दिये परन्तु शहजादे के पास कुछ ऐसे मुफ्तखोरे थे जिन्होंने चुपके-चुपके उसके पास यह विष पहुंचा दिया। कभी-कभी तो बन्दूकों की नालों में भरकर और कभी अपनी पगड़ियों में छिपा कर शराब पहुंचाया करते थे। चालीस दिन की बीमारी के बाद तैंतीस वर्ष की अवस्था में यह शहजादा संसार से चल बसा। इससे मित्र और अपरिचित लोगों को बड़ा दुःख और शोक हुआ।

बरसिंह देव

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि बरसिंह देव ने जंगलों में शरण ली थी तो राजा जयसिंह ने उसका पीछा किया और उसके कितने ही आदमियों को गोलियों से मार डाला। अन्त में यह हत्यारा आहत हो गया और उसके पैर छालों से भर गये, तो भी वह युक्ति करके बचकर भाग गया।

बादशाह की मृत्यु

सोमवार 12 आबान को जो 20 जमादल अव्वल 1014 हिजरी (सितम्बर 1605) को पड़ा, बादशाह के शरीर में एक बीमारी ने प्रवेश किया और वह रुग्ण हो गया। उस समय हकीम अली सबसे अधिक योग्य हकीम था। उसको चिकित्सा के लिए बुलाया गया। रोग के चिन्हों पर विचार करने के पश्चात् उसने आठ दिन तक कोई औषधि नहीं दी। उसको यह आशा थी कि बादशाह में इतनी शक्ति है और उसका शरीर ऐसा है कि वह रोग को दबा देगा। परन्तु नवें दिन उसकी निर्बलता बढ़ गई और रोग के चिह्न अधिक उग्र हो गये। इसलिए हकीम को औषधि देनी पड़ी। परन्तु दस दिन तक उससे कोई लाभ न हुआ। उसके पेट की शिकायत बढ़ती गई और शरीर के अवयव अशक्त हो गये। अब यह प्रकट हो गया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कि स्वास्थ्य प्राप्ति की आशा नहीं है और संसार के कंठ को भाग्य ने अपने चंगुल में दबा लिया है।

9 आज़ूर को जो बुधवार 12 जुमादिल आखिर (13 अक्टूबर 1605) को वड़ा था और जब बादशाह की आयु पैंसठ वर्ष की थी, तो उसने आगरे की राजधानी में अपने जीवन से विदा होकर स्नेह के स्वर्ग की ओर प्रस्थान किया। अगले दिन सब वर्ग के लोग उसके शव को राजकीय सम्मान और उपयुक्त शान के साथ कब्र पर ले गये और उसको विहिश्ताबाद के बाग में दफना दिया गया।

समाप्ति

ईश्वर की प्रशंसा की जाय कि यह उत्तम ग्रन्थ 'अकबरनामा' प्रशंसनीय और अनुमत समाप्ति पर पहुंच गया है। दूसरी जिल्द जिसमें शासन के सैंतालीसवें वर्ष तक का वृत्तान्त है, वह शेख मुबारक के सर्वाधिक विद्वान और बुद्धिमान पुत्र अबुल फजल की कृति है। इस प्रसिद्ध शेख की मृत्यु के बाद सैंतालीसवें वर्ष के पश्चात् अन्त तक इनायतुल्ला या मोहम्मद सालीह ने इतिहास की तैयारी करके यह पूरा किया है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अकबरनामा

लेखक : शेख इल्लाहदाद फैजी सरहिन्दी

इस लेखक के विषय में हमें केवल उतना ही पता है जो प्रस्तुत ग्रन्थ से मालूम होता है। उसका पिता मुल्ला अली शेर एक विद्वान व्यक्ति था और तबकात-ए-अकबरी का लेखक निजामुद्दीन अहमद उसके शिष्यों में था। शेख इल्लाहदाद सरहिन्द का निवासी था और उस जिले में एक गाँव उसको मदद-ए-माश के तौर पर मिला हुआ था। वह शेख फरीद बुखारी की सेवा करता था जो बख्शी-उल-मुल्क के पद पर नियुक्त था। इल्लाहदाद इस सरदार के साथ कई कामों पर गया था। वह लिखता है कि यह इतिहास शेख फरीद के आदेश से लिखा गया था। उसने इसका आरम्भ छत्तीस वर्ष की आयु में किया था। उस समय तक वह सामाजिक आमोद-प्रमोद में लगा रहता था। यह शेख फरीद एक-दूसरे इतिहासकार शेख नुरुल हक का भी समर्थक था। हक की कृति जवदत-उ-तवारीख का उल्लेख इसके पश्चात् किया जावेगा।

शेख इल्लाहदाद का अकबरनामा सीधा-सादा ग्रन्थ है। उसने कोई डींग नहीं मारी है और न मौलिकता का दावा किया है। यह तबकात-ए-अकबरी पर आश्रित है परन्तु कभी-कभी लेखक ने अबुलफजल के ग्रन्थ का अनुकरण किया है और उसकी उड़ान और शब्दाडम्बर को ग्रहण करके अपनी गम्भीर और सरल शैली को छोड़ दिया है, एवं अतकाखाँ की हत्या और गढ़कटंक की विजय का वृत्तान्त अबुलफजल से लिया हुआ है। इस विषय का उसने विशेष वर्णन दिया है, अर्थात् अपने समर्थक शेख फरीद बुखारी की सेवाओं का। इसके अतिरिक्त कुछ कविताएँ और कहानियाँ जोड़ दी गई हैं, अन्यथा यह कृति तबकात-ए-अकबरी और अबुल फजल के अकबरनामे से संकलित की गई है। यह अकबरनामे के साथ-साथ 1010 हिजरी (1602 ई०) में समाप्त होती है। लेखक यह भी दावा करता है कि उसने हुमायूँ शाही[1] के संकलन में मिहितर जौहर का हाथ बटाया है और जब इस बात की सूचना बादशाह अकबर को मिली तो उसने इसको पसन्द किया था और उसको हिन्दी से फारसी में अनुवाद करने के लिए नियुक्त करने के लिए विचार प्रकट किया था। कुछ अवतरणों का अनुवाद किया गया है। पहले का अनुवाद एफ० मेकेन्जी और सम्पादक ने किया है। सर एच० इलियट की अकबरनामा की प्रति में 453 पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठ पर पन्द्रह पंक्तियाँ हैं।

1 इसका नाम तजकिरात-उल-वाकियात भी है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ख्वाजा अब्दुल मजीद आसफखाँ ने पन्ना और गढ़कटंका के देश को बादशाह के अनन्त सौभाग्य से किस प्रकार जीता

इस समय की घटनाओं से जो लोग परिचित हैं वे जानते हैं कि ख्वाजा अब्दुल मजीद हरवी आरम्भ में एक साधारण मुन्शी था जो स्वर्गीय बादशाह के राज्य में घरेलू मामलों की व्यवस्था के लिए नियुक्त था। बादशाह के सौभाग्यशाली शासन में उसके हाथ में इसी प्रकार का बड़ा पद था। धीरे-धीरे उसकी पदोन्नति हुई और उसे आसफखाँ की उपाधि प्राप्त हो गई। उसको गढ़कटंका में एक जागीर प्रदान की गई। यह एक विस्तृत देश है। कटंका गढ़ा के पास एक पृथक गाँव है। 970 हिजरी में, जो शासन का आठवाँ वर्ष था, वह अपने अनुभव से पन्ना के देश पर अधिकार करने के लिए प्रेरित हुआ। यह देश उसके इलाकों से लगा हुआ था। उसने राजा रामचन्द को एक सन्देश भेजा। इस राजा के पूर्वज इस देश पर राज्य करते आए थे और इसी के पास गाजीखाँ तातार ने विश्व शरण (बादशाह) के दरबार से भागकर शरण ली थी। आसफखाँ ने उसे अपनी भलाई के लिए सलाह दी कि वह बादशाह के अधीन हो जाय और उसे कर भेंट करे। उसने यह भी सुझाया कि गाजीखाँ को, जो विद्रोही है और जिसने उसके पास शरण ली है, बादशाह के पास भेज दिया जाय।

रामचन्द ने अपने दुर्भाग्य और अभिमान के कारण इन सुझावों पर ध्यान नहीं दिया और उसने युद्ध की तैयारी कर ली। आसफखाँ को कोई भय नहीं था और बादशाह की सेना की अमर विजय पर उसे विश्वास था। इसलिए वह उसके विरुद्ध सेना ले आया। राजा रामचन्द की गाजीखाँ तातार ने सहायता की। उसके पास टिड्डियों और चींटियों के समान असंख्य सेना थी। उसने लड़ने के लिए सेना व्यवस्थित की। दोनों दलों ने खूब जोर लगाया और वीरतापूर्वक लड़े। अन्त में रामचन्द भाग गया और गाजीखाँ तथा अनेक अन्य लोग तलवार के घाट उतार दिए गए। राजा रामचन्द वहाँ से भाग कर मानधूंन के दुर्ग में चला गया जो हिन्दुस्तान के बड़े दुर्गम दुर्गों में माना जाता है। विजयी सेना के हाथ में बड़ी लूट आई। कुछ समय पश्चात् राजा रामचन्द ने अपने किए पर पश्चाताप करके और कई मुख्य राजाओं की सहायता से जो बादशाह के बफादार थे, बादशाह की अधीनता और आज्ञा-पालन स्वीकार कर लिया। तब शाही फरमान जारी किया कि रामचन्द ने अपने हित का मार्ग ग्रहण कर लिया है और अधीनता स्वीकार कर ली है। इसलिए उसके राज्य पर आक्रमण नहीं किया जाय। इस आदेश की प्राप्ति पर आसफखाँ अपनी जागीर को लौट गया और गढ़ की विजय के लिए जो उसके इलाके के समीप था, साधन जुटाने लगा।

इस प्रदेश का मुख्य स्थान चौरागढ़ है। इसमें सत्तर हजार आबाद गाँव हैं। इसकी सीमा पर एक ओर मालवा और दक्खिन है और दूसरी ओर गढ़ा है। यह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एक अलग प्रदेश है जिस पर रानी दुर्गावती का राज्य था। वह अपनी सुन्दरता के लिए प्रसिद्ध थी। आसफखाँ का इलाका उसके राज्य से मिला हुआ था, इसलिए वह और उसके लोग इधर-उधर निरन्तर जाया करते थे और उन्होंने वहाँ की स्थिति से तथा वहाँ की आमदनी से परिचय प्राप्त कर लिया था। आसफखाँ ने इस इलाके के गाँवों को लूटना शुरू किया और इससे अधिक आगे बढ़ने के लिए अवसर देखने लगा। अन्त में 971 हिजरी में जो शासन का नवाँ वर्ष था, वह दस हजार सवार और पैदल सैनिकों के साथ इस प्रदेश पर अधिकार करने के लिए वीरतापूर्वक रवाना हुआ। अपनी वीरता के कारण उसको यह बात आसान मालूम होती थी। रानी को घमंड था और अपनी योग्यता और साहस पर विश्वास था। वह अपना काम करती रही और उसने इस बात की उपेक्षा की कि उसका पड़ौसी ऐसा है जिसकी शक्ति कई अवसरों पर सिद्ध हो चुकी है विशेषकर वाजवहादुर के मामले में जिसने उस पर मियाना के अफगानों के साथ आक्रमण किया था और जिसको हारना पड़ा था। रानी के पास सदा बीस हजार सवार रहते थे परन्तु उसे एकाएक समाचार मिला कि बादशाह की वीर सेना दमूदा आ पहुँची है। यह उसका एक मुख्य कस्बा था। उस समय उसकी सेना इधर-उधर विखरी हुई थी और उसके पास केवल पांच सौ आदमी थे। उस राज्य का प्रबन्ध अधार नामक एक व्यक्ति को सौंप रक्खा था। उसने रानी को बतलाया कि क्या स्थिति है। रानी ने उत्तर दिया, "यह सब कुछ तुम्हारी मूर्खता के कारण हुआ है। मैंने इस देश पर लम्बे अर्से से राज्य किया है और कभी ऐसा काम नहीं किया जिससे मुझे लज्जित होना पड़े। अब तुम कहते हो उसके अनुसार यदि बादशाह स्वयं यहाँ होता तो मैं उससे मिलती परन्तु अब युद्ध के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है।" रानी ने वहाँ से चार मंजिल कूच की तो देखा कि शाही सेना सामने खड़ी है।

आसफखाँ बड़ी शीघ्रता से दमूदा तक पहुँच गया था परन्तु फिर वहाँ ठहर गया। इससे रानी को लगभग चार हजार आदमी इकट्ठा करने का समय मिल गया और उसके दरवारियों ने सलाह दी कि लड़ाई की जाए परन्तु उससे यह कहा गया कि वह किसी दृढ़ स्थान पर ठहरे, जब तक कि और अधिक सेना न आ पहुँचे। रानी ने यह सलाह मान ली और जंगल में दृढ़ स्थानों पर चली गई। इसलिए आसफखाँ को पता नहीं लगा कि वह कहाँ है। वह उस स्थान से वापस लौट गया और गढ़ा पहुंच गया। उसने वहाँ के गाँव और इलाकों पर अधिकार कर लिया। इसी अर्से में पाँच हजार आदमी इकट्ठे कर लिए गए। जब आसफखाँ को रानी की गति-विधि की सूचना मिली तो उसने गढ़ा में एक सेना छोड़ी और वह स्वयं रवाना हुआ। रानी को इसकी सूचना मिल गई तो उसने अपने आदमियों से कहा है, "हम लोग वृक्षों और जंगलों में कहाँ तक छिपे रहेंगे।" फिर उसने लड़ने का विचार कर लिया और अपनी सेना के मध्य में हाथी पर बैठ कर वह रवाना हुई और सैनिकों को साहसपूर्वक युद्ध करने के लिए प्रेरणा करने लगी। अब दोनों सेनाओं की भिड़न्त

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुई तो प्राणपण से युद्ध हुआ। तीन सौ मुगल शहीद हो गए और रानी ने भगोड़ों का पीछा किया।

दिन के अन्त में रानी ने अपने प्रधान अधिकारियों से सलाह की कि अब क्या करना उत्तम होगा और हर एक अधिकारी ने कुछ सलाह दी। रानी की यह सम्मति थी कि वापस अपने डेरे में चला जाना अच्छा होगा। फिर वहाँ से रात में आक्रमण किया जाय या प्रातःकाल तक वहीं ठहर कर फिर युद्ध किया जाय क्योंकि यदि वह कुछ न करेगी तो आसफखाँ प्रातःकाल ही पहाड़ी पर अधिकार कर लेगा और वह अपनी तोपें जमा देगा। रात में आक्रमण करने का निश्चय करके वह अपने डेरे में लौट आई। परन्तु इस विषय में उससे कोई सहमत नहीं हुआ और किसी ने कुछ निश्चय नहीं किया। प्रातःकाल वही हुआ जिसकी उसने भविष्यवाणी की थी। आसफखाँ ने पहाड़ी के शिखर पर अधिकार कर लिया और फिर किलेबन्दी करके अपनी सेना के साथ जम गया। पुनः युद्ध करने का विचार करके तथा अपने सैनिक एकत्र करके वह हाथी पर सवार हुई। अधार को जिसका उल्लेख पहले हो चुका है, उसने अपने सामने हाथी पर बिठाया। ऐसा संघर्ष हुआ कि बाण और बन्दूकें फेंक कर योद्धा लोग एक-दूसरे का गिरेवान पकड़ कर हाथों-हाथ लड़ने लगे।

युवराज राजा बीरशाह ने बड़ी वीरता का काम किया। दिन के तीसरे पहर तक युद्ध होता रहा और राजा ने तीन बार शाही सेना को वापस धकेल दिया। परन्तु अन्त में वह आहत हो गया। जब रानी को अपने पुत्र की हालत का पता चला तो उसने अपने विश्वस्त सेवकों को आदेश दिया कि वे उसे जैसे-तैसे युद्धभूमि से सुरक्षित स्थान पर ले जाएँ। उन्होंने ऐसा ही किया। जब ऐसा हो रहा था तो रानी के पास से इतने लोग भाग गए कि अब उसके पास तीन सौ आदमियों से अधिक नहीं रहे। इस पर भी रानी दृढ़ता से रणभूमि पर डटी रही और अपने आदमियों को युद्ध करने के लिए उत्साहित करती रही। अचानक ही भाग्यवश एक तीर उसकी कनपटी पर लगा जो उसने साहस करके निकाल लिया परन्तु इसकी नोक घाव में ही रह गई। इसके बाद दूसरा तीर उसकी गर्दन में लगा। यह भी उसने उसी प्रकार निकाल लिया परन्तु वह असीम दर्द के कारण अचेत हो गई। जब उसको चेत हुआ तो उसने अधार से जो उसके सामने बैठा हुआ था कहा, "मैंने ऐसे दिन के लिए ही हमेशा तुम पर विश्वास किया है ताकि जब मेरी हार होने लगे तो तुम मुझे शत्रु के हाथ में नहीं पड़ने दो परन्तु अधार में शक्ति न थी कि वह उसकी इच्छा पूरी करता। इसलिए रानी ने अपना ही खंजर निकाला और बड़ी वीरता के साथ मृत्यु का आलिंगन किया। उसके अनेक विश्वस्त सेवकों ने स्वामिभक्तिपूर्वक अपना जीवन बलिदान कर दिया। ईश्वर के अनुग्रह से और राजाधिराज (शहनशाह) के सौभाग्य से ऐसी विजय प्राप्त हुई जो अन्य सब विजयों से अधिक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भव्य थी। एक हजार हाथी और अगणित लूट विजयी सेना के हाथ में लगी और एक लम्बा-चौड़ा प्रदेश बादशाह के राज्य में मिला लिया गया।

दो मास के पश्चात् आसफखाँ चौरागढ़ की ओर गया। रानी का पुत्र रणभूमि से वहाँ चला गया था। वह उसका सामना करने के लिए आया परन्तु थोड़ी-सी लड़ाई के बाद शाही सेना ने दुर्ग पर अधिकार प्राप्त कर लिया। वहाँ बहुत बड़ी स्वर्ण राशि, अमूल्य रत्न, सोने और चाँदी के बर्तन, देव प्रतिमाएँ और बहुमूल्य सम्पत्ति प्राप्त हुई जो राजाओं ने कई शताब्दियों से अपने रिवाज के अनुसार एकत्र कर रक्खी थीं। ये सब आसफखाँ के हाथ में आ गईं। इनमें एक सौ एक देगें थीं जिनमें बहुमूल्य स्वर्ण मुद्राएँ भरी हुई थीं। इस कीर्तिमान कार्य से उसका ठाठ और पद बहुत बढ़ गया और लोग उस पर बड़ा विश्वास करने लगे तो भी इस बेईमान पुरुष ने एक हजार हाथियों में से जो उसने पकड़े थे, पेशकश के रूप में केवल दो सौ हाथी भेजे और रत्न तथा अलंकार अपने पास ही रख लिए। बादशाह ने अपनी विशाल-हृदयता के कारण इसे सहन किया और कुछ ध्यान नहीं दिया। आसफखाँ गढ़ा और कर्रा के राज्य में जमा रहा। फिर बादशाह ने खान-ए-जमा को दण्ड देने के उद्देश्य से जौनपुर की ओर कूच किया। तब वह वहाँ से हटा।

चौरागढ़ में एक विशेष घटना हुई। जब रानी का पुत्र राजा वीरशाह वहाँ छिपा हुआ था तो कुछ आदमियों को इसलिए नियुक्त किया गया था कि यदि पराजय हो जाय तो वे जौहर का प्रबन्ध करें, जौहर हिन्द के राजाओं की प्रथा थी। ऐसे अवसर पर वे लोग अपनी स्त्रियों को घर में बन्द करके उस पर घास, लकड़ी, रुई और घी डाल देते थे और फिर इसमें आग लगाकर उन्हें जला देते थे। वे समझते थे कि इस प्रकार वे अपने सम्मान की रक्षा कर रहे हैं। जब दुर्ग का पतन होने ही वाला था तो उन्होंने ऐसा ही किया और समस्त सुन्दर स्त्रियाँ भस्म हो गईं। जब यह स्थान छीन लिया गया और दूसरे दिन जब ज्वालाएँ शान्त हो गईं तो उन्होंने उस स्थान को देखा तो काठ के एक बड़े लट्ठे के नीच दो स्त्रियाँ मिलीं। इनमें एक रानी की बहिन थी और दूसरी राजा की पत्नी थी जिसके साथ उसने अभी तक सहवास नहीं किया था। इन दोनों को कोई हानि नहीं पहुंचाई गई और शाही अन्तःपुर में भेज दिया गया।

मिर्जा लोग

मिर्जा लोग मोहम्मद सुलतान मिर्जा के पुत्र थे। वह रशीद सुलतान वायस मिर्जा का पुत्र और बबकरा का पौत्र तथा मंसूर का प्रपौत्र था। मंसूर बबकरा का पुत्र और उमरशेख का पौत्र था, जो साहिब-ए-किरां अमीर तिमूर का पुत्र था। सुलतान मिर्जा की माता सुलतान हुसैन मिर्जा की पुत्री थी और यह खुरासान का शासक था। इस सुलतान हुसैन मिर्जा ने अपने पौत्र मोहम्मद का सुलतान मिर्जा अपनी संरक्षणता में पालन-पोषण किया था। जब सुलतान मिर्जा की मृत्यु हो गई तो उसके देश में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

फूट हो गई और मोहम्मद सुलतान मिर्जा वहाँ से रवाना होकर बादशाह बाबर के सामने उपस्थित हुआ जिसने उसके साथ बड़ी कृपा का व्यवहार किया। बाबर की मृत्यु के पश्चात् हुमायूँ बादशाह ने भी अपने शासनकाल में वही कृपा और संरक्षण जारी रखा। मोहम्मद सुलतान मिर्जा के दो पुत्र थे। एक उलूग मिर्जा था जो हजारा लोगों से लड़ता हुआ मारा गया। दूसरे का नाम शाह मिर्जा था। उलूग मिर्जा दो पुत्र छोड़कर मरा। एक का नाम सिकन्दर मिर्जा और दूसरे का नाम मोहम्मद सुलतान मिर्जा था। उलूग मिर्जा की मृत्यु के पश्चात् बादशाह हुमायूँ ने उसके पुत्रों की शिक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया और उसके अनुग्रह से सुलतान सिकन्दर को उलूग की और मोहम्मद सुलतान मिर्जा को शाह मिर्जा की उपाधि प्राप्त हुई। जब अकबर राज सिंहासन पर बैठा तो मोहम्मद सुलतान मिर्जा वृद्ध हो चुका था। बादशाह ने उसको सैनिक सेवा से मुक्त करके निर्वाह के लिए सरकार-सम्भल में परगना आजमपुर में जागीर दे दी। उसके कई पुत्र थे। पहले का नाम इब्राहीम हुसैन मिर्जा, दूसरे का मोहम्मद हुसैन मिर्जा, तीसरे का मसूद हुसैन मिर्जा और चौथे का आकिल हुसैन मिर्जा था। बादशाह ने इनमें से हर एक को उपयुक्त जागीर देकर अमीर का पद नियुक्त किया था। ये लोग बादशाह के साथ रहते थे और उसकी सेवा करते थे। जब बादशाह जौनपुर की लड़ाई से वापस लौटा तो वे लोग सरकार सम्भल में अपनी जागीरों में थे। जब बादशाह ने मिर्जा हकीम के विरुद्ध लाहौर को प्रयाण किया तो उलूग मिर्जा और शाह मिर्जा दोनों इब्राहीम हुसैन मिर्जा और मोहम्मद हुसैन मिर्जा से मिल गये और विद्रोह करके उन्होंने कई परगनों को लूट लिया। यह उस परिवार की पुरानी दुर्बलता थी। मोहम्मद सुलतान मिर्जा के पुत्र उलूग मिर्जा और शाह मिर्जा ने हुमायूँ के राज्य-काल में विद्रोह करके बड़ी क्षति पहुँचाई थी परन्तु हर अवसर पर उनके अपराध क्षमा कर दिये गये थे।

जब इन कुपात्रों ने परगनों पर आक्रमण किया तो वहाँ के जागीरदारों ने उनका सामना किया और जब अपने सामने की सेना के आगे मिर्जा लोग नहीं डट सके तो वे खानजमा और सिकन्दरखाँ के पास भाग गये। वहाँ भी उनका उनके बुरे स्वभाव के कारण मेल न हो सका। इसलिए वे वापस लौट गये। अब उनका इरादा था कि दोआब में घुसा जाय और वे नमकहार के परगने तक पहुँच गये। उस जिले के जागीरदार यारशाही ने, जो हाजीखाँ सिस्तानी की बहिन का पुत्र था, उनसे लड़ाई की। परन्तु यद्यपि वह खूब लड़ा तो भी हार गया और मिर्जा लोगों के साथ बहुत बड़ी लूट लगी। उन्होंने अपना ढंग जारी रखा और लूटते हुए दिल्ली तक पहुँच गये। दिल्ली के दुर्गरक्षक तातारखाँ ने किले को आत्म-रक्षा के लिए तैयार किया और मिर्जा लोगों का सामना न करने के लिए मुनीमखाँ आगरे से चला। उनके विरुद्ध आई हुई सेना का सामना न कर सकने के कारण वे लोग मालवा की ओर भाग गये जो उस समय अरक्षित स्थिति में था। सोनपत के कस्बे में इनकी मीर मुईज-उल-मुल्क से भिड़न्त हो गई, जो पंजाब जा रहा था। उन्होंने उनका सामान लूट लिया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

फिर इन्होंने मालवा पहुँचकर उस प्रान्त पर अधिकार कर लिया। मगरिबखाँ दक्षणी का भाई कदमखाँ हिन्दिया में था। मोहम्मद हुसैन मिर्जा ने उस स्थान को घेर लिया। कुछ समय बाद कदमखाँ को मारकर उसने हिन्दिया पर कब्जा कर लिया। जब इन घटनाओं की खबर लाहौर में बादशाह को मिली तो उसने आदेश दिया कि आजम पुर में मोहम्मद सुलतान मिर्जा को पकड़कर बयाना के दुर्ग में कैद रखा जाय।

इसी वर्ष अर्थात् 947 हिजरी में बादशाह अलीकुली खानजमा और बहादुरशाह पर विजय प्राप्त करके आगरा लौट आया। उसकी विजयी सेना ने नाममात्र का ही विश्राम किया था कि खबर मिली कि मिर्जा लोग मालवे पर टूट पड़े हैं। बादशाह ने तुरन्त ही उधर प्रयाण किया। जब वह गागरून पहुँचा तो उसने यह आवश्यक नहीं समझा कि इस काम को वह स्वयं ही करे क्योंकि वह उसके अफसरों से भी हो सकता था। इसलिए उसने शाहबुद्दीन अहमदखाँ, शाह बिदाखखाँ और कुछ अन्य लोगों को मांडू प्रान्त में कार्यवाही करने के लिए नियुक्त किया। जब ये अमीर उज्जैन के निकट पहुँचे तो उन्हें विदित हुआ कि बादशाह के आगमन की बात सुनकर मिर्जा लोग आपस में मिले और फिर गुजरात के शासक चंगेजखाँ के पास चले गये। इसलिए ईश्वर के अनुग्रह से और बादशाह के सौभाग्य से इन सेनानायकों को बिना लड़े ही निर्विरोध रूप से इस प्रान्त का अधिकार प्राप्त हो गया।

975 हिजरी में जब बादशाह ने रणथम्भौर दुर्ग को घेरने के लिए सेना भेज दी थी तो उसे समाचार मिला कि मिर्जा लोग भागकर चंगेजखाँ के पास चले गये थे, पर अब वापस मालवे में आकर उन्होंने उज्जैन को घेर लिया है। इसलिए उसने कलीजखाँ और कुछ अन्य अमीरों को, जिन्हें रणथम्भौर के लिए नियुक्त किया गया था, उनके विरुद्ध भेजा। जब ये अमीर सिरोंज पहुँचे तो उस सरकार का हाकिम शाहबुद्दीन अहमदखाँ और सारंगपुर का हाकिम शाह बिदाकखाँ उनसे आकर मिले। इस बड़ी सेना का हाल सुनकर मिर्जाओं ने उज्जैन का घेरा उठा लिया और मांडू की ओर कूच किया। जब इस प्रकार दुर्गरक्षक मुक्त हो गये तो वे बाहर आकर सेना से आ मिले और फिर संयुक्त सेना ने विद्रोहियों का पीछा किया जो मांडू से नर्बदा को भाग गये और उस नदी को पार करते हुए उनके बहुत से आदमी नष्ट हो गये। लगभग इसी समय झझारखाँ हब्शी ने त्रिपोलिया में गुजरात के शासक चंगेजखाँ को मार दिया। जब इस घटना की खबर मिर्जाओं को मिली तो उन्होंने सोचा कि इस गुजरात की गड़बड़ ने उनके लिए अनुकूल क्षेत्र तैयार कर दिया है। इसलिए वे उधर की ओर चल दिये और शाही अमीर आदेशानुसार या तो अपनी-अपनी जागीरों पर चले गये या दरबार में पहुँच गये। चम्पानेर पर अधिकार करके मिर्जाओं ने भड़ौंच के विरुद्ध कूच किया और दुर्ग को घेर लिया। कुछ समय बाद उन्होंने छल से रोमीखाँ को मार दिया जिसके हाथ में यह किला था और हर एक मिर्जा ने गुजरात प्रान्त के कुछ हिस्से पर अपना अधिकार कर लिया। इब्राहीम हुसैन ने बड़ौदा और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आस-पास के इलाके को दबा लिया। मोहम्मद हुसैन ने सूरत और उसके अधीन इलाके ले लिए और मिर्जा ने चम्पानेर और उसके जिले ले लिए।

शिवालिक का युद्ध

जम्मू, रामगढ़ और अन्य स्थानों को जीतने के लिए विभिन्न प्रसिद्ध अमीरों के नेतृत्व में कई बार सेनाएँ भेजी गई थीं परन्तु यह कठिन कार्य कभी भी संतोषजनक रीति से पूरा नहीं हुआ। इसलिए 10 मोहर्रम 1003 हिजरी को बादशाह ने इस विजय के लिए शेखफरीद बख्शी-उल-मुल्क को कई अन्य अमीरों के साथ रवाना किया। उसे बख्शी की योग्यता और निश्चय पर बड़ा विश्वास था। सेना ने शिवालिक पहाड़ियों में कूच किया और जम्मू पर आक्रमण करने का निश्चय किया जो उस प्रदेश का एक अति दृढ़ दुर्ग है। इस दुर्ग ने सलीमखाँ सूर का बड़ा सामना किया था। परन्तु अन्त में यह जीत लिया गया था। राजा ने कुछ सामना किया। तब यह निश्चय हुआ कि विद्रोहियों के इलाकों को जीतने के लिए अन्य दिशाओं में सेना के कूच करने से पहले ही इस दुर्ग पर आक्रमण किया जाय। अतः हुसैनबेग तथा कुछ अन्य अफसरों को इस राजा के विरुद्ध भेजा गया। जब राजा ने और जमींदारों ने शाही सेना के आगमन का समाचार सुना तो उन्होंने भयभीत होकर जम्मू का दुर्ग समर्पित कर दिया। यहाँ पर दुर्गरक्षकों को रखकर बख्शी ने रामगढ़ के किले से विरुद्ध कूच किया और उसे आक्रमण करके ले लिया और नवाब जैनखाँ कोका के आदमियों के सुपुर्द कर दिया। हुसैनबेग अब वापस लौटकर प्रधान सेना में आ गया।

अब जो राजा और जमींदार स्वामिभक्त बनने के लिए तैयार थे उनका आत्म-समर्पण स्वीकार करने के लिए और जो सामना करना चाहते थे उन्हें दबाने के लिए पाइन्दा काकशाल की अध्यक्षता में दूसरी सेना भेजी गई। तब सेना ने जसरुना और लखनपुर की ओर प्रयाण किया और जो राजा और जमींदार लोग चिरकाल से स्वतन्त्र थे अधीन होकर भेंट करने लगे। जब सेना सांबा पहुँची तो जसरुना का जागीरदार भबू और लखनपुर का जमींदार बालीदर प्रस्तुत हुए। भबू विद्रोहियों का सरदार था और बड़ा उपद्रवकारी था। अगले दिन मू के राजा बसू के पुत्र सूरजसिंह ने आकर अधीनता प्रकट की और उसे हुसैनबेग शेख उमरी के सुपुर्द किया गया, जब तक कि बादशाह यह निर्णय न कर दे कि सांबा और जसरुना के परगनों की क्या व्यवस्था की जाय। सांबा से दो कोस की दूरी पर एक दुर्ग का निर्माण करवाया गया और लखनपुर की सुपुर्दगी में लेने के लिए मोहम्मदखाँ तुर्कमान को भेजा गया।

फिर सेना आलिया नामक गाँव की ओर रवाना हुई और वहाँ डेरा लगाया गया भबू यहीं था। यह एक दृढ़ स्थान है जो सब ओर सघन वन से ऐसा घिरा हुआ है कि इसमें घुसना अति कठिन है। यहाँ पर विद्रोही लोग भागकर छिप जाते थे और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समझते थे कि पीछा करने वाले वहाँ नहीं पहुँचेंगे। शेख फरीद कुछ दिन उस गाँव में ठहरा और फिर उसने आदेश दिया कि कुल्हाड़ी और आग से जंगल नष्ट कर दिया जावे। कई दिन तक सैनिक लोग इस काम में व्यस्त रहे। परन्तु वे केवल बीस या तीस गज चौड़ा एक मार्ग मात्र बना सके। कितने ही पुराने वृक्ष जो इमारतों के काम में आ सकते थे, काटकर सरकारी इमारतों के लिए लाहौर भेज दिए गए। भवू, जिसका उल्लेख किया जा चुका है, बड़ा सक्रिय और मुख्य विद्रोही था और वह बहुत अधिक क्षति कर चुका था। अतः शाही आदेश हुआ कि उसको पकड़ने में कोई कोशिश उठा न रखी जाय। अब वह सेना के हाथ में था। इसलिए निश्चय किया गया कि अली मोहम्मद के साथ उसको बादशाह के पास भेज दिया जावे।

जब सेना भवू के निवास-स्थान जसरूना पहुँची तो उसके पुत्रों, भाइयों और मित्रों ने एकत्र होकर एक छोटे से पहाड़ी दुर्ग पर अपना खूब जमाव कर लिया। इस पहाड़ी के नीचे सिरे तक जंगल था और ऊपर जाने के लिए केवल एक तंग मार्ग था जिसमें एक साथ एक या दो सवार ही जा सकते थे। इस मार्ग के दोनों ओर दीवारें थीं जिनमें छिद्र बने हुए थे। इनमें से शत्रुओं और अपरिचित लोगों को आगे बढ़ने से रोकने के लिए बन्दूकें और बाण चलाये जा सकते थे। पहाड़ी के नीचे समतल भूमि पर कृष्ट मैदान था जिसमें एक दुर्ग था और इसके आस-पास खाई थी। इन विद्रोही तैयारियों को देखकर शेख फरीद ने इस स्थान को छीन लेने का और विद्रोहियों का दण्ड देने का दृढ़ निश्चय कर लिया। पहले तो उसने नीचे के दुर्ग पर आक्रमण करने के लिए हुसैनखाँ को आगे भेजा। बड़े परिश्रम से खाई भर दी गई। दुर्गद्वार तोड़ डाले और किला ले लिया। सामना करने वालों में कितने ही लोग गोलियों से और बाणों से आहत होकर मर गये। तब ऊपर के दुर्ग पर आक्रमण करने के लिए सेना ने जंगल में प्रवेश किया। शत्रु ने बन्दूकों और धनुषों से जंगल के रास्ते को रोकने के लिए बड़ा प्रयत्न किया परन्तु वीर सैनिक भी गोलियाँ चलाते हुए आगे बढ़ते गये और दुर्ग द्वार पर पहुँच गये। तब उन्होंने उस स्थान पर आग लगा दी और विद्रोही लोग शरण लेने के लिए जंगल में भाग गए। सब इमारतें और फसल जला दी गईं।

हुसैन बेग ने वहीं ठहर कर अपनी विजय की सूचना शेख फरीद को भेजी। उसको उत्तर भेजा गया कि वह उस स्थान को दृढ़ बनाकर रात में वहीं ठहरे या वहाँ कुछ सेना छोड़कर प्रधान सेना में जाय। अब सायंकाल होने वाला था, सेना दो कोस दूर थी और जंगल में होकर मार्ग तंग और दुर्गम था तथा वापस लौटती हुई सेना पर आक्रमण होने की सम्भावना थी। इसलिए हुसैन बेग ने रात भर वहीं विश्राम करने का और प्रातःकाल चलने का निश्चय किया। रात भर शत्रुओं ने जंगल के प्रत्येक भाग में से तीर चलाकर उनको परेशान किया परन्तु योजना के अनुसार प्रत्येक पुरुष अपने सिर को ढाल से ढँके हुए मोर्चलों के पीछे बैठा रहा,

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

न कोई हिला, न किसी ने शोर किया। इस प्रकार उन्होंने वाणों की वर्षा में रात्रि व्यतीत की। परन्तु प्रातःकाल वे जंगल में होकर चल दिये और सुरक्षित रूप से जा मिले। अपनी वीरता के लिए हुसैन वेग की वड़ी प्रशंसा हुई और अन्य अफसरों को और सैनिकों को इनाम, रुपया और खिलतें पुरस्कार स्वरूप दी गईं।

दुर्गरक्षकों के साथ हुसैन वेग को वहीं छोड़ कर सेना ने लखनपुर की ओर प्रस्थान किया। वहाँ का राजा मिलने के लिए वाहर आया। उसका परगना मोहम्मदखाँ तुर्कमान को देकर दुर्ग में पर्याप्त सेना रख दी गई। फिर थाह के द्वारा रावी नदी को पार करके सेना परगना पठान की ओर चली और अगले दिन कूच करके मू पहुंची। यह परगना बासू के अधिकार में था। इस समय बासू दरवार में था। परन्तु उसका पुत्र वाहर आकर सेना के साथ हो गया था। अब उससे कहा गया कि उसका प्रदेश कृपापूर्वक उसको दे दिया गया है। इसलिए इस अवसर का लाभ उठाकर वह उपयुक्त भेंट अर्पण करे। बासू के पुत्र ने वख्शी को अपने पास बुलाने के लिए और कर प्राप्त करने के लिए दो वकील भेजे। बासू एक पहाड़ी के ऊपर किले में रहता था। अतः सेना के प्रधान लोग अपने साथ कुछ आदमी लेकर मू के अति दृढ़ दुर्ग की ओर रवाना हुए। दुर्ग से विल्कुल मिली हुई कुछ कृष्ट जमीन के अतिरिक्त यह समस्त पहाड़ी दुर्भेद्य जंगल से ढकी हुई है। इसमें से होकर एक तंग मार्ग है जिसमें स्थान-स्थान पर दृढ़ द्वार बने हुए हैं। पहाड़ी के नीचे भी सख्त जमीन है और उसके आस-पास पत्थर की दीवारें और गहरी खाइयाँ हैं। चारों ओर की भूमि वड़ी ही सुहावनी है और बाग फलों से भरे हुए हैं। वहाँ कितनी ही वहती हुई नदियाँ हैं। बासू का निवास सुन्दर और विस्तृत था। वहाँ जाकर इसे देखा गया और जव बासू के वकील आतिथ्यकार्य कर चुके तो भेंट प्रस्तुत की गई जिसमें मूल्यवान घोड़े और सुन्दर वस्त्र थे। पड़ौस के दूसरे प्रदेश जो विद्रोही राजाओं और जमींदारों के हाथ में थे, जागीरदारों को तनख्वाह के रूप में दे दिये गये।

तव सेना ने ग्वालियर की ओर प्रस्थान किया जो एक दूसरे राजा के अधीन है और बड़ा दुर्गम दुर्ग है। यह राजा सेना से मिलने के लिए तथा अपनी स्वामिभक्ति प्रकट करने के लिए वाहर आया। नगर कोट की रानी का पुत्र शाही दरवार में था। इस रानी ने अपने वकील को आदर प्रकट करने के लिए भेजा। सव ओर के विद्रोहियों को दवाकर उनसे आज्ञा का पालन कराया गया। अव जम्मू और नगरकोट के बीच का प्रदेश दवा लिया गया और वहाँ के राजाओं और जमींदारों ने अधीनता प्रकट कर दी क्योंकि उनको उचित दण्ड मिल गया था। वास्तव में इस प्रदेश को अव ऐसा दवा दिया गया था। ऐसा इससे पहले कभी नहीं हुआ था।

अव जसूवाला लोगों की जमात के मामले तय करने थे। ये लोग जमींदार हैं और सवकी सम्मिलित सेना है। जव उन्होंने सुना कि शाही सेना आ रही है और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जमींदारों के इलाके दवा लिए गये हैं तो उन्हें सामना करने की कोई आशा न रही और वे विनीत भाव से अधीन हो गये।

अव सूचना मिली कि शेख फरीद के स्थान पर काजी हसन नियुक्त हो गया है। कारण यह था कि शेख की सेवाओं को बादशाह बहुत अच्छी तरह समझता था तथा जब उसे विदित हुआ कि वह प्रदेश दबा दिया गया है और जब वहाँ शेख की उपस्थिति आवश्यक नहीं है तो उसने काजी हसन को नियुक्त किया कि जाकर शेख का स्थान ले ले और जो कुछ कार्य शेष रह गया है उसे अन्य अमीरों तथा सेना की सहायता से पूरा करे। काजीखाँ पहले सेवा कर चुका था तथा कलीजखाँ के पुत्र से नीचे पहाड़ियों में लड़ने का उसे अनुभव भी था। शेख फरीद बख्शी को अब वापस दरबार में जाना था। जब काजी पहुँचा तो बख्शी ने कहा कि अभी कुछ काम करना शेष है और यह उचित प्रतीत होता है कि वह उसको पूरा करके दरबार में जाए। क्योंकि यह सम्भव है कि जो काम उसके लिए सुकर है वह उसकी वापसी के पश्चात् दुष्कर हो जाय। परन्तु काजी इस पर सहमत नहीं हुआ। उसने आग्रह किया कि शाही आदेश का पालन किया जावे। अतः दे मास के आरम्भ में बख्शी रवाना हुआ और देसोहा तथा बटाला के मार्ग से शीघ्रतापूर्वक यात्रा करके तीन दिन में लाहौर पहुँच गया और वहाँ बादशाह की सेवा में प्रस्तुत होने पर उसे बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ।

लगभग इसी समय शासन के उन्तालीसवें साल में 22 शफर 1003 हिजरी को अड़तालीस साल की आयु में तबकात-ए अकबरशाही के लेखक ख्वाजा निजामुद्दीन अहमद बख्शी की मृत्यु हो गई।

22 रबी-उल-आखिर को नवाब-ए-आजमखाँ मक्का से वापस आया और बादशाह उससे अनुग्रहपूर्वक मिला। उसका पुत्र मिर्जा अब्दुल्ला भी उसके साथ था उसको भी शाही कृपा प्राप्त हुई। इसी मास की 27 तारीख को लाहौर में कोका की मृत्यु हो गई। 3 रबी-उस्सानी को आसफखाँ, जो कश्मीर भेजा गया था, अपना काम पूरा करके वापस दरबार में आया। उसने कश्मीर से यहाँ तक की यात्रा तीन दिन में पूरी की। जुमाद उस्सानी के अन्त में पात्र आये जिसमें लिखा था कि बड़े सख्त घेरे के बाद सीवी का दुर्ग ले लिया गया है और बहुत से दुर्गरक्षक मारे गये हैं तथा बहुत लूट हाथ आई है। इस घेरे में मीर मासूम भक्करी[1] ने जो सेना के सर्वाधिक वीर लोगों में था, बड़ा काम किया था। इसलिए उसको खूब पुरस्कार दिया गया।

शासन का उन्तालीसवाँ वर्ष

यह उन्तालीसवाँ वर्ष 9 रजब को शुरू हुआ और पूर्ववत् मनाया गया। इस समय कंधार का हाकिम मुजफ्फर हुसैन शाही तख्त की सत्ता मान चुका था। उसने

---

1 यह तारीख-ए-मासूमी का लेखक था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहा कि बादशाह जिस व्यक्ति को नियुक्त करेगा, कंधार उसी के सुपुर्द कर दिया जायेगा। शाह वेग खान काबुली को वहाँ जाने के लिए आदेश हुआ था। वह अभी वहाँ नहीं पहुचा था। परन्तु अव शावान के मास में खवर आई कि वह वहाँ पहुँच गया है और मुजफ्फर हुसैन ने दुर्ग उसके सुपुर्द कर दिया है। तव मुजफ्फर अपने कुटुम्व और अनुचरों के साथ शाही दरवार के लिए रवाना हुआ और शाह वेग ने उसे बीस हजार रुपये नकद, छः सौ ऊँट, कई हाथी और विविध प्रकार के अनेक डेरे दिये। जब वह लाहौर से चार कोस की दूरी पर था तो उससे मिलने के लिए बादशाह ने वख्शी शेख फरीद को भेजा, जिसने जिलहिज्जा मास में उसका स्वागत किया और उसे निवास के लिए उपयुक्त स्थान दिया। नौरोज पर दावतें दी गईं और भेटें अर्पित की गईं।

सफर मास में बादशाह शेख फैजी से मिलने गया क्योंकि वह इस समय मृत्यु-शैय्या पर पड़ा हुआ था। बादशाह महल को लौटा ही था कि शेख की मृत्यु की खबर आई। शेख फैजी वड़ा प्रतिभावान पुरुष था और विद्वानों की संगति से उसे बड़ा प्रेम था। शुरू में उसका और इस पुस्तक के लेखक का कुछ परस्पर सम्बन्ध था। ये दोनों अपनी रचना में एक ही तखल्लुस (उपनाम) का उपयोग किया करते थे।

15 जिलकदा को बादशाह हिरनों का शिकार करने गया। एक हिरन ने झपट कर उसकी जाँघ में अपने सींगों से घाव कर दिया। वहाँ पास में उसे वचाने वाला कोई न था इसलिए वह गिर गया, तव आदमियों ने आकर हिरन को पकड़ा। वादशाह को गहरा घाव लगा था। जर्राहों ने घाव बन्द कर दिया। परन्तु कुछ दिन वाद उसमें सूजन आ गई और इतना दर्द हुआ कि वादशाह को कई दिन तक पलंग पर लेटे रहना पड़ा। अन्त में घाव भर गया और स्वास्थ्य-प्राप्ति पर बड़ा आमोद-प्रमोद मनाया गया।

दक्खिन की विजय

दक्खिन में 3 पृथक्-पृथक् राज्य हैं—निजाम-उल-मुल्किया, आदिल खानिया और कुतव-उल-मुल्किया। उनमें यह निर्णीत नियम था कि यदि कोई विदेशी सेना उनके देश में प्रवेश करे तो चाहे उनमें लड़ाई और फूट हो तो भी वे अपनी सेनाएँ संयुक्त करके युद्ध करते थे साथ ही यह भी नियम था कि संयुक्त-सेना के मध्य भाग का नेतृत्व निजाम-उल-मुल्क, दाहिने भाग का आदिलखाँ और बांये भाग का कुतुब उल-मुल्क करता था। इस समय इस नियम का पालन करके एक वहुत वड़ी सेना एकत्र की गई। बड़ा घमासान युद्ध हुआ और शत्रु के एक हजार आदमी वीरता-पूर्वक लड़ते हुए मारे गये। शाही पक्ष का राजा अलीखाँ, जो असीर और बुरहानपुर का शासक था और सेना के साथ था, काम आया। रामचन्द्र कछवाहा आहत होकर रात भर लाशों में पड़ा रहा। वह अपने कानों में मोती पहिने हुए था। इसलिए लुटेरों ने उसके कान काट लिए। प्रथम दिन के युद्ध में दोपहर से रात के एक पहर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तक लड़ाई होती रही। तब शत्रु हटकर अपने डेरे में वापस गये। उस दिन शाम को व दूसरे दिन प्रातःकाल खानखाना ने अपनी सेना का संचालन किया और जब वह आगे आया तो शत्रु साहसपूर्वक बाहर आये और युद्ध हुआ। शत्रु की पंक्ति में से एक भयंकर हाथी ने शाही पंक्ति पर आक्रमण किया तो शाही हाथी भाग गये। तब उसने सिपाहियों पर आक्रमण किया। उन्होंने उसके लिए रास्ता कर दिया। जब वह पंक्ति में से निकल गया तो खानखाना ने शत्रु पर आक्रमण किया और थोड़े ही समय में उसने बहुत सैनिकों को वापस धकेल दिया और बहुत को काट गिराया। कितनों ही सैनिकों को बन्दी बना लिया तथा पूर्ण विजय प्राप्त कर ली।

शाही महल में भयंकर अग्नि-काण्ड, बादशाह की कश्मीर यात्रा का वृत्तान्त और साथ ही श्रीनगर और अन्य स्थानों का वर्णन

29 रबी उस्मानी 1006 हिजरी को शहजादा शाह मुराद के पुत्र शाह रुस्तम की आयु के दसवें वर्ष में मृत्यु हो गई। उसकी माता खान-ए-आजम की बहिन थी।

5 रजब को अब्दुल्लाखाँ उजबेक की मृत्यु हुई। यह मावरोन नहर, तुर्कस्तान, बदखशाँ, अधिकांश खुरासान सीस्तां गौर और गोरजिस्तान आदि का शासक था। वह बड़ा वीर और साहसी था तथा चंगेजखाँ के किसी दूसरे वंशज का राज्य इतना विस्तृत नहीं था। उसने बयालीस तर्ष तक राज्य किया।

13 शाबान को नया (43) इलाही वर्ष शुरू हुआ।

मासूम काबुली की मृत्यु

इस समय (जिलहिज्जा 1007 हिजरी) सूचना मिली कि मासूमी काबुली की मृत्यु हो गई और इसके कुछ ही दिन पश्चात् बंगाल के सरदार ईसाखाँ की भी मृत्यु की सूचना मिली। इसी के पास काबुली ने शरण ली थी।

दक्षिण विजय

बादशाह ने समस्त विस्तृत हिन्दुस्तान पर अपना राज्य स्थापित कर दिया था। केवल दक्षिण का एक भाग बचा था, तो भी यहाँ के शासक पिछले वर्षों में अपने वकील और भेंटें शाही तख्त के सामने भेजा करते थे। परन्तु अब इनमें से कुछ शासकों ने अपना कर्तव्य निभाना छोड़ दिया था जिससे बादशाह के स्वाभिमान को ठेस लगी थी। इसलिए शहजादा शाह मुराद, खानखाना और अन्य अमीरों को उस देश की विजय के लिए रवाना किया गया। शहजादा उस देश में पहुंचा और अपनी सेनाओं के द्वारा उसने प्रसिद्धि प्राप्त की। फिर अन्य अमीरों को भी भेजा गया जिन्होंने वीरतापूर्वक युद्ध करके उस देश का काफी बड़ा हिस्सा दबा लिया। विजय कार्य अभी चल ही रहा था कि शहजादा सलीम के मन में यह विचार आया कि उन अमीरों की सहायता करने के लिए वह भी उधर जाय और शेष देश को जीतने का काम पूरा करे। जिससे धर्मों की बिभिन्नताएँ समाप्त हो जाएँ और सारा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

देश शाही शासन के नीचे शान्ति का उपभोग करे। अमीरों की परस्पर कलह के कारण पाँच-छः वर्ष से विजय कार्य रुका हुआ था। इसलिए उसने विचार किया कि लाहौर से आगरे में बादशाह के सामने उपस्थित होकर वहाँ की वास्तविक स्थिति की जानकारी प्राप्त करे क्योंकि आगरा घटनास्थल से अधिक निकट था। सलाह करने के बाद उसने सोचा कि यदि आवश्यकता हो तो स्वयं उधर कूच करना चाहिए।

जब शहजादा शाह मुराद की मृत्यु का समाचार मिला तो शहजादा दानियाल वहाँ भेजा गया परन्तु दक्षिण की स्थिति के विषय में बादशाह को परेशानी थी। इसलिए उसने मालवे में शिकार करते हुए उस दिशा में प्रयाण करने का निश्चय किया। उसका विचार था कि खानदेश के राजा अली के पुत्र बहादुर के नेतृत्व में एक प्रबल सहायक सेना शहजादा दानियाल को भेजी जाय और जब तक स्थिति में अनुकूल परिवर्तन न हो जाय, तब तक वह मालवे में विश्राम करे। अतः बादशाह आगरा से रवाना हुआ और इसी मास की 21 तारीख को खानखाना के प्रति सम्मान और कृपा प्रकट करके उसे आगे भेज दिया। 7 रबी उस्सानी को बादशाह धौलपुर पहुँचा। उतार घाटों पर चम्बल नदी को पार करके बादशाह हाथी पर सवार होकर चला। 17 तारीख को वह ग्वालियर के किले पर पहुंच गया। 29 जुमादउस्सानी को वह सिरोंज होकर गुजरा और 1 रजब को शाही डेरा कालीयादा और उज्जैन के बीच में लगाया गया। उज्जैन हिन्दुस्तान का एक अति प्राचीन नगर है और यहाँ प्राचीन काल की अनेक इमारतों के खंडहर हैं। कालीयदा संसार का अतीव मनोरम स्थान है। यहाँ बादशाह ने कुछ समय तक विश्राम किया। वह समझता था कि खानदेश के राजा अलीखाँ का पुत्र बहादुरखाँ उसकी सेवा में प्रस्तुत होगा।

खानदेश का राजा अलीखाँ खानखाना के नेतृत्व में दक्खिनियों के विरुद्ध लड़ता हुआ मारा गया था और यह समझा जाता था कि उसका पुत्र भी शाही सेना में सेवा करेगा और अपने पिता की पराजय का बदला लेने तथा शाही अनुग्रह प्राप्त करने की आशा करेगा। जब बादशाह का डेरा उज्जैन में था तो वहीं उसके इरादों के विषय में कुछ सूचना मिल चुकी थी। अब उसने बादशाह के पास दूत भेजकर अनेक बहाने बनाये और मूर्खतापूर्वक टालटूल की। तब बादशाह ने कृपा करके मीरान सदर-ए-जहाँ को खानदेश इसलिए भेजा कि वास्तविक स्थिति का पता लगाए और यदि बहादुरखाँ के मन में कुछ शंकाएँ उत्पन्न हुई हों तो उनका निराकरण करे।

राजदूत खानदेश पहुंचा और उसने पता लगाया कि जब बहादुरखाँ राजा अलीखाँ का उत्तराधिकारी बना तो वह (बहादुर) असीरगढ़ में कैद था। खानदेश के शासकों में यह प्राचीन प्रथा थी कि शासक अपने पुत्रों, भाइयों और अन्य सम्बन्धियों को कैद में रखा करता था ताकि राजसिंहासन की रक्षा हो सके और उसकी प्राप्ति का कोई प्रयत्न न करे। इस प्रकार ये दुखी व्यक्ति अपनी पत्नियों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और कुटुम्बों के साथ अपना समस्त जीवन बन्दीगृह में व्यतीत किया करते थे। बहादुरखाँ बन्दीगृह में लगभग तीस वर्ष काट चुका था और उसे दुनियादारी और शासन-कार्य का किंचित भी ज्ञान न था। जब वह कैद से निकला और उसने शासक की उपाधि धारण की तो वह बुरी तरह भोग-विलास में डूब गया। राजा अलीखाँ की सी चतुरता और सज्जनता का उसमें चिह्न भी दिखाई नहीं देता था। उसने शाही सिंहासन के प्रति आज्ञा-पालन और कर्तव्य-पालन की उपेक्षा की। उसने न कोई कृतज्ञता प्रकट की और न कोई कर अर्पित किए। उसके कायर मन में अपने पिता का बदला लेने का ही विचार न आया। जब बादशाह इसस्थिति से अवगत हुआ तो स्वर्गीय राजा की लगन और स्वामिभक्ति का स्मरण करके इस युवक शासक को सत्परामर्श देने के लिए उसने मीरान सदर-ए-जहाँ को भेजा।

मीरान असीरगढ़ गया। प्रथम तो बहादुरखाँ ने उसका आदर और सम्मान के साथ स्वागत किया और बादशाह के प्रति स्वामिभक्ति और कर्तव्य स्वीकार किया। राजदूत ने अपनी ओर से उसको अच्छी सलाह दी और उसमें स्वामिभक्ति जागृत करने का प्रयत्न किया। परन्तु इस युवक शासक का भाग्य उलटा था। उसने सत्परामर्श पर किंचित भी ध्यान नहीं दिया और अपने दुष्चरण का अनुसरण करता रहा। कभी तो वह कहता था कि वह बादशाह से मिलने जाएगा और फिर कहता था कि लोगों की बातों से उसके मन में सन्देह उत्पन्न हो गया है। इसलिए इस समय वह भेंट करने नहीं जायेगा परन्तु यदि बादशाह अनुग्रह करके अनुमति प्रदान करेगा तो अपने पुत्र को उपयुक्त भेंट लेकर भेज देगा। कुछ समय बाद जब शाही सिंहासन के समस्त आश्रित लोग अपने-अपने स्थानों पर जम जाएँगे तो वह अपनी लज्जा की भावना त्यागकर स्वयं बादशाह को सलाम करने के लिए रवाना होगा। ये बहाने या तो वह अपने चंचल स्वभाव के कारण या दगाबाजी के विचार से करता था। जब राजदूत मीरान ने देखा कि उसके कथन का बहादुर पर कोई प्रभाव नहीं होता है तो उसने बादशाह को इससे अवगत किया। बादशाह के हृदय में बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ। इसलिए उसने शेख फरीद बुखारी को खानदेश भेजा।

14 शाबान को जब शाही डेरा धार में था तो शेख फरीद बख्शी-उल-मुल्क को आदेश हुआ कि असीरगढ़ के विरुद्ध बहुत बड़ी सेना के साथ चढ़ाई करे। उसको निर्देश दिया गया कि बहादुरखाँ को विश्वास दिलाए और सलाह दे। यदि वह समझ जाय तो उसे बादशाह के पास ले आए और यदि नहीं तो बख्शी असीरगढ़ का डेरा डाले और उसे शीघ्रातिशीघ्र जीत ले। शाही अफसर इस काम पर जाने के लिए बड़े उत्सुक थे। उनमें कुछ तो शाही सेवा की उमंग थी और कुछ बख्शी के नेतृत्व में काम करने की इच्छा थी। जो लोग उसके साथ गये उनकी संख्या इतनी बड़ी थी कि गिनाई नहीं जा सकती।

इस चुनी हुई सेना के साथ बख्शी ने नर्वदा पार करके शत्रु के विषय में जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की तो उसे विदित हुआ कि बहादुरखाँ की सेना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्वर्गीय राजा अलीखाँ के दामाद सादातखाँ के नेतृत्व में है। सादात उसके सेवकों में सबसे अधिक विश्वसनीय था। उसको सुलतानपुर और ननदरवार की ओर इसलिए भेजा था कि शाही सेना के विरुद्ध दूसरी ओर मुड़ जाए। इस दल को देखते रहने के लिए सेना का एक भाग भेजने का निश्चय हुआ और शेष सेना ने खानदेश में कूच किया। घारकोल पहुंचने पर बहादुरखाँ का एक विनीत-पत्र प्राप्त हुआ जिसमें उसने अपने पूर्वजों की सेवाओं का उल्लेख किया और उपयुक्त भेंटों के साथ अपने पुत्र को बादशाह के पास भेजने का प्रस्ताव किया। उसने अपने आचरण के लिए क्षमा चाही और शरीफ फरीद से निवेदन किया कि उसके अपराधों के परिणामों से उसे बचाने के लिए वह बीच-बचाव करे। शेख ने यह पत्र बादशाह के पास भेजकर उत्तर की प्रतीक्षा की। बादशाह ने कृपापूर्ण उत्तर भेजा और लिखा कि उसके अतिक्रमण क्षमा कर दिए जाएँगे और उसके साथ कृपापूर्वक भेंट की जायगी। परन्तु उसको शीघ्र ही अधीनता प्रकट करने के लिए उपस्थित होना चाहिए।

आगे कूच करके सेना ने सबलगढ़ की चोटी पार की और फिर वह खानदेश की सीमा पर जा पहुंची। मीरान सदर-ए-जहाँ ने पहले ही सलाह दे दी थी कि सेना बुरहानपुर भेजी जाय अन्यथा यदि असीरगढ़ पर चढ़ाई की जायगी तो बहादुरखाँ प्राणपण से लड़ने पर उतारू हो जायगा। परन्तु जब यह सम्मति अकबर पर प्रकट की गई तो उसने उसी दिन आदेश दे दिया कि इस पर कोई ध्यान न दिया जाय और यह सेना बुरहानपुर न जाय बल्कि सीधी असीरगढ़ पहुंचकर उसे घेर ले। इसके अनुसार सेना आगे बढ़ी और असीरगढ़ से दो-तीन कोस के अन्तर पर पहुँच गई।

वहाँ पहुंचने पर मालूम हुआ कि मीरान-ए-सदर-जहाँ और पेशरोखाँ ने जिनको बादशाह ने बहादुरखाँ के पास भेजा था, उसे समझाया और धमकाया परन्तु वे उस पर कोई प्रभाव नहीं डाल सके और असीरगढ़ से बुरहानपुर चले गये। वहाँ से उन्होंने अपनी विफलता की सूचना दी और यह बादशाह पर छोड़ दिया कि जो वह उचित समझे करे। 21 शाबान को बादशाह माँडू गया। (इमारतों का वर्णन)। जब शेख फरीद असीरगढ़ के निकट पहुंचा तो बहादुरखाँ ने उसके पास दूसरा पत्र भेजा। इसमें दयापूर्वक विचार करने की प्रार्थना की गई थी और पहले की भाँति बहाने बनाये गए थे। उत्तर में उसे स्मरण दिलाया गया कि किस प्रकार दक्षिण के सुलतानों ने अपनी सेनाएँ एकत्र करके बादशाह के मित्रों से युद्ध किया था और किस प्रकार राजा अली शाही पक्ष से वीरतापूर्वक तथा स्वामिभक्तिपूर्वक लड़ता हुआ मारा गया था। अब बादशाह ने उसकी मृत्यु का बदला लेने के लिए दृढ़ निश्चय कर लिया है और ईश्वर की सहायता से वह तीनों सुलतानों के राज्यों को शाही साम्राज्य में मिला लेगा। अतः बहादुर का कर्तव्य है कि वह अविलम्ब अपने साथियों के साथ शाही सेना में शामिल होकर अपने पिता की मृत्यु का बदला ले और मार्ग में कंटक न बने, बल्कि बादशाह से कहे "पहले मुझे मारो, फिर मेरे पिता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के हत्यारों को मारना।" परन्तु भाग्य ने इस परिवार की ओर से मुँह मोड़ लिया था। इसलिए इस कृतघ्न व्यक्ति ने कोई तर्क या प्रतिवाद न सुना।

खानदेश के शासक फारुकी जाति के थे और यह परिवार दो सौ वर्ष से इस देश में राज्य कर रहा था। इनका एक पूर्वज, जिसका दक्षिण से सम्वन्ध था और जो वहाँ सैनिक की हैसियत से सेवा कर चुका था, किसी कारण दुखी होकर वहाँ से खानदेश आ गया जहाँ उस समय विभिन्न जमींदारों और राजाओं का राज्य था। वह एक गाँव में पहुँचा जो उसे अच्छा लगा और वहाँ एक कुत्ते ने, जो उसके साथ था, एक खरगोश का पीछा किया। परन्तु खरगोश ने पीछे फिर कर कुत्ते पर आक्रमण किया। साहस के इस अपूर्व प्रदर्शन से वह वड़ा प्रभावित हुआ। उसने सोचा कि जिस भूमि पर ऐसा दृश्य दिखाई दे सकता है वह साहस की उर्वरा भूमि होनी चाहिए। इसलिए उसने वहीं निवास करने का निश्चय किया। उसने वहाँ के जमींदार पर अपनी इच्छा प्रकट की परन्तु उसने इन्कार कर दिया। फिर उसने एक अवसर देखकर देहली के सुलतान से सहायता माँगी और अपने वान्धवों को एकत्र करके उसने उस जमींदार को दवा दिया और उस गाँव पर अपना अधिकार कर लिया। फिर उसने आसपास के अन्य गाँवों पर नियन्त्रण कर लिया और अन्त में वह कई परगनों का स्वामी और एक सशस्त्र सेना का नायक वन गया।

जब वह मरा तो उसकी सत्ता उसके पौत्र को प्राप्त हुई। उसने देखा कि उसके परिवार और आश्रित जनों की रक्षा के लिए दुर्ग वड़ा सुरक्षित स्थान होगा। असीर, जो एक पहाड़ी के शिखर पर स्थित है, उस समय एक आवाद स्थान था। उसने विभिन्न युक्तियों से यह स्थान उसके जमींदार से प्राप्त कर लिया और फिर इस पर दृढ़ दुर्ग वनाया। फिर उसने शासक की उपाधि धारण कर ली और अन्त में लगभग एक सौ पचास कोस लम्वा और पचास कोस चौड़ा समस्त खानदेश का इलाका उसके नीचे आ गया। इन शासकों ने ऐसी बुद्धिमत्ता और सावधानी से कार्य किया कि दिल्ली के सुलतान ने कोई हस्तक्षेप न किया। जब यह राज्य अली खान को प्राप्त हुआ तो उसने वड़ी प्रशासनिक योग्यता से काम किया। इस वंश में कोई भी व्यक्ति बुद्धि और योग्यता की दृष्टि से उसके समान नहीं था। उसके न्यायपूर्ण और उदार शासन से आकर्षित होकर पड़ौस के और दूरस्थ देशों के लोग उसके राज्य में आकर बस गये। उसकी बुद्धिमत्ता का सवसे अच्छा प्रमाण यह था कि वह शाही सिंहासन के प्रति स्वामिभक्ति रखता था और आज्ञापालन करता था। वह वड़ा दानशील भी था। इन तमाम गुणों में वह उस प्रदेश के अन्य सुलतानों से आगे वढ़ा हुआ था।

उसके उत्तराधिकारी बहादुरखाँ में ऐसी कोई योग्यता न थी और सलाह का उस पर कोई प्रभाव न होता था। अव भाग्य ने इस परिवार की ओर से मुख मोड़ लिया था और इस वंश का अन्त होने वाला था। शेख फरीद ने दुर्ग को घेर लिया और वादशाह को इसकी सूचना दी। उसने सहायक सेना भेजी और स्वयं ही

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

घेरे का निरीक्षण करने के लिए उसने नर्बदा को पार किया। 4 रमजान को नौरोज-ए-सुलतानी था। इसलिए बादशाह तीन दिन तक यह त्योहार मनाता रहा। इसके बाद शाही सेना ने फिर कूच शुरू किया।

इस समय नवाब अलामी शेख अबुलफजल स्वर्गीय शहजादे के हाथियों और बहुमूल्य सामान के साथ दक्षिण से वापिस लौट रहा था। उसके पत्र आए जिनमें लिखा था कि वह बुरहानपुर आ पहुंचा है। उसको आदेश प्राप्त हो चुका था कि शेख फरीद से मिलकर विद्रोही शासक को दण्ड देने के लिए साधन सोचे। 4 फरवरदीन को सेना ने प्रयाण किया और असीरगढ़ से दो कोस के अन्तर पर डेरा लगाया क्योंकि उस बाजू पर दुर्ग के निकट ऐसी कोई भूमि न थी जो डेरे के योग्य हो। बाज बहादुर उजबेग और कराबेग को तुरन्त ही इसलिए आगे भेजा गया कि घेरे वालों की खाइयों और डेरों के लिए स्थान देखें।

वापस आकर उन्होंने सूचना दी कि उन्होंने किसी भी देश में ऐसा दुर्ग नहीं देखा। सेना चाहे जितने अर्से तक घेरा डाले परन्तु बादशाह के असाधारण सौभाग्य के अतिरिक्त इस दुर्ग को और कोई नहीं छीन सकता। पुराने सैनिकों ने और उन लोगों ने जिन्होंने दूर-दूर के देशों की यात्रा की है अर्थात् जिन लोगों ने ईरान, तूरान, रोम, योरोप और समस्त बसे हुए संसार के किलों को देखा है उन्होंने इस जैसा दुर्ग कहीं नहीं देखा। यह ऊँची और दृढ़ पहाड़ी पर स्थित है और इसके आसपास तीन छोटी-छोटी पहाड़ियाँ हैं और हर एक पहाड़ी पर भी दुर्ग है जिनसे चन्द्रमा का सा प्रभाव मण्डल बना हुआ है। इसमें घुसने के और इसमें से बाहर निकलने के मार्गों का पता नहीं लगता। इसके निकट ऐसी कोई पहाड़ी नहीं है जो इससे ऊँची हो। इससे इसके निकट जाने का कोई मार्ग नहीं है। सब ओर समतल भूमि है और छिपने के लिए कोई वृक्ष या जंगल नहीं है। जब से इस वंश का राज्य स्थापित हुआ है तब से प्रत्येक शासक ने इस स्थान की मरम्मत करवाई है और इस प्रकार इसको और भी सुदृढ़ बनवाया है तथा यहाँ की सामग्री में वृद्धि की है। इससे अधिक दृढ़ और सामग्री तथा तोपखाने से और युद्ध के सामान और खाद्य पदार्थों से सम्पन्न दुर्ग की कल्पना करना असम्भव है। इसके भण्डारों में अकबरशाही तौल की पाँच सौ मन अफीम थी। यह दुर्ग यदि समतल भूमि पर स्थित होता तो भी इसको जीतना कठिन था। परन्तु ऐसी पहाड़ी, ऐसा दुर्गम दुर्ग और ऐसा तोपखाना इस पृथ्वीतल पर कहीं नहीं मिल सकता।

जब दुर्ग छीन लिया गया तो युद्ध-सामग्री का हिसाब बनाया गया। छोटी-बड़ी जर्बजन (तोपें) तेरह सौ से अधिक थीं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसी भी थीं जो काम में नहीं आती थीं। गोलों का वजन दो मन से एक सेर या आधे सेर तक था। कितने ही मॉर्टर (हुक्कादान) थे और बहुत से मंजनीक थे। इनमें से हर एक एक हजार या दो हजार मन के पत्थर फेंक सकता था। प्रत्येक बुर्ज पर लोहे के बड़े-बड़े

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कड़ाह रखे हुए थे इनमें से हर एक में बीस या तीस मन तेल उबाला जा सकता था और हमले के समय हमला करने वालों पर डाल दिया जाता था। वन्दूकों की तो कोई गिनती ही नहीं थी। शराव, औषधि और प्रत्येक प्रकार के सामान की, जिसकी मनुष्य को आवश्यकता हो सकती है, वहाँ बड़ी विपुलता थी। ग्यारह मास के लम्वे घेरे के वाद यह स्थान शाही सेना के हाथ में आया तो हजारों आदमी घेरे के समय अन्न और तेल खर्च कर चुके थे। उसके बाद भी इतना सामान वचा था मानो उसे किसी ने हाथ भी न लगाया हो। युद्ध-सामग्री इतनी थी कि यद्यपि वहुत-सी खर्च हो चुकी थी तो भी हजारों मन वच गई थी। जब तक घेरा चला निशाना लगाए हुए या बिना निशाना लगाए रात-दिन निरन्तर तोपें और बन्दूकें चलती रहती थीं। इसलिए उस वर्षा ऋतु की अँधेरी रातों में कोई आदमी अपना सिर भी नहीं उठा सकता था और कोई भूत भी इधर-उधर नहीं हिल सकता था। बड़े-बड़े भण्डार वारूद से भरे हुए थे। दुर्ग में कोई पानी के चश्मे नहीं थे परन्तु दो या तीन वड़े-बड़े तालाव थे। इनमें प्रतिवर्ष वर्षा का जल संचित किया जाता था जो दुर्ग-रक्षकों के लिए खूब पर्याप्त था। प्रत्येक अफसर के मकानों में भी अलग-अलग एक तालाव था जिसमें उसके कुटुम्ब के लिए काफी युद्ध जल भरा रहता था और यह तैयारी किसी अवसर के लिए नहीं की गई थी। यह तो दुर्ग की स्थापना के समय से ही चली आ रही थी। दुर्ग को दृढ़ करने की और उसमें सामग्री जुटाने की उस देश के शासकों को निरन्तर चिन्ता रहती थी। विशेषकर तोपखाने के विषय में। तोपों और बन्दूकों के लिए कई परगनों की आय अलग रखी जाती थी। इसलिए इस महकमे को सुचारु रूप से चलाने के लिए इसके अफसरों के पास स्वतन्त्र आर्थिक साधन थे। दुर्ग में नगर जैसी आबादी थी। यह प्रत्येक वर्ग के व्यक्तियों से सम्पन्न था। आत्मसमर्पण के पश्चात् जब वहाँ के निवासी बाहर निकले तो एक सप्ताह तक रात-दिन निकलते रहे।

सरदारों के मकान सुन्दर और विशाल थे और उनमें खुले हुए स्थान, वाग और फौव्वारे बने हुए थे। दुर्ग की दीवारों में जो बड़ी मोटी थीं, तोपखानों के अफसरों के रहने के लिए कमरे बने हुए थे। यहाँ वे लोग सब ऋतुओं में सुखपूर्वक रह सकते थे और तोप और बन्दूकें चला सकते थे। दुर्ग द्वार एक ही है और इसके बाहर एक दूसरा दुर्ग है जो कमरगढ़ कहलाता है। इसकी दीवारें दोनों ओर बड़े किले से मिली हुई हैं। इसको परकोटा माना जाता था और यहाँ पर बन्दूकची और तीरन्दाज आदि निम्न वर्ग के लोग रहते थे। इस किले के नीचे एक दूसरा किला है जो मालगढ़ कहलाता है। यह भी ऊँचे स्थान पर है और बड़ा दृढ़ है। बड़े किले की अपेक्षा यह पृथ्वी के पैंदे में स्थित प्रतीत होता है परन्तु धरती तल से यह आधे आसमान में विदित होता है। यह सबसे आगे का दुर्ग है इसलिए इसको तोपों से और शस्त्रास्त्रों से खूब दृढ़ किया गया था। इसके नीचे बस्ती है जो तल्ती कहलाती है। यह भी नगर के समान बड़ी है। संक्षेप यह है कि यह दुर्ग संसार का

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एक आश्चर्य है और जिसने इसको नहीं देखा है उसको इसका अनुमान कराना भी असम्भव है ।

दुर्ग के विषय में समस्त प्राप्य जानकारी एकत्र करने के पश्चात् शेख फरीद ने वादशाह के पास इसका वर्णन लिखकर भेजा और फिर वह इसे छीन लेने की योजना बनाने में लग गया । बादशाह को इस स्थान की वास्तविक दृढ़ता का पूरा पता नहीं था । इसलिए ईर्ष्यालु आदमियों ने कहा कि इसको जीत लेना आसान काम है । इससे वादशाह को कुछ परेशानी हुई । अन्त में सेना शिविर से पत्र आया जिसमें यह घोषणा की गई थी कि बादशाह का विचार स्वयं अपनी आँखों से सब स्थिति का निरीक्षण करने का है । लगभग इसी समय बुरहानपुर से शेख अबुलफजल ने आकर असीर से तीन या चार कोस के अन्तर पर डेरा लगाया । वह बादशाह के पास पहुंचने के लिए जल्दी कर रहा था । उसने शेख फरीद को अपने पहुंचने की सूचना दी और शेख उससे मिलने के लिए रवाना हो गया । वह थोड़ी ही दूर गया था कि उसे स्मरण हुआ कि बहादुर ने अगले दिन उससे मिलने का वायदा किया है । इसलिए वह रुक गया और वापस डेरे में लौट आया । अगले दिन बहादुर शेख से मिलने के लिए दुर्ग से नीचे आया और उसके गुप्तचर यथाशक्ति चौकसी करने में लग गए । फिर ऐसा हुआ कि उसी दिन बादशाह का एक पत्र आ रहा था । इसलिए शेख सवार होकर उसे ग्रहण करने के लिए गया । लेकिन वह रवाना होने ही वाला था कि गुप्तचर खबर लाए कि सवारी आ रही है । यद्यपि शेख के पास सवार, प्यादे, बन्दूकची, हुक्काबाज और हाथी बहुत से थे फिर भी उसने समझा कि यह कोई महत्त्व की बात है और उसे यह भय हुआ कि उसके विरुद्ध कोई चाल चली जा रही है । इसलिए वह जहाँ था वहीं ठहर गया और उसने एक संदेशवाहक भेजकर शेख अबुलफजल से कहलाया कि वह (अबुलफजल) उससे मिलने नहीं आएगा क्योंकि परिस्थितिवश उसको रुकना है । शेख फरीद ने बहादुर को विश्वास दिलाने के लिए अपने आदमी भेजे और वह बहुत से आदमियों को साथ लेकर शेख के डेरे में पहुंचा और उसने उसके साथ मुलाकात की । उसको बादशाह के प्रति अधीनता प्रकट करने के लिए सब प्रकार की दलीलों का प्रयोग करके प्रेरित किया । उसके पास कोई उत्तर नहीं था । इसलिए वह केवल सिर हिलाता रहा । अन्त में उसने अपना वही पुराना बहाना बनाया कि वह डरता है और सब प्रकार की सलाह की उपेक्षा करके वह दुर्ग में लौट गया । कुछ लोगों का कहना है कि शेख को मुलाकात के समय उसे बन्दी बना लेना चाहिए था परन्तु घात और बेईमानी कभी सफल नहीं होती । इसके अतिरिक्त शेख की निर्बल सेना का सामना करने के लिए बहादुर के पास पर्याप्त बल था । अगले दिन शेख अबुलफजल से उसके डेरे में मिलने के लिए पहुंचा । यह डेरा किले से तीन-चार कोस की दूरी पर था । बहादुरशाह की मुलाकात के विषय में विचार किया गया और इसकी सूचना बादशाह को भेज दी गई ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अब ऐसी कोई आशा न रही थी कि बहादुर अधीनता प्रकट करेगा। अबुलफजल मुलाकात के परिणाम की प्रतीक्षा कर रहा था। परन्तु अब वह बादशाह से मिलने के लिए रवाना हो गया। बहादुर ने देश को दबाए रखने की ओर ध्यान दिया। फिर सड़कें बन्द कर दीं। दुर्ग में आने जाने के मार्ग रोक दिए। सुरंगें बनवाईं और घेरे सम्बन्धी अन्य तैयारियाँ कीं। फिर बहादुर के अफसरों को पकड़ने के लिए और नगर पर अधिकार करने के लिए शेख फरीद ने सेना का एक भाग बुरहानपुर भेजा। परन्तु वहाँ पहुँचने पर विदित हुआ कि वहाँ का हाकिम इससे पहले ही बादशाह के प्रति अधीनता प्रकट कर चुका है। कुछ अनुभवी अफसरों ने यह उचित समझा कि वहाँ कुछ सेना नियुक्त कर दी जाय। अन्त में शेख फरीद ने निश्चय किया कि बुरहानपुर और असीर के मध्य में एक हजार सवार रख दिए जाएँ। इस सेना ने दुर्ग से दो कोस के अन्तर पर अपना स्थान बनाया और दुर्ग और नगर के बीच का आना जाना बन्द कर दिया। दूसरे दिन शेख अबुलफजल का भाई शेख अबुल बरकत अपने हाथियों और तोपखाने के साथ, जो उसके नेतृत्व में भेजा गया था, घेरा डालने वाली सेना में जा मिला। अब सेना अधिक अनुकूल स्थान पर चली गई और यह निश्चय किया गया कि दुर्ग के निकट प्रत्येक उपयुक्त स्थान पर सुरंगें बनाईं जाय और मार्ग और द्वार सब बन्द कर दिए जाएँ। बहादुरखाँ ने एक और पत्र भेजा और शेख फरीद ने उसका उत्तर दे दिया। परन्तु बहादुरखाँ को अपने दुर्ग के बल पर बड़ा विश्वास था। वह समझता था कि इसकी ऊँचाई और शक्ति ऐसी है कि कोई मानव बल इसको नहीं दबा सकता।

जिस दिन सेनानायक दुर्ग की ओर घोड़े पर चढ़कर निरीक्षण के लिए चला तो उस पर एक बड़ी तोप दागी गई। ऐसा कहा जाता है कि किले की जिस बुर्ज पर यह तोप रखी हुई थी वह गिर पड़ी और तोप भी साथ ही गिर गई। शाही सेना ने इसे अच्छा शकुन माना। मीर सदर-ए-जहाँ बादशाह के पास वापस लौट गया था। अब वह शाही सन्देश लेकर आया। दूसरे दिन मिया सईद सब ओर घूमा और सुरंगों के निर्माण के कार्य को देखा और ऐसा प्रबन्ध किया कि आदमियों की रक्षा हो सके और वे वहाँ रात-दिन ठहर सकें। बादशाह का दिमाग इस काम पर लगा हुआ था। इसके पास से निरन्तर पत्र आते रहते थे जिनमें जरूरी निर्देश लिखे रहते थे। प्रतिदिन उसका कोई अफसर घेरे के काम का निरीक्षण करने के लिए और उसके विषय में सूचना देने को आया करता था।

अब शेख फरीद को बादशाह का आदेश मिला कि वह सेवा में उपस्थित हो। तब वह 18 तारीख को शाही डेरे के लिए रवाना हो गया, जो बुरगाँव में असीर से सात या आठ कोस के अन्तर पर लगा हुआ था। शेख के साथ कृपापूर्वक भेंट हुई और उसने घेरे का सारा विवरण सुनाया। वह अगले दिन भी वहीं ठहरा और उसके बाद शाही डेरा असीरगढ़ की ओर चला। 21 फरवरदीन या 25 रमजान को यह बुरहानपुर नगर पहुंचा और बादशाह ने पहले के शासकों के महल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में निवास किया । उसको घेरे का ही ध्यान था । इसलिए उसने आगे प्रयाण किया और बहुत से अमीरों के साथ वह 30 शव्वाल को दुर्ग के नीचे पहुँच गया । तब शेख फरीद को आदेश मिला कि वह अपना बख्शी का काम करे और बादशाह की सेवा में रहे और खाइयाँ बनाने के लिए अन्य अमीरों को नियुक्त कर दे ताकि जब कोई संकट स्थिति उपस्थित हो तो वह किसी भी दशा में सेना ले जा सके ।

तब खाइयों का काम अन्य अमीरों को सौंप दिया गया। पहली खाई खान-ए-आजम के, दूसरी नवाब आसफखाँ के, तीसरी मिर्जा जानीबेग ठट्टा के और चौथी अपने भाई और सेवकों के सुपुर्द की और सब काम उनके सुपुर्द कर दिया । फिर वह स्वयं चुनी हुई सेना के साथ बादशाह की सेवा में उपस्थित होने के लिए चल दिया । सुरंगें या साबात् बनाना असम्भव था । इसलिए प्रत्येक खाई में से आदमियों ने यथासम्भव घेरे को तंग करना शुरू किया । इस मास के अन्त में आजमखाँ ने सूचना दी कि चाहे निशाना हो या न हो और आवश्यकता भी हो या न हो पर दुर्ग-रक्षक लोग रात-दिन विविध प्रकार की तोपों से गोले चला रहे हैं, इसको घेरे वाले लोग बड़ी वीरतापूर्वक सहन कर रहे हैं ।

जिलकदा मास के शुरू के दिनों में बहादुर ने अपनी माता और पुत्र के साथ दुर्ग में से 64 हाथी बादशाह के पास भेजे और अपने अपराधों की क्षमा माँगी । बादशाह ने उत्तर दिया कि यदि क्षमा चाहिए तो वह स्वयं ही आकर अधीनता प्रकट करे और बादशाह की दया पर भरोसा रखे । 16 जिलहिज्जा को दुर्ग में से धावा किया गया और प्राणपण से संघर्ष हुआ जिसमें अनेक दुर्गरक्षक सैनिक मारे गए । उनको वापस धकेल देने पर कोरिया नामक एक छोटी सी पहाड़ी घेरे वालों के हाथ में आ गई । यह पहाड़ी दुर्ग के इतनी निकट है कि उससे ऊपर आ गई है । तब घेरे वालों ने देखा कि इस पर तथा एक और पहाड़ी पर जिस पर दृढ़ दुर्ग बना हुआ है, अधिकार कर लेने पर दुर्गरक्षकों को डराया जा सकता है । इस स्थान के पिछले स्वामियों ने इस स्थान का महत्त्व देख लिया था और पहाड़ी को इस प्रकार तराश दिया था कि उस पर कोई नहीं चढ़ सकता था । अत्यन्त कड़ी लड़ाई के बाद यह स्थान ले लिया गया ।

21 शफर को समाचार आया कि 18 तारीख को अहमदनगर छीन लिया गया है । निजाम-उल-मुल्क की बहिन चाँद बीबी ने बड़े अर्से तक इस दुर्ग की रक्षा की थी । पिछली बार जब इसे घेरा गया तो शाही अमीरों में फूट हो गई थी जिससे यह नहीं छीना जा सका था । अब शहजादा दानियाल ने कुछ बड़े अमीरों की सहायता से आक्रमण करके इसे ले लिया । इस समय यह घेरा लगभग: छः महीने से चल रहा था और तोपें निरन्तर दागी जा रही थीं परन्तु इसका कोई परिणाम नहीं हुआ था । तब खानखाना ने सोचा कि सुरंग लगाई जाय । अन्य अमीर उससे सहमत हो गये और सुरंग बनाई गई । इसमें 180 मन बारूद भरकर 20 शहरयूर को शासन के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के पैंतालीसवें वर्ष में इसमें आग लगाई गई। इसके धड़ाके से एक वुर्ज और सत्तर अस्सी गज दीवार उड़ गई। खानखाना, राजा जगन्नाथ और अन्य अमीरों ने सैनिकों को उत्तेजित करने में बड़ा जोर लगाया और आदेश दिया कि धड़ाके के वाद तुरन्त ही सैनिक दौड़ कर काम समाप्त कर दें। इस आदेश का यथावत् पालन किया गया और यूसुफखाँ के नेतृत्व में एक सेना दूसरे स्थान से खाकरेजी पर होकर दीवार पर चढ़ गई। फिर आक्रमणकारी आगे बढ़े और बड़ी लड़ाई हुई तथा घेरेवालों में से एक हजार आदमी मारे गये। अन्त में किला छीन लिया गया और निजाम-उल-मुल्क को कैद करके बादशाह के पास ले जाया गया।

कुछ दिन पश्चात् बहादुरशाह ने अपने दो मुख्य कर्मचारी, सादात्तखाँ और शेख पीर मोहम्मद हुसैन दस हाथियों के साथ बादशाह के पास भेजे और क्षमा-याचना की। दो दिन पश्चात् शेख पीर मोहम्मद को वापस दुर्ग में भेज दिया गया और सादात्तखां को शेख फरीद ने अपना मेहमान बनाकर रख लिया। उसके साथ जो आदमी आये थे उन्हें पीर मोहम्मद के साथ वापस जाने का आदेश हुआ परन्तु इन सौ आदमियों ने कहा कि वे वापस असीर में जाकर बन्दी नहीं होना चाहते। जिन लोगों ने इस वात की जमानत दे दी कि वे भागेंगे नहीं उनको तो ठहरने की अनुमति दे दी गई और अन्य लोगों को वन्दी बना लिया गया। अन्त में कुछ लोगों ने जमानत दे दी और कुछ वापस किले में चले गये। इस किले के आत्म-समर्पण के कारणों में एक कारण यह था कि यहाँ की वायु अशुद्ध थी जिससे दो रोग[1] उत्पन्न हो गये। एक रोग शरीर के नीचे हिस्से का पक्षाघात था जो कमर से नीचे तक होता था और जिससे रोगी में हिलने डुलने की शक्ति नहीं रहती थी। दूसरा रोग था नेत्र ज्योति की निर्बलता। इन रोगों से दुर्गरक्षक लोग बड़े दुःखी और हतोत्साह हो गये थे और सब वर्ग के लोग सहमत होकर एक स्वर से बहादुरशाह को आत्म-समर्पण के लिए प्रेरित करने लगे थे। उनके आग्रह से ही उसने बादशाह को आत्म-समर्पण का प्रस्ताव किया था। इस प्रकार घेरे का अन्त हुआ।

जब बाहदुरशाह बाहर निकला तो बादशाह ने एक बड़ा दरबार किया जिसमें सब बड़े लोग उपस्थित थे और इसके ठाठ से बहादुर चकित हो गया था। मुकरिव्वखाँ और बहादुर के अन्य कई अमीर शेख अबुलफजल से आगे दुर्ग में भेजे गये और दुर्गरक्षकों से कहलवाया कि वे आत्म-समर्पण करके चाबियाँ सौंप दें। जब वे निकट आये तो मुकरिव्वखाँ का पिता किले के ऊपर चढ़ गया और उसे गालियाँ देने लगा और कहा कि तुमने अपने स्वामी को जंजीरों में डालकर किला समर्पित किया है। पुत्र इन गालियों को सहन नहीं कर सका और उसने अपने पेट में दो तीन बार छुरा मार लिया। कुछ दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई और चाबियाँ दे दी गईं।

---

1 अबुलफजल ने लिखा है कि यह महामारी किले में एक लाख पशुओं को बाड़े में बन्द करने के कारण हुई और इस बीमारी से 25,000 व्यक्तियों की जानें गई।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

खानखाना ने, जो अहमदनगर से आ गया था, दुर्ग में जाकर कोष और युद्ध-सामग्री पर शाही मुहर लगाई और फिर इन्हें जिम्मेदार अफसरों के सुपुर्द कर दिया। ठीक इसी समय ठट्टा का मिर्जा जानीबेग मर गया।

8 शाबान को बादशाह ने शेख अबुलफजल को बड़ा सम्मान प्रदान किया। इसमें नक्कारा और निशान थे। दक्खिन की विजय में सहायता करने के लिए सौ अमीर उसके नीचे नियुक्त कर दिये गये। खानखाना को अहमदनगर भेज दिया और दक्खिन की विजय का काम आम तौर पर उसके सुपुर्द किया गया। फिर बादशाह ने अन्दर जाकर दुर्ग का निरीक्षण किया। बहादुरखाँ का समस्त कोष और सम्पत्ति जिसका उसके पूर्वजों ने पिछले दो सौ वर्ष में संग्रह किया था, बाहर निकाले गये और बहादुर की पत्नियों और स्त्रियों को, जिनकी संख्या दो सौ थी, बादशाह के सामने प्रस्तुत किया गया। बादशाह वहाँ तीन दिन तक ठहरा और फिर बुरहानपुर को रवाना हो गया।

28 शव्वाल को दक्खिन के समस्त प्रान्त बरार, खानदेश, मालवा और गुजरात का शासन शहजादा दानियाल के सुपुर्द कर दिया गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाकियात

लेखक : शेख फैंजी

लेखक के नाम के अतिरिक्त इस छोटी-सी पुस्तक में ऐसी कोई वात नहीं है जो ध्यान देने योग्य हो। इसमें कई पत्र हैं जो शेख फैंजी ने शासन के छत्तीसवें वर्ष में जब वह दक्खिन में राजदूत का काम करने गया था, बादशाह को लिखे थे। इन पत्रों में गपशप भरी हुई है और इन्हें छन्दों से अलंकृत किया गया है परन्तु इनमें कोई महत्त्व की बात नहीं है और उस समय के राजनैतिक सम्बन्धों पर इनसे कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

इन तमाम पत्रों का अनुवाद सर एच० एम० ईलियट के लिए लेफ्टीनेंट प्रीचर्ड ने किया था। परन्तु यह खेद की वात है कि जितना परिश्रम किया उसके योग्य यह नहीं है। फैंजी को इतिहासकार नहीं माना जा सकता। इसलिए इस ग्रन्थ में उसका जीवन वृतान्त असंगत होगा। उसका पूरा वृतान्त ब्लीचमैंन की आइन-ए-अकबरी जिल्द 1, पृ० 490 पर मिलेगा।

अवतरण

बहुत लम्बी यात्रा करने पर और अनेक मंजिलें पार करने के पश्चात् मैं दिसम्बर (पूर) की 20 तारीख को बुरहानपुर से बीस कोस दूर एक स्थान पर पहुंचा और अगले दिन वहाँ डेरा लगाकर उसकी ऐसी व्यवस्था की जो दरबार के सेवक के अनुरूप थी। डेरा इस प्रकार लगाया गया था कि इसमें दो बड़े-बड़े कमरे थे। इनमें से अन्दर के कमरे में शाही तख्त रखा गया था और इस पर सुनहरी कशीदे की गद्दी थी। इसके ऊपर मखमल का छत्र खड़ा किया गया था जिस पर सोने का काम था। शाही तलवार और खिलतें तख्त पर रखी गई थीं और बादशाह का पत्र भी रखा गया था। लोग हाथ जोड़े हुए चारों ओर खड़े थे। जो घोड़े प्रदान किये जाने थे वे यथा-स्थान खड़े थे। राजा अलीखान के साथ उसके सेवक, वकील एवं फौजदार थे। वे ऐसे आदर और सम्मान के साथ तख्त के निकट आये जिससे बादशाह के प्रति उनकी सद्भावना और अधीनता प्रकट होती थी। वे डेरे से कुछ दूर घोड़ों से उतर गए और उन्हें बाहर के कमरे में प्रविष्ट किया गया। वे बड़े आदरपूर्वक चले और उन्हें आगे बढ़ने की अनुमति दे दी गई। जब उन्होंने अन्दर के कमरे में प्रवेश किया और अपने से कुछ दूर शाही सिंहासन को देखा तो उसे सलाम किया और नंगे पैर आगे बढ़े। जब वे एक विशेष दूरी पर थे तो उन्हें आदेश दिया गया कि तीन बार सलाम करें। उन्होंने आदरपूर्वक सलाम किया और फिर उसी स्थान पर खड़े रहे। तब

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मैंने अपने दोनों हाथों में शाही फरमान लिया और राजा अलीखान को निकट बुलाकर कहा, "बादशाह ने, जो खुदा का खलीफा है, आपके पास दो शाही फरमान भेजे हैं और बड़ा ही अनुग्रह किया है। 'एक फरमान' यह है इस पर उसने पत्र लिया और आदरपूर्वक अपने सिर से लगाया और फिर तीन वार सलाम की। तव मैंने कहा, 'बादशाह ने आपको एक खिलत भी प्रदान की है।' तव उसने सलाम की, उसे चूमा और फिर सलाम की। इसी प्रकार उसने तलवार के प्रति भी बफादारी प्रदर्शित की और जब बादशाह के नाम का उच्चारण किया गया तो उसने सलाम की। फिर उसने कहा, 'वर्षों से मेरी अभिलाषा थी कि मैं आपके सामने बैठता।' साथ ही वह इस बात के लिए उत्सुक भी प्रतीत होता था। तव मैंने उससे बैठने के लिए कहा और वह आपके विनीत सेवक के पास आदरपूर्वक बैठ गया। जब अनुकूल अवसर आया तो मैंने सावधानीपूर्वक उससे कहा कि मैं उसको उन्नति का ढंग वतला सकता हूँ परन्तु मैं मुख्यतः बादशाह की ही प्रशंसा करता रहा। उसने उत्तर दिया कि वह बादशाह का वफादार सेवक है और अपना वड़ा ही सौभाग्य समझता है कि बादशाह की सद्भावना और कृपा का आज उसने दर्शन किया है। मैंने कहा बादशाह का आप पर बड़ा अनुग्रह है। वह आपको अपना घनिष्ठ मित्र समझता है और विश्वस्त सेवकों में मानता है और इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि उसने अपने उच्च कर्मचारी को आपके पास भेजा है।" इस पर उसने कई वार सलाम की। वह प्रसन्न जान पड़ता था। मैंने दो वार प्रकट किया कि अव सभा समाप्त की जाय परन्तु उसने कहा, "मुझे अभी भेंट से सन्तोष नहीं हुआ है। मैं यहाँ सायंकाल तक बैठा रहना चाहता हूँ।" वह वहाँ चार पाँच घड़ी तक बैठा रहा। तव उसने पान और इत्र मँगवाए। मैंने उससे कहा कि वह अपने ही हाथ से दे। मैंने उसे कई पान अपने हाथ से दिए जिस पर उसने कई बार सलाम की। तब मैंने कहा, "अब हम बादशाह की समृद्धि और दीर्घायु के लिए प्रार्थना करें।" उसने यह आदरपूर्वक किया और फिर सभा विसर्जित हुई। तब वह सिंहासन के सामने कालीन के किनारे, अपने स्थान पर जाकर आदरपूर्वक खड़ा हो गया। शाही घोड़े वहीं थे। उसने लगामों का चुम्बन किया, उन्हें कंधों पर रखा और सलाम की। तब उसने विदा ली। मेरे अनुचर ने ये सलामें गिनी थी और कहा था कि सब मिलकर उसने पच्चीस सलाम की थीं। वह अत्यन्त प्रसन्न और सन्तुष्ट था। जब वह अन्दर आया तो उसने कहा, "यदि आपका आदेश हो तो बादशाह के प्रति आदर प्रकट करने के लिए मैं एक हजार बार सलाम करने के लिए तैयार हूँ बल्कि मैं अपनी जान भी कुर्बान करने के लिए प्रस्तुत हूँ।" मैंने कहा, "इस प्रकार का व्यवहार आपकी मित्रता और भावना के अनुरूप है परन्तु बादशाह इस प्रकार की पूजा का निषेध करता है और जब कभी दरबारी लोग अपनी स्वामिभक्ति के भावावेश में इस प्रकार की पूजा करते हैं तो बादशाह उन्हें मना करता है क्योंकि इस प्रकार की पूजा केवल ईश्वर की ही होनी चाहिए।"

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विकाया-ए-असदबेग

इस पुस्तक को हालात-ए-असदवेग भी कहा जाता है। यह अकवर के राज्य के उत्तरार्द्ध के समय के लेखक के निजी रोचक संस्मरण हैं। इसमें उस समय के कुछ राजनैतिक कार्यों का वृत्तान्त है विशेषकर अवुलफजल की हत्या का।

सर एच० एम० ईलियट की हस्तलिखित प्रति के अन्त में एक फारसी टिप्पणी है जिसमें लेखक का निम्नलिखित वृत्तान्त है। "इस पुस्तक का लेखक कजवीन निवासी असदवेग अपनी कृपालुता, विशाल हृदयता, परोपकारता और सांसारिक अनुभव के लिए वहुत प्रसिद्ध था। जब वह प्रथम वार भारत में आया तो उसने शेख मुवारिक के पुत्र शेख अवुलफजल की सेवा में सत्रह वर्ष व्यतीत किए। शेख अवुलफजल की मृत्यु के पश्चात् वह अकवर वादशाह के दरवार में एक अफसर नियुक्त हुआ और उसको ऐसे अच्छे-अच्छे पद मिलते रहे कि उसका धन और सम्मान खूव वढ़ गया। थोड़े अर्से में अकवर के समय और जीवन का अन्त आ गया और वादशाह जहाँगीर का राज्यकाल शुरू हुआ। आरम्भ में तो उसकी दरवार में गति नहीं हुई तो भी वह निरन्तर साम्राज्य की सेवा करता रहा। जहाँगीर के राज्य के अन्त में पेशरोखाँ की उपाधि से वह सम्मानित किया गया। वादशाह शाहजहाँ के राज्यारम्भ के समय 1041 हिजरी में उसकी मृत्यु हो गई।

इस सारी पुस्तक का अनुवाद सर एच० एम० ईलियट के लिए वंगाल सिविल सर्विस के श्री वी० डव्लू० चैपमेन ने किया था। उसमें से कई अवतरण लिए गए हैं और निम्नलिखित इसकी विषय-सूची का संक्षेप है :

पहले अवतरण में लेखक का दिया हुआ अवुलफजल की मृत्यु का वर्णन है। उसकी इच्छा और हार्दिक प्रार्थना के विरुद्ध अवुलफजल असद को सिरोंज में छोड़ गया। इसके चार दिन वाद उसने शेख की मृत्यु का हाल सुना। तव वह सिरोंज में अपनी स्थिति को दृढ़ करने में लग गया। परन्तु उसको आदेश मिला कि वह तुरन्त दरवार के लिए रवाना हो जाय। जव वह कालावाग पहुँचा तो उसने अवुल फजल का भारी सामान देखा, जो पीछे छूट गया था और जिसको उसके अफसरों ने छिपा रक्खा था। घटनास्थल पर पहुंचने पर उसे एक जवाहरात की पेटी मिली जिसे एक नौकर ने जंगल में छिपाकर सुरक्षित रख रक्खा था। उसका सामान लगभग चार पाँच लाख रुपये की लागत का था। यह सुरक्षित रूप से आगरा ले जाया गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दरबार में पहुंचकर उसने देखा कि अकबर उससे बहुत क्रुद्ध है। वह समझता था कि उसने अपने मालिक अबुलफजल की रक्षा करने में उपेक्षा की है और उसको बड़े भय के साथ यह मालूम पड़ा कि बादशाह ने आदेश दिया है कि "असद को मेरे गुसलखाने में ले आओ ताकि मैं अपने ही हाथ से उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालूं।" वास्तविकता की छानबीन करने पर बादशाह शान्त हुआ और फिर उससे खूब बातें करने लगा। तब असद को खिलत प्रदान की गई और थोड़े समय बाद ही वह बादशाह के अंगरक्षकों का अफसर बना दिया गया। उसे एक जायदाद भी प्राप्त हो गई जो अपराधी शाह अलीखां से छीनी गई थी। इससे उसको प्रथम वर्ष सत्रह हजार की, दूसरे वर्ष बीस हजार की और तीसरे वर्ष तेईस हजार की आय हुई। कुछ अर्से बाद अबुलफजल की हत्या के सिलसिले में उसको राय रायाण के डेरे में तहकीकात करने के लिए भेजा गया। कारण यह था कि नरसिंह को एक किले में बन्द कर दिया गया था परन्तु वह उसमें से भाग गया था। डेरे पर पहुंचने पर अफसरों ने भेंट देकर असद की कृपा प्राप्त करनी चाही। वे लोग अठारह हजार रुपये देना चाहते थे परन्तु उसने अस्वीकार कर दिया। राय रायान ने उसका बड़ा लिहाज रक्खा और असद ऐसे नतीजे पर पहुंचा जिससे मामला शान्त हो गया और सब सम्बन्धित लोगों को सन्तोष हो गया। वह लिखता है कि उसे राय रायाण ने विदाई में एक घोड़ा और कुछ वस्त्र दिए। एक हाथी भी भेंट किया गया था परन्तु उसने लेने से मना कर दिया। दरबार में वापस आकर उसने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसका बादशाह ने अनुमोदन किया और इससे अभियुक्त अफसरों को और उनके मित्रों को बड़ी प्रसन्नता हुई। वह कहता है कि "यह मेरी प्रथम नियुक्ति थी और इसका परिणाम इतना सुखद हुआ कि न तो किसी को लज्जित होना पड़ा और न कोई सम्मानित हुआ। मुझे बड़ी प्रसन्नता और अच्छा पुरस्कार प्राप्त हुआ। मैं फिर बादशाह की निजी और गोपनीय सेवा करने लगा और प्रतिदिन मुझ पर उसकी कृपा बढ़ने लगी। अन्त में मुझे भेंटों का कोषाध्यक्ष नियुक्त किया गया। यह पद मेरे लिए बड़ा अनुकूल था।"

इस पद पर वह कुछ ही मास रहा तब बादशाह ने उसको दक्षिण में दूत कार्य के लिए भेज दिया। 1009 हिजरी में अकबर ने मीर जमालुद्दीन हुसैन को बीजापुर इसलिए भेजा था कि वह शहजादा दानियाल और बीजापुर के सुलतान की लड़की के विवाह की व्यवस्था करे। अब असद के सुपुर्द यह काम हुआ कि वह मीर और प्रतिश्रुत दुल्हन को वापिस लाए। यह 1013 हिजरी की या उससे कुछ ही पहले की बात है क्योंकि विवाह उसी सन् में हुआ था। उसके दिए हुए निर्देश अवतरणों में मिलेंगे। अपने व्यय के लिए उसे बीस हजार रुपये दिए गये थे। बरार पहुंचने पर शहजादा दानियाल ने उसकी खातिर की और उसने तथा उसके अमीरों ने उसे एक लाख रुपये, पचास घोड़े और दस ऊँट दिये। जब उसने बीजापुर के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

राज्य में प्रवेश किया तो मीर जमालुद्दीन ने और आदिलखां की लड़की ने उसकी खातिर की।

इसके बाद तुरन्त ही वह बीजापुर पहुंचा और सुलतान से मिला। वह लिखता है कि सुलतान मराठी बोलता था। यद्यपि वह फारसी समझता तो था परन्तु वह उसको भली-भाँति नहीं बोल सकता था। अकबर ने असद को आदेश दिया कि बीजापुर में केवल एक ही दिन ठहरे। इससे सुलतान को बड़ी परेशानी हुई। उसे इस बात का भी खेद हुआ कि ग्वालियर उसे नहीं मिला। उसने असद से कहा कि अपना कार्यक्रम बदल दे और दो लाख पैंगोड़ा ले ले। यद्यपि असद ने लिखा है कि वह रिश्वत से बहुत ऊँचा था परन्तु उसको प्रत्यक्ष रूप से इस बात पर भी आश्चर्य होता था कि वह इतना नर्म क्यों है। वह लिखता है कि "मैंने दो लाख पैंगोडा में से एक भी नहीं छुआ। यह सब राशि छः लाख रुपये के बराबर होती थी।" मीर जमाल इसके लिए उसे दूषित समझता था। तब असद को मालूम हुआ कि मीर दक्खिन से क्यों नहीं जाना चाहता। उसको प्रतिवर्ष बीजापुर और गोलकुन्डा से तीन या चार लाख पैंगोड़ा मिला करते थे।

बादशाह को क्या भेंट दी जाय इस विषय पर सुलतान और असद में बातचीत हुई और इस पर बहुत खींचतान हुई। सुलतान ने पूछा कि बादशाह को क्या चीज सबसे अच्छी लगती है तो उत्तर मिला कि "दुर्लभ रत्न और अच्छे हाथी।" अन्त में कुछ रत्न और एक हाथी भेंट किया गया और असद रवाना होने के लिए तैयार हो गया। स्वयं उसको एक लाख लारी प्रदान किए गए जो पैंतीस हजार रुपये के बराबर होते हैं। इसके अतिरिक्त उसे एक हाथी और कुछ घोड़े भी दिए गये परन्तु उसने लेने से मना कर दिया। असद अकबर के दीन इलाही का अनुयायी था और इसका तमगा पहने हुए था। सुलतान ने उसको लेकर देखा और कहा कि मैं भी बादशाह का शिष्य हूँ और मैं इसको रखना चाहता हूँ। असद ने बड़ी कठिनता से और यह वायदा करके वह तमगा वापस लिया कि उसके लिए भी वह बादशाह से एक तमगा ले लेगा। जब वह चला गया तो सुलतान ने उसके पीछे से 9000 पैंगोड़ा भेजे। बीजापुर के वर्णन का एक छोटा-सा अवतरण इस पुस्तक में से दिया गया है।

शहजादी और मीर जमालुद्दीन वापसी पर उसके साथ आये। परन्तु जब वे सीमा की नदी पर पहुंचे तो शहजादी और सैनिकों ने आगे बढ़ने में कुछ आगा-पीछा किया। रात्रि में बड़ी आँधी आई जिससे डेरे गिर गये। बीजापुर के साथ आए हुए सैनिक इधर-उधर हो गये और शहजादी भाग गई। किन्तु प्रातःकाल मीर जमालुद्दीन उसे और उसके संरक्षक को लज्जित करके वापस ले आया। इससे यह स्पष्ट है कि शहजादी और उसके हितैषी इस विवाह को पसन्द नहीं करते थे। शहजादी की वापसी पर असद ने यात्रा जारी रखी और शहजादी को अहमदनगर ले गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शहजादा दानियाल उससे कृपापूर्वक मिला और खिलत तथा शस्त्र उसको प्रदान किये। शहजादे ने आदेश दिया कि उसे दस हजार रुपये दिए जाएँ परन्तु उसको केवल 2000 मुजफ्फरी ही प्राप्त हुए। मीर जमालुद्दीन को शहजादे के पास छोड़कर वह आगरे की ओर रवाना हुआ। उसके साथ वह हाथी था जो सुलतान बीजापुर ने बादशाह के लिए भेजा था। इस जानवर को प्रतिदिन दो मन शराब पीने की आदत थी। असद को यात्रा के दौरान शराब नहीं मिल सकी। इसलिए उसे कीमती पुर्तगाली शराब पिलानी पड़ी। यह शराब वह बीजापुर से बादशाह की नजर करने लाया था।

जब वह दरबार में पहुँचा तो उससे कृपापूर्वक भेंट की गई। उसने लिखा है कि जिस रात को वह पहुँचा अकबर ने क्रोध के आवेश में एक बेचारे नौकर को किले की दीवार से नीचे फिंकवा दिया था और अपने खानसामा को लज्जित करके निकाल दिया था। असद को इस रिक्त स्थान पर नियुक्त किया गया। उसका काम यह था कि लोगों को बादशाह के सामने पेश करता था। इस पद पर वह एक वर्ष तक रहा। उसको दो सौ पचास का मनसब प्रदान किया गया और अलीखाँ की जायदाद में से उसे सत्तरह हजार रुपया और दिया गया। वह इससे सन्तुष्ट था। उसने लिखा है "वह कैसा समय था और लोगों के लिए कैसी नियामत थी।" उसकी पुस्तक के इस भाग से दो अवतरण लिए गए हैं। एक अवतरण में तो नौकर के पाशविक वध का वर्णन है और दूसरे में असद द्वारा तम्बाकू चालू करने का वृत्तान्त है। ऐसा प्रकट होता है कि बादशाह के दरबार में उस समय तक तम्बाकू को कोई नहीं जानता था।

इसके पश्चात् असद को दक्षिण के चार सूबों के लिए राजदूत नियुक्त किया गया। इसका उद्देश्य आगे के अवतरण में दिया हुआ है। उससे वायदा किया गया था कि उसकी वापसी पर उसे एक हजार का मनसब दिया जायगा परन्तु यह उसको कभी प्राप्त नहीं हुआ। वह अपने काम पर रवाना हुआ और चन्दा घाटी पर पहुँचने पर राजा भोज के आदमियों से उसकी कुछ लड़ाई हुई। उन्होंने उससे साधारण चुंगी माँगी थी परन्तु असद रात में ही आगे बढ़ गया। उज्जैन पहुँचने पर उसने बादशाह की मृत्यु का समाचार सुना। उसने अपनी यात्रा जारी रखी और बुरहानपुर पहुँच गया। उसने लिखा है कि वहाँ और अन्यत्र अमीरों में घोर व्यभिचार और जुआ प्रचलित था। उसने स्वयं भी बड़े जोश से इसमें प्रवेश किया। जहाँगीर के राज्यारोहण के बाद तुरन्त ही उसे वापस बुलाया गया और वापसी पर उसे मालूम हुआ कि नया बादशाह उससे अप्रसन्न है। तत्काल ही उसको अपने पद से हटा दिया गया। बादशाह ने कहा "मैं उसको नहीं रखूंगा। वह जहाँ चाहे जाय।" अवतरणों में अकबर की मृत्यु का और जहाँगीर के राज्यारोहण का वृत्तान्त मिलेगा।

सर एच० एम० ईलियट की हस्तलिखित प्रति में 292 पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठ पर तेरह पंक्तियाँ हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अवतरण

अबुलफजल की हत्या

मोहम्मद मुराद के पुत्र असद ने जो अल्लाह का तुच्छ सेवक है ये लिखा है कि—जब शेख मुवारक के पुत्र परम विद्वान नवाव शेख अबुलफजल के जीवन का अन्त आया और अपने समय का यह उत्तम और दुर्लल पुरुष सराय वरार के निकट जो सिरोंज के अधीन है, शुक्रवार 7 रवी-उल-अव्वल सन् 1010 हिजरी में नमाज के समय मारा गया और जब इस विपत्ति की तथा इस भयंकर घटना की सूचना बादशाह अकबर को मिली, जो ईश्वर की प्रतिच्छाया था, तो उसको अत्यन्त शोक और सन्ताप हुआ और वह खूब रोया। उस दिन और रात न तो उसने पूर्ववत् हजामत करवाई और न अफीम खाई परन्तु सारा समय रोने में बिताया। तब इस जगत सम्राट का स्नेह प्रकाश में आया। दुःख और परेशानी में उसने इन पंक्तियों के लेखक को याद किया और अपने पास बैठे हुए लोगों से कहा, "असद को क्या हो गया है।" वे लोग नहीं जानते थे कि इस पंखहीन की क्या हालत हो गई है इसलिए उन्होंने उत्तर नहीं दिया। इसी समय मिर्जा जाफर आसफखाँ अन्दर आया और अपने बादशाह का गहन शोक और सन्ताप देखकर रोये बिना नहीं रह सका। उसके मालिक ने पूछा, "असद की क्या खबर लाये हो, वह अबुलफजल के साथ था या नहीं।" उस नेक अमीर ने अपने आँसू पोंछकर नम्र निवेदन किया "असदबेग सिरोंज तक उसके साथ था परन्तु स्वर्गीय शेख ने उसको मालवे का शासक नियुक्त कर दिया था जिसको अभी जीत लिया गया था। दक्षिण से जो सेना उसके साथ थी उसने असद के पास छोड़ दी और अपने पास उन आदमियों को रखा जो गोपालदास नकता ने मालवे में भरती किये थे तव वह दरबार के लिए रवाना हो गया। असदबेग की बिलकुल इच्छा नहीं थी कि इस आज्ञा का पालन किया जाय। उसने अत्यन्त दुखित होकर ग्वालियर तक साथ जाने की आज्ञा माँगी। परन्तु शेख ने इजाजत नहीं दी और अपने अनुभवी आदमियों के साथ उसको सिरोंज में ही छोड़ दिया। यह निश्चय है कि लड़ाई के समय वह उसके साथ नहीं था।" बादशाह ने आसफखाँ को तुरन्त ही आज्ञा दी कि असद को एक फरमान लिखा जाय कि शेख के सब लोगों को सिरोंज में गोपालदास के पास छोड़कर वह अपने आदमियों के साथ यथासंथव शीघ्रातिशीघ्र दरबार में आए। आसफखाँ बैठ गया और आदेश का पालन किया तथा फिर पत्र पर अपनी मुहर लगा कर पत्र मिया गदा को दिया और आदेश दिया कि इसे वह अपने भाई के साथ सिरोंज में असद के पास भेजे और उसे उसके साथियों के साथ ले आए।

यह भाग्य का विधान था कि यह परम विद्वान इस प्रकार यात्रा करे। उसका भाग्य कुटिल था। इसलिए गोपालदास नकता की सलाह मानकर वह अकेला और अरक्षित मृत्यु के स्थान पर चला जो मैं अब वर्णन करता हूँ। "जब वह परम

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विद्वान सिरोंज नगर पहुँचा तो गोपालदास बहुत अर्से से इन इलाकों का राजा रह चुका था। उसने तीन सौ सेवन्दी सवार खड़े कर लिए थे। इनमें अधिकांश छोटे राजपूत थे जिनको बीस रुपये से अधिक मासिक नहीं मिलता था। इसी दौरान, उस विद्वान ने और हमने भी दक्षिण में राजा नृसिह देव की लूटमार का हाल सुन लिया। एक भी दिन ऐसा नहीं निकलता था। जब अब्दुलखाँ और दूसरे स्नेही मित्र इस विषय का हमारे पास पत्र नहीं भेजते हों फिर भी यह भाग्य की गति थी कि उस विद्वान ने इन पत्रों पर ध्यान न दिया। जब हम सिरोंज पहुँचे तो गोपालदास ने उसको यह बात जँचा दी कि दक्षिण से साथ आए हुए सैनिकों में से अधिकांश यात्रा के कारण बीमार हो गये हैं और थक गये हैं। इसलिए उनके लिए वहीं प्रबन्ध कर दिया जाय। उनको इन्द्रजीत बुन्देला से लड़ने के लिए असदबेग के पास छोड़ दिया जाय और वे अपने पास उन ताजा सैनिकों को ले जाय जो अभी हाल ही नियुक्त किए गए हैं। दुर्भागी विद्वान इस बेसमझ प्रस्ताव से सहमत हो गया और अपने जीवन से हाथ धोकर उसने इन ताजा सैनिकों को अपने पास रखना उचित समझा जिन्होंने कभी एक भी शत्रु का सामना नहीं किया था और उन विजयी सैनिकों को साथ नहीं लिया जिनकी एक हजार युद्धों में परीक्षा हो चुकी थी। वास्तव में इनमें से कुछ लोग तो समय पर काम के लिए पहुँचे भी नहीं। वह गदाईखाँ अफगान को और उसके पुत्र को तो अपने साथ ले गया परन्तु सैनिकों को मेरे पास छोड़ गया। यदि उनमें से सौ भी उसके साथ होते तो वह दुखद घटना कभी नहीं घटती। निस्सन्देह गदाईखाँ परखा हुआ साहसी आदमी था। परन्तु उस अकेले को ही लड़ना पड़ा। वह शत्रु पर आक्रमण करता हुआ मारा गया और उसका पुत्र आहत होकर भाग गया। जलालखाँ नामक एक दूसरे अफगान ने भी आक्रमण किया और वह काम आया। दो दूसरे अफगान सलीमखाँ और शेरखाँ बन्दी बना लिए गए और जब उन्होंने उस परम विद्वान का पता नहीं बतलाया तो उन्हें मार डाला। नवाब खानखाना का एक नौकर जिसका नाम मन्सूर चाबुक था अपने पिछले पद का त्याग करके सिरौंज आ गया था। उसने फकीर होने का बहाना बनाया था। वह बबरची खाने में नौकर था। उसने भी आक्रमण किया और मारा गया। वह तुर्कमान जाति का था। मिर्जा मोहम्मद खानबेग और हब्शी खासाखेल भी मारे जाने वालों में थे। जब नवाब छिद कर गिरा तो उसने उस राजपूत को मार दिया जिसने उसे आहत किया था। फिर वह दूसरे शत्रु की ओर लपका। उसमें अभी जीवन शेष था कि नरसिंह अपने प्रधान दल के साथ आ पहुँचा। पहले तो उसने जब्बार को पैरों के तले कुचला और फिर उस महान अल्लामी का सिर काट लिया जिनका मैंने ऊपर उल्लेख किया है। उनके अतिरिक्त नये और पुराने सब सैनिक बच कर भाग गये। फजलखाँ बदखशी के दामाद मिर्जा मोहसिन ने उन्हें सलाह दी थी कि डाकू लोग घात लगाये बैठे हैं। यदि वे उस समय रवाना हो जाते तो सुरक्षित आ पहुँचते परन्तु जैसा भाग्य का विधान था वैसा हुआ। इसमें कोई चारा नहीं था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जिस दिन स्वर्गीय अल्लामी ने मुझे सिरौंज में खिलत और घोड़ा देकर गोपालदास कश्मीरी, मेंहदी अली और समस्त सेवकों के समक्ष आंखों में आँसू भरकर विदा किया तो मैंने प्रार्थना की थी कि जिन सैनिकों को वह मेरे पास छोड़ रहा है उन्हें लेकर मुझे उसके साथ ग्वालियर तक चलने की अनुमति हो जाय। परन्तु वह किसी भाँति राजी नहीं हुआ क्योंकि उस महापुरुष की घड़ी आ पहुँची थी और भाग्य चाहता था कि वह रवाना हो जाय। जब वह प्रस्थान के लिए सवार हुआ तो मैं भी उसके पीछे-पीछे चलने के लिए घोड़े पर चढ़ा परन्तु उसने मुझे बिल्कुल मना कर दिया। मुझे अपने घर में से भी नहीं निकलने दिया और वहीं से वापस कर दिया।

जब अल्लामी सराई बरार आया और घोड़े से उतरा तो एक फकीर ने आकर नरसिंह बुन्देला के विषय में सब बातें बतलाई और कहा कि अगले दिन वह रास्ते में उस पर आक्रमण करना चाहता है परन्तु अल्लामी ने उसको कुछ रुपये देकर चलता किया। इसी प्रकार वह ऐसे लोगों को रुपया दिया करता था। उस रात को उसने अपनी सुरक्षा की कोई चिन्ता न की। शुक्रवार को वह प्रातःकाल उठा और वजू करके उसने सफेद कपड़े पहने, जैसे वह शुक्रवार को पहना करता था। उन पर सोने का काम था। यह विजय-वेष था। फिर उसने शिष्टतापूर्वक उन लोगों को विदा किया जो पास के प्रान्तों से जागीरदारों ने तथा करसंग्रह करने वालों ने उसकी सेवार्थ भेजे थे। भेजने वालों में एक मिर्जा रुस्तम था जिसकी जागीर पास ही थी। उसने चालीस-पचास सवार भेजे थे। दूसरा काला बाग का हाकिम शेख मुस्तफा था जिसके साथ अंगरक्षक थे और इसी प्रकार के अन्य लोग थे। सब मिलकर लगभग दो सौ सवार थे। यदि अल्लामी इनको अपने साथ रखता तो ये बड़ी सेवा करते परन्तु अब शोक करना निष्फल है, जब भाग्य आसमान से अपनी काली छाया डालता है तो योग्य से योग्य पुरुष भी प्रायः बधिर और मूक हो जाते हैं।

ज्योंही सूर्य उदय हुआ तो वह उदीयमान सूर्य याकूबखाँ के साथ, जिसके साथ उस समय बड़ी घनिष्ठता थी, रवाना हुआ। प्रस्थान के ढोल की आवाज सुन कर सेवक लोग चलने को तैयार हुए। अबुलफजल का निजी डेरा अभी खड़ा ही था कि सराय के पीछे से शोर करते हुए बुन्देले सैनिक प्रकट हुए और डेरे पर टूट पड़े। सब सेवक लोग, जो तैयार थे, सवार होकर रास्ते से बचकर भाग गये। मिर्जा मुहसिन बदखशी सवार होकर लुटेरों की ओर आगे बढ़ा। वह देखना चाहता था कि वे कितने हैं। जब वह थोड़ी दूर पहुंचा तो उसका नरसिंह के मुख्य दल से सामना हो गया। एक ऊँचाई से उसने इन लोगों को ध्यान से देखा और फिर साहसी पुरुष की भाँति उन सवारों और प्यादों में से रास्ता चीरकर वह अल्लामी के पास जा पहुंचा। ज्योंही वह अल्लामी के रक्षकों के निकट पहुंचा तो उसने एकदम देख लिया कि वे बिल्कुल बेखबर हैं और निश्चित होकर अव्यवस्थित ढंग से चल रहे हैं, उनके पास शस्त्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भी नहीं हैं। आगे जाकर उसने लुटेरों की खबर सुनाई। सुनते ही शेख ने ठहरकर पूछा कि क्या करना चाहिए? मिर्जा ने सलाह दी कि जल्दी-जल्दी कूच करना चाहिए। तब शेख ने कहा, "तुम्हारा अभिप्राय यह है कि हम भागें।" उसने उत्तर दिया, "भागें नहीं, केवल इस तरह चलें।" घोड़े के ऐड़ लगाकर वह तेजी से आगे बढ़ा और बोला, "हम इस भाँति चलें जैसे मैं चल रहा हूँ उसी प्रकार ग्वालियर तक तुम सब लोग चलो।"

इस प्रकार जब कुछ देर तक अल्लामी ठहरा रहा तो लुटेरों के एक दल ने निशान और नक्कारे का हाथी पकड़ लिया, और वे रक्षकों पर टूट पड़े। इस प्रकार लड़ाई शुरू हो गई। शेख वापस फिरा और नक्कारा, निशान तक पहुँचा ही था कि नरसिंह की सेना का शोर सुनाई दिया। उसमें पाँच सौ कवचधारी सवार थे। गदाईखाँ अफगान अन्य कई सशस्त्र सवारों के साथ आगे चल रहा था। उसने झपट कर शेख के घोड़े की लगाम पकड़ी और चिल्ला कर कहा, 'तुम यहाँ क्या कर रहे हो? तुम एकदम हटो, यह लड़ने का काम तो हमारा है।' यह कहते हुए वह वीर अपने पुत्र और अन्य लोगों के साथ जिनका पहले उल्लेख हो चुका है, शत्रु पर टूट पड़ा और मारा गया। इसी समय किसी ने कहा, डाकू सशस्त्र हैं और तुम्हारे साथी शस्त्रहीन हैं। अच्छा यह होगा कि हम बचकर पहाड़ियों में जा छिपें। इस प्रकार हम अपने प्राण बचा सकते हैं। उसने शेख के घोड़े की लगाम पकड़ी और वापस घूमा। उसी समय तत्काल डाकुओं ने प्रहार किया और जहाँ-जहाँ वे पहुँच सके सबको भालों से छेद दिया। एक राजपूत ने शेख की पीठ पर ऐसा भाला मारा कि सीने में निकल आया। वहाँ पर एक छोटी सी नदी थी। शेख ने इस पर घोड़ा कुदाना चाहा परन्तु वह ऐसा करते हुए गिर पड़ा। जव्वार खासा खेल पीछे ही था। उसने उस राजपूत को मार डाला और फिर घोड़े से उतर कर उसे रास्ते से दूर ले गया परन्तु घाव घातक था। इसलिए शेख धराशायी हो गया।

ठीक उसी समय अपने शेष राजपूतों के साथ नरसिंह आ गया। जव्वार एक वृक्ष के पीछे छिप गया। परन्तु शेख के घोड़ों से नरसिंह का ध्यान आकर्षित हो गया और वह ठहरा। शेख की हथिनी का महावत उसके साथ था। उसने आहत शेख दिखा दिया। देखते ही नरसिंह घोड़े से उतरा और उसका सिर घुटनों पर रखकर अपनी पोशाक से उसके मुँह को पोंछने लगा। जव्वार वृक्ष के पीछे से देख रहा था कि नरसिंह को दया आ रही है। उसने आगे आकर सलाम किया। नरसिंह ने पूछा कि यह कौन है? उसी समय शेख ने अपनी आँखें खोलीं और अपने नौकरों से कहा कि शाही फरमान लाओ और फिर शेख ने कहा, "परम विजयी स्वामी ने तुम्हें शिष्टतापूर्वक बुलाया है।" शेख ने उसकी ओर घृणा से देखा। नरसिंह ने शपथ-पूर्वक कहा कि वह उसको सुरक्षित उसके पास ले जाएगा। तब शेख उसको क्रोधपूर्वक गालियाँदेने लगा। नरसिंह के नौकरों ने कहा कि शेख के घातक घाव लग चुका

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

है इसलिए वह ले जाया नहीं जा सकेगा । यह सुनकर जव्वार ने अपनी तलवार निकाली और कई राजपूतों को मारकर वह लगभग नरसिंह के पास पहुँच गया । तव उन लोगों ने उसे मारकर पैर के नीचे कुचल दिया तथा नरसिंह शेख का सिर छोड़कर उठा और उसके साथियों ने शेख को मार डाला और उस महापुरुष का सिर काट कर रवाना हो गये । अन्य किसी का उन्होंने कुछ नहीं किया बल्कि जिनको बन्दी वना लिया था उन्हें भी छोड़ दिया ।

राय रायाण की सेना में अफसरों के आचरण की जाँच के लिए मेरी नियुक्ति

दो तीन मास पश्चात् उस सेना का समाचार मिला जो राय रायाण के नेतृत्व में नरसिंह को दण्ड देने के लिए भेजी गई थी । कई बड़े प्रसिद्ध अफसर उसके साथ थे और जियाउलमुल्क कासी उप-सेनापति था । उन लोगों ने एकदम यह समाचार भेजा कि हम नरसिंह को लगभग भगा चुके थे और चार सौ राजपूतों के साथ उसे ईराज के दुर्ग में धकेलने वाले थे, हमने किले को घेर लिया था और ऐसा मालूम होता था कि वह हमारे हाथ में आने ही वाला है । यह दुर्ग एक चौड़ी और गहरी नदी के तट पर स्थित है । इसके तीनों ओर जमीन है । सेनापति राय रायाण ने नदी की ओर का उत्तरदायित्व लिया और शेष अफसरों को शेष तीनों ओर नियुक्त किया, तो ऐसा हुआ कि आधी रात को जब हम लोग गहरी नींद में सो रहे थे तो राजपूत वाहर निकले और नदी की ओर से अपने घोड़े बढ़ाकर किनारे पर चढ़ गये और एक उतार घाट पर नदी को पार कर गये । वे राय रायाण के हाथियों में होकर निकल गये और आपके सेवकों को और मुखिया लोगों को जब इस घटना का पता लगा, उससे पहले ही वह (नरसिंह) बहुत दूर निकल गया । इस युक्ति से वह बचकर भाग गया ।

जब यह समाचार पढ़ा गया तो बादशाह को, जो उसके खून का प्यासा था, अत्यन्त क्रोध आया और उसने शेख फरीद से कहा "तुम जाकर पता लगाओ कि यह किसकी भूल से हुआ क्योंकि राय रायाण कहता है कि नरसिंह ग्वालियर के राजा की पंक्तियों में होकर भागा है और राजा लिखता है कि वह सेनापति के डेरे में होकर भागा है। साथ ही उप-सेनापति का कहना है कि दगाबाजी चल रही है क्योंकि वह स्वयं ही पूर्णरूप से फँस गया था । सारांश यह है कि एक दूसरे का अपराध बतलाता है । शेख ने निवेदन किया कि अल्लामी का भाई शेख अब्दुल खैर जांच करने में बड़ा योग्य है ।" उसका नाम सुनते ही बादशाह ने कहा, "यह बिल्कुल ठीक है । असद को बुलाओ ।" संयोगवश मैं उस रात्रि को पहरे पर था और आका-मुल्ला के साथ पहरेदारों के कमरे में बैठा हुआ था ।

लगभग आठ बजे सन्देशवाहक मेरे लिए आदेश लेकर आये कि मुझे तुरन्त ही किले में बुलाया गया है । मेरी सूचना मिलते ही बादशाह ने मुझे बुला लिया ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मैंने सलाम किया और शाही चेहरे पर क्रोध के चिह्न देखकर मैं भयभीत हो गया। मैंने समझा कि मेरा बध होने ही वाला है। मेरे त्रास को देखकर बादशाह और दरबारी मुस्कराये और समाचारों को मेरी ओर फेंक कर पढ़ने के लिए आदेश दिया। मैंने पहले राय रायाण का पत्र पढ़ा और शेष पत्रों को शुरू ही किया था कि मुझसे पूछा गया कि मैंने उनको समझ लिया है या नहीं। मैंने उत्तर दिया कि कुछ समझ लिया है। उसने कहा, "अब यह तो हो चुका। तुम डेरे में जाओ और पता लगाओ कि किसका अपराध है और सब मामले की जाँच करो। इस घटना से मैं बड़ा परेशान हूँ इसलिए मैंने तुमको भेजने का निश्चय किया है।" मैंने सलाम किया और उत्तर दिया कि "मैं भरसक प्रयत्न करूँगा और कोई कोशिश उठा न रखूंगा।"

जब राजा और अन्य अफसर एकत्र हो गये तो मैंने एक चादर बिछाई। यह कपड़ों के टुकड़ों को परस्पर सींकर बनाई गई थी। इस पर इराज के दुर्ग का नक्शा बना हुआ था। एक ओर नदी थी और तीन दरवाजे और मीनारें थीं। प्रत्येक सरदार का डेरा अंकित था और उसकी सेना की संख्या दर्शाई गई थी। तब मैंने जिआउलमुल्क को बुलाया और कहा कि जहाँ-जहाँ जिस सरदार की सेनाएँ थीं वहाँ उनके नाम लिख दिये जाएँ और उनसे अपनी मोहर लगवाई जाय। मैंने उस स्थान पर भी चिह्न लगाया जहाँ से नरसिंह निकला था और वह स्थान भी बताया जहाँ से उसने नदी पार की थी। जब अमीरों ने इस चादर पर अपनी-अपनी मोहरें लगा दीं तो मैंने उनसे पूछा कि क्या ठीक ऐसी ही स्थिति उन्होंने लिखकर भेजी है। इत्र लगाने और पान खाने के बाद में सबसे विदा हुआ। मोहम्मदखाँ तातार का पुत्र, जो मेरा निकट सम्बन्धी था, इसलिए नियत किया गया था कि एक हजार सवारों के सहित वह मुझे ग्वालियर तक पहुंचाये। मैं मुसाहिब के साथ दरबार में गया और रामदास से सूचना भिजवाई। वह मुझे सबसे आगे के स्थान तक ले गया और मैंने सलाम किया। बादशाह ने बड़ी अधीरता के साथ मुझे बुलाया और मैंने एक मोहर और नौ रुपये नजर करके सिजदा किया। बादशाह ने तुरन्त ही पूछा, "अपराध किसका था ?" मैंने सलाम करके उत्तर दिया, 'मैं सारा विवरण निवेदन करूँगा।" परन्तु उसने आग्रह किया कि मैं बतलाऊँ कि मेरे विचारानुसार किसका अपराध था। उसकी अधीरता को देखकर मैंने उत्तर दिया, "मैं नहीं कह सकता कि किसी ने जान-बूझकर भूल की है। परन्तु इसमें बड़ी उपेक्षा हुई है और सबका समान अपराध है। यह मेरी तुच्छ सम्मति है।" शेख फरीद ने कहा, "उपेक्षा भी अपराध है।" मैंने उत्तर दिया, "अपराध-जान बूझकर किया जाता है और उपेक्षा में कोई बुरा इरादा नहीं होता। वह ऐसे ही हो जाती है।" मैं शेख से कुछ और कहना चाहता था परन्तु बादशाह ने कहा, "असद ठीक कहता है।" उसके कहने के ढंग से यह स्पष्ट था कि वह बहुत खुश था। मैंने देखा कि मेरे शब्द उसको पसन्द थे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मीर जमालुद्दीन को दक्षिण से वापस लाने के लिए मेरी नियुक्ति

जब बादशाह बुरहानपुर में था तो उसने सईद मीर जमालुद्दीन इन्जू को आदिलखाँ सवाई के पास विवाह सम्बन्ध के लिए भेजा था। इस सुलतान ने बादशाह का अनुयायी होना स्वीकार कर लिया था, इसलिए यह उचित समझा गया था कि उसकी पुत्री का भाग्यशाली शहजादे दानियाल से विवाह करके उसका दर्जा बढ़ाया जाय। इस काम के लिए सईद बहुत पहले चला गया था। परन्तु उसने ऐसा अनावश्यक विलम्ब किया कि बादशाह उससे अप्रसन्न हो गया और जिस समय की मैं बात कह रहा हूँ उस समय खानखाना और सैयद ने बादशाह के पास अपनी मिली-जुली रिपोर्ट भेजी, जो अनुचित भावना से लिखी गई थी और जिसमें और भी विलम्ब करने के कुछ बहाने बतलाए गए थे। इससे बादशाह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और बोला, "इसने सुलतान को शायद स्वामिभक्ति से भी हटा दिया है। ईश्वर की इच्छा से मैं उसको यहाँ लज्जित करके बुलाने के लिए किसी को भेजूंगा।" तब उसने अपने सेवकों की ओर दृष्टि डाली और जब उसकी आँख मुझ तुच्छ सेवक पर पड़ी तो उसने मुझे बुलाकर कहा और अपने बड़े-बड़े अफसरों की कुछ परवाह न की। "मैं उसको बुलाने के लिए असद को भेजंगा। वह उसको खाने-पीने भी नहीं देगा और वापस ले आएगा।" फिर मेरी ओर देखकर उसने कहा, "मैंने तुमको दक्खिन के लिए नियुक्त किया है। इस सेवा से तुमको विपुल धन प्राप्त होगा।" कुछ ही दिनों में मैंने सब तैयारी कर ली और शाही फरमान तैयार हो गया। आदिलखाँ बीजापुरी के नाम बड़ी शिष्टता का कृपापूर्ण फरमान लिखा गया। उसमें यह लिखा था, "सईद के पत्रों से हमें विदित हुआ है कि तुम ग्वालियर का किला लेने के इच्छुक हो। बहुत अच्छा। यदि इस विषय में तुम वास्तव में चिन्तित हो तो अपने दिल की बात हमारे स्वामिभक्त सेवक असद से कहो और हम तुम्हारी इच्छानुसार आदेश जारी कर देंगे और यह नगर तुमको सदैव के लिए प्रदान कर देंगे ताकि तुम अपना हाकिम वहाँ नियुक्त कर दो।" मैंने जमालुद्दीन को यह समाचार सुनाया, "यदि तुम असद के साथ दरबार में वापस लौटोगे तो तुम देखोगे कि तुम्हारे साथ और तुम्हारे बच्चों के साथ कैसा व्यवहार होता है।"

बीजापुर का वर्णन

हज्जा नामक महल इस प्रकार बना हुआ था कि हर एक मकान में दोहरा चौक था। जिस मकान में दो चौक होते हैं उसको वहाँ हज्जा कहा जाता है। मेरे मकान के दरवाजे के चारों ओर बड़ी-बड़ी इमारतें थीं। यह स्थान बड़ा स्वास्थ्यप्रद और हवादार था। यह नगर के अन्दर एक खुले हुए स्थान में स्थित था। उत्तर की ओर का दरवाजा बाजार के पूर्व की ओर था और बहुत बड़ा था। यह तीस गज चौड़ा और लगभग दो कोस लम्बा था। प्रत्येक दुकान के सामने सुन्दर हरे वृक्ष थे और सारा बाजार साफ-सुथरा था। यह दुर्लभ चीजों से सम्पन्न था। ऐसी दुर्लभ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कि न किसी ने कहीं देखी होंगी और न सुनी होंगी। वहाँ बाजारों, जौहरियों, शस्त्रकारों, भटियारों, मच्छी वालों आदि की दुकानें थीं। मैं इस बाजार के एक हिस्से का वर्णन लिखता हूँ जिससे समस्त बाजार का अनुमान हो सकेगा।

जौहरियों की दुकानों में सब प्रकार के जवाहरात थे जो विभिन्न वस्तुओं पर जड़े हुए थे। इनमें खंजर, चाकू, आईने, हार आदि थे। जवाहरात के तोते, फाखता, तीतर आदि पक्षी बने हुए थे। इन सब पर बहुमूल्य रत्न लगे हुए थे और इन्हें आलमारियों में सजा रक्खा था। इनको एक पंक्ति पर दूसरी पंक्ति लगी हुई थी। इस दुकान के पास ही एक भटियारे की दुकान थी जिसमें विविध प्रकार के खाद्य-पदार्थ रक्खे हुए थे और वे भी आलमारियों में एक-दूसरे के ऊपर इसी प्रकार सजाए हुए थे। उसके आगे एक बजाज की दुकान थी जिसमें सब प्रकार के कपड़े इसी भाँति आलमारियों में रक्खे हुए थे। फिर एक शराब के व्यापारी की दुकान थी। इनमें कई प्रकार के चीनी के बर्तन, बहुमूल्य चमकती हुई बोतलें और बढ़िया प्याले रक्खे हुए थे। इनमें दुर्लभ और उम्दा शराब भरी हुई थी और इन्हें आलमारियों में सजा रक्खा था। दुकान के सामने शराब के भरे हुए घड़े रक्खे थे। इसी दुकान के पास फल वाले की दुकान थी जिसमें सब प्रकार के फल और मिठाइयाँ थीं। इनमें स्वादिष्ट मिठाइयाँ, बादाम और दूसरे मेवे रक्खे हुए थे।

दूसरी ओर शराब की दूकान थी और इसी के पास गाने वाली, नाचने वाली सुन्दर स्त्रियाँ विविध प्रकार के अलंकार पहने हुए खड़ी रहती थीं। इनके चेहरे बड़े सुन्दर थे और ये सब कुछ करने के लिए तैयार थीं। सारांश यह है कि सारा बाजार शराब, सौन्दर्य, नाच, इत्र, जवाहरात और खाद्य-पदार्थों से भरा हुआ था और सब ओर बड़ी-बड़ी हवेलियाँ थीं। एक बाजार में मैंने देखा कि हजारों लोग शराब पी रहे थे और नर्तकियों, प्रेमियों और विलासप्रिय लोगों के झुण्ड लगे हुए थे। कोई किसी से लड़ता-झगड़ता नहीं था और यह हाल रोज बना रहता था। शायद इस विस्तृत संसार में किसी अन्य स्थान पर किसी यात्री को ऐसा आश्चर्यजनक दृश्य देखने को नहीं मिलेगा।

एक नौकर को बुर्ज से फेंक देने के लिए अकबर का आदेश

उस समय शाम की नमाज के बाद बादशाह लम्बे अर्से के लिए महल में चला जाता था और इस अर्से में सेवक और दरबारी भी चले जाते थे और जब बादशाह बाहर निकलता था तो सब एकत्र हो जाते थे। उस रात्रि को वह समय से पूर्व बाहर आ गया। वह दक्षिण का समाचार सुनना चाहता था। आते ही उसने देखा कि महल में कोई नौकर नहीं है। जब वह राज-सिंहासन के पास आया तो उसने एक भाग्यहीन नौकर को देखा जिसका काम बत्ती जलाने का था। वह साँप की भाँति कुन्डली बनाकर शाही पलंग के पास ऐसा निश्चिंत सो रहा था मानों मर गया हो। उसे देखकर बादशाह को क्रोध आया और उसने आदेश दिया कि इसे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बुर्ज से नीचे फेंक दिया जाय । इससे उसके हजारों टुकड़े हो गए । जब बादशाह को क्रोध आ रहा था तो बेचारा ख्वाजा अमीरुद्दीन, जिसका उस समय पहरा था, दिखाई दिया । अकबर उससे कठोरता और क्रोध के साथ बोला और उसे गालियाँ देकर तथा लज्जित करके बाहर निकाल दिया और आदेश दिया कि तत्काल रवाना होकर वह शहजादे के डेरे में पहुंचे । उसने दौलतखां को भी, जो उस समय पहरे पर था बहुत बुरा-भला कहा और लज्जित किया । रामदास को भी इस दुर्भाग्य का कुछ हिस्सा मिला परन्तु उसको इतना कठोर दण्ड नहीं दिया गया । तब बादशाह शाही पलंग पर बैठ गया और मैंने भयभीत होकर उससे सलाम किया ।

ज्योंही उसकी दृष्टि मुझ पर पड़ी तो उसने ख्वाजा अमीरुद्दीन का पद जिस पर वह कुछ वर्षों से था, मुझे प्रदान किया । इस पद पर उसका बड़ा सम्मान था । उसी समय बादशाह ने रामदास को बुलाया और कहा, "मैंने उस दुर्भागी का पद असद को दे दिया है देखें वह कैसा काम करता है । अब उसको बुलाओ और सलाम करवाओ ।"

तम्बाकू का प्रचलन

बीजापुर में मुझे कुछ तम्बाकू मिली । मैंने हिन्दुस्तान में कभी कोई ऐसी चीज नहीं देखी थी । मैं कुछ तम्बाकू अपने साथ लाया और मैंने जवाहरात की एक सुन्दर चिलम बनाई । अचीन में तम्बाकू का अच्छे से अच्छा पौधा तीन हाथ लम्बा था । इसे बड़ी सुन्दरता से सुखाया गया था और रंगा गया था और इसके दोनों सिरों पर मोती लगाए गए थे । मुझे यमन देश की बनी हुई बड़ी सुन्दर चिलम मिली । इसका अण्डे का सा आकार था । यह मैंने पत्ते से जोड़ दी तो यह सब बड़ा सुन्दर बन गया । उसको जलाने के लिए भी सोने की बत्ती बनाई गई । आदिलखां ने मुझे एक पान का बटुआ दिया था जिस पर बहुत बढ़िया काम था । मैंने इसको सुन्दर तम्बाकू से भर दिया और इस तरह से भरा कि एक पत्ते को जला देने पर सब जलते रहें । फिर इसको एक चाँदी की तश्तरी पर रक्खा । मैंने एक चाँदी की नली बनवाई और पत्ते को उसमें रख दिया और फिर उसको लाल मखमल से ढक दिया ।

मेरी भेंटों से बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ और मुझसे पूछा कि इतने थोड़े समय में इतनी चीजें मैंने कैसे इकट्ठी कर लीं । जब उसकी दृष्टि उस तश्तरी, नली और उससे लगी हुई चीजों पर पड़ी तो उसने अचम्भा प्रकट किया और तम्बाकू को ध्यान से देखा । बादशाह ने पूछा कि तुझे कहाँ मिली । तब नवाब खान-ए-आजम ने उत्तर दिया "यह तम्बाकू है मक्का और मदीना में यह प्रचलित है और यह हाकिम आपके पास औषधि के रूप में नजर करने के लिए लाए हैं ।" बादशाह ने उसकी तरफ देखा और मुझे आदेश दिया कि एक चिलम तैयार की जाय । फिर वह उसे पीने लगा तो उसके हकीमों ने आकर मना किया परन्तु बादशाह ने कृपापूर्वक कहा कि मुझे प्रसन्न करने के लिए वह कुछ तो पीएगा ही और अपने पवित्र मुख से दो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तीन फूकें खींचीं। हकीम बहुत घबराए और उसको अधिक फूंक नहीं मारने दीं। उसने अपने मुंह से चिलम हटा ली और खान-ए-आजम से कहा कि देखो कैसी है। उसने भी दो-तीन फूंक मारीं। तब वह अत्तार के पास गया और पूछा कि इसमें क्या विशेष गुण है। हकीम ने उत्तर दिया कि उसकी पुस्तक में इसका कहीं उल्लेख नहीं है। यह एक नई चीज है और चीन से आई है और योरोप के हकीमों ने इसकी बड़ी तारीफ़ की है। तब प्रथम हकीम बोला "वास्तव में यह अनुभूत औषधि नहीं है इसके विषय में किसी हकीम ने कुछ नहीं लिखा है। ऐसी अज्ञात वस्तुओं के विषय में हम बादशाह से क्या निवेदन कर सकते हैं। यह उचित बात नहीं है कि बादशाह इसका उपयोग करे।" मैंने प्रथम हकीम से कहा, "योरोपियन लोग इतने मूर्ख नहीं हैं कि वे इसके विषय में कुछ नहीं जानते हों। उनमें ऐसे बुद्धिमान लोग हैं जो कभी भूल नहीं करते। तुमने इसका न उपयोग किया है और न इसके गुणों को जाना है, तो फिर तुम इस पर ऐसा निर्णय कैसे दे सकते हो जिस पर हकीम, बादशाह, बड़े लोग और अमीर भरोसा कर सकें। वस्तुओं के गुणदोष की जाँच करनी चाहिए और वास्तविकता के आधार पर निर्णय देना चाहिए।" हकीम ने उत्तर दिया, "हम योरोपियन लोगों का अनुसरण नहीं करना चाहते और हम ऐसे रिवाज को ग्रहण नहीं करना चाहते जो हमारे बुद्धिमान लोगों ने स्वीकार किया हो और जिसकी परीक्षा नहीं की गई हो।" मैंने कहा यह विचित्र बात है क्योंकि प्रत्येक रिवाज कभी न कभी तो संसार में नया था ही। आदम के समय से अब तक रिवाज धीरे-धीरे जारी हुए हैं। जब लोगों में कोई नई बात जारी की जाती है और लोग उससे परिचित हो जाते हैं तब लोग उसे ग्रहण कर लेते हैं। प्रत्येक वस्तु के गुण। दोष को देखकर हकीमों को निर्णय करना चाहिए। कभी-कभी अच्छे गुण एकदम प्रकट नहीं होते। चीनी जड़ से प्राचीन काल से सब लोग नहीं जानते। इसका आविष्कार अभी हुआ है और अनेक रोगों में इसका प्रचलन होता है। जब बादशाह ने मुझे इस पर विवाद करते हुए और हकीमों से दलील करते हुए सुना तो वह अचम्भित हो गया और बहुत प्रसन्न होकर मुझे आशीर्वाद दिया और फिर खान-ए-आजम से कहा "देखा असद ने कैसी बुद्धिमानी की बात कही है। वास्तव में हमको किसी ऐसी वस्तु का परित्याग नहीं करना चाहिए जिसको अन्य देशों के बुद्धिमान लोगों ने ग्रहण कर लिया हो। यह बात काफी नहीं है कि हमें उसका उल्लेख किसी पुस्तक में नहीं मिलता। यदि हम ऐसा करेंगे तो उन्नति किस प्रकार हो सकती है।" हकीम कुछ और कहना चाहता था परन्तु बादशाह ने मनाकर दिया और मुल्ला को बुलाया। मुल्ला ने इसके अनेक गुण बतलाए परन्तु हकीम को कोई सन्तुष्ट नहीं कर सका। तो भी यह मानना चाहिए कि बहुत अच्छा हकीम था।

मैं बहुत सारी तम्बाकू और चिलमें लाया था। इसलिए मैंने ये अमीरों के पास भेज दीं और कई अमीरों ने मुझसे मँगवाईं। वास्तव में सभी अमीर थोड़ी बहुत तम्बाकू चाहते थे। इसलिए यह रिवाज जारी हो गया। इसके पश्चात् व्यापारी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लोग इसका धन्धा करने लग गए और इसलिए तम्त्राकू पीने का रिवाज प्रचलित हो गया। परन्तु बादशाह ने इसे ग्रहण नहीं किया।

दक्षिण में राजदूत

अन्त में यह आदेश हुआ कि दक्षिण के हाकिमों को अर्थात् बीजापुर, गोलकुण्डा, बिदार और करनाटक के शासकों के नाम शाही फरमान जारी किये जाँय। बादशाह ने उससे कहा, "तुम बड़ा कष्ट उठाकर पहले मीर जमालुद्दीन और आदिल खाँ की पुत्री तथा भेंटों को लेने के लिए गये थे क्योंकि यह आवश्यक था। परन्तु इस बार तुम ठाठ के साथ दक्षिण के चार सूबों में जाओ और आवश्यकतानुसार प्रत्येक सूबे में अच्छे हाथी, दुर्लभ जवाहरात, जो भी उन सूबों में मिलें एकत्र करके अपने साथ लेकर आओ। इस रुपये को तुम स्वयं अपने पास रख सकते हो। मैं तो उनके अच्छे-अच्छे हाथियों और जवाहरात के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहता। ये चीजें तुम सरकार के लिए सुरक्षित रखना। शेष मैं तुमको दे दूंगा। जब तक एक भी हाथी या दुर्लभ रत्न तुम्हारे हाथ में आने से बच जाय तब तक तुम अपने प्रयास को शिथिल मत करना।" संक्षेप यह है कि मैं इस काम के लिए भेजा गया। परन्तु मेरी नियुक्ति हुए दो महीने भी नहीं हुए थे कि मैं पृथक कर दिया गया और पुनः बादशाह ने कहा, "तुम रुपये की चिन्ता मत करो। ये सब इलाके तुम्हारे सुपुर्द हैं और तुम्हें मिलेंगे।" इन कृपालु आदेशों के अनुसार मैंने अपनी तैयारी की। यद्यपि मैं केवल दो सौ का मनसबदार था तथापि मैंने छः सौ ईराकी खुरासानी और तुर्किस्तानी सवार भरती कर लिए। इनमें से बहुत से ऊंचे दर्जे के लोग थे। मैंने प्रत्येक सेवक को एक अच्छा घोड़ा और तीन या चार मास का अग्रिम वेतन दे दिया। एक हजार और दो हजार के मनसबदार भी ऐसे अच्छे सधे हुए सवारों का दावा नहीं कर सकते थे जैसे मेरे पास थे। मैंने इसपहान निवासी शाहअली को, जो बड़ा सुन्दर लेखक था अपना बख्शी बनाया और एक सौ बन्दूकची, एक सौ पहरेदार और नौकर तथा एक सौ तीरन्दाज रखे। सारांश यह है कि मैंने बड़ी तैयारी की।

बादशाह की मृत्यु और तत्सम्बन्धी अन्य विषयों का वर्णन

जब मैं असद विपत्ति के वन में भटकता हुआ दूसरी बार बीजापुर, गोलकुण्डा, बिदर और कर्नाटक के चार प्रान्तों का दूत बनकर रवाना हुआ तो मेरी अनुपस्थिति में ही उस अनुपम बादशाह ने इस संसार से कूच कर दिया। जिस समय मुझे दूत बनाए जाने का प्रश्न उपस्थित था तो बादशाह चंचल और गिरानबार नामक दो हाथियों में लड़ाई कराने का विचार कर रहा था। बादशाह ने मुझे आदेश दिया कि हाथियों की लड़ाई देखे बिना मैं प्रस्थान न करूँ। परन्तु भाग्य कुछ और ही चाहता था और मुझे इसका खेद भी नहीं था क्योंकि जब मैं लिखूंगा कि हाथियों की उस लड़ाई के समय बादशाह को अति क्रुद्ध होना पड़ा और यह बात मेरे प्रस्थान के बाद हुई।

आगरे से मेरे रवाना होने के बाद बादशाह कुछ अस्वस्थ हो गया और थोड़े

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दिनों में ही उसका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया। जब उसकी ऐसी दशा थी तो शहजादे के दो हाथियों में, जिनके नाम चंचल और गिरानवार थे, लड़ाई हुई। जब लड़ाई हो रही थी तो शहजादा सलीम और सुलतान खुसरू के नौकरों में कुछ विवाद हो गया और दोनों शिष्टता की सीमा से बाहर निकल गए। जब बादशाह ने यह बात सुनी तो वह अत्यन्त क्रुद्ध और परेशान हुआ और इससे उसकी बीमारी इतनी बढ़ गई कि उस समय का अच्छे से अच्छा योग्य चिकित्सक कुछ न कर सका। बादशाह की रुग्ण अवस्था के समय सब कामों का भार खान-ए-आजम पर पड़ा और जब यह स्पष्ट हो गया कि कीर्तिमान सम्राट के जीवन का अन्त होने वाला है तो उसने अपने मुख्य अमीर राजा मानसिंह से सलाह की और यह ठहरा कि सुलतान खुसरू को बादशाह बनाया जाय। ये दोनों काम में दक्ष थे और बड़े शक्तिशाली थे। इन्होंने निश्चय किया कि जब शहजादा सलीम अपने दैनिक कार्यक्रम के अनुसार दरबार में सलाम करने आवे तो उसको पकड़ लिया जाय। इस प्रकार उन्होंने अपने स्वभाव का परिचय दिया और इस बात पर कुछ ध्यान न दिया कि सूर्य पर कीचड़ नहीं लीपी जा सकती और राज्य की कलम के लेख को धोखे की कलम से नहीं मिटाया जा सकता। ईश्वर के हाथ की शक्ति जिसकी रक्षा करती है वह चाहे वह स्वयं निर्बल हो, तमाम बुराइयों से सुरक्षित रहता है।

अगले दिन वह अल्लाह का प्यारा, जिसको अपने शत्रुओं की दगाबाजी का स्वप्न भी नहीं था, अपनी आदत के अनुसार दरबार में सलाम करने के लिए गया और अपने कई साथियों के साथ नाव में बैठा। वे लोग दुर्ग के नीचे पहुंचे थे और नाव में से उतरने वाले थे कि मीर जिया-उल-मुल्क कजवीनी बड़ा क्षुब्ध होकर आया और नाव में कूदा। वह बादशाह की निराशाजनक स्थिति का समाचार लाया और उन दुष्ट पुरुषों की बेईमानी और दगाबाजी की भी उसने बात सुनाई। नाव वापस रवाना हो गई और शहजादा आँसू बहाता हुआ दुखित हृदय के साथ अपने निजी महल में चला गया। इस प्रकार उस स्वामिभक्त और सच्चे हितैषी के प्रयास से इन बेईमानों का बाण निशाने पर न लगा।

जब इन दुष्ट लोगों का अपरिपक्व प्रयत्न इस प्रकार प्रकाश में आया और आकाश में उड़ने वाली चील इनके छलजाल से बच गई तो उनके विचारों का पर्दा हट गया और उन्होंने विवश होकर अपना मिथ्याचार छोड़ दिया।

अभी बादशाह के शरीर में कुछ साँस थी और उसके सेवक और अफसर दरबार-ए-आम में बड़े क्षुब्ध और सन्तप्त होकर खड़े थे। खान-ए-आजम और राजा मानसिंह बैठे हुए थे। उन्होंने सब अमीरों को एकत्र किया और सलाह की और यहाँ तक कह दिया कि शहजादा सुलतान सलीम के चरित्र को सब जानते हैं और उसके प्रति बादशाह की भावनाएँ भी बिल्कुल प्रकट हैं। वह नहीं चाहता है कि वह उसका उत्तराधिकारी बने। इसलिए हमको इस बात पर सहमत होना चाहिए कि सुलतान खुसरू राजसिंहासन पर बैठे। जब यह कहा गया तो सईदखां ने, जो एक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बड़ा अमीर था, जिसका शाही घराने से सम्वन्ध था और जो एक प्राचीन और प्रसिद्ध मुगल परिवार का वंशज था, चिल्ला कर कहा, "ये तुम क्या कहते हो। सलीमशाह जैसे शहजादे के होते हुए हम उसके पुत्र को गद्दी पर विठाएं। यह चगताई तातारों के रिवाज और कानून के विपरीत है और कभी नहीं होगा।" वह और मलिक खैर, जो एक बड़ा अमीर था और कार्यकुशल था तथा दूसरे लोग जो उनसे सहमत थे, सभा छोड़कर चले गए। खान-ए-आजम इन कुविचारों की तह में था। उसने अपना क्रोध छिपाया और कुछ नहीं कहा। सभा भंग हो गई और सबने अपना अपना रास्ता लिया। राजा रामदास कछवाहा तत्काल ही अपने आदमियों के साथ कोष की रक्षा करने के लिए चला गया और मुर्तजाखाँ किले से अपने मकान चला गया। उसने बारहां के सैयदों को और अपने आदमियों को इकट्ठा किया। इसी अर्से में मिर्जा शरीफ और मुतामदखाँ ने उससे आकर पूछा कि क्या विचार है। यह जानकर कि वे मित्र हैं उसने कहा, "मैं शहजादे के पास जाना चाहता हूँ। मुतामदखाँ भी जाने के लिए तैयार हो गया और मुर्तजाखाँ ने उसको आदेश दिया कि पहले शहजादे के पास जाय और कहे कि मैं अपने आदमियों को साथ लेकर तुरन्त आ रहा हूँ। इसलिए वह शहजादे के पास गया।

ज्योंही मीर जिया की सलाह के अनुसार शहजादे ने अपने महल में प्रवेश किया तो सब मूर्ख लोग उसके चारों ओर घिर गए और यह कहकर उसे डराने लगे 'आप यहाँ निश्चिन्त होकर क्यों बैठे हैं, आपके शत्रु सब काम पूरा कर चुके हैं और सुलतान खुसरू को राजसिंहासन पर विठा चुके हैं, वे कहते हैं कि अव इस मकान पर तोपें चलाई जायगी।" उनकी बुरी सलाह का शहजादे पर प्रभाव होने ही वाला था और वह भागकर अपनी जान बचाने के लिए नावों के लिए आदेश देने ही वाला था कि उसका एक सर्वोत्तम सेवक अकनुद्दीन रोहिला, जिसके पास वहुत से आदमी थे और जो बड़ा साहसी पुरुष था, आया और उससे कहा कि शान्त रहे और दो घण्टे तक प्रतीक्षा करके देखे कि क्या होने वाला है। शहजादा इस वहादुरी की सलाह को सुन ही रहा था कि मिर्जा शरीफ ने एकदम अन्दर आकर कहा कि उसके शत्रुओं की सभा भंग हो गई और मुर्तजाखाँ उसका साथ देने के लिए आ रहा है। इससे शहजादे को बड़ा हर्ष हुआ और वह अपने आदमियों को उत्साहित करने लगा। तव फरावेग ने आकर सलाम किया और मीर मुर्तजाखाँ भी वहुत से नौकरों को और वराह के नेक सैयदों को लेकर आया और सलाम करके उत्सव मनाने के लिए ढोल वजाने लगा। वादशाह की शोकजनक स्थिति के कारण शहजादे ने वाजा बन्द करवा दिया परन्तु मुर्तजाखाँ को एक खिलत तथा जड़ाऊ खंजर प्रदान करके सम्मानित किया। तव लोग एकत्र होने लगे। हर व्यक्ति यही चाहता था कि वह सबसे पहले पहुंचे। अन्त में सायंकाल को खान-ए-आजम स्वयं लज्जित होकर सलाम करने आया। शहजादे ने उसके दुर्व्यवहार की ओर कुछ ध्यान न दिया और उस पर शाही कृपा की।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जब राजा मानसिंह ने स्थिति में यह परिवर्तन देखा तो वह सुलतान खुसरू को अपने साथ अपने महल में ले गया और अगले दिन भागकर बंगाल जाने के इरादे से उसने नावें तैयार करवाईं। ज्योंही शहजादा मामले की गतिविधि के विषय में निश्चित हुआ त्योंही उसने वीर मुर्तजाखां के नेतृत्व में बड़े-बड़े अमीर एकत्र किए और उनके साथ निर्भय होकर वह किले में गया और मृतप्राय: बादशाह के निकट पहुंचा। उसमें अब भी सांस बाकी था। मानो वह इस यशस्वी शहजादे से मिलने की प्रतीक्षा कर रहा हो। शहजादे ने प्रवेश करते ही बादशाह के कदमों में सिर झुकाया और देखा कि उसको अन्तिम पीड़ा हो रही है। बादशाह ने एक बार फिर अपनी आंखें खोलीं और लोगों की ओर संकेत किया कि शहजादे को वह पगड़ी और खिलत पहना दी जाय जो उसके लिए तैयार की गई है और उसकी कमर में शाही खंजर बांध दिया जाय। तब सेवकों ने सिजदा करके स्वामिभक्ति प्रकट की और उसी क्षण बादशाह ने भी जिसके सब पाप क्षमा हो चुके थे, ईश्वर को प्रणाम किया और आंखें बन्द कर लीं। चारों ओर जोर का कोलाहल मच गया सारे संसार के मनुष्य करुण-क्रन्दन करने लगे और फरिश्ते यह कहते हुए सुनाई दिए, "ईश्वर ने उसको बनाया था और वह ईश्वर के पास ही लौट गया है।"

जब अक़बर बादशाह की मृत्यु हुई,
लोगों का करुण क्रन्दन पृथ्वी से आकाश तक पहुंच गया।

इस दु:खपूर्ण घटना के पश्चात् कृपालु बादशाह जहांगीर ने अपने समस्त विश्वस्त सेवकों को और स्वामिभक्त मित्रों को मृतक बादशाह के पद के उपयुक्त उसकी अन्तिम क्रियाएँ करने का आदेश दिया। जब धर्म और परम्परा के अनुसार सब मृतक संस्कार की विधियाँ हो चुकीं और शाही शव को सम्मान के साथ सजा दिया गया तो बादशाह ने बड़ी शान के साथ किन्तु आंसू भरी आंखों और दुखित हृदय से मृतक बादशाह के जनाजे का पाया अपने कन्धे पर उठाया और उसे वह दीवान-ए-आम तक ले गया। वहाँ से बड़े-बड़े अमीरों ने बारी-बारी से कन्धा दिया। ये लोग इस सम्मान के लिए बड़े आतुर थे। इस प्रकार किले के दरवाजे तक जनाजा पहुंचा। वहाँ से अमीर, मंत्रीगण, दरबारी, इमाम और सब सेवक तथा सैनिक नंगे सिर और नंगे पैर जनाजे के पीछे चले।

जब बादशाह यह आवश्यक कार्य कर चुका तो उसने किला और कोष राजा रामदास के सुपुर्द किये और उसकी प्रशंसा की तथा उसे सांत्वना दी। फिर वह किले से ही अपने महल में चला गया। वहाँ उसे समाचार मिला कि राजा मानसिंह सुलतान खुसरू को अपने साथ लेकर नाव में बैठकर बंगाल के लिए प्रस्थान करने वाला है और उसके समस्त सेवक तथा सैनिक भी उसके साथ जा रहे हैं। यद्यपि इस बात को सुनकर शाही हृदय को परेशानी हुई, तथापि उसने राजा के भाई माधोसिंह को, जो वहीं था, उसके पास विश्वास दिलाने के लिए और वापस लाने के लिए भेजा। माधोसिंह राजा के पास पहुंचा और जोर के साथ उसकी भर्त्सना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करके उससे पूछा कि ऐसे बादशाह के विरुद्ध आचरण करने से क्या अभिप्राय है और इससे क्या लाभ है ? राजा ने उत्तर दिया, "मैं क्या कर सकता हूँ। शहजादा युवक है। वह इन मामलों को कुछ नहीं समझता था। उसको सन्तुष्ट करने के लिए मुझे यह सब कुछ करना पड़ा।" तुम जाकर कहो, "ऐसा वायदा किया जाय कि वह सब प्रकार के भय से मुक्त हो जाये और मुझे सन्तोष हो जाय कि उसकी कोई क्षति नहीं होगी। तब मैं उसको बादशाह के चरणों में ले आऊँगा।" माधोसिंह ने वापस आकर राजा मानसिंह की इच्छा और प्रार्थना बादशाह को सुनाई तो उसने यह स्वीकार करली और अतीव कृपा और अनुग्रह के साथ वचन दिया कि उसको कोई क्षति नहीं पहुँचाई जायगी। अपने शब्दों को बादशाह ने शपथ लेकर पुष्टि की और फिर उसको वापस भेज दिया, अगले दिन राजा मानसिंह दरबार में आया और सुलतान खुसरू को उसके शाही पिता के कदमों में लाया। बादशाह ने उसके साथ बड़ी ही कृपालुता का बर्ताव किया और उसे सीने से लगाकर उसके मुख का चुम्बन किया और एक क्षण बाद ही उसे अपने निवास-स्थान को जाने की अनुमति दे दी। जब बादशाह यह काम कर चुका तो उसने कुछ दिन शोक में और दान-वितरण करने में व्यतीत किये। फिर उसके सिंहासन पर बैठने का दिन आ गया।

बादशाह नूर-उद्-दीन मोहम्मद जहाँगीर का अपने पिता और पूर्वजों के सिंहासन पर बैठना

उस दिन उसने दरबार लगाया और सब कायदे सुने। फिर बड़े ठाठ-बाट के साथ वह अपने महल से नाव में बैठकर किले में गया और वहाँ से उतरकर एक शानदार पालकी पर सवार हुआ। फिर सोना और चाँदी बिखेरते हुए उसने दुर्ग में प्रवेश किया। वहाँ बड़े दर्जे के सब अमीर और उच्च अधिकार-प्राप्त मन्त्री लोग सेवा में उपस्थित थे। वहाँ पहुँचने पर वह साम्राज्य के सिंहासन पर बैठा और जहाँगीर की उपाधि धारण करके वह जनता के हृदयों को जीतने और म्लान संसार को पुनर्व्यवस्थित करने में लग गया। उसने कुछ बड़े-बड़े अमीरों, उच्च अधिकार प्राप्त मन्त्रियों और वीर युवकों को पद और उपाधियाँ देकर सम्मानित किया और लोगों के हृदयों को सान्त्वना देने के लिए उसने एक न्याय-शृङ्खला, जिसमें सोने की घन्टियाँ लगी हुई थीं, लटका कर लोगों के हृदयों से अत्याचार का जंग हटा दिया।

राज्यारोहण के कुछ दिन पश्चात् समाचार मिला कि महावतखाँ और शरीफखाँ बधाई देने के लिए आये हैं। महावतखाँ को सेनानायक नियुक्त किया गया और शरीफखाँ अमीर-उल-उमरा की उपाधि से सम्मानित हुआ। ये दोनों साम्राज्य के सबसे बड़े अमीरों में थे। उस न्यायी और उदार बादशाह के साम्राज्य का वैभव और उत्तम शासन दिन-प्रतिदिन उन्नति करने लगा। उसने प्रथम कुछ दिनों में ही सब प्रकार के महसूल और चुंगियाँ, जजिया और अनाथों की सम्पत्ति का कर रद्द कर दिया और यह आदेश समस्त पैतृक साम्राज्य पर लागू किया गया। समुद्र और खानों पर लगने वाले सब प्रकार के कर और शुल्क भी उसने समूल हटा दिये। अब सारे हिन्दुस्तान में जहाँ-जहाँ बादशाह का राज्य था, कोई उन करों और शुल्कों का नाम भी नहीं ले सकता था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तारीख-ए-हक्की

लेखक : शेख अब्दुल हक[1]

इस पुस्तक में मुस्लिम हिन्दुस्तान का संक्षिप्त सामान्य इतिहास है जो दिल्ली के दास सुलतानों के समय से अकवर के समय तक चलता है। इसके शासन के 42वें वर्ष में अर्थात् 1005 हिजरी (1596-97 ई०) में यह पुस्तक लिखी गई थी, लेखक का नाम शेख अब्दुल हक बिन देहलवी है। उसके इतिहास की भूमिका में एक रूबाई है जिससे प्रकट होता है कि हक्की साहित्यिक नाम है जो पूर्व की प्रचलित प्रथा के अनुसार धारण किया गया था और लेखक चाहता था कि इसी नाम से यह इतिहास प्रसिद्ध हो। परन्तु इसको प्रायः तारीख-ए-अब्दुल हक भी कहा जाता है। हक्की शब्द में श्लेष भी है।

अब्दुल हक के पूर्वज वुखारा से भारत में आकर दिल्ली में बस गए थे। परन्तु प्रामाणिक लेखकों ने उनके विषय में विभिन्न विवरण दिया है। वादशाह नामा के अनुसार अब्दुल हक तैमूर के एक अनुयायी का वंशज था। जो कुछ विदेशी सरदारों के साथ तैमूर के स्वदेश लौट जाने के पश्चात् दिल्ली में बस गया था। परन्तु अखवार-उल-अख्तियार में लेखक स्वयं कहता है कि उसका महापूर्वज आगा तुर्क अलाउद्दीन के राज्य में दिल्ली आया था और इस आगा का पौत्र मल्लिक मूसा वापस मावरुन नहर चला गया था और वह तैमूर के समय में वापस वहाँ से दिल्ली आया था। सर टी० मैटकाफ के हस्तलिखित दिल्ली के इतिहास में कहा गया है कि इसका पूर्वज वुखारा का निवासी था और जब वह दिल्ली आया तो उसको शाही दरबार का अमीर बना दिया गया था। इसमें सन्देह नहीं हो सकता कि वुखारा से ही इन लोगों का उदय हुआ था क्योंकि "अब्दुल हक का पुत्र" अलदेहलवी अलवुखारी कहलाता था "अब्दुल हक के पिता के पवित्र जीवन के विषय में वड़ी कीर्ति थी। उसका पुत्र अपने दिल्ली के साहित्यिक इतिहास में उसकी प्रशंसा करता है। शेख अब्दुल हक बचपन से ही ज्ञान उपार्जन के लिए श्रम करने लग गया था। वीस वर्ष की अवस्था में उसने प्रचलित विद्याओं में से अधिकांश पर अधिकार प्राप्त कर लिया था और कुरान कंठस्थ कर ली थी।[2] जब वह विद्याभ्यास

---

1 देखो असारुस सनादीद तबकात-ए-शाहजहाँनी मिरात-ए-जहाँनामा, मासर-उल-किरान पृ० 256, जुवदुत-उल-गराईव।

2 अब्दुल हमीद लाहौरी का वादशाह नामा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करता था उस समय के विषय में लेखक[1] कहता है कि वह प्रातः और सायं एक मौसम की गर्मी में और दूसरे मौसम की सर्दी में दो बार विद्यालय में जाया करता था और थोड़े समय के लिए भोजन करने को वह घर आया करता था। वह कहता है कि उसका घर विद्यालय से दो मील के अन्तर पर था। यदि यह कथन सत्य है तो इससे प्रकट होता है कि वह प्रतिदिन 8 मील चलता होगा और यह मानना पड़ेगा कि इससे उसकी असाधारण ज्ञान-पिपासा प्रकट होती है। उसके पिता ने लिखा है कि अन्य लड़कों की भाँति उसे खेल पसन्द न थे। उसका पिता उसे इस प्रवल लगन से हटाने की कोशिश किया करता था। दिल्ली छोड़ने के वाद वहुत समय तक वह अब्दुल कादिर शेख फैजी और निजामुद्दीन के साथ फतहपुर[2] में रहा। परन्तु फिर कुछ अनवन हो जाने पर वह उनको छोड़ गया तथापि निजामुद्दीन की सहायता से अरब जाने वाले एक जहाज में उसको स्थान मिल गया और वह यात्रा[3] पर चला गया। वह मक्का और मदीना के पवित्र नगरों में वहुत समय तक रहा और वहाँ के विद्वानों से उसने वहुत कुछ सीखा। उसने वहुत से विषयों पर पुस्तकें लिखीं। जिनकी उसने सूची दी है—इनमें टीकाएँ, यात्रा-वृतान्त, सूफी-सिद्धान्त, धर्म, इतिहास, आदि विषय हैं। उसके विविध ग्रन्थ मिलकर एक सौ से अधिक होते हैं। इनमें सवसे अधिक प्रसिद्ध मदीना सकीना, मदार-ए-जुन नुवूवात, जजकुस कुलाव और अदवार उल अख्तियार हैं। उसका जन्म 958 हिजरी में हुआ था और 1047 हिजरी में उसकी आयु 90 वर्ष की थी। परन्तु उसकी समझ ज्यों की त्यों थी और वह युवावस्था की भाँति धार्मिक कृतियों में, पढ़ाने और लिखने में लगा रहता था। उसकी मृत्यु 1052 हिजरी (1642 ई०) में हुई। उसने हौज-ए-शमसी के किनारे पर दिल्ली में अपने लिए स्वयं ही मजार वना लिया था। इसी में इसको दफनाया गया था। यह भवन इस समय अच्छी हालत में सुरक्षित है और वड़ा सुन्दर और दृढ़ है।

हिन्दुस्तान के सन्तों में लेखक का ऊँचा पद है। यह लिखता है कि जब उसने जियाउद्दीन वरनी की तारीख-ए-फिरोजशाही, जिसमें अनेक सुलतानों की जीवनियाँ दी हुई हैं, और जो इसी नाम के दूसरे इतिहासों में नहीं हैं, पढ़ी तो उसमें इतिहास लिखने की इच्छा उत्पन्न हुई। यह पुस्तक फिरोजशाह के राज्यारम्भ पर समाप्त हो जाती है। इसलिए उसके पीछे के सुलतानों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए उसने साम सुलतान वहादुर गुजराती की लिखी हुई तारीख-ए-वहादुरशाही पढ़ी और इसी में से वेहलोल लोदी के राज्य तक का हाल लिया। फिर उसके मन में यह वात आई कि तारीख-ए-फिरोजशाही में दी हुई सल्तनतों से पहले का इतिहास भी पूरा होना चाहिए। इसलिए उसने तवकात-ए-नासिरी से मुईजुद्दीन साम (मोहम्मद गौरी) से नासिरउद्दीन मुहम्मद विन सुलतान शमसुद्दीन तक के

---

1 अखवार-उल-अख्तियार।

2 तारीख-ए-वदायूंनी।

3 सर टी० मेटकॉफ की 'मेमायर आफ देहली' में लिखा है कि उसने दो वार यात्रा की थी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

राज्यों का इतिहास लिया। उसने अपने इस छोटे से संकलन में बड़ी परख से काम लिया है क्योंकि इन विभिन्न युगों के लिए ये तीनों ही पुस्तकें बड़ी प्रामाणिक हैं। बेहलोल लोदी से अपने समय तक उसने जवानी जानकारी का आश्रय लिया है या जो कुछ उसने देखा, लिखा है। उसकी पुस्तक का शेष भाग उसने उपरोक्त तीन ग्रन्थों से शब्दशः उद्धृत किया है। इस बात को वह स्पष्ट स्वीकार करता है।

पहले अध्याय में उसने अकबर के समय तक का दिल्ली का इतिहास लिखा है और दूसरे अध्याय में उसने बंगाल, जौनपुर, माँडू, दक्षिण, मुलतान, सिन्ध और कश्मीर के सुलतानों का वृत्तान्त लिखा है। परन्तु यह इतना संक्षिप्त है कि किसी काम का नहीं है।

यह सन्त समय के साथ चलने वाला था। निम्नलिखित अवतरण से प्रकट होगा कि वह अपने संरक्षक के सुधारों की बड़ी असंगत प्रशंसा करता है इसलिए हमको इस बात पर खेद नहीं है कि वह अकबर के राज्य का वृत्तान्त नहीं लिख सका।

इस संक्षिप्त इतिहास की सर्वोत्तम प्रति जो मैंने देखी है वह पानीपत के नवाब नासिरउद्दीन अहमद की है। उसके संग्रह में इसका नाम तारीख-ए-सलातीन गौरी है जो अनुचित है। बान्दा के निजामुद्दीन नामक एक हकीम के पास भी अच्छी प्रति है और ब्रिटिश म्यूजियम में इसकी दो प्रतियां हैं। एक प्रति रायल एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है। इसका वृतान्त मोरले ने अपने सूची-पत्र में लिखा है।

दिल्ली के एक भद्र निवासी की प्रति का प्रथम अध्याय इस प्रकार समाप्त होता है, "तजकिरा तुससलातीन का प्रथम अध्याय इस प्रकार समाप्त हुआ" इससे प्रकट होता है कि इस पुस्तक का यही नाम था। परन्तु यह ऐसा है तो यह वही पुस्तक नहीं है जो तजकिरा तुस सलातीन के नाम से प्रसिद्ध है क्योंकि इस पुस्तक में हिन्दू राजवंशों का वृत्तान्त है और इस संकलन के विषय में कर्नल विलफोर्ड विक्रमादित्य और शालीवाहन पर निबन्ध लिखते हुए निम्नलिखित बातें लिखता है, "यह पुस्तक इस बात का पक्का नमूना है कि हिन्दुस्तान में इतिहास किस प्रकार लिखा जाता है क्योंकि उपर्युक्त सूची के अतिरिक्त लगभग सब संकलनकर्त्ता की उर्वरा बुद्धि की उपज है। इन सूचियों में संकलनकर्त्ताओं या संशोधनों के सामने इसके अतिरिक्त कोई अन्य दृष्टि नहीं थी कि प्रसिद्ध युगों की परस्पर संगति किस प्रकार की जाय। जब एक बार यह हो गया तो फिर बीच का स्थान ऐसे राजाओं के नामों से भर दिया गया जिनका कहीं पता नहीं लगता और जो सम्भवतः कल्पित हैं। अन्यथा ये उन नरेशों के नाम छोड़ देते हैं जिनके विषय में कोई लेखक नहीं मिलता और इनके शासन के वर्ष उन राजाओं पर थोप देते हैं जो अधिक प्रसिद्ध हैं। ये लोग कुछ राजाओं के नाम अदल-बदल करने में भी, यहाँ तक कि समस्त राजवंशों का भी हेर-फेर करने से नहीं रुकते। या तो इन्होंने पहले से ही कुछ विचार बना लिए होंगे या एक ही नाम के यदि दो राजा हुए तो प्रसिद्ध राजा को ही अप्रसिद्ध राजा मान लिया गया। प्राचीन लेखकों में यह कोई असाधारण बात नहीं थी कि वे किसी प्राचीन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पूर्वज से किसी प्राचीन वंशज तक पहुंच जाय और बीच की पीढ़ियों को छोड़ जाय और इनके राज्यों को किसी पूर्वज या वंशज पर थोप दें। इसी प्रकार ईरान के राजाओं की वंशावली एशिया के लेखकों ने और पश्चिम के लेखकों ने तैयार की है। इसी प्रकार के उदाहरण बायबिल से भी दिए जा सकते हैं। बनारस में इसी प्रकार के एक इतिहासकार से मेरा परिचय हुआ। मैंने उससे कई बार बातें कीं। उसने स्पष्ट स्वीकार किया कि प्रसिद्ध राजाओं के राज्यों के बीच का स्थान यूंही दूसरे नामों में भर दिया है और अपनी इच्छानुसार उसने उनके राज्यों का समय घटा-बढ़ा भी दिया है और ऐसा माना जाता है कि उसके पूर्वजों ने भी उसी प्रकार मनमानी की है। इनकी इस प्रकार की वृद्धियों से और संशोधनों से स्पष्ट होता है कि उनमें ऐतिहासिक ज्ञान और आलोचना का पूर्ण अभाव था और कभी-कभी उनका भद्दापन अति स्पष्ट हो जाता है। यह बात भागवत् वायु वैष्णव और ब्राह्मण पुराणों पर लागू होती है। उपर्युक्त वंशावलियां ही हिन्दुओं का सब कुछ इतिहास है और यह सामग्री थोड़े से छपे हुए पृष्ठों में आ सकती है।"

तारीख-ए-हक्की का आरम्भ कुरान के एक सन्दर्भ से होता है। इसके अन्त में विविधता है। सबसे अच्छी समाप्ति से प्रकट होता है कि लेखक अपनी पुस्तक का नाम जिक्र-ए-मलूक रखना चाहता था। एक दूसरे सन्दर्भ से भी इस बात की सचाई प्रकट होती है। परन्तु भूमिका में तारीख-ए-हक्की नाम दिया हुआ है जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है।

जिस प्रति का उपयोग किया गया है उसमें 142 पृष्ठ हैं और प्रति पृष्ठ पर अठारह पंक्तियाँ हैं।

अवतरण

राजसिंहासन पर बैठने के कुछ समय बाद फिरोजशाह को उसके मामा मुबारिजखाँ ने मार डाला। सलीमशाह को यह पहले ही दिखता था और इसलिए उसने अपनी पत्नी से इस बात की अनुमति चाही थी कि उसके भाई मुबारिजखाँ को मार दिया जाय। उसने यह भी कहा था कि यदि वे इस प्रस्ताव को नहीं मानेंगी तो अपने पुत्र को अधिक समय तक वह जीवित नहीं देख सकेंगी। इस बुद्धिहीन स्त्री को उसके शब्दों पर विश्वास नहीं हुआ और उसने अपनी अनुमति नहीं दी। परन्तु सलीमशाह की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई। फिरोजशाह ने तीन दिन और पाँच घण्टे से अधिक राज्य नहीं किया। उसकी हत्या के बाद सारे अफगान बन्धु-बान्धव राजसिंहासन पर दावा करने लगे। एक ने सिकन्दर की, दूसरे ने सुलतान इब्राहीम की और तीसरे ने सुलतान मोहम्मद आदिल की उपाधि धारण कर ली। ये सब प्रतिस्पर्धी तीन-चार वर्ष तक परस्पर संघर्ष करते रहे। फिर अन्त में मास शाबान 963 हिजरी में हुमायूं के हुमा ने हिन्दुस्तान के राज्य पर अपने समृद्धि और सौभाग्य के पंख फैलाए। विपत्ति की धूल ने साम्राज्य के सुन्दर मुख को काफी समय से ढक रखा था। जो अब शान्ति और मेल के पानी से धुल गया और नवजीवन से देश के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हृदय को बल प्राप्त हो गया । ऊँचे और नीचे, गरीब और अमीर लोगों में प्रसन्नता, कृतज्ञता और आशा व्याप्त हो गई ।

हुमायूं का दूसरी बार राज्य शुरू हुआ, उसके बाद छः महीने के अन्दर एक दिन सायंकाल वह दिल्ली दुर्ग के राजप्रासाद की छत पर शुद्ध वायु का सेवन कर रहा था । वहाँ उसने आवाज सुनी और सायंकाल की नमाज के प्रति आदर प्रकट करने के लिए जब वह बैठने लगा तो संयोग से उसका पैर फिसल गया और वह भूमि पर गिर पड़ा । उसकी वहीं या कुछ दिन बाद मृत्यु हो गई और उसकी विजयी आत्मा रूपी पक्षी उड़कर अपने स्वर्गीय घोंसले में चला गया । हम ईश्वर के पास से आते हैं और उसी के पास लौट जाते हैं ।

उसके बाद उसका पुत्र सुलतान अबुलफतह जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर बादशाह गाजी जिसकी प्रतिष्ठा अति उच्च थी, उसका उत्तराधिकारी बना । वह युवावस्था में गद्दी पर बैठा । उसके राज्यारम्भ से अब यद्यपि चालीस वर्ष से अधिक व्यतीत हो चुके हैं तो भी उसका राज्य खूब विकसित हो रहा है और उसकी शक्ति का मानों आरम्भ ही हुआ है । प्रतिदिन नई-नई विजय का समाचार आता है एवं ईश्वर के आशीर्वाद से सारे हिन्दुस्तान पर पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण में उसका राज्य है इस देश के सारे दुर्ग और प्रदेश उसके हाथ में हैं । उसकी शक्ति उसी की है । कोई उसको बँटा नहीं सकता और किसी में उसका विरोध करने का साहस नहीं है । इस देश के तीन ओर समुद्र है और यहाँ के राजा सरदार और सब लोग उसके अधीन हैं और सहर्ष उसको अपना अधिपति मानते हैं और उसके सामने अधीन होकर अपना सिर भूमि पर टिकाते हैं । प्रदेश कोष, हाथी, घोड़े, सेनाएँ और अन्य सब वस्तुएँ जो बादशाह के पद और प्रतिष्ठा के अनुरूप हैं, ऐसी विपुलता के साथ उसके अधिकार में आईं कि उनका कोई हिसाब नहीं हो सकता और उनका इतना मूल्य है कि अन्य बादशाहों के अधिकार में इतने मूल्य की कोई चीज नहीं थी ।

"अपने शासन के आरम्भ में ही इस सम्राट ने ऐसे काम कर लिए जो अन्य शासकों ने कितने ही वर्ष राज्य करने पर भी नहीं किये थे । ईश्वर ही समस्त संसार को एक व्यक्ति के हाथ में सौंपता है ।"

जिन सुलतानों और बादशाहों का इस पुस्तक में उल्लेख है वे बादशाह अकबर की विद्यमानता में इन उपाधियों के पात्र नहीं हैं शायद एक या दो अपवाद हो सकते हैं परन्तु तुलना की दृष्टि से इन लोगों को भी बादशाह कहने के लिए बड़ा साहस चाहिए ।

संक्षेप यह है कि अकबर बादशाह की विजय, उसके नियम, शासन, सिद्धान्त, अद्भुत आदेश, शिष्टाचार और सुधारों का वर्णन करना कठिन है । सारी पुस्तकों में भी उनका समावेश नहीं हो सकता । यदि मुझे लम्बा जीवन मिला और ईश्वर ने मेरी सहायता की तो मैं यथाशक्ति इस बादशाह का शुद्ध इतिहास लिखने का प्रयास करूँगा । ईश्वर करे कि इस शक्तिशाली शहंशाह की सहायता से मुस्लिम कानून और धर्म सदा सर्वदा के लिए स्थापित हो जाय । हे जगत के स्वामी ईश्वर ! इस प्रार्थना को स्वीकार कर ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जुबदातुत तवारीख

लेखक : **शेर नूर-उल-हक**

यह सामान्य इतिहास अब्दुल हक के पुत्र शेख नूर-उल-हक अलमशरकी अल देहलवी अलबुखारी का लिखा हुआ है। अल मशरकी शब्द से प्रतीत होता है कि उसका परिवार दिल्ली से जौनपुर के किसी जिले में जा बसा था। नूर-उल-हक के पिता ने एक इतिहास लिखा था, उसी का यह बड़ा संस्करण है। लेखक कहता है कि शैली को सुधारने के लिए और अभावों की पूर्ति करने के लिए उसने यह इतिहास लिखा है जिससे यह उसके मालिक शेख फरीदुद्दीन बुखारी की स्वीकृति के योग्य बन सके। इस शेख के साथ हक्क का वैवाहिक सम्बन्ध था और इसी ने यह इतिहास लिखने का सुझाव दिया था। यही कारण है कि अकबर के समय में शेख फरीदुद्दीन की चढ़ाई का वर्णन कई पृष्ठों में किया गया है और उसके कश्मीर, खैबर की पहाड़ियों, जम्मू, जसरत, रामगढ़ और शिवालिक पहाड़ियों के अन्य स्थानों पर चढ़ाई करने का सविस्तार वर्णन किया गया है। इसी अफसर को जहाँगीर के राज्य के आरम्भ में खुसरू का पीछा करने के लिए नियुक्त किया गया था। इसमें उसने बड़ी वीरता का काम करके प्रशंसा और मुर्तजाखाँ की उपाधि प्राप्त की थी और कुछ समय के लिए उसने साम्राज्य के कार्यों का संचालन किया था।

यह इतिहास कुतुबुद्दीन के राज्य से आरम्भ होता है और अकबर के राज्य की समाप्ति तक चलता है। (आरम्भ में बहुत-सा भाग तबकात-ए-नासिरी, तारीख-ए-जियाबरनी, तारीख-ए-मुबारकशाही और अन्य ग्रन्थों से या तो अक्षरशः नकल किया गया है या इनका सारांश है। यह नीचे दिए हुए अवतरणों से स्पष्ट हो जायगा। अकबर के राज्य का वृत्तान्त अकबरनामे से लिया गया है। यही इस ग्रन्थ का सबसे अधिक मूल्यवान भाग है क्योंकि अबुलफजल से जो कुछ लिया गया है उसमें लेखक ने अपने समय की घटनाओं के ज्ञान के आधार पर भी बहुत कुछ जोड़ दिया है। इसमें यह आशा प्रकट की गई है कि लेखक ग्रन्थ को जारी रक्खेगा और जहाँगीर के राज्य की भी कुछ घटनाओं का कुछ विवरण दे सकेगा। वह जहाँगीर के राज्य में जीवित था। लेखक का पिता अब्दुल हक अपने साहित्यिक इतिहास के तियालीसवें पृष्ठ पर इस पुस्तक की खूब प्रशंसा करता है।

दक्षिण का इतिहास शेष इतिहास से और भी अधिक संक्षिप्त है। लेखक बहमनी, निजामशाही, आदिलशाही और कुतुबशाही वंशों का इतिहास लिखना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चाहता था परन्तु नहीं लिख सका। बरार, बिदार और खानदेश का इतिहास भी इस पुस्तक में नहीं है। लेखक ने यह तो स्वीकार किया है कि उसने अन्य ग्रन्थों की नकल भी की है परन्तु वास्तव में उसने स्वीकार किया है उससे कहीं अधिक नकल की है।

विषय-सूची

दिल्ली के सुलतानों का इतिहास	पृ० 13 से 369
मालवा के सुलतानों का इतिहास	369 से 418
गुजरात के सुलतानों का इतिहास	418 से 458
दक्षिण के सुलतानों का इतिहास	458 से 482
कश्मीर के सुलतानों का इतिहास	482 से 506
सिन्ध और ठट्ठा के सुलतानों का इतिहास	507 से 514
मुलतान के सुलतानों का इतिहास	514 से 516
बंगाल के सुलतानों का इतिहास	517 से 532
जौनपुर के सुलतानों का इतिहास	532 से 542

आकार बड़ा, पृष्ठ 542, प्रति पृष्ठ पर सोलह पंक्तियाँ।

मुन्तख्वाबुल लुबाब का लेखक मोहम्मद हाशिम इस इतिहास का नाम तारीख-ए-जुबदा लिखता है। जुबदातुत तवारीख का नाम बहुत प्रचलित है और इस नाम के इतिहास के अतिरिक्त दो और इतिहास हैं जिनका पूर्व और पश्चिम में बड़ा नाम है। एक हाफिज अबरु का लिखा हुआ है और दूसरा जमादुद्दीन अबुल कासिम काशी का लिखा हुआ है। एक इतिहास आगे का लिखा हुआ है जिसका लेखक कमालखाँ बिन जलाल मुनज्जिम है। यह सामान्य इतिहास है परन्तु विशेषतः इसमें ईरान का इतिहास है जो सोलहवीं शताब्दी के अन्त तक चलता है। जुवैनी अपने जहांकुशा नामक ग्रन्थ में एक और इतिहास का उल्लेख करता हैं जो सईद सदरुउद्दीन ने लिखा था।

नूर-उल-हक की जवदातुत-तवारीख भारतवर्ष में दुर्लभ नहीं है। एक उत्तम प्रति हैदरावाद के मंत्री नवाब सिराज-उल-मुल्क के पास है और अली मोहम्मदखाँ के पास भी एक अच्छी प्रति है। एक प्रति ब्रिटिश म्यूजियम में है (Additional 10580) और दूसरी बिबिलियोथिके इम्पीरियल में है। इसमें लिखा है कि यह मंगलवार 27 रवी-उल-अव्वल 1067 हिजरी में पूरी हुई थी। इससे यह पहले की प्रति होनी चाहिए। हाँ यदि यह तारीख इसकी रचना की हो तो दूसरी बात है।

अवतरण

कई अवतरण जो सर एच० एम० ईलियट के मूल ग्रन्थ में दिए हुए हैं यहाँ छोड़ दिए हैं क्योंकि ये मौलिक ग्रन्थों के परिचय में पहले ही छप चुके हैं। नूर-उल-हक ने इनकी वहीं से नकल की है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुलतान रजिया

तबकात-ए-नासिरी से लिया हुआ वर्णन

सुलतान मुईजुद्दीन के-कुवाद, अलाउद्दीन और कुतुवुद्दीन (जियावरनी की तारीख-ए-फिरोजशाही से लिया हुआ वर्णन।)

तुगलकशाह का पुत्र सुलतान मोहम्मद

लगभग इसी समय सारे दोआब की ऐसी दशा हो गई कि वह उत्पीड़क करों का भार सहन नहीं कर सका। लोगों ने निराश होकर अपने खलियानों को और फसल के ढेरों को आग लगा दी और अपने पशुओं को लेकर जंगलों में चले गए। इस पर सुलतान ने आदेश दिया कि जो भी किसान पकड़ा जा सके उसे मार दिया जाय और सारे इलाके को बिना सोचे समझे लूटकर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया जाय। इस उद्देश्य से सुलतान स्वयं भी नगर से रवाना हुआ। मानों शिकार करने जा रहा हो और जो कुछ भी आवादी वहाँ वची थी उसको उसने तलवार के घाट उतार दिया तथा आदेश दिया कि उन लोगों के सिरों का किले की दीवार पर प्रदर्शन किया जाय। इस प्रकार उसने अपनी सल्तनत के सारे इलाके को ऊजड़ कर दिया और ऐसा कठोर दण्ड दिया कि सारा संसार भयभीत हो गया। सारांश यह है कि इस उत्पीड़क सुलतान की क्रूरताएँ इतनी बढ़ गई थीं कि उन पर विश्वास नहीं होता था। फिर भी कुछ लोग उसको न्यायी कहते हैं।

गयासुद्दीन तुगलक शाह[1]

सुलतान फिरोज की मृत्यु पर शहजादा फतखाँ का पुत्र तुगलकशाह फिरोजावाद के महल में राजसिंहासन पर बिठाया गया। उसने अपने साम्राज्य के बड़े-बड़े पद अपने अमीरों में बांट दिये और फिर सुलतान मोहम्मदशाह के विरुद्ध एक बड़ी सेना भेजी। मोहम्मद ने कुछ मुकाबला किया और फिर वह सिरमौर से सुकेत को चला गया। तुगलकशाह की सेना उसका पीछा कर रही थी। इसलिए वह भाग कर नगरकोट चला गया।

जवानी की तरंगों में तुगलकशाह व्यभिचार और तुच्छ वातों में डूब गया। उसको राजकाज का अनुभव नहीं था। इसलिए उसने अपने सगे भाई खुर्रम अरसलान शाह को कैद करना आवश्यक समझा। तब जफरखाँ का पुत्र और सुलतान फिरोज का पौत्र अबूवकर इस शहजादे की दशा देखकर भयभीत और आशंकित हो गया और भाग गया। मलिक रुकुनुद्दीन नायव वजीर और कितने ही अन्य वजीर अबूवकर से मिल गए और बाहर निकलकर उन्होंने फिरोजावाद में तुगलकशाह के महल के दरवाजे के सामने मलिक मुबारक कवीर का वध कर दिया। अमीरों की शक्ति से भयभीत होकर वह जमुना की तरफ के दरवाजे से सुलतान खान-ए-जहाँ

---

1 तारीख-ए-मुबारक शाही से।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के साथ भाग गया। परन्तु मलिक रुकनुद्दीन ने पीछा करके उसे पकड़ लिया तथा उसे और उसके साथियों को मार डाला और उनके सिर दरवाजे पर लटका दिये। (इस आसमान के नीचे क्या आनन्द है। कसाई के वधगृह के सामने मेमना फुदका करता है)। यह घटना 21 शफर 791 हिजरी को घटी। तुगलकशाह ने छः महीने और अठारह दिन राज्य किया।

जफरखाँ का पुत्र और सुलतान फिरोज का पौत्र अबूबकर

अबूबकर को अबूबकरशाह की उपाधि देकर गद्दी पर बिठाया गया। अपने शत्रुओं का दमन करने के बाद और फिरोजशाह की सेना और कोष को हाथ में लेकर वह बड़ा शक्तिशाली हो गया। सुलतान मोहम्मद ने नगरकोट से सामाना पहुंचकर अपने आपको सुलतान घोषित कर दिया और फिर सेना खड़ी करने लगा। सामाना के सैकड़ों अमीरों ने और पहाड़ियों के नीचे के जमींदारों ने उसकी सत्ता स्वीकार कर ली। कुछ अमीर अबूबकर को छोड़कर सुलतान मुहम्मद के पास आ गये। तब भलीभाँति सुसज्जित होकर सुलतान ने सामाना से दिल्ली को प्रयाण किया और शहर के बाहरी हिस्से में पहुँचा। तब तक उसने पचास हजार सवार एकत्र कर लिए। 25 रबी-उल-आखिर 791 हिजरी को वह जहाँनुमाई महल पर पहुँचा।

2 जुमादल अव्वल को सुलतान मोहम्मद जंग और अबूबकरशाह में लड़ाई हुई जिसमें सुलतान मोहम्मद जंग की पूरी हार हुई। दो हजार सवारों के साथ यमुना पार करके उसने दोआब में प्रवेश किया और फिर अपने पुत्र हुमायूँखाँ को वापस भेज दिया और उसे आदेश दिया कि वह सेना इकट्ठी करके वापस आ मिले। सुलतान स्वयं यमुना के तट के पास जलेसर में रहा।

पचास हजार सवार और प्यादों की सेना खड़ी कर ली गई। इसी वर्ष के शाबान मास में सुलतान मोहम्मद ने दुबारा दिल्ली पर चढ़ाई की और फिर अबूबकर शाह का सामना किया। परन्तु सुलतान मोहम्मद का भाग्य अब भी प्रतिकूल था। इसलिए लड़ाई में भी वह हार गया। यद्यपि तुम रणभूमि की धूल को धुंए के समान उड़ाओ तो भी यदि भाग्य प्रतिकूल है तो तुम्हारी वीरता कोई काम न आ सकेगी। यदि चाबी तुम्हारे हाथ में नहीं है तो तुम किसी भी शक्ति के आधार पर विजय द्वार नहीं खोल सकते।"

सुलतान मोहम्मदशाह अभी जलेसर में था। वहाँ से उसने मुलतान, लाहौर और अन्य स्थानों के लोगों के नाम आदेश जारी किया कि फिरोजशाह के आश्रित लोग जहाँ भी मिलें वहीं मार दिये जायें। इससे कत्लेआम और बड़ा विनाश हुआ। रास्ते बन्द हो गये। यात्राएँ रुक गईं और घर उजड़ गये।

मास मोहर्रम सन् 792 हिजरी में शहजादा हुमायूँखाँ ने कई अमीरों के साथ बाहर निकल कर दिल्ली के आसपास के इलाके को बर्बाद कर दिया परन्तु अबूबकर शाह ने एक सेना भेज कर उसे हरा दिया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुलतान सिकन्दर लोदी

लगभग इसी समय (900 हिजरी) अन्न की इतनी कमी हो गई थी कि लोगों को जकात माफ कर दिया गया। ऐसा कहा जाता है कि एक दिन कई मुसलमानों के सामने एक ब्राह्मण ने यह कहा कि इस्लाम धर्म सच्चा है और स्वयं उसका धर्म भी सच्चा है। जब यह बात मुल्लाओं के कान तक पहुँची तो उन्होंने सुलतान को सूचित किया। उसकी धार्मिक और कानूनी विषयों से बड़ा प्रेम था और धार्मिक विवादों का शौक था। इसलिए उसने कई स्थानों के विद्वानों को बुलवाया और ब्राह्मण की बात के विषय में उनसे सम्मति माँगी। मुल्लाओं ने एक मत होकर कहा कि ब्राह्मण को कैद कर दिया जाए और उसे इस्लाम धर्म स्वीकार करने को कहा जाए। यदि वह स्वीकार न करे तो उसका वध कर दिया जाय। अतः जब ब्राह्मण से इस्लाम धर्म ग्रहण करने के लिए कहा गया तो उसने इन्कार कर दिया और उसका बध करवा दिया गया। इस सुलतान के राज्यकाल में धार्मिक जोश के ऐसे कई उदाहरण हुए।

उसके समय में हिन्दू मन्दिर भूमिसात कर दिए गए और उनका नाम या चिन्ह भी नहीं रहने दिया। मथुरा नगर में यदि हिन्दू अपना सिर या दाढ़ी मुड़ाना चाहता था तो किसी नाई का यह साहस नहीं होता था कि उसका काम कर दे। उसने सालार मासूद गाजी का जलूस जो प्रतिवर्ष बहराइच जाया करता था, बन्द कर दिया और स्त्रियों को कब्रों और दरगाहों पर जाने से मना कर दिया गया।

सिकन्दर लोदी का पुत्र सुलतान इब्राहीम

शेरखां

950 हिजरी रायसीन का दुर्ग सल्हदी के पुत्र पूर्णमल के अधिकार में था। उसने आसपास के कई परगने भी दबा लिए थे। उसके अन्तःपुर में एक हजार स्त्रियां थीं। इनमें कुछ पूर्व की थीं और कुछ सिन्ध की। इनमें कितनी ही मुसलमानियां भी थीं जिनको वह अपने सामने नचाया करता था। शेरखाँ को इस पर मुसलमान की हैसियत से क्रोध आया और उसने रायसीन के दुर्ग को जीतने का निश्चय किया। जब कुछ दिन तक घेरा चल चुका तो सन्धि का प्रस्ताव किया गया। अन्त में यह ठहरा कि अपने परिवार और बच्चों तथा चार हजार मुख्य राजपूतों के सहित पूर्णमल किला छोड़ जाय और उसको तंग नहीं किया जाय। कितने ही विद्वान मुल्लाओं ने यह सलाह दी कि उन सबको मार डाला जाय और उनके साथ जो गम्भीर सन्धि की गई है, उसकी चिन्ता न की जाय। इसलिए हाथियों सहित सारी सेना ने पूर्णमल के डेरे को घेर लिया। राजपूत जीवन की आशा छोड़कर वीरतापूर्वक लड़े। अपनी स्त्रियों और बच्चों को उन्होंने मारकर जला दिया और फिर लड़ाई में कूद पड़े। उन सबको समूल नष्ट कर दिया गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इसके बाद शेरखाँ आगरा लौट गया और वहाँ कुछ दिन टिककर उसने मारवाड़ पर चढ़ाई की। हर मंजिल पर वह खाई खुदवाकर अस्थायी किला बनवा दिया करता था और बड़ी सावधानी से आगे बढ़ता था। जहाँ रेती के कारण किला नहीं बनाया जा सकता था वहाँ बोरों में रेत भरकर तथा उनको चुनकर दीवार बनाई जाती थी।

शेरखाँ ने जंगल काट कर और अड़चनें दूर करके दिल्ली से आगरे तक सड़क बनवाई थी। इस पर सरायें बना दी गई थीं। इससे पहले लोग इन दोनों स्थानों के बीच के दोआब में होकर यात्रा किया करते थे। उसके समय में यात्रा इतनी सुरक्षित थी कि यदि कोई स्त्री सोने और चाँदी के आभूषण पहने हुए रेतीले मैदान में सो जाय तो भी उसकी चोरी करने का किसी को साहस न होता था और यदि कभी किसी की सम्पत्ति चोरी हो जाती थी तो जिस गाँव में यह घटना होती थी वहाँ के मुकाद्दमों पर जुर्माना किया जाता था जिसके डर से जमींदार लोग रात को रास्तों की गश्त किया करते थे।

शेरखाँ ने अपने नाम पर कई नगर स्थापित किये जैसे शेरगढ़, शेरकोट आदि। दिल्ली नगर जमुना नदी से दूर स्थित था। इसलिए इसको नष्ट करवा कर उसने नदी के तट पर नया नगर बसाया जो इस दिन तक विद्यमान है। इसकी रक्षा के लिए उसने एक चौड़ी दीवार बनवाई। उसके समय में विद्रोह नहीं हुआ और उसका राज्य भी लम्बे समय तक चला। इसलिए यह दीवार पूरी हो गई।

ऐसा कहा जाता है कि एक दिन दर्पण में देखकर उसने कहा, "खेद है कि मुझे वृद्धावस्था में यह साम्राज्य प्राप्त हुआ है। अब सायंकाल की नमाज का समय आ गया है। यदि ऐसा न होता तो संसार देखता कि मैंने क्या किया है।" कभी-कभी यह प्रकट करने के लिए कि वह कैसे कठिन और असम्भव काम करना चाहता था, वह कहता था "मैं समुद्र के आर-पार पुल बनवा देता और ऐसी युक्ति करता कि असहाय और विधवा स्त्री भी सरलता से मक्का की यात्रा कर सकती।" इस समय भी मक्का में उनकी बनवाई हुई एक कारवाँ सराय है जिसमें अफगान फकीर रहते हैं।

अकबर का राज्य

धार्मिक मामले

इस समय तक (986 हिजरी, 1578 ई०) बादशाह पाँच बार निश्चित समय पर नमाज पढ़ता था, चाहे वह राजधानी में हो या डेरे में। कुरान का पाठ करने वाले शाही सेवा में रहते थे जो दोनों समय और दूसरे अवसरों पर भी इस पवित्र ग्रन्थ का पाठ किया करते थे। वास्तव में बादशाह नमाज के समय सबसे आगे रहता था।

इस वर्ष (986 हिजरी) में सबसे विचित्र घटना यह हुई कि बादशाह ने कौमी धर्म का त्याग कर दिया। इससे जिन लोगों का विश्वास निर्बल था उनके

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लिए वड़ी अड़चन उपस्थित हो गई। इस धर्मच्युति का कारण यह था कि इस समय दरबार विविध सम्प्रदायों और धर्मानुयायियों का केन्द्र वन गया था। इनमें खुरासान, ईराक, मवरोन-नहर और हिन्दुस्तान के विद्वान तथा सिया और सुन्नी, ईसाई, दार्शनिक, व ब्राह्मण और प्रत्येक धर्म के विद्वान थे। इन लोगों ने सुना था कि बादशाह बड़ा सुगम है और सबसे बात करता है तथा शान और शान्ति में अन्य बादशाहों से बढ़कर है और साथ ही वड़ा विनम्र है। इसलिए लोग उसके दरबार में आ एकत्र हुए और इतिहास तथा यात्रा की बातें बनाने में और इलहाम भविष्य-वाणी और धर्म की बातें करने में लग गये। ये लोग क्रोधपूर्ण विवादों में निरन्तर व्यस्त रहते थे और प्रत्येक व्यक्ति अन्य लोगों को अपना धर्म स्वीकार कराने के लिए उत्सुक था। ये लोग रात दिन हाँ और ना करने में लगे रहते थे। इस मौके पर बादशाह ने सर्वप्रथम इतिहास, सामाजिक रिवाज और अन्य धर्मों की बातें सुनीं और इस नवीनता का उस पर बड़ा प्रभाव पड़ा। वह विरोधी मतों का सार निकालने का प्रयास करता था और जो कुछ सुनता था उस पर बड़ा ध्यान देता था क्योंकि उसका मन हमेशा सत्य की खोज में लगा रहता था। यदि उसके कुछ साथियों पर इन विवादों का और भावों का प्रभाव पड़ा तो इसका कारण यह था कि उनके स्वभाव में ये संस्कार जन्म-जात थे इसलिए वे धार्मिक परिवर्तन के प्रलोभन को नहीं रोक सके। शायद सांसारिक स्वार्थ ने उनको प्रेरित किया होगा। बादशाह तो अपने अफसरों, सामन्तों और मुल्लाओं के सामने कहा करता था "हे बुद्धिमान मुल्लाओ, मेरा एकमात्र उद्देश्य सत्य की खोज करना है। मैं देखना चाहता हूँ कि वास्तविक धर्म के क्या सिद्धान्त हैं और क्या इसका स्रोत परमात्मा है। इसलिए याद रक्खो कि तुम अपने स्वार्थों के कारण सत्य को न छिपाओ और भगवान के आदेश के विरुद्ध कोई बात न कहो। यदि कहोगे तो तुमको अधार्मिकता का फल ईश्वर के सामने भोगना पड़ेगा।"

इस व्याख्यान से पहले हिन्दुस्तान के जैसे कितने ही मुल्ला और मौलवी मौलाना अब्दुल्ला सुलतानपुरी (मखबूम-उल-मुल्क) और शेख अब्दुल नवी सदर तथा अन्य लोग निरन्तर दरबार में रहा करते थे और बादशाह से अनुग्रह और उपहार प्राप्त करते थे। ये दोनों व्यक्ति धर्म और कानून के विषय में प्रमाण माने जाते थे परन्तु इनका मत प्रायः एक दूसरे के विपरीत होता था और ये क्रोध और कटुता की बातें करते थे। इसलिए बादशाह की दृष्टि में इनका मान-सम्मान कम हो गया और इनके द्वारा प्रतिपादित धर्म की ओर वह उपेक्षा करने लगा। जो लोग प्रतिदिन इन सभाओं में होने वाले धार्मिक विवादों को सुनते थे वे वास्तविक अभिप्राय को नहीं समझ सकते थे और इसलिए वे समझते थे कि बादशाह ऐसी बातों को प्रोत्साहन देकर अच्छा काम नहीं कर रहा है। वे उसके उद्देश्यों पर सन्देह करते थे और इन्हें उसके चरित्र पर कलंक मानते थे परन्तु वास्तव में ऐसी बात नहीं थी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बीरबल की मृत्यु

इस वर्ष (994 हिजरी) राजा-वीरवल के नेतृत्व में यूसुफ जाई विद्रोहियों को दवाने के लिए सेना भेजी गई। एक व्यक्ति ने आकर राजा से कहा कि अफगान लोग रात में उसकी सेना पर आक्रमण करना चाहते हैं और पर्वतीय घाटी तीन या चार कोस से अधिक लम्बी नहीं है। यदि वह इसको पार कर ले तो सुरक्षित हो जायगा। जेनखाँ से वात किए बिना ही वीरवल ने इस घाटी में होकर निकलने का निश्चय कर लिया। उसने अपनी सेना को कूच करवाया और सायंकाल होते-होते घाटी के दरवाजे पर पहुंच गया। घाटी के ऊपर की पहाड़ियों पर अफगान लोग तीर और पत्थरों के साथ एकत्र हो रहे थे। अंधेरे में उस तंग घाटी में शाही सेना मार्ग भूल गई और बड़े गहरे खड्डों में गिरकर नष्ट हो गई। इस प्रकार शाही सेना की बड़ी पराजय हुई और लगभग आठ हजार आदमी मारे गए। राजा वीरवल अपनी प्राण-रक्षा के लिए भागने लगा परन्तु मारा गया और उसका चिह्न भी नहीं मिला। इस वर्ष 5 रवी-उल-अव्वल को जेनखाँ और अवुल फतह भी हार गए और वड़ी ही कठिनाई से अटक पहुँचे। इस पराजय का वादशाह के मन पर वड़ा प्रभाव पड़ा और कई वार उसने इन सेनानायकों से मिलने से इन्कार कर दिया। अब एक बहुत अच्छी सेना का नेतृत्व राजा टोडरमल को सोंपा गया और इस विपत्ति का निराकरण करने के लिए कहा गया। राजा ने वड़ी चतुरता के साथ पर्वतों में प्रवेश किया। वहाँ अनेक किले बनवाए और युद्ध का संचालन ऐसी निर्णय वुद्धि के साथ किया कि अफगान लोग पीछे धकेल दिए गए और तंग प्रदेश में सीमित हो गए।

विचित्र कला कार्य

इस वर्ष (1003 हिजरी) एक आश्चर्यजनक कला का प्रदर्शन किया गया। यह सईद हुसैन शिराजी ने किया था। वह अपने हाथ में एक पेटी लेकर खड़ा हो जाता था और जब कोई व्यक्ति उस पेटी में एक रुपया डालता था तो वह उसको हिलाता था और रुपया उसके पैंदे में जा पहुँचता था। इस पर एक तोता, जो उससे बँधा रहता था, बोलने लगता था और दो मुर्गियाँ भी एक दूसरे की ओर चिल्लाने लगती थीं। तव एक खिड़की खुलती थी और उसमें से वघेरा अपना सिर निकालता था और अपने मुंह में से एक गोला, एक तश्तरी में डालता था। यह तश्तरी एक शेर के सिर पर रख दी जाती थी और वह गोला शेर के मुंह में से निकलता था। थोड़ी देर बाद दूसरी खिड़की खुलती थी। उसमें से दूसरा शेर निकलता था और गोला अपने मुंह में लेकर चला जाता था और खिड़की बन्द हो जाती थी। तब पूरी सूंड वाले दो हाथी प्रकट होते थे और दो आदमी आते थे जो ढोल बजाते थे। तब एक रस्सा आप से आप आगे निकलता था और पीछे चला जाता था। तब दो आदमी आगे बढ़कर सलाम करते थे। इसके कुछ देर बाद दूसरी खिड़की खुलती थी जिसमें से एक पुतली निकलती थी जिसके हाथ में हाफिज की गजल होती थी। जब

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुतली के हाथ में से यह ले ली जाती थी तो पुतली वापस चली जाती थी और खिड़की वन्द हो जाती थी। सारांश यह है कि जब हुसैन शिराजी के हाथ में रुपया डाला जाता था तो ये सब आश्चर्यजनक बातें हुआ करती थीं। पहले तो बादशाह ने अपने हाथ से एक मोहर दी और यह दृश्य देखा। फिर उसने अपने सेवकों से कहा कि एक-एक रुपया दें। जो गजलें नजर की गई थीं वे बादशाह ने नकीमखाँ को दीं और उसने पढ़कर सुनाई। इस प्रकार का प्रदर्शन कई रात तक होता रहा।

दुर्भिक्ष

1004 हिजरी में समस्त भारतवर्ष में अनावृष्टि हुई और तीन-चार वर्ष तक भयंकर दुर्भिक्ष रहा। बादशाह ने आदेश दिया कि तमाम नगरों में दान का वितरण किया जाय। नवाब शेख फरीद बुखारी को इस वितरण का निरीक्षण करने के लिए नियुक्त किया गया और उसने लोगों का दुख निवारण करने में यथाशक्ति प्रयत्न किया। जगह-जगह भोजन दिया गया और गरीब लोगों के निर्वाह के लिए सेना में अधिक भरती की गई। एक प्रकार की बीमारी जारी हो गई जिससे दुर्भिक्ष की भयंकरता और बढ़ गई तथा नगर ऊजड़ हो गए। फिर छोटे-छोटे गाँव की तो बात ही क्या थी। अन्न के अभाव के कारण भूख से पीड़ित होकर मनुष्य मनुष्य को खाने लगे। बाजारों और रास्तों में मुर्दों के ढेर लग गए। यहाँ तक कि उनको उठाने वाले भी कोई न मिलते थे।

बादशाह आहत हो गया

इस वर्ष जब बादशाह हिरणों की लड़ाई देख रहा था तो एक हिरण ने उसकी जाँघ में सींग मारा जो गहरा घुस गया। समस्त देश में बड़ा आतंक छा गया। परन्तु कुछ दिन महल के अन्दर आराम करने के बाद और कष्ट पाने के बाद ईश्वर के आशीर्वाद से बादशाह को स्वास्थ्य प्राप्त हो गया और संसार के मनुष्यों के हृदयों को सान्त्वना मिली।

विचित्र कमरा

इस वर्ष एक विचित्रता का प्रदर्शन हुआ। यह उस समय के परम प्रसिद्ध हकीम हाकिम अली ने तैयार की थी। सब दर्शक इसे देखकर दंग रह गए। बुद्धिमान लोगों के भी बात समझ में न आई। हकीम ने एक ऐसा कमरा बनाया जिसकी लम्बाई चौड़ाई साधारण थी। इसमें प्रवेश करने के लिए ऊपर की ओर ही एक द्वार था। इसकी छत पर उसने एक तालाब जैसा बनाया था जो पानी से भरा रहता था और इसमें घुसे बिना कोई कमरे में प्रवेश नहीं कर सकता था। इस दरवाजे पर पहुंचने पर कमरे में प्रवेश होता था जो कालीनों, पुस्तकों और अन्य प्रकार के सामान से सुसज्जित था। परन्तु उसमें पानी प्रवेश नहीं कर सकता था। ऐसा कहा जाता है कि एक दिन बादशाह ने अपने कुछ निजी साथियों के साथ उपर्युक्त कमरे में प्रवेश किया और अन्दर जाकर बातचीत का आनन्द लिया और फिर उसी मार्ग से वापिस निकल आया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

रोजत-उत्त-ताहिरीन

लेखक : **ताहिर मोहम्मद**

यह रोजत-उत्त-ताहिरीन ताहिर मोहम्मद का लिखा हुआ है। यह इमादुद्दीन हसन का पुत्र और सुलतान अली का पौत्र था। सुलतान अली के पिता का नाम हाजी मोहम्मद हुसैन सञ्जवारी था। इस ग्रन्थ का आरम्भ अकबर की मृत्यु से तीन वर्ष पूर्व 1011 हिजरी या 1602-3 ई० में हुआ था और समाप्ति जहाँगीर के राज्याभिषेक के पश्चात् 1015 हिजरी या 1606-7 में हुई थी। रोजत शब्द से 1011 हिजरी की तारीख निकलती है। इसलिए लेखक ने रोजत और अपना नाम ताहिर मिलाकर इस ग्रन्थ का नाम बनाया है जो विचित्र है।

इस पुस्तक में उन्हीं बातों का वर्णन है जो एशिया के सामान्य इतिहासों में लिखी जाती है। यह विस्तृत परिशिष्ट से आरम्भ होता है। यह खेद का विषय है कि दूसरे लेखकों ने इस शैली का अनुकरण नहीं किया। यह परिशिष्ट 45 पृष्ठ का है जो एक प्रकार की तिथि-तालिका है। इससे प्रकट होता है कि प्रत्येक शासक ने कितने साल तक राज्य किया।

रोजत-उत्त-ताहिरीन में पाँच भाग (किस्म) हैं। प्रत्येक किस्म को अध्यायों (बाब) में विभक्त किया गया है और प्रत्येक अध्याय में कई प्रकरण (फसल) हैं। कुछ प्रकरणों को बड़ी बारीकी से विभक्त किया गया है। इसमें लेखक ने अपने चातुर्य का प्रदर्शन नहीं किया है। विभिन्न राजवंशों का पृथक-पृथक वर्णन करना आवश्यक था। इसलिए प्रकरणों का विभाग किया गया है।

विषय-सूची

भाग प्रथम—सृष्टि, 40 पैगम्बर, 22 प्राचीन सन्त, मोहम्मद से पहले के ईरानी और अरबी राजवंश जिनमें पेशदादी, केआनी, अश्कानी, ससानी और घसानी सम्मिलित हैं। इसमें तीन अध्याय हैं। पृ० 45 से 641।

भाग द्वितीय—खलीफा और जिन राजवंशों का अब्बासी खलीफों के अधीन उदय हुआ—जैसे ताहिरी, सामानी, वे ववेही, देलामी, गजनवी, गौरी, करा-खताई, सलेजुगी और अत्ताबक आदि। इसमें चार अध्याय हैं। पृ० 641 से 826।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भाग तृतीय—तातारों, मुगलों, तुर्कों, कस्तुनतुनिया के उस्मान अली, चंगेजखाँ और तैमूर के राजवंश, इनके पूर्वज और वंशज, अन्य कई राजवंश जिनमें कारा कुईनलू और आखकुइनलू, का शासक तथा ईरान के सफवी शासक सम्मिलित हैं। इसमें सात अध्याय हैं। पृ० 826 से 981।

भाग चतुर्थ—इस्लाम के आगमन के पूर्व भारत के शासक अर्थात् हिन्द के ब्राह्मण। जब गड़बड़ और अव्यवस्था होती थी तो ये लोग प्रकट होते थे। इनमें सब उत्तम गुण थे। ये देश को पुनर्जीवित करते थे। इसको अवतार कहा जाता था। सृष्टि की आदि से और अब तक नौ अवतार हो चुके हैं। ये मत्स्य अवतार से कृष्ण अवतार तक हैं।

महाभारत और हरिवंश पुराण का सार, सूरजवंशी और चन्द्रवंशी राजाओं का तथा उनके वंशजों का इतिहास। इसमें दो अध्याय और समाप्ति है।

भाग पंचम—भारतवर्ष के सुलतान, गुलाम सुलतानों से अकबर तक, अकबर कालीन लोगों का इतिहास, जिनमें 14 अमीर, 57 कवि, 24 हकीम और दार्शनिक हैं। सिन्ध, मुलतान, कश्मीर, गुजरात, मालवा, दक्खिन, जौनपुर और बंगाल के सुलतान। बंगाल के निकटस्थ टापू और बन्दरगाहों की विचित्रताएँ, इनमें लंका, पीगू, अराकान, कूचविहार और पुर्तगाल का वर्णन सम्मिलित है। इसमें चार अध्याय हैं। पृ० 981 से 1200 तक। अंतिम अध्याय में लेखक के विषय में कुछ उल्लेख है।

आकार—फोलियो, 1200 पृष्ठ और एक पृष्ठ पर 23 पंक्तियाँ।

इस प्रकार यह प्रकट होगा कि पाँचवाँ भाग अर्थात् सारे ग्रन्थ का षष्टांश भारत पर है। परन्तु इस भाग में बहुत कम ऐसी बातें हैं जो अन्य ग्रन्थों में इतनी ही अच्छी नहीं दी गई हों। इसलिए इनका कोई विशेष मूल्य नहीं है। ये केवल संकलनमात्र हैं, यह खेद की बात है कि इस पुस्तक का तीसरा अध्याय, जो कि इसमें उपयोगी है, इस पुस्तक में शामिल नहीं है। चतुर्थ भाग अलग कर दिया गया है। पृष्ठों का क्रम भंग नहीं हुआ है। यह और तीसरा अध्याय जिसमें भारतीय जीवन चरित्र होने चाहिए, अलग जिल्दों में होंगे। ये उन प्रतियों में नहीं हैं जो मैंने देखी हैं। परन्तु लखनऊ वाली प्रति में ये शामिल हैं। प्रथम भाग के आधे से अधिक हिस्से में ईरान का इतिहास है। इसमें परम्परागत कथाओं की भरमार है।

इस पुस्तक में उद्धृत जमीउत-तवारीख, रोजत-उस-सफा, तारीख-ए-गुजीदा, लुब्बु-तवारीख, तारीख-ए-निजामी, जफरनामा, निगारिसतान और बहमननामा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

है। इनमें से कई अध्याय अक्षरशः नकल किए गए हैं। इस पुस्तक की जो प्रतियाँ मैंने देखी हैं उनमें एक दिल्ली के बादशाह के पुत्र शहजादा मिर्जा गुलाम फकरुद्दीन बहादुर के पास है। दूसरी एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय में है जिसमें केवल प्रथम तीन भाग ही हैं। तीसरी प्रति नवाब सिराज-उल-मुल्क मन्त्री हैदराबाद के पास है। इसका नाम तारीख-ए-ताहिरी है। जिन लोगों ने इसे देखा है वे इसको इसी नाम से उद्धृत करते हैं। एक प्रति मेरठ में और एक मोती महल पुस्तकालय में है जो लखनऊ में स्थित है। एक और अपूर्ण प्रति लखनऊ में है। इसका नाम "शीगरफनामा" है। नवाब अली मोहम्मदखाँ झज्जारी वाली प्रति में 1193 पृष्ठ हैं और हर एक पृष्ठ पर 23 पंक्तियाँ हैं। यह शायद शहजादा वाली प्रति है जिसका ऊपर उल्लेख हो चुका है। परीक्षा करने पर इस अपूर्ण प्रति के निम्नलिखित भाग मालूम होते हैं :

प्रथम भाग—628 पृ० तक
द्वितीय भाग—860 पृ० तक
तृतीय भाग—960 पृ० तक
चतुर्थ भाग
पंचम भाग—960 से 1193 पृ० तक। इसमें जीवन-चरित्र नहीं हैं।

मेजर स्टूअर्ट ने अपनी सूची में इसका उल्लेख किया है। यद्यपि उसने इसको पाँच भागों में विभक्त किया है परन्तु उसकी विषय-सूची से यह स्पष्ट है कि उसकी जिल्द में केवल प्रथम तीन भाग ही हैं।

एम० फ्रॉहन ने रोजत-उत्त-ताहिरीन की उन ग्रन्थों में गणना की है जो वह प्राप्त करना चाहता है।

अवतरण

सुलतान मुइजुद्दीन मोहम्मद साम गौरी अपनी सेना को गुजरात में ले गया और पहले आक्रमण में ही उसने राय भोजदेव को हरा दिया। दूसरी बार लड़ाई हुई तो राय ने सुलतान को हरा दिया परन्तु तीसरी लड़ाई में सुलतान मुइजुद्दीन ने अपने विपक्षी को बिल्कुल भगा दिया और उसके बहुत से हाथी और राजसी चिह्न तथा सम्पत्ति छीन ली। गुजरात से वापसी पर उसने लाहौर में गजनवी सुलतान खुसरू मलिक को घेरा और उससे बहुत से हाथी और कोष छीन लिया।

अगले वर्ष उसने उसी दिशा में अपनी सेना चढ़ाई और लाहौर को पूरी तरह दबा लिया। उसके शासन के लिए वहाँ अपने आदमी नियत करके वह गजनवी चला गया।

भारतवर्ष में उसने स्यालकोट, सरहिन्द आदि कई किले छीन लिए और उनमें अपने दुर्गरक्षक नियुक्त कर दिए। आगामी ऋतु में मुइजुद्दीन ने भारतवर्ष पर फिर चढ़ाई की और प्रथम युद्ध में ही उसने राजा पिथोरा को मार डाला।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अपने प्रिय दास कुतुबुद्दीन एवक को कोहराम के किले में छोड़कर वह वापस गजनी चला गया।

अगले वर्ष सुलतान पुनः भारतवर्ष में आया और उसने कन्नौज पर चढ़ाई की। वहाँ के राजा को हराकर उसने तीन सौ हाथी छीन लिए और सुलतान कुतुबुद्दीन को दिल्ली में अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया।

इसके बाद तुरन्त ही सुलतान मुइजुद्दीन ने कुछ विद्रोही खोकर सरदारों के दमन की ओर ध्यान दिया। इन लोगों ने सुलतान की अनुपस्थिति में लाहौर के निकट विद्रोह कर दिया था। वहाँ से वह लाहौर की ओर गया और जमींदारों से सिवालिक की पहाड़ियाँ छीन लीं। फिर कुतुबुद्दीन ऐबक के नेतृत्व में उसने अपनी सेना को दिल्ली की ओर कूच करने का आदेश दिया और वह लाहौर से गजनी लौट गया। परन्तु रास्ते में ही शाबान मास 602 हिजरी में दमेक के निकट कुछ खोकरों ने उसे चुपके से मार दिया। इन लोगों ने इसे मार डालने का प्रण किया था। सुलतान मुइजुद्दीन ने चार वर्ष राज्य किया।

सुलतान मोहम्मद आदिल

शाह मोहम्मद (फरमूली) और उसके पुत्रों की मृत्यु पर दौलतखाँ लोहानी इतना धनवान हो गया कि सुलतान मोहम्मद तुगलकशाह की भाँति वह सोने और चाँदी ने भरे हुए बर्तन नगर के विविध भागों में फेंका करता था और जिस किसी को सौभाग्य से कोई एक बर्तन मिल जाता था उसको बर्तन पेश करने पर शाही कोप से पाँच सौ टंक दे दिए जाते थे।

जब सेना के अमीरों और अफसरों ने देखा कि सुलतान मोहम्मद देश के प्रबन्ध की ओर कुछ ध्यान नहीं देता है तो उनमें से प्रत्येक अपने-अपने प्रान्त में स्वतन्त्र हो गया। हेमू, जो जाति से बनिया और रेवाड़ी का निवासी था, उसका कृपापात्र बन गया और प्रधान सेनापति के स्थान पर उसकी नियुक्ति हो गई। शेरखाँ का सेवक, जिसका नाम शमशीरखाँ था, दौलतखाँ की उपाधि से सम्मानित किया गया। ताजखाँ किरानी ने अपने भाई ईमाद और सुलेमान के साथ सुलतान के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और वे ग्वालियर से बिहार और बंगाल की ओर भाग गया। जब उनकी कार्यवाहियों का सुलतान मोहम्मद अदली को पता लगा तो उसने उनका खूब पीछा करने के लिए कुछ सेना भेजी। वे लोग कन्नौज के पास पहुंचे और वहाँ लड़ाई हुई जिसमें ताजखाँ हार कर चुनार की ओर भाग गया और उस दुर्गम दुर्ग में छिप गया। हेमू के साथ एक बड़ी सेना थी और कितने ही हाथी थे। उसने गंगा पार करके इन अमीरों को हराया और चुनार का किला छीन लिया, एवं बार-बार विजय प्राप्त करके उसने सुलतान की सत्ता स्थापित कर दी।

लगभग इसी समय गाजीखाँ सूर के पुत्र इब्राहीमखाँ ने जो अदली का चचेरा भाई था और जिसने उसकी बहिन से विवाह किया था, भाग कर बयाने में शरण

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ली। उसको दण्ड देने के लिए सुलतान मोहम्मद ने ईसाखाँ नियाजी को भेजा। काल्पी के निकट लड़ाई हुई जिसमें ईसाखाँ नियाजी हार गया। तब इब्राहीमखाँ ने दिल्ली जाकर सुलतान इब्राहीम शाह की उपाधि धारण कर ली, अपने नाम का खुतुबा पढ़वाया और सिक्के चलवाए और कई नगरों और जिलों पर अपनी सत्ता जमा ली।

इस विद्रोह के कारण सुलतान मोहम्मद अली को बाध्य होकर किरानियों के विरुद्ध चढ़ाई करना स्थगित करना पड़ा और उसने निरन्तर जमुना के तट की ओर कूच करके वहाँ अपना डेरा लगाया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मुन्तख्वाब-उत्तवारीख

या

अहसान-उल-तवारीख

लेखक : हसन बिन मोहम्मद

यह मुन्तखावुत्तवारीख नामक शीर्षक हसन विन मोहम्मद अलखाकी अलशिराजी का लिखा हुआ इतिहास है। लेखक अकवर के समय में हिन्दुस्तान में आया था और इसने विभिन्न सरकारी पद प्राप्त किए थे। वह लिखता है कि उसको अपने लड़कपन से ही ऐतिहासिक साहित्य के प्रति रुचि थी और जब वह हिन्दुस्तान में आया, जो कि सुरक्षा का स्थान है तो यह रुचि इतनी वढ़ गई कि उसने निश्चय कर लिया कि ऐसा ग्रन्थ लिखा जाय जिसमें पैगम्बरों, फकीरों, सुलतानों, दार्शनिकों, कवियों और मन्त्रियों का वृत्तान्त हो। जहाँ तक व्यापकता का प्रश्न है वहाँ तक तो उसने अपना विचार पूर्ण कर लिया। क्योंकि इस ग्रन्थ में एशिया के समस्त ज्ञात राजवंशों का समावेश है परन्तु पैगम्बरों और सुलतानों के अतिरिक्त अन्य पृथक जीवन-चरित्रों की उपेक्षा की हुई जान पड़ती है। यह संग्रह हिन्दुस्तानी इतिहास-वेत्ता के लिए विशेष उपयोगी नहीं है।

इस लेखक के आधार अच्छे और अनेक हैं। इनमें से कुछ आजकल आसानी से नहीं मिलते। वह इन ग्रन्थों का उल्लेख करता है रोजत-उस्-सफा, हवीबुस्सियार, मुजमिल फासिही, इविन खालीकान, जहाँकुशाई, तारीख-ए-रशीदी (मिर्जा हैदर काश्मीरी कृत, अकवरनामा, तारीख-ए-बिजामी, तारीख-ए-फीरोजशाही (जिया वरनीकृत) तवकात-ए-नासिरी, तारीख-ए-विनाकिती, जहाँआरा और तारीख-ए-अबुलफजल वेहाकी। वह लिखता है उसने इस ग्रन्थ का आरम्भ अकवर के राज्य के अन्त में किया था और जहाँगीर के शासनकाल के पाँचवें वर्ष में (1019 हिजरी-1610-11 ई०) में यह उसने समाप्त किया। इसी वर्ष वह पटना का दीवान नियुक्त हुआ था।

एलफिन्सटन ने इसी शीर्षक वाली पुस्तक को उद्धृत किया है और वह लिखता है कि इसकी रचना 1004 हिजरी में हुई थी और यह वहुत करके यही पुस्तक थी। व्रिग्ज ने भी अधीन राजवंशों पर नोट लिखते हुए इसको उद्धृत किया है। (एल-फिन्सटन ने वीरवल की मृत्यु का वृत्तान्त लिखा है और इसके लिए उसने इस पुस्तक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

का हवाला दिया है। यह वृत्तान्त नूर-उल-हक्क की पुस्तक के अनुवाद के अनुसार है। शायद दोनों का आधार एक ही हो। इस पुस्तक में विभिन्न इतिहास हैं जिनको विभागों, अध्यायों और प्रकरणों में विभक्त किया गया है परन्तु यह विभाजन सही नहीं है।

विषय-सूची

पैगम्बर, प्राचीन ईरानी बादशाह, बाबुल और असीरिया के सुलतान, यहूदी, यूनान, हिमयारित, यमन, घसान, हीराजाफेत के तुर्की सुलतान, तातार, मुगल, मुहमद और प्रथम खलीफे, ईमाम, उमई, अबासी, ताहिरी, अगलाबी, दूलूनी, ईख्शीदी, हमदानी, सफारी, सामानी, गजनवी, अताबक, उबईदी, खुवारिजमशाही, गौरी और दिल्ली के सुलतान, अयूबी, अरब के सुलतान, चंगेजखाँ से पहले के तुर्किस्तानी सुलतान, चंगेजखाँ और उसके वंशज, ईरान के विविध शासक तथा इलखानी आदि, हिन्दुस्तान के विविध शासक जैसे दक्षिण गुजरात, मालवा, खानदेश, बंगाल, जौनपुर, कश्मीर, सिन्ध, मुलतान, कुस्तुनतिनिया के उस्मानी, गुरगानी, बाबर, हुमायूं, अकबर, जहाँगीर और ईरान के सफी बादशाह।

आकार छोटी-फोलियो 884 पृष्ठ, प्रति पृष्ठ पर सत्रह पंक्तियाँ। जिल्द के आरम्भ में लिखा हुआ है कि इसमें 522 फोलियो हैं। शायद शुरू में यही संख्या होगी या फिर इसमें से कुछ पृष्ठ निकाल दिये गये होंगे।

हिन्दुस्तान से सम्बन्ध रखने वाले भाग में गजनवी सुलतानों का इतिहास 86 से 90 तक है। गौरी सुलतानों का इतिहास और दिल्ली के सुलतानों का इतिहास शाहबुद्दीन से सिकन्दर लोदी के पुत्र इब्राहीम लोदी तक का 141 से 157 तक है। हिन्दुस्तान के छोटे राजवंश 262 से 344 तक हैं। इनमें गुजरात पर 18 और कश्मीर पर 20 फोलियो हैं। बाबर का वृत्तान्त 372 पर, हुमायूं का 373 पर, अकबर का 385 पर और जहाँगीर का 437 पर शुरू होता है। अगले हिस्सों में तारीखों पर विशेष ध्यान रखा गया है। संभवतः अपने सरकारी काम के कारण लेखक को ऐसे मामलों में सही तारीख लिखने का मूल्य ज्ञात हो गया होगा। आगे दो अवतरण दिए गए हैं। एक से पता लगता है कि वह बख्शी था और दूसरे से प्रकट होता है कि वह माल विभाग का कारकून था।

यह ग्रन्थ दुर्लभ है। लखनऊ के मोतीमहल पुस्तकालय में एक पुरानी प्रति है। नवाब टोंक के पास भी एक प्रति है और इसी प्रकार कानपुर निवासी मुहम्मद हसन और लाहौर निवासी फकीर नुरुद्दीन के पास भी एक-एक प्रति है। दूसरी प्रतियों के विषय में सुना गया है। मोहम्मद हसन वाली प्रति में पूरे सफवी वंश का इतिहास है।

अवतरण

5 शहरयूर 1003 हिजरी को बहराम मिर्जा सफवी का पौत्र और सुलतान हुसैन मिर्जा का पुत्र मुजफ्फर हुसैन मिर्जा अपने कन्धार की जागीर से बादशाह अकबर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के दरवार में आया और उसको पाँच हजार का अमीर नियुक्त किया गया। उसके चार पुत्र थे—वहराम, सदर, अलफस और तहमास्प मिर्जा। उसको सम्भल की सरकार जागीर में दी गई और कन्धार शाह वेगखाँ कावुली को मिला।

शनिवार 9 शफर 1004 हिजरी को कविराज शेख फैजी की मृत्यु हुई। इनका जन्म 1 शावान 954 हिजरी में हुआ था। इसी वर्ष (1004 हिजरी) हकीम अवुल फतक के भाई हाकिम की मृत्यु हुई और शहजादा मुराद को वरार की विजय प्राप्त हुई। यह निजाम-उल-मुल्क के राज्य में दक्षिण का एक सूवा है। इसी वर्ष 18 मुरदाद को एक हिरन ने वादशाह के सींग मारा जिससे उसके एक अन्डकोप में चोट आई। 29 दिन तक मर्मान्तिक वेदना रही और इस खतरे से सारे हिन्दुस्तान में सनसनी मच गई, जो उसके आराम होने पर शान्त हुई। इसी वर्ष दक्षिण में खानदेश के शासक राजा अलीखाँ की मृत्यु हुई। वह वहाँ शाही सेना के साथ था।

1005 हिजरी में महल के अन्दर नौरोजा के उत्सव के लिए जो डेरा लगाया गया था उसमें आग लग गई और रिवाज के अनुसार जो चीजें इस त्यौहार के लिए इकट्ठी की गई थीं भस्म हो गईं। 21 फरवरदीन को वादशाह कश्मीर के लिए रवाना हुआ और वहाँ तीन महीने और बीस दिन रहा। फिर उसने लाहौर वापस लौट कर शहजादा दानियाल को इलाहावाद के सूबे का प्रवन्ध अपने हाथ में लेने के लिए वहाँ भेजा। उसे सात हजारी मनसवदार का पद प्रदान करके सम्मानित किया गया और कलीजखाँ उसका अध्यापक नियुक्त हुआ। इसी वर्ष शहजादा शाह मुराद का पुत्र मिर्जा रुस्तम छः वर्ष और तीन मास की भारी वीमारी के पश्चात् लाहौर में मर गया।

17 शहरयूर 1006 हिजरी को वादशाह ने राजा हरदास को मन्त्री नियुक्त किया। ख्वाजा शमशुद्दीन को भी आदेश हुआ कि हरदास के साथ मंत्री का काम करे।

इसी वर्ष 23 आवान को मिनूचिहिर वेग पाँच सौ कजिलवाश सवारों के साथ शाह अव्वास के राजदूत की हैसियत से लाहौर में वादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ। उसके साथ मीर जियाउलमुल्क भी था जिसको वादशाह ने शाह अव्वास के साथ यादगार सुलतान के साथ एक काम के लिए भेजा था।

इसी मास की 26 तारीख को वादशाह लाहौर से आगरे की ओर रवाना हुआ क्योंकि वह दक्षिण की विजय को जल्द समाप्त करना चाहता था।

22 उरदी-बिहिश्त को शहजादा शाह मुराद की दक्षिण में मृत्यु हो गई। तीर मास की 2 तारीख को शहजादा दानियाल दक्खिन को दवाने के लिए रवाना किया गया। इस वर्ष के उत्तरार्द्ध में आसफखाँ को दीवान के पद पर नियुक्त करके सम्मानित किया गया।

6 मिहिर 1007 हिजरी को आगरा कलीजखाँ के सुपुर्द करके वादशाह ने दक्षिण की ओर प्रयाण किया। सुलतान सलीम को राजा मानसिंह और शाह कुलीखाँ मुहिरम के साथ उदयपुर के राणा के अमीरों को दण्ड देने के लिए भेजा गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस वर्ष बादशाह ने गुजरात की जागीर खान-ए-आजम को दी और उसके ज्येष्ठ पुत्र मिर्जा शमसी को वहाँ के मामले तय करने के लिए नियुक्त किया। इस इतिहास के लेखक को दहपुर के पास से गुजरात का बख्शी बनाकर भेजा गया।

1008 हिजरी में ख्वाजा शमशुद्दीन की मृत्यु हो गई। इसको बादशाह ने आगरे को प्रयाण किया उसके बाद इसको पंजाब का दीवान नियुक्त किया गया था। इसी वर्ष शहजादा सलीम ने, जिसको उदयपुर के राणा को दण्ड देने के लिए आदेश दिया गया था, इलाहाबाद के समीप पहुँचकर बादशाह की उपाधि धारण कर ली और बिहार के कोष को लूट लिया जिसमें तीन लाख रुपये थे और उन तमाम जागीरों को जब्त कर लिया जो दरबार के नौकरों को प्रदान की गई थीं। इस वर्ष के शहरयूर मास की 6 तारीख को शहजादा दानियाल मिर्जा शाहरुख खानखाना मिर्जा युसूफखाँ और अन्य लोगों ने दक्खिन में अहमदनगर जीत लिया।

रवीवार 14 शफर 1019 हिजरी को कुतुब नामक एक व्यक्ति ने, जो मुलतान के ऊजा में पैदा हुआ था और जो अपने आपको सुलतान खुसरू कहता था और जिसके साथ बहुत से लुटेरे उज्जैनी राजपूत थे, पटना नगर में वापस गया और उस पर अधिकार कर लिया और वहाँ का किला भी दबा लिया। कारण यह था कि बिहार का सूबेदार, जिसका नाम अफजलखाँ था और जो शेख अफजल का पुत्र था, उस समय गोरखपुर में नहीं था। किले का कोष उसने अपने सैनिकों में बाँट दिया। इस स्थिति की सूचना पाकर अफजलखाँ कूच दर कूच शुक्रवार 19 शफर को पुनपुन नदी के तट पर पहुँचा जो पटना से आठ मील है। उसको लड़ाई करने के लिए बाध्य करने के हेतु कुतुब नगर में से निकला और एक जोर की लड़ाई हुई जिसमें कुतुब हार गया। तब उसने भागकर किले में शरण ली जिस पर अन्त में सूबेदार ने अधिकार कर लिया। कुतुब को बन्दी बनाकर रविवार 21 शफर को मार डाला गया।

एक महीने के बाद बादशाह ने आदेश जारी किया कि इलियास बहादुर इनायत बेग दीवान और बनारस के शेख हसन को तथा अन्य लोगों को गधों पर बिठाकर आगरा लाया जाय और उनका सिर और दाढ़ी बिल्कुल मुड़ा दी जाय और स्त्रियों के कपड़े पहना दिए जाएँ क्योंकि यद्यपि अफजलखाँ ने पटना नगर इसके सुपुर्द किया था और इसको उसकी रक्षा करनी चाहिए थी परन्तु ये लोग वहाँ से बुरी तरह भाग गए थे। इस इतिहास के लेखक को पटना का दीवान बनाकर इस समय वहाँ भेजा गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तारीख-ए-फरिश्ता

लेखक : मोहम्मद कासिम हिन्दूशाह फरिश्ता

इस ग्रन्थ को सब लोग हिन्दुस्तान के सामान्य इतिहासों में ऊँचा मानते हैं और यह इसके योग्य भी है । लेखक मोहम्मद कासिम हिन्दुशाह उपनाम फरिश्ता अशतराबाद में सन् 1570 के लगभग उत्पन्न हुआ था। यह स्थान केस्पियन सागर के तट पर स्थित है । उसके पिता का नाम गुलामअली हिन्दूशाह था और वह विद्वान आदमी था । जब लेखक लड़का ही था तो वह अपना देश छोड़कर हिन्दुस्तान में आया । अन्त में मुर्तजा निजामशाह के राज्य में वह दक्खिन में अहमदनगर पहुँचा और वहाँ मुर्तजा के पुत्र मीरान हुसैन को फारसी पढ़ाने के लिए नियुक्त हो गया । परन्तु इस नियुक्ति के थोड़े दिन बाद ही उसकी मृत्यु हो गई और फरिश्ता बचपन में ही पितृहीन हो गया ।

अपने पिता के कारण फरिश्ता का दरबार में पहले ही परिचय हो चुका था । इसलिए मुर्तजा निजामशाह की उस पर कृपा रहने लगी और वह अपने शासक का विश्वासपात्र सलाहकार बन गया । यद्यपि उस समय लगभग सोलह-सत्रह वर्ष का ही था तो भी जिस दिन सुलतान को शहजादा मीरान हुसैन ने गद्दी से उतारा तब वह अंगरक्षकों का कप्तान था । यदि शहजादा उसको नहीं पहचानता और स्वयं उसकी जान न बचाता तो उसकी भी वही दशा होती जो सुलतान के अन्य सेवकों की हुई थी ।

गद्दी पर बैठने के एक वर्ष पहले ही जब मीरान हुसैन गद्दी से उतार कर मार दिया गया तो ऐसा मालूम होता है कि फरिश्ता ने होने वाली क्रान्ति में कोई सक्रिय भाग नहीं लिया । वह शिया था, इसलिए उसके सम्प्रदाय के कारण दरबार में उसका प्रभाव नहीं जम सकता था, क्योंकि वहाँ सुन्नी लोगों का आधिपत्य था । कुछ अर्से बाद ही वह अहमदनगर छोड़कर बीजापुर चला गया और वहाँ उसके कथनानुसार वह 1589 ई० में पहुँचा । वहाँ वजीर दिलावरखाँ ने उसके साथ कृपापूर्ण भेंट की और उस समय के शासक इब्राहीम आदिलशाह से उसका परिचय करवाया । जब दिलावरखाँ भाग गया तो फिर इनायतखाँ शिराजी ने उसका बीजापुर के दरबार में परिचय करवाया । यह बात 1593 के लगभग हुई । अब तक सुलतान ने उसके प्रति कोई विशेष कृपा प्रदर्शित नहीं की थी परन्तु अब उसके

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

साथ कृपापूर्वक भेंट हुई और उसने रोजत-उस-शफा की एक प्रति सुलतान को भेंट की और साथ ही यह भी कहा कि निजामुद्दीन बख्शी के अतिरिक्त कभी किसी ने भारतवर्ष के मुसलमानों का सामान्य इतिहास नहीं लिखा है और यह पुस्तक संक्षिप्त और अपूर्ण है विशेषकर दक्खिन के विषयों में। सुलतान ने उसे आदेश दिया कि यह कमी पूरी की जाय और इस प्रकार के अन्य ग्रन्थों में जो झूँठी और चापलूसी की बातें लिखी गई हैं उनसे बचा जाय। इनायतखाँ ने उसका परिचय करवाया उससे पहले वह शायद किसी सैनिक पद पर नियुक्त था क्योंकि उसने लिखा है कि जमालखाँ ने उसको आहत करके बन्दी बना लिया था। जमालखाँ ने अहमदनगर पर अतिक्रमण करके अधिकार कर लिया था परन्तु इसका अधिक विवरण लिखने के लिए यहाँ अवसर नहीं है।

इसके थोड़े समय बाद ही वह बचकर भाग गया और अपना समस्त शेष जीवन उसने इब्राहीम आदिलशाह के दरबार में सम्मानपूर्वक व्यतीत किया और अपने अवकाश का समय इतिहास की रचना में लगाया। इस घटना के बाद वह अपने विषय में प्रायः कुछ नहीं कहता। 1594 में वह शहजादी बेगम सुलताना को बीजापुर से अहमदनगर लाया और जब मुंगीपतन में उसकी शहजादा दानियाल मिर्जा से शादी हुई तो वह वहाँ उपस्थित था और उसके साथ वह खानदेश में बुरहानपुर तक गया था जो उसके पति की राजधानी थी।

जब वह वापस बीजापुर आया तो उसको बादशाह जहाँगीर के पास भेजा गया था। जनरल ब्रिग्ज का अनुमान है कि उसको अकबर की मृत्यु पर शोक प्रकट करने के लिए भेजा होगा और साथ ही जहाँगीर के राज्याभिषेक पर बधाई भी भेजी होगी। उस समय जहाँगीर कश्मीर जा रहा था। फरिश्ता उससे 1606 में लाहौर जाकर मिला। वापसी पर वह लम्बे रास्ते से आया क्योंकि वह बिहार के रोहतास दुर्ग के विषय में लिखता है कि हिन्दुस्तान में यह सबसे अधिक दुर्गम दुर्ग है। यात्रा करते हुए वह बदखशाँ तक पहुंच गया था। इस अर्से में उसने बहुत कुछ देखा होगा और इतिहास के लिए विपुल सामग्री का संग्रह किया होगा।

उसकी मृत्यु-तिथि के विषय में कुछ मालूम नहीं है। ब्रिग्ज का अनुमान है कि उसकी मृत्यु 1612 में हुई होगी। इस हिसाब से वह 41 वर्ष तक जीवित रहा। एम० जे० मोहल का अनुमान है कि कम से कम 1623 तक उसने अपना इतिहास दोहराया था। इस प्रकार उसकी आयु कम से कम 73 वर्ष तो रही होगी।

इस इतिहास में भूमिका, 12 अध्याय और उपसंहार है।

विषय-सूची

भूमिका—हिन्दू लोगों के विषय में, भारत में इस्लाम की प्रारम्भिक उन्नति पृ० 5–30।

अध्याय 1—गजनी और लाहौर के सुलतान, पृ० 31–91।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अध्याय 2— दिल्ली के सुलतान, पृ० 92–517।

अध्याय 3—दक्षिण के सुलतान छः प्रकरणों में—1. गुलबर्गा, 2. बीजापुर, 3. अहमदनगर, 4. तिलंगा, 5. वरार, 6. विदर—पृ० 518 से 730 और जिल्द 2 पृ० 1–349।

अध्याय 4—गुजरात के सुलतान, पृ० 350–460।

अध्याय 5—मालवा के सुलतान, पृ० 460–541।

अध्याय 6—खानदेश के सुलतान, पृ० 541–568।

अध्याय 7—वंगाल और विहार के सुलतान, पृ० 568–603।

अध्याय 9—सिन्ध के सुलतान, पृ० 625–639।

अध्याय 10—कश्मीर के सुलतान, पृ० 640–700।

अध्याय 11—मलावार का वृत्तान्त, पृ० 700–710।

अध्याय 12—हिन्दुस्तान के दरवेशों का वृत्तान्त, पृ० 710–786।

उपसंहार—हिन्दुस्तान के भूगोल और जलवायु का वृत्तान्त 786–892।

आकार—फोलियो, दो जिल्दें। प्रथम जिल्द में 730 पृष्ठ, दूसरी जिल्द में 892 पृष्ठ। प्रति पृष्ठ पर बीस पंक्तियाँ।

भूमिका में मुसलमानों के आक्रमण से पहले के हिन्दुस्तान के इतिहास की अस्पष्ट रूपरेखा है। इसका उतना ही मूल्य है जितना लीवी की प्रथम दस अध्यायों का या डा० हैनरी कृत ग्रेट ब्रिटेन के इतिहास की प्रथम जिल्द का। यह ग्रन्थ ओसियन की कविताओं पर आश्रित है। अन्य हिन्दुस्तानी इतिहासकारों ने उसी का अनुसरण किया है और अब तक किसी ने भी इस अन्धकार युग का आलोंचनात्मक वृत्तान्त लिखने का प्रयास नहीं किया है। राजवंशों और जातियों को वहुत गड़बड़ कर दिया है। शासकों का क्रम वनाए रखने के लिए ऐसा किया गया है। यह सम्भव है कि ईरानी और हिन्दुस्तानी शासकों का तिथि साम्य इन परम्परागत और प्राचीन कविताओं और गाथाओं से कुछ वन सके।

इस ग्रन्थ का महत्व मुस्लिम काल से शुरू होता है। इस युग का इतिहास अच्छे से अच्छे प्रमाण ग्रन्थों के आधार पर लिखा गया है। यह छोटे-छोटे राजवंशों के वर्णन से भी भरा हुआ है। जिस स्थिति में यह लिखा गया उसमें ऐसा होना ही चाहिए था।

लेखक ने अपनी भूमिका में लिखा है कि वह पैंतीस विभिन्न इतिहासकारों के प्रति वड़ा ऋणी है। परन्तु इनके अतिरिक्त उसने अन्य पुस्तकों को भी उद्धृत किया है। उसने अपने पहले के इतिहासकारों का इतना उत्तम और ईमानदारी से उपयोग किया है कि उनमें दी हुई घटनाएँ कोई नहीं छोड़ी हैं और यह ग्रन्थ लगभग वेकार से हो गए हैं। जब उनको पढ़ने की आवश्यकता हिन्दुस्तानी इतिहास के उसी पाठक को हो सकती है जो उसको बहुत ही ध्यान से पढ़ना चाहता हो।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ऐसे पाठक को कहीं-कहीं कोई रोचक बात मिल सकती है जो फरिश्ते ने नहीं लिखी हो। इसलिए इन पुराने इतिहासों की प्रतियाँ अब नहीं मिलतीं। फरिश्ता में किसी प्रकार का पक्षपात भी नहीं है और न किसी के प्रति उसके बुरे विचार हैं। वह जिसके राज्य में रहता था उसकी भी चाटुकारिता नहीं करता था। सैयदों का उल्लेख करते हुए तो उसमें कुछ साम्प्रदायिक कटुता दृष्टिगत होती है और असहाय हिन्दुओं के संहार का वर्णन करते हुए भी उसमें इस्लामी कट्टरपन है परन्तु अपने धर्म वाले दूसरे लेखक की सी भावना से वह मुक्त है। इन लोगों ने इस प्रकार की क्रूरताओं का वर्णन और भी बुरा किया है।

डो ने फरिश्ता के विषय में लिखा है कि वह जितना धार्मिक पक्षपात से मुक्त है उतना ही भय और राजनैतिक चाटुकारिता से भी दूर है। वह अच्छे कामों की प्रशंसा और बुरे कामों की निन्दा किए विना नहीं रहता। बुरा काम करने वाला चाहे जितना ऊँचा हो उसकी भी वह बुराई करता है। परन्तु आगे दिए जाने वाले अवतरणों से यह प्रकट होगा कि उसकी प्रशंसा को कुछ रुक कर जाँचना चाहिए।

लेखक ने अपने इतिहास का नाम गुलशन-ए-इब्राहीमी और नौरसनामा लिखा है। प्रथम नाम तो उस बादशाह के नाम है जिसको यह भेंट किया गया है। इसलिए बार-बार तारीख-ए-इब्राहीमी के नाम से इसको उद्धृत किया गया है। इसके संपोशक इब्राहीम आदिलशाह ने 1599 में एक नई राजधानी बनाना शुरू किया था और इसका नाम नौरस रखा था। इसलिए इस ग्रन्थ का दूसरा नाम नौरसनामा इसकी यादगार में रखा गया है।

फरिश्ता ने अपने इतिहास की प्रथम घूंट इब्राहीम आदिलशाह को सन् 1606 में पिलाई थी परन्तु यह स्पष्ट है कि अपने शेष जीवन में वह इसको दोहराता रहा और जहाँ भी कमी थी वहाँ नए प्रकरण भी जोड़ता रहा। ब्रिग्ज ने लिखा है कि फरिश्ता ने 1611 में सूरत में पुर्तगालियों के कारखानों का वर्णन किया है और उसके इतिहास में यह अन्तिम घटना है। इसलिए अनुमान होता है कि उसके थोड़े दिन बाद ही उसकी मृत्यु हो गई होगी। परन्तु उसने असीर का विस्तृत वर्णन 1614-15 में लिखा था और इसका कोई कारण नहीं मालूम होता कि उसने इसके दस वर्ष बाद की घटना का उल्लेख किया हो।

पहली और दूसरी जिल्दों में उसने अकबर तक दिल्ली के बादशाहों का वर्णन किया है इसका अनुवाद 1768 में कर्नल ए० डो ने इस भाँति किया है कि गिब्बन ने अपनी आलोचनात्मक बुद्धि के द्वारा यह सन्देह किया कि फरिश्ता से तो आसियन की शैली अच्छी थी। वह यह भी लिखता है कि फरिश्ता की भाषा इतनी ओजस्वी है कि मूल घटनाएँ इसमें छिप जाती हैं। अपनी पुस्तक के विषय में डो ने लिखा है, "अनुवादक जानता है कि ऐतिहासिक घटनाओं के संजीदा वृत्तान्त में काव्य-शैली उपयुक्त नहीं है। इसलिए उसने फरिश्ता की अलंकृत भाषा के कहीं-कहीं पंख काट डाले हैं और उसको साधारण भाषा में लिखा है परन्तु लेखक के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मूल अर्थ को ज्यों का त्यों रखा गया है।" परन्तु फिर भी उसने अपनी शैली को और भी अधिक काव्यमयी बना दिया है और उसके कुछ वाक्य मूल से भी अधिक अलंकृत और कठिन हो गए हैं तथा लेखक की सम्मति के साथ अपने मत को इतना गूंथ दिया है कि इनको अलग-अलग करना कभी-कभी कठिन हो जाता हैं और कभी-कभी तो फरिश्ता के अभिप्राय से बिल्कुल भिन्न अर्थ निकलता है और साधारण से साधारण वाक्य भी ऐसे हैं जिनका और से और ही अर्थ हो जाता है। उसने भूगोल सम्बन्धी भूलें भी बहुत की हैं जिसके कारण अगले संकलनकर्ताओं ने भी भूलें की हैं।

यह ओजस्वी शैली इसलिए काम में लाई गई है कि भूल को भलीभांति न समझा जाय और पाठक अलंकारों में उलझ जाएं परन्तु डो के पक्ष में यह भी याद रखना चाहिए कि फारसी से अँग्रेजी भाषा में यह प्रथम अनुवाद है और इसके प्रकाशन से इस भाषा के अध्ययन को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था और उस समय फारसी भाषा की पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति बड़ी कठिन थी। तीसरी जिल्द में वह फरिश्ता को छोड़कर पीछे के कई इतिहासों का सारांश देता है।

1786 में श्री एन्डरसन ने एशियाटिक मिसीलेनी में ग्यारहवीं पुस्तक का मूल और अनुवाद प्रकाशित किया था। दक्षिण के इतिहासकार कैप्टेन जोनथिन स्काट ने अच्छा अनुवाद किया है परन्तु वह इतना सही नहीं है जैसी उसकी प्रशंसा होती है। यह अनुवाद दो जिल्दों में 1794 ई० में श्रूसवरी में प्रकाशित हुआ था और उसको पुनः लन्दन में प्रकट किया गया था। पहला अनुवाद फरिश्ता का है दूसरे में औरंगजेब के शासन का वृत्तान्त और साम्राज्य के पतन का हाल दिया गया है जिसके विषय में अगली जिल्द में और अधिक कहा जायगा। फरिश्ता और उसके अनुवादक के नाम एम० डीला रिचार्ड डेली ने मिलाकर जोनथन स्कोफ हैरिसटल कर दिए हैं जो मनोरंजक हैं। स्टूअर्ट ने भी दसवें अध्याय के कुछ अंश का अनुवाद किया था। यह उसने अपने कैटेलाग के परिशिष्ट में नमूने के तौर पर दिया था।

परन्तु इस समस्त ग्रन्थ का अनुवाद जो जनरल ब्रिग्ज ने चार जिल्दों में 1829 में किया उसमें अन्य अनुवाद छिप गये। यह अनुवाद हिन्दुस्तान के मुस्लिम वंशों से सम्वन्ध रखने वाली घटनाओं का अमूल्य भण्डार है। अँग्रेजी पाठकों को जो अनुवाद उपलब्ध हैं उनमें यह सर्वोत्तम है। उसने कुछ परिशिष्ट भी जोड़ दिये हैं और जो इतिहास मूल में नहीं हैं उनका भी इसमें सब समावेश कर दिया गया है। लेखक ने लिखा है कि उसको कुतुबशाही इमादशाही और बरीदशाही राजवंशों का लिखित इतिहास नहीं मिला। इसलिए अनुवादक ने गोलकुन्डा के सुलतानों के इतिहास में एक 147 पृष्ठ का परिशिष्ट लगा दिया है। हिन्दुस्तान में पुर्तगाली लोगों के युद्धों का जहाँ तक दक्षिण के इतिहास से सम्बन्ध है उसका तिथि-क्रम भी संक्षेप में किया गया है और तुलनात्मक तिथिक्रम भी बतलाया है। पुरुष वाचक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नाम उपाधियाँ एशियाई शब्द दरबारियों, पर्वतों, नदियों और नगरों के नाम भी आकार आदि क्रम से दिये हैं और इस सारे ग्रंथ में कई बहुमूल्य टिप्पणियाँ मिलती हैं।

परन्तु उसने हिन्दुस्तान के सन्तों के इतिहास को रहने दिया है जो मूल के बारहवें अध्याय में दिया हुआ है। इसमें ऐतिहासिक बातें तो नहीं हैं परन्तु उस समय की भावनाओं, कथाओं और प्रचलित विश्वासों का इससे कुछ आभास मिलता है। इन भावनाओं और कथाओं का हिन्दुस्तान के सन्तों के सिद्धान्तों से, अध्ययन से, चमत्कारों से और मूर्खताओं से बड़ा सम्बन्ध है। इनमें से कुछ लोगों का अपने समय के इतिहास पर, उनके परामर्श और आध्यात्मिक प्रभाव के कारण बड़ा प्रभाव पड़ा है। सुलतानों पर उनका प्रभाव था। वे उनके आज्ञाकारी और भक्त शिष्य थे। कुछ महत्वपूर्ण बातें इस अनुवाद में छोड़ दी गई हैं। फिरोजशाह के इतिहास में से केवल कुछ ही सन्दर्भ लिए गये हैं और ये भी अनुवाद और मूल के भेद उदाहरण के रूप में लिए गये हैं। यह भेद कुछ तो इसलिए है कि अनुवादक ने स्कॉट और डो का अनुसरण किया है और कहीं कोई परिवर्तन नहीं है। परन्तु मुख्य कारण यह है कि अनुवाद के लिए उसने 1020 हिजरी वाले संस्करण का उपयोग किया है और उसने उन परिवर्धनों को प्राप्त नहीं किया जो लेखक अपने अन्तिम समय तक करता आया था। प्रथम अनुवाद का नया संस्करण तो इस योग्य अनुवादक के लिए बड़े परिश्रम का काम होगा। परन्तु एक ऐसी पूरक जिल्द तैयार कर दी जाय जिसमें ये भूलें सुधार दी जाय तो यह बहुत अच्छा काम हो सकता है। साधारण पाठक के लिए तो इसका कोई अधिक महत्व नहीं होगा परन्तु विद्वानों के लिए यह आवश्यक है जिससे वे आलोचनात्मक अनुसन्धान कर सकें और फिर उन्हें मूल की कुछ भी आवश्यकता न रहे। वर्तमान अनुवाद अन्य दृष्टि से तो प्रशंसनीय है परन्तु सूक्ष्म अध्ययन के लिए मूल के बिना काम नहीं चल सकता। इन कुछ अवतरणों में ऐसे सन्दर्भ हैं जो बाद में लिखे गये हैं और जिनमें घटनाओं, नामों, उपाधियों और स्थानों का ऐसा उल्लेख है। ये हिन्दुस्तान के इतिहास को यथावत् समझने के लिए बहुत महत्व का है।

जनरल ब्रिग्ज के अनुवाद की समालोचना जे० वॉन हैमर ने वीयना की जहरबूचर पत्रिका में की है। यह आलोचना कुछ अनुदार है क्योंकि इसमें इस पुस्तक के गुणों की उपेक्षा की है और तिथि तथा भूगोल की बड़ी-बड़ी भूलों के लिए लेखक को दोष दिया है। ऐसी कई तिथियों का उदाहरण दिया है जिससे पता चलता है कि लेखक ने सावधानी नहीं की है या गलत सारणियों का उपयोग किया है परन्तु भूगोल के विषय में लेखक ने ऐसी कोई बड़ी भूल नहीं की है जो दोष माना जाय। अनुवादक ने भूमिका में अपने ढंग को समझाया है और फिर पूर्णतया उसी का अनुसरण किया है। यह ढंग उन सब शैलियों से अच्छा है जिनका इतने बड़े ग्रन्थ के विषय में अब तक उपयोग किया गया है। प्रत्येक नाम को ऐसे लिखा गया है जिससे यह प्रकट हो कि अनुवादक को इसकी मूल हिज्जे का पता होगा। यह बात

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

डो के विषय में नहीं कही जा सकती वल्कि अधिकांश एशियाई अनुवादकों के विषय में भी यह लागू नहीं हो सकती। नामों को इस प्रकार लिखा गया है कि कोई भी विद्वान उसको मूल रूप दे सकता है और अनभिज्ञ पाठक भी उच्चारण के विषय में भूल नहीं कर सकता। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि यह अनुवाद अँग्रेजों के लिए किया गया था और एशियाई साहित्य का विशेषज्ञ कोई भी अँग्रेज इस अनुवाद में लिखे हुए शब्दों के उच्चारण में कोई भूल नहीं कर सकता। परन्तु यदि यह शब्द अत्यन्त व्यवस्थित विधि से लिखे जाते तो भूल हो सकती थी। यह दूसरी वात है कि यह प्रकार आलोचकों और विद्वान पाठकों की आँखों को अच्छा लगता।

आलोचक ने कुछ शब्द चुने हैं। यदि हम इन पर ध्यान दें तो जिनको भारी भूल कहा गया है हम उनकी प्रशंसा करेंगे और हम इस वात का निर्णय कर सकेंगे कि आलोचक की कठोर मीमांसा उचित है या नहीं। आलोचक कहता है कि कुतवेद्दीन के स्थान पर कुतवुद्दीन लिखा गया है और अलाउद्दीन के स्थान पर अलाहउद्दीन लिखा गया है। गयासुद्दीन को गईयाउद्दीन, मैंसूए को मसूद, इविक कों एवक, दिक्खन को डेकन और गुदसचरात को गुजरात, अवुनासिर को अवूनसर और तर्दशुमेत जैमिनी को तर्जुमा येमनी लिखा गया है।

ये उदाहरण दो पृष्ठों से लिए गये हैं। जिन पाठकों के कान और आँखें हैं उन्हें आलोचक की शुद्धियों में कोई लाभ दिखाई नहीं देगा। चाहे ये लोग अंग्रेज हों या नहीं हों। ऐसी छोटी-छोटी वातों को इतना महत्व देना किसी विद्वान के लिए शोभा की वात नहीं है। ऐसी भूलें हमारे अनुवादक ने ही नहीं की हैं वल्कि संसार के ज्ञानी से ज्ञानी विद्वान भी इससे मुक्त नहीं है। परन्तु इस आलोचक ने कोई कसर नहीं रखी है। तुच्छ से तुच्छ हिज्जे या उच्चारण को वड़ा महत्त्व दिया है। यदि कोई पाठक इस विषय में और घुसना चाहे तो वह डीज की पुस्तक पढ़े जिसमें वतलाया गया है कि आलोचक के अज्ञान के कई सौ प्रमाण हैं। फालर मेयर ने 22 प्रसिद्ध नाम ऐसे वतलाए हैं जिनके विषय में आलोचक ने बड़ी कठोरता की है। स्वयं मैंने भी व्रिग्ज की कुछ कमियाँ वतलाई हैं परन्तु मैं इसको महत्त्व नहीं देता। मैं तो अनुवादक के प्रति बड़ा कृतज्ञ हूँ कि उसने स्वयं परिश्रम करके मेरे परिश्रम को वचाया है।

इस अनुवाद की समीक्षा एम० जूलस मोहल ने भी की है। परन्तु वह निष्पक्ष समालोचक है। उसने एक लेख माला लिखी है जिसमें इस पुस्तक के विषयों की वड़ी जानकारी है। उसका लिखा हुआ फरिश्ता का जीवन-चरित्र शुद्ध और पूर्ण है और यह अनुवाद के आधार पर नहीं लिखा गया है वल्कि मौलिक है। वम्वई में इसका लीथोग्राफ तैयार हुआ था। इसके साथ उसने अपनी योग्यतापूर्ण समालोचना का भी कुछ अंश जोड़ दिया है। वह समस्त अनुवादकों की यथायोग्य प्रशंसा करता है परन्तु साथ ही वह सव के दोष भी वतलाता है। इससे प्रकट होता है कि इस समस्त ग्रन्थ का ठीक-ठीक अनुवाद करने की उसमें कितनी योग्यता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

है। फरिश्ता के इतिहास को हिन्दुस्तान में सब लोग जानते हैं। कम से कम नाम का तो सबको पता है और बड़े-बड़े नगरों में ऐसे बहुत कम पुस्तकालय हैं जहाँ इसकी प्रति न मिलती हो। यदि हम इसके साथ नौरसनामा और तारीख-ए-इब्राहीमी जोड़ दें तो फिर इस आकार का और कोई ग्रन्थ इतनी संख्या में नहीं मिल सकता। नौरसनामा और तारीख-ए-इब्राहीमी फरिश्ता के इतिहास के नाम हैं परन्तु वर्तमान अनभिज्ञ लोगों में से बहुत कम को इस बात का पता है। ऐसी कई प्रतियाँ हैं जिनमें सुन्दरता और शुद्धि है परन्तु 1831 के लीथोग्राफ संस्करण सबसे बढ़िया है। बम्बई प्रेसीडेन्सी में अनेक फारसी की पुस्तकें छपी हैं जो हिन्दुस्तान में इधर के लीथोग्राफिक छापेखानों को मात करती है।

इस संस्करण को तैयार करने में जिन प्रतियों से काम लिया गया है उनका आलोचनात्मक वृतान्त हमें नहीं मिलता। जनरल ब्रिग्ज ने प्रेस के लिए यह प्रति तैयार की थी परन्तु वह छपने के समय इसका निरीक्षण नहीं कर सका। उससे हमें इतना ही पता लगता है कि "उसने फरिश्ता का इतिहास फारसी में लिखा हुआ प्राप्त किया जिसमें कई अच्छी टिप्पणियाँ थीं और कितनी ही अशुद्धियाँ सुधारी गई थीं। उसके बाद इसकी अन्य कई प्रतियों से तुलना की गई और 1827 में मैंने एक प्रति छपने के लिए बम्बई में छोड़ी थीं।" वह इस बात को स्वीकार करता है कि वह मीर खैरात अलीखाँ का, जिसको प्रायः मुश्ताक कहा जाता है, बड़ा ऋणी है। उसने इसके परिश्रम में हाथ बँटाया था। उसने अपना समस्त जीवन ऐतिहासिक खोज में व्यतीत किया था और उसने कई वर्ष तक दक्षिण में घूमकर वहाँ के सब प्रसिद्ध नगरों में जो भी फारसी के शिलालेख मिले उनकी प्रतिलिपियाँ तैयार की थीं।

यह बड़ी विचित्र बात है कि यद्यपि जनरल ब्रिग्ज ने यह पुस्तक बड़ी ही सावधानी से तैयार की थी परन्तु उसने अपने नाम का उल्लेख नहीं किया है। इसमें भूमिका नहीं है और न शीर्षक है परन्तु दूसरी जिल्द के अन्त में एक पृष्ठ पर लिखा हुआ है कि यह काम श्री एलिफिन्सटन के आदेश से शुरू किया गया था और बड़ी सावधानी से तथा कैप्टेन जार्ज जर्विस की व्यवस्था के अनुसार पूरा किया गया है। यह भी लिखा गया है कि पहली जिल्द मिर्जा हसन शिराजी ने और दूसरी मिर्जा हमजा माजिनदेरानी ने लिखी है। कैप्टेन जर्विस ने दूसरों के परिश्रम का यश स्वयं लेना चाहा है। परन्तु एम० जूलिस मोहिल उसको इस दोष से मुक्त कर देता है क्योंकि जब यह पुस्तक छप रही थी तो यह अफसर 'कैप आफ गुड होप" में था। परन्तु मोहिल यह दोष फारसी के लीथोग्राफर को देता है जो चाटुकारिता करके अपने स्वामी का विश्वासपात्र बनना चाहता था।

जब लिथो के छपे हुए पृष्ठ लंदन पहुंचे तो जनरल ब्रिग्ज ने बड़ा उपयुक्त शीर्षक लिखा। इसमें कहा गया है कि 'इस ग्रन्थ का सम्पादन और संकलन जनरल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जोन ब्रिग्ज ने विविध प्रतियों से और मुन्शी मीर ख़ैरात अलीख़ां मुश्ताक इलाहाबादी की सहायता से किया है।"

कुछ और भी बातें छूट गई हैं जिसके कारण हमको खेद होता है कि यह संस्करण यूरोपीय निरीक्षण में अधिक ध्यान से लिथो से नहीं छापा गया। यह तो निश्चित है कि व्यक्तियों के और स्थानों के नाम असाधारण शुद्धि के साथ लिखे गए हैं परन्तु वे पूर्णतया शुद्ध नहीं हैं। हाशिए पर तारीखें दी हुई हैं जिनसे बड़ी सुविधा होती है। लीथोग्राफ लिखने वाले की लिखावट स्पष्ट और सुन्दर है परन्तु विविध पाठों की सूची नहीं दी है जिससे हम यह निर्णय कर सकते कि जो पाठ ठीक समझा गया है वह कहाँ तक उचित है। समस्त पुस्तक में एक भी विराम नहीं है। छोटे और बड़े अक्षरों में भेद नहीं है। छापे में भी सावधानता नहीं की गई है। हाशिए पर कई तारीखें छूट गई हैं। पृष्ठों के शीर्षक और तारीखें सावधानता से नहीं लिखी गई हैं। दूसरी जिल्द के प्रारम्भिक चार सौ बासठ पृष्ठों में केवल आठ सौ चौवन सन् लिखा हुआ है परन्तु इस समय में कई काल और राजवंश बीत चुके थे।

लेखक ने कहा है कि कठिन और विस्मृत शब्दों की नामावली दी जाएगी परन्तु नहीं दी गई है। अब भी यह कमी पूरी कर दी जाय तो ठीक है। परिशिष्ट को अलग छाप देने से यह कमी पूरी हो सकती है। यद्यपि फरिश्ता की शैली शुद्ध और सरल है तथापि वह दूसरे लेखकों के ऐसे शब्दों को ग्रहण कर लेता है जो हमको हमारे शब्द कोषों में नहीं मिलते और जिनके अर्थ के समझने की आवश्यकता है। परन्तु यह अर्थ तभी समझ में आता है जब मूल सन्दर्भ को देखा जाय।

अवतरण

महमूद गजनवी

हिन्दुस्तान के मामलों की व्यवस्था करके महमूद गर्मी से पहले गजनी चला गया और फिर शीतकाल में वहीं रहा। 399 हिजरी (1008 ई०) की बसन्त ऋतु में उसने लाहौर के राजा अनन्दपाल पर आक्रमण करने का निश्चय किया क्योंकि पिछली बार जब मुलतान में फूट हुई थी तो उसने दाऊद को सहायता दी थी। उसके इरादों की खबर सुनकर अनन्दपाल ने सब दिशाओं में अपने राजदूत भेजे और हिन्दुस्तान के राजाओं से सहायता माँगी। ये लोग अब मुसलमानों को हिन्दुस्तान से निकाल देना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझते थे। इसलिए उज्जैन, ग्वालियर, कालिंजर, कन्नौज, दिल्ली और अजमेर के राजाओं ने संघ बनाकर तथा अपनी सेनाएँ एकत्र करके पंजाब की ओर प्रयाण किया। इतनी बड़ी सेना कभी रणभूमि में नहीं आई थी। एक मैदान पर हिन्दुस्तानी और मुसलमानी सेना एक दूसरे को दिखाई देने लगी। यह रणभूमि पेशावर प्रान्त की सीमा पर स्थित थी। यहाँ दोनों सेनाएँ चालीस दिन तक पड़ी रहीं और लड़ी नहीं। मूर्तिपूजकों की सेना प्रतिदिन बढ़ती जाती थी। इस अवसर पर हिन्दू स्त्रियों ने अपने आभूषण बेचकर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तथा सोने के आभूषण गला कर युद्ध के साधन जुटाए। गक्खड़ और दूसरी लड़ाकू जातियाँ सेना में शामिल हो गईं। इन सबने मुसलमानों को घेर लिया। इसलिए उनको विवश होकर अपने डेरे की रक्षा के लिए सब ओर दीवार बनानी पड़ी।

इस प्रकार अपने-आपको सुरक्षित करके महमूद ने छः हजार तीरन्दाजों को आदेश दिया कि आगे बढ़कर शत्रु को उत्तेजित करने का प्रयत्न करें जिससे वे उसकी रक्षा दीवार पर आक्रमण करें। तीरन्दाजों का गक्खड़ लोगों ने सामना किया। सुलतान ने स्वयं बड़ा ही प्रयास किया तो उसकी सेना को उन्होंने वापस धकेल दिया और ऐसा डट कर पीछा किया कि तीस हजार गक्खड़ नंगे सिर और नंगे पैर तथा विविध हथियारों से सुसज्जित, मुसलमानों की पंक्तियों में घुस गए और तब भयंकर नरसंहार हुआ और कुछ ही मिनट में पाँच हजार मुसलमान मारे गए। अन्ततः शत्रु को रोक दिया गया। वे लोग जितने जल्दी आगे बढ़े थे उतनी ही जल्दी अपनी सेना से प्रथक हो गए। तब आक्रमण हल्के पड़ गए। फिर एकाएक राजा का हाथी जो अपने हिन्दू सैनिकों का संचालन कर रहा था नफथा के गोलों के प्रभाव से और तीरों की बौछार से काबू में नहीं रहा। वह वापस मुड़ कर भाग गया। इस घटना से हिन्दुओं में त्रास मच गया। उन्होंने सोचा कि उनका सेनापति उन्हें छोड़कर भाग गया इसलिए उनका साहस टूट गया और वे भाग गए। अब्दुल्ला ताई ने छः हजार अरबी सवारों के सहित और अरसलान जाजिब ने दस हजार तुर्कों, अफगानों और खिलजियों के सहित रात-दिन शत्रु का पीछा किया जिससे बीस हजार हिन्दू पीछे हटते हुए मारे गए। लूट में सुलतान के लोग तीस हाथी लेकर बादशाह के पास आए। जब अजमेर के राजा, परमदेव और अन्य नरेशों ने सेना इकट्ठी करके सब मार्गों पर सुलतान को रोकने के लिए अपना अधिकार कर लिया तो उसके लिए उनका सामना करना दुष्कर हो गया। इसलिए उसने सिन्ध के रास्ते से मुलतान को कूच किया। इस प्रयाण में कई स्थानों पर कहीं घास और कहीं पानी के अभाव के कारण उसकी सेना को बड़ा कष्ट और दुख उठाना पड़ा। बड़ी कठिनता से आखिरकार 417 हिजरी में वह गजनी पहुँचा। ऐसा कहा जाता है कि सिन्ध के रेतीले मैदान में जब मुलतान की ओर जा रहा था तो उसने आदेश दिया कि मार्ग प्रदर्शन करने के लिए कोई आदमी तलाश किया जाय। एक हिन्दू ने अपनी सेवा अर्पण की परन्तु वह धोखा देकर सेना को ऐसे रास्ते से ले गया जिसके कारण वह ऐसे स्थान पर पहुंच गई जहाँ पानी उपलब्ध न था। जब सेना रात-दिन कूच करती हुई आगे बढ़ी और उसे कहीं पानी न मिला तो बड़ा कष्ट हुआ और सब ओर कयामत की-सी भयंकरता दृष्टिगोचर होने लगी। तब सुलतान ने अपने पथ-प्रदर्शक से पूछा कि उसने सेना को ऐसी भयंकर स्थिति में क्यों डाल दिया। तो हिन्दू ने उत्तर दिया कि मैं सोमनाथ का उपासक हूँ और सुलतान और उसकी सेना को इस रेतीले मैदान में इसलिए लाया हूँ कि उसका विनाश हो जाय। सुलतान को बड़ा क्रोध आया और उसने आदेश दिया कि हिन्दू को मार दिया जाय।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसी रात्रि को सुलतान अपने डेरे से एक पास के स्थान पर गया और पृथ्वी पर पेट के बल लेट कर उसने प्रार्थना की और बहुत रोया। सर्वशक्तिमान ईश्वर से विनय की कि जिस खतरे में वह पड़ गया है उससे उसे बचाया जाय। जब रात्रि की एक पहर निकल गई तो उत्तर की ओर प्रकाश दिखाई दिया। सुलतान के आदेशानुसार सेना ने उस प्रकाश की ओर प्रयाण किया और प्रातःकाल होते-होते वह सुरक्षित रूप से एक झील के तट पर पहुंच गई। इस प्रकार सुलतान की धार्मिकता ने उसे नष्ट होते-होते बचा लिया।

जमाऊल हिकायत में यह उल्लेख है कि एक अवसर पर जब सुलतान ने किसी हिन्दू मन्दिर में एक प्रतिमा को बिना आश्रय के हवा में थमे हुए देखा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ और उस सभय के दार्शनिकों से इसका कारण पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि उस इमारत की छत और दीवारें चुम्बक की बनी हुई हैं और मूर्ति लोहे की है। इसे चुम्बकीय इमारत के विभिन्न बिन्दु समान रूप से आकृष्ट कर रहे हैं। इससे यह मूर्ति इसके बीच में लटक रही है। सुलतान के आदेश से जब एक दीवार तोड़ी गई तो प्रतिमा भूमि पर गिर पड़ी।

फिरोजशाह तुगलक

जब मुहम्मद तुगलक की मृत्यु हुई तो उसका चचेरा भाई मलिक फिरोज बारबेक, जो गयासुद्दीन तुगलक का भतीजा था, डेरे में था। मुहम्मद तुगलक का उसके प्रति बड़ा स्नेह था। क्योंकि सुलतान की बीमारी में उसने बड़ी भक्ति से उसकी सेवा की थी इसलिए मुहम्मद तुगलक ने प्रस्ताव किया था कि वह उसका उत्तराधिकारी बनेगा। अतः मृत्यु शैय्या पर पड़े हुए उसने अपने सामन्तों से उसकी सिफारिश की। सुलतान की मृत्यु के बाद उसकी सेना में बड़ी अव्यवस्था हो गई। इसे सुधारने के लिए फिरोज ने अधिकांश हिन्दुस्तानी अमीरों को अपनी पार्टी में मिला लिया और वेतन भोगी मुगल सैनिकों को समझा बुझाकर डेरे से कुछ दूरी पर हटा दिया। वह चाहता था कि उसकी सेना में जो मतभेद है वह हट जावे। तब तक ये लोग दूर रहें। अलतून बहादुर और कुछ सामन्त अमीर कजगान के पास से वैतनिक सिपाही बनने के लिए आए थे। इनके विषय में मल्लिक फिरोज बारबेग की इच्छा थी कि उन्हें यथायोग्य उपधियाँ और खिलतें दी जाय और यह कहकर विदा कर दिया जाय कि उनमें और हिन्दुस्तानी सिपाहियों में अनबन हो जाना बहुत सम्भव है। इससे गड़बड़ मचेगी। अतः उसके प्रयाण करने से पहले ही यह अच्छा हो कि वे अपना डेरा उठाकर चले जाएँ। इस सिफारिश को अलतून बहादुर ने उचित समझा और वहाँ से तत्काल ही अपना डेरा उठाकर दस मील की दूरी पर लगा दिया। इस सेना में अपने कौमी सैनिकों का नायक अमीर नौरोज कुरकीन था। यह एक मुगल सरदार था और तुरमे शरीनखाँ का दामाद था जो मुहम्मद तुगलकशाह के समय में हिन्दुस्तान में आया था और यहां के मुख्य अमीरों में उसको शामिल कर लिया था। अब वह बड़ी कृतघ्नता कर उसी रात को डेरे से चल दिया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और अलतुनताश से जा मिला, जो वैतनिक तथा सहायक सेना का नायक था। उसको उसने सुझाया कि हिन्दुस्तान का सुलतान मर गया है और उसकी सेना नायकहीन होकर अव्यवस्थित हो गई है। यह समय उसके अनुकूल है और सैनिकों की हैसियत से उन्हें अब सुलतान के उस खजाने को लूट लेना चाहिए जो अगले दिन रवाना होने वाला है। इसके बाद वे तमाम धन और जवाहरात लेकर पीछे अपने देश को हट जाय। अलतुनताश को भी समझा बुझाकर इस योजना में शामिल कर लिया गया। तब मुगल अगले दिन प्रातःकाल डेरे में लौट आए जहाँ इस समय भी गड़बड़ थी। सेना कारवाँ की भाँति आगे बढ़ रही थी। कोई पथ प्रदर्शक नहीं था और न उसमें कोई व्यवस्था थी। कुछ हल्की सी मुठभेड़ के बाद ऊँटों पर खजाना लादा गया और कई सन्दूकें, जो ऊँटों पर लदी हुई थीं लूट ली गईं। कितने ही बच्चे, बच्चियाँ बन्दी बना लिए गये। लूट से कोई माल नहीं बचा। इसके बाद अब लूट से बचने के लिए फिरोज अपनी सेना को सेविस्तान की ओर ले गया जो सेवान कहलाता है। रात में उसने यथासम्भव अपने आपको मुगलों से बचाने के लिए सावधानी की और आराम और नींद को एक प्रकार का विलास समझा। इसी अर्से में मखदून जादा अब्बासी, शेख शेयूक नासिरउद्दीन मुहम्मद और उद्दी, जो चिराग देहली के नाम से प्रसिद्ध हैं और अन्य बुद्धिमान लोग और अमीर एक मत होकर मलिक फिरोज बारबेक की सेवा में गए और उससे प्रार्थना की कि स्वर्गीय सुलतान ने आपको अपना उत्तराधिकारी बना दिया है और घोषित किया कि कोई दूसरा अमीर इस सम्मान के लिए अधिक योग्य नहीं है। फिर उसने फिरोज से आग्रह किया कि वह राज्य की चिन्ताओं से मना न करे और सिंहासन पर बैठे। फिरोज कुछ हिचकिचाया और कहा कि वह तो मक्का मदीना और हजाज की यात्रा करना चाहता है परन्तु अमीर न माने। इसलिए उसने स्वीकृति दे दी। अतः 23 मुहर्रम को उसे सुलतान घोषित कर दिया गया। इस समय उसके कीर्तिमय जीवन का बावनवाँ वर्ष था। उसी दिन उसने उन कैदियों को रुपया देकर छुड़वाने का आदेश दे दिया जो पिछली गड़बड़ के समय में ठट्टा के लोगों के तथा मुगलों के हाथों में पड़ गए थे। फिर तीसरे दिन सुलतान ने ठट्टा के विद्रोही लोगों की तथा वैतनिक मुगल सैनिकों की ओर प्रयाण किया। उसने उनको हरा दिया। उसने बहुत से सरदारों को भी कैद कर लिया। वह उनका वध करवाना चाहता था। बहुत से मुगल अमीर पकड़ लिए गए और मार दिए गए। अमीर नौरोज कुरकीन और अलतुन बहादुर ने देखा कि विलम्ब करने से कोई लाभ नहीं होगा। इसलिए वे बड़ी शीघ्रता के साथ अपने देश की ओर रवाना हुए और ठट्टा के लोगों ने भी, जिन्होंने आज्ञा भंग करने में हद्द कर दी थी और विद्रोह कर रहे थे, वफादारी में कदम रखा। सुलतान फिरोजशाह के राज्यारोहण का लोगों ने अभिनन्दन किया और उसके स्वास्थ्य और समृद्धि के लिए बड़ी लगन के साथ प्रार्थना की। इसके बाद ही उसने सेविस्तान से बकर के दुर्ग की ओर निरन्तर प्रयाण किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

754 हिजरी (1353 ई०) में कालानूर के पास पहाड़ियों के नीचे शिकार करके वादशाह ने अपनी वापसी पर सरस्वती नदी के तट पर एक महल बनवाया। वहाँ शव्वाल मास में उसने खानजहाँ को देहली का शासक नियुक्त किया और उसे असीम अधिकार प्रदान किए। फिर हाजी इलियस का दमन करने के लिए वह एक वड़ी सेना के साथ लखनौती की ओर रवाना हुआ। इस सरदार ने शमशुद्दीन की उपाधि के साथ राज्यचिन्ह धारण कर लिए थे और अपनी सेना के द्वारा बंगाल और विहार पर बनारस तक अपना अधिकार कर लिया था। जब सुलतान गोरखपुर के निकट आ पहुँचा तो वहाँ के जमींदारों ने नजरें पेश कीं और उन्हें सलाम करने की अनुमति दी गई। यहाँ का मुकादम उदयसिंह सलाम करने आया और उपयुक्त धनराशि भेंट की तथा दो हाथी भी नजर किए। उसके प्रति अनुग्रह प्रदर्शित किया गया। गोरखपुर के राय ने भी पिछले कई वर्ष का वाकी खिराज अदा कर दिया और ये दोनों सुलतान के साथ हो लिए।

तव सुलतान वंदवा तक आगे चला गया। वंदवा हाजी इलियास का एक मुकाम था और वहाँ बंगाल के शासक रहा करते थे। तव बंगाल का शासक एकदल्ला की ओर वापस हट गया। यह स्थान वहुत ही दृढ़ है। इसके एक ओर नदी है और दूसरी ओर जंगल है। सुलतान ने वंदवा के निवासियों को नहीं सताया और बंगाल के शासक का एकदल्ला तक पीछा किया तथा 7 रवीउल-अव्वल को वह वहाँ पहुँच गया। उसी दिन एक लड़ाई हुई परन्तु हाजी इलियास ने अपने लिए एक दृढ़ दीवार खड़ी कर ली और सुलतान को आत्म-समर्पण करने लिए वाध्य कर दिया। यह रुकावट वीस दिन तक चलती रही। फिर 5 रवी उल आखिर को फिरोज ने अपना स्थान वदलने का विचार किया क्योंकि उसका वर्तमान स्थान वहुत गंदा हो गया था। वह गंगा के तट पर अपना डेरा लगाना चाहता था, इसलिए वह उसका निरीक्षण करने के लिए चला। शत्रु ने समझा कि वह वापिस हटना चाहता है, इसलिए अपनी दीवारों में से निकलकर उसने लड़ाई करने के लिए व्यवस्था की। जब उसने देखा कि सुलतान आक्रमण करने का विचार कर रहा है तो शत्रु फिर पीछे हटा। परन्तु इसमें ऐसी जल्दी और गड़बड़ मच गई कि चार हाथी और बहुत से निशान और शाही छत्र और दूसरा सामान सुलतान के हाथ में आ गया। कितने ही पैदल सैनिक मारे गए और बहुत से बन्दी बना लिए गए। अगले दिन सुलतान ने युद्धभूमि पर डेरा लगाया और आदेश दिया कि लखनौती के कैदियों को छोड़ दिया जाय। इसके बाद तुरन्त ही जोर से वर्षा शुरू हो गई। बंगाल में प्रायः ऐसा ही होता है। सुलतान ने देखा कि उसे विजय प्राप्त हो गई है और राज्य चिन्ह छीन लिए गए हैं इसलिए उसे वापस लौट जाना चाहिए और अगले वर्ष पुनः आना चाहिए। इसके वाद तुरन्त ही सन्धि हो गई और अपने उद्देश्य को प्राप्त किए विना ही सुलतान दिल्ली वापस लौट गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

755 हिजरी में फिरोज ने चून (जमना) के तट पर दिल्ली के समीप फिरोजाबाद नगर का निर्माण करवाया और 12 शब्बान को वह शिकार करने के लिए दीपालपुर गया और 48 कोस लम्बी एक नहर सतलज से कुगूर तक बनवाई। सन् 757 हिजरी में उसने मुन्दीर और सदमोर की पहाड़ियों के बीच जमुना में से एक नहर बनाई। इसी में दूसरी कई छोटी-छोटी नदियाँ गिरती थीं। वे सब मिल कर एक धारा बन गईं। यह झांसी होकर निकलती थी और वहाँ से रायसीन पहुँचती थी। यहाँ पर उसने एक दृढ़ दुर्ग का निर्माण करवाया और उसका नाम हिसार फिरोज रक्खा। किले के नीचे और महल के निकट उसने एक झील बनवाई और इसमें इस नहर का पानी डाला। उसने कुगूर से सरस्वती नदी के ऊपर, जो किले के पास होकर जाती है, एक पुल बनवाया। यह नदी पेरीखेड़ा गाँव की ओर बहती है। यहाँ पर भी उसने एक नगर बसाया और उसका नाम फिरोजाबाद रक्खा। इसी समय उसने जमुना से एक और नहर निकाली जिससे उसने उस झील को भरवाया जो हिसार फिरोज के निकट बनाई गई थी। जीहुज मास में मिस्र के खिलीफा अबुलफतह अबूबकर, अबीरूबिया सुलेमान अब्बासी उसके राज्याभिषेक के उपलक्ष में उसे एक खिलत और बधाई-पत्र भेजा। इस पत्र में यह प्रकट किया गया कि हिन्दुस्तान के सब प्रदेश उसको प्रदान किए गए हैं और दक्खिन के बहमानिया सुलतानों की इसमें सिफारिश है। इसी वर्ष हाजी इलियास शमशुद्दीन शाह ने खलनौती और बंगाल से अनेक दुर्लभ भेंटें भेजीं और राजदूत भी भेजे। फिरोज ने ये भेंटें स्वीकार कीं और फिर राजदूतों को सम्मानपूर्वक विदा किया।

वहाँ से सुलतान ने नगरकोट के पहाड़ों की ओर प्रयाण किया। यहाँ पर ओले और बरफ गिरने लगी। लोगों ने कुछ बरफ बादशाह के सामने पेश की। सुलतान ने कहा जब मेरा मालिक सुलतान मोहम्मद तुगलक यहाँ आया था और लोगों ने बरफ डालकर शर्बत उसके सामने पेश किया था तो उसने उसे ग्रहण करने से इन्कार किया था क्योंकि उस समय मैं उसके साथ नहीं था। तब सुलतान ने आदेश दिया कि कुछ हाथियों पर और ऊँटों पर जो शक्कर लदी हुई है उससे शर्बत बनाया जाए और शर्बत और बरफ समस्त सेना में बाँटी जाय। यह एक प्रकार का सुलतान मोहम्मद तुगलकशाह का स्मारक होगा। नगरकोट के राजा ने कुछ क्षति उठाकर आत्म-समर्पण कर दिया। तब उसका राज्य उसे ही दे दिया गया। स्वर्गीय सुलतान के सम्मान के लिए नगरकोट का नाम बदलकर मोहम्मदाबाद रक्खा गया। नगरकोट के लोगों ने फिरोज से कहा कि नगरकोट के मन्दिर में जिस प्रतिमा को हिन्दू लोग पूजते हैं वह सिकन्दर महान की पत्नी नौशाबा की प्रतिमा है। इस प्रतिमा को विजेता वहाँ छोड़ गया था। जब यह विजेता इस प्रदेश में ठहरा हुआ था तब ब्राह्मणों ने यह प्रतिमा बनवा कर अपने मन्दिर में रक्खी थी और अब इस प्रदेश के समस्त लोग इस प्रतिमा की पूजा करते हैं। यह ज्वालामुखी के नाम से प्रसिद्ध थी। इस मन्दिर में हिन्दी पुस्तकों का एक उत्तम पुस्तकालय था जिसमें तेरह सौ पुस्तकें

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

थीं। फिरोज ने आदेश दिया कि हिन्दू धर्म के कुछ विद्वानों को बुलाया जाय। फिर उसने इनमें से कुछ पुस्तकों का अनुवाद करने का आदेश दिया और विशेष तौर पर यह निर्देश दिया कि इनमें से एक पुस्तक, जिसका विषय दर्शन, ज्योतिष और शकुन है, उसका फारसी भाषा में अनुवाद किया जाय। यह कार्य ऐजुउद्दीन खलीदखानी के सुपुर्द किया गया जो उस समय का बड़ा प्रसिद्ध कवि था और इस ग्रन्थ का नाम दलायलफिरोजशाही रखखा गया। वास्तव में इस पुस्तक में विविध प्रकार का ज्ञान है जो व्यावहारिक और सैद्धान्तिक दोनों प्रकार का है। कुछ इतिहासकारों ने लिखा है कि सुलतान फिरोज वारवेक ने इस अवसर पर नगरकोट की प्रतिमाओं के टुकड़े-टुकड़े करवाये और उन्हें गौमाँस में मिलाकर थैलों में भरवाया। इन्हें ब्राह्मणों की गर्दनों में लटका कर अपने डेरे में घुमाया।

774 हिजरी में वजीर मलिक मकबूल, जिसे खानजहाँ का खिताव था, चल वसा और उसका ज्येष्ठ पुत्र जूनाशाह उसके पद और उपाधियों का उत्तराधिकारी बना। अगले वर्ष गुजरात के सूबेदार जफरखाँ की मृत्यु हो गई और उसका ज्येष्ठ पुत्र दरियाखाँ उसके पद और उपाधियों का उत्तराधिकारी बना। इससे अगले वर्ष 12 शफर को सुलतान के प्रिय पुत्र फत्तेखाँ की मृत्यु हो गई जिससे उसे बड़ा दुःख हुआ। यह शहजादा बड़ा होनहार था। इस शोक के भार से सुलतान की शक्ति की कमर टूट गई। जब सुलतान ने देखा कि धैर्य और आत्म-समर्पण के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है तो उसने शहजादे को अपने ही वाग में दफना दिया और इस अवसर पर की जाने वाली सब क्रियाएँ कीं। शोकातिशोक के कारण सुलतान का शासन की चिन्ताओं की ओर ध्यान न रहा और वह शोक में डूब गया। उसके सामन्तों और सलाहकारों ने पृथ्वी पर सिर टिकाकर निवेदन किया कि अब ईश्वर की इच्छा पर अपने आपको छोड़ देने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। इसलिए अब अधिक शोक न किया जाय और शासन की ओर ध्यान दिया जाय। सुलतान ने अपने मित्रों और शुभचिन्तकों के निवेदन को स्वीकार किया और शोक भुलाने के लिए वह शिकार करने में लग गया और दिल्ली के निकट दो या तीन परसंग के घेरे में एक दीवार बनवाई। इसके अन्दर छायादार वृक्ष लगाये। इस प्रकार इसको शिकारगाह बना दिया। इसके खण्डहर इस समय भी वर्तमान हैं।

सुलतान को कुर्गू के विषय में कोई समाचार न मिला। वह कुमायूं के पहाड़ी प्रदेश की ऊँची चट्टानों में और नालों में छिपा रहा और उसका पीछा किया गया तो वह पारे की भाँति उसको टालता रहा। किसी को यह पता न था कि वह मर गया या जीवित है। अब वर्षा निकट आ रही थी इसलिए विजयी झण्डे उसी स्थान पर लौट आये जहाँ से रवाना हुए थे। सुलतान ने मलिक दाऊद नामक एक अफगान को बहुत बड़ा पद और कुछ सेना देकर सम्भल में रहने के लिए नियुक्त किया और उसे आदेश दिया कि प्रति वर्ष कटहर के प्रदेश पर आक्रमण किया करे और लूट मार तथा विनाश कार्य करता रहे और जब तक हत्यारे को समर्पित न कर दिया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जाय तब तक इस प्रदेश को आवाद न होने दे। शिकार के वहाने से सुलतान स्वयं प्रति वर्ष 787 हिजरी तक उधर की ओर कूच किया करता था और देखा करता था कि उसके आदेश का पालन होता है या नहीं और जो कुछ मलिक दाऊद नहीं कर सकता उसे वह स्वयं किया करता था। इस प्रकार छः वर्ष तक उस जिले में कोई निवासी दिखाई नहीं दिया और एक जरीब भर जमीन भी नहीं जोती गई। कोई भी व्यक्ति अपनी झोंपड़ी में नहीं सो सकता था और उन तीन सैयदों की हत्या का बदला लेने के लिए कितने ही हजार हिन्दुस्तानियों का वध कर दिया था। उपर्युक्त वर्ष में उसने वदायूं से सात कोस के फासले पर बिसौली में एक दृढ़ दुर्ग का निर्माण करवाया और उसका नाम फिरोजपुर रक्खा। परन्तु सब लोग उत्पीड़न के कारण उसको आखिरीपुर (अन्तिम नगर) कहते थे और वास्तव में उन्होंने जैसी भविष्यवाणी की थी वैसा ही हुआ क्योंकि ईश्वर की इच्छा नहीं थी कि वह अब किसी दूसरे दुर्ग का निर्माण करे या किसी नये नगर या कस्बे की स्थापना करे। फलस्वरूप यह दुर्ग आखिरीपुर के नाम से ही पुकारा जाता रहा।

मोहम्मदशाह वहमनी

विजय नगर के राजा के पास वहुत वड़ी सेना थी। उसमें तीस हजार सवार थे और इसके अतिरिक्त प्यादे भी थे। फिर भी वह इतना भयभीत था कि उसने अगले दिन प्रातःकाल अपने कोष और हाथियों को अपनी राजधानी की ओर रवाना करके स्थिति के अनुसार जैसा भी उचित हो युद्ध करने या पीछे हटने की तैयारी की। रात में तूफान आया और भारी वर्षा होने लगी। हाथी और दूसरे लद्दू जानवर कीचड़ में फँस गए और डेरे से चार-पाँच मील भी आगे नहीं वढ़ सके। जब मोहम्मदशाह ने सुना कि हिन्दू चल पड़े हैं तो उसने अपने डेरे छोड़कर उनके विरुद्ध प्रयाण किया। प्रातःकाल होने तक वह राजा के डेरे के पास जा पहुंचा। जब इस खतरे का पता लगा तो हिन्दुओं में इतना त्रास फैल गया कि वे सब कुछ अपने पीछे छोड़कर बड़ी जल्दी अड़ोनी की ओर भागे। मोहम्मदशाह उनके डेरे के उस हिस्से पर टूट पड़ा जहाँ उनका बाजार और सामान था और उसने स्त्री, पुरुष, बच्चों, दास-दासों तथा स्वतन्त्र लोगों का जिनकी संख्या सत्तर हजार के लगभग थी बध करवा दिया। तोहफत्त-उस-सलातीन नामक इतिहास के अनुसार दो हजार हाथी, तीन सौ तोप गाड़ियां, सात सौ अरवी घोड़े और एक रत्नजटित सिंहासन सुलतान को लूट में मिला। अन्य वस्तुएँ अफसरों और सैनिकों को दे दी गईं। मोहम्मद शाह ने इस विजय को अगली विजयों के लिए अच्छा शकुन समझा। इसलिए मुदकल के निकट वर्षा ऋतु बिताकर जब दौलताबाद से खान मोहम्मद सेना लेकर आ गया तो उसने अड़ोनी की ओर काफिरों पर कूच किया। इसके मैदान में तुंगभद्रा के निकट विजयनगर का राजा जमा हुआ था और अड़ोनी का नेतृत्व उसने अपनी बहिन के लड़के को दे दिया था। यहाँ पर उसने बहुत से सैनिक, और हाथी तथा लड़ाई का दूसरा सामान एकत्र कर लिया था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस समय सुलतान के एक कृपा-पात्र ने कहा कि "आपने एक लाख हिन्दुओं का वध करने का प्रण किया था, उनकी जाति को समूल नष्ट करने का नहीं।" सुलतान ने उत्तर दिया, "यदि मैंने प्रण किया जिससे दुगुने लोग मारे गए हैं तो भी जब तक यह राय संगीतकारों को सन्तुष्ट नहीं कर देगा तब तक न तो सन्धि की जायगी और न उसकी प्रजा को जीवित रहने दिया जायगा।" इस पर राजदूत, जिनको पूरा अधिकार था, सहमत हो गए और तत्काल रुपया दे दिया तब मोहम्मद शाह ने कहा, "ईश्वर की कीर्ति हो। मैंने जो आदेश दिया था वह पूरा हो गया है। मैं चाहता हूँ कि इतिहास के पन्नों में मेरे विषय में कोई हल्का शब्द न लिखा जाय।" जब राजदूतों ने देखा कि सुलतान खुश है तो उन्होंने पृथ्वी पर अपने सिर टेक कर सलाम किया और प्रार्थना की कि उन्हें कुछ शब्द कहने की अनुमति दी जाय। अनुमति मिलने पर उन्होंने कहा कि धर्म यह नहीं कहता है कि किसी अपराधी के अपराधों के कारण निर्दोष लोगों को दण्ड दिया जाय, विशेषकर स्त्रियों और बच्चों को। यदि कृष्ण राय ने अपराध किया है तो निर्धन और निर्बल लोगों ने उसके अपराधों में सहायता नहीं दी है।" मोहम्मदशाह ने उत्तर दिया कि जो कुछ ईश्वर का आदेश था वह हो चुका है। अब वह उसे नहीं बदल सकता। राजदूतों ने कहा कि ईश्वर राज्य प्रदाता है। उसने दक्खिन का राज्य तुम्हें प्रदान किया है और यह बहुत सम्भव है कि आपका उत्तराधिकारी और कर्नाटक के शासक बहुत समय तक पड़ौसी रह सकें, इसलिए उचित है कि युद्ध की क्रूरताएँ न की जाएँ। इसलिए उन्होंने प्रस्ताव किया कि ऐसी सन्धि की जाय जिसके अनुसार भविष्य में निरपराध और निशस्त्र लोगों का वध न हो। इस प्रस्ताव से प्रभावित होकर मोहम्मदशाह ने शपथ ली कि अब वह विजय के बाद एक भी शत्रु का वध न कराएगा और अपने उत्तराधिकारियों के लिए भी यह नियम बना देगा कि इसी प्रकार का व्यवहार करे। तब से अब तक दक्खिन में यह साधारण नियम चला आया है कि युद्ध में किये हुए बन्दियों को नहीं मारा जाता है और शत्रु की किसी निशस्त्र प्रजा का रक्तपात नहीं होता है। इस प्रकार सन्तुष्ट होकर मोहम्मदशाह गुलबर्गा वापस लौट गया और रास्ते में वह शेख सिराजुद्दीन से मिला। वह समझता था कि इस फकीर की प्रार्थनाओं के कारण और अपनी माता के साथ जो उसने मक्का में दान भेजा है, उसी के कारण उसे हिन्दुओं पर यह विजय प्राप्त हुई है।

मोहम्मदशाह को अपने पिता के पास ही दफनाया गया था और उसके आदेशानुसार उसकी कब्र पर ये शब्द खोदे गए थे, "यह सब मिथ्याभिमान और असार है।" वह बादशाह सुखी और भाग्यशाली है जिसके पास ऐसा राज्य हो और जिसकी ऐसी स्मृति बनी रहे। जीवितावस्था में उसका लोग आदर करते थे और उसकी मृत्यु के बाद उसके गुणों को याद करते थे।

सिराज-उल-तवारीख के अनुसार मोहम्मद शाह बहमनी ने ऐसे कोष और इतने हाथियों का संग्रह किया था कि उसके वंश में किसी सुलतान के पास नहीं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था। उसके पास तीन हजार हाथी और हथनियाँ थीं। दूसरे सुलतानों के राज्य में केवल दो हजार हाथियों का उल्लेख मिलता है। उसने इतने सोने का संग्रह किया था कि इसी लेखक के अनुसार अन्य सुलतानों के संग्रह से उसका संग्रह ड्यौढ़ा था। उससे पहले किसी भी सुलतान ने कर्नाटक के राजा और जमींदारों का भी दमन नहीं किया था। इन लोगों से उसने सात सौ वर्षों का संग्रहीत कोष छीन लिया और ऐसा हिसाब लगाया गया है कि उसके राज्य में इस्लाम के वीरों की तलवार से पाँच लाख काफिरों का वध किया गया। इसलिए कर्नाटक की आवादी इतनी कम हो गई थी कि कई पीढ़ियों तक यह पुनः उतनी नहीं हो सकी। मोहम्मद शाह ने सत्रह वर्ष तक राज्य किया।

अहमदशाह बहमनी

अहमदशाह ने हिन्दुओं की राजधानी को नहीं घेरा। उसने खुले प्रदेश की लूटमार की और जहाँ कहीं गया वहीं उसने निर्दयतापूर्वक पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों का वध करवाया। उसके चाचा और पूर्वज मोहम्मदशाह और विजयनगर के राजा में जो सन्धि हुई उसका उसने पालन नहीं किया। जब मारे हुए सैनिकों की संख्या बीस हजार होती थी तो वह तीन दिन ठहरता था और इस रक्तपात पर उत्सव मनाता था। उसने मूर्तियों वाले कई मन्दिर तुड़वाए और ब्राह्मणों के विद्यालयों को नष्ट किया। इन युद्धों में पाँच हजार हिन्दुओं ने अपने मन्दिरों के विनाश से उत्तेजित होकर और जीवन की आशा छोड़ कर तथा अपने देवों के प्रति अपमान से क्रुद्ध होकर सुलतान को मारने के लिए आत्म-बलिदान करने की शपथ ली क्योंकि वे समझते थे कि उनके समस्त दुखों का कारण यह सुलतान है।

८२९ हिजरी में अहमदशाह ने महूर के जमींदार का दमन करने के लिए प्रयाण किया। इस जमींदार के पास अनेक दृढ़ दुर्ग थे जिनके द्वारा वह सुलतान की सेना का सामना किया करता था। अब इस विद्रोही ने अधीनता स्वीकार कर ली। अहमदशाह ने उसे क्षमा का विश्वास दिला दिया था तो भी ज्यों ही वह उसके हाथ आया त्यों ही उसे और उसके पाँच छः हजार साथियों को मार दिया और उनकी स्त्रियों और बच्चों को बन्दी बनाकर इस्लाम धर्म स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। इस युद्ध में कुल्लूम में जो गोंडवाना के अधीन है उसने एक हीरों की खान पर अधिकार कर लिया। इस प्रदेश में उसने मूर्तियों वाले अनेक मन्दिरों को तुड़वा कर उनके स्थान पर मस्जिदों का निर्माण करवाया और वहाँ मुल्लाओं के निर्वाह के लिए जमीनें दीं और धार्मिक कार्यों के लिए चिराग और तेल का प्रबन्ध किया।

अलाउद्दीन शाह बहमनी

इस पर अलाउद्दीन शाह ने उसको लिखा कि इन दो रईसों का जीवन दो लाख साधारण आदमियों के बराबर है। उसके कुटुम्ब के शासकों का नियम है कि एक मुसलमान की मृत्यु का बदला लेने के लिए एक लाख हिन्दू मारे जाएँ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इसलिए उसने प्रण किया कि यदि देवराज दो बन्दी अफसरों के जीवन को समाप्त करेगा तो वह प्रत्येक अफसर की मृत्यु के बदले में एक लाख हिन्दुओं का वध करेगा।

उसने अपने राज्य के प्रत्येक भाग में चरित्र निरीक्षक और न्यायशील न्यायाधीश भेजे और यद्यपि वह स्वयं मद्यपान करता था तथापि उसने औरों के लिए इसका और जुए खेलने का निषेध किया। उसने कलन्दर लोगों के और सुस्त तथा आवारा लोगों की गर्दनों में जंजीर डाली और उनको बाजारों का कूड़ा साफ करने में, भारी पत्थर उठाने में और प्रत्येक प्रकार के श्रम साध्य काम में लगाया ताकि वे लोग सुधरें और मेहनत करके अपनी जीविका कमावें या देश छोड़कर चले जाएँ। यदि कोई व्यक्ति समझाने बुझाने के बाद भी मद्यपान का अपराध करते हुए पाया जाता था तो उसके कंठ में शीशा पिघला कर डाल दिया जाता था और यह परवाह नहीं की जाती थी कि अपराधी का क्या दर्जा है।

फिर भी चौथे दिन उन्होंने अमीरों को समझा बुझाकर दुर्ग में दावत में शामिल होने के लिए तैयार कर लिया। इसमें लगभग 300 मुख्य विदेशी सम्मिलित हुए परन्तु कासिम बेग, कर्राहखाँ खुर्द और मक्का का निवासी अहमदबेग नहीं आया। जब सब लोग खाना खा रहे थे तो शेर-उल-मुल्क के संकेत पर कितने ही सशस्त्र लोग उन पर टूट पड़े और प्रत्येक व्यक्ति को तलवार के घाट उतार दिया और साथ ही चार हजार दक्षिणियों ने, जो दुर्ग के बाहर थे विदेशियों के डेरे पर आक्रमण करके प्रत्येक पुरुष को मार डाला। यहाँ तक कि दूध पीते बच्चों को भी नहीं छोड़ा। इस दुखान्त घटना के पश्चात् उन्होंने डेरों को लूटा और स्त्रियों का बड़ी पाशविकता और कामुकतापूर्वक अपमान किया। हुसैन के समय से अब तक सैयदों के साथ ऐसा दुर्व्यवहार कभी नहीं किया गया था परन्तु क्या यह अचम्भे की बात नहीं है कि जो लोग अपने आप को पैगम्बर के अनुचर बतलाते हैं वे उसके वंशजों के साथ ऐसा नीच व्यवहार करें।

हुमायूँ शाह बहमनी

अब हुमायूँ शाह घोर क्रूरताएँ करने लगा और क्रोध से उन्मत्त होने लगा। उसने आदेश दिया कि शाही चौक के दोनों ओर सूलियाँ लगा दी जाएँ और उसके विविध भागों में खूनी हाथी और जंगली पशु खड़े किए जाएँ। अन्य स्थानों पर उबलते हुए तेल और पानी के कड़ाहे भी यातना देने के लिए तैयार किए गए। इस दृश्य से अपनी आँखों को तृप्त करने के लिए सुलतान ने सर्वप्रथम अपने भाई हुसैनखाँ को एक खूँखार शेर के सामने फिकवा दिया जो उस बेचारे शहजादे के टुकड़े करके वहीं खा गया। फिर यूसुफखाँ और उसके सात साथियों का सुलतान की विद्यमानता में वध किया गया। उनके निरपराध और असहाय कुटुम्बों की स्त्रियों को उनके घरों से घसीटा गया और महल के चौक में बदमाश लोगों द्वारा उनके साथ ऐसा अपमान और दुर्व्यवहार करवाया गया कि जिसका वर्णन करना भी अश्लील है। सुलतान ने ऐसे उत्पीड़न कृत्य सोचे और युवा और वृद्ध स्त्रियों और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुरुषों को ऐसी क्रूरतापूर्वक उत्पीड़ित किया गया जो जोहक और क्रूर हिजाज की भी कल्पना में नहीं आया था। लगभग सात हजार व्यक्ति जिनमें स्त्रियाँ और सेवक सम्मिलित थे और जिनका इस विद्रोह से किसी भी प्रकार से सम्वन्ध नहीं था मरवा डाले गये। इनके अतिरिक्त इन मारे जाने वालों में ववर्ची, वर्तन साफ करने वाले और अन्य लोग भी थे। कुछ लोगों को खंजरों से मारा गया, कुछ के कुल्हाड़ियों से टुकड़े किए गए और कुछ पर उवलता हुआ तेल और पानी डाल दिया गया। यह दुखान्त घटना उसी वर्ष के शावान मास में हुई जब विद्रोह हुआ था।

तवारीख महमूदशाही का लेखक लिखता है कि शाही अनुचरों से जव सुलतान ने सुना कि शहजादा हुसैनखाँ भाग गया है तो उसे ऐसा क्रोध आया कि वह अपने कपड़े फाड़ने लगा, तकिए चबाने लगा और अपने ही होठ इतने जोर से काटने लगा कि खून गिरने लगा। हुसैनखाँ के कार्य से डर कर उसने शाही परिवार के उन निरपराध लोगों को मरवा डाला जो विभिन्न किलों में कैद थे। उसका सन्देह यहीं तक नहीं था। उसके दरवार के अन्य कितने ही लोग भी उसकी क्रूरता के शिकार हो गए। इस क्षण के बाद हुमायूं में कोई रोक टोक नहीं रही। वह अपनी प्रजा के वच्चों को छीन-छीन कर अपने क्रोध को शान्त करने के लिए फाड़ने लगा। वह वाजार में शादी जुलूसों को रोक कर दुल्हन को छीन लेता था और उसको भोगने के वाद दूल्हे के मकान पर भेज देता था। वह अपने ही खानदान की स्त्रियों को तुच्छातितुच्छ अपराध पर जान से मार डालता था। जव उसके किसी सामन्त को उसके पास उपस्थित होना पड़ता था तो वह इतना भयभीत हो जाता था कि वे अपने कुटुम्वियों से इस प्रकार विदा लिया करता था मानो वह मौत के लिए तैयारी कर रहा हो।

मीरान हुसैन निजामशाह

जव सायंकाल होने वाला था तो फाटक जला दिए गए परन्तु अभी आग जल रही थी। इसलिए आधी रात तक न कोई अन्दर जा सका और न बाहर जा सका। फिर मिर्जाखाँ और उसके मित्रों ने दुर्ग में से निकलकर भागने का प्रयत्न किया। नगरवासियों ने भी अन्य कितने ही लोगों को मार डाला। परन्तु मिर्जाखाँ पीछे हटकर जुनैर के दुर्ग कीं ओर भाग गया। दक्षिणी सैनिकों ने, हव्शियों ने और लोगों के झुन्ड ने दुर्ग में घुसकर जो भी विदेशी अन्दर मिला उसे मार डाला। इनकी संख्या लगभग 300 थी और इनमें कितने ही उच्च श्रेणी के चरित्रवान लोग थे। इनकी लाशों को घसीट कर खुले मैदान में डाल दिया गया और आदेश दिया गया कि उन्हें दफनाया न जाय। इस वध से भी सन्तुष्ट न होकर जमालखाँ ने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि सव श्रेणी के और प्रत्येक व्यवसाय करने वाले विदेशियों को, जो नगर में हों, मार दिया जाय और उनके घरों को लूटकर जला दिया जाय। इस प्रकार सव सैनिकों और अनुचरों को खुली छूट दे दी गई तो उन्होंने अमीरों को, मालिकों को, नौकरों को व्यापारियों को, यात्रियों को और दूसरे अपरिचित

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लोगों को विना भेदभाव मार डाला। उनके घरों को आग लगा दी गई। जिन लोगों के सिर आसमान तक पहुंचे हुए थे उन्हें धूल में मिलाकर कुचल दिया गया और जो स्त्रियाँ सूर्य और चन्द्रमा से भी लज्जावश अपना मुंह छिपाती थीं उनके वाल पकड़ कर घसीटा गया और शराबियों के हवाले कर दिया गया। चौथे दिन मिर्जा खान को जव जुनैब के समीप पकड़ लिया गया था, जमालखाँ के सामने लाया गया। पहले उसको गधे पर विठाकर नगर में घुमाया गया। फिर उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े किए गए और वे विभिन्न इमारतों पर चिपकाए गए। उसके कई मित्र, जो उसके साथ ही पकड़ लिए गए थे मार डाले गए। उनको तोपों से मार कर हवा में उड़ा दिया गया। सात दिन की अवधि में लगभग एक हजार विदेशियों की हत्या की गई। कुछ थोड़े ही लोग दक्षिणी और हब्शी अफसरों की सहायता से भाग कर अपने प्राण वचा सके। मीरान हुसैन निजामशाह का राज्य केवल दस मास और तीन दिन रहा। जिन शासकों ने अपने पिताओं की हत्या की है उनमें से किसी ने भी एक वर्ष से अधिक राज्य नहीं किया। एक कवि ने कहा है कि 'पितृ-घातक के लिए शाही पद उपयुक्त नहीं है। ऐसे दुष्ट का राज्य अधिक नहीं चल सकता।"

महमूदशाह गुजराती

जब वेनीराय के घाव पुर गए तो सुलतान ने उसको और उसके मंत्री को इस्लाम धर्म स्वीकार करने के लिए समझाने में प्रत्येक प्रकार का यत्न किया परन्तु वे दोनों इन्कार ही करते रहे और कहते रहे कि धर्म-त्याग से वे प्राण त्याग को अधिक अच्छा समझते हैं। महमूदशाह ने उन्हें अलग-अलग कैद में रखा और उनके साथ क्रूर व्यवहार किया। उसको आशा थी कि इससे उनकी दृढ़ता टूट जायगी परन्तु इससे उनकी दृढ़ता और भी पुष्ट होती गई। अन्त में सुलतान ने कुछ मुल्लाओं के कहने से उनका वध करवा दिया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मआसीर-ए-रहीमी

लेखक : मोहम्मद अब्दुल बाकी

डॉ० ली ने इस पुस्तक के विषय में लिखा है कि मोहम्मद अब्दुल बाकी उल रहीमुल नहवन्दी का लिखा हुआ यह तारतारी हिन्दुस्तान आदि के सम्राटों और अन्य प्रसिद्ध अमीरों का मूल्यवान और विस्तृत इतिहास है। इसमें लगभग चार हजार पृष्ठ हैं। मेजर स्टूअर्ट ने इसके विषय में लिखा है कि, "यह अब्दुल रहीमखाँ खानखाना वजीर की और अकबर के दरबार में रहने वाले समस्त प्रसिद्ध अमीरों, लेखकों और कवियों के संस्मरण हैं। इसका लेखक अब्दुल बाकी सन् 1613 में था।"

इस पुस्तक के विषय में इन लेखकों में बहुत मतभेद हैं। दोनों कुछ अंश में सही हैं और कुछ अंश में भूल करते हैं। अब्दुल रहीम के पूर्वजों के अतिरिक्त इसमें तातारी के सम्राटों और अन्य प्रसिद्ध लोगों का वृतान्त नहीं है और जीवन-चरित्र सम्बन्धी विवरणों का अकबर के दरबार से कोई सम्बन्ध नहीं है। उनका सम्बन्ध पूर्णतः दक्खिन से है। इस ग्रन्थ के अधिकांश भाग में लेखक के संरक्षक खानखाना और उसके पुत्र और वंशजों का वर्णन है। खानखाना इतना प्रसिद्ध था कि उसका पूरा जीवन-चरित्र लिखना चाहिए था परन्तु इस पुस्तक में उसकी ऐसी स्तुति और प्रशंसा की गई है कि इस पर विश्वास करना कठिन है। लेखक खानखाना का सेवक था। ऐसी स्थिति में इस पुस्तक पर विश्वास करना कठिन है। इसके प्रथम भाग में हिन्दुस्तान का इतिहास है जो इतना कम है कि इसका कोई विशेष मूल्य नहीं है। केवल इतना ही महत्व है कि यह फरिश्ता से अक्षरशः नकल किया हुआ नहीं है। दूसरे लेखकों ने फरिश्ता की नकल की है परन्तु इसके विषय में यह बात नहीं कही जा सकती। लेखक का पथ-प्रदर्शक निजामुद्दीन है और वह इतिहास के किसी ऐसे अन्य काल का इतिहास लिखते हुए डरता है जिसका पहले से किसी ने वृतान्त नहीं लिखा हो। उसने अकबर के वृतान्त पर अपना इतिहास समाप्त किया है। यह बात उसके अवतरण से प्रकट होती है। इस पुस्तक में कवियों का तजकिरा है। उनकी रचनाओं में से लम्बे-लम्बे अवतरण दिए गए हैं। निम्नलिखित विषय-सूची से प्रकट होगा कि पुस्तक का तृतीयांश इसी विषय पर है। कवियों का वृतान्त 990 पृष्ठ से 1454 पृष्ठ तक है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विषय-सूची

प्राक्कथन—पृ० 1–7 ।

भूमिका—(जो अब्दुर्रहीम खानखाना के पूर्वजों के विषय में है) पृ० 7–36 ।

प्रथम भाग—अब्दुर्रहीम के पिता मोहम्मद बैरमबेग का वृत्तान्त । इससे पहले गजनवी सुलतानों के समय से जहाँगीर तक हिन्दुस्तान के बादशाहों का वृत्तान्त है जिनमें बंगाल के सुलतान पृ० 46, जौनपुर के सुलतान पृ० 52, मालवा के सुलतान पृ० 56, कश्मीर के सुलतान पृ० 113, मुलतान के सुलतान पृ० 148, दिल्ली के सुलतान पृ० 160, बाबर पृ० 272, हुमायूँ पृ० 290, अकबर पृ० 381 और जहाँगीर पृ० 552—पृ० 37 से 606 ।

द्वितीय भाग—अब्दुर्रहीम के गुणों और विजयों का वर्णन, उसके नाम कुछ फरमान, उसकी कुछ रचनाएँ और गुजरात के शासकों का वृत्तान्त पृ० 621, सिन्ध के सुलतानों का वृत्तान्त पृ० 696, दक्खिन के सुलतानों का वृत्तान्त पृ० 776, खानदेश के सुलतानों का वृत्तान्त पृ० 808—पृ० 606 से 992 ।

तृतीय भाग—खानखाना के महल, गुसलखाने, मस्जिदें और अन्य इमारतें, उसके लगाए हुए बाग और उसके बनाए हुए जहाज—पृ० 923 से 932 ।

चतुर्थ भाग—खानखाना के पुत्रों का वृत्तान्त—पृ० 933 से 968 ।

उपसंहार—भूमिका और तीन अध्याय । (1) समकालीन, दार्शनिक, हकीम और अन्य प्रसिद्ध पुरुष, 31 व्यक्ति—पृ० 962 ।

(2) कवि जिनमें लेखक भी सम्मिलित है और 92 व्यक्ति—पृ० 990 ।

(3) खानखाना के अधीन सैनिक अधिकारी 44 व्यक्ति—पृ० 1454 । पृ० 969 से 1513 तक ।

आकार—फोलियो, पृ० 1513 । प्रत्येक पृष्ठ पर 25 पंक्तियाँ । कुछ रिक्त पृष्ठ भी हैं ।

लेखक अब्दुल बाकी नहावन्दी ने इस ग्रन्थ की रचना अबुलफजल के भाई अबुल फैजी और खानखाना बहरमखाँ का पुत्र अब्दुर्रहीम खानखाना के प्रोत्साहन से की थी । उसने अपने और अपने पूर्वजों के विषय में बहुत कम जानकारी दी है । अधिक विवरण के लिए उसने तकीउद्दीन के तजकिरा का सन्दर्भ दिया है । इस तजकिरा का शीर्षक "मआसीर-उल-खिजरिआ" है । यह नाम उसके भाई आगा खिजर के नाम पर रखा गया है और उसी को यह ग्रन्थ समर्पित किया गया है । दूसरा हवाला अब्दुल मआली के तजकिरा का है जो शाह अब्बास को समर्पित किया गया है । लेखक ने लिखा है कि आत्म-प्रशंसा बहुत बड़ा अपराध है । इसलिए उसके विषय में जो कुछ इन पुस्तकों में लिखा हुआ है, उसे वह दोहराना नहीं चाहता । इसमें उसके कुटुम्बियों और रिश्तेदारों का तथा उसके आश्रयदाता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

खानखाना का पूरा वृतान्त दिया हुआ है। उसका कुटुम्ब जूलाक से आया था, जहाँ 30,000 घरों की वस्ती थी। परन्तु शाह इस्माइल सफली के राज्य में कुछ झगड़े उठ खड़े हुए। इसलिए उसका कुटुम्ब जूलाक को छोड़ कर नहावन्द में निवास करने के लिए चला गया।

लेखक लिखता है कि उसके पूर्वज अफरासियाव के अधीन सेनापति थे और शाह इस्माइल ने उनको जूलाक में जमीनें दी थीं जिनका उन्हें लगान नहीं देना पड़ता था। उसका प्रसिद्ध पूर्वज आका वावा था जो हमदान में रहता था। उसका भाई शाह अव्वास के समय में हमदान का नायव सूबेदार था। अमीर ताकी मोहम्मद ने अपने तजकिरा में उसके प्रशासन की उत्तमता का वर्णन किया है। पड़ौस में उसकी उदारता की अनेक बातें कही जाती हैं विशेषकर काशान के वन्द की और वृक्षों की पंक्तियों की, जिनकी आय का हमारे लेखक ने वहुत अर्से तक उपभोग किया था।

ऐसा प्रकट होता है कि किसी न किसी कारण से उस समय के शासक शाह अव्वास को उससे असन्तोष था। इसलिए उसने अपने देश को छोड़ने का निश्चय किया और अवुल फैजी तथा अव्दुर्रहीम खान के निमन्त्रण पर वह हिन्दुस्तान में आने के लिए प्रेरित हुआ और 1023 हिजरी में वह खानदेश में वुरहानपुर पहुंचा जहाँ उसका कृपापूर्ण स्वागत हुआ और उसे एक जागीर मिली। उसने अपनी पुस्तक 1025 हिजरी (1616 ई०) में पूरी की और अपने संरक्षक के नाम पर इसका नाम मआसिर-ए-रहीमी रक्खा और उसकी प्रशंसा में उसने इस पुस्तक में वहुत-सी कविताओं का भी समावेश किया। उसने यह भी प्रकट किया कि वह इस प्रकार की प्रशंसा अपने अन्तिम दिन तक करता रहेगा।

यह पुस्तक हिन्दुस्तान में प्रचलित नहीं है। लाहौर में यह दो जिल्दों में है जो संक्षेप है पूरा ग्रन्थ नहीं है। एक प्रति एशियाटिक सोसायटी के पास है जो इस संग्रह में सबसे अधिक मूल्यवान हस्तलिखित प्रति है। यह प्रति नस्तालीक अक्षरों में लेखक के निरीक्षण में तैयार की गई थी और इसमें उसी के हाथ से हाशिए पर नोट दिए गए हैं और कुछ वात दोहराई गई हैं। यह उसके मित्र ख्वाजा सुलतान मोहम्मद इस्फहानी को 1026 हिजरी में भेंट की गई थी और फिर उसके पास से वापस प्राप्त होने पर 1041 हिजरी में काजी अव्दुल अजीज को अर्पित की गई थी। लेखक ने लिखा है कि यह हस्तलिखित प्रति बड़ी सावधानी से दोहराई गई है। इसमें दक्खिन के सुलतानों के इतिहास की कमी है और उसे आशा है कि भविष्य में वह इस कमी को पूरी कर सकेगा।

अवतरण

वादशाह शिकार के लिए वाहर गया और लाहौर से तीस कोस की दूरी पर नदी के तट पर सुलतानपुर पहुँचा। खानखाना को जो सरहिन्द में शहजादा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दानियाल को सलाम करने के लिए गया था, बादशाह ने सलाह के लिए बुलाया। शेखपुर के निकट बादशाह से उसकी भेंट हुई और दक्खिन के मामले के सम्बन्ध में कई बार सलाह की गई। इन अवसरों पर बादशाह ने उससे पूछा कि शहजादे को वहाँ जाने का कष्ट दिए बिना ही उस प्रान्त को विजित किया जा सकता है या नहीं। उसको दमन करने का कार्य खानखाना ने अपने ऊपर लिया। तब निर्देश जारी किया गया कि जिस सेना को शहजादे के साथ जाने का आदेश दिया गया है वह खानखाना के अधीन की जाए। तब शहजादे को दरबार में बुला लिया गया और वह वहाँ दो दिन में पहुँच गया। बादशाह द्वारा खूब सम्मानित होकर खानखाना ने इस चढ़ाई के लिए प्रयाण किया और बादशाह भी अपने शिकार के डेरे को उठाकर लाहौर वापस आ गया। शीघ्र ही रवाना होकर खानखाना आगरा पहुँच गया। अब वर्षा का आरम्भ होने वाला था। खानखाना को आदेश मिला कि अपने सैनिकों को वेतन देने के लिए और दक्खिन की विजय की तैयारी करने के लिए आगरे के कोष से जितना रुपया मिल सके वह ले ले। वर्षाकाल में वह आगरे में ठहरा और अपनी सब आवश्यकताओं का प्रबन्ध करके मालवे के लिए रवाना हुआ, जो मिर्जा शाहरुख की जागीर था। उज्जैन में उसकी मिर्जा से भेंट हुई। मालवा से वह खानदेश गया और शान्तिमय साधनों से उसने राजा अलीखाँ को बादशाह की अधीनता स्वीकार करने पर राजी कर लिया। इस प्रकार खानदेश अधीन राज्यों में सम्मिलित हो गया और वहाँ बादशाह के नाम का खुतुबा पढ़ा जाने लगा और सिक्का जारी हो गया। यहाँ पर दमन के लिए जितनी भी कोशिशें की गई थीं वे सब असीरगढ़ में असफल हो चुकी थीं। खानदेश राजा अलीखाँ को ही जागीर में दे दिया गया और उसको पंच हजारी अमीरों में भरती कर लिया गया। खानखाना ने राजा अलीखाँ की ओर से प्रार्थना-पत्र और उपयुक्त भेंटें बादशाह की सेवा में भेजी और निवेदन किया कि इसकी स्वीकृति दी जाय और राजा अलीखाँ को शाही अनुचरों में सम्मिलित किया जाय और उसे अनुमति दी जाय कि सेना के साथ वह दक्षिण को जाय। बादशाह ने ये प्रस्ताव स्वीकार कर लिए और खानखाना को और भी पुरस्कृत किया गया।

खानदेश को साम्राज्य में मिलाने के पश्चात् खानखाना ने दक्खिन की ओर चढ़ाई की। उसका पहला काम था अहमदनगर में घेरा डालना। उस समय उस प्रान्त की शासक चाँदबीबी थी जिसने सुलह करली और बरार का प्रान्त अकबर को समर्पित कर दिया।

दूसरे अवसर पर जब उसने अहमद नगर पर आक्रमण किया तो आदिलशाह ने सुहेल नामक एक हब्शी को सेनानायक नियुक्त किया और निजाम उल मुल्क, आदिलखाँ, कुतुब-उल-मुल्क और बरीदशाही सेना उसकी अधीनता में रक्खी गई। तब वह बल और विश्वास के साथ आगे बढ़ा। खानखाना के पास थोड़ी-सी सेना थी परन्तु उसने रुस्तम और इस्फन्दियार की भाँति युद्ध किया और सुहेल पर पूर्ण

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विजय प्राप्त की। इसके बाद वह अहमद नगर में घेरा डालने के लिए आगे बढ़ा और उसको जीत कर उसने दक्खिन का समस्त प्रान्त बादशाह के शासन में ले लिया। दक्खिन, खानदेश और बरार की विजय का पूर्ण विवरण इस पुस्तक में खानखाना के कार्यों में पहले ही दिया जा चुका है। इसलिए इसको वहाँ देखा जाय। यदि मैं इस सेनानायक की दक्खिन में कार्यवाहियों से आरम्भ करूँ तो बड़ा विस्तार हो जायगा।

संक्षेप यह है कि बादशाह ने 52 वर्ष तक बंगाल से सिन्ध और कंधार तथा जमींदावर तक बल्कि समुद्र के तट तक समस्त हिन्दुस्तान पर राज्य किया। सारे दुर्ग, अमीर, राजा रईस और हिन्दुस्तान के जमींदार उसके अधीन हो गए। इनमें गुजरात, सिन्ध, दक्खिन, काश्मीर, बंगाल और मालवा और दूसरे मुल्कों के सुल्तान भी थे। कुछ युद्धों में हार गए, कुछ ने संधियाँ कर लीं। इन सबको स्वतन्त्र शासन से वंचित कर दिया गया।

लेखक ने इन प्रथम 31 वर्ष के शासन का अर्थात् 963 से 1002 हिजरी तक का वृत्तान्त निजामुद्दीन अहमद बख्शी लिखित 'तबकात-ए-अकबरी' से लिया है। निजामुद्दीन इस पुस्तक को पूर्ण करने के लिए जीवित नहीं रहा। लेखक ने शेष 14 वर्षों का वृत्तान्त कहीं नहीं देखा है और इस काल की विविध घटनाओं की जानकारी भी उसे कहीं नहीं मिली है। इसलिए अपने इतिहास में उसने इस काल का वृत्तान्त नहीं लिखा है। पाठकों को चाहिए कि इस समय का वृत्तान्त दूसरों का लिखा हुआ देखें।

अकबर शक्तिशाली जगत-विजयी शासक था। वह न्याय की मूर्ति था और सब ओर से लोग रक्षा के निमित्त उसके दरबार में आया करते थे और उसकी उदारता प्राप्त करते थे। वह सब धर्मों और सम्प्रदायों को बराबर समझता था उनमें किसी प्रकार भेद नहीं समझता था। उसका उद्देश्य था कि सब लोग एक शान्ति बन्धन में बंध जाएँ। उसके राज्य को अलंकृत करने वाले सुल्तान, अमीर, मन्त्री, कवि और दार्शनिकों का वृत्तान्त तबकात-ए-अकबरी और अकबरनामा में देखा जा सकता है। उस विस्तृत ग्रन्थ में उसकी महानता तथा उसकी प्रकाशमान बुद्धि के आविष्कारों और उसकी प्रतिभा का वृत्तान्त मिलेगा।

बावन वर्ष के शासन में हिन्दुस्तान के किसी पड़ौसी सुल्तान ने उसके राज्य में कोई अतिक्रमण नहीं किया। यद्यपि अफगान सुल्तान अपने द्वेष और उत्पात के लिए प्रसिद्ध हैं तो भी उसके शासन के समय कोई अपने घर से नहीं निकला। इस प्रकार चारों दिशाओं में उसकी विजयी तलवार की धाक थी। जिसने भी सिर उठाने का साहस किया उसके प्राण नहीं बचे।

23 जमादलअव्वल 1014 हिजरी में बावन वर्ष के शासन के बाद आगरे में अकबर की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु की तारीख इन शब्दों के अक्षरों से निकलती है—'फौत-ए-अकबर शाह'।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अनफा-उल-अखबार

लेखक : मोहम्मद अमीन

इस पुस्तक का भी ऐतिहासिक महत्त्व पिछली पुस्तक के समान है। इसका स्वरूप अधिक संक्षिप्त है यह भी आश्रयदाता की प्रशंसा से भरी हुई है। पुस्तक के लिखते समय इसका यही उद्देश्य रहा होगा। लेखक मोहम्मद अमीन दौलत मोहम्मद अल हुसैनी अलबलीकी का पुत्र है। यह नवाब सिपहदारखाँ की सेवा में था। पुस्तक के अन्त में इस नवाब की लम्बी प्रशंसा की गई है। यह पुस्तक 1036 हिजरी में पूरी हुई थी और इसका नाम अनफाउलअखबार है। इन शब्दों के अक्षरों से यह तारीख निकलती है। लेखक मुख्यतः अहमदनगर में रहता था जिसका वह बार-बार उल्लेख करता है। इसकी पुस्तक में यहाँ की इमारतों, बागों और इतिहास का काफी वर्णन है।

यह इतिहास भूमिका, दस भागों और उपसंहार में विभक्त है :

विषय-सूची

भूमिका—इसमें साधारण प्रशंसाएँ हैं पृ० 1 से 6।

भाग 1—प्रारम्भिक पैगम्बर पृ० 7 से 100।

भाग 2—प्रारम्भिक दार्शनिक पृ० 100 से 104।

भाग 3—ईरान के प्रारम्भिक बादशाह पृ० 104 से 135।

भाग 4—पैगम्बर मोहम्मद पृ० 136 से 138।

भाग 5—प्रथम चार खलीफे और बारह इमाम पृ० 138 से 154।

भाग 6—उमई खलीफे पृ० 144 से 146।

भाग 7—अब्बासी खलीफे पृ० 146 से 150।

भाग 8—अब्बासी खलीफों के समकालीन और पीछे के राजवंश ताहरी, समानी, बुवेही, इस्माइली, सलजुगी, गौरी और अन्य। पृ० 150 से 190।

भाग 9—जफेत के पुत्र पृ० 191 से 218।

भाग 10—तैमूर का राजवंश।

दसवें भाग की विषय-सूची

खुरासान के राजसिंहासन पर खाकान सईद शाहरुख सुलतान का बैठना—मिर्जा अलाउद्दौला का तख्त पर बैठना और 857 हिजरी में मिर्जा अब्दुल लतीफ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

की मृत्यु—मिर्जा मुगीसउद्दीन उलूबेग गुरगान का नदी पार करना—मिर्जा अबुल कासिम बाबर का खुरासान को प्रयाण—मिर्जा अलाउद्दौला और मिर्जा अब्दुल लतीफ में मतभेद—मिर्जा उलूगबेग और मिर्जा अब्दुललतीफ में शत्रुता और सुलतान की मृत्यु—मिर्जा सुलतान मोहम्मद का संक्षिप्त वृत्तान्त,—मिर्जा बल्ला का प्रयाण—मिर्जा अब्दुल लतीफ का मारा जाना और समरकन्द के राजसिंहासन पर मिर्जा अब्दुल्ला का बैठना—मिर्जा अब्दुल्ला शिराजी का मारा जाना—सुलतान सईद का सिंहासन पर बैठना—मिर्जा बाबर का बल्ख की ओर प्रयाण—मिर्जा अलाउद्दौला का पकड़ा जाना—मिर्जा सुलतान मोहम्मद—मिर्जा बाबर का अस्तराबाद की ओर जाना—अस्तराबाद—मिर्जा बाबर की मशहद के लिए रवानगी—मिर्जा शाहमहमूद और उसके समय की कुछ घटनाएँ—सुलतान सईद का खुरासान पहुंचना—मिर्जा इब्राहीम का मजहद्दिरान को प्रयाण और मिर्जा जहाँशाह तुर्कमान द्वारा उसकी पराजय—मिर्जा जहाँशाह का खाकान सईद की राजधानी में जाना और उसके साथ सन्धि—सुलतान सईद की मिर्जा इब्राहीम अलाउद्दौला और संजार से लड़ाई—हिरात को घेरने के लिए अमीर खलील का आना—सुलतान सईद का तुर्किस्तान की ओर प्रयाण—मिर्जा जहाँशहाँ तुर्कमान का संक्षिप्त वृत्तान्त—अस्तराबाद से सुलतान सईद का प्रयाण—खुरासानी सेना का पराजय और सुलतान सईद गुरगान का मारा जाना—सुलतान हुसेन बहादुरखाँ का तख्त पर बैठना—अनेक घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन—मिर्जा यादगार मोहम्मद का विजय के उपदेश से प्रयाण और शाही सेना द्वारा उसकी पराजय—सुलतान का मिर्जा यादगार मोहम्मद के विरुद्ध युद्ध प्रयाण—मिर्जा यादगार मोहम्मद का खुरासान के तख्त पर बैठना—सुलतान की जागान बाग की ओर कूच और मिर्जा यादगार का मारा जाना—सुलतान का खुरासान के तख्त पर फिर बैठना—खुरासान के तख्त पर बैठने के बाद की घटनाएँ—मिर्जा सुलतान हुसैन की मृत्यु—बादी उज जमा मिर्जा और मिर्जा मुजफ्फर हुसैन का साथ-साथ खुरासान के तख्त पर बैठना तथा कई अन्य घटनाएँ—अजर बेजान फारस, दो ईराक और किरमान पर शासन करने वाली अक कुईनलू जाति का संक्षिप्त वृत्तान्त, उन उजबेग सुलतानों का संक्षिप्त वृत्तान्त जो 900 हिजरी के पश्चात् मावरोन नहर और खुरासान पर शासन करते थे—सफवी बादशाह—ईराक व ईरान और क्रिमान की विजय—बगदाद का पतन और सुलतान मुराद का पलायन—खुजीस्तान का विजय—खुरासान के प्रदेशों की विजय और शाहीबेगखाँ का मारा जाना—अमीरयार मोहम्मद इस्पहानी का संक्षिप्त वृत्तान्त, रोम के सुलतान और सुलतान सलीम का ईरान में आगमन, शाह की मृत्यु—शाह ईस्माइल के पुत्र शाह तहिमास्प का राज्यारोहण, जहीरउद्दीन मोहम्मद बाबर, हुमायूं का राज्यारोहण—चाम्पानेर दुर्ग को छीनना—सुलतान बहादुर—आगरा पहुंचने पर बादशाह के साथ हुई घटनाएँ, बादशाह का ईरान की ओर पीछे हटना और उस समय की अनेक घटनाएँ—ईरान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

से बादशाह की हिन्दुस्तान की ओर वापसी, काबुल से बादशाह की भारतवर्ष की की ओर विजय के विचार से कूच, रबी-उल-अव्वल 963 हिजरी को बादशाह की मृत्यु, कुछ उत्तम पुरुषों का वर्णन, अपने राज्य के प्रथम वर्ष से 51 वर्ष तक मोहम्मद अकबर का जीवन-चरित्र—जहाँगीर का वृत्तान्त—बादशाह का और उन कुछ घटनाओं का वृत्तान्त जो उस समय घटीं—सुलतान खुसरु का पलायन, पराजय और गिरफ्तारी—दक्षिण से सुलतान परवेज की वापसी और बादशाह के आदेशानुसार सुलतान खुर्रम का आगमन—सन्धियों का भंग और दक्षिण में मलिक अम्बर के विद्रोह की पुनरावृत्ति—सुलतान खुर्रम का विद्रोह—बंगाल पहुँचने के पश्चात् सुलतान खुर्रम का वृत्तान्त—दक्षिण के मामलों का निर्णय और सेना का बंगाल की ओर प्रयाण—शहजादा सुलतान परवेज की रवानगी के बाद की विपत्तियाँ—सुलतान परवेज और महावतखाँ की सुलतान खुर्रम से लड़ाई—मलिक अम्बर का अधीन होना—कुछ मामलों का संक्षिप्त वर्णन—पृ० 218 से 446 तक।

उपसंहार—सिपहदारखाँ का वृत्तान्त-ईश्वर उसको शान्ति दे और उसकी आयु दीर्घ हो- पृ० 446 से 482 तक।

आकार—छोटा क्वार्टो पृ० संख्या 482, एक पृष्ठ पर सत्रह पंक्तियाँ।

यह पुस्तक अद्वितीय है। मुझे केवल एक प्रति का पता है। यह लेखक के हाथ की लिखी हुई है जो 1037 हिजरी के मोहर्रम में मूल रचना के कुछ मास बाद तैयार की गई थी। यह प्रति लखनऊ के नवाब शमशीर कादिर की है।

अवतरण

अकबर का राज्य

1003 हिजरी में शहजादा सुलतान मुराद ने बादशाह के आदेश से दक्खिन की ओर प्रयाण किया। वहाँ ख्वाजा बेग मिर्जा और मिर्जा मोहम्मद सालीह ने आकर उसको सलाम किया। दक्खिन में शहजादा सुलतान मुराद की मृत्यु हो जाने पर शहजादा दानियाल उस प्रान्त में गया और उसने निजाम-उल-मुल्क की राजधानी अहमदनगर का किला छीन लिया। इसका उल्लेख यथास्थान किया जा चुका है। इस प्रदेश का शासन ख्वाजा बेग मिर्जा और मिर्जा मोहम्मद सालीह के सुपुर्द कर दिया गया। ये दोनों बड़े आदमी इस मुल्क में बहुत लम्बे समय से निवास कर रहे हैं और इस अवधि में इन्होंने लोगों के साथ अनेक अनुग्रह और अहसान किए हैं और आराम दिए हैं जो शीघ्र ही आगे चलकर प्रकट हो जाएँगे।

अकबर के राज्य के 49वें वर्ष, 50वें और 51वें वर्ष में अर्थात् 1012, 1013 और 1014 हिजरी में निम्नलिखित घटनाएँ घटीं :

1012 हिजरी में शहजादा सुलतान सलीम को गुसलखाने में कैद कर दिया गया। उसी दिन शहजादे ने अपने दुष्कर्मों पर पश्चात्ताप किया था और वह बादशाह के सामने उपस्थित हुआ था। उसकी दादी मरियम मकानी का देहान्त

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हो चुका था। इस अवसर पर वह शोक प्रकट करने के लिए आया था। उसने यह अवसर अपने अनुकूल समझा था। परन्तु 12 दिन बाद शहजादे को मुक्त कर दिया गया। इसी वर्ष दक्खिन से सुलतान दानियाल की मृत्यु का समाचार आया। सन् 1013 हिजरी में बादशाह अकबर बीमार हो गया और बुधवार 12 जमादउस्सानी 1014 हिजरी को आगरे में उसकी मृत्यु हो गयी। उसको सिकन्दरा में दफनाया गया। हमेशा के लिए अस्तित्व केवल ईश्वर का ही रहेगा।

इस बादशाह की किसी भी स्थान पर हार नहीं हुई। प्रत्येक युद्ध में उसकी सेना को विजय मिली। उसने सब शत्रुओं का दमन कर दिया। किसी का शस्त्र बल से और किसी का शान्त साधनों से। समस्त देश पर दृढ़ता और भलाई का शासन था। सब प्रकार के समस्त लोग उसके दरबार में आते थे। सब वर्गों में व्यापक शान्ति थी। उसकी छत्रछाया में प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग सुखी थे। यह बात गुप्त नहीं है कि इस सुखमय शासन का यह वृत्तान्त उस समय का दशांश वर्णन भी नहीं है। उसके राज्य का पूरा विवरण 'अकबरनामा' और 'तारीख-ए-निजामी' में दिया हुआ है। ईश्वर की प्रशंसा है कि बादशाह अकबर की मृत्यु पर लोगों को जो दुःख हुआ वह उसके उत्तम और शक्तिशाली पुत्र जहाँगीर के गद्दी पर बैठने पर हट गया। ईश्वर करे कि यह महान राजवंश न्याय दिवस तक शक्तिसम्पन्न बना रहे।

जहाँगीर का राज्य

इसके पश्चात् उन घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन है जो 1036 हिजरी में घटीं। जब बादशाह के आदेश से महावतखाँ दक्खिन से वापिस आया तो बादशाह कश्मीर में था। मार्ग में महावतखाँ और आसफखाँ में, जो इतमाद-उद्-द्दौला का पुत्र और नूरजहाँ बेगम का भाई था, झगड़ा हो गया और इसने ऐसा गम्भीर रूप धारण कर लिया कि अन्त में उन दोनों ने अपनी-अपनी सेना जमा ली और उनमें लड़ाई हो गई। इसमें महावतखाँ जीता और आसफखाँ भागकर अटक बनारस के दुर्ग में चला गया और वहाँ वह किले में बन्द हो गया। विजयी पक्ष ने उसको घेर लिया और कुछ दिन बाद उसे गिरफ्तार कर लिया। उसे महावतखाँ के पास ले जाया गया जिसने उसे कैद में डाल दिया। इन परिस्थितियों के कारण दरबार में महावतखाँ का प्रभाव इतना बढ़ गया कि उसकी आज्ञा के बिना कोई व्यक्ति बादशाह के निकट नहीं पहुँच सकता था और वह बादशाह के खानपान का भी निरीक्षण किया करता था। महावतखाँ ने बादशाह की रात दिन निगरानी करने के लिए अपने आज्ञाकारी राजपूत नियुक्त कर दिए थे एवं बादशाह के साथ किसी का भी सीधा सम्पर्क नहीं था। छः मास तक ऐसी ही स्थति बनी रही। तब नूरजहाँ बेगम के परामर्श से एक मुगल दल ने महावतखाँ पर कूच करके लगभग तीन हजार राजपूतों को मारकर आसफखाँ को मुक्त कर दिया। इस प्रकार हारकर महावतखाँ भाग गया। बादशाह ने एक बड़ी सेना देकर खानखाना को पीछा करके

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसे निर्मूल करने के लिए रवाना किया परन्तु इस चढ़ाई में खानखाना की मृत्यु हो गई और परिणामस्वरूप 1036 हिजरी के अन्त में महावतखां थोड़े से अनुयायियों के साथ इधर-उधर भटकता रहा।

पह पहले ही लिखा जा चुका है कि सुलतान खुर्रम इन्हीं परिस्थितियों में दक्खिन मे रहा। हम प्रतीक्षा करके देखें कि उसके साथ क्या हुआ और इसके बाद उसने किस मार्ग का अनुसरण किया।

इसी वर्ष बुरहानपुर नगर में शहजादा परवेज की मृत्यु हो गई। उस उत्तम शहजादे की मृत्यु की तारीख इन शब्दों से निकलती है जिनकी रचना मौलाना समदी बुआनती ने की थी 'शाह-ए-शाहान बीशुद अज जहान'।

इसी वर्ष निजाम-उल-मुल्क ने दक्खिन में गड़बड़ मचा दी परन्तु खानजहाँ के प्रयास से उसका दमन हो गया। इस मामले का विवरण इस पुस्तक के अन्तिम भाग में मिलेगा।

इस समय अर्थात् 1036 हिजरी के उत्तरार्द्ध में इस देश के अमीर और गरीब तथा बड़े और छोटे सब लोग सब प्रकार के सुख और सन्तोष का उपभोग कर रहे हैं और सब प्रकार के खतरों से सुरक्षित हैं और सुख से सोते हैं और सर्व शक्तिमान ईश्वर से बादशाह की निरन्तर समृद्धि के लिए प्रार्थना करते हैं। यह बादशाह साम्राज्य का संरक्षक और ईश्वर की छाया है।

उपसंहार

इस पुस्तक के अन्तिम भाग में सिपहदारखाँ का वृत्तान्त है। ईश्वर उसको शान्ति दे। इस पुस्तक में उसका वृत्तान्त इस उद्देश्य से दिया जाता है कि उसकी स्मृति अगली पुश्तों तक बनी रहे। यह बात गुप्त नहीं है कि उसका जन्म-स्थान तबरीज था और उसके पूर्वज उस देश के अमीरों में गिने जाते थे। उसका नाम मिर्जा मोहम्मद सालीह था। 1000 हिजरी में वह ईरान छोड़कर हिन्दुस्तान गया। वह मासूम बेग सफवी के पुत्र स्वर्गीय ख्वाजा बेग मिर्जा के साथ था। उसकी प्रशंसा करने की आवश्यकता नहीं है। उसके उत्तम गुणों का पर्याप्त वर्णन नहीं किया जा सकता। इन दोनों का मैत्री सम्बन्ध अत्यन्त प्रगाढ़ था।

हिन्दुस्तान में आने पर मिर्मा मोहम्मद सालीह को बादशाह के साथ भेंट करने का सम्मान प्राप्त हुआ। उसे अपनी प्रतिष्ठा के अनुकूल मनसब प्राप्त हुआ और गुजरात प्रांत का शासन उसके सुपुर्द किया गया। जब वह गुजरात में था तो उसने स्वप्न में एक इतना बड़ा सफेद झण्डा देखा जो आकाश को छेद रहा था। कभी वह दाहिने हाथ की ओर और कभी बायें हाथ की ओर जाता था। फिर वह उससे कुछ दूरी तक हट गया और फिर उसके निकट आया। इसके बाद वह उसकी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ओर झुकने लगा। तब उसने उसे पकड़ लिया और सीधा कर दिया और उसका स्वप्न भंग हो गया। उसको यह शुभ-स्वप्न हुआ तव से प्रतिदिन वह समृद्ध होता जाता है और उसने यह वर्तमान प्रतिष्ठित पद प्राप्त कर लिया परन्तु इस झण्डे की ऊँचाई प्रकट करती है कि उसको और भी अधिक उन्नति प्राप्त होने वाली है। इस स्वप्न का यही भाष्य किया गया है। वह इस स्वप्न की बात वुद्धिमान लोगों से निरन्तर कहा करता है "तुम्हारी और अधिक प्रतिष्ठा वढ़ने वाली है प्रत्येक काल में तुम्हारी प्रतिष्ठा एक सी नहीं रहती। भाग्य के उदय की प्रतीक्षा करो यह तुम्हारे उदय के सूचक हैं जो उन्नति तुम्हें अभी प्राप्त हुई है वह वहुत कम है। इसके मुकावले में तुम्हें और अधिक उन्नति प्राप्त होने वाली है।"

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जहाँगीर के संस्मरण

[सम्पादक की प्रारम्भिक टिप्पणी]

ऐसी कई पुस्तकें हैं जो बादशाह जहाँगीर के आत्म-जीवनी सम्बन्धी संस्मरण होने वाला दावा करती हैं। इनके शीर्षकों में इतनी गड़बड़ है कि आरम्भ में कुछ लिखना आवश्यक है। तभी जो कुछ इस विषय पर सर एच० ईलियट ने लिखा है वह समझ में आ सकेगा। इनके विषय में कुछ और भी जानकारी प्राप्त हुई है। यह उस समय प्रकाशित नहीं की गई थी जब सर एच० इलियट ने इस विषय में लिखा था। अब इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। यह विशेष जानकारी यदि सर एच० एम० ईलियट को प्राप्त हो जाती तो वह अपनी सम्मति को संशोधित कर देते। अब इसे उनके लेखों में समाविष्ट नहीं किया गया है। इसको प्रथक देकर ऐसे परिणाम निकाले गये हैं जो इससे निकलते हैं। मूल लेख ज्यों के त्यों रहने दिये हैं केवल कुछ पंक्तियाँ जोड़ी गई हैं। इनका मूल प्रश्न पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इस व्यवस्था से सर एच० एम० इलियट के दलीलों की शक्ति पूरी बनी रहेगी और जो कुछ लिखा गया है उसके आधार पर पाठक स्वयं निष्कर्ष पर पहुंच सकेंगे।

यह निश्चित है कि संस्मरणों के दो संस्करण हैं और ये एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं। मेजर प्राइस ने एक संस्करण का अनुवाद किया था और एन्डरसन ने 1786 में एक दूसरे संस्करण के विषय में लिखा था। हम इन संस्करणों को प्रथम या द्वितीय नहीं कह कर एक को प्राइसवाला और दूसरे को एन्डरसन वाला कहेंगे। इससे इनकी प्राथमिकता या प्रामाणिकता पर कोई असर नहीं पड़ेगा। यह भी देखा जायगा कि प्रत्येक संस्करण के कई भेद हैं। इस पुस्तक में मेजर प्राइस द्वारा अनूदित आत्म-जीवनी पहले दी गई है। प्राइस की प्रति पर कोई शीर्षक नहीं था। परन्तु सर एच० इलियट इसको तारीख-ए-सलीमशाही कहते हैं। श्री मोरले के मतानुसार इसकी सर्वोत्तम प्रति रायल एशियाटिक सोसायटी के पास है और इसका शीर्षक तारीख-ए-जहाँगीरनामा सलीमी है। दूसरी प्रति का नाम केवल जहाँगीर-नामा है। इन्डिया आफिस के पुस्तकालय में एक प्रति है जिसका नाम कहीं तुज्क-ए-जहाँगीरी और कहीं जहाँगीरनामा है। ब्रिटिश म्यूजियम की प्रति का शीर्षक तुज्क-ए-जहाँगीरी है।

सर एच एम० ईलियट ने ये संस्करण देखे थे। एक का उन्होंने नाम नहीं दिया है। यह पुस्तक संक्षिप्त है और बड़ी ही सादगी से लिखी गई है (पृ० 257)। तारीख-ए-सलीमशाही का प्राइस ने अनुवाद किया है और यह 1029 हिजरी तक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थात् जहाँगीर के राज्य के पन्द्रहवें वर्ष तक जाती है। एक दूसरी प्रति का नाम तुज्क-ए-जहाँगीरी है। यह इतने आगे तक नहीं जाती।

दूसरी आत्म-जीवनी अर्थात् एन्डरसन के संस्करण के भी दो प्रकाशन हैं। एक शासन के बारहवें वर्ष तक जाता है। इस पुस्तक में ही लिखा है कि इस वर्ष इसकी प्रतियाँ तैयार की गई थीं और बादशाह के आदेश से बाँटी गई थीं। इसका शीर्षक द्वाजदा साला जहाँगीरी है। दूसरा प्रकाशन 19वें वर्ष तक जाता है और पुस्तक में लिखा है कि अस्वस्थता के कारण जहाँगीर ने लिखना बन्द कर दिया। सर एच० एम० इलियट इसको वाकियात-ए-जहाँगीरी कहते हैं परन्तु मेरी देखी हुई सारी प्रतियों में इसका नाम तुज्क-ए-जहाँगीरी है और स्वयं सर एच० एम० इलियट ने लिखा है कि इसका कोई माना हुआ शीर्षक नहीं है। जहाँगीर स्वयं इसको जहाँगीरनामा कहता था (पृ० 331)। फिर शायद उसने इकबालनामा कहना प्रारम्भ किया (पृ० 281)। रायल एशियाटिक सोसायटी में इस पुस्तक की अच्छी प्रति है। एक प्रति ब्रिटिश म्यूजियम में है, एक इन्डिया आफिस के पुस्तकालय में और इसकी तीन प्रतियाँ सर एच० एम० ईलियट के पुस्तकालय में भी हैं।

इस संस्करण का प्रथम उल्लेख एण्डरसन ने 1786 में किया। फिर ग्लेडविन ने इसमें से अवतरण लिए। फिर मेजर प्राइस ने अपनी पुस्तक की भूमिका में लिखा कि उसके और एण्डरसन के संस्करण में भेद है। जब प्राइस का अनुवाद प्रकाशित हुआ था तो डे मेसी ने इसकी एण्डरसन से तुलना की और सिद्ध किया कि ये दोनों जुदी-जुदी पुस्तकें हैं। उनकी दलील संक्षेप में यह है। उन्होंने कहा कि यह भेद यह मानकर नहीं समझाया जा सकता कि एण्डरसन द्वारा प्रकाशित किया गया संस्करण जहाँगीर की मूल संस्मरणों का या तो संक्षिप्त है या अवतरण है। यद्यपि एण्डरसन का संस्करण अधिक संक्षिप्त है परन्तु इसमें ऐसी अनेक घटनाओं का वर्णन है जो प्राइस के अनुवाद में नहीं मिलतीं। फिर उन्होंने समान सन्दर्भ उद्धत करके बतलाया कि यह असम्भव है कि एण्डरसन के अवतरण और प्राइस का संस्करण एक ही प्रति में से लिए गए हों। डॅसेसे ने यह भी लिखा है कि सम्पत्ति और खर्च के हिसाब तथा हाथी और घोड़ों की संख्या के विषय में बड़ी अत्युक्ति की गई है और यही बात भवनों के खर्च के विषय में कही जा सकती है। यह अत्युक्ति प्राइस के अनुवाद में अधिक और एण्डरसन के अवतरणों में बहुत कम है। प्राइस की प्रति की प्रामाणिकता के विषय में कोई प्रश्न न खड़ा करके डॅसेसे ने लिखा है कि एण्डरसन और ग्लेडविन द्वारा प्रकाशित किए गए अवतरण बादशाह के लिखे हुए अधिक प्रतीत होते हैं और जिस प्रति का प्राइस ने अनुवाद किया है वह इतनी प्रामाणिक नहीं है। यह प्रति पीछे से लिखी हुई जान पड़ती है और जहाँगीर की मूल आत्म-जीवनी के आधार पर लिखी गई है। शायद यह किसी ऐसी पुस्तक का अनुवाद हो जो किसी लेखक ने गलत तरीके से प्रथम पुरुष के ढंग से लिखी हो मानो वह बच्चों से बातें कर रहा हो और उसने घटनाक्रम का ध्यान न रखा हो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और उसने इसमें ऐसी बातें मिला दी हों जो वाहर की हों परन्तु जिसका उसे स्मरण हो और ऐसी बातें छोड़ दी हैं जो इस कहानी का एक अंग होनी चाहिए थीं।

सर एच० एम० ईलियट का कहना है कि ये प्रामाणिक संस्मरण हैं। इस विषय में उसका मत अगले लेख में दिया हुआ है। इङ्गलैण्ड में श्री मोर्ले स्वतन्त्र रूप से लगभग उसी समय ऐसे ही परिणाम पर पहुंचे थे। रायल एशियाटिक सोसायटी की हस्तलिखित प्रतियों का सूचीपत्र तैयार करते समय इस सज्जन को भारतीय सरकार के पुस्तकालय में इसके दो संस्करण प्राप्त हुए थे। जिस संस्करण का प्राइस ने अनुवाद किया है उसको मोर्ले प्रथम संस्करण कहते हैं और इसका यह कारण है कि इसकी एक प्रति पर 1040 हिजरी (1630 ई०) लिखा हुआ है एवं यह जहांगीर की मृत्यु के तीन वर्ष वाद की प्रति है। परन्तु मोर्ले की आलोचना बुद्धि में कोई दोष नहीं था, फिर उनको दूसरे संस्करण के अधिक महत्व का पता लग गया। वे लिखते हैं कि दोनों प्रतियों की तुलना करने पर यह प्रश्न हल हो जाता है कि आत्म-जीवनी के दो संस्करण हैं। परन्तु यह शंका फिर भी वनी रही कि दोनों में अधिक प्रामाणिक कौन-सा संस्करण है। जिस संस्करण को मैं प्रथम संस्करण मानता हूं, वह प्रामाणिक है। यह प्रति के पुरानेपन से सिद्ध होता है क्योंकि लेखक की मृत्यु के बाद ही जो प्रति तैयार की गई, वह बनावटी नहीं हो सकती। परन्तु बड़े और अधिक पूर्ण संस्करण की प्रामाणिकता के विषय में अब भी सन्देह बना रहा। इसके सम्पादक मोहम्मद हादी ने विवरण दिया है जिससे यह वात सिद्ध होती है कि यह वड़ा संस्करण असली है। उसने स्पष्ट लिखा है कि जहांगीर ने स्वयं अपने शासन के अठारह वर्ष का इतिहास लिखा था और उस (मोहम्मद हादी) ने विभिन्न विश्वसनीय साधनों के आधार पर इसको बादशाह की मृत्यु तक जारी रखा। मैंने इसको दूसरे संस्करण का नाम दिया है क्योंकि इसका सम्पादन लेखक की मृत्यु के बाद किया गया था। परन्तु यह बहुत सम्भव है कि इसका वर्तमान स्वरूप स्वयं बादशाह ने ही तैयार किया हो। यह भी अनुमान लगाया जा सकता है कि छोटी पुस्तक बड़ी पुस्तक की रूपरेखा मात्र होगी। परन्तु इन दोनों में बड़ा भेद है। इसलिए मेरा विचार है कि तैमूर और बाबर की भांति जहांगीर ने भी अपने संस्मरण चगताई तुर्की भाषा में लिखे होंगे और जो प्रतियां अब उपलब्ध हैं, वे मूल का पूर्ण अनुवाद होंगी। मोर्ले का प्रथम संस्करण 1029 हिजरी तक चलता है और यह वही पुस्तक है जिसको सर हेनरी "तारीख-ए-सलीमशाही" कहते हैं।

सर एच० एम० ईलियट को उपर्युक्त हस्तलिखित प्रति का पता नहीं था। इसलिए वे प्राइस के संस्करण को बनावटी समझते हैं और उनकी यह मान्यता है कि यह वादशाह ने नहीं, किसी जौहरी ने लिखी है। परन्तु जिस संस्करण को वे प्रामाणिक मानते हैं उससे भी सिद्ध होता है कि जहांगीर को जवाहरात का बड़ा शौक था और उनकी कीमतें जांचने की उसको आदत थी। सब बातों का ख्याल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करने पर एण्डरसन का संस्करण अधिक महत्वपूर्ण है। इसमें बादशाह के साधारण पापों का मद्यप्रेम का और मद्य गोष्ठियों का वर्णन तो है परन्तु उसके घोर दुष्कर्मों का कम उल्लेख है। मोर्ले का यह ख्याल कि दोनों पुस्तकें मूल चगताई पुस्तक के अनुवाद हैं, संतोषप्रद नहीं है क्योंकि इन दोनों में बड़ा भेद है। इस कठिनाई का कोई अन्य हल होना चाहिए।

यह तो सिद्ध है कि जहाँगीर की मृत्यु के थोड़े दिन बाद ये दोनों संस्करण मौजूद थे। प्राइस के संस्करण के विषय में यह सिद्ध है। ऊपर लिखा जा चुका है कि इसकी प्रति की तारीख बहुत पहले की है। एण्डरसन के संस्करण की प्रतियाँ शासन के बारहवें वर्ष से आगे नहीं चलतीं जिससे सिद्ध होता है कि जहाँगीर ने उसी समय इस पुस्तक की प्रतियाँ तैयार करवा कर बाँट दी होंगी। जहाँगीर की मृत्यु के थोड़े दिन बाद ही 'इकबालनामा' लिखा गया था जो इन जीवनियों का संक्षेप है। प्रायः यह बड़ी ज़ल्दबाजी में मान लिया गया है कि जहाँगीर ने आत्म-जीवनियाँ अपने हाथ से लिखी होंगी। वह ऐसा आदमी नहीं था जो अपने हाथ से इतना परिश्रम करता। पृ० 280 पर एक सन्दर्भ उद्धृत किया गया है जिसमें वह लिखता है कि कुछ समय तक तो वह स्वयं लिखा करता था। फिर इसी स्थल पर वह कहता है कि पुस्तक को जारी रखने का काम मुतामदखाँ के सुपुर्द कर दिया गया था, क्योंकि यह व्यक्ति "पहले से ही मेरे राज्य की घटनाओं का वृत्तान्त लिखने के लिए नियुक्त था।" इससे प्रकट होता है कि एक पेशेवर घटना लेखक था। ऐसा भी विदित होता है कि बादशाह के पास दो या अधिक आत्म-जीवनी लेखक थे और उन्हें वह ऐसी घटनाओं के विषय में आदेश दिया करता था जिनका उल्लेख वह आवश्यक समझता था और ये लोग विविध विषयों पर उसकी सम्पत्ति का भी ध्यान रखते थे। यह हो सकता है कि कभी-कभी वह स्वयं भी लिख देता हो या लिखा देता हो। परन्तु यह अधिक सम्भव है कि उसके लेखक लिखते समय अपनी ही प्रवृत्ति का अनुसरण किया करते थे। इस व्यवस्था के कारण ही इन दोनों संस्करणों के विवरण में भेद है परन्तु भाव दोनों का एक है।

शासन के बारहवें वर्ष तक के एण्डरसन के संस्करण से जहाँगीर के संस्मरणों का साम्य है। इसलिए यह प्रामाणिक संस्करण माना जा सकता है। प्राइस का संस्करण इस प्रकार अनुमत नहीं है परन्तु फिर भी यह बनावटी नहीं कहा जा सकता। यह विकृत नहीं है ओर न शत्रुभाव से लिखा गया है परन्तु संख्याओं के विषय में लेखक ने बड़ी अत्युक्तियाँ की हैं। इसलिए उसकी संख्याओं को नहीं मानना चाहिए। इसमें ऐसी अनेक बातें लिखी गई हैं जो दूसरे संस्करण के अनुसार जहाँगीर की विशेषताएँ थीं। कुछ बातों में यह संस्करण बढ़ा-चढ़ा भी है। इसमें ऐसे कामों का पूरा और स्पष्ट उल्लेख है जिनको जहाँगीर छिपाना पसन्द करता था। यह भी इस बात का कारण हो सकता है कि जहाँगीर ने इसको अनुमोदित नहीं किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तारीख-ए-सलीमशाही

लेखक : तुजक-ए-जहाँगीरी

इन दोनों पुस्तकों को विना विशेष कारण के पृथक्-पृथक् माना जाता है। परन्तु इन दोनों पर साथ-साथ ही विचार होना चाहिए।

एक ही पुस्तक की विभिन्न प्रतियाँ हिन्दुस्तान के दूर-दूर के भागों में मिलती हैं। इन सबको तारीख-ए-सलीमशाही कहा जाता है। यह सम्भव नहीं प्रतीत होता है कि ये प्रतियाँ एक दूसरे की नकल हों। यह अधिक सम्भव है कि मूल प्रति अधिक पुरानी थी और ये सब उससे तैयार की गई हैं। इसलिए यह नाम ठीक है। परन्तु पुस्तक के अन्दर इसका कोई विशेष नाम नहीं दिया हुआ है।

तारीख-ए-सलीमशाही का मेजर डेविड प्राइस ने सन् 1829 में अनुवाद किया था। यह बम्बई की सेना में अफसर था। यह अनुवाद ओरियन्टल ट्रांसलेशन कमेटी के लिए किया गया था और इसका शीर्षक था "बादशाह जहाँगीर के संस्मरण स्वलिखित और फारसी हस्तलिखित प्रति से अनूदित"। प्राइस ने लिखा है कि प्रति पर कोई विशेष शीर्षक नहीं है। इसलिए अनुवादक इसका नाम "वाकयात-जहाँगीरी" रखना चाहता था या इससे मिलता जुलता दूसरा नाम सोच रहा था जिसका अर्थ हो "बादशाह जहाँगीर के राज्य की घटनाएँ"। परन्तु मात्र अनुमान से ही इसका प्राच्य नाम रखना अनावश्यक प्रतीत हुआ क्योंकि अँग्रेजी शीर्षक से भी विषय सूची का काफी ठीक पता लग सकता है। इसके अतिरिक्त "एशियाटिक मिसीलेनी" में जो कलकत्ते मे 1785-86 में छपी थी, लगभग 17 पृष्ठों में कुछ अवतरण दिए हुए हैं जिनसे प्रकट होगा कि यह वही पुस्तक है जिसको एक विद्वान प्राच्य-विशेषज्ञ ने "तुजक-ए-जहाँगीरी" कहा है और जिसका उसने अनुवाद किया है। उसने बतलाया है कि यह जहाँगीर ने लिखी थी और इसमें उसके शासन के तेरह वर्षों का वर्णन है। परन्तु श्री एन्डरसन ने "तुजक" में से कुछ ही अवतरण दिये थे और इन दोनों की इस पुस्तक से तुलना की जाने पर प्रकट होगा कि ऐसे कई पूरे पृष्ठ छोड़ दिये गए हैं जो इन दोनों में उल्लिखित घटनाओं के बीच के थे।

मेजर प्राइस और श्री एन्डरसन के संस्करणों का भेद श्री एम० डी० सैसी ने जर्नल डेस सावन्स, 1830 में दर्शाया है। जहाँगीर की जो भी आत्म-जीवनियाँ इस देश में प्रचलित हैं, उनमें एक सलीमशाही से बहुत छोटी है और इसका अनुवाद

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मेजर प्राइस ने किया है। यह बड़ी सरलता, सत्यता और ईमानदारी से लिखी गई है और यह शाही कलम के अधिक अनुरूप है। इस पर प्रामाणिकता की वड़ी छाप है। शायद इस मूल को बढ़ाकर ही तारीख-ए-सलीमशाही की रचना की गई है। इसको जहाँगीर ने अपने शासन के आरम्भ में लिखा होगा। जिस पुस्तक का अनुवाद किया गया है, वह बादशाह ने नहीं, किसी जौहरी ने लिखी होगी। इसमें दावा किया गया है कि सोने, चाँदी और बहुमूल्य रत्नों का सही और बारीक विवरण है। संख्या बतलाने में भी आश्चर्यजनक अत्युक्ति की गई है। इसके आगे आरमस और हिन्द की सम्पत्ति फीकी पड़ जाती है। यह इस ग्रन्थ के बनावटी होने का आन्तरिक प्रमाण हैं। यद्यपि इसमें ऐसी बातें अनेक हैं जो जहाँगीर के ही भाव मालूम होते हैं, परन्तु कुछ भाग इसमें ऐसे अवश्य हैं जिनको एनियस और सलमनाजर की सी कल्पित बातें माननी चाहिए।

तारीख-ए-सलीमशाही की अत्युक्तियों को प्रकट करने के लिए कुछ उदाहरण भी दिए जा सकते हैं।

मेजर प्राइस के अनुवाद के पृष्ठ 2 पर कहा गया है कि "इस अवसर पर मैंने अपने पिता द्वारा बनाये गए राजसिंहासन का उपयोग किया और उस वर्ष के त्यौहार को मनाने के लिए जब सूर्य (मेष) राशि में प्रकट हुआ तो मैंने असीम व्यय करके इस सिंहासन को और अधिक मूल्यवान बना दिया। इस सिंहासन को बनाने में दस करोड़ अशर्फियों से कम खर्च नहीं हुआ। हर एक अशर्फी 5 मिथकल की थी। यह कीमत केवल जवाहरात की थी जो उसमें लगाए गए थे। एक करोड़ सौ लाख का होता है और एक लाख सौ हजार का होता है। इसमें तीन सौ मन सोना खर्च हुआ था। यह हिन्दुस्तानी वजन है और एक हिन्दुस्तानी मन ईराक के दस मन के बराबर होता है।

अनुवादक ने जवाहरात का मूल्य पौंड में बदल कर कहा है कि सब खर्च पन्द्रह करोड़ पौंड हुआ था। वह कहता है कि यह अविश्वसनीय है। तुजक-ए-जहाँगीरी में अधिक गम्भीरता के साथ कहा गया है कि साठ लाख अशर्फी और पचास मन सोना लगा था। प्रामाणिक संस्मरणों में राजसिंहासन का उल्लेख नहीं है।

कुछ और नीचे हम पढ़ते हैं कि "सिंहासन पर बैठकर जिसकी मुझे आशा और अभिलाषा थी, वह शाही ताज मैंने मँगवाया जिसको मेरे पिता ने बनवाया था। इसी भाँति का ताज ईरान के महासम्राट धारण किया करते थे। मैंने यह अपने सामने मँगवाया और फिर समस्त अमीरों के सामने अपने सिर पर रखा। यह मेरे राज्य की समृद्धि और दृढ़ता का शुभ चिह्न था। मैंने पूरे एक खगोलीय घंटे तक इसे अपने सिर पर रखा। इस ताज के बारह सिरे थे और एक-एक सिरे पर एक हीरा लगा हुआ था जिसका मूल्य पाँच मिथकल वाली एक लाख अशर्फियाँ थीं। ये सब हीरे मेरे पिता ने अपनी ही सरकार के साधनों से खरीदे थे। अपने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पूर्वजों से प्राप्त किये हुए साधनों के द्वारा नहीं। इस ताज के ऊपर मध्य में एक चार मिथकल का मोती लगा हुआ था जिसकी कीमत 1 लाख अशर्फियाँ थीं। इसके विभिन्न भागों पर दो सौ लाल जड़े हुए थे और प्रत्येक का वजन चार मिथकल था और मूल्य छः हजार रुपये था।" इस पर अनुवादक कहता है कि "सर्वोच्च शक्ति के इस प्रतीक का मूल्य वीस लाख और सत्तर हजार पौण्ड होता है", लेकिन छोटी पुस्तकों में और प्रामाणिक जीवनियों में इस ताज का कहीं वर्णन नहीं है।

पृष्ठ 5 पर जहाँगीर लिखता है कि उसने आय के कुछ साधन माफ कर दिये थे जिनके द्वारा उसके पिता को 1600 हिन्दुस्तानी मन सोना मिला करता था। यह ईराक के 16000 मन के वरावर होता है। तुजक में केवल साठ हिन्दुस्तानी मन लिखा है और प्रामाणिक आत्म-जीवनी में राशि का कोई उल्लेख नहीं है।

पृष्ठ 14 पर वह कहता है कि "आगरा दुर्ग के ही काम को पूरा करने में 186 लाख अशर्फी से कम खर्च नहीं हुआ था और प्रत्येक अशर्फी पाँच मिथकल की थी।" अनुवादक इस राशि को अंग्रेजी सिक्के में वदल कर कहता है कि यह दो करोड़ पैंसठ लाख पौंड के वरावर होता है। तुजक में 36 लाख रुपये का खर्च वतलाया है और प्रामाणिक आत्म-जीवनी में पैंतीस लाख रुपये लिखे हुए हैं जो ईरान के एक लाख पन्द्रह हजार तूमान के वरावर होते हैं या तूरान के एक करोड़ पांच लाख खानी के वरावर होते हैं।

पृष्ठ 15 पर वह लिखता है कि "जो मन्दिर राजा मानसिंह ने वनवाया था और जिसको बादशाह ने मस्जिद बनाने के लिए नष्ट करवाया था, उसके निर्माण में लगभग 36 लाख अशर्फियाँ खर्च हुई थीं और प्रत्येक अशर्फी पाँच मिथकल की थी।" अनुवादक ने लिखा है कि यह राशि 5 करोड़ 40 लाख रुपये के वरावर थी। तुजक के अनुसार कुल 8 लाख रुपये खर्च हुए थे।

पृष्ठ 32 पर लिखा है कि "वादशाह ने शहजादा परवेज को मोतियों की एक माला प्रदान की जिसका मूल्य पाँच लाख रुपया था"। तुजक में इसका मूल्य एक लाख रुपये लिखा है।

पृष्ठ 34 पर वह लिखता है कि "जव दौलतखाँ की मृत्यु हुई तो वह बारह करोड़ पौंड की सम्पत्ति छोड़कर मरा था।" तुजक में लिखा है कि वह तीन लाख तुमान की जवाहरात छोड़कर मरा था और इसके अतिरिक्त सोना और कुछ अन्य वस्तुएँ थीं।

पृष्ठ 37 पर वह लिखता है कि "उसके भाई दानियाल की सम्पत्ति में 5 करोड़ के जवाहरात और 2 करोड़ अशर्फियाँ या 6 करोड़ 30 लाख पौण्ड थे।" तुजक में इस राशि के विषय में कुछ उल्लेख नहीं है।

पृ० 51 पर लिखा है कि "हेमू के सरपेच में हीरे, लाल, पन्ने, मोती और पुखराज लगे हुए थे, जिनका मूल्य साठ लाख अशर्फी या 54 लाख पौंड था।" तुजक में लिखा है कि इनका मूल्य अस्सी हजार तूमान था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पृ० 67 पर लिखा है कि, "उसके पुत्र खुसरू का पीछा करने की तैयारी में उसके तबेले के चालीस हजार घोड़े और एक लाख ऊँट वाहर निकाल कर बाँटे गए थे।" तुजक में इस विषय पर कुछ नहीं लिखा है।

पृ० 79 पर वह लिखता है कि, "जमालबेग को एक लाख अशर्फियां बदखानियों में बाँटने के लिए दी गईं और यह भी आदेश दिया गया कि अजमेर के दरवेशों में पचास हजार रुपये बाँट दिए जाएँ।" तुजक में तीस हजार का उल्लेख है और बदखशानियों को रुपए देने के विषय में कुछ नहीं लिखा है।

पृ० 88 पर लिखा है कि, "खुसरु की जवाहरात की पेटी में एक करोड़ अस्सी लाख पौंड थे।" यदि उसमें 18 हजार भी पौंड होते तो भी वह बहुत बड़ी होनी चाहिए थी। तुजक में इसके विषय में कुछ नहीं लिखा।

अत्युक्तियों के इन उदाहरणों के बाद इन संख्याओं पर जो वहुत वढ़ाकर लिखी गई हैं, कौन विश्वास करेगा। यह खेद की वात है कि आत्म-जीवनी के इन अनुवादों का यूरोप में इतना प्रचार है और इन पर इतना विश्वास किया जाता है और इनको वादशाह के कार्यों की और भावों की सच्ची अभिव्यक्ति माना जाता है।

इनके अतिरिक्त और भी वातें जोड़ी गई हैं और कुछ नहीं लिखी गई हैं, जिसके कारण अनुवाद पर विश्वास नहीं होता। उदाहरणार्थ खुसरु के विद्रोह और गिरफ्तारी के विषय में कई मुख्य वातें कुछ भिन्न लिखी हुई हैं। बनावटी और प्रामाणिक प्रतियों में यह विवरण सविस्तारपूर्वक दिया हुआ है। इसका उल्लेख आगे चलकर किया जाएगा। इन घटनाओं के अन्त में वादशाह कावुल गया था। दूसरे इतिहासों में भी ऐसा ही लिखा हुआ है। परन्तु इस अनुवाद में वह वापस आगरा आया है।

अन्य कई वातें छूट गई हैं जिनमें एक विशेष बात यह है कि उसके मद्य-व्यसन की ओर संकेत भी नहीं है और अपने भाई दानियाल के लज्जाजनक व्यसन का वह हार्दिक दुख के साथ वर्णन करता है। उसकी सच्ची आत्म-जीवनी में मद्य-गोष्ठियों का वैसा ही वर्णन है जैसा उसके प्रपितामह वावर की आत्म-जीवनी में है। जहाँगीर ने इतना मद्यपान करना स्वीकार किया है कि उससे वावर जैसा शरावी भी लज्जित हो जाता।

तारीख-ए-सलीमशाही में आरम्भ से लेकर जहाँगीर प्रथम वार कश्मीर गया, तव तक की घटनाओं का क्रमहीन वर्णन किया है। वह अपने शासन के पन्द्रहवें वर्ष में अर्थात् 1029 हिजरी में कश्मीर गया था।

तुजक में 1017 हिजरी के वाद की कोई तारीख नहीं दी हुई है। परन्तु एक ऐसी घटना का उल्लेख है जो 1020 हिजरी में घटी थी। तुजक के आधे भाग में अकवर और खुसरु का वर्णन है।

अन्त में इस पुस्तक में लिखा है कि वादशाह का और उसके अफसरों का यह नियम था कि प्रत्येक मास के प्रथम दिन वे अपनी वन्दूकें खाली कर दिया करते

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

थे। यह उल्लेख अनुवाद के पृष्ठ 89 पर है। यहाँ पर उन जादू के खेलों का और हाथ की सफाइयों का वर्णन नहीं है जिनमें वादशाह विश्वास किया करता था। वह समझता था कि मदारियों में अलौकिक शक्ति है। उसके चरित्र लेखक समझते थे कि उसका समकालीन अँग्रेज वादशाह भी भूत-प्रेत और जादुओं में विश्वास करता था। इसलिए इन लोगों ने इन दोनों शासकों के विचार और भावों को एक समझा है।

तुजक-ए-जहाँगीरी के अन्तिम भाग की तारीख-ए-सलीमशाही के उसी भाग के अनुवाद से तुलना करने पर मालूम होगा कि एक पुस्तक का दूसरी से क्या सम्बन्ध है। वर्णन के द्वारा यह वात इतनी स्पष्ट नहीं हो सकेगी।

तारीख-ए-सलीमशाही की जो प्रतियाँ मैंने देखी हैं, उनके अन्त में कुछ पृष्ठों में उपदेश लिखे हुए हैं। यह एक प्रकार का गद्यपद्यनामा है और इसका लेखक जहाँगीर ही वतलाया गया है। परन्तु मेजर प्राइस ने इस पुस्तक के अपने अनुवाद में इसका उल्लेख नहीं किया है (मोर्ले ने लिखा है कि "पदनामा में 32 पन्ने हैं। इस जिल्द में आत्मजीवनी और पदनामा छन्दों से भरे हुए हैं जो प्राइज की हस्तलिखित प्रति में नहीं दिए हुए हैं, यद्यपि पदनामा है।") इसके वाद भूमिका है। यह सलीमशाही की प्रति के वाद में ही दी हुई है। यह इतिमाद-उद्-द्दौला की लिखी हुई प्रतीत होती है। यह इस प्रकार है :

इतिमाद-उद्-द्दौला के शब्द हैं कि, "वादशाह का स्वभाव है कि वह हमेशा अपने शब्दों को, शिष्टाचार को और उत्तम कार्यों को तोला करता है। इसलिए उसने अपने सेवकों के वास्ते जिनका मन वड़ा पवित्र है, कुछ उपदेश लिखे हैं। वास्तव में उसने प्रवल कल्पना के धागे में वुद्धिमत्ता के मोती पिरोये हैं। वह इतना वुद्धिमान और दूरदर्शी वादशाह है कि उसके सत्स्वभाव में उपयोगी उपदेश जमे हुए हैं। वास्तव में उसको पूर्ण सन्त माना जा सकता है। इसलिए उसके सच्चे और भक्त प्रजाजन को चाहिए कि ईश्वर से प्रार्थना करें कि उसे आशीर्वाद दे, क्योंकि ईश्वर ने उसकी जनता के लिए न्याय-शृङ्खला प्रदान की है। ईश्वर वादशाह नुरुद्दीन जहाँगीर को न्याय दिवस तक दीर्घजीवी करे और इस दूसरे सिकन्दर और महा-प्रतिष्ठित सम्राट की प्रजा सदा जीवित रहे। यह सुलेमान के सिंहासन पर वैठा हुआ है और इसमें वीरता तथा उत्तमता का मिश्रण है।

"अपने पुत्रों और शिष्यों के पालन के लिए वादशाह जहाँगीर के उपदेश। इन्हें चाहिए कि इन उपदेशों को निरन्तर स्मरण रखें। सर्वप्रथम इन्हें समझ लेना चाहिए कि यह संसार अमर नहीं है और इसकी जितनी कम चिन्ता की जाय, उतना ही अच्छा है। अपने अधीन लोगों के प्रति तुम वैसा ही व्यवहार करो, जैसा तुम अपने ऊपर के लोगों से चाहते हो।"

इसी प्रकार के साधारण वचनों से कई पृष्ठ भरे हुए हैं। अन्त इस प्रकार किया गया है :

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"शारीरिक शक्ति तीन प्रकार से प्राप्त होती है—1. कम बोलो, 2. कम खाओ और 3. कम सोओ। तीन बातें साथ-साथ नहीं चल सकतीं—1. शक्ति और न्यायानुकूल वस्तुओं का उपभोग, 2. कृपा और क्रोध, 3. सत्य और बहुत बोलना। चार बातों से मनुष्य मोटा होता है—1. नये कपड़े पहनने से, 2. प्रायः गर्म जल से स्नान करने से, 3. चिकनी और मीठी चीजें खाने से, 4. अपने इच्छानुकूल रहने से। छः बातों से मनुष्य का हृदय काला और दुखी होता है—1. गन्दे कपड़े पहिनने और अपने बाल केवल कभी-कभी कटाने से, 2. गन्दी हालत में रहने से, 3. बहुत झूंठ बोलने से, 4. पर निन्दा करने से, 5. गाली देने से, 6. नमाज की उपेक्षा करने से। जो व्यक्ति इन उपदेशों को मानेगा उसको लोक और परलोक में मुक्ति प्राप्त होगी। बुराइयाँ उसे नहीं सताएगीं और छोटे-बड़े सब उसका आदर करेंगे और कयामत के दिन उसको लज्जित नहीं होना पड़ेगा। परन्तु जो व्यक्ति इन उपदेशों के विपरीत आचरण करेगा, उसको इस संसार में दुःख और अपमान के अतिरिक्त कुछ प्राप्त नहीं होगा और परलोक में उसको अपना हिसाब देना पड़ेगा।

मुझे जो कुछ प्रकट करने का आदेश था वह मैंने प्रकट कर दिया। तुम मेरे शब्दों को सुनकर सचेत हो सकते हो और उनको ठुकरा कर दुःख भोग सकते हो।

तारीख-ए-सलीमशाही का आरम्भ इस प्रकार होता है :

ए नाम तो सर दफ्तर इस्रार वल्द, नक्श सफतत बरदरो दीवार वजूद। दर पर्दा कब्रया निहांगश्ता बखरुक, हमवार अयाँ बरसरे बाजार वजूद। हम्दई गायत व शुक्रबी निहायत आदि।

और इसका अन्त इस प्रकार होता है :

महावत खांरा के पंजहजारी पायतख्त मन अस्त बावते हजार अहदी चहार अस्पां व दो हजार तोपची आदि।

पृष्ठ संख्या 498 और प्रत्येक पृष्ठ पर 9 पंक्तियाँ।

इसके बाद तुजके-ए-जहाँगीरी का आरम्भ और अन्त दिया हुआ है जो जोनेथन स्काट के पुस्तकालय के कारनामा जहाँगीरी से मिलता है :

आरम्भ

हम्द बेगायत व शुक्र ला निहायत मबूदई रा के बेग अमरकुन अजराम फलकी व अजसाम अंसरी रा अज मुमकिन अदम बवजूद आवरदा आदि।

अन्त

व अवसर पिदरमन रोज गुरा माह अब्बल तफंग बदस्त खुद गिरफ्ता बी अन्दाखतंद व बाद अज ई मनसबदारान व बरकंदाजान सर मीदादन्द आदि।

पृष्ठ संख्या 109 प्रति पृष्ठ 16 पंक्तियाँ।

अवतरण

जब खुसरु की सेना तथा सेनानायकों को दुर्ग जीतने की कोई आशा नहीं रही और यह सूचना मिली कि शाही सेना पीछा कर रही है तो उन्होंने देखा कि

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बड़ी ही मूर्खता हो गई। अब उनको ऐसा कोई स्थान नहीं मिला जो उनके लिए सुरक्षित हो। वे लोग परेशान थे। परन्तु फिर भी उन्होंने युद्ध करने का निश्चय किया। उन्होंने सोचा कि बारह हजार आदमियों के द्वारा वे रात्रि में मेरी विजयी सेना पर आक्रमण कर सकते हैं।

इस विचार से मंगलवार के दिन सायं और सोने की नमाज के बीच लाहौर के दुर्ग का घेरा छोड़कर वे पीछे हट गए। अगले दिन काजी अली की सराय के पास सायंकाल को मुझे खबर मिली कि लाहौर का घेरा उठा कर खुसरु लगभग बीस हजार आदमियों के साथ चला गया है। इस खबर के मिलने पर मेरे हृदय में अग्नि धधक उठी और मैंने सोचा कि उसने कोई दूसरी चढ़ाई करने का विचार किया है। अतः उसी रात को यद्यपि भारी वर्षा हो रही थी तो भी मैंने आदेश दिया कि डेरा लगा दिया जाय और गोविन्दलाल के पास नदी पार करके हमने देवाल की ओर कूच किया।

वृहस्पतिवार के दिन लगभग दोपहर में शेख फरीद खुसरु की सेना के आगे जा पहुंचा और भाग्यहीन शत्रु से उसका सामना हो गया। मैं सुल्तानपुर में बैठा हुआ था उस समय सेवक लोग मेरे पास खाने का थाल लाए थे और मैं कुछ खाने ही वाला था कि सूचना मिली कि लड़ाई शुरू हो गई है। मैंने सौभाग्य के निमित्त एक ग्रास लिया। इसी समय मेरा घोड़ा तैयार किया जा रहा था। मैंने सवार होकर दुलकी लगाई। मैं अपनी सेना को व्यवस्थित करने के लिए भी नहीं ठहरा। यद्यपि मैंने अपने शस्त्र मँगवाए परन्तु मेरे पास केवल तलवार और भाला ही था और ईश्वर पर भरोसा करके मैं शीघ्रातिशीघ्र युद्धस्थल की ओर रवाना हुआ। मेरे साथ लगभग दस हजार सवार थे परन्तु मैंने बख्शी को आदेश दिया कि शेष सेना को तैयार करके मेरे पीछे-पीछे आवे। जब मैं गोविन्दताल की पुल पर पहुंचा तो मैंने बीस हजार आदमियों को शेख फरीद की सहायता के लिए रवाना किया।

मैंने खुसरु को सलाह देने के लिए मीर जमालुद्दीन हुसैन इन्जू को भेजा और कहलाया कि उसको शैतान ने सत्पथ से विचलित कर दिया है और वह मेरे विरुद्ध संघर्ष करने में लगा हुआ है तथापि मैं उसके अपराध को क्षमा करने के लिए तैयार हूँ। शर्त यह है कि वह मीर जमालुद्दीन के साथ मेरे पास आए और अपने कामों पर लज्जा प्रकट करे तथा इस प्रकार मुझे और खुदा के बन्दों को क्षति पहुँचाने के उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाए। यद्यपि वह मेरे पास उपस्थित होना चाहता था परन्तु उसके निकम्मे और निराश साथियों की सलाह से वह पीछे हट गया और जमालुद्दीन के द्वारा उसने मुझे उत्तर भेजा जिसका आशय यह था कि अब बात बहुत आगे बढ़ गई है इसलिए तलवार के अतिरिक्त कोई चारा नहीं है और सर्व-शक्तिमान भगवान राजमुकुट उसके ही सिर पर रखेगा जिसको वह साम्राज्य के उपयुक्त समझता है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जब मीर जमालुद्दीन ने मुझे यह समाचार सुनाया तो मुझे अपने पागल पुत्र के प्रति कोई दया नहीं रही और अब कोई उपाय भी नहीं रहा। इसलिए मैंने शेख फरीद से कहलाया कि वह दूसरे आदेश की प्रतीक्षा न करे और विद्रोही की सेना के मुख्य भाग पर तुरन्त आक्रमण कर दे। जब शेख फरीद के पास यह घोषणा पहुंची तो बहादुरखाँ उजबेग ने शत्रु के पृष्ठ भाग पर दस हजार सवारों के साथ आक्रमण शुरु कर दिया और शेख फरीद ने बीस हजार आदमियों सहित शत्रु के अग्रभाग पर आक्रमण किया। सूर्योदय के दो घण्टे बाद युद्ध शुरू हुआ और सायंकाल तक बन्द नहीं हुआ। ईश्वर की सहायता और साम्राज्य का भविष्य मेरे साथ था। इसलिए शत्रु के दस हजार सवार युद्ध में और पीछा करने में मारे गए।

संयोग से बहादुरखाँ उजबेग उस स्थान पर आ पहुँचा जहाँ खुसरु घोड़े से उतर कर पालकी में बैठ गया था। वह समझता था कि युद्ध के शोर में उसको कोई नहीं पहिचानेगा और उसको बन्दी नहीं बनाया जायगा। परन्तु बहादुरखाँ ने उसको पहिचान लिया और सैनिकों द्वारा उसको घेर लिया। उसी समय शेख फरीद उस स्थान पर आ पहुंचा। अब खुसरु के लिए बचकर भागने का कोई रास्ता नहीं रहा। पालकी छोड़कर उसने शेख फरीद से कहा कि बल प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वह स्वयं ही अपने पिता के चरणों का आश्रय लेने के लिए जा रहा है।

उस समय मैं गोविन्दवाल के पुल के सिरे पर था। युद्ध के परिणाम के विषय में मुझे आशंका हो रही थी। मीर जमालुद्दीन कहता था कि उसने स्वयं अपनी आँखों से देखा है कि खुसरु की सेना की संख्या पचास हजार से भी अधिक थी और वह जानता था कि शेख फरीद की और बहादुरखाँ उजबेग की सेनाएं मिलकर चौदह हजार सवारों से अधिक नहीं हैं। इसलिए शेख फरीद उस रात्रि को शत्रु को दबा सकेगा इसमें शंका है। मैं ऐसी बातें कर रहा था कि शेख फरीद की विजय की और खुसरु की गिरफ्तारी का समाचार मिला। मीर जमालुद्दीन घोड़े से उतर कर मेरे कदमों में गिरा और कहने लगा—"सौभाग्य का यही सच्चा अर्थ है परन्तु इस समाचार की सचाई में मुझे अब भी विश्वास नहीं होता।" उसने ये वाक्य समाप्त भी नहीं किया था कि खुसरु और उसके नाजिर मेरे सामने उपस्थित किए गए और उन्होंने जमीन पर अपने सिर टिकाए। तब बहुत क्षुब्ध होकर और चकित होकर मीर पुनः मेरे कदमों में गिरा और कहने लगा—"वास्तव में यह आपका सौभाग्य है और यह ईश्वर ने प्रदान किया है।"

शेख फरीद और अबू कासिम उजबेग (बहादुरखाँ) ने बड़ी वीरता का काम किया था इसलिए मैंने दोनों को तरक्की दी और पाँच हजार के मनसब नकारा और निशान और एक घोड़ा मय कीमती जीन तथा एक अलंकृत कमरबंध प्रदान किया। मैंने बहादुरखाँ को भी तरक्की दी और कन्धार का शासन उसके सुपुर्द कर दिया। शेख फरीद पहिले दो हजारी मनसबदार था। अब मैंने उसको पंच हजारी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मनसवदार वना दिया । सईद महमूद के पुत्र सेफखाँ ने भी अच्छी सेवा की थी। उसके सत्रह से कम घाव नहीं लगे थे । सईद जमालुद्दीन के सिर पर एक ओर गहरा घाव लगा था । कुछ दिन वाद ही उसकी मृत्यु हो गई ।

युद्ध आरम्भ होते ही शाही नक्कारों की आवाज से भयभीत होकर सईद कमालुद्दीन और उसका भाई रणभूमि से भाग गए थे । इस लड़ाई में लगभग चार सौ एमक (एक जाति) नरक में पहुँचा दिए गए थे और विभिन्न स्थानों के लगभग 300 लोग बन्दी वना कर मेरे सामने उपस्थित किए गए थे। खुसरु की जवाहरात की पेटी ऐसे लोगों के हाथ में आई जिनका कभी पता नहीं लगा ।

वीरवार 25 जिलहिज्जा को मैंने लाहौर के दुर्ग में प्रवेश किया और मैं उस शाही शामियाने में वैठा जो मेरे पिता ने वनवाया था और जहाँ से वह हाथियों की लड़ाई देखा करता था । मैंने नदी के अन्दर जहाँ पानी नहीं था तेज सूलियाँ गड़वाईं और इन पर उन तीन सौ द्रोहियों को जीवित लटका दिया जिन्होंने खुसरु से मिलकर षडयंत्र किया था । इससे अधिक वेदनाकारी दण्ड और नहीं हो सकता था । ये अपराधी लम्बी वेदना सह कर मरे। इससे विचारशील मनुष्यों को चेतावनी लेनी चाहिए और अपने हितैषियों के प्रति द्रोह करने के काम से पीछे हटना चाहिए, क्योंकि हजार दण्ड भी इस दण्ड से वढ़कर नहीं हो सकते थे जो मैंने इन लोगों को दिए ।

शाही कोष आगरे में था । मेरी सत्ता अभी हाल में ही जमी थी । विद्रोही लोग उत्पात करने के लिए तैयार थे । इसलिए मेरा अधिक समय तक लाहौर में टिकना नीति के विरुद्ध था । इसलिए मैंने खुसरु को दिलावरखाँ के सुपुर्द करके लज्जित अवस्था में छोड़ दिया और दिलावरखाँ को यह निर्देश देकर कि खुसरु को सतर्क होकर देखता रहे, मैं आगरे के लिए रवाना हो गया । पुत्र राज्य का आधार होता है । इसलिए उसके साथ शत्रुता जारी रखना साम्राज्य की नींव को शिथिल करना है । मैं अदूरदर्शिता की सलाह से कभी पथ-विचलित नहीं हुआ । मैं अनुभव और वुद्धि से काम लिया करता हूँ। मेरा पिता और गुरु कहा करते थे कि वादशाहों और शहजादों के लिए दो वातों की आवश्यकता है—दूरदर्शिता और विजय । दूरदर्शिता राजसत्ता की रक्षा करने के लिए और सौभाग्य सम्पत्ति को वनाए रखने के लिए । सौभाग्य के विना सम्पत्ति चल देती है और थोड़े समय में ही हमारी उँगलियों में से खिसक जाती है । मैंने यह सलाह निरन्तर अपने ध्यान में रखी ।

सारांश यह है कि 28 सफर को मैं राजधानी आगरे में लौट आया । मैं एक वात का वर्णन किए विना नहीं रह सकता । खुसरु के भाग जाने के वाद 32 घण्टे तक और जव मैं आगरे से दूर था तो उसकी माता बड़ी शोक सन्तप्त रही । उसने अन्न या जल ग्रहण नहीं किया। वह भूखी-प्यासी रोती रही और सन्तों के समान पश्चात्ताप करती रही। किंचित खाकर जीवन धारण करती रही । अन्त

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में निराशा और क्रोध में उसने इस लोक से भगवान् की दया के लिए प्रस्थान किया क्योंकि खाये पीये बिना दो या तीन दिन तक कौन जीवित रह सकता है ।

कर्त्तव्यपालन में केशोराय अपने पिता से भी बढ़कर था । वह रात-दिन निरन्तर उपस्थित रहता था; चाहे पानी बरसे या मौसम ठीक न हो । वह रात भर अपनी लकड़ी के सहारे खड़ा रहता था । जब मैं शिकार पर जाता तो वह मेरे साथ रहता था । इन सेवाओं के लिए मैंने राजसिंहासन पर बैठने से पहले ही उसे पाँच हजार का मनसब प्रदान कर दिया था । अब उसके मनसब में मैंने एक हजार की वृद्धि और कर दी । अब उसका मोटापा इतना बढ़ गया है कि वह अपने कर्त्तव्य को नहीं निभा सकता । सारांश यह है कि बादशाह मनुष्यों को इतना नहीं देखता जितना उनकी सेवाओं को और सेवाएँ जितनी अच्छी होंगी उतनी ही तरक्की दी जाएगी ।

मेरे पिता का यह नियम था कि मास के प्रथम दिन वह अपनी बन्दूक खाली किया करता था और उसके छोटे से छोटे और बड़े से बड़े सेवक भी उसका अनुसरण किया करते थे । बन्दूकें इसी अवसर पर खाली की जाती थीं । मैंने भी यह बात जारी रखी । मैं अपने हाथ से अपनी बन्दूक खाली करता हूँ और सब उपस्थित लोग मेरा अनुसरण करते हैं ।

तारीख-ए-सलीमशाही का यही स्थल मेजर प्राइस के अनुवाद के अनुसार निम्नलिखित है (पृ० 85 और 89) :

खुसरु के सैनिकों और सेनानायकों को अब दुर्ग छीन लेने की आशा न रही। उनको यह भी भय था कि शाही सेना निकट आ पहुँची है । अब उनको प्रतीत होने लगा कि उन्होंने राजद्रोह करके बड़ी मूर्खता की है । वह इस बात को नहीं देख सके कि दूसरों को घेरने के बजाय वे स्वयं घिरने वाले हैं जब चारों ओर त्रास ही त्रास था। तब उन्होंने युद्ध करके मरने का निश्चय कर लिया । उन्होंने ठान ली कि एक लाख और बारह हजार सवारों के साथ जो उन्होंने एकत्र कर लिए थे रात्रि में साहस के साथ मेरे डेरे पर एकदम आक्रमण किया जाय ।

इस भव्य विचार को दृष्टि में रख कर मंगलवार तारीख 24 जिलहुज को शाम की नमाज और खाने के बीच वे लोग लाहौर का घेरा छोड़कर नगर से पीछे हट गए । वृहस्पतिवार 26 तारीख को जब मैं रौजशअली की सराय में था, तो मुझे समाचार मिला कि लाहौर का घेरा उठाकर लगभग बीस हजार आदमियों के साथ खुसरु न जाने किधर की ओर चला गया है । इससे मुझे बहुत ही चिन्ता हुई । मुझे यह आशंका हुई कि कहीं जब मैं उसका पीछा करूँ तो वह इधर-उधर खिसक न जाय । इसलिए मैंने तुरन्त ही कूच करने का आदेश दिया । यद्यपि उस समय भारी और निरन्तर वर्षा हो रही थी । मैंने उसी दिन गोंदवाल नदी पार करके दोवौल के पास डेरा लगाया ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वृहस्पतिवार तारीख 26 को शेख फरीद को खुसरु की कूच में गड़वड़ डालने में सफलता मिली और वह शत्रु के समक्ष जा पहुँचा। मैं इस समय सुलतानपुर में था और कुछ भुने हुए गेहूँ खाने के लिए बैठने ही वाला था। मौजुलमुल्क मेरे लिए यह खाना लाया था। उसी समय मुझे शेख फरीद की स्थिति की खबर मिली। वह खुसरु की सेना के साथ लड़ाई करने में व्यस्त था। मैंने केवल शकुन के लिए एक ग्रास खाया और तुरन्त ही घोड़ा मँगवा कर सवार हुआ। मैंने अपने आपको पूर्णत: ईश्वर के सुपुर्द कर दिया। मैंने युद्ध के लिए सेना को व्यवस्थित करने में देर नहीं लगाई और एक तलवार और भाले के अतिरिक्त कोई शस्त्र भी नहीं लिया। घोड़े की लगाम उठा कर मैं संघर्षस्थल की ओर जल्दी से चल दिया तव भी मेरे साथ दस हजार सवार थे। परन्तु उनको मालूम नहीं था कि वे युद्ध के लिए ले जाये जा रहे हैं। इतनी थोड़ी सी सेना के साथ संघर्ष में उतरना सैनिक अनुशासन के नियमों के अनुसार न था। भगवान का चाहे जितना अनुग्रह हो परन्तु इस प्रत्यक्ष संख्या भेद को देखकर मेरे सैनिक बड़े हतोत्साह थे। मैंने बख्शियों को आदेश दिया कि समस्त सेना को मेरी सहायता के लिए आगे बढ़ाया जाय और सबको बतलाया जाय कि हम बड़ी नाजुक स्थिति में हैं। इस प्रकार मैंने सैनिकों की घबराहट दूर की। जब मैं गोंदवाल पहुँचा तो मेरी सेना में वीस हजार सवार और पचास हजार गोलंदाज जमूरदार हो गये थे और ये लोग ऊँटों पर सवार थे। इन सबको मैंने शेख फरीद की सहायता के लिए आगे भेज दिया। मेरी स्थिति जब ऐसी खतरनाक थी तो मैंने यह उचित समझा कि अब जल्दी की जाए। मीर जमालुद्दीन हुसैन को खुसरु के पास एक सन्देश लेकर भेजा तया उससे आग्रह किया कि वह यथासमय पीछे हट जाय और उस भयप्रद उत्तरदायित्व से सचेत हो जाय जो ईश्वर के हजारों बन्दों के रक्तपात को अपने ऊपर ले रहा है। इससे उसका मेरे पास आने के लिए झुकाव तो हुआ परन्तु उसके निराश और उपद्रवी बदमाश साथियों ने उसको रोका। ऐसे लोगों से वह घिरा हुआ था। जमालुद्दीन के द्वारा उसने मुझे उत्तर भेजा, जिसका आशय यह था कि इतना आगे बढ़ जाने पर अब तलवार के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है और सर्वशक्तिमान ईश्वर राजमुकुट उसी व्यक्ति के सिर पर रखेगा जिसको वह साम्राज्य के लिए योग्यतम समझता है।

जब मीर जमालुद्दीन ने मुझे खुसरु का यह धृष्टतापूर्ण उत्तर सुनाया तो मैंने शेख फरीद से कहलवाया कि अब सोच विचार करने का अवसर नहीं है और विद्रोहियों की मुख्य सेना पर तुरन्त ही आक्रमण कर देना चाहिए। इस आदेश का अविलम्ब पालन किया गया। एक ओर से बहादुरखाँ उजबेक ने तीस हजार सवारों का नेतृत्व करते हुए जो रुई के कपड़े पहिने हुए थे और बीस हजार ऊँट सवारों के साथ, जिनके पास जमूरे थे, आक्रमण किया और दूसरी ओर से शेख फरीद ने चुने हुए अंगरक्षक वीरों के साथ प्रहार किया। इस समय खुसरु की सेना में दो लाख सवार और जमूरेदार ऊँट सवार थे। सवार वैसे ही रुई के कवच पहिने हुए थे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जैसे बहादुरखाँ के सवार। दो घड़ी दिन बीत जाने पर लड़ाई शुरू हुई और सायं-काल तक चलती रही। ईश्वर की कृपा और साम्राज्य का भाग्य मेरे साथ था। इसलिए इसका नतीजा मेरे लिए विजयपूर्ण हुआ। जब शत्रु के तीस हजार आदमी धूल चाटने लग गये तो शेष लोग लड़ना छोड़कर तथा त्रस्त होकर युद्ध-भूमि से भाग गये।

संयोग से बहादुरखाँ उसी स्थान पर जा पहुंचा जहाँ खुसरु घोड़े से उतर कर पालकी पर बैठ रहा था। उसका यह ख्याल था कि उसका पीछा किया जा रहा है। युद्ध के शोर और गड़बड़ में उसको कोई नहीं पहचानेगा और वह बच कर भाग निकलेगा। परन्तु बहादुरखाँ ने उसको अपने सैनिकों द्वारा घेर लिया और इसी बीच शेख फरीद भी आ पहुंचा। अब उसके भाग निकलने के लिए कोई छोटे से छोटा मार्ग भी नहीं रहा। जब उसने देखा कि गिरफ्तार होने के अतिरिक्त अब कोई मार्ग नहीं है तो वह सिंहासन से उतरा और शेख फरीद से बोला कि अब बल प्रयोग अनावश्यक है क्योंकि मैं स्वेच्छा से अपने पिता के चरणों में गिरने के लिए जा रहा हूँ।

ईश्वर साक्षी है कि जब मैं गोंदवाल में था और स्थिति ऐसी खतरनाक थी तो मुझे ऐसा लगा कि खुसरु मेरे पास आ रहा है। परन्तु जमालुद्दीन हुसैन ने बड़ी शंका प्रकट की। उसने कहा कि "मैंने अपनी आँखों से देखा है कि खुसरु के साथ दो लाख से भी अधिक सैनिक हैं। इसलिए उस रात को शेख फरीद शत्रु को पीछे नहीं हटा सकेगा।" इस प्रकार हम बहस कर ही रहे थे कि हमें शेख फरीद के विजय की और खुसरु के वन्दी होने की सूचना मिली। जमालुद्दीन को फिर भी इस हर्ष के समाचार पर विश्वास नहीं हुआ। वह घोड़े से उतरकर मेरे कदमों में गिरा और कहता रहा कि शाही भाग्य से तो प्रकट होता है कि सब कुछ शुभ होगा परन्तु उसको इस समाचार पर विश्वास नहीं होता। तो भी कुछ समय बाद सब शंकाओं का निवारण हो गया। खुसरु पालकी पर बैठा हुआ मेरे सामने उपस्थित हुआ। उसके साथ अपने तोपखाने का अफसर था।

शेख फरीद और बहादुरखाँ दोनों ने इस परीक्षा के अवसर पर बड़ी योग्यता और वीरता का काम किया था। इसलिए मैंने तुरन्त ही बहादुरखाँ को पाँच हजार का मनसब और नक्कारा और निशान प्रदान किया। इसके अतिरिक्त बड़े कीमती जीन सहित कई घोड़े दिए और कंधार का शासन उसके सुपुर्द कर दिया। शेख फरीद पहले दो हजार का मनसबदार था। अब मैंने उसको चार हजारी मनसबदार बना दिया। सईद महमूह के पुत्र सेफखाँ ने भी बड़ा अच्छा काम किया था। उसके शरीर के विभिन्न भागों पर सत्रह से कम घाव नहीं लगे थे। सईद जलाल के हृदय के ऊपरी भाग पर घातक घाव लगा जिसके कारण कुछ दिन बाद ही उसकी मृत्यु हो गई। वह अफगानों में एक प्रसिद्ध कुल का वंशज था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सैयद हुलौल और उसका भाई खुसरु के सेनापति थे। वे शाही नक्कारों के शोर से त्रस्त होकर रणभूमि से लड़ाई आरम्भ होते ही भाग गए। अनेक जाति के लोगों के चार सौ सिर इस युद्ध में नरक में भेज दिए गए और उनके सात सौ आदमी विभिन्न स्थानों से वन्दी वनाकर मेरे सामने उपस्थित किए गए। खुसरु की जवाहरात की सन्दूक जिसमें पाँच मिथिकल वाली दो करोड़ अशर्फियाँ थीं, ऐसे लोगों के हाथ में पड़ गई जिनका कुछ पता न लगा।

उसी वृहस्पतिवार को मैंने लाहौर के दुर्ग में प्रवेश किया और उस शाही शामियाने में निवास किया जो इस मुख्य मीनार पर मेरे पिता ने बनवाया था और जहाँ से वह हाथियों की लड़ाई देखा करता था। इस शामियाने में बैठे हुए मैंने हुक्म दिया कि रावी नदी के रेते में तीक्ष्ण सूलियाँ गाढ़ी जाएँ। फिर उन सात सौ राजद्रोहियों को, जिन्होंने खुसरु के साथ मेरी सत्ता के विरुद्ध षडयन्त्र किया था, इन पर जीवित टाँग दिया गया। इससे बढ़कर वेदनाकारी दण्ड और कोई नहीं हो सकता था क्योंकि ये दुर्भागी लोग वड़ी मार्मिक वेदना वड़े समय तक भोगते रहे और तव मृत्यु ने इनको मुक्त किया। ऐसी भयंकर वेदना का दृश्य उन लोगों के लिए उदाहरण था जो अपने हितैषियों के प्रति ऐसे ही द्रोह और वेईमानी के कार्य करना चाहते होंगे।

शाही कोष आगरे में था। अभी मेरी राजसत्ता का आरम्भ मात्र था। इसलिए यह नीति विरुद्ध था कि मैं लाहौर में विद्रोही मिथ्याचारियों के बीच में टिका रहूँ। इसलिए अव मैं उस स्थान से राजधानी के लिए चल दिया और दुखित खुसरु को वहीं छोड़ आया। वह लज्जा और पश्चात्ताप से संतप्त था और दिलावरखाँ के सुपुर्द था जिसको यह निर्देश दिया गया था कि उसको निरन्तर देखता रहे। पुत्र को वास्तव में राजसत्ता का आधार मानना चाहिए। उसके साथ शत्रुता बनाए रखना साम्राज्य की समृद्धि की नींव को खोखली करना है। मैं इस या अन्य अवसरों पर अदूरदर्शी सलाह से पथ-भ्रष्ट नहीं हुआ। जहाँ तक मेरा वस चला मैंने अपनी बुद्धि और अनुभव से काम लिया। मेरा पिता सर्वोत्तम पथ-प्रदर्शक था। मैं उसकी वात को सदा ध्यान में रखता था कि शहजादों के लिए दो बातें स्थाई उपयोगों की हैं—एक दूरदर्शिता और दूसरी अवसरानुसार कार्य। एक राज-सत्ता की रक्षा के लिए अनिवार्य है और दूसरी सौभाग्य को स्थिर रखने के लिए आवश्यक है। परन्तु यह सदैव सम्भव नहीं है कि समृद्धि वढ़ती रहे। कुछ समय के वाद यह हमारी उँगलियाँ में से खिसक जाती है और फिर वापस नहीं लौटती।

परन्तु कहानी को जारी रखना चाहिए। 26 शफर 1015 हिजरी को मैं राजधानी आगरे को लौटा। मुझे यह वर्णन करना चाहिए कि अपने पिछले आचरण के दुख से सन्तप्त होकर खुसरु ने तीन दिन और रात तक न खाया और न पीया और यह समय उसने रोते और कराहते हुए भूख-प्यास में तथा पश्चात्ताप में व्यतीत किया। यह इस पृथ्वी पर उन्हीं लोगों की विशेषता है जिनका चरित्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पैगम्बर और सन्तों का सा हो परन्तु वे भी जानते थे कि जीवन धारण करने के लिए थोड़ा बहुत खाना आवश्यक है। यह कहना अनावश्यक होगा कि तीन दिन और तीन रात तक पूरा उपवास करना उनको भी चौथे दिन दयालु ईश्वर की शरण में भेज देता है।

(किसी कलुजैन या कम्बुजैन के विषय में शाही लेखक निम्नलिखित स्थल लिखता है। यह नहीं कहा जा सकता कि इन दोनों में से किसके विषय में है।)

जोश और श्रम में तथा अपने कर्तव्य पालन में वह अपने पिता से भी बढ़ कर था। रात और दिन निरन्तर हाजिर रहता था। गीला हो या सूखा हो, वर्षा हो या न हो, वह अपनी लकड़ी के सहारे खड़ा हुआ सायंकाल से प्रातःकाल तक मुझे कुछ पढ़कर सुनाया करता था। जब वह शिकार में मेरे साथ होता था तो भी वह इस कार्य को नहीं छोड़ा करता था। इन सेवाओं के लिए मैंने तख्त पर बैठने से पहले ही उसको एक हजार का मनसब दे दिया था। अब वह दो हजार का मनसबदार बना दिया गया। परन्तु अब वह इतना मोटा हो गया है कि पहले की भाँति अपने कर्तव्य का पालन नहीं कर सकता। यहाँ मैं प्रसंगवश इतना कह दूँ कि बादशाह लोगों की इतनी परवाह नहीं करते जितनी उनकी सेवाओं की और जैसी अच्छी उनकी सेवा होती है उतनी ही उन पर कृपा की जाती है और उनकी समृद्धि तथा प्रतिष्ठा बढ़ती है।

मेरे पिता का यह नियम था कि प्रत्येक मास के प्रथम दिन वह अपनी बन्दूक खाली करके अपने अमीरों के लिए उदाहरण उपस्थित किया करता था। तब साम्राज्य के छोटे और बड़े सब लोग और बन्दूकची इसका अनुसरण करते थे। इस प्रकार तोपें केवल इसी अवसर पर खाली की जाती थीं। हाँ लड़ाई में दूसरी बात थी। मैंने इसी उदाहरण का अनुसरण किया है। मैं अपनी द्रुस्तुन्दाज बन्दूक को खाली करता हूँ और फिर मेरी सेना के सब लोग छोटे और बड़े अपनी बन्दूकें खाली करते हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

द्वाजदा-साल-जहाँगीरी

लेखक : **वाकियात-ए-जहांगीरी**

अब हम जहांगीर के प्रामाणिक संस्मरणों पर विचार करेंगे। आरम्भ में यह कठिनाई होती है कि इन संस्मरणों का क्या नाम होना चाहिए। इसका उल्लेख पिछले लेख में भी किया गया है। बनावटी या असली आत्म-संस्मरणों के विभिन्न नाम हैं। तारीख-ए-सलीमशाही और तुजक-ए-जहाँगीरी के अतिरिक्त इनके नाम कारनामा जहाँगीरी, वाकियात-ए-जहाँगीरी, बयाज-ए-जहांगीर, इकवालनामा, जहांगीरनामा और मकालात-ए-जहाँगीरी भी हैं। मुन्तख्वाव-उल-लुवाव का लेखक मुहम्मद हाशिम अपने आधार ग्रन्थों में तीन जहांगीरनामों का उल्लेख करता है—(1) स्वयं जहाँगीर का लिखा हुआ, (2) मुतामत्तखां का, (3) मिर्जा कामगार या (गैरतखां का)। यह अन्तिम ग्रन्थ मुतामत्तखाँ की भूलों को सुधारने के लिए लिखा गया था। इन तीनों में से कोई भी इस नाम के योग्य नहीं है। पहला 'संस्मरण' है, दूसरे का नाम 'इकवालनामा जहाँगीरी' है और तीसरे का 'मआसीर-ए-जहाँगीरी।'

मैं इस पुस्तक का नाम वाकियात-ए-जहाँगीरी ठीक समझता हूँ। वावर के संस्मरणों को भी प्राय: इसी नाम से पुकारा जाता है। इसलिए यह न्यायसंगत है। मीरात-ए-आफतावनुमा के लेखक ने भी इसको यही नाम दिया है और संस्मरणों में भी शासन के प्रथम वर्ष के कार्यों का वर्णन करते हुए इसी नाम का उल्लेख किया है। संस्मरणों के विभिन्न स्थलों के आधार पर इसके नाम जहाँगीर-नामा और बयाज भी अप्रामाणिक नहीं प्रतीत होते। तैमूर के संस्मरणों के उदाहरण के अनुसार इसका नाम मलफ़ुजात भी उचित होता परन्तु किसी लेखक ने यह नाम नहीं लिखा है।

ग्लेडविन ने वाकियात-ए-जहाँगीरी से कुछ अंश लेकर 1788 में प्रकाशित किए थे और उनका नाम तुजक-ए-जहाँगीरी रखा था। ग्लेडविन लिखता है कि यह बादशाह की लिखी हुई स्वयं अपनी ही समीक्षा है। केप्टिन जॉन्थन स्कॉट के पुस्त-कालय की सूची में तुजक का नाम है और इसे मआसीर-ए-जहाँगीरी माना गया है जो बिल्कुल गलत है। जिस प्रामाणिक पुस्तक की प्रति को जाँचने का मुझे अवसर मिला है वह बंगाल सेना के मेजर जनरल टी० सी० स्मिथ के पास है। यह प्रति

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसके लिए लखनऊ में तैयार की गई थी और उसकी इच्छानुसार सईद मोहम्मदखाँ ने इसकी अन्य प्रतियों से तुलना की थी। उसने तुलना के लिए बड़े परिश्रम के साथ दिल्ली के बादशाह के राजा रघुबन्धसिंह पोरछा नरेश के, झज्जर के नवाब फैज अलीखाँ के और अन्य स्थानों के पुस्तकालयों की प्रतियाँ एकत्र करके इस काम को सन् 1843 में पूरा किया था और इसकी एक प्रति ईस्ट इण्डिया हाउस के पुस्तकालय में रखने के लिए इङ्गलैण्ड भेजी गई थी।

मोहम्मद हादी ने इसकी भूमिका और अन्तिम परिच्छेद लिखा है। इसका उल्लेख दूसरे लेख में किया जाएगा। यह आत्म-जीवनी उससे विल्कुल भिन्न है जिसका अनुवाद मेजर प्राइस ने किया है। इसलिए शायद इसको अनुवाद के योग्य माना जाएगा। कम से कम इससे यह प्रयोजन सिद्ध होगा कि यह बनावटी संस्करण का स्थान ले लेगा। बनावटी संस्करण संसार में प्रचलित हो गया है और इसकी कल्पित प्रामाणिकता के कारण लोगों ने इस पर बड़ा ध्यान दिया है।

प्रस्तुत पुस्तक कथा-संग्रह के रूप में है और शासन के प्रत्येक वर्ष की घटनाओं का वर्णन तिथि-क्रमपूर्वक किया गया है। उधर मेजर प्राइस के अनुवाद में कुछ ही तारीखें दी गई हैं। इस पुस्तक की शैली सरल और अनलंकृत है और कहीं-कहीं कुछ लापरवाही भी प्रकट होती है।

शाही लेखक ने अपने संस्मरणों की दो भिन्न-भिन्न प्रतियों का उल्लेख किया है। पहले संस्करण में केवल बारह वर्ष का इतिहास है। तेरहवें वर्ष का हाल लिखते हुए वह कहता है कि जब जहाँगीरनामा से बारह वर्ष का हाल लेकर एक अच्छी प्रति तैयार की गई तो शाही पुस्तकालय के लेखकों को आदेश दिया गया कि इन बारह वर्षों के इतिहास की कई प्रतियाँ तैयार की जावें और इनकी अलग-अलग जिल्दें बँधवाई जाएँ, और फिर सारे साम्राज्य में भेजने के लिए वे आश्रित लोगों में बाँट दी जावें जिससे वे लोग इनका अध्ययन कर सकें। सर्व प्रथम प्रति उसने शाहजहाँ को भेंट की और इसके पीछे उसने अपने हाथ से ही भेंट तिथि लिखी। उसी वर्ष की घटनाओं के वर्णन में हमें कुछ बाद में दो और प्रतियों का उल्लेख मिलता है जो दी गई थीं।

बारह वर्ष का वर्णन उस समय समाप्त होता है जब बादशाह गुजरात में अहमदाबाद पहुँचा। यह घटना तेरहवें वर्ष के आरम्भ में घटी थी। भाषा की दृष्टि से इसमें और पूरी आत्मकथा में कोई भेद नहीं है। पहली पुस्तक में कुछ बातें छूट गई हैं। ये 500 पंक्तियों से अधिक नहीं है। इससे यह स्पष्ट है कि पूर्ण पुस्तक में समावेश करने के लिए इस प्रथम पुस्तक का दुबारा संकलन नहीं किया गया था। मैंने ऐसी दो प्रतियाँ देखी हैं जिनका आरम्भ और अन्त एक ही प्रकार से होता है। परन्तु एक में दूसरी की अपेक्षा एक तिहाई सामग्री छूटी हुई थी। सर्वोत्तम प्रति में 482 पृष्ठ थे और प्रत्येक पृष्ठ पर तेरह पंक्तियाँ थीं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यह छोटी पुस्तक स्पष्टतः यही है जिसका उल्लेख ग्लेडविन अपनी तुजक-ए-जहाँगीरी में करता है। वह कहता है (पृ० 92) कि इसमें बादशाह के शासन के आरम्भ से बारहवें वर्ष तक का राजनैतिक और निजी सूक्ष्म वृत्तान्त है। इस पुस्तक की शैली की सुन्दरता और सरलता की सर्वत्र प्रशंसा है और उसमें बड़ी ईमानदारी और सच्चाई के साथ अपनी मूर्खताओं और निर्बलताओं को भी प्रकट किया है। जब वह बारह वर्ष का संस्मरण लिख चुका तो उसने इसकी कितनी ही प्रतियाँ अपने बच्चों और मुख्य दरबारियों में बाँट दीं। फिर वह अपने ही हाथ से यह संस्मरण अपने शासन के सत्रहवें वर्ष तक लिखता रहा। फिर अस्वस्थ होने के कारण वह यह कार्य जारी न रख सका और तब से अपनी मृत्युपर्यन्त यह काम उसने मुत्तामदखाँ के सुपुर्द कर दिया। शासन के बारहवें वर्ष के बाद का यह वृत्तान्त अत्यन्त दुर्लभ है। इस इतिहास के संकलनकर्त्ता को उस प्रति के अतिरिक्त जो उसके मित्र कर्नल पोल्यर ने दी थी, कोई अन्य प्रति उपलब्ध नहीं हुई।

इसके बाद देखा जाएगा कि इन संस्मरणों को जारी रखने वाले का नाम गलत दिया हुआ है और असली संस्मरण अठारहवें वर्ष के अन्त तक या 19वें वर्ष के आरम्भ तक चलते हैं।

यह बहुत सम्भव है कि ग्लेडविन ने यह बड़ी प्रति कभी नहीं देखी होगी। उसने संस्मरण की शैली के विषय में जो कुछ लिखा है उससे और बारहवें वर्ष के बाद उसने कुछ नहीं लिया। इससे तथा इतिहास के अन्त में जो मार्ग-सूची दी गई है, उससे यह बात प्रकट होती है। यह कहानी जहाँगीर माँडू पहुँचा, उसके बाद नहीं चलती। यह घटना शासन के बारहवें वर्ष में हुई थी। इसमें गुजरात आने जाने का और उत्तर भारत तथा कश्मीर के दौरे का उल्लेख नहीं है। इसमें शंका है कि कर्नल पोल्यर की प्रति में, जिसका वह हवाला देता है, मुत्तामदखाँ या स्वयं बादशाह ने बारहवें वर्ष के बाद का जो वर्णन लिखा है, वह था या नहीं या उसमें केवल प्रथम बारह वर्ष की घटनाओं का ही वर्णन है।

यह आश्चर्य की बात है कि मासिर-उल-उमरा के लेखक ने जिसने बड़ा शोध-कार्य किया था, अपनी भूमिका में बादशाह के लिखे हुए जहाँगीरनामा को उद्धृत किया है जिसमें उसके शासन की बारह वर्ष की घटनाओं का विवरण है। अतः उसको भी पूर्ण प्रति नहीं मिली होगी। इसलिए हम अठारह वर्ष की आत्म-कथा को अत्यन्त दुर्लभ ग्रन्थ मान सकते हैं। भारतवर्ष में भी इसका किसी को पता नहीं था। 'क्रिटिकल ऐसे' का लेखक उन कतिपय व्यक्तियों में है जिसको इस ग्रन्थ का पता था। वह लिखता है कि उसने ऐसी कोई प्रति नहीं देखी जो अठारहवें वर्ष से आगे चलती हो।

इस पूर्ण ग्रन्थ के विषय में जहाँगीर स्वयं अपने सत्रहवें साल के वृत्तान्त में लिखता है कि, "आजुर मास की 7 तारीख को शाह अब्बास के राजदूतों को जो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मेरे दरबार में कई बार आये थे, खिलतें प्रदान करके त्रिदा किया गया। शाह अब्बास ने हैदर बेग के हाथ मुझे एक पत्र भेजा था जिसमें कंधार के विषय में अपने आचरण के लिए क्षमा माँगी गई थी। इसका और तत्सम्बन्धी परिस्थितियों का वर्णन इकबालनामा में दर्ज किया गया था।

"मैं पिछले दो वर्ष से बीमार और निर्बल था। अब भी मुझे वही रोग था। इसलिए अपने संस्मरणों के मसौदे देखने के लिए न मुझमें दिल था और न दिमाग। लगभग इसी समय मित्तामदखाँ ने दक्षिण से आकर चौखट चूमी। वह स्वामिभक्त सेवक और शिष्य था और उसके काम से मुझे सन्तोष था। वह मेरे स्वभाव को जानता था और मेरी बात को भलीभाँति समझता था। इससे पहले वह मेरे शासन की घटनाओं का वर्णन करने के लिए नियुक्त था। अब मैंने उसे आदेश दिया कि जहाँ तक मैंने संस्मरण लिख दिया है, वह उससे आगे जारी रखे और इस कथा को मेरे मसौदों के आगे चलावे। मैंने उससे कहा कि वह इसे रोजनामचे के रूप में लिखे और फिर सुधारने के लिए मेरे सामने प्रस्तुत करे, तत्पश्चात् इसको किताब का रूप दे। इसके अतिरिक्त इस समय मेरा मन कंधार की चढ़ाई की तैयारी में लगा हुआ था और खुसरु की ज्यादतियों और विद्रोह के समाचारों से चिन्तित था।"

ऐसा प्रकट होता है कि मुकामितखाँ ने अपने शाही स्वामी की इच्छाओं को ठीक-ठीक कार्यरूप में परिणत नहीं किया। यह बहुत सम्भव है कि अपने स्वामी की मूल पुस्तक को उसने केवल संक्षिप्त किया था, अन्त की घटनाएं भी उसने जोड़ दीं और फिर अपने नाम से उसका संकलन करके पुस्तक का नाम इकबालनामा रख दिया। इसकी समीक्षा बाद में की जायगी। ऐसा मालूम होता है कि अपने शासन के बारहवें वर्ष के बाद की घटनाओं को जहाँगीर ने उस समय पुनः लिखा जब उसने अपने संस्मरण लिखना बन्द कर दिया था। कभी-कभी वह उन घटनाओं का उल्लेख करता है जो बारहवें वर्ष के बाद हुईं। उदाहरणार्थ नक्षत्रों की गति के विषय में, जो उसके तेरहवें वर्ष में हुई थीं, वह लिखता है कि इसका फल अगले आठ वर्ष तक विदित होता रहा। इस टिप्पणी को समाप्त करने से पहले यह कहना उचित होगा कि इस पुस्तक की दुर्लभता का कारण यह हो सकता है कि इसके अगले भाग में अपने पिता के प्रति शाहजहाँ के चरित्र की इतनी निन्दा की गई है कि इसकी प्रतियाँ तैयार करना सुरक्षित नहीं था। इसलिए शाहजहाँ के डर से इसको छिपाया गया और उसके सुदीर्घ शासनकाल के बाद लोग इसको प्रायः भूल गये। फिर जब मोहम्मदशाह का समय आया तो मोहम्मद हादी ने इसके सम्पादन का कार्य हाथ में लिया।

शासन के सत्रहवें वर्ष में अपने विद्रोही पुत्र का सामना करने के लिए जहाँगीर ने ठट्ठा की ओर कूच किया था। इससे सम्बन्धित स्थल पर यदि हम विचार करें तो उपर्युक्त बात बड़ी सम्भव प्रतीत होती है। "मैंने आदेश दिया कि अब से

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आगे उसको दुर्भाग्यशाली (बदनसीब) के नाम से उल्लखित किया जाय और इकबालनामे में जहाँ कहीं बदनसीब लिखा जाय तो समझा जाय कि यह वह है। मैं यहाँ निर्विवाद रूप से कह सकता हूँ कि मैंने उस पर जितनी कृपा की और उसे जितना उपदेश दिया उतना शायद ही किसी बादशाह ने अपने पुत्र को दिया होगा। मेरे आदरणीय पिता ने, जो मेरे भाइयों के प्रति अनुग्रह किया था वही मैंने उसके सेवकों के प्रति किया है। मैंने उसकी उपाधियाँ बढ़ाईं, उसको नक्कारा और निशान का स्वामी बनाया। इसका उल्लेख इकबालनामे में किया गया है और यह बात पाठकों से छिपाई नहीं जा सकती। मैंने जो कुछ उसके लिए किया उसका लेखनी वर्णन नहीं कर सकती और इस गर्म मौसम में जो मुझे कष्ट है और जो निर्बलता और वेदना मैं अनुभव करता हूँ उसका मैं वर्णन नहीं कर सकता। यह मेरे स्वास्थ्य के लिए बड़ी हानिकारक है; विशेषकर इस यात्रा के दिनों में जो मुझे उसका पीछा करने के लिए करनी पड़ती है जो अब मेरा पुत्र नहीं है। बहुत से अमीर जिन्होंने मेरे नीचे अनुशासन सीखा है और जिनकी सेवाएँ उजबेक और काजिलबास लोगों को दबाने के लिए मुझे उपलब्ध होती थीं उनको उसी के कारण दण्ड मिल गया है। परमात्मा मुझे इन विपत्तियों को सहने के लिए दयापूर्वक शक्ति प्रदान करे। मेरे लिए सबसे अधिक असह्य और दुःखद बात यह है कि इस समय मेरे पुत्रों और अमीरों को कंधार और खुरासान का पीछा वापस लेने के लिए एक दूसरे के साथ होड़ करनी चाहिए थी, इन प्रान्तों के चले जाने से इस साम्राज्य के सम्मान को गहरा धक्का पहुँचा है। इनमें सबसे बड़ी अड़चन यह बदनसीब है। उसके कारण ही कंधार के आक्रमण को स्थगित करना पड़ा है। मुझे ईश्वर पर विश्वास है कि शीघ्र ही मैं इस चिन्ता से मुक्त हो जाऊँगा।''

शाहजहाँ की जीवितावस्था में किसी का यह साहस नहीं हो सकता था कि इस प्रकार के अभिशाप प्रचलित करता। यह बात संस्मरण के प्रथम बारह वर्ष पर लागू नहीं होती क्योंकि उनमें शाहजहाँ के नाम का उल्लेख बड़ी ही प्रशंसा के साथ किया गया है।

[यह वर्तमान संस्मरण उससे अधिक लम्बा नहीं है जिसका अनुवाद मेजर प्राइस ने किया है। यह उन तमाम घटनाओं का सरल और चातुर्यपूर्ण वर्णन है जिनको लेखक उल्लेख के योग्य समझता था। इस जिल्द में ऐसी भी बहुत सी सामग्री है जो योरोपीय पाठकों के लिए रोचक नहीं है। जैसे बादशाह के सेवकों की पदोन्नतियाँ तथा सम्मान और भेंटें जो उसने दीं और लीं। परन्तु फिर भी यह पुस्तक बहुत रोचक है और यह मानने पर कि जहाँगीर स्वयं इसका लेखक है यह सिद्ध होता है कि वह असाधारण योग्यतावाला मनुष्य था। वह अपनी निर्बलताओं का उल्लेख करता है, दोषों को ईमानदारी से स्वीकार करता है। इस पुस्तक के अध्ययन से उसके चरित्र और योग्यताओं के विषय में अच्छा प्रभाव होता है। उसके पिता की भाँति उसको रत्नों का शौक था और उनका मूल्य वह ठीक जांच

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सकता था। वह बहुत अच्छा शिकारी था और अपने ढलते हुए जीवन में भी उसको इसमें बड़ा आनन्द आता था। वह जड़ और चल प्रकृति का प्रेमी था और उसको बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से देखा करता था। उसने अनेक पशुओं और पक्षियों की विशेषताओं का उल्लेख किया है और उसके लेख से प्रकट होता है कि वह उनकी आदतों को, श्रम और धैर्य से देखा करता था। वृक्ष, फल और फूलों को भी वह ध्यान से देखा करता था और उसने गृह निर्माण कला और उद्यान निर्माण के विषय में ऐसी सम्मति प्रकट की है जो इन विषयों पर काफी समय तक विचार करने वाला ही प्रकट कर सकता है। आगे जो अवतरण दिये जायेंगे उनके आधार पर पाठक इस पुस्तक के विषय में अपना मत बना सकते हैं। इसका अनुवाद कई लोगों ने किया है। कुछ अनुवाद सर एच० एम० इलियट ने, कुछ उसके मुंशी ने और कुछ ऐसे व्यक्ति ने किया है जिसके हस्तलेख को सम्पादक नहीं जानता है। कुछ स्वयं सम्पादक ने किया है। पन्द्रहवें वर्ष के आरम्भ से तो सारा अनुवाद सम्पादक का ही किया हुआ है। कई वर्षों के अनुवाद की हस्तलिखित प्रति लगभग ठीक मालूम होती है परन्तु इस जिल्द में उसका थोड़ा सा ही अंश छापा जा सकता है।]

आकार—छोटा फोलियो, 659 पृष्ठ, प्रत्येक पृष्ठ पर पन्द्रह पंक्तियाँ।

[यह प्रति रोयल एशियाटिक सोसायटी की है। यह छोटे फोलियो में भी है जिसमें 823 पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठ पर पन्द्रह पंक्तियाँ हैं।]

दोनों पुस्तकों का आरम्भ एक ही प्रकार से होता है :

अज इनायात बेगायात इलाही इकसायत नजूमी अजरोज पंज शंवा हस्तम जमादि उस्सानी हजारो चहार दा हिजरी गुजिस्ता दरदारअल खिलाफत आगरा दर उम्र से व हस्त सालगई षर तख्त सल्तनत जलूस नमूदम।

द्वाजदा साल जहाँगीरी संस्मरणों के तेरहवें वर्ष की 150वीं पंक्ति पर समाप्त होती है। परन्तु उनमें वही वाक्य फिर जारी रहता है। इससे बहुत सम्भव है कि वास्तविक समाप्ति जैसा कि मेरी एक प्रति की उपर्युक्त पंक्तियों से प्रकट होता है वहाँ होती है जहाँ वह गुजरात के जलवायु की और विशेषकर अहमदाबाद की जलवायु की शिकायत करता है। अहमदाबाद के लिये वह कहता है कि इसको गर्दाबाद अर्थात् 'धूल का नगर' कहना चाहिये या सुमूमाबाद या जहन्नुमाबाद कहना चाहिए।

हम दरीं वक्त खान आलम के नज्द दाराई ईरान बा यलची गरी रफ्ता बूद ब गुजस्त बाज आशनाई के बजबान फारसी अकबा मीगोयन्द। पेशकश फरस्ता दा बूद। अजनजर गुजस्त।

बड़ी पुस्तक की समाप्ति इस प्रकार होती है :

दस्त तारज अज दामान नामूस व खान आनान ओ कोताह अस्त बफराग खातिर खाना गर्दद व अगर तवफ्फुक रा मस्ल-हत खुद मी दानन्द हरगो के अजीं मुल्क इल्तमास नमायद मी फमायम।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दिल्ली के बादशाह के पुस्तकालय की प्रति में इब्राहीम का उत्तर संस्मरण का एक अंश है। जनरल स्मिथ की प्रति में यह मोहम्मद हादी के लिखे हुए अंश का भाग है।

अवतरण

[वृहस्पतिवार 8 जुमादस्सानी 1014 हिजरी (12 अक्टूबर 1605 ई०) को मैं आगरे में 38 वर्ष की आयु में राजसिंहासन पर बैठा।]

न्याय-शृङ्खला

[सर्वप्रथम मैंने यह आदेश जारी किया कि एक न्याय-शृङ्खला स्थापित की जाय। यदि न्यायालय के अधिकारी उत्पीड़ित लोगों की शिकायतों की जाँच न कर सकें और उनको राहत न दे सकें तो लोग आकर इस शृङ्खला को हिला दें और अपने दुखों की सूचना दें। मैंने आदेश दिया कि यह शृङ्खला शुद्ध सोने की और तीस गज लम्बी बनाई जाय और इसमें साठ घंटियाँ लगाई जायँ। इसकी तोल चार हिन्दुस्तानी मन थी जो 32 ईराकी मन के बराबर होती है। इसका एक छोर आगरा दुर्ग की एक प्राचीर से और दूसरा नदी तट पर एक पत्थर के स्तम्भ से मजबूती से बंधा हुआ था।]

बारह आदेश

मैंने बारह आदेश जारी किये। ये साम्राज्य भर में आज्ञा पालन के लिए थे।

1. जकात-कर का निषेध :

मैंने तमगा और मीर बहरी नामक कर लगाने का निषेध कर दिया। साथ ही उन सब करों को भी बन्द कर दिया जो प्रत्येक सूबा और सरकार के जागीरदार अपने लाभ के लिये लगाने के आदी थे।

2. आम रास्तों पर डकैती और चोरी के विषय में नियम :

जिन रास्तों पर डकैतियाँ और चोरियाँ हुआ करती थीं और जो रास्ते बस्तियों से दूर थे, उनके विषय में आदेश हुआ कि पास के जागीरदार वहाँ सराय या मस्जिद बनाएँ और एक कुआ खुदवाएँ जिससे खेती की उन्नति हो और लोग वहाँ बसने के लिए प्रेरित हों। अगर ऐसे स्थान खालिसा भूमि के निकट हों तो यह कार्य सरकारी अफसर करें।

3. मृतक व्यक्तियों की सम्पत्ति का बिना कर उत्तराधिकार :

मार्गों पर व्यापारियों के गट्ठों को उनकी अनुमति के बिना कोई नहीं खोल सकता था। साम्राज्य में जब किसी मुसलमान या काफिर की मृत्यु हो जावे तो उनकी सम्पत्ति और सामान बिना किसी हस्तक्षेप के (अधिकारी को) उत्तराधिकारी को मिले। यदि कोई उत्तराधिकारी न हो तो, उसकी सम्पत्ति को सँभालने के लिए राज-कर्मचारी नियुक्त किए जाएं और इस्लाम के कानून के अनुसार यह सम्पत्ति मस्जिद

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और सरायों के निर्माण में, टूटे हुए पुलों की मरम्मत में तथा तालाब और कुए बनाने में खर्च की जाय।

4. समस्त मादक वस्तुओं और मद्य के विषय में :

यद्यपि मुझे अठारह वर्ष की आयु से अब तक जब मैं 38 वर्ष का हो गया हूं, मद्यपान की आदत है और मैं नित्य प्रति उसका सेवन करता आया हूँ, तथापि शराब और सब प्रकार की मादक वस्तुओं का मैंने निषेध कर दिया है। ये चीजें न बनाई जा सकती हैं और न बेची जा सकती हैं। आरम्भ में जब मुझे मद्यपान की लालसा हुआ करती थी तो मैं कभी-कभी दुबारा खींची हुई शराब के बीस प्याले तक पी जाया करता था। कुछ अर्से बाद इसका मुझ पर बड़ा असर हुआ और मैंने इसकी मात्रा घटाना शुरू कर दिया। सात वर्ष के अर्से में मैंने यह पाँच या छः प्याले तक रहने दी। मेरा मद्यपान का समय बदला करता था। कभी-कभी मैं जब दो तीन घण्टे दिन रहता था तो पीना शुरू करता था और कभी-कभी रात में भी पीता था और दिन में भी कुछ पीता था। इस प्रकार तीसवें वर्ष तक चलता रहा। तब मैंने निश्चय कर लिया कि मैं रात में केवल एक प्याला पिया करूँगा। इस समय मैं अपनी पाचन-शक्ति को बढ़ाने के लिए ही पीता हूँ।

5. मकान छीनने का और अपराधियों के नाक, कान काटने का निषेध :

कोई व्यक्ति दूसरे के मकान में निवास न करे। मैंने आदेश दिया कि अपराधियों के नाक, कान किसी भी अपराध के लिए कोई न काटे और मैंने ईश्वर के सामने प्रण किया कि मैं किसी को इस प्रकार का दण्ड नहीं दूंगा।

6. गसबी[1] का निषेध :

खालिसा के राजकर्मचारी और जागीरदार बलपूर्वक रैयत की भूमि का हरण न करें और उसमें अपने लिए खेती न करें। खालिसा भूमि के और जागीरदारों के संग्राहक अनुमति के बिना अपने जिलों के लोगों से सम्बन्ध स्थापित न करें।

7. अस्पतालों का निर्माण और रोगियों की चिकित्सा के लिए हकीमों की नियुक्ति :

बड़े-बड़े नगरों में अस्पताल बनाये जाएँ और बीमारों को देखने के लिए हकीम नियुक्त किए जाएँ। इसका खर्च शाही कोष से दिया जाय।

8. कुछ दिनों जानवरों के वध का निषेध :

अपने पिता का अनुकरण करते हुए मैंने आदेश दिया कि 18 रबी-उल-अव्वल से, जो मेरा जन्म-दिन है, उतने दिन तक किसी जानवर का वध न किया जाय, जितने वर्ष की मेरी उस समय आयु हो। प्रति सप्ताह भी दो दिन वध का निषेध था—बृहस्पतिवार को, जो मेरे राज्याभिषेक का दिन था और रविवार को जो मेरे पिता का जन्म-दिन था।

---

1 अनुमति के बिना ही किसी की सम्पत्ति का हरण करना।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

9. रविवार के प्रति आदर :

मेरा पिता रविवार को शुभ दिन समझता था और इसके प्रति आदर प्रकट किया करता था, क्योंकि यह महानक्षत्र (सूर्य) का दिन है और इसी दिन सृष्टि का आरम्भ हुआ था। मेरे साम्राज्य भर में इस दिन पशु-वध का निषेध था।

10. मनसबों और जागीरों की आम पुष्टि :

मैंने एक आम आदेश जारी किया कि मेरे पिता के मनसबों और जागीरों की पुष्टि की जाय। इसके पश्चात् मैंने प्रत्येक व्यक्ति की योग्यता के अनुसार पुराने मनसबों में वृद्धि की। जिसके 10 का मनसब था उसका कम से कम 12 कर दिया गया और किसी अवस्था में तो यह वृद्धि 10 से 30 या 40 कर दी गई। अहदियों का भत्ता 10 से 15 और शागिर्द पेशा वालों का मासिक वेतन 10 से 12 या 10 से 20 तक कर दिया गया।

11. आयमा भूमियों की पुष्टि :

मेरे समस्त साम्राज्य में, जो आयमा और मददमाश की जमीनें प्रार्थना और प्रशंसा करने के लिए दी जाती थीं, वह प्रत्येक माफीदार की माफी की शर्तों के अनुसार जारी (बहाल) रखी गईं। गरीबों की प्रतिदिन देखरेख करने के लिए सदर-ए-सदूर मीरान को, जो हिन्दुस्तान में शुद्ध सैयद जाति का है, आदेश दिया गया। यह मेरे पिता के समय में भी सदर के पद पर था।

12. दुर्गों के और सब प्रकार के कैदखानों के बन्दियों की मुक्ति :

मैंने आदेश दिया कि जो लोग दुर्गों में या कारागारों में बन्द हैं, उनको मुक्त कर दिया जाए।

सिक्कों के नये नाम

सोने और चाँदी के विभिन्न वजनों के सिक्के ढाले गए और हर एक का पृथक्-पृथक् नाम रखा गया। 100 तोले के सिक्के का नाम मैंने नूर-ए-शाही, 50 तोले के सिक्के का नाम नूर-ए-सुलतानी, 20 तोले के सिक्के का नाम नूर-ए-दौलत, 10 तोले के सिक्के का नाम नूर-ए-करम और पाँच तोले के सिक्के का नाम नूर-ए-मिहर, 1 तोले के सिक्के का नाम नूर-ए-जहाँनी, आधे तोले के सिक्के का नाम नूरानी और पाव तोले के सिक्के का नाम रवाजी रखा। चांदी के तोलों के सिक्कों में 100 तोले के सिक्के का नाम मैंने कोकाब-ए-ताली, 50 तोले के सिक्के का नाम कोकाब-ए-बख्त, 5 तोले के सिक्के का नाम कोकाब-ए-साद, 1 तोले के सिक्के का नाम जहाँगीरी, आधे तोले के सिक्के का नाम सुलतानी और पाव तोले के सिक्के का नाम ऐंश्यारी और दशांश तोले के सिक्के का नाम खैर कबूल रखा। तांबे के सिक्कों के भी इसी प्रकार नाम रखे गये।

हरदास राय को मेरे पिता से रायरायान की उपाधि प्राप्त हुई थी और मैंने उसको राजा विक्रमाजीत की उपाधि प्रदान की थी। इस नाम का हिन्दुस्तान में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बड़ा ही प्रसिद्ध राजा हुआ है जिसने वेधशाला का निर्माण करवाया था। मैंने हरदास को ऊँचे से ऊँचा सम्मान प्रदान किया। उसको तोपखाने का अध्यक्ष बनाया और आदेश दिया कि वह 50000 बन्दूकची और 3000 तोपगाड़ियाँ हमेशा तैयार रखे। विक्रमाजीत जाति का क्षत्रिय था। मेरे पिता के समय में वह हाथीखाने का बख्शी था और फिर उसको दीवान के पद तक बढ़ा दिया था। तत्पश्चात् वह दरबार के अमीरों में ले लिया गया था। उसमें वीरता और निर्णय बुद्धि की कमी नहीं थी।

मेरा विचार था कि यथाशक्ति मेरे पिता के सब पुराने आश्रितों को सन्तुष्ट रखा जाय। इसलिए मैंने बख्शियों को आदेश दिया कि जो भी व्यक्ति अपने प्रदेश में जागीर प्राप्त करना चाहे, वह इस विषय का प्रार्थना-पत्र पेश करे और चंगेजखाँ के नियमों के अनुसार उसको अल्तमगा प्रदान किया जाय और वह किसी प्रकार के उलटफेर या अलग किए जाने का भय न करे और इसको भोगता रहे। जब कभी मेरे पूर्वज जागीर प्रदान करके उस पर किसी को स्वामित्व का अधिकार प्रदान करते थे तो उस पर अल्तमगा की मुहर लगाई जाती थी। इस पर लाल स्याही लगती थी। अब मैंने आदेश दिया किया कि पहले उस स्थान पर सोने का वर्क लगाया जाय और उसके बाद अल्तमगा की मुहर लगाई जाय। इसलिए मैंने इसका नाम अलतुन तमगा (सोने की छाप) रखा। मैने मिर्जा सुलतान को 1000 का मनसबदार बनवाया। यह मिर्जा शाहरुख का पुत्र और मिर्जा सुलेमान का पौत्र था तथा बदखशाँ के सरदार मिर्जा सुलतान अबू सैयद का वंशज था। मैंने अपने पिता से प्रार्थना की थी कि उसे मेरे सेवकों में रहने की अनुमति दे दी जाय। इसलिए मैंने उसका पुत्रवत् पालन किया और ऐसा ही व्यवहार किया। राजा मानसिंह के ज्येष्ठ पुत्र भावसिंह को 1500 का मनसब दिया और उसका पहला पद ज्यों का त्यों रहने दिया। जब मैं शहजादा था तो जमानाबेग ने जो गयूरबेग का पुत्र था अहदी के रूप में मेरी सेवा करके 500 का मनसब प्राप्त कर लिया था। अब उसको महावतखाँ की उपाधि और 1500 का मनसब देकर अपने राज-परिवार का बख्शी नियुक्त किया। राजा नरसिंहदेव बुन्देला पर मेरी बड़ी कृपा थी। वह अपने समय में बड़ा वीर, दयालु और सच्चरित्र पुरुष था। मैंने उसका मनसब 3000 कर दिया। उसकी पदोन्नति का कारण यह था कि उसने अबुलफजल की हत्या की थी जो हिन्दुस्तान के शेखों का एक वंशज था और जो अपनी प्रतिभा और बुद्धि के लिए प्रसिद्ध था। मेरे पिता का शासनकाल जब समाप्त होने वाला था तो अबुलफजल ने ईमानदारी रूपी रत्न केवल दिखाने के लिए धारण कर रखा था और फिर बड़ी कीमत लेकर यह मेरे पिता को बेच दिया था। मेरे पिता ने उसको दक्खिन से शाही दरबार में बुलाया। वह मेरा मित्र नहीं था। मेरी ओर उसकी दुर्भावना थी और मेरी निन्दा करने से वह कभी नहीं हिचकता था।

अबुलफजल की हत्या

शेख अबुलफजल की हत्या का विवरण इस प्रकार दिया गया है—कुछ दुष्ट

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लोगों ने मेरे और मेरे माता-पिता के बीच मनमुटाव पैदा कर दिया गया था। शेख के व्यवहार से मुझको पूरा विश्वास हो गया था कि यदि उसे दरबार में आने दिया तो वह यथाशक्ति मेरे प्रति मेरे पिता के क्रोध को उभारेगा और अन्त में मुझे कभी उसके सामने उपस्थित नहीं होने देगा। इस डर से मैंने नरसिंहदेव से बातचीत की। उसका देश शेख के दक्खिन के रास्ते पर पड़ता था और उस समय वह लूट मार में लगा हुआ था। मैंने उससे कहलाया कि शेख अबुलफजल को यात्रा के दौरान समाप्त कर दिया जाय और वचन दिया कि उस पर अनेक अनुग्रह किए जाएँगे और उसे पुरस्कार दिये जायेंगे। नरसिंहदेव इस पर सहमत हो गया और ईश्वर ने उसकी सहायता को सफल बनाया। जब शेख उसके इलाके में होकर गुजरा तो राजा ने उसे और उसके अनुचरों को घेर लिया और थोड़े ही समय में अनुचरों को भगाकर शेख को मार डाला तथा उसका सिर मेरे पास इलाहाबाद भेजा। यद्यपि इस दुःखद घटना से मेरा पिता अति उद्विग्न हुआ तथापि अन्त में मैं उससे निश्चिन्त और निर्भय होकर मिला और धीरे-धीरे उसका क्रोध भी शान्त हो गया और वह मुझसे मित्रभाव से मिला।

विद्वान हिन्दुओं से चर्चा

एक दिन मैंने कुछ विद्वान हिन्दुओं से कहा कि यदि उनके धर्म का आधार दस अवतारों में विश्वास है तो यह बिल्कुल असंगत है क्योंकि इस अवस्था में यह मानना आवश्यक हो जाता है कि सर्वशक्तिमान और असीम ईश्वर में निश्चित लम्बाई, चौड़ाई और गहराई होगी। यदि उनका अभिप्राय यह हो कि इन शरीरों में महाप्रकाश दृष्टिगत होता है तो अन्य सब पदार्थों में भी वह इसी प्रकार दृष्टिगत होना चाहिए और इन दस अवतारों में ही सीमित नहीं होना चाहिए। यदि वे ये कहें कि ये दस अवतार ईश्वर के विशेष गुणों के प्रतीक हैं तो यह भी नहीं माना जा सकता क्योंकि सभी धर्मों के अनुयायियों में ऐसे करामाती लोग हुए हैं जिनमें उस समय के अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक शक्ति और प्रतिभा थी। बहुत लम्बे शास्त्रार्थ के पश्चात् अन्त में उन्होंने स्वीकार किया कि ईश्वर निराकार है और उनको उसका पूर्ण ज्ञान नहीं है। उन्होंने कहा कि उस अदृश्य और अद्वितीय ईश्वर को समझना उनकी बुद्धि से परे है। वे उसके विषय में कोई विचार नहीं कर सकते परन्तु कुछ प्राकृतिक पदार्थों के द्वारा उसको समझा जा सकता है। इसलिए इन दस अवतारों की कल्पना की गई है। इनके द्वारा वे अपने मन को ईश्वर तक उठा सकते हैं। मैंने उनसे कहा कि इन साधनों के द्वारा ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती।

बादशाह अकबर का चित्र

मेरा पिता सब धर्मों के पण्डितों के साथ और विशेषकर हिन्दुस्तान के बुद्धिमान पुरुषों और पण्डितों के साथ बातचीत किया करता था। यद्यपि वह निरक्षर था तथापि बुद्धिमान और चतुर पुरुषों के साथ हमेशा वार्तालाप करते रहने के कारण

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसकी भाषा ऐसी परिमार्जित हो गई थी कि उसकी बात से कोई यह पता नहीं लगा सकता था कि वह बिल्कुल अशिक्षित है। वह गद्य और पद्य के सौन्दर्य को भी इतना अच्छा समझ सकता था कि उससे अधिक योग्य पुरुष की कल्पना करना असम्भव था। उसके शरीर का वर्णन इस प्रकार है—उसका कद मझोला था, परन्तु मोटेपन की ओर झुका हुआ था। रंग गेहुआ था, रंग गोरा नहीं परन्तु कुछ काला था। आँखें और भौएँ काली थीं। शरीर दृढ़ था, ललाट और सीना प्रशस्त था तथा भुजाएं और हाथ लम्बे थे। उसकी नाक की बाईं ओर एक मोटा मस्सा था जिसका आकार छोटी मटर के बराबर था। यह बड़ा सुन्दर प्रतीत होता था और आकृति विज्ञानी इसे शुभ समझते थे और कहते थे कि यह विपुल सम्पत्ति और बढ़ती हुई समृद्धि का सूचक है। उसकी आवाज बड़ी जोरदार और बात करने का ढंग बड़ा सुन्दर और मधुर था। उसके ढंग और आदतें अन्य लोगों से बिल्कुल भिन्न थीं और उसके चेहरे पर ईश्वरीय तेज था।

शासन का प्रथम वर्ष

राहदारी की माफी

मैंने राहदारी का रिवाज बन्द कर दिया था। इससे समस्त साम्राज्य से कई करोड़ रुपये की आय होती थी। मैंने यही माफी उन तमाम स्थानों के लिए भी दे दी थी जो काबुल और हिन्दुस्तान के मार्ग पर स्थित थे। यहां से प्रति वर्ष एक करोड़ और तेईस लाख दाम राहदारी के कर-स्वरूप संग्रह किये जाते थे। काबुल और कन्धार दोनों प्रान्तों की राहदारी सरकारी कोष में जमा होती थी और यही इन प्रान्तों की मुख्य आय थी। मैंने यह रिवाज बिल्कुल बन्द कर दिया जिससे ईरान और तूरान के लोगों को लाभ हुआ और उनकी समृद्धि बढ़ी।

शहजादा खुसरु का विद्रोह और पलायन

मेरे राज्यारोहण के प्रथम वर्ष में खुसरु पर अपने यौवन के चिड़चिड़ेपन और अभिमान का प्रभाव हो गया। उसमें अनुभव और दूरदर्शिता की कमी थी और उसके दुष्ट साथी उसे प्रोत्साहित करते थे। इसलिए उसके मस्तिष्क में कुछ बेतुकी बात घुस गई। मेरे पिता की बीमारी के समय में कुछ अदूरदर्शी लोगों ने, जो अपने अपराधों के कारण काँपा करते थे और जिन्हें क्षमा की कोई आशा नहीं थी, उसे ही राजसिंहासन पर बिठाने की और शासन की बागडोर उसके हाथ में सौंपने की बात सोची। उन्होंने यह विचार न किया कि राजसत्ता और सरकार की व्यवस्था सीमित बुद्धि वाले लोग नहीं कर सकते। न्यायशील परमात्मा यह महाकार्य उन लोगों के सुपुर्द करता है जो उसे पसन्द हैं। प्रत्येक व्यक्ति शाही पोशाक पहनने की क्षमता नहीं रखता।

अन्त में खुसरु और उसके मूर्ख साथियों के थोथे सपनों का अन्त दुख और लज्जा के अतिरिक्त कुछ न हुआ। जब मुझे राजसत्ता प्राप्त हो गई तो उसको

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गिरफ्तार करके मैंने अपने सन्देह और आशंका को शान्त किया। तो भी मैं चाहता था कि उसके प्रति कृपा और लिहाज करूँ और उसके हास्यास्पद विचारों को हटाऊँ, परन्तु मैं कुछ न कर सका। अन्त में उसने अपने उकसाने वाले लोगों के साथ एक योजना बनाई और 20 जिलहिज्जा की रात्रि को कहा कि वे मेरे पिता की कब्र पर जा रहा है। उसके हितेच्छु पचास सवार आगरे के दुर्ग में आये और वह उस ओर चला गया। कुछ देर वाद खबर आई कि खुसरु निकल भागा। अमीर-उल-उमरा ने इसका ठीक-ठीक पता लगाकर मेरे निजी कक्ष में कहलाया कि वह आवश्यक विषय पर मुझसे वात करना चाहता है। मैंने सोचा कि शायद दक्खिन या गुजरात से कोई समाचार आया होगा। जब मुझे घटना का पता लगा तो मैंने पूछा कि "अव क्या करना चाहिए, क्या मैं स्वयं सवार होकर उसका पीछा करूँ या खुर्रम को भेजूं?" अमीर-उल-उमरा ने कहा कि यदि मेरी अनुमति हो तो वह स्वयं जाना चाहेगा। तो मैंने कहा "अच्छा ऐसा ही करो।" तब उसने पूछा "यदि मैं समझा-बुझाकर उसको वापस नहीं ला सका और बल प्रयोग की आवश्यकता हुई तो फिर मैं क्या करूँ।" मैंने कहा "यदि उसके लड़े विना ठीक रास्ते पर नहीं लाया जा सके तो जो तुम्हें करना पड़े उसे अपराध मत समझो। राजसत्ता पिता-पुत्र के सम्वन्ध को नहीं मानती। ऐसा कहा जाता है कि वादशाह किसी को भी अपना रिश्तेदार न समझे।" ये शब्द कह कर और कुछ अन्य मामले तय करके मैंने उसे रवाना कर दिया। तव मुझे स्मरण हुआ कि खुसरु उससे वड़ी घृणा करता है। अमीर-उल-उमरा भी अपने पद और प्रतिष्ठा के कारण अपने वरावर वालों से द्वेष करता है। ईश्वर न करे कि वह द्वेष में आकर उसे समाप्त कर दे। इसलिए मैंने उसे वापस बुला लिया और इस सेवा के लिए शेख फरीद बुखारी को भेजा और उसे निर्देश किया कि जिन मनसबदारों और अहदियों को वह एकत्र कर सके अपने साथ ले जाय। स्वयं मैंने निश्चय किया कि दिन उगते ही मैं भी रवाना हो जाऊँगा। अब समाचार मिला कि खुसरु तेजी से पंजाव की ओर जा रहा है। परन्तु मेरे मन में यह ख्याल आया कि शायद मुझे चकमा देने के लिए ही वह ऐसा कर रहा है और उसका असली इरादा कहीं अन्यत्र जाने का है। राजा मानसिंह, जो वंगाल में था, खुसरु का मामा था और वहुत से लोगों का ख्याल था कि खुसरु उधर जायगा। परन्तु मैंने चारों ओर आदमी भेज रखे थे। इन्होंने इस वात की पुष्टि की कि वह पंजाव की ओर जा रहा है।

अगले दिन प्रातःकाल मैं उठा और ईश्वर पर विश्वास करके घोड़े पर सवार हुआ और चल दिया। मैं किसी बात या व्यक्ति से रोके नहीं रुका। जव मैं अपने आदरणीय पिता की कब्र पर पहुंचा, जो तीन कोस दूर है, तो मैंने उसकी रक्षक आत्मा से सहायता के लिए प्रार्थना की। शाहरुख मिर्जा का पुत्र मिर्जा हसन जो खुसरु से मिलना चाहता था, मेरे सामने उपस्थित किया गया। मैंने उससे पूछा तो उसने कहा कि उसका ऐसा इरादा नहीं है। मैंने आदेश दिया कि उसके हाथ बांधकर तथा उसे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हाथी पर बिठा कर वापस भेज दिया जाय। मैंने समझा कि यह गिरफ्तारी शुभ शकुन है और उस स्वर्गीय आत्मा की सहायता से यह हो सकी है।

मध्यान्ह को जब गर्मी हो गई तो मैंने कुछ वृक्षों की छाया में विश्राम किया और मैंने खान-ए-आजम ने कहा कि मैं इस अप्रिय मामले में इतना व्यस्त हूँ कि दोपहर से पहले जो मैं अफीम खाया करता हूँ वह भी मैंने अभी नहीं खाई और किसी ने मुझे याद भी नहीं दिलाई। मेरा सन्ताप यह विचार करने से और भी बढ़ गया कि अकारण ही मेरा ही पुत्र मेरा शत्रु बन गया है और यदि मैं उसे गिरफ्तार करने के लिए प्रयास नहीं करूंगा तो असन्तुष्ट और उपद्रवी लोग उसकी सहायता करेंगे या वह स्वयं ही स्वेच्छा से उजवेग या काजिलवाश लोगों के पास चला जायगा और इस प्रकार मेरे सिंहासन की वदनामी होगी। कुछ विश्राम करके मैंने अपना मार्ग निश्चित किया और फिर मैं मथुरा के परगने से, जो आगरे से बीस कोस है रवाना हुआ। दो कोस आगे जाकर मैं इस परगने के एक गाँव में ठहर गया। वहाँ एक तालाव था।

जब खुसरु मथुरा पहुंचा तो वह हसन वेगखाँ बदखशी से मिला। उस पर मेरे पिता की वड़ी कृपा थी और वह इस समय कावुल से मेरी सेवा करने के लिए आ रहा था। वदखशी लोग स्वभावत: लड़ाकू और विद्रोही होते हैं। जव खुसरु, जिसके साथ दो-तीन सौ आदमी थे, उससे मिला तो खुसरु ने उसे अपने आदमियों का नायक बना दिया। रास्ते में जो भी मिला उसे लूट लिया और उसका सामान और घोड़ा छीन लिया। व्यापारी और यात्री लूट लिए गए। जहाँ भी ये विद्रोही पहुंचे वहाँ स्त्रियाँ और बच्चे सुरक्षित नहीं रहे। खुसरु ने अपनी आँखों से देखा कि कृष्ट गांव बर्वाद हो रहे हैं और लोग सताये जा रहे हैं। उनकी क्रूरताओं से लोग समझने लगे कि इससे तो मृत्यु हजार गुनी अच्छी है। लोगों के सामने इसके सिवाय कोई चारा नहीं था कि वे उसके साथ हो जाएँ। यदि खुसरु पर भाग्य की कृपा होती तो वह लज्जा और पश्चात्ताप से दब जाता और निर्भय होकर मेरे पास आता। वह सर्वविदित है कि मैंने उसके अपराध किस प्रकार क्षमा किए थे और कितनी कृपा और नरमी के साथ उसके साथ वर्ताव किया था। इससे उसके हृदय में कोई सन्देह नहीं रहना चाहिए था। मेरे पिता के जीते जी जब कुछ षडयन्त्रकारी लोगों ने उसे भड़काया और उसमें अनुचित आकांक्षाएँ उत्पन्न हुईं तो वह जानता था कि इसकी मुझे सूचना मिल गई है। परन्तु उसको मेरी कृपालुता पर विश्वास नहीं हुआ।

जब मैं शहजादा था उन दिनों में उसकी माँ उसके अनुचित कार्यों से और अपने छोटे भाई माधोसिंह की कठोरता से विषपान करके मर गई। मैं उसके सद्-गुणों का और सत्स्वभाव का कैसे वर्णन कर सकता हूँ। उसकी समझ बहुत अच्छी थी और मेरे प्रति उसका ऐसा स्नेह था कि मेरे एक बाल के लिए वह एक हजार पुत्रों और भाइयों का वलिदान कर सकती थी। वह बार-बार खुसरु को पत्र लिख कर समझाया करती थी और मेरे प्रेम तथा अनुग्रह के प्रमाण दिया करती थी परन्तु

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इसका उस पर कोई प्रभाव नहीं हुआ करता था। जब उसे यह पता लगा कि न जाने खुसरु क्या कर बैठे, तो उसके राजपूती अभिमान को ठेस लगी और उसने मरने की ठान ली। समय-समय पर उसका चित्त भ्रान्त हो जाया करता था और उसका पिता और भाई मुझसे कहा करते थे कि वह पागल-सी हो गई है। कुछ दिन बाद ऐसा मालूम होने लगा कि वह स्वस्थ हो जाएगी। परन्तु 26 जिलहिज्जा 1013 हिजरी को उसने बहुत सारी अफीम खा ली और थोड़े समय बाद ही उसके प्राणों का अन्त हो गया। उसको आशा थी कि अब तो उसका पुत्र पश्चात्ताप करके कर्तव्यपरायण बन जाएगा। उस समय मैं शिकार करने गया हुआ था। वह मेरी पहली दुल्हन थी और उससे मेरा विवाह जवानी में ही हुआ था। खुसरु के जन्म के बाद मैंने उसकी माँ को शाहबेगम की उपाधि दी थी। मेरे प्रति अपने पुत्र और भाइयों के दुर्व्यवहार को वह सहन नहीं कर सकी। इसलिए उसने अपने प्राणों का त्याग करके दुख और परेशानी से मुक्ति प्राप्त की। मुझ पर उसकी मृत्यु का ऐसा प्रभाव पड़ा कि मैंने जीवित रहने की चिन्ता छोड़ दी और मेरे लिए जीवन में कोई आनन्द नहीं रहा। चार दिन और चार रात तक अर्थात् 32 पहर तक मैं दुख और सन्ताप में डूबा रहा और मैंने खाने-पीने की कोई चिन्ता न की। जब मेरे पिता को मेरी इस दशा का पता लगा तो अपने स्नेह और अपार अनुग्रह से प्रेरित होकर मेरे लिए खिलत और ऐसी पगड़ी भेजी जिसे वह स्वयं पहना करता था। इस महाकृपा ने मेरी सन्तापाग्नि की ज्वालाओं पर मानों पानी डाली दिया। इससे मुझे सान्त्वना और सन्तोष प्राप्त हुआ परन्तु इन तमाम बातों को सुनने पर भी खुसरु पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। उसने अपने दुष्ट और अपुत्रोचित व्यवहार से अपनी माँ की मृत्यु बुलाई और अकारण ही तरंग और दुष्ट कल्पना के वश होकर मेरे विरुद्ध विद्रोह कर दिया। उसने कर्तव्य और आज्ञापालन करना छोड़ दिया। इस दुष्ट व्यवहार के लिए उसको दण्ड देना आवश्यक था। अन्त में उसका दुर्व्यवहार इतना बढ़ गया कि उसको कैद में रखना पड़ा।

2 जिलहिज्जा को हिन्दाल में ठहर कर मैंने शेखफरीद बुखारी को कुछ आदमियों के साथ खुसरु का पीछा करने के लिए भेजा और उसको अग्रसेना का नेतृत्व दिया। मैंने दोस्त मोहम्मद को आगरे की, महलों की व कोष की देखरेख करने के लिए रवाना किया। जब मैं आगरे से रवाना हुआ तो मैंने उस नगर को इतिमात-उद्-द्दौला और वजीर-उल-मुल्क के सुपुर्द किया था। अब मैंने दोस्त मोहम्मद से कहा कि मैं पंजाब जा रहा हूँ और यह प्रान्त इतिमात-उद्-द्दौला के दीवान के अधीन है। इसलिए इतिमात-उद्-द्दौला को मेरे पास भेज दिया जावे और मिर्जा मोहम्मद हकीम के लड़कों को कैद कर लिया जाय। उस समय मिर्जा मोहम्मद आगरे में था। जब मेरे ही पुत्र ने ऐसा व्यवहार किया तो मैं अपने चाचा के पुत्रों से क्या आशा कर सकता था। दोस्त मोहम्मद प्रस्थान के बाद मुईजुल-मुल्क बख्शी बना।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मैं पलोल और फरीदाबाद ठहरा और 13 तारीख को दिल्ली पहुंचा। वहाँ मैं अपने बाबा हुमायूं की कब्र पर गया और गरीबों को दान दिया। फिर मैं निजामुद्दीन ओलिया की कब्र पर गया और वहाँ निर्धनों को दान दिया। 14 रमजान को मैं नरेला की सराय में ठहरा। खुसरु इस सराय में आग लगाकर आगे चला गया था। 16 तारीख को मैं पानीपत के परगने में ठहरा। यह स्थान मेरे पूर्वजों के लिए बड़ा शुभ था। यहाँ पर उन्होंने दो बार महत्वपूर्ण विजय प्राप्त की थी—एक बार बाबर ने इब्राहीम लोदी पर और दूसरी बार मेरे माननीय पिता ने हेमू पर। जब खुसरु दिल्ली छोड़कर पानीपत पहुँचा तो दिलावरखाँ वहाँ पहले ही पहुंच चुका था। खान को उसके आने की कुछ समय पूर्व ही सूचना मिली थी। उसने तत्काल ही अपने पुत्रों को यमुना पार भेज दिया और वह स्वयं खुसरु के आने से पूर्व लाहौर के दुर्ग में प्रविष्ट हो गया। लगभग इसी समय इस स्थान पर अब्दुर्रहीम लाहौर से आया। दिलावरखाँ ने इसको सलाह दी कि वह अपने पुत्रों को दिलावरखाँ के पुत्रों के साथ नदी पार भेज दे और स्वयं मेरे आगमन की प्रतीक्षा करे। वह कायर था। इसलिए भयभीत हो गया और इस मार्ग का अनुसरण करने के लिए निश्चय न कर सका। परन्तु खुसरु के आने तक वह विलम्ब करता रहा और जब वह आया तो उसकी सेवा में उपस्थित हो गया।

दिलावरखाँ शीघ्रता से लाहौर की ओर चला। मार्ग में वह प्रत्येक राज कर्मचारी को और प्रत्येक करोड़ी व्यापारी या जो भी यात्री मिला उसे खुसरु के विद्रोह की सूचना देता गया। कुछ लोगों को वह अपने साथ ले गया और कुछ को चेतावनी दे गया कि वे खुसरु से दूर रहें। इसके बाद लोग विद्रोहियों की ज्यादती से बच गये। यह बहुत सम्भव प्रतीत होता है कि यदि दिल्ली में सैयद कमाल और पानीपत में दिलावरखाँ कुछ हिम्मत करके खुसरु के मार्ग में खड़े हो जाते तो उसके अव्यवस्थित साथी उनका सामना नहीं कर पाते। वे तितर-बितर हो जाते और खुसरु कैद कर लिया जाता। परन्तु इस अवसर पर उनके धैर्य ने साथ न दिया। तो भी आगे चलकर उन्होंने इस कमी की पूर्ति कर दी।

शीघ्रता से कूच करके दिलावरखाँ खुसरु से पहले लाहौर पहुँच गया और विद्रोही को वापस धकेलने के लिए उसने श्रमपूर्वक किले में सुरक्षा का प्रबन्ध किया। कमाल ने भी विद्रोही को रोकने के लिए भरसक प्रयत्न किया था। इसका यथास्थान उल्लेख किया जायेगा। 18 जिलहिज्जा को मैं शाहबाद ठहरा। यहाँ पानी का बड़ा अभाव था। परन्तु भारी वर्षा हो गई जिससे सबका चित्त प्रसन्न हो गया। अलोदा से मैंने शेख फरीद की सहायता के लिए अबुल बानी उजबेग को 57 मनसबदारों के साथ रवाना किया और उनके साथ खर्च के लिए चालीस हजार रुपये भी भेजे। सात हजार रुपये जमील बेग को बकाया देने के लिए दिये। मीर शरीफ आमली को भी मैंने अठारह हजार रुपये दिये।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

12 जिलहिज्जा को खुसरु के पाँच अनुचर गिरफ्तार करके मेरे सामने लाये गये। इनमें से दो को मैंने हाथियों के सामने फिकवा दिया। तीन ने कहा कि उन्होंने खुसरु की नौकरी स्वीकार नहीं की। इनको कैद करके जाँच की गई। 24 तारीख को दिलावरखाँ के एक सन्देशवाहक फरवरदीन ने आकर मुझे सूचित किया कि खुसरु लाहौर पर आक्रमण करने वाला है और मुझे सचेत रहना चाहिए। उस दिन लाहौर के दरवाजे वन्द करके रक्षा की गई और दो दिन बाद कुछ आदमियों के सहित दिलावरखाँ ने वहाँ के दुर्ग में प्रवेश किया। उसने उस स्थान को सुदृढ़ करने, मरम्मत करवाने, प्राचीरों पर तोपें चढ़वाने और घेरे का सामना करने की तैयारियाँ शुरू कर दीं। इस स्थान पर थोड़ी सी सेना थी। परन्तु उन सबमें लगन थी और उनको यथास्थान नियुक्त कर दिया गया था। नगर के लोग स्वामिभक्त थे और उनमें वड़ा जोश था।

दो दिन वाद जब तैयारियाँ हो चुकीं तो खुसरु नगर के सामने आ पहुंचा और उसने घेरा शुरू कर दिया। उसने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि जैसे भी हो सके एक दरवाजे को जला दिया जाय। उसने यह भी वचन दिया कि किले को छीन लेने के बाद नगर को सात दिन तक लूटा जा सकता है और वहाँ की स्त्रियों और बच्चों को वन्दी बनाया जा सकता है। इन वदमाशों ने अन्य कोई उपाय न देखकर एक दरवाजे को आग लगा दी। परन्तु दिलावरखाँ और अन्य अफसरों ने एक दूसरी आड़ दरवाजे के पास ही खड़ी कर दी। उस समय सईदखाँ का डेरा चिनाव नदी पर था। जब उसे इन वातों का पता लगा तो उसने शीघ्रता से लाहौर की ओर कूच कर दिया। रावी नदी पर पहुंचने पर उसने दुर्गरक्षकों को अपने आगमन की सूचना दी और उनसे कहलवाया कि जैसे-तैसे उसको किले में घुसा लिया जाय। तव उन्होंने बीस नावें भेजकर उसको और कुछ अनुचरों को किले में भेज दिया।

घेरे के नवें दिन खुसरु को सूचना दी गई कि उसका और उसके साथियों का पीछा करती हुई शाही सेना निकट आ पहुँची है। कोई अन्य उपाय न देखकर उसने शाही सेना का मुकावला करने का निश्चय किया। हिन्दुस्तान के नगरों में लाहौर बहुत बड़ा नगर है। छः सात दिन में वहाँ बहुत से आदमी एकत्र कर लिए गये थे। मुझे सूचना मिल चुकी थी कि दस-वारह हजार आदमी लाहौर से कूच करके मेरी अग्रसेना पर रात में आक्रमण करने के लिए तैयार हैं। यह खबर मुझे आगाकुली के बाग में 16 तारीख की रात को मिली थी। 20 तारीख की रात को जोर का पानी बरस रहा था, तो भी मैं दूसरे दिन प्रातःकाल सुलतानपुर पहुंच गया। मैं वहाँ दोपहर तक ठहरा और उसी समय शाही सेना और विद्रोहियों में युद्ध हो गया। मुइजुज मुल्क मेरे लिए कुछ खाना लाया था और मैं शुरू ही करने वाला था कि मेरे पास सूचना आई। यद्यपि मुझे अच्छी भूख लगी हुई थी तो भी मैंने एक ग्रास खाया और फिर मैं सवार हो गया। मैं जानता था कि मेरी सेना कम है। मुझे इस बात की भी चिन्ता थी कि अपने आदमियों को उत्साहित किया जाय।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इसलिए मैं रात और दिन काम को आगे बढ़ाने में लग गया। मैंने अपना वड़ा कवच मँगवाया। परन्तु कोई न लाया। इसलिए मेरे पास एक भाला और एक तलवार, केवल ये ही दो शस्त्र थे। ईश्वर के अनुग्रह पर विश्वास करके मैंने काम शुरू किया और कोई आगा पीछा नहीं किया। शुरू में मेरे पास पचास सवारों से अधिक नहीं थे और किसी को यह मालूम नहीं था कि उस दिन लड़ाई होने ही वाली है। गोविन्दवाल के पुल के पास मेरे अच्छे बुरे आदमियों की संख्या चार या पाँच सौ हो गई थी। पुल पार करने के बाद मेरे पास विजय का समाचार आया। समाचार लाने वाला आदमी मेरा पोशाकी था और उसका नाम शमशेर था। मैंने उसे खुशखबरखाँ की उपाधि दी। मीर जमालुद्दीन भी, जिसको मैंने खुसरु को समझाने के लिए भेजा था, उसी समय आ पहुँचा और उसने खुसरु की सेना की शक्ति और संख्या की ऐसी बातें कहीं कि मेरे लोग डर गये। परन्तु फिर विजय के समाचार की बाद में आने वाले सन्देशवाहकों ने पुष्टि की। सईद सीधा-सादा आदमी था। उसे समाचार पर विश्वास न हुआ और उसने कहा कि जितनी बड़ी सेना उसने देखी है, उसको शेखफरीद की छोटी सी सेना, जो तैयार भी नहीं थी, नहीं हरा सकती। परन्तु फिर खुसरु की पालकी आ पहुँची। उसके साथ दो नाजिर थे। तब सईद को विश्वास हुआ और घोड़े पर से उतर कर उसने मेरे कदमों में सिर रख कर बधाई दी।

इस युद्ध में शेख फरीद ने बड़े जोश और वफादारी से काम किया था। उस युग के वीर, बाढ़ के सैयदों को उसने अग्रभाग में रखा था और वे बड़ी ही वीरता से लड़े थे। इस जाति के सरदार सैयद महमूदखाँ ने बड़ी वीरता दिखाई थी। उसके अठारह घाव लगे थे। इसी जाति के दूसरे व्यक्ति जलालखाँ के सिर में एक तीर लगा था जिससे कुछ ही दिन में उसकी मृत्यु हो गई थी। इस लड़ाई में बाढ़ के सैयदों की संख्या पचास या साठ से अधिक न थी। इन लोगों ने एक हजार सवारों और पाँच सौ बन्दूकचियों को वापस धकेल दिया था। सैयदों के इसमें टुकड़े-टुकड़े हो गये थे। सैयद कमाल और उसके भाइयों को अग्र सेना की सहायतार्थ भेजा गया था। उसने शत्रु के एक पक्ष पर प्रबल आक्रमण किया था। दाँये पार्श्व ने 'बादशाह जिन्दाबाद' का नारा लगाया और शत्रु त्रस्त होकर इधर-उधर भाग गये। उसके लगभग चार सौ आदमी मारे गये और खुसरु के जवाहरात की सन्दूक, जो उसके साथ थी, छीन ली गई।

मैंने महावतखाँ और अलीबेग अकबरशाही के नेतृत्व में एक सेना खुसरु का पीछा करने के लिए भेजी और कहा कि वह जिधर भी जाए उसका पीछा किया जाय। मैंने यह भी निश्चय किया कि यदि वह काबुल जाय तो मैं उसका पीछा करूँगा और जब तक वह मेरे हाथ न आ जायेगा मैं वापस नहीं लौटूँगा। यदि वह काबुल में नहीं ठहरेगा और बदखशाँ या उधर के अन्य प्रान्तों में जायेगा तो काबुल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में महावतखाँ को छोड़कर मैं उधर की ओर उसका पीछा करूँगा अन्यथा वह उजबेक लोगों से मिल जायेगा और मेरे राजसिंहासन को कलंक लगेगा।

28 तारीख को मेरा डेरा लाहौर से सात कोस दूर जहान में रहा। उस दिन कुछ सेवकों के साथ खुसरु चेनाव नदी के तट पर आया। पराजय के बाद जो लोग उसके साथ भाग गये थे उनमें मतभेद हो गया। उसके अनुचरों में अधिकांश अफगान और हिन्दुस्तानी थे। वे सब हिन्दुस्तान में वापस लौटकर गड़बड़ मचाना चाहते थे। हुसैन वेग की स्त्रियाँ और बच्चे तथा कोप काबुल की ओर था। वह काबुल की ओर जाने के पक्ष में था। जब उसने यह मार्ग ग्रहण कर लिया तो अफगान और हिन्दुस्तानी उससे अलग हो गये। चिनाव पहुँचने पर वह शाहपुर के निकट जहाँ यथानियम नाव चलती है वह नदी पार करना चाहता था परन्तु उसको वहाँ नावें नहीं मिलीं और वह सुधारा के नाव घाट पर चला गया। वहाँ उनको एक नाव मिली लेकिन कोई खेने वाला नहीं था। एक दूसरी नाव भी थी परन्तु वह लकड़ी और घास की बनी हुई थी। खुसरु के पराजय से पहले एक आदेश तमाम जागीरदारों, रक्षकों और पंजाब के नाव चलाने वालों के नाम जारी हो चुका था कि उनको सावधान रहना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप नाव घाट और नदियों पर चौकसी रखी जाती थी। हुसैन वेग दो नावें लेकर खुसरु को पार करने वाला था परन्तु ठीक इसी समय सुधारा का चौधरी आया और उसने देखा कि रात में ही एक समूह नदी को पार करने वाला है। उसने लकड़ी और घास की नावों के आदमियों से कहा कि ऐसा नहीं किया जाय। उनको बादशाह का हुक्म सुनाया कि रात में कोई नाव नदी पार नहीं करे। जब इस प्रकार विरोध हुआ और शोर मचा तो बहुत से आदमी एकत्र हो गये और नाव वालों से नावें छीन ली गईं परन्तु किसी ने उन्हें पार नहीं उतारा। अब्दुल कासिमखाँ गुजरात के नाव घाट का हाकिम था। जब उसे सूचना मिली कि कुछ लोग चिनाव नदी को पार करना चाहते हैं तो अपने पुत्रों और कुछ सवारों के साथ वह वहाँ पहुँचा। हुसैन वेग को चार नावें मिलीं और वह पार उतरना चाहता था परन्तु अन्तिम नाव रेत में फँस गई। प्रातःकाल अबुल कासिम और ख्वाजा खिजर ने, जो नावों का दरोगा था, कुछ लोग इकट्ठे किये और नदी के पश्चिमी तट पर कब्जा कर लिया। पूर्वी किनारे पर जमींदारों का अधिकार था। मैंने कुछ सेना सईदखाँ के नेतृत्व में भेज रक्खी थी। वह अब अच्छे मौके से आ गई और उसने खुसरु को गिरफ्तार करने में सहायता दी। इस मास की 29 तारीख को लोगों ने हाथियों पर और नावों में बैठ कर उसको दबा लिया। अगले दिन मैंने सुना कि वह गिरफ्तार हो गया। तब मैंने तुरन्त ही अमीर उल-उमरा को रवाना किया कि वह खुसरु को मेरे सामने उपस्थित करे। सरकार के काम में यह प्रायः होता है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी निर्णय बुद्धि के अनुसार कार्य करना होता है। मैंने कई समितियाँ बुलाईं। इनमें दो उल्लेख के योग्य हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पहिली समिति उस समय बुलाई जब अपने मित्रों की सम्मति के विरुद्ध मैं इलाहाबाद से रवाना हुआ और अपने पिता के पास उपस्थित होने के लिए गया। इससे मुझे उसकी क्षमा प्राप्त हो गई और मैं बादशाह बन गया। दूसरी समिति मैंने उस समय बुलाई जब मैंने खुसरु का पीछा करने का निश्चय किया और जब तक मैंने उसको पकड़ न लिया तब तक विश्राम नहीं किया। 3 मोहर्रम 1015 हिजरी को मिर्जा कामरान के बाग में खुसरु मेरे सामने उपस्थित किया गया। उसके हाथ उसकी टाँगों से जंजीरों से बँधे हुए थे और चंगेजखाँ के नियम के अनुसार उसे बाँई ओर से लाया गया था। हुसैन बेग उसके दांई ओर था और अब्दुल अजीज उनके बाँई ओर। खुसरु उनके बीच में खड़ा हुआ कांप रहा था और रो रहा था। हुसैन बेग ने समझा कि सारा अपराध उस पर थोप दिया जायगा। इसलिए वह बहुत दुःख के साथ बोलने लगा परन्तु लोगों ने उसे बात न करने दी। मैंने खुसरु को हिरासत में रख दिया और आदेश दिया कि इन दो बदमाशों को गाय और गधे के चमड़ों में बन्द करके गधों पर बिठा दिया जाय और इनके चेहरे गधों की पूंछ की ओर किये जाएँ और इस दशा में उनको नगर के चारों ओर घुमाया जाय। गाय का चमड़ा गधे के चमड़े से जल्दी सूख जाता है। इसलिए हुसैन बेग केवल चौथे पहर तक जीवित रहा और फिर मर गया। अब्दुल अजीज गधे के चमड़े में था। उसको कुछ गीला भी कर दिया गया था। इसलिए वह जीवित रह गया।

जिलहिज्जा के अन्तिम दिन से 8 मोहर्रम तक खराब मौसम के कारण मैं मिर्जा कामरान के बाग में ही ठहरा रहा। इस चढ़ाई में जो सफलता प्राप्त हुई उसका श्रेय मैंने शेख फरीद को दिया और उसे मुर्तजाखाँ की उपाधि से विभूषित किया। अपने शासन को पुष्ट और दृढ़ करने के लिए मैंने आदेश दिया कि बाग से नगर तक सूलियों की दो पंक्तियाँ बनाई जाएँ और विद्रोही अवेमाकों और अन्य लोगों को जिन्होंने इस उत्पात में भाग लिया है इन पर टाँग दिया जाय और इस प्रकार उन्हें घोर वेदनापूर्ण दण्ड दिया जाय। चिनाव और बेहात के बीच के जमींदार वफादार बने हुए थे इसलिए उनमें से हर एक को मदद-ए-माश के रूप में कुछ जमीनें दी।

अभी यह निश्चय नहीं हुआ था कि खुसरु का क्या किया जाय। आगरे के आसपास का हिस्सा विद्रोह का प्रधान क्षेत्र था। इसलिए मैं चाहता था कि वहाँ के खतरनाक लोगों का सफाया कर दिया जाय, अन्यथा खुसरु के दावे को सहायता मिलती रहेगी। इसलिए मैंने अपने पुत्र परवेज को आदेश दिया कि राणा के विरुद्ध कार्य करने के लिए कुछ सरदारों को छोड़कर वह आसफखाँ और दो सौ अन्य लोगों के साथ आगरा जाय और वहाँ नगर की रक्षा और नियन्त्रण का प्रबन्ध करे परन्तु उनके आने से पहले ही खुसरु का प्रयास विफल कर दिया गया था और मेरे मित्रों को इससे सन्तोष हो गया था। इसलिए मैंने परवेज को आदेश दिया कि

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आकर मुझसे मिले। 9 मोहर्रम को मैंने लाहौर में प्रवेश किया। मेरे मित्रों और हितैषियों ने मुझे सलाह दी कि मैं आगरा लौट जाऊँ क्योंकि आगरा, गुजरात, दक्खिन और बंगाल में गड़बड़ मची हुई थी। परन्तु यह सलाह मुझे उचित नहीं लगी क्योंकि मुझे कन्धार के शासक शाहबेगखाँ के पत्रों से मालूम हुआ था कि कुछ ऐसी घटनाएँ हुई हैं जिनसे प्रगट होता है कि काजिलवासियों की सीमा के अमीर कन्धार पर आँख लगाये हुए हैं। लाहौर में ही मुझे सूचना मिली कि काजिलवासों ने तीन ओर से कन्धार के दुर्ग को घेर लिया है और यह स्पष्ट है कि यदि इसमें विलम्ब किया तो यह खतरनाक होगा। इसलिए मैंने गाजीखाँ बेग और कुछ अन्य लोगों के नेतृत्व में उधर सेना भेजी। अगले खतरे को रोकने के लिए मैंने काबुल जाने का निश्चय किया और लाहौर के आसपास घूमना स्थगित कर दिया।

शासन का दूसरा वर्ष

मेरे शुभ शासन का द्वितीय वर्ष 22 जिलकदा 1015 हिजरी (10 मार्च 1603 ई०) को शुरू हुआ।

काबुल की यात्रा

7 जिलहिज्जा को शुभ मुहूर्त में मैं लाहौर के दुर्ग से रवाना हुआ और रावी नदी को पार करके दिल आमेज बाग में उतरा और वहाँ चार दिन ठहरा। मैंने रविवार 19 फरवरदीन उसी बाग में व्यतीत किया। उस दिन सूर्य ने मेष राशि में प्रवेश किया था। कुछ नौकरों की पदोन्नति कर अनुग्रहीत किया। ईरान के राजदूत हुसैन बेग को दस हजार रुपए नकद दिए गए। मैंने कलीजखाँ मीरान सदर-ए-जहाँ और मीर शरीफ आमली को लाहौर में छोड़ा और उन्हें आदेश दिया कि एक-दूसरे से मिलकर सब काम करें।

सोमवार के दिन मैंने उस बाग से एक गाँव की ओर प्रयाण किया। इस गाँव का नाम हरीपुर है और यह नगर से साढ़े तीन कोस की दूरी पर है। मंगल के दिन मेरे झन्डे जहाँगीरपुर में फहराने लगे, यह मेरा शिकारगाह था। इस गाँव के निकट मेरे आदेश से मेरे राज नामक हिरन के ऊपर एक मीनार बनाई गई। यह मेरे पास बड़ा लड़ाकू जानवर था और यह जंगली जानवरों को लुभाकर मेरी ओर शिकार के लिए ले आता था। मुल्ला मोहम्मद हुसैन कश्मीरी ने, जो उस समय सबसे अच्छा खुशखत लिखने वाला था, एक पत्थर के टुकड़े पर ये शब्द खोदे "इस मनोरम स्थान पर बादशाह नूरुद्दीन मोहम्मद जहाँगीर ने एक हिरन पकड़ा जो एक महीने में बड़ा पालतू बन गया और शाही हिरनों में सर्वोत्तम माना जाने लगा।" इस जानवर की खातिर मैंने आदेश दिया कि इस जंगल में कोई हिरणों का शिकार न करे और इसका मांस उसी प्रकार कानून के विपरीत माना जाय जैसे गाय का मांस हिन्दुओं के लिए या सूअर का मांस मुसलमानों के लिए माना जाता है। इस कब्र का पत्थर भी हिरन के आकार का बनाया गया। मैंने इस परगने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के जागीरदार सिकन्दर भाई को आदेश किया कि जहाँगीरपुर में एक दुर्ग का निर्माण किया जाय।

वृहस्पतिवार तारीख 14 को हमने चन्दवाला परगने में डेरे लगाए और एक मंजिल के वाद शनिवार को हाफिजावाद पहुंचे और उन भवनों में ठहरे जो मीर किरानुद्दीन के निरीक्षण में तैयार किए गए थे। यह यहाँ का किरोड़ी था। दो मंजिल के वाद में चिनाव के तट पर पहुँच गया।

वृहस्पतिवार 21 जिलहिज्जा को मैंने नावों के पुल द्वारा नदी पार की और गुजरात के परगने में अपने डेरे लगाए। जव वादशाह अकवर कश्मीर जा रहा था तो उसने नदी के दूसरी ओर एक किला वनवाया था और गूजर लोगों को, जो पहले लूटमार किया करते थे, उसमें वसाया था। इसलिए इस स्थान का नाम गुजरात रखा गया और यह अलग ही एक परगना वना दिया गया। गूजर लोग प्रायः दूध और दही पर निर्वाह करते हैं और कभी-कभी जमीन भी जोतते हैं।

शुक्रवार को हम खवासपुर पहुंचे जो गुजरात से पाँच कोस है और जिसे शेरखां पठान के एक सेवक खवासखां ने वसाया था। इसके आगे दो मंजिल पार करके हम वेहात दरी के तट पर पहुंचे और वहाँ हमने अपने डेरे लगाए। रात में वड़ी आँधी चली, काले वादलों से आसमान ढक गया और ऐसी घोर वर्षा हुई कि वड़े-वूढ़े लोगों ने अपने जीवन में ऐसा पानी कभी नहीं देखा था। वर्षा के वाद वड़े-वड़े ओले पड़े जो मुर्गी के अंडों के वरावर थे। पानी के प्रभाव ने और वायु के वेग ने पुल तोड़ दिया। मैंने और मेरी महिलाओं ने एक नाव में बैठकर नदी पार की। दूसरे लोगों के लिए वहुत कम नावें थीं। इसलिए मैंने आदेश दिया कि जव तक नावों की मरम्मत न कर दी जाय तव तक वे बैठे रहें। यह काम एक सप्ताह में पूरा हो गया। तब सारी सेना ने नदी पार कर ली।

वेहात नदी का निकास कश्मीर के एक चश्मे से होता है जिसका नाम वीरनाग है। हिन्दी भाषा में इसका अर्थ साँप होता है। इससे प्रकट होता है कि किसी समय इस स्थान पर एक वहुत वड़ा सर्प रहता होगा। मैंने अपने पिता के जीवनकाल में यह स्थान दो वार देखा था। यह कश्मीर नगर से वीस कोस की दूरी पर है। यह चश्मा एक निम्न स्थान से निकलता है जिसका आकार अठपहलू है और जो 20 गज लम्वा और 20 गज चौड़ा है। इसके आसपास भक्त लोगों की कुटियों के चिह्न, वहुत से पत्थर के वने हुए कमरे और गुफाएँ हैं। इसका जल इतना स्वच्छ है कि यद्यपि इसकी गहराई का अनुमान नहीं लगाया जा सकता तो भी यदि इसमें पोस्त का वीज डाला जाय तो वह इसके तले में पहुँचने तक दिखाई देगा। इसमें वहुत अच्छी मछलियाँ हैं। मुझसे कहा गया था कि इसकी गहराई का पता नहीं चलता। इसलिए मैंने आदेश दिया कि रस्से के एक सिरे से पत्थर बाँध-कर इसमें डाला जाय। इस प्रकार पता लगा कि इसकी गहराई मनुष्य के कद से

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दूनी है । राज्याभिषेक से बाद मैंने आदेश दिया कि इसके सब ओर पत्थर लगाए जाएं । इसके चारों ओर एक वाग लगाया जाय और इसमें से जो एक छोटी-सी नदी निकलती है उसके दोनों बाजुओं को भी इसी प्रकार अलंकृत किया जाय । इस चश्मे के सब ओर ऐसे सुन्दर कमरे और भवन बना दिए गए कि आवाद संसार में उनकी बराबरी नहीं हो सकती थी । जब नदी पम्पुर नामक गाँव के निकट पहुंचती है तो बहुत चौड़ी हो जाती है । यह गाँव नगर से दस कोस दूर है ।

कश्मीर की सारी केसर इसी गाँव में उत्पन्न होती है । शायद संसार में ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ केसर इतनी अधिक मात्रा में उत्पन्न होती हो । यहाँ प्रतिवर्ष केसर की उत्पत्ति पाँच सौ हिन्दुस्तानी मन या चार हजार काबुली मन है । एक बार मैं अपने पिता के साथ इस स्थान पर ऐसे मौसम में आया था जब यहाँ इसके पौधे पुष्पान्वित हो रहे थे । अन्य वृक्षों पर पहले शाखाएँ फिर पत्ते और उसके बाद फूल लगते हैं । परन्तु इस पौधे की स्थिति इसके विपरीत है । यह भूमि से दो इंच ऊँचा होने पर ही फूल देने लगता है । इसका पुष्प नीले से रंग का होता है । इसकी चार पंखड़ियाँ और नारंगी रंग के चार धागे होते हैं । लम्बाई में यह अंगुली के एक पोरे के बराबर होता है । केसर के खेत कोई एक कोस और कोई आधा कोस लम्बे होते हैं और दूर से बड़े ही सुन्दर दिखाई देते हैं । जिस मौसम में इसका संग्रह किया जाता है तो इसकी सुगन्ध इतनी तेज होती है कि लोगों को सिर दर्द होने लगता है । मैं एक गिलास शराब पी चुका था तथापि मुझ पर भी इसका असर हो गया । जो कश्मीरी लोग केसर का संग्रह कर रहे थे उनसे मैंने पूछा कि क्या उन पर भी इसका प्रभाव होता है । मुझे उनके उत्तर से आश्चर्य हुआ, उन्होंने मुझसे कहा कि वे सिर दर्द का नाम भी नहीं जानते ।

वीरनाग नामक चश्मे से जो नदी निकलती है उसे कश्मीर में वेहात कहते हैं । फिर यह बड़ी हो जाती है और दोनों तरफ से कई छोटी-छोटी नदियाँ इसमें आकर गिरती हैं । यह नगर के बीच में होकर निकलती है । कहीं-कहीं इसकी चौड़ाई एक तीर की दौड़ से अधिक नहीं है । इसका पानी कोई नहीं पीता क्योंकि यह बहुत गन्दा और खराब है । सब लोग डल नामक एक तालाब का पानी पीते हैं जो नगर के निकट स्थित है । इस तालाब में गिरने के बाद वेहात नदी बारहमुला, पकली और दमतौर होकर जाती है और फिर पंजाब में प्रवेश करती है । कश्मीर में अनेक नदियाँ और चश्मे हैं परन्तु दरहलार सर्वोत्तम नदी है । यह शाहबुद्दीनपुर गाँव के निकट वेहात से मिलती है ।

यह गाँव कश्मीर में सबसे अधिक प्रसिद्ध स्थानों में है । यह हरे मैदान में स्थित है जहाँ पर लगभग सौ सुन्दर सादे वृक्ष हैं जिनकी शाखाएँ आपस में मिली हुई हैं । इनसे गहरी और विस्तृत छाया होती है । धरातल ऐसी हरियाली से आच्छादित है कि इस पर कालीन डालने की आवश्यकता नहीं होती । यह गाँव

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुलतान जैन-उल-आबीदीन ने बसाया था जिसने कश्मीर पर बावन वर्ष तक दृढ़तापूर्वक राज्य किया था। इसको वहाँ बड़ोशाह कहा जाता है। इसने कई करामातें की थीं। उसकी बनाई हुई इमारतों के बहुत से खंडहर यहाँ दिखाई देते हैं। इनमें से एक का नाम बरीन लंका है। यह उसने उलूरनाम झील के बीच में बड़ी कठिनता से बनवाई थी। इस झील का घेरा तीन या चार कोस है और यह बड़ी गहरी है। इस गाँव की नींव के लिए पत्थर नावों में भर-भरकर झील में डाले गए थे। जब इससे काम नहीं चला तो हजारों नावें पत्थरों से भरकर डुबाई गईं। तब बड़े परिश्रम के बाद एक-सौ गज आयताकार नींव पानी के ऊपर बनी और इसको बराबर किया गया। इसके एक पार्श्व पर महल खड़ा किया गया और एक प्रार्थना स्थान बनाया गया। इससे ज्यादा सुन्दर इमारत कहीं नहीं मिल सकती। जेन-उल-आबदीन नाव में बैठकर इस स्थान पर आया करता था और वहाँ सर्वशक्तिमान परमात्मा की प्रार्थना में अपना समय लगाया करता था। ऐसा कहा जाता है कि उसने कई बार उस स्थान पर चालीस दिन व्यतीत किए थे।

एक दिन उसका एक पुत्र इस पवित्र स्थान पर आया। उसके हाथ में नंगी तलवार थी और उसका इरादा अपने बाप को मारने का था परन्तु ज्यों ही उसकी दृष्टि अपने पिता पर पड़ी, पिता के प्रति स्वाभाविक प्रेम जगा और वह पिता के शाही तेज से भयभीत हो गया और उसने अपना विचार छोड़ दिया। कुछ समय पश्चात् सुलतान बाहर आया और अपने पुत्र के साथ एक ही नाव में वापस शहर को लौट आया। दोपहर के समय उसने अपने पुत्र से कहा कि उसकी माता वहीं रह गई है। उसे जाकर वह ले आवे। जब शहजादा उस स्थान पर गया तो उसे यह देखकर अचम्भा हुआ कि सुलतान भी वहीं है। उसको अपने कृत्य पर बड़ा खेद हुआ और उसने तुरन्त ही उसके चरणों में गिर कर अपने व्यवहार के लिए क्षमा माँगी।

ऐसा कहा जाता है कि सुलतान ने ऐसी कई करामातें की थीं और वह चाहे जैसा स्वरूप धारण कर सकता था। उसने „अपने पुत्रों की आदतों पर अन्य ढंग पर विचार किया। वह जानता था कि वे गद्दी पर बैठने के लिए बड़े आतुर हैं। उसने कहा कि उसके लिए ताज और तख्त छोड़ना तथा मर जाना बहुत आसान है परन्तु उसके बाद वे कुछ नहीं कर सकेंगे क्योंकि उनका शासन अधिक नहीं चलेगा और थोड़े ही दिनों में समाप्त हो जायगा और उनको अपने व्यवहार का पुरस्कार मिल जायगा। इसके बाद उसने खाना-पीना छोड़ दिया और चालीस दिन तक उसी प्रकार रहा। इस अवधि में उसने झपकी भी न ली और एक बहुत बड़े सन्त की भाँति अपना सारा ध्यान सर्वव्यापक परमात्मा की उपासना में लगाया। चालीसवें दिन उसने अपने प्राण त्याग दिए और ईश्वर की दया प्राप्त की।

उसके तीन लड़के थे—आदमखाँ, हाजीखाँ और बहरामखाँ। उनके आपस में झगड़ा हुआ और अन्त में उनके पिता का राज्य उनके हाथ में नहीं रहा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कश्मीर का राज्य चार लोगों के हाथ में आ गया। ये लोग पहले साधारण सिपाही थे। इस जाति के तीन शासकों ने उस चश्मे के तीन ओर तीन इमारतें बनवाईं जिसकी नींव जेन-उल-आबिदीन ने उलूर नामक झील में डाली थी परन्तु इनमें से कोई भी इमारत इतनी दृढ़ नहीं है जैसी सुलतान की है।

वसन्त और ग्रीष्म ऋतुओं में कश्मीर बड़ा सुखद प्रदेश है। मैं वहाँ गर्मी के दिनों में गया तो मुझे यह अत्यन्त मनोहर प्रतीत हुआ। मैं वहाँ वसन्त ऋतु में कभी नहीं गया। परन्तु मुझे आशा है कि मैं कभी वहाँ इस ऋतु में भी जाऊँगा।

शनिवार 1 मोहर्रम को मैं वेहात से रोहतास के लिए रवाना हुआ। बीच में केवल एक मंजिल थी। रोहतास का दुर्ग शेरखाँ अफगान द्वारा बनाए गए भवनों में एक है। यह नदी के नालों में बनाया गया है। यह कल्पना नहीं की जा सकती थी कि वहाँ पर ऐसे सुदृढ़ दुर्ग का निर्माण हो सकता है। यह प्रदेश गक्खड़ लोगों के मुल्क के पास है जो बहुत उत्पाती और दुखदाई लोग हैं। इसलिए शेरखाँ के मस्तिष्क में यह बात आई कि इन लोगों पर नियन्त्रण रखने के लिए और उन्हें डराए रखने के लिए यहाँ दुर्ग बनाया जाय। शेरखाँ की मृत्यु के समय इसका कुछ ही भाग बन पाया था। परन्तु उसके पुत्र सलीमखाँ ने इसको पूरा कर दिया। इसके एक दरवाजे के ऊपर एक पत्थर पर इसकी कीमत खुदी हुई है और यह पत्थर दीवार में लगा हुआ है। यह कीमत सोलह करोड़ दस लाख दाम से कुछ अधिक है जो चौंतीस लाख पच्चीस हजार हिन्दुस्तानी रुपए या एक लाख बीस हजार ईरानी तुमार या एक करोड़ इक्कीस लाख पचहत्तर हजार तुरानी खानी के बराबर होते हैं।

मंगलवार तारीख 4 को पौने पाँच कोस कूच करके मैं टीला पहुँचा। गक्खड़ भाषा में इसका अर्थ पहाड़ी है।

उस स्थान से मैंने मकरा नामक गाँव की ओर कूच किया। इन लोगों की भाषा में यह एक झाड़ी का नाम है जिस पर सफेद पुष्प लगते हैं और उनमें कोई गंध नहीं होती। टीला से मकरा तक मैंने रास्ते भर नदी के पेटे में कूच किया जिसमें उस समय पानी बह रहा था और जिसमें एक प्रकार की झाड़ियाँ फूलों से लदी हुई थीं। इनसे बड़ी मधुर गन्ध आ रही थी। हिन्दुस्तान में इस झाड़ी में हमेशा फूल लगे रहते हैं। इस नदी के दोनों ओर ये झाड़ियाँ बहुत थीं। मैंने अपने निजी सवारों और पैदल अनुचरों को आज्ञा दी कि इसके फूलों के गुच्छों को वह अपनी पगड़ियों में लगा लें। मैंने यह भी आदेश दिया कि जो इस प्रकार अपने आपको नहीं सजाएँ उनके सिरों से पगड़ियाँ उतार लीं जाएँ। इस प्रकार बड़ा सुन्दर बाग बन गया।

वृहस्पतिवार तारीख 6 को हतया में डेरा लगाया गया। इस बार कूच करते समय बहुत से पलाश वृक्ष फूलों से लदे हुए मिले। ये झाड़ी भी हिन्दुस्तान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के जंगलों की विशेषता है। इसके पुष्प निर्गन्ध और गहरे नारंगी रंग के होते हैं। इसका तना काला होता है। फूलों का आकार लाल गुलाब के बराबर या कुछ बड़ा होता है। यह दृश्य ऐसा था कि उस पर से आँख उठाना बड़ा कठिन था। उस समय वायु बड़ी मनोहर थी। कुछ बादल सूर्य के प्रकाश को ढक रहे थे और हल्की सी बूंदाबांदी भी हो रही थी। इसलिए मैं मद्यपान करने लगा। सारांश यह है कि इस कूच के समय मैंने खूब ही आनन्द उठाया। इस स्थान का नाम हतया इसलिए है कि इसको हाती नामक गक्खड़ ने बसाया था। भारगला से हतया तक का प्रदेश पोथुवार कहलाता है। इस प्रदेश में इने-गिने ही कौए मिलते हैं। रोहतास और हतया के बीच का प्रदेश बूग्याल लोगों का है। ये गक्खड़ जाति के लोग हैं।

शुक्रवार के दिन मैं पौने पाँच कोस कूच करके पक्का पहुँच। इसका यह नाम इसलिए है कि यहाँ पर पक्की ईंटों की एक सराय बनी हुई है और हिन्दी भाष। में पक्का का अर्थ है तपाया हुआ। रास्ते में धूल ही धूल थी। इसलिए बड़ी परेशानी हुई और कूंच में बड़ा कष्ट हुआ। यहाँ पर काबुल से मँगवाए हुए बहुत से घोड़े जख्मी हो गए।

शनिवार तारीख 8 को मैं साढ़े चार कोस चलकर खर नामक स्थान पर पहुंचा जिसका अर्थ गक्खड़ भाषा में 'ऊबड़ खाबड़' जमीन होता है। इस प्रदेश में वृक्ष बहुत ही कम हैं।

रविवार को मैंने अपना डेरा रावलपिंडी के दूसरी ओर लगवाया। इस स्थान का नाम रावलपिंडी इसलिए है कि इसको रावल नामक एक हिन्दू ने बसाया था और उस भाषा में पिंडी का अर्थ 'गांव' होता है। इस स्थान के निकट नाले में एक पानी की धारा है जो एक तालाब में पहुंचती है। इस स्थान में मनोहरता की कोई कमी नहीं थी इसलिए मैं वहाँ कुछ समय के लिए ठहरा। मैंने गक्खड़ों से पूछा कि पानी कितना गहरा है। उन्होंने कोई निश्चित उत्तर न दिया और कहा "हमने अपने पूर्वजों से सुना है कि इस पानी में घड़ियाल है और जो कोई पशु इसमें जाता है उसे वे आहत करके मार डालते हैं। इसलिए इसमें प्रवेश करने का किसी को साहस नहीं होता।" मैंने आदेश दिया कि एक भेड़ को उस पानी में फेंक दिया जाय। वह सारे तालाब में तैर कर सुरक्षित बाहर निकल आई। फिर मैंने एक तैराक को उसमें जाने का आदेश दिया और वह भी सुरक्षित बाहर निकल आया। इसलिए यह स्पष्ट हो गया कि गक्खड़ों का कहना निराधार था। इस तालाब की चौड़ाई एक तीर की मार के बराबर थी।

सोमवार के दिन मैंने खरबूजे पर डेरा लगवाया। पिछले दिनों में गक्खड़ लोगों ने यहाँ पर एक गुम्बज सा बना दिया था जिसमें वे यात्रियों से चुंगी वसूल किया करते थे। इस गुम्बज का आकार खरबूजे का सा था। इसलिए इसका नाम खरबूजा हो गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मंगलवार तारीख 11 को डेरा कालापानी पहुँचा। इस मंजिल पर मारगल्ला नामक एक पहाड़ी है। हिन्दी भाषा में मार का अर्थ है "आम रास्ते पर लूटना" और गल्ला का अर्थ है 'कारवां' अर्थात् यह ऐसा स्थान है जहां पर कारवां लूट लिए जाते हैं। गक्खड़ों के प्रदेश की सीमा यहाँ तक आई हुई है। ये लोग विचित्र पशु हैं। ये निरन्तर परस्पर लड़ते झगड़ते रहते हैं। मैंने इनमें समझौता कराने के लिए भरसक प्रयत्न किया परन्तु सब निष्फल हुआ। "मूर्ख लोगों का जीवन विपत्तिमय समय में बड़ा सस्ता होता है।"

बुधवार के दिन हमारा डेरा बाबा हसन अबदाल में लगाया गया। इस स्थान से लगभग एक कोस उत्तर की तरफ एक ढालू जगह है जिस पर से पानी बड़े वेग से बहता है। काबुल के रास्ते में इस प्रकार की धारा कोई नहीं है परन्तु कश्मीर के रास्ते में ऐसी दो तीन हैं। जहाँ से पानी बहता है उस स्थान के बीच में राजा मानसिंह ने एक छोटा-सा भवन बनवाया था। इसमें कितनी ही मछलियाँ हैं जिनकी लम्बाई आधा या पौन गज है। इस मनोहर स्थान पर मैं तीन दिन ठहरा और अपने घनिष्ठ मित्रों के साथ यहाँ मैंने मदिरा-पान किया। मैंने कुछ मछलियाँ भी पकड़ीं। अब तक मैंने कभी सफरा जाल नहीं फेंकी थी। हिन्दी में इसको भँवरजाल कहते हैं। इसका फेंकना कुछ कठिन है परन्तु मैंने फेंकी और बारह मछलियाँ पकड़ीं। मैंने इनके नाकों में मोती लगवा दिए और इन्हें पुनः पानी में जाने दिया। मैंने यहाँ का इतिहास जानने वाले निवासियों से पूछा कि बाबा हसन अबदाद कौन था परन्तु कोई भी निश्चित उत्तर नहीं दे सका। यहाँ सबसे अधिक प्रसिद्ध वह स्थान है जहाँ पहाड़ी के नीचे से एक चश्मा निकलता है। यह बहुत ही निर्मल है और मीर खुसरु की निम्नलिखित शेर इस पर लागू होती है :

"पानी इतना पारदर्शक है कि गहरी रात में भी,
अन्धा इसके पैंदे में रेत के दाने देख सकता है।"

ख्वाजा शमशुद्दीन ख्वादी ने, जो बहुत अर्से तक मेरे आदरणीय पिता का मन्त्री था, यहाँ पर एक छोटा सा ग्रीष्म भवन बनवाया था और एक ऐसा हौज खुदवाया था जिसमें इस चश्मे का पानी जाता था। यहाँ से खेतों में और बागों में पानी दिया जाता था। इसके समीप ही उसने अपने लिए एक गुम्बजदार कब्र बनवाई थी परन्तु यह उसके भाग्य में न था कि उसे इसमें दफनाया जाय। उसके आदेश से इसमें हकीम अब्दुल फतह गिलानी और उसके भाई हकीम हुमाम दफनाए गए थे। ये मेरे पिता के घनिष्ठ मित्र थे और इनसे वह अपने भेद की बातें कहा करता था।

15 तारीख को मैंने अमरदी में अपना डेरा लगाया। यह अत्यन्त विचित्र और हरा मैदान है। इसमें किसी प्रकार का कोई टीला या पहाड़ी दिखाई नहीं पड़ती। यहाँ पर और इसके पड़ौस में खातूर और दिलजाक लोगों के आठ हजार

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

घर हैं। ये लोग सब प्रकार का उत्पात उत्पीड़न और राहजनी करते हैं। मैंने आदेश दिया कि सरकार अटक और यह प्रदेश जेनखाँ कोका के पुत्र जफरखाँ के सुपुर्द कर दिए जायँ और उसे निर्देश किया गया कि काबुल से शाही डेरे के वापसी से पहिले ही वह समस्त दिलजाक लोगों को लाहौर की ओर घेर लाए और खतूर लोगों के मुखियाओं को पकड़ ले और बेड़ियाँ डालकर उन्हें कैद में रखे।

सोमवार तारीख 17 को तुरन्त ही एक मंजिल चलकर मैंने नीलाब नदी के तट पर अटक दुर्ग के समीप अपना डेरा लगाया। इस स्थान पर मैंने महावतखाँ का मनसब बढ़ाकर दो हजार पाँच सौ कर दिया। यह दृढ़ दुर्ग मेरे पिता के आदेश से ख्वाजा शमशुद्दीन ख्वाफी के निरीक्षण और निर्देश में बनाया गया था। इन दिनों नीलाब नदी में बड़ी बाढ़ आ रही थी। इस पर अठारह नावों का एक पुल था जिस पर होकर लोग सुरक्षित रूप से आसानी से जा सकते थे। अमीर-उल-उमरा इतना बीमार था कि मैं उसको अटक में ही छोड़ आया। काबुल के आसपास का प्रदेश ऐसा नहीं था कि मेरे लश्कर का वहाँ निर्वाह हो सकता। इसलिए मैंने बख्शियों को आदेश दिया कि मेरे निजी मित्र और घर के लोगों के अतिरिक्त किसी को नदी पार न करने दें। मुख्य लश्कर को आदेश दिया गया कि मेरी वापिसी तक अटक में ही ठहरे।

बुधवार तारीख 19 को मैं शहजादे और कुछ अनुचरों के साथ एक बेड़े पर बैठकर रवाना हुआ और नीलाब नदी को सुरक्षित रूप से पार करके फिर कामा नदी के तट पर उतरा जो जलालाबाद के नीचे बहती है। ये बेड़े बाँस और घास के बनाए गए थे और फुलाए हुए चमड़ों पर रखे गए थे। यहाँ इनको लोग जाल कहते हैं और ये ऐसी नदियों के लिए नावों की अपेक्षा अधिक उपयुक्त हैं जिनमें पत्थर बहुत हैं। मैंने मीर शरीफ आमली और उन अफसरों को जिन्हें लाहौर में काम के लिए छोड़ा था, बारह हजार रुपये गरीब लोगों में बाँटने के लिए दिए और अब्दुर्रजाक मामूली तथा अहदियों के बख्शी बिहारीदास को आदेश दिया कि जफरखाँ के साथ जो लोग पीछे रह गए हैं उनकी सब आवश्यकताओं को पूरी करे।

उस स्थान से आगे बढ़कर एक मंजिल के बाद हम सराय बाड़ा के पास पहुंचे और वहाँ डेरा लगाया। कामा नदी के दूसरे तट पर एक दुर्ग है जिसे जेनखाँ कोका ने यूसुफजाई अफगानों को नष्ट करने के लिए बनवाया था। इसका नाम नौशहरा है और इसके निर्माण में पचास हजार रुपये खर्च हुए थे। लोग कहते हैं कि इन भागों में बादशाह हुमायूँ भेड़ियों की शिकार किया करता था। मैंने अपने पिता को कहते हुए सुना है कि वह अपने पिता के साथ यहाँ के दौरे में दो-तीन बार साथ था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मंगलवार तारीख 25 को मैं सराय दौलतावाद पहुँचा। पेशावर का जागीरदार अहमदवेग कावुली यूसुफजाई और गोरिया खेल जाति के सरदारों को मेरे सामने उपस्थित करने के लिए अपने साथ लाया। मैं उसकी सेवा से सन्तुष्ट नहीं था, इसलिए मैंने उसको हटाकर उस प्रदेश का शासन शेरखाँ अफगान को दे दिया।

बुधवार तारीख 26 को मैं पेशावर के निकट सरदारखाँ के वाग में पहुँचा। उसके पड़ोस में जोगियों का एक पूजा स्थान है जिसका गोरखत्री कहते हैं। मैं वहाँ इसलिए गया कि शायद किसी फकीर से मिलने का अवसर प्राप्त हो जाय और उसकी संगति से मुझे कुछ लाभ प्राप्त हो। परन्तु ऐसा पुरुष पारसमणि या अंका के समान दुर्लभ है। मुझे वहाँ केवल थोड़े से लोग दिखाई दिए जिनको ईश्वर के विषय में कोई ज्ञान न था। उनको देखकर मुझे केवल खेद ही हुआ।

वृहस्पतिवार को जमरूद में डेरा लगाया और शुक्रवार को खैवर दर्रे से गुजरने के वाद 'अली मस्जिद' पहुँचे।[1]

एक हिन्दू हत्यारा

उसी दिन (3 शफर को) राजा विक्रमाजीत का पुत्र कल्याण गुजरात से आया। इस नीच और दुष्चरित्र पुरुष की अनेक दुष्टताओं का समाचार मेरे पास आ चुका था। उसके अनेक जघन्य कर्मों में एक यह था कि उसके घर में एक मुसलमान वेश्या थी। इस भय से कि लोगों को इसका पता लग जाएगा, उसने उस स्त्री के माता-पिता को मारकर अपने ही घर में गाड़ दिया था। मैंने आदेश दिया कि इस विषय का ठीक-ठीक पता न लगे तव तक कल्याण को कैद में रखा जाय। जव वह अपराधी सिद्ध हो गया तो मैंने उसकी जीभ काट डालने का और उसे आजन्म कारावास में रखने का और कुत्तों की रखवाली करने वालों और भंगियों के साथ उसे खाना खिलाने का आदेश दिया।

बाबर के संस्मरण

काबुल के इतिहास की जानकारी प्राप्त करने के लिए मैं वाकियात-ए-वावरी पढ़ा करता था जो चार प्रकरणों के अतिरिक्त सारी उसने अपने ही हाथ से लिखी थी। इसको पूरा करने के लिए मैंने सव प्रकरणों की अपने हाथ से नकल की और फिर तुर्की भाषा में कुछ सन्दर्भ मैंने जोड़ दिए जिससे यह प्रकट हो कि वे मेरे लिखे हुए हैं। यद्यपि मैं हिन्दुस्तान में उत्पन्न हुआ हूँ तथापि मैं तुर्की भाषा लिख-पढ़ सकता हूँ।

शहजादा खुसरु

12 तारीख को मैंने खुसरु को अपने सामने बुलवाया और आदेश दिया कि उसके पैरों की वेड़ियाँ हटा दी जाएँ और उसे 'शहरआरा' के बाग में घूमने दिया

---

1 यहाँ सर एच० एम० ईलियट का अनुवाद समाप्त होता है और वह लिखता है कि इसके आगे अनुवाद करना अनावश्यक है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जाय। मेरा पितृ-प्रेम इतना विलीन नहीं हो गया था कि मैं उसको इस सुख से भी वंचित करता। यद्यपि खुसरु ने वार-वार अनुचित कार्य किए थे और वह हजार दण्ड के योग्य था तो भी पितृ-प्रेम मुझे उसका वध नहीं करने देता था। ऐसे दुष्ट कार्यों का सहन करना शासन और नीति के नियमों के प्रतिकूल था, तो भी मैंने उसके अपराधों की ओर से आँखें वन्द कर लीं और उसको वहुत सुखपूर्वक रखा। इस वात का पता लग गया था कि उसने कई वदमाश लोगों के पास आदमी भेजे हैं और वायदे करके उनको गड़बड़ मचाने के लिए और मेरे जीवन को समाप्त करने के लिए उकसाया है। इनमें से कुछ वदमाश और अदूरदर्शी लोगों ने षडयन्त्र रचा कि जव मैं काबुल और उसके पड़ौस में शिकार कर रहा हूँ तो मुझे खत्म कर दिया जाय। परन्तु ईश्वर वादशाहों का रक्षक है। इसलिए उन्हें ऐसा अपराध करने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। जिस दिन मैं शुरखाव में ठहरा हुआ था तो शहजादा खुर्रम के दीवान ख्वाजा कुरेशी के पास एक षडयंत्रकारी ने आकर कहा कि हकीम अव्दुल फतह के पुत्र फतुल्ला, गयासुद्दीन अली के पुत्र नुरुद्दीन, आसफखाँ और इतिमात-उद्-द्दौला के पुत्र शरीफ के साथ पाँच सौ वागी लोग खुसरु के उकसाने से मुझ पर आक्रमण करने के लिए उपयुक्त अवसर की तलाश में हैं। ख्वाजा ने तुरन्त ही खुर्रम को इसकी सूचना दी और उसने अति क्षुव्ध होकर तत्काल आकर मुझे सूचित किया। मैंने शहजादे को आशीर्वाद दिया और इन वुद्धिहीन लोगों को पकड़ने का और उन्हें कठोर दण्ड देने का निश्चय किया। परन्तु मैंने पुनः विचार किया कि मैं इस समय मुसाफिरी कर रहा हूँ। इसलिए यदि उनका पीछा किया गया तो मेरे डेरे में गड़वड़ मचेगी और कितने ही लोग इधर-उधर हो जायेंगे। इसलिए कुछ ही वागी लोगों को पकड़ा गया। फतुल्लाखाँ को कैद करके कुछ विश्वसनीय लोगों की निगरानी में रख दिया और दो अन्य वदमशों को तथा वागियों के तीन चार सरगनों को मरवा दिया।

शासन का तीसरा वर्ष

मेरे सिंहासन पर वैठने के पश्चात् तीसरा नौरोज वृहस्पतिवार 2 जिल-हिज्जा को आया जो 1 फरवरदीन को पड़ता था। उस दिन जगत प्रकाशक सूर्य मीन राशि को छोड़कर एरिश की राशि में प्रविष्ट हुआ था। नौरोज का उत्सव रुनकता नामक गाँव में मनाया गया जो आगरा नगर से पाँच कोस दूर है।

मेरे पिता की भव्य कब्र रास्ते में पड़ती थी। इसलिए मैंने सोचा कि यदि मैं इस समय वहाँ गया तो वेसमझ लोग सोचेंगे कि यह रास्ते में पड़ती है, इसलिए मैं वहाँ गया हूँ। इसलिए मैंने निश्चय किया कि मैं सीधा नगर में जाऊँ और फिर मेरे जन्म विषय में जैसे ही व्रत लेकर मेरा पिता आगरे से अजमेर पैदल गया था, उसी भाँति मैं नगर से उसकी कब्र का जो ढाई कोस दूर है, पैदल जाऊँ। क्या ही अच्छा होता कि इस दूरी को मैं अपने सिर के वल तय करता।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस मास की तारीख 5 शनिवार को दोपहर के वक्त शुभ घड़ी में मैंने नगर की ओर प्रस्थान किया। जाते हुए मैंने पाँच हजार रुपये भिखारियों को बाँटे, जो रास्ते भर दोनों ओर खड़े थे। दुर्ग के अन्दर मैं अपने महल में पहुंच गया तब तक रुपये बँटते रहे। उसी दिन राजा नृसिंह देव मेरे लिए एक सफेद चीता लाया। यद्यपि दोपदे और चौपदे पशु-पक्षियों में कुछ सफेद रंग के होते हैं और तोयगन कहलाते हैं परन्तु मैंने अब तक सफेद चीता कभी नहीं देखा था।

बृहस्पतिवार 8 मोहर्रम 1016 हिजरी को जलालुद्दीन मसूद पेचिश की बीमारी से पचास और साठ वर्ष की उम्र के बीच इस संसार से चल बसा। वह 400 का मनसबदार था। उसमें साहस की कोई कमी न थी और उसने कई बार अपने प्राणों की परवाह न करके बड़ी बहादुरी का काम किया था। उसको अफीम खाने का व्यसन था और उसके छोटे-छोटे पनीर जैसे टुकड़े करके खाया करता था। वह अफीम अपनी माँ के हाथ से खाया करता था। जब उसकी बीमारी अधिक बढ़ गई और मृत्यु के चिन्ह दृष्टिगत होने लगे तो उसने भी बहुत सारी वही अफीम खाली जो वह उसे दिया करती थी और उसकी मृत्यु के कुछ मिनट बाद वह भी मर गई। अब तक पुत्र के प्रति माता के ऐसे प्रेम की बात नहीं सुनी गई है। हिन्दुओं में ऐसी प्रथा है कि अपने पतियों की मृत्यु पर पत्नियाँ प्रेम, प्रतिष्ठा या अपने माता-पिता और बन्धु-बान्धुवों के नाम पर सतियाँ हो जाती हैं परन्तु हिन्दुओं में या मुसलमानों में किसी माँ ने ऐसा किया हो यह नहीं सुना था।

इसी मास की 15 तारीख को मैंने अपने स्नेहसूचक के रूप में अपना उत्तम घोड़ा राजा मानसिंह को भेंट किया। मैंने राजा मानसिंह के ज्येष्ठ पुत्र जगतसिंह की पुत्री से विवाह करने की इच्छा प्रकट की थी। इसलिए 16 तारीख को मैंने राजा के पास अस्सी हजार रुपये साचक नामक वैवाहिक रस्म के लिए भेजे। मुकर्रबखाँ ने खंभात के बन्दरगाह से एक यूरोपीय टेपेस्ट्री का टुकड़ा भेजा जो इतना सुन्दर था कि मैंने फिरंगियों का इतना अच्छा काम पहले नहीं देखा था।

4 रबी-उल-अव्वल को जगतसिंह की लड़की ने मेरे अन्तःपुर में प्रवेश किया और विवाह की रस्म मरियम-ए-जमाँ के निवास-स्थान पर हुई। राजा मानसिंह ने उसके साथ बहुत सी बहुमूल्य भेंटे भेजी थीं, जिनमें साठ हाथी थे।

मैं राणा को समूल नष्ट करने के लिए बहुत तुला हुआ था। इसलिए मैंने उसके विरुद्ध महावतखाँ को भेजने का निश्चय किया और बारह हजार सुसज्जित सवार तथा अनुभवी अफसर उसके सुपुर्द किए। इसके अतिरिक्त मैंने 500 अहदी, दो हजार बन्दूकची, सत्तर-अस्सी तोपें, हाथियों और ऊँटों पर रखे हुए जमूरे और साठ हाथी भी उसके सुपुर्द किए। मैंने यह भी आदेश दिया कि इस सेना के साथ बीस लाख रुपए भेजे जाएँ।

खानखाना, जो मेरा शिक्षक था, बुरहानपुर से आकर मुझसे मिला। वह मुझसे मिलने के लिए इतना आतुर था कि उसे यह भी मालूम नहीं था कि वह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पैदल आया कि सिर के बल आया । वह बड़ी उत्तेजित दशा में मेरे पैरों में आकर गिरा । मैंने बड़े अनुग्रह के साथ अपने हाथों से उसका सिर उठाया और बड़े प्रेम से उसे अपनी बाहों में लेकर उसके मुख का चुम्बन किया। उसने मुझे लाल और मोतियों की दो तसबिया (सुमरनियाँ) दीं और लगभग तीन लाख रुपए की लागत के कई लाल और पन्ना दिए । इसके अतिरिक्त अन्य अनेक प्रकार की बहुत सी चीजें दीं। बाईस तारीख को आसफखाँ ने मुझे एक लाल नजर की, जिसका वजन सात टंक था और जिसे उसके भाई अब्दुल कासिम के खम्भात के बन्दरगाह में 75 हजार रुपए में खरीदा था । उसका रंग और आकार बहुत ही अच्छा था परन्तु मेरी सम्मति में वह साठ हजार रुपए से अधिक की नहीं थी ।

खानखाना के पुत्र उसके पीछे आ रहे थे । उन्होंने भी 24 तारीख को आकर सलाम किया और 25000 रुपए मेरे नजर किए । उसी दिन खान ने भी 90 हाथी मेरे नजर किए । इसी दिन एक हिरनी लाई गई जिसे बहुत आसानी से दोहा जा सकता था । वह प्रतिदिन चार सेर दूध देती थी । मैंने ऐसी हिरनी न कभी देखी थी न सुनी थी । हिरनी के दूध के स्वाद में और गाय या भैंस के दूध के स्वाद में कोई अन्तर नहीं है । ऐसा कहा जाता है कि यह दमा रोग की औषधि है ।

राजा मानसिंह को दक्षिण की सेना को सजाने के लिए आदेश दिया गया था । उसको उधर की ओर जाना था । 11 तारीख को उसने अपने देश आंवेर जाने की इजाजत माँगी । मैंने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और उसको होशियारमस्त नामक एक हाथी दिया । खानखाना ने निजाम-उल-मुल्क के प्रदेश में सारी गड़बड़ को दबाने का उत्तरदायित्व लिया था । यह स्वर्गीय बादशाह की मृत्यु के समय की बात है । अब उसने 21 तारीख को दस्तावेज लिखा कि यदि इस सेवा में वह दो साल में सफल नहीं हुआ तो वह दंड का भागी होगा । शर्त यह थी कि उस प्रान्त की सेना के अतिरिक्त बारह हजार सवार और दस लाख रुपए उसे और दिए जाएँ । मैंने आदेश दिया कि सेना को सुसज्जित करने के लिए उसको सब सामान दिया जाए । फिर उसका अपने काम पर जाने की अनुमति दी गई ।

खुर्रम के सबसे छोटे मामा किशनसिंह ने, जब वह महावतखाँ के साथ था, बड़ी बहुमूल्य सेवाएँ की थीं । राणा की एक सेना के साथ लड़ते हुए उसके पैर में भाले का घाव लगा था । उसने राणा के बीस प्रसिद्ध अफसर मार डाले थे और उसके तीन हजार आदमियों को गिरफ्तार कर लिया था । अब मैंने उसका मनसब दो हजार जात और एक हजार सवार कर दिया ।

मंगलवार तारीख 17 को मैं अपने पिता की शानदार कब्र को देखने गया । यदि सम्भव होता तो मैं यह फासला अपने सिर के बल या अपनी पलकों के बल तय करता । मेरे जन्म के विषय में मेरे पिता ने व्रत लिया था और फतहपुर से अजमेर तक ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह की यात्रा करने के लिए वह 120

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कोस पैदल गया था। इसलिए यदि मैं इस छोटे से फासले को अपने सिर या आंखों के बल तय करता तो कोई वड़ी वात नहीं थी। जब मुझे इस कब्र पर जाने का सौभाग्य हुआ और मैंने उस पर बने हुए भवन को ध्यान से देखा तो मुझे वह पसन्द न आया। मेरा इरादा था कि यह भवन इतना सुन्दर हो कि संसार के यात्री यह न कह सकें कि आबाद संसार के किसी हिस्से में उन्होंने ऐसा भवन देखा है। जब इसका काम चल रहा था तो दुर्भागी खुसरु के विद्रोह के कारण मुझे लाहौर की ओर कूच करना पड़ा। इसलिए निर्माताओं ने इसको अपने पसन्द के अनुसार बना दिया और अपनी इच्छानुसार इसका असली नक्शा बदल दिया। इस प्रकार सारा रुपया खर्च हो गया और इस काम में तीन या चार साल लग गए। अब मैंने आदेश दिया कि योग्य और होशियार नक्शानवीस बुद्धिमान लोगों के सहयोग से काम करे और मेरे बतलाए हुए आक्षेप योग्य भागों को गिरा दे। शनैः-शनैः विशाल और भव्य भवन बन गया। इसके चारों ओर सुन्दर बाग था और प्रवेश के लिए एक ऊँचा द्वार था जिसमें मकराने के मीनार बने हुए थे। इस विशाल भवन में पचास हजार ईराकी तुमान या पैंतालीस लाख तूरानी खानी खर्च हुए थे।

रविवार 23 तारीख को मैं हकीमअली के मकान पर एक हौज देखने के लिए गया। यह उस हौज के समान था जो मेरे पिता के समय में लाहौर में बनाया गया था। मेरे पास ऐसे कितने ही अनुचर थे जिन्होंने इसे नहीं देखा था। इस हौज का आकार सब ओर छः गज था और इसके एक पार्श्व बाजू पर एक कमरा था जिसमें बहुत अच्छा प्रकाश था और जिसमें जल में होकर घुसने का रास्ता था परन्तु इस कमरे में पानी की एक बूंद भी प्रवेश नहीं कर सकती थी। यह कमरा इतना बड़ा था कि दस बारह व्यक्ति इसमें बैठ सकते थे। हकीम ने जो कुछ रुपया और चीजें उस समय उपलब्ध थीं मेरे नजर कीं। मैंने कमरा देखा और अपने अनुचरों को भी दिखाया। उसके बाद हकीम को दो हजार के मनसब से सम्मानित करके मैं वापस अपने महल में ले आया। छः जिलहिज्जा को मुकर्रिबखां ने मुझे एक चित्र भेजा और कहलाया कि पुर्तगाली लोग इसको तैमूर की तस्वीर मानते हैं। ऐसा कहा गया कि जब उस बादशाह की विजयी सेना ने इलदेरिम बयाजीद को बन्दी बना लिया तो एक ईसाई ने, जो उस समय इस्तम्बोल का सूबेदार था, एक राजदूत को नजरें लेकर अधीनता प्रकट करने के लिए भेजा। उस राजदूत के साथ एक चित्रकार था जिसने बादशाह का चित्र बनाया और वापिसी पर उसे अपने साथ ले आया। यदि यह बात सच होती तो मेरी सम्मति में इससे बढ़कर मेरे पास कोई मूल्यवान विचित्र वस्तु क्या हो सकती थी। परन्तु यह तस्वीर उस बादशाह के शाही वंशजों से नहीं मिलती थी। इसलिए मैं इस कथन से सन्तुष्ट न हुआ।

शासन का चौथा वर्ष

[चौथे वर्ष का नौरोज 14 जिलहिज्जा 1017 हिजरी (11 मार्च 1609) को पड़ा।]

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अब यह स्पष्ट हो गया था कि दक्खिन का फैसला करने के लिए वहाँ एक शहजादे को भेजना चाहिए। इसलिए मैंने परवेज[1] को भेजने का निश्चय कर लिया।

शासन का पाँचवाँ वर्ष

पाँचवें वर्ष का नौरोज 24 जिलहिज्जा 1018 हिजरी 10 मार्च 1610 ई० को पड़ा।

पटना में उपद्रव

[19 उरदीविहश्त को मेरे शासन के पाँचवें वर्ष में पटना में एक आश्चर्यजनक घटना घटी। यह नगर सूबा बिहार के सूबेदार का मुख्य निवास है। वहाँ के सूबेदार अफजलखाँ को अभी हाल में गोरखपुर की जागीर दी गई थी। वह उधर की ओर कूच करने वाला था। यह स्थान पटना से साठ कोस दूर था। कूच करते समय उसने दुर्ग और नगर को शेख वनारसी और ग्यास जेन्नखानी दीवान तथा अन्य मनसवदारों के सुपुर्द छोड़ा। उसने समझा कि उस प्रदेश में कोई शत्रु नहीं है इसलिए दुर्ग और नगर की सुरक्षा के निमित्त उसने कोई प्रवन्ध नहीं किया।

ऐसा हुआ कि उसकी अनुपस्थिति में कुतुब नामक एक राजद्रोही और उत्पाती व्यक्ति फकीर के वेष में उज्जैनियाँ के प्रदेश में आया। यह स्थान पटना के निकट है। वहाँ के कुछ बदमाश लोगों से मित्रता करके उसने अपने आपको खुसरु घोषित किया और प्रकट किया कि कारागार से भागकर वह यहाँ आया है और जो लोग उसकी सहायता करेंगे उनको उसकी सफलता में हिस्सा मिलेगा। ऐसी झूठी वातों से उसने मूर्ख लोगों को अपने दावे पर विश्वास करवा दिया। पिछले दिनों में उसकी आँखों पर दाग लगाए गए थे। इसलिए उसने लोगों से कहा कि जेल में उसकी आँखों पर गरम प्याले बाँध दिए गए थे जिनके निशान रह गए हैं। इन साधनों से उसने बहुत से सवार और प्यादे इकट्ठे कर लिए। इन विद्रोहियों को मालूम था कि अफजलखाँ पटना से चला गया है। इसलिए उन्होंने इस अवसर का लाभ उठाया और नगर में प्रवेश करके दुर्ग पर आक्रमण किया। एक बार तो शेख वनारसी क्षुब्ध-सा होकर किले के द्वार पर आ गया। परन्तु शत्रु ने उसके द्वार वन्द नहीं करने दिया और अन्दर घुस गया। तब वह ग्यास के पास गया और नदी की ओर की एक खिड़की से निकलकर उन्होंने एक नाव ली और अफजलखाँ के पास पहुँचने का प्रयास किया।

विद्रोही लोग विजय से फूल गए। दुर्ग में प्रवेश करके उन्होंने अफजलखाँ की सम्पत्ति पर अधिकार कर लिया और सारा शाही-कोष अपने हाथ में ले लिया।

---

1 उसके साथ आसफखाँ को अतालिक (शिक्षक) बनाकर भेजा गया था। इकबालनामा, नासिर-ए-जहाँगीरी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नगर के वहुत से वदमाश और साहसी लोग उनके साथ हो गए। इस उत्पात की खवर अफजलखाँ को गोरखपुर में मिली और नावों के द्वारा शेख बनारसी और ग्यास भी आ पहुँचे। नगर से कई पत्र आए जिनमें लिखा था कि यह दावेदार केवल धोखेवाज है और इसने खुसरु का नाम धारण कर लिया है। ईश्वर के अनुग्रह पर और मेरे भाग्य नक्षत्र की सहायता पर विश्वास करके अफजलखाँ ने तुरन्त ही विद्रोहियों के विरुद्ध प्रयाण किया। पाँच दिन में वह पटना आया। शत्रु अपने एक नायक को किले में छोड़कर अफजल का सामना करने के लिए सवारों और प्यादों के साथ निकला और पुनपुन नदी पर, जो नगर से चार कोस है, उसने अपनी सेना जमाई। फिर लड़ाई हुई और थोड़ी देर सामना करने के वाद विद्रोही लोग त्रस्त होकर भाग गए। उनमें से कुछ वापस दुर्ग में चले गए। परन्तु अफजलखाँ ने उनका ऐसा पीछा किया कि वे दरवाजा वन्द भी नहीं कर सके। त्रस्त होकर वे अफजलखाँ के मकान में जा घुसे और वहाँ सायंकाल तक उन्होंने सामना किया और अपने तीरों से लगभग तीस आदमी मार डाले। तव अन्त में वह झूँठा दावेदार जिसके साथी नरक में जा रहे थे और जो अव असहाय था, अफजलखाँ के पास आया। विद्रोह का दमन करने के लिए खान ने उसी दिन उसको मरवा दिया और उसके कई साथियों को कैद में डाल दिया। जब मुझे इस उत्पात की सूचना मिली तो मैंने बनारसी, ग्यास रिहानी और अन्य कर्मचारियों को आगरा बुलवाया और आदेश दिया कि उनके सिर और दाढ़ी मुड़वा दी जाय और उनको वेहूदी पोशाक पहना कर तथा गधों पर बैठाकर दण्डस्वरूप और दूसरों को सचेत करने के लिए नगर में घुमाया जाय।

दक्खिन के मामले

2 आबान को खानखाना मेरे सामने हाजिर होने के लिए आया। मैंने उसके विषय में सच्ची या झूँठी वहुत सी शिकायतें सुनी थीं। इसलिए मैं उससे क्रुद्ध था। जव वह आया तो मैंने उसके साथ उस अनुग्रह और ध्यान के साथ व्यवहार नहीं किया जो मैं पहले इसके प्रति किया करता था और जैसा मेरा पूज्य पिता किया करता था। कुछ समय के लिए खानखाना को दक्खिन में सेवा करने के लिए भेजा था। वह शहजादा परवेज की हाजिरी में था। वह और अन्य अमीर इस महत्वपूर्ण सेवा के लिए रवाना हुए परन्तु जब वह बुरहानपुर पहुँचा तो इस वात की चिन्ता न करके कि अभी युद्ध के लिए अनुकूल समय नहीं था तथा रसद और अन्य आवश्यक वस्तुओं की कमी थी, वह सुलतान परवेज और सेना को वालाघाट ले गया। अमीरों में दुर्भावना और फूट फैली हुई थी। अन्त में अन्न समाप्त हो गया और रुपया देने पर भी अन्न का मिलना कठिन हो गया। लोग बड़े संकट में फँस गये। मामले को आगे बढ़ाने के लिए कोई साधन नहीं रहा। घोड़े, ऊँट और दूसरे पशु थक कर गिरने लगे। इसलिए उसने शत्रु के साथ जल्दी से एक सन्धि कर ली और सुलतान परवेज और सेना को वह वापस बुरहानपुर लौटा लाया। इस हार और संकट की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बाबत और खानखाना की शिकायतों के मेरे पास बहुत पत्र आए परन्तु उनमें जो कुछ लिखा था उस पर मैंने विश्वास नहीं किया। खानजहाँ का भी एक पत्र आया जिसमें लिखा था, "ये सब विपत्तियाँ खानखाना के कुप्रबन्ध के कारण हुई हैं या तो उसके नेतृत्व की पुष्टि कर दी जाय या उसे वापस दरबार में बुलाकर इस सेवा के लिए मुझे नियुक्त कर दिया जाय। यदि तीस हजार सवार सहायतार्थ और भेज दिए जाएँ तो मैं दो वर्ष में समस्त शाही इलाकों को शत्रु से वापस छीन लेने और सीमा पर स्थित कन्धार और दूसरे दुर्गों को लेने का तथा बीजापुर को शाही साम्राज्य में मिलाने का जिम्मा लेता हूँ। यदि इस अर्से में मैं यह काम न कर सकूँ तो मैं दरबार में पुनः अपना मुख नहीं दिखाऊँगा।" खानखाना और दूसरे सरदारों के पारस्परिक सम्बन्ध असन्तोषजनक थे। इसलिए मैंने उसका समर्थन करना उचित नहीं समझा और उसे हटाकर खानजहाँ को नेतृत्व दे दिया।

अहमदनगर को मेरे स्वर्गीय भाई दानियाल ने जीता तब से अब तक यह प्रान्त ख्वाजाबेग मिर्जा शफवी के अधीन था जो ईरान के शाह तहमास्प का रिश्तेदार था परन्तु दक्खिनियों को विजय मिल गई थी। इसलिए अब उन्होंने इस नगर को घेर लिया था। इसकी रक्षा के लिए सब कुछ प्रयत्न किया गया। खानखाना और दूसरे अमीर जो शहजादा परवेज के पास बुरहानपुर में थे उस स्थान की रक्षा के लिए रवाना हुए। परन्तु सेनानायकों में द्वेष और मतभेद था और रसद की कमी थी। सेना का अनुचित कार्य से संचालन किया। उसको पहाड़ों और कठिन घाटियों में होकर गुजरना पड़ा। थोड़े समय में ही वह अव्यवस्थित हो गई और खाद्य-सामग्री की इतनी कमी हो गई कि उसे बाध्य होकर वापस लौटना पड़ा। दुर्गरक्षकों की सब कुछ आशा इसी सेना पर थी। जब यह वापस लौट गई तो उन्हें बड़ी निराशा हुई। अब उन्होंने इस स्थान को खाली कर देने का इरादा किया। ख्वाजाबेग मिर्जा ने उनको सान्त्वना और प्रोत्साहन देने का भरसक प्रयत्न किया परन्तु सब कुछ विफल हुआ। इसलिए उसने कुछ शर्तों पर आत्म-समर्पण कर दिया और अपने आदमियों के साथ वह बुरहानपुर लौट गया। जब युद्धस्थल से पत्र आए तो मुझे विदित हुआ कि ख्वाजा वीरतापूर्वक लड़ा था और उसने भरसक प्रयत्न किया था। इसलिए मैंने उसका मनसब बढ़ाकर पाँच हजार का कर दिया और उसे एक उपयुक्त जागीर भी दी।

शासन का छठा वर्ष

[शासन के छठे वर्ष का नौरोज 6 मोहर्रम 1020 हिजरी (12 मार्च 1611 ई०) को पड़ा।] एक शाही दास ने, जो अलंकारिक खुदाई के काम पर नियत था, अपनी कुशलता का एक असाधारण नमूना मेरी नजर किया। यह ऐसा आश्चर्यजनक था कि न मैंने ऐसा कभी देखा था और न सुना था। इसलिए इसका वर्णन रोचक होगा। उसने अखरोट के खोल में एक चित्रित हाथीदाँत जड़ा था जो पाँच हिस्सों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में विभक्त था। पहले भाग में पाँच व्यक्ति थे जो एक-दूसरे से कुश्ती कर रहे हैं। तीसरे के पास एक भाला है और चौथे के पास भारी पत्थर तथा पाँचवाँ व्यक्ति जमीन पर हाथ टेके हुए बैठा है। उसके पास एक लाठी है, एक तीर है और सामने एक प्याला रक्खा हुआ है। दूसरे हिस्से में एक राज सिंहासन है जिस पर एक सुलतान शानदार छत्र के नीचे बैठा हुआ है। उसकी एक टाँग दूसरी पर रक्खी हुई है और उसके पीछे एक मसनद है। इसके चारों ओर पाँच सेवक सेवा के लिए खड़े हैं और सबके ऊपर एक वृक्ष की छाया है। तीसरे हिस्से में रस्सों पर नाचने वालों की एक मंडली दिखाई गई है। एक लम्बा बाँस तीन रस्सों में थमा हुआ है। एक आदमी बड़े ही विचित्र ढंग से रस्से पर नाच रहा है। वह अपनी सीधी टाँग को सिर के पीछे बाँये हाथ से पकड़े हुए है। एक छड़ी के सिरे पर एक बकरा खड़ा हुआ है। दूसरे आदमी की गर्दन से एक ढोल लटका हुआ है और वह उसे बजा रहा है। तीसरा आदमी अपने हाथ उठाये हुए और रस्से की तरफ देखता हुआ खड़ा है। उसके निकट पाँच व्यक्ति खड़े हुए हैं जिनमें से एक के हाथ में लकड़ी है। चौथे हिस्से में एक बड़ा वृक्ष है जिसके नीचे ईसा मसीह बैठा हुआ है। एक आदमी उसके चरणों में ढोक दे रहा है और एक वृद्ध पुरुष उससे बात कर रहा है। चार अन्य पुरुष उसके पास खड़े हैं। इस विचित्र कारीगरी के उपलक्ष में मैंने उस कलाकार को अच्छा पुरस्कार दिया और उसका वेतन बढ़ाया।

कायदे कानून

मैंने बार-बार सुना था कि सीमा की चौकियों के अमीरों की यह आदत थी कि वे लोगों से कुछ पाबन्दियाँ करवाते थे जिनका उन्हें कोई अधिकार नहीं था और नियत नियमोपनियम की वे उपेक्षा किया करते थे। इसलिए बख्शियों को आदेश दिया गया कि ऐसे फरमान जारी किए जाएँ कि अमीर लोग भविष्य में ऐसे काम न करवावें और न करें जो बादशाह ही करवा सकते हैं :

1. झरोखा या खिड़की में न बैठें। 2. अमीर या सरदारों को, जो उनके अधीन हैं, कुर्सी को सलाम करने के लिए न कहें। 3. हाथियों की लड़ाई न करवाएँ। 4. किसी आदमी को आँखें फोड़ने का या नाक या कान काटने का दण्ड न दें। 5. किसी पर बलपूर्वक मुसलमानों का भार न डालें। 6. अपने सेवकों को उपाधियाँ न दें। 7. अपने सामने सल्तनत के सेवकों से सिजदा या तसलीम न करवायें। 8. गाने वालों को दरबार के ढंग पर कुर्सी देने की तकलीफ न दें। 9. बाहर जाते समय नौबत न बजवाएँ। 10. जब वे किसी को घोड़ा या हाथी प्रदान करें चाहे दरबार के समय या निजी तौर पर, तो उससे घोड़ी की लगाम पकड़े हुए या अपने पीछे हाथी का अंकुश रखकर सलाम न करवाएँ। 11. शाही सेवकों को अपने साथ पैदल न चलवाएँ। 12. शाही सेवकों के नाम जो पत्र लिखे जाएँ उन पर अपनी मोहर न लगाएँ।

ये नियम आइन-ए-जहाँगीरी कहलाते थे और इस समय प्रचलित हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शासन का सातवाँ वर्ष

[शासन का सातवें वर्ष का नौरोज 17 मोहर्रम 1021 हिजरी (12 मार्च 1612 ई०) को पड़ा।]

बंगाल में युद्ध

इसी समय इस्लामखाँ का पत्र आया जिसमें लिखा था कि शत्रु की पराजय हो गई है और बंगाल का देश उस्मान अफगान से मुक्त कर दिया गया है। इस विषय में प्रवेश करने से पहले बंगाल के विषय में कुछ विशेष बातों को लिखना उचित होगा। यह विस्तृत देश है और दूसरे जलवायु में स्थित है। इसकी लम्बाई 450 कोस है जो वन्दर चटगाम (चिटगाँव) से गढ़ी तक फैली हुई है और इसकी चौड़ाई उत्तर के पहाड़ों से मदारन (मिदनापुर) के इलाके तक 220 कोस है। इस प्रान्त की आय साठ करोड़ दाम (एक करोड़ और पचास लाख रुपया) होती थी। पिछले समय में यहाँ के सूबेदारों के पास आठ हजार सवार, एक लाख प्यादे, एक हजार हाथी और चार सौ जंगी नावें रहती थीं। शेरखाँ अफगन के समय से उसके पुत्र सलीमखाँ तक यह देश अफगानों के अधिकार में था। जब मेरा पूज्य पिता हिन्दुस्तान के राजसिंहासन को अलंकृत करता था तो उसने इस देश को दबाने के लिए एक नियुक्त की थी। इसको जीतने के लिए बहुत अर्से तक बड़ा प्रयत्न होता रहा और अन्त में यह दाऊद किरानी के हाथ से छीन लिया गया। यह इस प्रान्त का अन्तिम शासक था। खानजहाँ ने उसकी सेना को हरा कर तितर-बितर कर दिया और उसको मार डाला।

उस समय से अब तक इस मुल्क पर शाही सेवकों का शासन रहा है। कुछ बचे खुचे अफगान दूर-दूर के एकान्त और सीमास्त प्रदेशों पर फिर भी अधिकार करते रहे। शनैः-शनैः ये लोग विपत्ति में फँस गए और सारा देश साम्राज्य में मिला लिया गया। जब मैं राजसिंहासन पर बैठा तो अपने शासन के प्रथम वर्ष में ही मैंने मानसिंह को, जो बहुत अर्से से वहाँ का सूबेदार था वापिस बुला लिया और मेरे कोकलताश कुतुबुद्दीन को उसके स्थान पर सूबेदार नियुक्त किया। परन्तु उसके पहुंचने के थोड़े दिन बाद ही वहाँ के उत्पाती व्यक्ति ने उसको चुपके से मार डाला। फिर उसको भी अपना पुरस्कार मिल गया और वह मारा गया। जहाँगीर कुलीखाँ, जिसको मैंने पाँच हजार का मनसबदार बनाया था बिहार का सूबेदार था और बंगाल के निकट था। मैंने उसे आदेश दिया कि वह बंगाल पर भी अधिकार कर ले। उस समय इस्लामखाँ आगरे में था। मैंने उसे फरमान देकर बिहार का जागीरदार बनाया और आदेश दिया कि वह वहाँ जाए। जहाँगीर कुलीखाँ वहाँ थोड़े दिन रहा और फिर बीमार हो गया और वहाँ की जलवायु के कुप्रभाव से उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु की सूचना मिलने पर मैंने उसके स्थान पर इस्लामखाँ को नियुक्त किया और आदेश दिया कि वह शीघ्रातिशीघ्र बिहार को अफजलखाँ के सुपुर्द करके वहाँ जाए।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जब मैंने उसे इस सेवा के लिए नियुक्त किया तो मेरे कुछ सेवकों ने कहा कि वह बहुत ही युवा है और उसे अनुभव भी नहीं है। परन्तु मैंने देखा था कि उसका चरित्र अच्छा था और उसमें प्रतिभा थी। इसलिए मैंने उसको इस काम के लिए चुना था। इसका परिणाम यह हुआ कि उसने उस प्रान्त में ऐसी व्यवस्था स्थापित कर दी जो उसके पिछले सूवेदार नहीं कर सके थे। उसका सबसे बड़ा काम यह है कि उसने उस्मान अफगान का दमन कर दिया था। मेरे पिता के शासनकाल में शाही सेना की इस व्यक्ति से निरन्तर मुठभेड़ें हुआ करती थी परन्तु उसका दमन नहीं हो सका था।

इस्लामखाँ उस प्रान्त के जमींदारों को दवाने के लिए ढाका में रहने लगा और उसने उस्मान तथा उसके देश के विरुद्ध सेना भेजने का विचार किया। वह उससे अधीनता स्वीकार करवाना चाहता था या उसको और उसके उत्पाती साथियों को समूल नष्ट करना चाहता था। इस समय सुजातखाँ इस्लामखाँ के साथ था और उसको उस सेना का नेतृत्व दिया गया था जो इस काम के लिए नियुक्त की गई थी। साम्राज्य के कई अन्य सेवक भी उसके साथ-साथ भेजे गए थे। जब ये लोग उस्मान के दुर्ग और देश के समीप पहुँचे तो कुछ योग्य वक्ता उसके पास इसलिए भेजे गए कि उसे अपनी विद्रोही आदतें छोड़ने की और अच्छी प्रजा बनने की सलाह दें। परन्तु वह बड़ा अभिमानी और महत्त्वाकांक्षी था। उसने उस देश को दवाने की योजना बना रक्खी थी और उसके दिमाग में दूसरे विचार भी थे। उसने इसकी बातें नहीं सुनीं और वह युद्ध के लिए तैयार हो गया। उसने नाला नदी के तट पर स्थित एक गाँव के पास अपनी सेना खड़ी की। इसके चारों ओर पानी और दलदल था। सुजातखाँ ने आक्रमण करने का निश्चय किया और अपनी सेना यथास्थान जमाई। उस्मानखाँ का उस दिन लड़ाई करने का विचार नहीं था परन्तु जब उसने सुना कि शाही सेना लड़ने को तैयार है तो वह सवार होकर अपने आदमियों को व्यवस्थित करने के लिए नाला के तट पर पहुँचा।

लड़ाई प्रारम्भ हुई और बढ़ती ही गई। आरम्भ में उस वीर विद्रोही ने एक खूंख्वार हाथी पर सवार होकर शाही सेना के अग्रभाग का सामना किया और जोर की लड़ाई के बाद आक्रमणकारी सेना के नायक मारे गए। दाँये पार्श्व के नायक इफ्तिखारखाँ ने वीरता में कोई कमी नहीं की और वह लड़ता हुआ मारा गया। उसके आदमी भी प्राणपण से लड़े और टुकड़े-टुकड़े होकर गिर पड़े। बाँये पार्श्व में भी किश्वरखाँ वीरतापूर्वक लड़ता हुआ धराशायी हो गया।

यद्यपि शत्रु के बहुत से लोग मारे जा चुके थे तो भी उनके वीर नायक ने सेना की एक चतुर और सुयोजित गति सोची। वह जानता था कि दाँये बाँये और अग्र पार्श्व के नायक धराशायी हो चुके हैं परन्तु मध्य भाग का नेता अभी जीवित है। इसलिए मृत और आहतों की चिन्ता न करके उसने मध्य भाग पर आक्रमण

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किया तब सुजातखाँ के पुत्रों, भाइयों और बन्धु-बान्धवों ने कुछ अन्य लोगों के सहित शेरों और चीतों की भाँति उसका रास्ता रोका और प्राणापण से युद्ध किया। इसमें उनके बहुत से लोग मारे गए और जो बचे वे बुरी तरह आहत हुए।

एक अग्रणी हाथी ने, जो बड़ा भयंकर था, शुजातखाँ पर आक्रमण किया। शुजात ने उसको भाले से आहत कर दिया। परन्तु ऐसा पशु भाले की क्या चिन्ता करता। शुजात ने तलवार निकाली और उसके दो घाव कर दिए। परन्तु इसकी भी उसे क्या चिन्ता थी। तब शुजात ने अपने खंजर से उसके दो घाव और किए। फिर भी वह वापस नहीं मुड़ा बल्कि खान और उसके घोड़े को उसने गिराने की कोशिश की। वह घोड़े पर से गिर गया और चिल्लाया, "जहाँगीर शाह" और फिर उठ खड़ा हुआ। उसके एक सेवक ने दुधारी तलवार से हाथी की अगली टाँगों पर वार किया। हाथी घुटनों के बल बैठ गया। तब शुजात और उसके सेवक ने उसके महावत को भूमि पर गिरा दिया और उसी खंजर से उसने हाथी की सूँड और मस्तक घायल कर दिया जिससे चीख कर वह दर्द के मारे वापस मुड़ गया। हाथी के इतने घाव लगे कि शत्रु की सेना में जाकर वह गिर गया।

शुजातखाँ का घोड़ा उठ खड़ा हुआ। उसके कोई चोट नहीं लगी थी। परन्तु जब वह सवार होने लगा तो पराजित शत्रु ने शुजातखाँ के निशानबरदार के विरुद्ध एक दूसरा हाथी चलाया। वह घोड़े और निशान दोनों को गिराना चाहता था। शुजातखाँ ने जोर से चिल्लाकर निशानबरदार से कहा कि "बहादुरी से काम करो, मैं अभी जीवित हूँ।" निशान के पास खड़े हुए प्रत्येक पुरुष ने अपना तीर, खंजर और तलवार हाथी पर चलाए। शुजातखाँ ने निशानबरदार को खड़ा होने के लिए हुक्म दिया और दूसरा घोड़ा मँगवा कर उस पर उसको बिठाया और निशान खड़ा करवाया।

इस संघर्ष के बीच में विद्रोही नायक के ललाट में गोली लगी। यद्यपि इसकी जाँच की गई कि यह गोली किसकी थी परन्तु पता न लगा। घाव लगते ही उस्मान पीछे गिर पड़ा। वह जानता था कि यह घाव घातक है। घाव लग जाने पर भी ढाई पहर तक वह अपने आदमियों को प्रोत्साहन देता रहा और युद्ध तथा वध जारी रहा। अन्त में शत्रु दब गया और सेना ने उनका उस स्थान तक पीछा किया जहाँ उन्होंने किलाबंदी कर रखी थी। फिर भी वे तीर और गोलियाँ चलाते रहे और शाही सेना को प्रवेश नहीं करने दिया।

जब वली के भाई को और उस्मान के पुत्र ममरेज को तथा अन्य मित्रों को यह सूचना मिली कि उसके गहरा घाव लग चुका है तो वे जान गए कि अब वह नहीं बचेगा। उन्होंने यह भी विचार किया कि इस हार के बाद यदि वे अपने मैदानों में भागेंगे तो उनमें से एक भी नहीं बच सकेगा। इसलिए उन्होंने निश्चय किया कि रात्रि में अपने स्थान पर डटे रहें और सूर्योदय से पूर्व बचकर अपने किलों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में घुस जायें। आधी रात को उस्मान नरक के लिए रवाना हो गया और अगली पहर में उसके शरीर को लेकर तथा सब सामान को वहीं छोड़ कर शत्रु अपने दुर्गों में चले गए। उनके भाग जाने की खबर सुनकर शुजातखाँ ने उनका पीछा करने का प्रस्ताव किया और उन्हें साँस लेने का भी समय नहीं दिया। परन्तु सेना के थक जाने से मुर्दों को गाड़ने से और घावों की मरहम-पट्टी करने से उसको रुकना पड़ा। इससे उसको बड़ा गुस्सा आया। मोजमखाँ का पुत्र अब्दुल इस्लाम अब कई अफसरों, 600 सवारों और 400 बन्दूकचियों के साथ आ पहुँचा। इन ताजा सैनिकों के साथ शुजात पीछा करने के लिए रवाना हो गया। अब विद्रोहियों का नेता वली था। अब उसको इस बात का पता लगा तो (उसने सन्धि करने का निश्चय किया)। शुजातखाँ और अन्य अफसरों ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया और उनकी कुछ शर्तें मान लीं। अगले दिन वली और उस्मानखाँ के पुत्र और रिश्तेदार शाही डेरे में आए और उन्होंने अन्य खिराज के साथ 49 हाथी भेंट किए। तब शुजातखाँ ने शत्रु के देश में चौकसी रखने के लिए कुछ सेना वहाँ छोड़ी और वह वली और अफगान वन्दियों को जहाँगीर नगर (ढाका) ले गया। वहाँ पर उसने 6 शफर को प्रवेश किया और फिर इस्लामखाँ की प्रतीक्षा की। इस सेवा के उपलक्ष में मैंने इस्लामखाँ का मनसब बढ़ाकर 6000 कर दिया और शुजातखाँ को 'रुस्तम-ए-जमां' की उपाधि तथा 1000 का मनसब प्रदान किया।

मुकर्रबखाँ मेरा एक मुख्य विश्वस्त और पुराना अमीर था। उसको तीन हजार का मनसब और दो हजार सवार प्राप्त हो चुके थे। फरवरदीन मास की 16 तारीख को वह खम्भात से आया और उसको मेरे सामने उपस्थित होने का सम्मान प्राप्त हुआ। कुछ राजनैतिक विचारों से मुझे प्रेरणा हुई कि उसको गोआ[1] के बन्दरगाह पर भेजा जाय और वह उस स्थान के वजीर या शासक से मिले। मैंने उससे यह भी कहा कि जो वस्तुएँ मेरी पसन्द की हों और जो वहाँ मिल सकें, उन्हें वह खरीदे। इस आज्ञा के अनुसार वह उस बन्दरगाह के लिए रवाना हुआ और वहाँ बहुत समय तक ठहरा। उसने खर्च की कोई चिन्ता नहीं की और फिरंगियों ने जो भी मूल्य माँगा, देकर अनेक चीजें खरीदीं। वापिसी पर उसने गोआ से लाई हुई बहुमूल्य चीजें मुझे भेंट कीं। इनमें कुछ ऐसे पशु थे जिन्हें देखकर मुझे बड़ा कौतूहल हुआ। मैंने ऐसे पशु पहिले कभी नहीं देखे थे। इनके नाम भी कोई नहीं जानता था।

बादशाह बाबर ने अनेक पशुओं का सचित्र वर्णन किया है परन्तु यह बहुत सम्भव है कि उसने चित्रकारों से इनके सजीव चित्र तैयार नहीं करवाये थे। अब

---

1 यद्यपि मूल कृति में इसे गोआ या गोह लिखा है परन्तु शायद अभिप्राय गोगा से है। एक प्रति में गोदा लिखा हुआ है जहाँ शायद ग की जगह द लिख दिया गया है। गोआ मुकर्रबखाँ के अधिकार क्षेत्र से बाहर था और गोगा उसके अन्दर था। गोगा अहमदाबाद का बन्दरगाह है और किसी समय में खंभात का मुख्य बन्दरगाह था। देखो—ब्रिग्ज, सिटीज आफ गुजारिस्तान, पृ० 281।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मेरे सामने के पशु ऐसे सुन्दर और दुर्लभ थे कि मैंने उनका वर्णन लिखा और आदेश दिया कि जहाँगीरनामे में उनके चित्र बनाए जाएँ जिससे उनके वर्णन की अपेक्षा उनके चित्रों को देखकर पाठकों को अधिक आश्चर्य हो। इनमें एक पक्षी मोरनी से मिलता-जुलता था परन्तु आकार में बड़ा था तो भी वह मोर से कुछ छोटा था। जब उसे मादा से मिलने की इच्छा होती थी तो वह अपने पंख और पूंछ फैला कर मोर की भाँति नाचता था। उसकी चोंच और पैर खेत के मुर्गो जैसी थी। उसके सिर, गर्दन और गले का रंग प्रति मिनट बदला करता था। परन्तु जब वह मादा से मिलना चाहता था तो वह पूर्णतः लाल हो जाता था और उस समय वह सुन्दर मूंगा प्रतीत होता था। थोड़ी देर बाद वह रुई की भाँति सफेद हो जाता था और फिर नीलम जैसा नीला बन जाता था। वह गिरगिट की भाँति अपने रंग बदला करता था। उसके सिर पर एक माँस पिंड चिपका हुआ था जो मुर्गे की कलंगी जैसा मालूम होता था। परन्तु विचित्र बात यह थी कि जब वह मादा से मिलना चाहता था तो यह माँस पिंड एक बालिश्त लम्बा होकर नीचे लटक जाता था और हाथी की सूंड की भाँति मालूम होता था और फिर जब अपनी जगह आ जाता था तो गैंडे हाथी की सींग की भाँति पुनः दो अंगुल ऊँचा उसके सिर पर खड़ा हो जाता था। उसकी आँखों के आस-पास के हिस्से का रंग निरन्तर नीला रहता था। वह कभी बदलता नहीं था। परन्तु उसके पंखों की बात दूसरी थी। उनका रंग हमेशा बदला करता था। मोर का रंग इस प्रकार नहीं बदलता।

मैंने अपने शाही हाथों से दलपथ के ललाट पर टीका लगाकर उसे उसके पिता का उत्तराधिकारी बनाया और स्वर्गीय रायसिंह का देश और जागीर उसे प्रदान की। उस दिन इतिमाद-उद्-द्दौला ने एक सुन्दर और अलंकृत कलम और कलमदान भेंट किया।

कुमायूं का राजा पहाड़ियों में एक मुख्य राजा था। उसका नाम लखमीचन्द था और वह राजा राय का पुत्र था। जब वह स्वर्गीय बादशाह की सेवा में उपस्थित होना चाहता था तो उसने एक प्रार्थना-पत्र भेज कर चाहा कि राजा टोडरमल का पुत्र उसको शाही दरबार में ले जावे। उसकी यह प्रार्थना स्वीकार की गई। अब लखमीचन्द ने भी मुझसे निवेदन करवाया कि उसको दरबार में लिवा लाने के लिए इतिमाद-उद्-द्दौला के पुत्र को भेजा जावे। उसकी इच्छा के अनुसार उसको अपने दरबार में लाने के लिए मैंने शाहपुर को भेजा। यह पहाड़ी राजा मेरे लिए अनेक दुर्लभ पहाड़ी पदार्थ लाया था। इनमें सुन्दर और सुदृढ़ टट्टू थे जो गूत कहलाते हैं और कितने ही बाज, कस्तूरी के गुट्टे और कस्तूरी मृग के पूरे चमड़े थे जिनमें कस्तूरी भी लगी हुई थी। उसने कई तलवारें भी, जो खांडा या कटार कहलाती थीं, मुझे भेंट कीं। यह सबसे अधिक धनाढ्य पहाड़ी राजा है और ऐसा कहा जाता है कि उसके राज्य में सोने की खान है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ख्वाजा जहाँ गृह-निर्माण कला के लिए बहुत प्रसिद्ध था। मैंने उसको अपने लिए लाहौर में एक सुन्दर महल का निर्माण करने के लिए भेजा।

दक्खिन में पराजय

दक्खिन का हाल बड़ा असन्तोषजनक था। खान-ए-जहाँ अच्छा सेनापति नहीं था और सावधानी भी नहीं करता था और अब्दुल्लाखाँ की हार हो चुकी थी। मैंने ख्वाजा अब्दुल हसन को बुलवाया और पूछताछ करने पर मुझे मालूम हुआ कि इस विपत्ति का कारण कुछ तो अब्दुल्लाखाँ का दंभ और जल्दबाजी थी और कुछ अमीरों में परस्पर सहयोग का अभाव था।

अब्दुल्लाखाँ ने उन अफसरों के साथ जिनको उसकी अधीनता में सेवा करने के लिए नियुक्त किया गया था, नासिक तिरबंग के मार्ग से गुजरात की सेना के साथ कूच किया। यह सेना अच्छी सजी हुई थी। इसकी संख्या दस और चौदह हजार के बीच में थी। इसमें कई उच्चाधिकारी थे। प्रबन्ध यह किया गया था कि एक दूसरी सेना राजा मानसिंह, खान-ए-जहाँ, अमीर-उल-उमरा और अन्य अफसरों के नेतृत्व में बरार की ओर से रवाना हो। ये दोनों सेनाएँ एक-दूसरे से कुछ सम्पर्क रखें और एक-दूसरे की गतिविधि से परिचित रहें। यदि बिना द्वेष के स्पष्ट और हार्दिक रूप से इस योजना का अनुसरण किया जाता तो यह बहुत सम्भव था कि ईश्वर के अनुग्रह से यह सफल होती।

अब्दुल्लाखाँ ने घाटों को पार करके शत्रु के देश में प्रवेश किया। परन्तु दूसरी सेना की खबर मँगवाने के लिए उसने हरकारों का प्रबन्ध नहीं किया जिससे उसकी सेना का संचालन दूसरी सेना से मिलकर हो सकता ओर शत्रु दो सेनाओं के बीच में फँस जाता। उसने अपनी ही शक्ति पर विश्वास किया और सोचा कि यदि वह स्वयं ही विजय प्राप्त कर लेगा तो और भी अच्छा होगा। इस मत के अनुसार काम करते हुए जब राजा मानसिंह ने चाहा कि दोनों सेनाओं की योजना मिलकर बनाई जाय तो अब्दुल्लाखाँ ने कुछ ध्यान नहीं दिया।

शत्रु ने उसकी गति-विधि पर तीक्ष्ण दृष्टि रखी और एक बड़ी मराठी सेना रवाना की जो दिन भर उसके साथ झपटें करती रही और रात में हुक्कों और आतिशबाजी से उसको परेशान करती रही। फिर शत्रु सेना का मुख्य भाग निकट आ गया। यद्यपि वहाँ दक्खिनियों के दृढ़ दुर्ग दौलताबाद के समीप आ पहुँचा था तो भी उसको शत्रु के सामीप्य का कुछ पता न था। शत्रु की सेना का नेतृत्व काले मुँह वाले अम्बर के हाथ में था। वह निरन्तर सहायक सेना लाता रहा जिससे एक बड़ी सेना बन गई और वह कई प्रकार के हुक्कों और आतिशबाजी से अब्दुल्ला को परेशान करता रहा जिससे उसकी स्थिति बड़ी दुखद हो गई। अब शाही सेना को कोई सहायता नहीं मिली थी और शत्रु के पास बहुत बड़ी सेना थी। इसलिए यह उचित समझा गया कि पीछे हट कर नए युद्ध के लिए तैयारी की जाय। सारे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अमीर इसी पक्ष में थे। इसलिए सूर्योदय से पहले वे पीछे हटने लगे। शत्रु उनके प्रदेश सीमा तक उनको दबाता रहा, परन्तु दोनों पक्ष बराबर रहे। हमारी सेना के एक भाग ने जानबूझ कर एक कड़ा मुकाबला किया। एक वीरतापूर्ण युद्ध के बाद अली मदीनखाँ आहत होकर शत्रु के हाथ में पड़ गया। दूसरे दिन के बाद जब वे राजा बहारजीव की सीमा पर पहुँचे जो शाही तख्त का वफादार था, तो शत्रु वापस हट गया और अब्दुल्लाखाँ गुजरात की ओर चल दिया। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यदि उचित सावधानी की जाती और दोनों सेनाएँ सहयोग करतीं तो युद्ध का उद्देश्य प्राप्त हो जाता। अब्दुल्लाखाँ के वापस हटने पर सेना ने विहार के रास्ते से कूच किया। उसके सामने पीछे हटने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं था। इसलिए पीछे हट कर वह बुरहानपुर के निकट शहजादा परवेज के डेरे में जा मिली। यह सूचना मिलने पर मैं बहुत क्षुब्ध हुआ और मैंने चाहा कि स्थिति को सुधारने के लिए मैं स्वयं उधर की ओर जाऊँ परन्तु ख्वाजा अबुल हसन ने इस बात का विरोध किया और मैंने खानखाना को भेजने का निश्चय किया।

अब दक्खिनियों ने संधि का प्रस्ताव किया। आदिलखाँ ने मेल-जोल की बातचीत की और वचन दिया कि यदि दक्खिन के मामले उस पर छोड़ दिए जाएँगे तो वह कितने ही जिले शाही अधिकारियों के सुपुर्द कर देगा। इस विषय में मैंने निश्चय नहीं किया और यह मामला खानखाना पर छोड़ दिया।

शासन का आठवाँ वर्ष

[मेरे शासन का आठवाँ वर्ष का नौरोज 26 मुहर्रम 1022 हिजरी (8 मार्च 1613 ई०) को पड़ा।]

अजमेर की यात्रा और राणा के विरुद्ध युद्ध

2 शाबान को मैंने आगरा छोड़ा। मेरा इरादा अजमेर जाने का था और मेरी दृष्टि में दो उद्देश्य थे। प्रथम उद्देश्य यह था कि मैं ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की कब्र की यात्रा करूँ। मेरे राजवंश के भाग्य पर उसका शुभ प्रभाव बड़े जोर का था। दूसरा उद्देश्य यह था कि अमरसिंह को जीत कर अपने अधीन करूँ जो हिन्दुस्तान के जमींदारों और राजाओं में सबसे बड़ा था। इस देश के तमाम राजा और रईस उसको और उसके पूर्वजों को अपना सरदार और मुखिया मानते आये हैं। सत्ता और सरकार इस कुटुम्ब के हाथ में बहुत समय से रहती आई है। अनेक वर्षों तक इन लोगों ने पूर्वी देश पर राज्य किया है और इनकी उपाधि राजा रही है। फिर इन्होंने दक्खिन पर आक्रमण किया और उस देश का अधिकांश भाग अपने राज्य में मिला लिया और राजा के स्थान पर इन्होंने 'रूप' की उपाधि धारण कर ली। इसके पश्चात् इन्होंने मेवाड़ का पर्वतीय प्रदेश दबा लिया और आगे बढ़कर जयपुर के दुर्ग पर भी अधिकार कर लिया। उस तारीख से वर्तमान वर्ष तक, जो मेरे शासन का आठवाँ वर्ष है, 1471 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। इस जाति के 26

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

व्यक्ति 1010 वर्ष राज्य कर चुके हैं और इनकी उपाधि 'रावल' रही है। रहव के समय से जिसने सर्वप्रथम राणा की उपाधि धारण की थी, राणा अमरसिंह तक जो वर्तमान राणा है, 26 व्यक्ति 461 वर्ष राज्य कर चुके हैं। इस लम्बे अर्से में उनमें से एक ने भी हिन्दुस्तान के किसी बादशाह या सम्राट् के समक्ष अपना सिर नहीं झुकाया। ये लोग प्रायः विद्रोह करते रहे हैं और इन्होंने किसी की अधीनता नहीं मानी है। इसलिए बादशाह बाबर के समय में राणा सांगा ने इस देश के राजा और रईसों को एकत्र करके 1,80,000 सवार और कई लाख प्यादों के सहित बयाना के निकट मुसलमानों की विजयी सेना के विरुद्ध युद्ध किया था और उसमें पराजित हुआ था। इस युद्ध का पूर्ण विवरण उस परम विश्वसनीय ग्रन्थ में दिया हुआ है जिसका नाम "वाकियात" है और जो स्वयं बाबर ने लिखा था। मेरे पिता ने भी इस अदम्य जाति को जीतने के लिए बड़ा परिश्रम किया। उसने कई बार इनके विरुद्ध सेना भेजी और अपने शासन के बारहवें वर्ष में चित्तौड़ को जीतने के लिए उसने स्वयं प्रयाण किया। यह संसार में परम दृढ़ दुर्ग माना जाता है। मेरा पिता राणा के प्रदेश को भी जीतना चाहता था। चार मास और दस दिन के घेरे के बाद उसने अमरसिंह के पिता के सैनिकों को दबाकर दुर्ग छीन लिया और फिर वापस आ गया। उसने बार-बार राणा के विरुद्ध सेना भेजी जिसने उसको ऐसा दबाया कि वह नारा के किनारे तक पहुँच गया। परन्तु फिर कोई बात ऐसी हो गई जिसके कारण वह नष्ट होने से बच गया। उसके शासन के अन्त समय में मेरे पिता ने दक्खिन की विजय की ओर ध्यान दिया और एक बहुत बड़ी सेना और विश्वसनीय सेनानायक देकर मुझे राणा के विरुद्ध रवाना किया। ये दोनों चढ़ाइयाँ असफल हुईं। इसके कारण इतने लम्बे हैं कि यहाँ उनका विवेचन नहीं किया जा सकता।

जब साम्राज्य मुझे प्राप्त हुआ तो मेरे नेतृत्व में यह विजय अधूरी ही थी। इसलिए गद्दी पर बैठने के पश्चात् मैंने विदेश को जीतने के लिए जो सेना भेजी वह राणा के विरुद्ध भेजी। इस सेना का अध्यक्ष मेरा पुत्र परवेज बनाया गया और मेरी सरकार के समस्त साधन इस काम में लगा दिए गए। पर्याप्त राजकोष और तोपखाना रवाना किए ही जाने वाले थे कि खुसरु का दुखद विद्रोह खड़ा हो गया और सब कुछ तैयारी बन्द कर देनी पड़ी। मुझे पंजाब की ओर उसका पीछा करने के लिए बाध्य होना पड़ा और राजधानी तथा देश का आन्तरिक भाग सेना से खाली हो गया। परवेज को लिखना पड़ा कि वह वापस आकर आगरा और उसके पड़ौस की रक्षा करे और वहीं ठहरे। इसलिए राणा के विरुद्ध युद्ध स्थगित करना पड़ा। ईश्वर के अनुग्रह से मैंने खुसरु का विद्रोह दबा दिया तो मैं आगरा लौट आया और तब मैंने महाबतखाँ, अब्दुल्लाखाँ और अन्य अमीरों को राणा के विरुद्ध रवाना किया। परन्तु मैंने अजमेर से कूच किया तब तक शाही सेना को कोई उल्लेखनीय

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। मुझे आगरे मे भी कोई काम नहीं था और मुझे विश्वास था कि मैं वहाँ न जाऊँगा, तब तक कोई महत्वपूर्ण काम नहीं हो सकेगा।

निश्चित समय पर मैं आगरे से रवाना हुआ और देहरा के बाग में मेरा डेरा लगा। अगले दिन दशहरे का त्योहार था। नियमानुसार घोड़े और हाथियों को सजाकर मेरे सामने निकाला गया। खुसरु की माताओं और बहनों ने निवेदन किया कि अब उसको अपने किए पर अत्यन्त पश्चात्ताप है। जब मेरा पितृ-प्रेम इस भाँति जागृत किया गया तो मैंने उसको अपने सामने बुलवाया और ऐसी व्यवस्था कर दी कि वह प्रतिदिन मुझे सलाम करने के लिए आया करे। मैं उस बाग में बीस दिन ठहरा और इक्कीसवें दिन ख्वाजा जहाँ को राजधानी, महल और राजकोष की देख-रेख के लिए नियुक्त करके रवाना हुआ। 2 मिहिर को खबर मिली कि राणा की सीमा पर शाहबाद में राजा बासु की मृत्यु हो गई। 10 तारीख को मैंने रूपबास में जो अब अमानाबाद कहलाता है, डेरा किया। यह पहले रूप की जागीर में था। उसके पश्चात् मैंने इसको महावतखाँ के पुत्र अमानउल्ला को दे दिया और आदेश दिया कि अब इसको इसी नाम से पुकारा जाय। यह महरा शिकारगाह था। इसलिए मैं प्रतिदिन शिकार के लिए जाया करता था। इन दिनों में 158 नर और मादा हिरन मारे गए और दूसरी प्रकार भी शिकार की गई। 10 रमजान को खबर आई कि कलीजखाँ की मृत्यु हो गई। वह साम्राज्य का एक सबसे पुराना सेवक था और इस समय उसकी आयु अस्सी वर्ष की थी। वह पेशावर में अफगानों पर नियन्त्रण करने में लगा हुआ था। इस मास (अजुर) में खबर आई कि गोआ के फिरंगियों ने अपने अहदनामों का उल्लंघन करके ऐसे चार जहाज लूट लिए हैं जो सूरत के बन्दरगाह के विदेशी व्यापार में लगे हुए थे। बहुत से मुसलमानों को कैद करके उनके रुपए और माल पर कब्जा कर लिया है। इससे मैं बहुत अप्रसन्न हुआ। उस बन्दरगाह के सूबेदार मुकर्रबखाँ को खिलत, हाथी और घोड़ा देकर आदेश दिया गया कि वह शीघ्र वहाँ जाकर इस प्रकार के उत्पातों को बन्द करे। वह 18 आजुर को रवाना हो गया।

राणा के विरुद्ध युद्ध

(मुईनुद्दीन चिश्ती की कब्र पर जाने के बाद राणा के मामले पर फिर विचार किया गया और मैंने अजमेर में ठहर कर अपने प्रिय पुत्र खुर्रम को चढ़ाई करने के लिए आदेश दिया। 6 तारीख को उसे बहुत सी भेंट देकर मैंने प्रयाण करने की अनुमति दी। खान-ए-आजम के नेतृत्व में इस काम के लिए पहले ही आदमी भेजे जा चुके थे। उनके अतिरिक्त अब मैंने शहजादे के नेतृत्व में 12 हजार सवार दिए और सेनाधिकारियों को भेंटें देकर रवाना किया। फिदाईखाँ बख्शी नियुक्त किया गया। यद्यपि खान-ए-आजम ने मुझसे प्रार्थना की थी कि इस काम के लिए खुर्रम को भेजा जाय और शहजादा स्वयं उसका बड़ा लिहाज करता था परन्तु खानखाना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ने उचित सद्भावना प्रकट नहीं की और असन्तोषजनक ढंग से काम किया। मैंने उसको अति कृपापूर्ण पत्र लिखा। परन्तु इसका उस पर कोई प्रभाव नहीं हुआ और वह अब भी मूर्खता और दुराग्रह करता रहा। जब खुर्रम को मालूल हुआ कि उसका काम में दिल नहीं है तो उसने मुझे लिखा कि उसे वहाँ रखना वांछनीय नहीं है और उसके दुर्व्यवहार का कारण यह है कि खुसरु के साथ उसका सम्बन्ध है। इसलिए मैंने महावतखाँ को आदेश दिया कि उदयपुर जाकर उसे ले आवे और मैंने मोहम्मद ताकी दीवान को आदेश दिया कि वह मनसौर जाय और उसके बच्चों और आश्रितों को अजमेर ले जाय। 16 तारीख को मुझे खुर्रम का पत्र मिला जिसमें यह खबर थी कि राणा का एक प्रिय हाथी तथा उसके सत्रह अन्य हाथी छीन लिए गए हैं। उसने यह भी लिखा था कि इनका मालिक शीघ्र ही कैद कर लिया जावेगा।)

शासन का नवाँ वर्ष

[मेरे शासन के नवें वर्ष का नौरोज 9 शफर 1023 हिजरी (1614 ई०) को पड़ा।

महावतखाँ जो खान-ए-आजम और उसके पुत्र अब्दुल्ला को ले आने के लिए भेजा था आ गया। मैंने खान-ए-आजम को आसफखाँ के सुपुर्द किया और कहा कि उसको ग्वालियर के किले में रखा जाय। परन्तु उसके साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार हो।

18 उरदी बिहिश्त को मैंने खुसरु को मेरे सामने आने से मना कर दिया। अपने पितृ-प्रेम के कारण और उसकी माताओं और बहनों की प्रार्थनाओं पर मैंने आदेश दे दिया था कि वह प्रतिदिन मुझे सलाम करने को आया करे। परन्तु उसने स्पष्ट भावना का कोई चिह्न प्रकट नहीं किया। वह सदा दुःखी और म्लान रहता था। इसलिए मैंने उसका अपने पास आना बन्द कर दिया।

गुलाब का इत्र

गुलाब का इत्र सब इत्रों में उत्तम है। इसका आविष्कार मेरे शासन-काल में हुआ था। जब गुलाबजल को गरम किया जाता है तो उसके ऊपर तेल आ जाता है। नूरजहाँ बेगम की माँ के ध्यान में यह बात आई कि इस तेल को इकट्ठा किया जाय। जब ऐसा किया गया तो पता चला कि यह महासुगन्धित इत्र है।

राणा की अधीनता

बहमान मास में राणा अमरसिंह की अधीनता का और शाही तख्त के प्रति स्वामिभक्ति प्रकट करने के लिए उसके राजी हो जाने का समाचार मिला। इस मामले का विवरण यह है। मेरे प्रिय और भाग्यवान पुत्र सुलतान खुर्रम ने कई फौजी थाने विशेषकर ऐसे स्थानों पर स्थापित कर दिए थे जहाँ जलवायु की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रतिकूलता, जल की निकृष्टता और स्थानों की दुर्गमता के कारण बहुत से लोग इस बात को असम्भव समझते थे। इससे और शत्रु के विरुद्ध निरन्तर सेना संचालन करते रहने से तथा घोर वर्षा और दारुण शीत की उपेक्षा करके उसने बहुत से राजपूतों के कुटुम्बों को पकड़ लिया था और शत्रु की ऐसी दशा कर दी थी कि राणा अनुभव करने लगा कि अब वह अधिक समय तक नहीं डट सकता। उसे अपने देश से भाग जाना चाहिए अन्यथा वह कैद कर लिया जायगा। असहाय होकर उसने आत्म-समर्पण और अधीनता प्रकट करने का निश्चय किया। उसने अपने मामा सुभकरण और हरदास झाला को जो उसके अत्यन्त विश्वस्त और बुद्धिमान सेवक थे, मेरे पुत्र के पास भेजे और अपने दोषों के लिए क्षमा की प्रार्थना की और चाहा कि शहजादा अपने नाम की मोहर लगा कर सुरक्षा का फरमान भेजे। तब वह स्वयं वफादारी प्रकट करने के लिए उपस्थित होगा और अपने युवराज को शाही दरबार में भेज देगा। ताकि अन्य राजाओं की भाँति उसकी भी शाही तख्त के सेवकों में गणना की जाय। उसने यह भी प्रार्थना की कि वृद्धावस्था के कारण उसको दरबार में जाने की छूट दी जाय।

मेरे पुत्र ने इन लोगों को अपने दीवान मुल्ला शुक्रउल्ला के साथ मेरे पास भेजा और मामला तय हो जाने के बाद मैंने उसे अफजलखाँ की उपाधि दी। मुल्ला शुक्रउल्ला के साथ सुन्दरदास भी था। इसको भी बाद में रायरायान की उपाधि दी गई। मेरे पुत्र ने अपने पत्र में सारा विवरण लिखा। राणा अमरसिंह और उसके पूर्वजों को अपने पर्वतों पर और घर पर भरोसा था और अपने को सुरक्षित समझते थे। वे हिन्दुस्तान के किसी बादशाह से नहीं मिले थे और न उन्होंने किसी की आज्ञा मानी थी परन्तु अब मेरे सौभाग्यपूर्ण शासन में वे अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य हो गए। मेरे पुत्र के पत्रानुसार मैंने राणा के अपराधों पर ध्यान नहीं दिया और उसको कृपापूर्ण फरमान दिया। जिस पर मैंने अपनी मोहर लगाई और उसे आश्वासन दिया। मैंने राणा के पुत्र को भी अलग पत्र लिखा और उसे पूछा कि वह सलाम करने के लिए किस प्रकार आना चाहता है। उसको यह भी लिखा कि उसको खुश करने के लिए सब कुछ किया जायगा। मेरे पुत्र ने ये पत्र राणा के पास भेजे जिससे उसको सांत्वना हो और मेरे कृपा और अनुग्रह की आशा हो। यह भी व्यवस्था की गई कि राणा और उसके पुत्र 28 बहमान को मेरे पुत्र से मिलें।

शुभ समाचार

दूसरा शुभ समाचार यह था कि गुजरात के सरदार के पुत्र बहादुर की मृत्यु हो गई। इससे उत्पात और आज्ञा के उल्लंघन को बड़ा प्रोत्साहन मिलता था। दयालु भगवान ने उसको नष्ट कर दिया। उसकी प्राकृतिक मृत्यु हुई।

तीसरा शुभ समाचार यह था कि पुर्तगाली लोग हार गये। इन्होंने सूरत बन्दरगाह को छीनने की तैयारी की थी। इनमें और अँग्रेजों में लड़ाई हुई। अँग्रेजों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ने इस वन्दरगाह में शरण ली थी। अँग्रेजों ने उनके जहाज जला दिए। इस युद्ध में पुर्तगाली नहीं टिक सके इसलिए भाग गए और गुजरात के बन्दरगाहों के सूबेदार मुकर्रवखाँ को उन्होंने सन्देश भेजा जिसमें सन्धि की प्रार्थना की और निवेदन किया कि वे लड़ने के लिए नहीं शन्तिमय विचारों के लिए यहाँ आए हैं और अँग्रेजों ने ही सर्वप्रथम लड़ाई छेड़ी है।

एक और समाचार यह था कि राजपूत मलिक अम्वर को मारना चाहते थे इसलिए वे छिपे रहे और जब उन्हें मौका मिला तो उन्होंने उसे घायल किया। परन्तु इसका उस पर कोई असर नहीं हुआ। अम्वर के सथियों ने उस राजपूत को मार डाला और अपने मालिक को घर ले गए। अगर घाव कुछ और गहरा लग जाता तो इस अभिशप्त व्यक्ति का अन्त हो जाता।

[इस महीने के अन्त में जब मैं अजमेर के आसपास शिकार कर रहा था तो मेरे पुत्र सुलतान खुर्रम का पत्र लेकर मोहम्मद वेग आया। इस पत्र से प्रकट हुआ कि 26 वहमान को राणा ने आकर शाही दरवार के नियम और प्रथा के अनुसार मेरे पुत्र को सलाम की। उसने खिराज के रूप में अपने कुटुम्ब की एक प्रसिद्ध लाल नजर किया और मेरे पुत्र ने उसका कृपापूर्वक स्वागत किया। जब राणा शहजादे के चरण चूमने के लिए और अपने अपराधों की क्षमा माँगने के लिए आगे वढ़ा तो शहजादे ने उसे उठा लिया और उसको प्रसन्न करने का भरसक यत्न किया और एक जड़ाऊ तलवार आदि उसे भेंट की। जमींदार लोगों में यह प्रथा है कि वे अपने युवराज के साथ वादशाह के सामने उपस्थित नहीं होते। इसलिए राणा अपने पुत्र करण को, जो उसका उत्तराधिकारी था, अपने साथ नहीं लाया। परन्तु शहजादा उसी दिन वहाँ से रवाना होने वाला था। इसलिए राणा ने विदा ली और अपने पुत्र करण को खुर्रम की सेवा में भेज दिया और उसी दिन वह राजकुमार शहजादे के साथ शाही दरवार के लिए रवाना हो गया।

शासन का दसवाँ वर्ष

[मेरे दसवें वर्ष का नौरोज 8 शफर 1024 हिजरी को था।]

राणा के पुत्र करण को पाँच हजार का मनसबदार बनाया गया। मैंने उसको पन्ना और मोतियों की एक माला दी जिसके वीच में एक लाल लगा हुआ था। इसे हिन्दी में सुमरनी कहते हैं।

मद्यपान

दे की 25 तारीख को मेरे पुत्र खुर्रम का वार्षिक तोलन-दिवस था। इस समय उसकी आयु 24 वर्ष की थी। वह विवाहित था और एक परिवार का पिता था परन्तु उसे मद्यपान का व्यसन कभी न था। आज उसका तोलन-दिवस था। इसलिए मैंने उससे कहा, "मेरे पुत्र तुम वच्चों के वाप हो और वादशाह और शहजादे मद्यपान किया करते हैं। आज उत्सव है। मैं तुम्हारे साथ-साथ मद्यपान करूंगा और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मैं तुम्हें दावतों के दिन नौरोजे पर और त्यौहारों पर मद्यपान करने की अनुमति देता हूँ, परन्तु सदा कम पीनी चाहिए । अधिक पीने से बुद्धि दुर्बल होती है । इसलिए बुद्धिमान लोग ऐसा नहीं करते । वास्तव में मद्यपान से कुछ लाभ प्राप्त करना चाहिए ।"

चौदह वर्ष की आयु तक बचपन में दो या तीन बार के अतिरिक्त मैंने कभी मद्यपान नहीं किया था । वचपन में कुछ बीमारी के इलाज के लिए मेरी माता या धायों ने मुझे कुछ पिलायी थी । एक बार मेरे पिता ने एक तोला अर्क गुलाबजल में मिलाकर खाँसी की औषधि के रूप में मुझे दिया था । उन दिनों मेरा पिता यूसुफजाई अफगानों के विरुद्ध लड़ाई कर रहा था और नीलाब (सिन्ध) नदी पर अटक के समीप उसका डेरा लगा हुआ था, तो मैं एक दिन शिकार करने गया । मुझे कई कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं और मैं बहुत थक गया । तब मेरे एक सेवक ने कहा कि यदि मैं एक प्याला शराब पी लूँ तो मेरी सब थकान दूर हो जाएगी । मैं युवा था और विलास की ओर मेरा झुकाव था । इसलिए मैंने एक नौकर को हाकिमअली के मकान पर कोई ताजगी देने वाली शराब ले आने के लिए भेजा । वह एक छोटी सी बोतल में पीली शराब का डेढ़ प्याला लाया और मैंने वह पी । इसका परिणाम बड़ा सुखद हुआ । उसी दिन से मैं मद्यपान करने लगा और प्रतिदिन इसकी मात्रा अधिकाधिक होने लगी । यहाँ तक कि अंगूर की शराब का मुझ पर अब कोई असर नहीं होता था । इसलिए मैं तेज शराब पीने लगा । नौ वर्ष में मैं दुबारा खिंची हुई शराब के बीस प्याले पीने लगा । इनमें से चौदह प्याले दिन में पीता था और शेष प्याले रात में । इन सबका वजन 6 हिन्दुस्तानी सेर होता था जो ईरान के एक मन के बराबर है । मैं केवल दिन में एक मुर्गी और कुछ चपाती खाता था । मुझे कोई मना नहीं कर सकता था । इसलिए मामला इस हद तक पहुँच गया कि जब मैं शराब पीए हुए होता था तो मैं अपने हाथ से प्याला नहीं थाम सकता था क्योंकि हाथ काँपते थे । मैं पीता था और दूसरे लोग प्याला पकड़ते थे । अन्त में मैंने हाकिम हुमाम को बुलाया, जो हाकिम अबुल फतह का भाई था और जो मेरे पिता की सेवा किया करता था । मैंने अपना मामला उसके सामने रखा । उसने बड़ी रुचि और कृपा के साथ मुझसे बात की और कोई बात नहीं छिपाई और मुझसे कहा कि यदि मैं इस प्रकार 6 महीने और शराब पीता रहा तो मेरी दशा असाध्य हो जायगी । उसकी सलाह नेक थी और मुझे जीवन से प्रेम था । उसके शब्दों का मुझ पर बड़ा प्रभाव पड़ा और उस दिन से मैं मद्यपान की मात्रा घटाने लगा । परन्तु मैंने फलूहा[1] खाना शुरू कर दिया । ज्यों-ज्यों मैं मद्यपान कम करता जाता त्यों-त्यों फलूहा की मात्रा बढ़ाता जाता था । मैंने आदेश दिया कि मेरी शराब में अंगूर की शराब मिलाई जाय । दो भाग अंगूर की शराब हो और एक भाग तेज शराब हो । इस प्रकार

1 यह कोई मादक पदार्थ है जो भाँग से बनाया जाता है ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इसकी मात्रा घटाते-घटाते सात साल में मैंने छः प्याले कर दिये। प्रत्येक प्याले का वजन सवा आठ मिस्कल होता था। पन्द्रह वर्ष से मैं इतनी ही मात्रा पीता आया हूँ। न यह अधिक होती थी और न कम। मैं रात्रि में मद्यपान करता हूँ परन्तु वृहस्पतिवार को नहीं करता क्योंकि यह मेरे राज्यारोहण का दिन है। इसके अतिरिक्त शुक्रवार को भी मैं मद्यपान नहीं करता क्योंकि यह सप्ताह में बड़ा पवित्र दिन है और मैं यह उचित नहीं समझता कि मैं इन रात्रियों को मद्यपान में और उपेक्षा में व्यतीत करूं और ईश्वर को भूल जाऊँ। वृहस्पतिवार और रविवार को मैं मांस-भक्षण भी नहीं करता। एक दिन मेरे राज्यारोहण का है और दूसरा मेरे पिता का जन्म-दिन है। मैं इन दिनों का बड़ा आदर करता हूँ। कुछ दिन बाद मैं फलूहा के बजाय अफ़ीम खाने लगा। अब सौर गणना के अनुसार मेरी अवस्था छियालीस वर्ष और चार मास की है और चन्द्रगणना के अनुसार मैं सैंतालीस वर्ष और नौ महीने का हो गया हूँ। मैं आठ सुर्ख (रत्ती) अफीम खाया करता हूँ और जब पाँच घण्टे दिन हो जाता है तब इसे लेता हूँ। रात्रि में भी एक घण्टे के बाद छः सुर्ख अफीम खाता हूँ।

विजय

वर्ष के अन्त में मेरे साम्राज्य के प्रत्येक भाग से विजय की सूचनाएँ आईं। पहली विजय तो अफगान अहदाद पर प्राप्त हुई थी। यह काबुल के पर्वतों में बहुत समय से विद्रोह कर रहा था।

दूसरी विजय नीच अम्बर की सेना पर प्राप्त हुई। इसका संक्षिप्त विवरण यह है। कुछ अच्छे अफसर और कुछ विद्रोही (मराठे) लोग, जो कठोर जाति है और जो विरोध और लड़ाई करने में बड़ी कुशल है, अम्बर से नाराज हो गये और उन्होंने मेरे सिंहासन के सेवक बनने की इच्छा प्रकट की। सहसवारखाँ ने उनको आश्वासन दिया। यह शाही सेना के साथ उस समय बालापुर था। तब आदमखाँ, याकूतखाँ और कुछ दूसरे अन्य अमीर विद्रोही जादूराम और बाबा जुकायत के साथ उसके पास आये और उसने प्रत्येक को एक घोड़ा, एक हाथी, खिलत और कुछ रुपये यथायोग्य प्रदान किये। इस प्रकार उनको तख्त के अनुकूल करके वह उनके साथ बालापुर से अम्बर के विरुद्ध रवाना हुआ। रास्ते में उसको दक्खिनियों की सेना का सामना करना पड़ा परन्तु उनको हरा कर त्रस्त कर दिया और अम्बर के डेरे की ओर भगा दिया। दम्भ में आकर उसने मेरी विजयी सेना से युद्ध करने का निश्चय किया। अपनी सेना के साथ उसने आदिलखाँ और कुतुबखाँ की सेना भी मिला ली और तोपखाना लेकर वह शाही सेना का मुकाबला करने के लिए रवाना हुआ और उससे पाँच या छः कोस की दूरी पर आ पहुँचा।

रविवार 25 बहमान को दोनों पक्षों में युद्ध शुरू हुआ। तीसरे पहर तीन बजे के लगभग तोपों से लड़ाई शुरू हुई। अन्त में दरावखाँ ने, जो अग्र सेना का

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नायक था, और दूसरे वीरों और अमीरों ने तलवारें निकाल कर शत्रु के अग्र भाग पर प्रवल आक्रमण किया। उनके वीरत्व और साहस ने शीघ्र ही विरोधियों में गड़बड़ मचा दी। वे इधर-उधर नहीं मुड़े और मध्य भाग पर टूट पड़े। इस प्रकार शाही सेना के प्रत्येक भाग ने अपने सामने के भाग पर आक्रमण किया और युद्ध बड़ा भयंकर हुआ। यह युद्ध एक घन्टे तक चलता रहा और स्थान-स्थान पर मुर्दों के ढेर लग गये। अम्वर शाही सेना के सामने नहीं डट सका और रणभूमि से भाग गया। यदि रात अँधेरी न होती तो शत्रु पक्ष का कोई भी आदमी वच कर नहीं जा सकता था। शाही सेना के वड़े वीरों ने भागने वालों का दो या तीन कोस तक पीछा किया। फिर घोड़े या आदमी आगे नहीं बढ़ सके। शत्रु पूर्णतः हार कर तितर-वितर हो गया और वीर लोग वापस अपने डेरे में आये। शत्रु की सव तोपें, जमूरे वाले तीन सौ ऊँट, वहुत से हाथी, घोड़े और युद्ध का अपार सामान विजयी सेना के हाथ में आया। मरे हुए और आहत लोग अगणित थे। वहुत से अमीर जीवित पकड़ लिए गये। अगले दिन सेना फतेहपुर से चली और उसने खिड़की की ओर प्रयाण किया, जो विद्रोहियों का आश्रय स्थान था, परन्तु उनका चिन्ह भी नहीं मिला। तव सेना ने वहाँ डेरा लगाया और उसे मालूम हुआ कि शत्रु बिल्कुल विखर गया है।

तीसरी विजय यह हुई कि इब्राहीमखाँ के परिश्रम से कोकरा का प्रदेश और उसकी हीरे की खानों पर शाही अधिकार हो गया। यह प्रदेश विहार और पटना के प्रान्त में है और उसमें होकर एक नदी वहती है। इसमें से बड़ी विचित्र विधि से हीरे निकाले जाते हैं। जब पानी नीचा होता है और केवल गढ़ों में रह जाता है तो हीरे निकालने वाले लोग, जो इस काम में बड़े चतुर हैं, इन हिस्सों में टटोलते हैं और उनमें से बहुत से कीड़े निकलते हैं जिनको ये लोग चीका कहते हैं। सारी नदी के हिस्सों के चारों ओर ये एक पत्थरों की दीवार बना देते हैं और इस प्रकार यह स्थान दुर्गम हो जाता है। फिर फावड़ों से और कुदालियों से एक गज या डेढ़ गज गहरा खोदते हैं और कीचड़ और पत्थरों में हीरे तलाश करते हैं। इस प्रकार की जमीन में छोटे और बड़े हीरे मिलते है। कोई-कोई तो एक लाख तक की कीमत का होता है। सारांश यह है कि यह प्रदेश और यह नदी जिसमें हीरे निकाले जाते हैं दुर्जनशाल जमींदार के अधिकार में थी। यद्यपि विहार के सूवेदार ने इस प्रदेश का आक्रमण करने के लिए कई वार सेना चढ़ाई थी परन्तु मार्गों की दुर्गमता और जंगल की सघनता के कारण उन्हें वापस लौटना पड़ा था। उनको दो-तीन हीरे मिले उसी में उन्होंने सन्तोष किया था।

जब इस प्रान्त की सूवेदारी जफरखाँ से हटाकर इब्राहीमखाँ को दी गई तो मैंने उसको निर्देश किया कि जव वह उस प्रान्त के लिए रवाना हो तो उस विद्रोही राजा के राज्य पर आक्रमण करे और उसे वहाँ से भगा दे। इसलिए उस प्रान्त में पहुंचते ही इब्राहीम ने सेना एकत्र करके उस जमींदार पर चढ़ाई की। पहले की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भाँति इस बार भी उसने कुछ हीरे और हाथी भेंट स्वरूप भेजे परन्तु खान ने उन्हें स्वीकार न किया और बड़ी जल्दी आगे बढ़कर उसके राज्य पर आक्रमण कर दिया। शत्रु अपनी सेना एकत्र भी नहीं करने पाया था कि इब्राहीम ने उसके राज्य में प्रवेश किया और उसके आगमन की सूचना पहुँचने से पहले ही उसने उस पहाड़ी और घाटी पर आक्रमण कर दिया जहाँ वह राजा रहता था। इब्राहीम ने राजा को तलाश करने के लिए अपने आदमियों को आदेश दिया और अन्त में वह घाटी के अन्दर अपने कुछ भाइयों और कुछ स्त्रियों के साथ मिल गया। इनमें उसकी माता थी और उसके पिता की दूसरी पत्नियाँ भी थीं। उनके पास जितने भी हीरे थे सब छीन लिए गये और 23 हाथी शाही सेना के हाथ में आये। इस सेवा के पुरस्कार स्वरूप इब्राहीम का मनसब बढ़ा कर चार हजार सवार और चार हजार जात कर दिया गया और उसे फतेहजंग की उपाधि प्रदान की गई और आदेश दिया गया कि इसी प्रकार उन लोगों का भी दर्जा बढ़ाया जाय और तरक्की दी जाय जिन्होंने इस कार्य के सम्पादन में वीरता का परिचय दिया है। यह प्रदेश अब भी इस सरकार के अधिकार में है और इस नदी में जो हीरे मिलते हैं वे दरबार में पेश किये जाते हैं। अभी हाल एक ऐसा हीरा मिला है जिसकी कीमत पचास हजार रुपये आँकी गई है और आशा की जाती है कि यदि तलाश जारी रही तो और अधिक उत्तम हीरे मिलेंगे और शाही जवाहरात में सम्मिलित किये जाएँगे।

शासन का ग्यारहवाँ वर्ष

मेरे शासन के ग्यारहवें वर्ष का नौरोज 1 रबी-उल-अव्वल 1025 हिजरी (10 मार्च 1616 ई०) को था।

इस वर्ष अर्थात् मेरे शासन के दसवें वर्ष में हिन्दुस्तान के अनेक भागों में भयंकर प्लेग (बबाः) फैली। यह आरम्भ में पंजाब के जिलों में प्रकट हुई और फिर शनैः-शनैः लाहौर आ पहुँची। इससे बहुत से मुसलमान और हिन्दुओं के जीवन नष्ट हो गये। फिर यह सरहिन्द और दोआब से देहली तक और उसके अधीन जिलों तक फैल गई और वहाँ पर बड़ी तबाही मच गई। अब यह बिल्कुल शान्त हो गई है। वृद्ध लोग कहते हैं कि पिछले समय के इतिहास से यह प्रकट है कि इस देश में यह रोग पहले कभी नहीं आया था। मैंने हाकिमों और विद्वानों से पूछा कि इसका क्या कारण है। दो वर्ष पहले लगातार दुर्भिक्ष था और वर्षा नहीं हुई थी। कोई लोग कहते थे कि यह बीमारी वायु की अशुद्धता से फैली है और यह अशुद्धता अनावृष्टि और अभाव के कारण हुई है। दूसरे लोग इसका अन्य कारण बतलाते हैं। असली बात ईश्वर ही जानता है। हमें इसकी इच्छा के अधीन रहना है।

इस तारीख से पहले कुछ चोरों ने कोतवाली का खजाना लूट लिया था। कुछ दिन बाद कुछ बदमाश पकड़े गये थे। उनका मुखिया नमाल था। कुछ कोष मिल भी गया था। मैं इन बदमाशों के साहस से बड़ा क्रुद्ध हुआ और मैंने निश्चय

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कर लिया कि इनको बड़ा कठोर दण्ड दिया जाय। इन सबको उचित दण्ड मिला और इनके मुखिया को हाथी के पैरों के नीचे फिकवा दिया गया। उसने मुझे प्रार्थना-पत्र दिया कि वह इस विशाल पशु के पैरों से रौंदे जाने की अपेक्षा उससे लड़ना अधिक पसन्द करेगा। मैंने इसकी अनुमति दे दी और उसे खंजर भी दिया गया। यद्यपि उस जंगली और खूनी हाथी ने उसको कई बार गिरा दिया और उसने ऐसा दृश्य पहले भी देखा था और जानता था कि उसके साथियों की क्या गति हुई है। तो भी वह दुर्दम्य साहस के साथ अपने पैरों पर खड़ा हो जाता था। उसने अपने खंजर से हाथी की सूंड पर कई घाव कर दिये और उसको भगा दिया। वह वास्तव में आश्चर्यजनक वीरता का कार्य था। इसलिए मैंने उसकी जान बख्श दी। परन्तु यह आदेश दिया कि उस पर चौकसी रक्खी जाय। कुछ दिन बाद वह कृतघ्नता-पूर्वक बचकर भाग गया। इससे मैं बहुत चिढ़ा। मैंने आसपास के जागीरदारों को उसे पकड़ने के लिए आदेश दिया और जब वह पकड़ लिया गया तो उसके गर्दन से लटकाकर फांसी दी गई।

शनिवार के तीसरे पहर तारीख 1 जिलकदा को, जो 21 आबान को थी, मैं स्वस्थ होकर अजमेर से रवाना हुआ। मैं एक यूरोपीय गाड़ी में बैठा हुआ था और इसमें चार घोड़े जुते हुए थे। मैंने कई अमीरों को आदेश दिया कि वे भी ऐसी ही गाड़ियां बनाएं[1] और उनके साथ मेरी उपस्थिति में रहें। सायंकाल के लगभग मैं देवराना नामक गाँव में अपने डेरे में पहुंचा। यह लगभग दो कोस[2] की दूरी पर था।

हिन्दुस्तान में यह रिवाज है कि जब कोई सुलतान शहजादा या अमीर पूर्व की ओर चढ़ाई करता है तो वे लम्बे दांत वाले हाथी पर सवार होते हैं। जब वह पश्चिम की ओर जाता है तो एक ही रंग वाले घोड़े पर बैठता है और जब उत्तर की ओर प्रयाण करता है तो पालकी की सवारी करता है और जब दक्षिण की ओर

---

1 जहांगीर ने पहले यह लिखा है कि प्रस्थान के समय बाबा खुर्रम को उसने एक अंग्रेजी ढंग की गाड़ी दी थी। जहांगीर के संस्मरण में सर टामस रो के सम्बन्ध में यह ही कुछ हवाला है। सर टामस रो 10 जनवरी 1616 से 21 जनवरी 1618 तक जहांगीर के डेरे में था।

2 सर टासम रो ने अजमेर से प्रस्थान के सम्बन्ध का यह वर्णन लिखा है। "इस प्रकार बहुत बढ़िया पोशाक पहिन कर बादशाह अपनी बग्गी में बैठा जो उसकी प्रतीक्षा कर रही थी और एक अंग्रेजी सेवक के हाथ में थी। यह भी किसी अभिनेता की भांति बहुत चमकीली पोशाक पहने हुए था और जिन चार घोड़ों को सधाया गया था वे भी सुनहरी साज से अलंकृत थे। जहांगीर के लिए इंगलैण्ड से एक बग्गी भेजी गई थी। यह बग्गी उसने इसे देखकर बनवाई थी और ऐसी ज्यों की त्यों थी केवल ढक्कन ही कुछ भिन्न था और उसी से मुझे पता लगा कि यह दूसरी बग्गी है। इसका ढक्कन ईरानी मखमल का बना हुआ था। इसी प्रकार की दूसरी बग्गी उसने अपनी प्रिय रानी नूरमहल के लिए बनवाई थी और एक ऐसी ही बग्गी में उसके छोटे बच्चे बैठे हुए थे। इसके पीछे बीस शाही हाथ थे।" केर लिखित 'कलैक्शन्स आफ वायेजेज एण्ड ट्रेवल्ज, भाग 9, पृ० 312।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कुछ करता है तो दो बैल वाली गाड़ी में बैठता है। मैं पांच दिन कम तीन वर्ष तक अजमेर में रहा। वहाँ पर ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की पवित्र दरगाह है। अजमेर दूसरी मौसम की सीमा में स्थित है।

मेरे सामने एक बड़ी तश्तरी भरे फल लाये गये। उनमें कारेज, बदखशा और काबुल के प्रसिद्ध खरबूजे थे और काबुल के तथा समरकन्द के अंगूर भी थे। इनके अतिरिक्त मजद के मीठे अनार और फरोह के भी खटमीठे अनार थे। समरकन्द और बदखशाँ की नासपातियाँ थीं। कश्मीर, काबुल, जलालाबाद और समरकन्द के सेब थे। फिरंगियों के बन्दरगाहों के अनन्नास भी तश्तरियों में थे। इसके कुछ पौधे आगरे में मेरे निजी बाग में लगाये गये थे और कुछ दिन बाद उनमें ऐसे कई हजार फल लगे थे। इनमें कौला नामक फल भी था। यह नारंगी से छोटा होता है और मीठे रस से भरा रहता है। बंगाल के सूबे में यह बहुत उत्पन्न होता है। इन स्वादिष्ट फलों का मैंने खूब उपयोग किया। इसके लिए सर्वशक्तिमान ईश्वर को धन्यवाद देने के लिए मेरे पास पर्याप्त शब्द नहीं हैं। मेरे पिता को भी फलों का और विशेषकर खरबूजे, अनार और अंगूरों का बड़ा शौक था। परन्तु उसके समय में कारेज के खरबूजे, जो सर्वोत्तम होते हैं, यजद के अनार, जो संसार भर में प्रसिद्ध हैं और समरकन्द की नासपातियाँ हिन्दुस्तान में कभी नहीं आईं। इसलिए जब मैं यह आनन्द लूटता हूँ तो मुझे खेद होता है कि इसमें सम्मिलित होने के लिए मेरा पिता यहाँ नहीं है।

जब मैं शहजादा था तो मैंने वचन दिया था कि मीर जियाउद्दीन, जो कजवीन का एक सैयद है, उसके दो पुत्रों को बंगाल का मालदा जिला अलतमगा के रूप में दिया जायगा। जब मैं राजसिंहासन पर बैठा तो मैंने उसको मुस्फखाँ की उपाधि दी और इस यात्रा में मैंने अपना वचन पूरा किया जिससे मुझे बड़ा आनन्द हुआ।

मांडू

मांडू मालवा सूबे का एक मण्डल है और इसकी सारी आय एक करोड़ और इकतीस लाख दाम होती है। यह नगर इस देश के राजाओं की बहुत समय तक राजधानी था। पुराने राजाओं के भवन और खंडहर अभी तक खड़े हुए हैं। वे अभी तक नष्ट नहीं हुए हैं। 24 तारीख को मैं शाही भवन देखने के लिए सवार हुआ। सबसे पहले मैंने जामा मस्जिद देखी जिसका निर्माण सुलतान हुशंग गौरी ने करवाया था। यह विशाल भवन है और कटे हुए पत्थरों का बना हुआ है। यह इमारत 180 वर्ष से खड़ी हुई है। परन्तु ऐसी मालूम होती है मानों आज ही बनाई गई है।

इसके बाद मैं खिलजी राजवंश के सुलतानों और शासकों की कब्रें देखने गया। इनमें एक कब्र सुलतान गयासुद्दीन के पुत्र नासिरुद्दीन की है। यह व्यक्ति

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हमेशा के लिए अभिशप्त है । यह इसलिए बदनाम है कि इस घृणित नीच ने जब उसका पिता अस्सी वर्ष का था तो उसे विष देकर दो बार मारने का प्रयत्न किया था । परन्तु इस वृद्ध सुलतान ने बा-जहर का प्रयोग करके अपना जीवन बचाया । तीसरी बार नासिरुद्दीन ने अपने हाथ से उसको एक शर्बत का प्याला दिया जिसमें विष घुला हुआ था और आग्रह किया कि वह इसे अवश्य पिए । पिता ने जब देखा कि उसका पुत्र इस पर तुला ही हुआ है तो उसने अपनी भुजा से बा-जहर हटा कर उसके सामने रख दिया और अपने निर्माता के समक्ष सिर झुका कर कहा "हे मालिक अब मेरी आयु अस्सी वर्ष की हो चुकी है । यह समय मेरा ऐसे सुख, समृद्धि और आनन्द में कटा है कि शायद ही किसी सुलतान का इस प्रकार कटा हो । यह मेरे जीवन का अन्तिम क्षण है । मैं प्रार्थना करता हूँ कि मेरे खून के लिए मेरे पुत्र नासिर को उत्तरदायी न माना जाय । मेरी मृत्यु स्वाभाविक समझी जाय और ईश्वर मेरे पुत्र को इसके लिए उत्तरदायी न ठहराये ।" यह कहकर उसने विषपूर्ण शर्बत पी लिया और उसके जीवन का अन्त हो गया । उसने कहा था कि उसने ऐसा विलास और आनन्द भोगा है जो किसी अन्य सुलतान ने नहीं भोगा होगा । उसका अभिप्राय: यह था कि जब 48 वर्ष की आयु में वह राजसिंहासन पर बैठा तो उसने अपने मित्रों और साथियों से कहा कि मैंने अपने पिता के समय में अपने तीस वर्ष सेना का नेतृत्व करने में व्यतीत किये हैं और हमेशा सैनिकोचित कार्य किया है । अब मुझे राजसत्ता प्राप्त हो गई है और विजय की कोई आकांक्षा नहीं है । मेरी इच्छा केवल यह है कि शेष जीवन भोग विलास में व्यतीत करूं । ऐसा कहा जाता है कि उसके अन्त:पुर में पन्द्रह हजार स्त्रियाँ थीं । उसने एक ऐसा नगर बसाया था जिसमें केवल स्त्रियाँ ही स्त्रियाँ रहती थीं और उनको सब प्रकार की कलाएँ और हुनर सिखाये गये थे । नगर के प्रबन्ध के लिए फौजदार, न्यायाधीश और अन्य अफसर सब स्त्रियाँ ही थीं । जब कभी वह सुनता कि अमुक लड़की रूपवती है तो जब तक वह उसे न बुला लेता तब तक उसे चैन नहीं पड़ता था । उसको शिकार का भी बड़ा शौक था । उसने एक हिरनों का बाग बनवाया था । इसमें सब प्रकार के पशु एकत्र किये गये थे । स्त्रियों के साथ इस बाग में वह शिकार करके आनन्द का उपभोग किया करता था । अपने प्रारम्भिक निश्चय के अनुसार अपने बयालीस वर्ष के शासन-काल में उसने कोई आक्रमण नहीं किया और अपना सारा समय आराम और आनन्द में बिताया । उसके राज्य पर किसी शत्रु ने भी आक्रमण नहीं किया । ऐसा कहा जाता है कि अपने राज्यकाल में शेरखाँ अफगान भी नासिरुद्दीन की कब्र पर आया था । यद्यपि उसका स्वभाव पाशविक था तो भी इसके उपरोक्त लज्जापूर्ण कार्यों का वृत्तान्त सुनकर उसने अपने आदमियों को आदेश दिया था कि इस कब्र को लकड़ियों से पीटें । जब मैं उस कब्र पर पहुँचा तो मैंने भी उसको कई बार लातें मारीं और अपने साथियों को भी ऐसा ही करने का आदेश दिया । मुझे इससे भी सन्तोष नहीं हुआ । इसलिए मैंने आदेश दिया कि कब्र को खोला जाय और उस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नापाक नीच की हड्डियों को आग में डाला जाय। परन्तु जब मुझे स्मरण आया कि आग तो अमर प्रकाश का एक अंश है और इसे ऐसे गन्दे पदार्थ से अपवित्र करना अनुचित है, इसलिए मैंने उसकी हड्डियों को जलाने का विचार त्याग दिया क्योंकि ऐसा करने से कहीं परलोक में उसका दण्ड माफ न कर दिया जाय। मैंने आदेश दिया कि उसकी जीर्ण हड्डियों को और शरीर की मिट्टी को नर्वदा में डाल दिया जाय क्योंकि ऐसा कहा जाता है कि अपनी युवावस्था में उसका स्वभाव बड़ा गरम था और वह हमेशा पानी में रहा करता था। ऐसी प्रसिद्धि है कि एक दिन उन्मुक्त होकर वह कालियादह नामक तालाब में, जो बहुत गहरा था, कूद पड़ा। उसके महल के कुछ नौकरों ने उसके बाल पकड़ कर बाहर खींच लिया। जब उसको होश आया और मालूम हुआ कि क्या हुआ और उसे बाल पकड़ कर खींचा गया है तो वह उन लोगों से इतना क्रुद्ध हुआ कि उसने उनके हाथ काट डालने का आदेश दिया। जब वह दूसरी बार तालाब में गिरा तो किसी ने भी उसे बाहर निकालने का यत्न नहीं किया और वह डूब कर मर गया। अब उसकी मृत्यु के 110 वर्ष बाद यह हुआ है कि उसकी सड़ी हुई मिट्टी को पानी में मिला दिया गया है।

एक रात्रि को मैंने अपने दरबारियों की बात को बदल कर उनसे कहा कि मैं पहले शिकार का बड़ा शौकीन था। मेरे मन में यह भी आया कि जितने पशु और पक्षी मैने बुद्धि प्राप्त करने से पहले मारे हैं गिने जा सकते हैं कि नहीं। इसलिए मैंने समाचार-लेखकों को, शिकारियों को और अन्य अफसरों को पता लगा कर उन विविध पशु और पक्षियों की सूची बनाने का आदेश दिया जो मैंने मारे थे और यह भी कहा कि यह सूची मुझे बतलाई जाय। इसके अनुसार एक कागज तैयार हुआ जिससे मालूम हुआ कि मेरी बारह वर्ष की अवस्था से (988 हिजरी) से गत वर्ष के अन्त तक अर्थात् मेरे शासन के ग्यारहवें वर्ष तक और मेरी आयु के पचासवें चन्द्र वर्ष तक मैंने 28532 पशु और पक्षी मारे थे। इनमें से 17168 पशु पक्षी घास खाने वाले थे। इनको मैंने पहले अपने हाथ से मारा था। इनका विवरण निम्न-लिखित[1] है।

शासन का बारहवाँ वर्ष

मेरे शासन के बारहवें वर्ष का नौरोज 12 रबी-उल-अव्वल 1026 हिजरी (10 मार्च 1617 ई०) को पड़ा।

तम्बाकू का निषेध

मेरे लोगों के स्वास्थ्य और मस्तिष्क पर तम्बाकू पीने का बड़ा बुरा प्रभाव हुआ था। इसलिए मैंने आदेश दिया कि कोई व्यक्ति यह आदत न डाले। मेरा भाई शाह अब्बास भी इसके कुप्रभाव से परिचित है। इसलिए ईरान में उसने इसके प्रयोग

1 सर एच० एम० ईलियट ने एक संक्षिप्त वृत्तान्त लिखा है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के विरुद्ध आदेश जारी किया है। परन्तु खान-ए-आलम को तम्बाकू पीने का ऐसा व्यसन हो गया है कि वह उसे नहीं छोड़ सकता। वह प्रायः पिया करता है।

दरबार में शहजादा खुर्रम

वृहस्पतिवार 20 मिहर को और मेरे शासन के वारह वर्ष में अर्थात् 11 शव्वाल 1026 हिजरी को लगभग तीन बजे तीसरे पहर शहजादा खुर्रम आकर माण्डू के किले में मेरे समक्ष उपस्थित हुआ। वह दरवार से ग्यारह महीने और ग्यारह दिन अनुपस्थित रह चुका था। जव वह मुझसे सलाम कर चुका तो मैंने उसको उस झरोखे में बुलाया जहाँ मैं बैठा हुआ था और पितृ-प्रेम से प्रेरित होकर मैंने तुरन्त उठकर उसे अपनी बाहों में ले लिया। ज्यों-ज्यों वह मेरे प्रति आदर और श्रद्धा प्रकट करता था त्यों-त्यों उसके प्रति मेरा स्नेह उमड़ता था। मैंने उसको अपने पास बैठने का आदेश दिया। उसने एक हजार स्वर्ण मुद्राएँ और एक हजार रुपये मुझे भेंट किए।

पहले जब राणा पर विजय प्राप्त हुई थी तो शहजादा खुर्रम को बीस हजार का मनसब और दस हजार सवार का सम्मान दिया जा चुका था। फिर जव वह दक्खिन को भेजा गया तो उसको शाह की उपाधि प्रदान की गई थी। अव उसकी वर्तमान सेवा को देखकर मैंने उसका मनसब तीस हजार कर दिया और सवार बढ़ाकर बीस हजार कर दिए। उसकी उपाधि भी अव शाहजहाँ कर दी गई। यह भी आदेश दिया गया कि अव दरवार में मेरे सिंहासन के पास उसके लिए कुर्सी लगाई जाय। यह सम्मान विशेषकर उसी को दिया गया था। मेरे कुटुम्ब में पहले यह किसी को नहीं मिला था।

कश्मीर से सूचना आई कि एक रेशम के व्यापारी के घर में ऐसी दो लड़कियाँ पैदा हुई हैं जिनके जन्म से ही मुंह में दाँत हैं और दोनों पीठ की ओर कमर तक जुड़ी हुई हैं और उनके सिर, हाथ और पैर सब अलग-अलग हैं। वे थोड़ी देर ही जीवित रहीं। फिर मर गईं।

सोमवार तारीख 2 को मैंने तालाव के तट पर जहाँ मेरे डेरे लगे हुए थे, सवके साथ बैठकर शराव पी।

गुजरात की यात्रा

शुक्रवार तारीख 1 दे को मैंने पौने चार कोस कूच किया और झनूद के तालाव के किनारे डेरे लगवाए। यहाँ पर शाही पैदल सेना का अध्यक्ष रायमान एक राहु मछली पकड़कर मेरे पास लाया। मुझे इस मछली का बड़ा शौक था। हिन्दुस्तान की मछलियों में यह सर्वोत्तम है। जब से मैंने चन्दा की घाटी छोड़ी तव से अब तक अर्थात् ग्यारह मास में ऐसी मछली मुझे नहीं मिली थी। यद्यपि सब प्रकार तलाश की गई थी। आज यह मछली प्राप्त होने पर मैं वहुत प्रसन्न हुआ और रायमान को एक घोड़ा दिया गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यद्यपि दाहद के परगने से गुजरात का देश माना जाता है तथापि इस मन्जिल पर मुझे सब चीजें अर्थात् जंगल और खेती भिन्न मालूम होने लगी। लोग और उनकी भाषा भी भिन्न थी । रास्ते में जो भी जंगल मैंने देखे, फलों से लदे हुए थे। इनमें आम, खिरनी और इमली थी। खेतों के जकूम वृक्ष के काँटों की वाड़ लगी हुई थी। किसान लोग अपने-अपने खेतों को अलग करने के लिए उनके आस-पास इन काँटों की बाड़ें लगा देते हैं और उनके बीच में राहगीरों के वास्ते जगह छोड़ देते हैं। भूमि इतनी रेतीली है कि थोड़े से मुसाफिरों के चलने से ही इतनी धूल उड़ती है कि एक दूसरे का मुख भी बड़ी कठिनता से दिखाई देता है। इसलिए मेरे मन में यह बात आई कि आज से अहमदाबाद को इस नाम से नहीं वरन् गर्दाबाद के नाम से पुकारा जाय।

खम्भात

शुक्रवार के दिन हम साढ़े छः कोस चले और समुद्र के तट पर डेरे लगाए। खम्भात प्राचीन बन्दरगाह है और ब्राह्मण लोगों के मतानुसार इसको बने हुए कई हजार वर्ष हो गए हैं। आरम्भ में इसका नाम त्रिम्बावती था और इसका शासक राजा नृसिह मखवार था। ब्राह्मणों ने इस राजा का विस्तारपूर्वक वर्णन लिखा है। उसको दोहराने से बड़ा विस्तार हो जायगा। संक्षेप यह है, कि जब राजा अभिकुमार को राज्य मिला, जो राजा नृसिह मखवार का वंशज था तो ईश्वर की इच्छा से इस नगर पर बड़ी विपत्ति आई। धूल और कूड़े की वर्षा हुई जिससे सब मकान ओर भवन ढक गए और बहुत से आदमी नष्ट हो गए। इस विपत्ति के पहले एक मूर्ति ने, जिसकी यह राजा पूजा किया करता था, उसके सामने स्वप्न में प्रकट होकर इस भावी विपत्ति की सूचना दी। इसलिए वह अपने कुटुम्ब के साथ एक जहाज पर सवार हुआ और उस मूर्ति को तथा उस स्तम्भ को जिस पर वह स्थित थी अपने साथ ले लिया। फिर ऐसा हुआ कि वह जहाज तूफान से घिर गया। परन्तु राजा के भाग्य में कुछ समय और जीवित रहना था। इसलिए वह उस स्तम्भ के सहारे से जहाज को और अपने आपको किनारे तक ले आया। तब उसने उस स्तम्भ को स्थापित करके यह प्रकट किया कि उसका इरादा वहाँ एक नगर बनाना और बसाना है। हिन्दी में इसको खम्भ कहते हैं। इसलिए इस नगर का नाम खम्भावती हो गया जो शनैः-शनैः विगड़कर खम्भात बन गया। हिन्दुस्तान में यह बन्दरगाह सबसे बड़े बन्दरगाहों में है और उमान के समुद्र के मुहाने पर स्थित है। इसमें मुहाने की औसत चौड़ाई सात कोस और लम्बाई चालीस कोस मानी जाती है। इसमें जहाज नहीं घुस सकते। वे गोगा के बंदरगाह में लंगर डालते हैं जो खम्भात के अधीन है और गहरे समुद्र के समीप है। यहाँ से माल नावों पर लादकर खम्भात ले जाया जाता है और जो माल बाहर भेजा जाता है, उसको भी जहाज तक इसी प्रकार ले लाया जाता है। मेरी विजयी सेना के आने से पहले कितनी ही नावें योरोप के बन्दरगाहों से खम्भात आ पहुंची थीं और उनमें आने वाले लोग क्रय-विक्रय करके

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वापस जाने वाले थे । रविवार तारीख 10 को उन्होंने अपनी नावें सजाईं और मुझे दिखाईं और फिर अपने उद्दिष्ट स्थान के लिए विदा ली। सोमवार तारीख 11 को मैं एक नाव पर सवार होकर एक कोस तक गया ।

गुजरात के सुलतान के समय में तमगा या व्यापारियों से लिया जाने वाला कर बहुत बड़ा था । अब मैंने आदेश दिया कि चालीसवें भाग से अधिक न लिया जाय और स्थानों पर सीमा शुल्क के अफसर दसवाँ या बीसवाँ भाग लेते हैं और व्यापारियों तथा मुसाफिरों को सब भाँति सताते हैं और तंग करते हैं । जद्दा और मक्का में यह कर एक चौथाई है और कभी-कभी इससे भी अधिक ले लिया जाता है । इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि पिछली हुकूमतों में गुजरात के बन्दरगाहों पर कितना महसूल लिया जाता होगा । ईश्वर को धन्यवाद है कि उस सर्वशक्तिमान भगवान के इस विनीत सेवक ने तमगा लगाना बन्द कर दिया है जिससे अपार धनराशि प्राप्त होती थी । अब मेरे समस्त साम्राज्य से तमगा का नाम भी विलीन हो गया है ।

सिक्के

इन्हीं दिनों में यह भी आदेश दिया गया कि सोना और चाँदी के टंक जो प्रचलित मोहर और रुपए से दस और बीस गुने अधिक भारी हों, ढाले जाएँ[1] । सोने के टंक के एक तरफ 'जहाँगीरशाह 1027 हिजरी' और दूसरी तरफ "खम्भात में ढला, बादशाह के शासन का बारहवाँ वर्ष" लिखा रहता था । चाँदी के टंक के एक ओर जहाँगीरशाह 1027 हिजरी लिखा रहता था और उसके चारों ओर एक छन्द होता था जिसका अर्थ है "यह सिक्का जहाँगीर शाह ने ढलवाया है जो विजय की किरण है ।" दूसरी ओर "खम्भात में ढला" बादशाह के शासन का बारहवाँ वर्ष" लिखा रहता था और इसके आसपास एक छन्द था जिसका अर्थ था—"दक्षिण की विजय के बाद वह माँडू से गुजरात आया ।" इससे पहले ताँबे के सिवाय और किसी के टंक नहीं बने थे । सोने और चाँदी के टंक का आविष्कार मैंने ही किया था । इसलिए मैंने उनका नाम जहाँगीरी टंक रखा था ।

खुरदा की विजय

पूर्वी प्रान्तों से खबर आई कि मौजमखाँ के पुत्र मुकर्रमखाँ ने, जिसको उड़ीसा की सूबेदारी पर नियुक्त किया गया था, खुरदा के प्रदेश को जीत लिया है और वहाँ के राजा ने राजा महेन्द्र के दरबार में शरण ली है । इस सेवा के

---

1 अपने शासन के सोलहवें वर्ष में उसने ईरानी राजदूत को नूरजहाँनी स्वर्ण मुद्रा दी थी जिसका वजन सौ तोले था और अपने सोलहवें वर्ष में आदिलखाँ के वकीलों को एक सोने की मुहर दी थी जिसका नाम कोकाबतोला था और जो पाँच सौ प्रचलित स्वर्ण मुद्राओं के बराबर थी । दसवें वर्ष में उसने इसी तोल की एक मोहर आदिलखाँ के राजदूत को दी थी परन्तु उसका नाम उसने नूरजहाँनी लिखा है ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुरस्कारस्वरूप खान का मनसब तीन हजार का कर दिया गया और उसके सवार दो हजार कर दिए गए। उसको नक्कारा, घोड़ा और खिलत का सामान दिया गया। उड़ीसा और गोलकुण्डा के सूबों के बीच राजा खुरदा और राजा महेन्द्र इन दो जमींदारों के इलाके थे। मेरी सरकार के सेवकों ने खुरदा के राजा के इलाकों पर अधिकार कर लिया है और यह आशा की जाती है कि बादशाह के शुभग्रहों के प्रभाव से राजा महेन्द्र के इलाके भी सुरक्षित इलाकों में जोड़ दिए जाएँगे।

गुजरात का जाम

जब माही नदी के तट पर शाही डेरे लग गए तो जाम नामक जमींदार दरबार में उपस्थित हुआ। जब उसे भूमि चुम्बन का सम्मान प्राप्त हो गया तो उसने पचास घोड़े, सौ मोहर और सौ रुपए नजर किए। उसका नाम जसा था और जाम उसकी उपाधि थी। इस राज्य के प्रत्येक उत्तराधिकारी की यही उपाधि होती है। सूबा गुजरात में ये बड़े से बड़े जमींदारों में माना जाता है। उसके राज्य की सीमा पर समुद्र है। उसके पास पाँच या छः हजार सवार रहते हैं। परन्तु युद्ध के समय वह दस-बारह हजार सवार एकत्र कर लेता है। इस इलाके में बहुत से अच्छे घोड़े हैं। काछी घोड़े की कीमत दो हजार या तीन हजार रुपए होती है। मैंने जाम को एक खिलत प्रदान की।

शासन का तेरहवाँ वर्ष

23 रबी-उल-अव्वुल 1027 हिजरी (10 मार्च 1618 ई०) के रविवार की रात्रि को जब सूर्य को अस्त हुए दो घंटे हो गये थे तो जो प्रकाश पुंज नक्षत्र संसार को अपनी उदारता से लाभान्वित करता है उसने मेष राशि में प्रवेश किया। मेष-राशि राशि-चक्र का प्रथम चिह्न है। इस नौरोजा को, जो जगत को प्रकाश प्रदान करता है ईश्वर के इस विनीत सेवक का बारहवाँ शासन वर्ष समाप्त हुआ। यह वर्ष आनन्द में बीता और अब नया शुभ और समृद्ध वर्ष शुरू हुआ।

वृहस्पतिवार 2 फरवरदीन को मेरा चन्द्र जन्म-दिन था। इस दिन मेरी तुला होती थी। इसी दिन मेरा इक्यावनवाँ सुखद जन्म-दिन प्रारम्भ हुआ। ईश्वर करे कि मेरी आयु के शेष दिन भी ईश्वर की इच्छानुसार काम में बीतें और उसकी दया पर विचार किए बिना एक भी क्षण न जावे। जब तुला हो चुकी तो मद्य-गोष्ठी की गई और राजसिंहासन के परिचित सेवकों को शराब पिलाई गई और वे बहुत प्रसन्न हुए।

इस महीने की 21 तारीख को मंगल की रात में मैंने अहमदाबाद को वापसी के लिए कूच किया। इस समय प्रचंड गर्मी थी और दम घुटा जा रहा था। इससे साथ चलने वालों को बड़ा ही कष्ट होता था और आगरा पहुंचने से पहले बहुत लम्बा रास्ता तय करना था। इसलिए मेरे मन में यह बात आई कि इस गर्मी में मांडू में ठहरना अधिक अच्छा होगा। मैंने गुजरात की वर्षा ऋतु की बड़ी प्रशंसा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुन रखी थी और अहमदावाद और माँडू का कोई मुकावला भी नहीं था। इसलिए मैंने अन्त में निश्चय किया कि अहमदावाद में ही ठहरा जाय। सर्वशक्तिमान ईश्वर ने इस विनीत प्राणी की सदा और सर्वत्र सहायता और रक्षा की है। यह इस बात से प्रकट होता है कि इसी समय मुझे सूचना मिली कि आगरे में एक व्यापक रोग फैल गया है और बहुत से लोग नष्ट हो गए हैं। इस कारण मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि आगरे की ओर कूच करना स्थगित कर दिया जाय। यह बात ईश्वर की प्रेरणा से ही हुई।

सिक्के

पहले यह रिवाज था कि सिक्के के एक ओर मेरा नाम उभारा जाता था और दूसरी ओर शासन मास और शासन का संवत् होता था। अब मेरे मस्तिष्क में यह बात आई कि मास के नाम के बजाय उस मास की राशि की सूरत बनाई जाय जैसे फरवरदीन के महीने में मेंढे की, उर्दी बिहिस्त के महीने में बैल की और इसी प्रकार दूसरी शक्लें बनाई जाएँ अर्थात् जिस मास में भी वह सिक्का बना उस मास में जिस नक्षत्र में सूर्य हो उसी की शक्ल सिक्के पर उभार दी जाय। यह नई बात मैंने ही जारी की थी। पहले ऐसा कभी नहीं हुआ था।

मद्यपान

बृहस्पतिवार के दिन हकीम मसीह उज जमा के लिए बीस हजार दरब और हकीम रुहुल्ला के लिए सौ स्वर्ण मुद्राएँ तथा एक हजार रुपए मंजूर किए गए। इन लोगों को मालूम था कि गुजरात का जलवायु मेरे स्वास्थ्य के अनुकूल नहीं है। इसलिए उन्होंने मुझसे कहा कि यदि मैं प्राय: जितनी शराब पीता हूँ और अफीम खाता हूँ उसकी मात्रा कम कर दूँ तो मेरी शिकायत एकदम दूर हो जाएगी। अत: मैंने प्रथम दिन ही उनकी सलाह से बड़ा लाभ उठाया।

जहाँगीर की बीमारी

शनिवार के दिन मुझे बड़ा सिर दर्द हुआ। इसके पश्चात् ज्वर हो गया। उस रात्रि को मैंने इतनी शराब नहीं पी जितनी मैं नित्य पीता था। मध्य रात्रि के पश्चात् इसका प्रभाव प्रकट होने लगा और ज्वर अधिक हो गया। मैंने प्रात:काल तक बिस्तर में इधर-उधर लुढ़कता रहा। रविवार के सायंकाल ज्वर कम हुआ और मुल्तान के कुछ हकीमों की सलाह से मैंने उतनी शराब पी जितनी प्राय: पीता था। उन्होंने बार-बार यह भी कहा कि मैं दाल और चावल का कुछ शोरवा खाऊँ परन्तु मैं कुछ नहीं खा सका। जहाँ तक मुझे स्मरण है अपने होश में मैंने ऐसा शोरवा नहीं पिया था और मैं आशा करता हूँ कि इसके लिए मुझे भविष्य में बाध्य नहीं किया जायगा। जब मेरे सामने खाना आया तो मुझे खाने की इच्छा नहीं हुई। सारांश यह है कि मैं तीन दिन तक उपवास करता रहा। यद्यपि मुझे ज्वर केवल एक दिन और एक रात ही रहा परन्तु मैं उससे इतना निर्बल हो गया मानो मैं बहुत दिन से बिस्तर में पड़ा हुआ हूँ। मेरी भूख बिल्कुल जाती रही।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अहमदाबाद

मेरी समझ में यह नहीं आता कि इस नगर के संस्थापक को इस कुभूमि में क्या सुन्दरता और उत्तमता दिखाई दी जिससे उसने यहाँ पर एक नगर बसाने की इच्छा की और उसके वाद न जाने कैसे लोगों ने अपने वहुमूल्य जीवन के दिन इस गन्दी जगह में व्यतीत किए। यहाँ पर सदा गर्म हवा चलती है और पानी वहुत कम वरसता है। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि यह स्थान बड़ा रेतीला है और यहाँ का वायुमण्डल धूल से भरा रहता है। यहाँ का जल अत्यन्त खराव और प्रतिकूल है और नगर के सहारे जो नदी है वह हमेशा सूखी पड़ी रहती है। केवल वर्षाऋतु में ही उसमें पानी आता है। कुओं का जल भी कड़वा और खारा है और बाहर के तालाबों का जल छाछ-सा दिखाई देता है क्योंकि धोवी लोग इसमें साबुन वहुत मिला देते हैं। सम्पन्न लोगों के घरों में छोटे-छोटे हौज बने हुए हैं जो वर्षा-ऋतु में वरसात के पानी से भर लिए जाते हैं और फिर साल भर लोग इसी पानी को पीते हैं। यह प्रत्यक्ष है कि जिस पानी पर होकर हवा नहीं चलती है, वह बड़ा हानिकारक होता है और जब पानी निकलने नहीं पाता है तो वह सड़ने लगता है। नगर के बाहर हरियाली या फूलों के वजाय सारी जमीन जकूम (काँटेदार झाड़ियों) से पटी हुई है और झाड़ियों में होकर जो हवा चलती है उसका प्रभाव सबको विदित है। मैंने पहले कहा है कि इस नगर का नाम गर्दावाद होना चाहिए परन्तु अब मैं नहीं कह सकता कि इसका नाम क्या रखा जाय। समूमिस्तान हो या वीमारिस्तान हो या जकूमदार या जहन्नुमावाद हो।

काव्य

इन दिनों में यह समाचार मिला कि सेनापति खानखाना ने, जो मेरा सलाह-कार भी था, एक गजल बनाई है जो एक प्रसिद्ध छन्द की तर्ज पर है "एक गुलाव के पुष्प के लिए सौ काँटों का दर्द सहन करना चाहिए।" इसी प्रकार मिर्जा रुस्तम सफवी और उसके पुत्र मिर्जा मुराद ने भी अपनी प्रतिभा का उपयोग किया है। तुरन्त ही मेरे दिमाग में यह निम्नलिखित शेर आया :

"अपनी प्रेमिका की उपस्थिति में मद का एक प्याला पीना चाहिए। बादल घने हैं और यह मद्यपान का उचित समय है।

मेरे दरवारियों में से जो वहाँ उपस्थित थे और जिनको कविता से अनुराग था, उन्होंने गजलें बनाईं और मुझे सुनाईं। जिस छन्द का उल्लेख किया जा चुका है वह बहुत प्रसिद्ध है और इसकी रचना मौलाना अव्दुर्रहमान जानी ने की है। मैंने यह सारी गजल पढ़ी है। केवल वह छन्द नहीं पढ़ा है जो लोगों की जवान पर एक प्रकार से कहावत वन गई है। दूसरे शेर सुन्दर नहीं हैं। वास्तव में वे सीधे-सादे और मामूली हैं।

चित्र

इस दिन अवुलहसन नामक एक चित्रकार जिसको नादिर-उज-जमा की उपाधि है मेरे दरवार की तस्वीर बनाकर मुझे नजर करने आया। यह जहाँगीरनामा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के प्रथम पृष्ठ पर लगाया गया था। यह प्रशंसा के योग्य था, इसलिए मैंने उसे अनुग्रहों से लाद दिया। वह बहुत ही अच्छा चित्रकार था और उसके समय में उसके समान कोई नहीं था। यदि इस समय अबुल हे और बिहजाद जीवित होते तो वे उसके चित्रकारी के प्रेम को सराहते। जब मैं शहजादा था तो उसका पिता आका रजा सदा मेरे साथ रहता था और उसके पुत्र का जन्म मेरे घर में हुआ था। परन्तु पुत्र पिता से बहुत बढ़कर निकला। मैंने उसको अच्छी शिक्षा दी और उसके लड़कपन से ही उसकी बुद्धि विकसित की। वह अपने समय का बहुत ही प्रसिद्ध पुरुष हो गया। उसके बनाए हुए चित्र बड़े ही सुन्दर थे। मंसूर भी चित्रकला का आचार्य है और उसको नादिर-उल-असली की उपाधि है। मेरे पिता के और मेरे समय में इन दो चित्रकारों की बराबरी करने वाला कोई नहीं हुआ। मुझे चित्रों का बड़ा शौक है और उनको परखने की मुझमें इतनी योग्यता है कि मैं भूत और वर्तमान के चित्रकारों के नाम बतला सकता हूँ। यदि कई चित्रकार एक प्रकार की तस्वीरें बनावें तो मैं प्रत्येक चित्र के निर्माता का नाम बतला सकता हूँ। यदि एक चित्र को कई कलाविदों ने बनाया हो तो मैं उन चित्रकारों के नाम बतला सकता हूँ जिन्होंने उस चित्र के विभिन्न भाग बनाए हों। वास्तव में मैं यह बतलाने में भूल नहीं कर सकता कि किसने भौंहें बनाई हैं और किसने पलकें बनाई हैं और किसी चित्र को पहले एक चित्रकार[1] ने बनाया हो और फिर दूसरे ने उस पर कुछ कलम मारी हो तो भी मैं उसको बतला सकता हूँ।

बादशाह के संस्मरणों का प्रकाशन

अब जहाँगीरनामा में बारह वर्ष की घटनाएँ लिखी जा चुकी थीं। इसलिए मैंने अपने पुस्तकालय के मुतसद्दियों को आदेश दिया कि उनकी एक जिल्द बना लें और उनकी कई नकलें करें जिससे वे राजसिंहासन के मुख्य सेवकों में बाँटी जा सकें और देश के समस्त भागों में भेजी जा सकें और बड़े तथा प्रभावशाली लोग उनका अध्ययन कर सकें। शुक्रवार के दिन मेरे एक लेखक ने एक नकल तैयार करके तथा उसकी जिल्द बनाकर मेरे सामने पेश की। यह प्रथम प्रति थी इसलिए मैंने यह शहजादा शाहजहाँ को दे दी। मैं उसको अपने पुत्रों में सबसे उत्तम समझता था। उसके ऊपर मैंने अपने हाथ से ही लिखा कि यह उसको अमुक दिन और अमुक स्थान पर भेंट की गई थी। ईश्वर करे कि उसको इसके विषय में जानने की योग्यता प्राप्त हो। इससे उसको भगवान का अनुग्रह और उसके बन्दों का आशीर्वाद प्राप्त होगा।

---

1 उसके समय में हिन्दुस्तान में ऐसे चित्रकार मिलते थे जिन्होंने उत्तम से उत्तम यूरोपीय चित्रों की ज्यों की त्यों नकल कर दी थी, जो ऐसे थे कि मूल के साथ मुकाबला कर सकते थे। वह यूरोप के विज्ञानों का पक्षपाती था। यही कारण था कि वह जेसुइट लोगों की ओर झुका हुआ था। उनके लिए उसने लाहौर में एक गिरजा और निवास-स्थान भी बनवाया था। केट्राउ-हिस्ट्री आफ दी मुगल डायनेस्टी, पृ० 178।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वध

इस तारीख को एक बन्दी मेरे सामने लाया गया और मैंने उसके वध का हुक्म दे दिया। जल्लादों ने बहुत ही जल्दी काम किया और उसको दण्ड-स्थान पर ले जाकर मेरे आदेश को कार्यान्वित कर दिया। थोड़ी देर बाद मेरे एक दरबारी ने उसकी सिफारिश की तो मैंने उसको प्राणदान दे दिया परन्तु यह बोल दिया कि उसके पैर काट डाले जाएँ। परन्तु अपने भाग्यानुसार मेरे इस आदेश के पहुँचने से पहले ही वह मार दिया गया था। यद्यपि वह मृत्यु का पात्र था तो भी मुझे अफसोस हुआ और मैंने आदेश दिया कि जब किसी व्यक्ति को प्राण-दण्ड दिया जाय तो भविष्य में चाहे आदेश तत्काल वध करने का हो तो भी सूर्यास्त से पहले उसको कार्यान्वित न किया जाय। यदि उस समय तक उसके प्राण बचाने का कोई आदेश न मिले तो दण्ड दे दिया जाय।

दरबार में बाजार

मंगलवार की रात तारीख 19 को मेरे ही निवास-स्थान में बाजार लगाया गया। इससे पहले यह रिवाज था कि नगर की बनी हुई चीजें दूकानदार मेरे महल के मैदान में लाकर बिक्री के लिए जमाते थे। जवाहरात, जड़ाऊ चीजें, हथियार, रुई के कपड़े और अन्य चीजें ऐसे अवसरों पर यहाँ पर देखी जा सकती थीं। अब मेरे मन में यह बात आई कि यदि यह बाजार रात में लगाया जाय और हर एक दूकान के सामने बहुत-सी चिरागें जमाई जाएँ तो यह बहुत अच्छी और सुन्दर प्रदर्शनी होगी। वास्तव में जब ऐसा किया गया तो जैसा मैंने अनुमान किया था वैसा ही हुआ। यह एक नई बात हुई। मैं सब दूकानों पर गया और जवाहरात व अलंकृत वस्तुएँ आदि मुझे बहुत ही अच्छी मालूम हुईं।

मद्यपान

देश के इस भाग की जलवायु मेरे स्वास्थ्य के लिए लाभदायक नहीं थी और हकीमों ने मुझे सलाह दी थी कि मैं अपने मद्य की मात्रा कम करूँ। मैंने यह उचित समझा और ऐसा करना शुरू कर दिया। एक सप्ताह में मैंने लगभग एक प्याला मद्य कम कर दिया। पहले मैं प्रति रात्रि को छः प्याले पीया करता था और एक प्याले में साढ़े सात तोला मद्य होता था और सब मिलकर 45 तोला होता था। अब एक प्याले में 6¼ तोला शराब होती थी और सब मिलकर साढ़े सैंतीस तोला होती थी।

शिकार करना त्यागना

यह मेरे जीवन की एक उल्लेखनीय घटना है कि जब मैं सोलह वर्ष का था तो इलाहाबाद में मैंने ईश्वर के प्रति प्रण किया कि जब मेरी आयु पचास वर्ष की हो जायगी तो मैं शिकार करना छोड़ दूंगा और किसी प्राणी को कष्ट न दूंगा। मेरा एक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अत्यन्त विश्वस्त हाकिम मुकर्रबखां इस प्रण को जानता था। सारांश यह है कि जब मेरी आयु इतनी हुई और 50वें वर्ष का आरम्भ हुआ तो एक दिन ऐसा हुआ कि धुएँ और भाप की अधिकता से मैं भली प्रकार सांस भी न ले सका और मुझे बड़ा कष्ट हुआ। ऐसी स्थिति में मुझे एकाएक मानो ईश्वर की प्रेरणा से स्मरण आया कि मैंने क्या वचन दिया था और अब मैंने उस वचन को पूरा करने का निश्चय किया। मैंने अपने मन में इरादा किया कि इस पचासवें वर्ष के अन्त में मैं ईश्वर के निर्देश में रहकर मेरे पिता की कब्र पर जाऊँगा और उनकी पवित्र आत्मा से सहायता के लिए प्रार्थना करूँगा और फिर यह आदत बिल्कुल छोड़ दूंगा। ज्योंही मेरे मन में ये भाव आए तो मैं पीड़ा मुक्त हो गया और मुझे ताजगी तथा खुशी मालूम होने लगी। तब मैंने शीघ्र ही सर्वशक्तिमान ईश्वर को धन्यवाद दिया और मुझे विश्वास हो गया कि वह मुझे अपना निश्चय निभाने में सहायता देगा।

एक पुल

दूसरे मंजिल पर मैंने माही नदी को एक पुल के द्वारा पार किया जो उस पर बना गया था। यद्यपि इस नदी में पुल बनाने के योग्य नावें नहीं थीं और पानी भी खूब गहरा था तो भी अबुल हसन मीर बख्शी के सुप्रबन्ध से 140 गज लम्बा और 4 गज चौड़ा एक अच्छा सुदृढ़ पुल केवल तीन दिन में ही बन गया। उसकी दृढ़ता की जाँच करने के लिए मैंने अपना एक बहुत बड़ा हाथी और तीन चार हथनियाँ उस पर चलाईं। पुल इतना दृढ़ था कि इन पर्वत सदृश हाथियों के वजन से वह तनिक भी नहीं हिला।

धूमकेतु

शनिवार 17 जिलकदा। इससे कई रात्रि पूर्व सूर्योदय से कुछ पहले एक प्रकाशमान भाप स्तम्भ के रूप में प्रकट हुई और अगली प्रति रात्रि को यह आधा-आधा घण्टा पहले की अपेक्षा जल्दी उदय होने लगी। जब ये पूरी बढ़ चुकी तो यह भाले के समान दिखाई देती थी जिसके दोनों सिरे पतले थे और बीच का भाग मोटा था। यह दरांती की तरह कुछ मुड़ी हुई थी। इसकी पीठ दक्षिण की ओर धार उत्तर की ओर थी। पूर्वोक्त तारीख को सूर्य उदय से तीन घण्टे पूर्व इसका उदय हुआ। ज्योतिषियों ने ज्योतिष यन्त्रों से इसके आकार को नापा और औसत से यह 24 अंश तक फैली हुई प्रतीत हुई। इसका मार्ग ऊँचे से ऊँचे मार्ग पर था। परन्तु इसकी गति अपनी ही थी। यह आकाश से स्वतन्त्र था। पहले यह वृश्चिक राशि में और फिर तुला राशि में प्रकट हुआ था। यह दक्षिण की ओर झुका हुआ था। ज्योतिषी लोग इसको भाला कहते हैं और उन्होंने लिखा है कि यह अरब देश के लिए अशुभ सूचक है। वहाँ के सरदारों पर शत्रु की सत्ता स्थापित हो सकती है। ईश्वर ही जाने यह कहाँ तक सत्य है।

इसके उदय के 16 रात्रि पश्चात् आकाश के उसी भाग में एक धूमकेतु उदय हुआ। इसका मुख्य भाग चमकदार था और इसके दो तीन गज लम्बी पूंछ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

थी। परन्तु पूँछ में प्रकाश या चमक नहीं थी। अब तक इसके उदय से लगभग आठ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। यह कब विलीन हुआ और इसके क्या परिणाम हुए इसको मैं ध्यानपूर्वक लिखूंगा।

एक कहानी

रास्ते में मैं ज्वार के खेत में होकर गया। यहाँ हर एक पौधे पर कम से कम 12 भुट्टियाँ थीं। दूसरे खेतों में एक पौधे पर प्रायः एक ही भुट्टी होती है। इससे मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ और मुझे बादशाह और माली की कहानी की याद आई। एक बादशाह ने गरमी के दिनों में एक बाग में प्रवेश किया। वहाँ उसे एक माली मिला। उसने माली से पूछा कि उसमें कोई अनार है या नहीं। माली ने उत्तर दिया कि हैं। तब बादशाह ने एक प्याला भर रस लाने को कहा और माली ने अपनी लड़की से आज्ञा पालन करने के लिए कहा। वह सुन्दर और चतुर लड़की थी। वह एक प्याला भर रस कुछ पत्तों से ढककर लाई। राजा ने पी लिया और फिर लड़की से पूछा कि उसने रस को पत्तों से क्यों ढका था। लड़की ने तुरन्त ही जवाब दिया कि इसलिए ढका था कि बादशाह उसे बहुत ही जल्दी न पी जाए। क्योंकि यात्रा की थकान के बाद रस पीना अच्छा नहीं है। बादशाह उस पर मुग्ध हो गया और उसको अपने महल में ले जाना चाहा। उसने माली से पूछा कि उसे बाग से प्रति वर्ष क्या लाभ होता है। माली ने उत्तर दिया 'तीन सौ दीनार'। फिर बादशाह ने पूछा कि वह दीवान को क्या देता है। माली ने उत्तर दिया कि "फलदार वृक्षों के लिए कुछ नहीं दिया जाता परन्तु खेती की उत्पत्ति का दशांश राज में दिया जाता है।" तब बादशाह ने मन में सोचा मेरे राज्य में अनेक वृक्ष और बाग हैं, यदि मैं उन पर दशांश कर लगा दूं तो मुझे बहुत रुपया मिलेगा। फिर उसने लड़की से एक प्याला अनार का रस और लाने को कहा। इस समय उसको लाने में देर लगी और वह लाई भी थोड़ा सा। बादशाह ने उससे कमी का कारण पूछा और कहा कि पहिले तो वह शीघ्र और बहुत-सा लाई थी, अब की बार उसने देर लगाई और लाई भी थोड़ा-सा। लड़की ने उत्तर दिया 'प्रथम बार तो एक अनार ही काफी था। इस बार मैंने कई अनार निचोड़े परन्तु उतना रस नहीं निकाला।' तब बादशाह अचंभित हो गया तो उसके पिता ने उत्तर दिया कि अच्छी उत्पत्ति बादशाह के स्वभाव पर निर्भर है। उसका विश्वास है कि उसका अतिथि बादशाह है। उसने बाग की उत्पत्ति के विषय में प्रश्न किया। उसके बाद ही उसकी नियत बदल गयी। यही कारण है कि प्याला रस से नहीं भरा। यह बात सुनकर सुलतान बड़ा प्रभावित हुआ और उसने कर माफ कर देने का निश्चय किया। थोड़ी देर बाद बादशाह ने लड़की से तीसरा प्याला लाने के लिए कहा। इस बार लड़की जल्दी ही आ गई और प्याला भी लबालब भरा हुआ था। इससे बादशाह को विश्वास हो गया कि माली का कहना ठीक था। तब सुलतान ने माली की सूक्ष्म बुद्धि की प्रशंसा की और उसे अपना पद बतला दिया और यह भी कह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दिया कि उसके मन में क्या-क्या बातें आई थीं। तव उसने माली से उसकी लड़की से विवाह करने की अनुमति माँगी जो इस भेंट और स्थिति की यादगार रहे और जिससे संसार को शिक्षा मिलती रहे। सारांश यह है कि उत्पत्ति का वाहुल्य शासक के न्याय और नेक नियति पर आश्रित है। सर्वशक्तिमान भगवान को धन्यवाद है कि मेरे राज्य में फलदार वृक्षों के लिए कोई कर नहीं लिया जाता और मैंने यह भी आदेश दिया कि कोई कृष्ट जमीन में वाग लगाए तो उससे कोई लाभ न लिया जाए। मेरी प्रार्थना है कि सर्वशक्तिमान ईश्वर इस विनीत प्राणी के मन में अच्छे और शुद्ध विचार ही लावे।

रणथम्भौर

मंगलवार 3 दे को मैं रणथम्भौर का दुर्ग देखने गया। वहां पर दो पहाड़ियां एक दूसरी से मिली हुई हैं। एक का नाम रण है दूसरी का नाम थम्भौर। दुर्ग थम्भौर पहाड़ी पर स्थित है। रणथम्भौर इन दोनों नामों से मिलकर वना है। यद्यपि यह दुर्ग वड़ा दृढ़ है और इसमें पानी खूव है तथापि रण नाम की पहाड़ी और भी अधिक दृढ़ है और इसकी स्थिति अच्छी है और इसी पहाड़ी पर से यह दुर्ग जीता जा सकता है।

शासन का चौदहवाँ वर्ष

[मेरे शासन के चौदहवें वर्ष का नौरोज रवी उल आखिर 1028 हिजरी (10 मार्च 1619 ई०) पड़ा।]

नूरजहाँ ने एक वाघ मारा

मेरे शिकारियों ने सूचना दी कि मथुरा के समीप एक वाघ है जिससे वहां के निवासियों को बड़ा दुःख है। मैंने आदेश दिया कि उसके निवास को कई हाथियों से घेर लिया जाए। सायंकाल मैं और मेरे साथी सवार होकर उधर गये। मैं प्रण कर चुका था कि अपने हाथ से किसी जानवर को नहीं मारूँगा। इसलिए मैंने नूरजहाँ से कहा कि वह मेरी वन्दूक चलाए। वाघ की गंध से हाथी चंचल हो गया। वह खड़ा नहीं रहना चाहता था और हौदे से निशाना लगाना वड़ा ही दुष्कर कार्य है। मिर्जा रुस्तम मुझसे दूसरी श्रेणी का शिकारी है। उसकी वरावरी करने वाला कोई दूसरा आदमी नहीं है। वह हाथी पर वैठे हुए तीन चार गोलियाँ चला चुका है परन्तु वे निष्फल हुईं। नूरजहाँ ने इस शेर को एक ही गोली से मार दिया।

अबुल हक देहलवी

शेख अबुल हक देहलवी इस समय का वड़ा ही विद्वान पुरुष है। उसने मेरे सामने उपस्थित होकर एक पुस्तक भेंट की। वह हिन्दुस्तान के शेखों के विषय में थी। वह वहुत विपत्ति उठा चुका था और निवृत्त होकर देहली में रहता था। उसको अपनी स्थिति पर सन्तोष था और ईश्वर में विश्वास था। वह वड़ा सज्जन था और उसकी संगति वहुत अच्छी लगती थी। मैंने उसके प्रति बड़ा ध्यान दिया और शिष्टता की।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कश्मीर की यात्रा

मंगलवार तारीख 14 को शाही डेरा हसन अवदाल में ठहरा। मैंने कावुल पर अपनी चढ़ाई के सिलसिले में इस रास्ते का और इन मंजिलों का वर्णन किया है। इसलिए मैं यहाँ उसे नहीं दोहराऊँगा। ईश्वर की मर्जी हुई तो इस स्थान से कश्मीर तक की घटनाओं का मैं मंजिलवार वर्णन करूँगा। मैं अकवरपुर में नाव से उतरा तब से हसन अवदाल पहुँचने तक 69 दिन में 178 कोस तय कर चुका हूँ और 58 मंजिलें पार की हैं। इस स्थान पर एक चश्मा है और एक नदी के पेटे में वड़ा ही स्वच्छ दल है। इसलिए मैं यहाँ दो दिन ठहरा।

वृहस्पतिवार तारीख 16 को मैंने अपने जीवन का इक्यावनवाँ वर्षीय उत्सव मनाया और मेरे निर्माता के अनुग्रह से मेरा वावनवाँ वर्ष आरम्भ हुआ। मुझे भावी आनन्द की पूरी आशा थी। जिस मार्ग पर मैं जाने वाला था वह पहाड़ियों, घाटियाँ नालियों और ऊँचाइयों से भरा हुआ था। यदि शाही दल उस पर साथ-साथ चलना चाहता तो वहुत कठिन होता। इसलिए यह निश्चय किया गया कि मरियम उज जमानी और अन्य वेगमें कुछ दिन पीछे रह जाएँ और फिर अपनी सुविधा के अनुसार आएँ और राजपरिवार तथा राजसेवकों के साथ ही प्रधान मन्त्री इतिमाद्-उद्दौला अलिखाकानी, सादिकखाँ वख्शी और सादतखाँ मीर सामान भी आवें। इसी कारण मिर्जा सफवी और खान-ए-आजम को मेरे सेवकों के दल के साथ पूंच के मार्ग से भेजा गया था और मैं थोड़े से निजी मित्रों के साथ तथा अत्यावश्यक सैनिकों के साथ रवाना हुआ।

शुक्रवार को मैं साढ़े तीन कोस कूच करके सुलतानपुर पहुँचा। यहाँ सूचना मिली कि राणा अमरसिंह की स्वाभाविक मृत्यु हो गई है। उसका पुत्र भीमसिंह और पौत्र जगतसिंह मेरे साथ थे। उन दोनों को खिलतें देकर सम्मानित किया गया और राजा किशनदास के लिए आदेश हुआ कि वह कंवर कर्ण के नाम का फरमान लेकर उसके पास जावे, जिसमें उसको राणा की उपाधि और खिलत तथा मेरे तवेले में से एक घोड़ा सम्मानार्थ दिये जाने का उल्लेख था। इसके अतिरिक्त उत्तराधिकार के लिए उसको वधाई दी जाए।

मैंने इस देश के लोगों से सुना था कि पड़ौस की पहाड़ी से वादल की गरज जैसा शोर कानों में आया था और उस समय पानी, वादल या विजली का कोई चिन्ह नहीं था। इसलिए इस पहाड़ी को ये लोग गरज कहते हैं। यह आवाज अव प्रति वर्ष सुनाई देती है और दो साल में एक वार तो अवश्य ही सुनी जाती है। अपने पिता की उपस्थिति में भी मैंने इस मामले के वावत कई वार सुना था। यह कहानी वड़ी विचित्र है। इसलिए मैंने इसका उल्लेख किया है परन्तु परमात्मा ही जाने यह सत्य है या नहीं।

शनिवार तारीख 18 को साढ़े चार कोस चलकर मैं सही पहुंचा। इस मंजिल में हमने हजारा फारिग के परगने में प्रवेश किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

रविवार तारीख 19 को पौने चार कोस चलने के बाद हमने नौशेरा में डेरा लगाकर वहाँ घमतोर में प्रवेश किया था। हमें दिखाई देता था, वहाँ तक थाल कंवल और दूसरे पुष्प हरी पत्तियों के बीच खिले हुए थे। यह बड़ा ही सुन्दर दृश्य था।

सोमवार तारीख 20 को साढ़े तीन कोस कूच करके मैं सालहर पहुँचा। यहाँ महावतखाँ ने जवाहरात और जड़ाऊ हथियार मुझे भेंट किये जिनका मूल्य साठ हजार रुपये था। इस प्रदेश में मैंने एक बिल्कुल लाल पुष्प देखा जिसका स्वरूप गुलखितमी का सा था, परन्तु उससे कुछ छोटा था। एक दूसरे के पास इतने पुष्प खिले हुए थे कि सब एक ही पुष्प मालूम होते थे। यह वृक्ष अखरोट जैसा होता है। इस पहाड़ी के ढाल पर कितने ही जंगली फूल थे जिनमें बड़ी अच्छी सुगन्ध थी, परन्तु इसी वर्ग के दूसरे फूलों की अपेक्षा इनका रंग अधिक पीला था।

मंगलवार तारीख 21 को हमने तीन कोस चलकर मलगली के पास डेरा लगाया। इस दिन महावतखाँ को अपने सरकार में बंगश भेज दिया गया। मैंने उसे एक खिलत, एक पोस्तीन और मेरे निजी फीलखान से एक हाथी दिया। इस कूच में पानी थोड़ा-थोड़ा निरन्तर बरसता रहा और रात में भी नहीं थमा। प्रातःकाल बर्फ गिरी। सारे रास्ते में कीचड़ भर गया जिसमें लोग फिसलते थे। जो पशु दुर्बल थे इधर-उधर गिर जाते थे और फिर उठ नहीं सकते थे। इस अवसर पर शानदार सरकार के पच्चीस हाथी नष्ट हो गये। अभी बादल बहुत हो रहे थे। इसलिए मैं यहाँ दो दिन ठहरा। वृहस्पतिवार 23 तारीख को पकली (या पखली) के जमींदार सुलतान हुसैन को भूमि चुम्बन करने का सम्मान प्राप्त हुआ। यहीं हमने पकली में प्रवेश किया था। यह एक असाधारण बात है कि जब मेरा पिता यहाँ था तो इसी भांति हिमपात हुआ था और पिछले कई वर्ष से बर्फ नहीं गिरा था और पानी भी बहुत कम बरसा था।

शुक्रवार तारीख 24 को चार कोस कूच करके मैं तवादकर पहुंचा। इस रास्ते में भी बहुत कीचड़ था और रास्ते भर अमरूद के पेड़ों पर फूल लगे हुए थे और सेब के वृक्ष देखने में बड़े लुभावने प्रतीत होते थे।

शनिवार तारीख 25 को मैं लगभग साढ़े तीन कोस चलकर पकली के पड़ौस में पहुंचा।

रविवार तारीख 26 को मैंने सवार होकर कुछ तीतर मारे। सायंकाल सुलतान हुसैन की प्रार्थना पर मैं उसके निवास-स्थान पर गया जिससे वह अपने मित्र और साथियों की दृष्टि में बड़ा सम्मानित हुआ। मेरा पिता भी उसके यहाँ गया था। उसने कुछ घोड़े, तलवारें और बाज भेंट किये। मैंने कुछ पक्षी तो स्वीकार कर लिए और दूसरी वस्तुएँ वापस लौटा दीं।

सरकार पकली पैंतीस कोस लम्बा और पच्चीस कोस चौड़ा है। इसके पूर्व की ओर कश्मीर के पहाड़ हैं, पश्चिम में अटक बनारस है, उत्तर में काटोर है और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दक्षिण में गक्खड़ों का देश है। ऐसा कहा जाता है कि जब हिन्दुस्तान की विजय के बाद तैमूर तूरान को वापस लौट रहा था तो वह अपने कुछ साथियों को यहां छोड़ गया था। लोग स्वयं कहते हैं कि वे फारसियों के वंशज है। परन्तु वे अपने नेता का नाम नहीं बतला सकते। अब वे लाहौरी कहलाते हैं और जाटों की भाषा बोलते हैं। यही बात धमतौर के लोगों के विषय में कही जा सकती है। मेरे पिता के समय में शाहरुख धमतौर का जमींदार था। अब उसका पुत्र बहादुर जमींदार है। यद्यपि पकली और धमतोर के लोगों में परस्पर विवाह होते हैं और वे आजादी से मिलते-जुलते हैं तो भी अन्य जमींदारों की भाँति वे अपनी सीमाओं के विषय में लड़ा करते हैं। हमारे कुटुम्ब के प्रति इन लोगों का रुख हमेशा अच्छा रहा है। पकली के सुलतान हुसैन का पिता सुलतान महमूद और शाहरुख मेरे राज्याभिषेक से पूर्व मुझ से मिलने आये थे। यद्यपि सुलतान हुसैन की आयु सत्तर वर्ष की है तथापि वह बड़ा मजबूत जान पड़ता है। वह घोड़े की सवारी और व्यायाम कर सकता है।

इस मुल्क में बोजा रोटी और चावल से बनाया जाता है। इसको लोग सिर कहते हैं परन्तु यह बोजा से भी अधिक मादक होता है। ये लोग सिर के अतिरिक्त कुछ नहीं पीते। इसको भोजन के साथ पीते हैं और यह जितना पुराना हो उतना ही अच्छा समझा जाता है। जब इसके अंश मिलाये जाते हैं तो इनको दो या तीन वर्ष तक अपने मकानों में बन्द रखते हैं। फिर ऊपर से थर उठा ली जाती है और मादक वस्तु को आची कहते हैं जिसको दस वर्ष तक रखा जा सकता है और यदि और भी लम्बे अर्से तक रखा जाय तो और भी अच्छा हो जाता है। परन्तु यह कम से कम एक वर्ष का तो होना ही चाहिए। सुलतान महमूद एक प्याला सिर पिया करता था। परन्तु इसके एक घूंट से ही नशा आ जाता है। सुलतान हुसैन भी यही करता है। ये मेरे लिए बहुत अच्छी किस्म का सिर लाये। मैंने परख के लिए थोड़ा सा लिया। मैंने पहले भी थोड़ा पिया था। यह कड़वा और तीखा होता है और ऐसा मालूम होता है कि इसमें कुछ भाँग मिलाई जाती है। यदि यह अधिक पिया जाय तो इससे खुमारी आ जाती है। यदि शराब न हो तो उसके बजाय यह पिया जा सकता है। यहाँ पर अखरोट, वनास्पति आदि फल होते हैं परन्तु ये खट्टे होते हैं और इनमें अच्छी सुगन्ध नहीं होती।

ये लोग जैसा कि कश्मीर में तरीका है अपने मकान और निवास कुल लकड़ी के ही बनाते हैं। यहाँ पर शिकार बहुत है और घोड़े, खच्चर और सींग वाले पशुओं का भी बाहुल्य है। बकरे और मुर्गियां बहुत मिलती हैं। खच्चरों पर बहुत भारी बोझा लादा जाता है। इसलिए वे निर्बल और बेकार हो जाते हैं। मुझे यह सूचना मिली थी कि कुछ मंजिल के बाद आगे का प्रदेश इतना आबाद नहीं है कि मेरे अनुचरों को वहाँ पूरा खाना मिल सके। इसलिए आदेश दिया कि परमावश्यक डेरे और सेवक ही साथ लिए जाएं। हाथियों की संख्या घटा दी जाय और तीन चार दिन का सामान साथ ले लिया जाय। मेरे साथ जाने के लिए कुछ सेवक चुन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लिए गये और कुछ ख्वाजा अबुल हसन नखशवी के अधीन कर दिये गये। उनको मेरे पीछे-पीछे कुछ मंजिल आना था। मैंने वहुत सावधानी की और आदेश दिये तो भी यह आवश्यक मालूम पड़ा कि मेरे साथ सात-सौ हाथी लिए जाएं। डेरों और अनुचरों की संख्या कम कर देने पर भी इतने हाथियों की जरुरत थी। सुलतान का मनसब चार सौ जात और तीन सौ सवार था जो वढ़ा कर अब छः जात और तीन सौ पचास सवार कर दिया गया। इसके अतिरिक्त उसको मैंने एक खिलत, एक जड़ाऊ खंजर और एक हाथी दिया। बहादुर धमतुरी का भी मनसब दो सौ जात और एक सौ सवार कर दिया गया। वह बंगश के लिए नियुक्त किया जा चुका था।

रविवार तारीख 29 को मैंने सवा पाँच कोस कूच करके नयन सुख की नदी और पुल को पार किया। यह नयनसुख नदी उत्तर से दक्षिण को बहती है और बदखशां तथा तिब्बत के मुल्क के नीचे की पहाड़ियों से निकलती है। यहाँ पर नदी की दो शाखाएं हो जाती हैं। इसलिए मैंने आदेश दिया कि लकड़ी के दो पुल बनाये जाएँ। एक की लम्बाई अठारह गज और दूसरे की चौदह गज हो और प्रत्येक की चौड़ाई पांच गज हो। इस मुल्क में पुल बनाने का तरीका यह है—साल के वृक्ष नदी पर डाले जाते हैं और उनके दोनों छोर चट्टान से बाँध दिये जाते हैं। फिर इनके आर-पार मोटे-मोटे तख्ते रस्सों से या कीलों से कस दिये जाते हैं। इस प्रकार बना हुआ पुल कई वर्ष तक काम देता है। केवल कभी-कभी मरम्मत की आवश्यकता होती है। हाथियों को तो नदी की थाह में होकर उतारा गया परन्तु सवार और प्यादे पुल पर से निकले। इस नदी का नाम सुलतान महमूद ने नयनसुख रखा था जिसका अर्थ है आँखों का सुख।

वृहस्पतिवार 3 तारीख को लगभग साढ़े तीन कोस चलकर हमने किशन-गंगा के तट पर डेरे लगाए। इस मंजिल में हमने एक अत्यन्त ऊँची पहाड़ी को पार किया। चढ़ाई एक कोस थी और उतार डेढ़ कोस था। इसको लोग फमदिरंग कहते हैं क्योंकि कश्मीरी बोली में रुई को फम कहते हैं। यहाँ पर कश्मीर के सुलतान के गुमाश्ते रुई के हर एक बोरे पर महसूल लेते थे। इसलिए देर या दिरंग हो जाती थी। यही कारण था कि इस स्थान का नाम फमदिरंग हो गया। पुल पार करने के बाद हमने एक ऐसा स्थान देखा जहाँ से पानी गिर रहा था और इसका पानी स्वच्छ और सुन्दर था। इसके निकट पहुँच कर मैंने शराब का प्याला पिया और सायंकाल मैं वापस अपने डेरे में आया। इस नदी पर चौवन गज लम्बा एक पुराना पुल था जो डेढ़ गज चौड़ा था। पैदल लोग इस पर होकर जाया करते थे। मैंने इसी के निकट एक दूसरा पुल बनाने का आदेश दिया जिसकी 53 गज लम्बाई और तीन गज चौड़ाई थी। यह नदी गहरी और तेज थी। इसलिए मैंने हाथियों को उतारते वक्त उन पर कोई बोझा नहीं रखने दिया। परन्तु सवार और प्यादे पुल पर से गए। मेरे पिता के आदेश से यहाँ पत्थर और चूने की एक दृढ़ सराय बनाई गई थी। यह नदी से पूर्व की ओर एक पहाड़ी पर स्थित थी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अब सूर्य के दूसरी राशि में प्रवेश करने में एक दिन शेष था। इसलिए मैंने मुतामदखाँ को भेजा कि वह मेरा सिंहासन बनाने के लिए ऐसा ऊँचा स्थान देखे जो दूर से दिखाई दे सके और नौरोज की तैयारी करे। ऐसा हुआ कि पुल से कुछ थोड़ी दूर नदी के पूर्वी किनारे पर एक ऊँचा स्थान था जो बड़ा सुन्दर और हरा भरा था और जिसके सिरे पर पचास गज का सम स्थल था मानों परमात्मा की आज्ञा का पालन करने वालों ने इसका इसी अवसर के लिए निर्माण किया हो। इसी स्थान पर मुतामदखाँ ने इस त्यौहार के लिए सजावट की थी और यह काम इतना अच्छा किया था कि मैंने इसकी प्रशंसा की।

किशनगंगा नदी उत्तर से दक्षिण को बहती है। बेहात नदी उत्तर से चलती हुई किशनगंगा में गिरती है और फिर उत्तर की ओर मुड़ती है।

शासन का पन्द्रहवाँ वर्ष

मेरे शासन के पन्द्रहवें वर्ष का नौरोज 15 रबी उस्सानी 1029 हिजरी (10 मार्च 1620 ई०) को था।

कश्मीर

शुक्रवार तारीख 27 को मैं सवार होकर वीर नाग का चश्मा देखने गया। इसी में से बेहात नदी का निकास है। मैं पाँच कोस तक नाव में गया और फिर मानपुर के निकट लंगर डाला। इस दिन किश्तीवार से मेरे पास बहुत बुरी खबर आई। उस प्रदेश को जीतने के बाद जब दिलावरखाँ दरबार में लौट आया तो वहाँ की रक्षा के लिए वह नासुर उल्ला नामक एक अरब को अन्य कई अफसरों के साथ छोड़ आया। इस आदमी ने दो भूलें कीं। उसने जमींदारों और प्रजा को सताया और मूर्खतावश अपने सैनिकों की इच्छा का पालन किया। उन्होंने दरबार को लौट आने की प्रार्थना की। उन्हें आशा थी कि उनकी सेवा का पुरस्कार मिलेगा। इसीलिए उसके पास बहुत थोड़े से आदमी रह गए। जमींदार अपने दिलों में उससे बदला लेना चाहते थे और अवसर की प्रतीक्षा में थे। वे यह मौका देखकर सब ओर से एकत्र हो गए और उन्होंने उस पुल को जला दिया जिस पर से सहायक सेना आ सकती थी और फिर खुले तौर पर विद्रोह कर दिया। दुर्ग में घुसकर नासिरउल्लाखाँ ने बड़ी कठिनता से दो-तीन दिन तक तो अपनी स्थिति को सम्भाला परन्तु फिर अपने साथियों के साथ उसने मर जाने का निश्चय किया और दृढ़ धैर्य का परिचय दिया। उसके बहुत से आदमी मारे गए और बहुत से पकड़ लिए गए। जब यह समाचार मेरे कानों तक पहुँचा तो मैंने दिलावरखाँ के पुत्र जलालु को जिसके ललाट पर बुद्धि और योग्यता का प्रकाश था और जिसने किश्तीवार के विजय में बहुत अच्छा काम किया था आदेश दिया कि इन नीच विद्रोहियों को समूल नष्ट कर दे। उसको एक हजार का मनसब और छः सौ सवार दिए गए। उसके पिता के अनुचर अब शाही तख्त के विशेष सेवक थे। उनको और कश्मीर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

की सेना के एक भाग को बहुत से जमींदारों को और कुछ बन्दूकचियों को उसके साथ जाने का हुक्म दिया गया। जम्मू के जमींदार राजा संग्राम को भी आदेश दिया गया कि वह जम्मू की पहाड़ियों में से अपनी सेना के साथ इस सेना में सम्मिलित हो जाय। ऐसी आशा थी कि विद्रोहियों को शीघ्र ही दण्ड मिल जायगा।

कांगड़ा विजय

[सोमवार 5 मोहर्रम को कांगड़ा विजय का सुखद समाचार आया। यह प्राचीन दुर्ग है और लाहौर के उत्तर में पहाड़ियों में स्थित है और इसकी स्थापना के समय से ही यह अपनी दृढ़ता और सुरक्षा के लिए प्रसिद्ध है। पंजाब के जमींदारों का विश्वास है कि यह दुर्ग कभी किसी दूसरी जाति के अधिकार में नहीं गया और कभी किसी अपरिचित के हाथ ने इसको नहीं दवाया। परन्तु ईश्वर ही जाने। जब से इस्लाम की तलवार और इस्लाम धर्म ने हिन्दुस्तान में राज्य किया है तब से एक भी शक्तिशाली सुलतान ने इस किले को नहीं जीता था। महाशक्तिशाली सुलतान फिरोजशाह ने इसको लम्बे अर्से तक घेरा परन्तु फिर यह पता लगा कि यह स्थान भी दृढ़ है और सुरक्षित है और जब तक दुर्गरक्षकों के पास खाने-पीने का सामान है तब तक इसको जीतना असम्भव है। जब यह तुच्छ व्यक्ति सिंहासन पर बैठा तो सबसे पहिले उसने इस दुर्ग को विजय करने का विचार किया। उसने पंजाब के सूबेदार मुर्तजाखाँ को एक बड़ी सेना के सहित इसके विरुद्ध भेजा परन्तु इसके विजय के पूर्व ही मुर्तजा की मृत्यु हो गयी। फिर राजा वासु का पुत्र चौपर मल इसके विरुद्ध भेजा गया। परन्तु उस विश्वासघाती ने विद्रोह कर दिया। उसकी सेना तितर-बितर हो गयी जिससे दुर्ग के पतन में विलम्ब हो गया। कुछ समय बाद इस विश्वासघाती को बन्दी बना लिया गया और उसको मारकर नरक में भेज दिया गया। इसका यथास्थान उल्लेख किया जा चुका है।]फिर शहजादा खुर्रम को बहुत बड़ी सेना देकर इसके विरुद्ध रवाना किया गया और उसको सहायता देने के लिए कई अमीरों को आदेश दिया, गया। मास शव्वाल 1029 हिजरी को शहजादे की सेना ने इस स्थान को घेर लिया। खाइयाँ सब बाँट दी गईं और किले में खाद्य सामान का पहुँचना बिल्कुल बन्द कर दिया गया। कुछ समय में दुर्ग में कठिनाई उपस्थित हो गई। उसमें खाने का सामान नहीं रहा तो भी चार मास तक लोग भूसा खाकर जीवित रहे या ऐसी चीजों को उबालकर खाते रहे। परन्तु जब उन्हें मृत्यु प्रत्यक्ष दिखाई देने लगी और बचने की कोई आशा न रही तब इस स्थान ने सोमवार मोहर्रम तारीख 1, 1031 हिजरी को आत्म-समर्पण कर दिया।

केसर

इस समय केसर फूल रही थी। इसलिए बादशाह नगर से रवाना होकर पामपुर चला गया। कश्मीर में यही एक स्थान है जहाँ केसर खूब होती है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रत्येक खेत जहाँ तक भी दृष्टि जाती थी फूलों से लदा हुआ था। केसर का पौधा पृथ्वी की ओर झुक जाता है। पुष्प में बेजनी रंग की पाँच पंखड़ियाँ होती हैं और उसके अन्दर केसर की पाँच लकीरें मिलती हैं। यही शुद्ध केसर है। एक वर्ष में चार सौ मन या तीन हजार दो सौ खुरासानी मन केसर उत्पन्न होती है। इसमें से आधी सरकार लेती है और आधी किसान के पास रहती है और बारह रुपए की एक सेर बिकती है। परन्तु मूल्य में उतार-चढ़ाव हुआ करता है। यह पक्का रिवाज है कि फूलों को तोलकर केसर बनाने वालों को दे दिया जाता है और वे इन्हें घर ले जाते हैं और उनमें से केसर निकालते हैं। यह फूल के वजन की एक चौथाई निकलती है। ये लोग केसर को अफसरों को देकर उसके बदले में उतना ही नमक ले लेते हैं मजदूरी नहीं लेते क्योंकि कश्मीर में नमक नहीं होता। यहाँ के निवासियों में लावण्य भी बहुत कम है। ये लोग नमक हिन्दुस्तान से मँगवाते हैं।

अगले दिन सौभाग्यशाली शिविर राजोर में लगाया गया। राजोर के लोग मूलतः हिन्दू थे। सुलतान फीरोज ने उनको मुसलमान बनाया था। तो भी उनके मुखिया लोग अभी तक राजा कहलाते हैं और जो रीति-रिवाज उनकी अज्ञानता के दिनों में प्रचलित थे, वे अब भी चल रहे हैं। जैसे पतियों की चिताओं पर स्त्रियाँ सती होती हैं और जीवित ही उनकी कब्रों में गड़ जाती हैं। मुझे सूचना मिली कि कुछ दिन पूर्व ही एक बारह वर्ष की लड़की अपने पति के साथ गड़ गई। निर्धन माता-पिता अपनी लड़कियों को जन्मते ही मार डालते हैं। इन लोगों के हिन्दुओं के साथ विवाह होते हैं। ये लड़कियाँ लेते हैं और देते हैं। लेने में तो कोई हानि नहीं है पर अपनी लड़कियाँ देने में ईश्वर ही हमारी रक्षा करे। इन रिवाजों को रोकने के लिए आदेश जारी किए गए और उल्लंघन करने पर दण्ड का विधान किया गया।

शाहजहाँ को दक्खिन में भेजा गया

[इन सुखमय दिनों में जब मैं कश्मीर में घूम रहा था और शिकार कर रहा था तो दक्खिन से एक के बाद दूसरे सैनिक समाचार आए। जब शाही दरबार राजधानी से रवाना हुआ तो दक्खिन के दुष्ट लोगों ने कर्तव्य और स्वामिभक्ति छोड़कर विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया। उन्होंने अहमदनगर और बरार के बहुत से अधीन प्रदेश अपने अधिकार में ले लिए। सैनिक पत्रों में लिखा हुआ था कि यह लोग लूट और नाश करके अपना निर्वाह कर रहे हैं और जहाजों को तथा अन्न-घास को जलाकर बरबाद कर रहे हैं। पिछले अवसर पर जब मैंने दक्खिन की विजय के लिए शाही सेना के साथ प्रयाण किया तो खुर्रम जो अग्र सेना का नेतृत्व कर रहा था, बुरहानपुर आया। विद्रोहियों ने, जिनकी विशेषता, चालाकी करना है, उसको अपना मध्यस्थ बनाया और वे लोग शाही इलाकों को छोड़कर चले गए। उन्होंने कर के रूप में बहुत सा रुपया और मूल्यवान वस्तुएं भेंट कीं और भविष्य के लिए शान्त और स्वामिभक्त बने रहने का वचन दिया। खुर्रम के कहने पर मैं मांडू में शादियाबाद के महल में कुछ दिन टिका रहा और उन लोगों के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दुष्कर्मों को क्षमा करने के लिए मैंने अनुमति दे दी । अब एक वार पुनः उन्होंने स्वामिभक्ति छोड़ दी थी। इसलिए मेरी इच्छा थी कि उनको उचित दण्ड देने के लिए और अन्य लोगों के लिए उदाहरण उपस्थित करने के हेतु खुर्रम के नेतृत्व में शाही सेना भेजूं। परन्तु वह कांगड़ा के घेरे में लगा हुआ था और उस काम के लिए बहुत से अनुभवी हाकिम उसके साथ थे। इसलिए मैं कुछ दिन तक यह निश्चय नहीं कर सका कि क्या किया जावे।

पत्र निरन्तर आते रहे जिनसे यह सूचना मिलती रही कि विद्रोहियों ने शक्ति बढ़ा ली है, उनके पास साठ हजार सवार हैं और बहुत से शाही इलाकों पर उन्होंने अधिकार कर लिया है। जो सेना वहाँ पर नियत थी वह मैदान में आ चुकी थी और गत तीन मास से विद्रोहियों से लड़ रही थी और कई बार उनको हरा चुकी थी। परन्तु वे लोग शाही सेना के आस-पास के इलाकों को लूटकर बरबाद कर रहे थे और शाही सेना में सामान पहुँचने के लिए कोई मार्ग खुला हुआ नहीं था। इसलिए बड़ा अभाव उपस्थित हो गया था। फिर एकाएक ये लोग बालाघाट में घुस आये और बालापुर में रुके। जब उनको कोई दण्ड नहीं मिला तो उनका उत्साह और बढ़ गया और उन्होंने बालापुर को लूटने का विचार किया। शाही सेना में छः सात हजार सवार थे। कुछ लड़ाई भी हुई परन्तु उनका सारा सामान लुट गया। बहुत से लोग मारे गये या पकड़ लिए गये और विद्रोही सुरक्षित वापस लौट गये। रास्ते में लूटते गये। चारों ओर से सेनाएं एकत्रित करके विद्रोही लड़ते हुए अजदू तक पहुंच गये। दोनों पक्ष के लगभग एक हजार आदमी धराशायी हुए। वे लोग तीन मास तक बालापुर में ठहरे। शाही डेरे में खाद्य-सामग्री का अभाव बहुत बढ़ गया जिससे बहुत से लोग भागकर विद्रोहियों से जा मिले। शाही सेना हटकर बुरहानपुर चली गई। वहाँ विद्रोहियों ने उसका पीछा करके जा घेरा। विद्रोही लोग छः मास तक बुरहानपुर के आसपास मंडराते रहे और बरार तथा खानदेश के कितने ही जिलों पर उन्होंने अपना अधिकार कर लिया। वहाँ लोगों से बलपूर्वक धन संग्रह किया गया। शाही सेना को बड़ी कठिनाइयाँ और कष्ट सहने पड़े और जब स्थिति असह्य हो गई तो वे नगर से बाहर निकल आए। इससे अधिकारियों की धृष्टता और दम्भ बढ़ गया। ईश्वर के अनुग्रह से कांगड़ा का पतन हो चुका था। इसलिए शुक्रवार तारीख 4 को मैंने खुर्रम को दक्खिन भेजा और यह आदेश दिया कि विजय के बाद वह उस मुल्क से दस करोड़ दाम संग्रह कर सकता है। अब मैं वापस राजधानी के लिए रवाना हुआ।

शासन का सोलहवाँ वर्ष

मेरे सोलहवें वर्ष का नौरोज 27 रबी उस्सानी 1030 हिजरी (10 मार्च 1621 ई०) को पड़ा।

उल्कापात

इस समय की सबसे अधिक आश्चर्यजनक घटना यह है। इस वर्ष के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

फरवरदीन मास की 30 तारीख को प्रातःकाल पूर्व में जालंधर परगना के एक गाँव की ओर से बड़े जोर का और भयंकर शब्द सुनाई दिया जिससे लोग ऐसे भयभीत हुए मानो साक्षात् मृत्यु सामने आ गई हो। जब यह शब्द हो रहा था तो आकाश से भूमि पर एक प्रकाश गिरा और लोगों ने समझा कि आग गिर रही है। एक क्षण के बाद वह शोर कम हो गया और त्रस्त तथा क्षुब्ध लोगों को होश आया। तब उन्होंने उस परगने के आमिल मोहम्मद सईल के पास एक हरकारा भेज कर इस घटना की सूचना दी। तब आमिल तत्काल सवार होकर उस गाँव में पहुँचा और अपनी आँखों से उसने उस स्थान को देखा। दस बारह गज लम्बी चौड़ी भूमि ऐसी जल गई थी कि उस पर घास या पौधे का एक तिनका भी नहीं मिलता था और जमीन अब तक गर्म थी। आमिल ने इसको खोदने का आदेश दिया तो ज्यों-ज्यों इसको गहरी खोदा गया त्यों-त्यों वह अधिक गर्म मिली। अन्त में लोहे का एक टुकड़ा दिखाई दिया जो इतना गर्म था मानो अभी भट्टी में से निकाला गया हो। कुछ समय बाद वह ठण्डा हो गया। इसको वह अपने मकान पर ले गया और उसको एक थैले में बन्द करके मेरे पास भेजा। उसे मेरे सामने तोला गया तो वह 160 तोला निकला। मैंने उस्ताद दाऊद को इसकी एक तलवार, खंजर और चाकू बना कर मेरे पास लाने का हुक्म दिया। परन्तु उसने निवेदन किया कि यह हथौड़े की चोट नहीं सह सकता। चोट लगने पर इसके टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे। जब मैंने आदेश दिया कि यदि यह बात है तो इसमें कुछ दूसरा लोहा मिला दिया जाय। अतः धूमकेतु वाले लोहे के तीन भाग में एक भाग साधारण लोहा मिलाकर दो तलवारें, एक चाकू और एक खंजर बनाये गये और मुझे नजर किये गए। इन पर दूसरे प्रकार के लोहे का पानी चढ़ाया गया। यह तलवार असली अलमासी तलवारों की भाँति या दक्खिनी तलवारों की तरह मुड़ जाती थी और फिर सीधी हो जाती थी। मैंने आदेश दिया कि इनको मेरे सामने जाँचा जाय तो वह अच्छी तरह काटती थीं और अच्छी से अच्छी बुझी हुई तलवारों के समान थीं।

दक्खिन में युद्ध

[तारीख 4 खुरदाद को खुर्रम के पत्र आए। जब शाही सेना उज्जैन पहुंची तो मांडू की सेना से सूचना मिली कि एक विद्रोही सेना ने साहसपूर्वक नर्वदा पार करके ऐसे कई गाँव जला दिए हैं जो दुर्ग से दीख पड़ते हैं और वह लूटने में लगी हुई है। सेनापति ने पाँच हजार सवार देकर ख्वाजा अबुल हसन को शीघ्र कूच करने के लिए और विद्रोहियों को दण्ड देने के लिए आगे भेजा है। ख्वाजा सूर्योदय के समय नर्वदा के तट पर पहुंच गया परन्तु उन्हें उसके आने की खबर मिल गई और उसके आने से पहले ही वे नदी पार कर गए। शाही सेना ने लगभग चार कोस तक उनका पीछा किया और बहुत सों को तलवार के घाट उतार दिया। विद्रोही पीछे हटकर बुरहानपुर चले गए। तब खुर्रम ने पत्र लिखकर ख्वाजा को आदेश दिया कि वह जब तक स्वयं न पहुंचे तब तक नदी के उस तट पर डटा रहे। इसके

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कुछ समय बाद ही खुर्रम उस अग्र सेना से जा मिला और फिर दोनों ने शीघ्रता-पूर्वक बुरहानपुर की ओर कूच किया। उनके आने पर विद्रोही लोग भागकर बुरहानपुर से कुछ दूर चले गए। दो वर्ष से शाही सेना बुरहानपुर में बन्द थी और अन्न तथा दूसरे सामान की कमी के कारण घोर कष्ट सह रही थी। उनके पास घोड़ों की बड़ी कमी थी पुनः सजने के लिए सेना वहाँ पर नौ दिन तक ठहरी और इस अवधि में शाही सेना में तीस लाख रुपए और बहुत से कोट बाँटे गए। ज्योंही इस सेना का संचालन हुआ त्योंही विद्रोही भाग गए। वे सामना न कर सके। शाही सेना ने पीछा करके उनमें से बहुत सों को तलवार से मार डाला। उन्हें टिकने नहीं दिया और खिड़की तक धकेल दिया। यह निजामुलमुल्क और अन्य विद्रोहियों का निवास-स्थान था। शाही सेना को आने से पहले विद्रोही लोग निजामुलमुल्क को उसके परिवार और आश्रित जनों के साथ दौलताबाद के दुर्ग में ले गए। उनमें से कुछ लोग इलाके में इधर-उधर तितर-बितर हो गए।

शाही सेना ने तीन दिन तक ठहर कर खिड़की के कस्बे को, जिसको बनाने में बीस वर्ष लगे थे, ऐसा नष्ट कर डाला कि अगले बीस वर्ष तक अब इसका वैभव पुनः स्थापित नहीं हो सकेगा। इस स्थान को नष्ट करके उन्होंने अहमदनगर की ओर कूच किया जिसको विद्रोहियों की सेना ने घेर रखा था तथा वहाँ से विद्रोहियों को भगाकर और उस स्थान में खाद्य-सामग्री रखकर तथा वहाँ सेना नियुक्त करके वापस लौटने का निश्चय किया। इस निश्चय के अनुसार उन्होंने पाटन की ओर कूच किया। अब विद्रोही ने एक चालाकी की। उन्होंने पश्चात्ताप प्रकट करने और क्षमा चाहने के लिए अपने दूत और अमीर भेजे। उसने वचन दिया कि वह सदैव वफादार बना रहेगा और पुरानी व्यवस्था का उल्लंघन नहीं करेगा, खिराज भेजेगा और शाही सेना की क्षतिपूर्ति करने के लिए रुपया देगा। ऐसा हुआ कि ठीक इसी समय शाही सेना में खाद्य-सामग्री की बड़ी कमी थी और यह खबर आई कि जिन विद्रोहियों ने अहमदनगर को घेर रखा था वे शाही सेना के आगमन से डरकर कुछ दूरी तक हट गए हैं। इसलिए खंजरखाँ सेनापति की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए कुछ रुपया और कुछ सेना भेजी गई। इस प्रकार आवश्यक व्यवस्था करके शाही सेना लौटने लगी। विद्रोही ने बहुत प्रार्थना की तो यह तय हुआ कि जिस इलाके पर पहले शाही अफसरों ने अधिकार कर रखा था उससे चौदह कोस आगे की जमीन और छोड़ दी जाय और पचास लाख रुपया शाही कोष में भेजा जाय।

जहाँगीर की बीमारी

[मैं लिख चुका हूँ कि दशहरे के दिन जब मैं कश्मीर में था तो मुझे जल्दी-जल्दी साँस आने लगा और दम घुटने लगा। इसका कारण यह बतलाया गया था कि मौसम में नमी बहुत है। मेरे बाँई ओर के वायु-मार्ग में हृदय के निकट दम घुटने लगा। यह धीरे-धीरे बढ़ता गया और जम गया। कुछ उष्ण औषधियों के सेवन से मुझे कुछ शान्ति मिली परन्तु जब मैंने पहाड़ों को पार किया तो इस रोग

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

की प्रबलता और अधिक हो गई। इस अवसर पर मैंने कई दिन तक बकरी का दूध पिया और मैंने ऊँटनी के दूध का भी विचार किया। पहले भी मैं यह दूध पी चुका था परन्तु इनमें से किसी से भी मुझे लाभ नहीं हुआ। (विभिन्न हकीमों द्वारा चिकित्सा)। जब मुझे किसी भी औषधि से शान्ति नहीं हुई और मुझे निराशा-सी होने लगी तो मैंने चिकित्सा करवाना छोड़ दिया और उस परम चिकित्सक की दया की शरण ली। मुझे मद्यपान से शान्ति मिलती थी। इसलिए मैं दिन में पीने लगा और रात्रि में इसकी मात्रा बहुत ही बढ़ा दी। जब मौसम गर्म हो गया तो इसका कुप्रभाव प्रकट होने लगा और मेरी निर्बलता तथा पीड़ा बढ़ने लगी। नूरजहाँ बेगम की बुद्धि और अनुभव हकीमों से भी बढ़ा-चढ़ा था। उसने कृपा और प्रेमवश मेरे शराब की मात्रा कम करवाने का प्रयास किया और मुझे अधिक उपयुक्त और शान्तिदायक पदार्थ दिए। यद्यपि मैंने हकीमों की सलाह मानना छोड़ दिया था तथापि अब मुझे उसके ध्यान पर विश्वास हो गया। उसने मेरे मद्य की मात्रा धीरे-धीरे कम करवा दी और मुझे अनुपयुक्त भोजन और अनुचित बातों से बचाया। अब मुझे आशा है कि वह सच्चा हकीम मेरी पूर्ण चिकित्सा कर देगा।

जब मेरी बीमारी की खबर मेरे पुत्र परवेज को मिली तो उसने बुलावे की प्रतीक्षा न की और मुझसे मिलने के लिए वह तुरन्त रवाना हो गया और इस मास की 14 तारीख को वह कृपालु और कर्तव्यपरायण पुत्र मेरे सामने उपस्थित हो गया। मैंने उसको अपने निकट राजसिंहासन पर बिठाया और यद्यपि मैंने उसे मना किया तो भी उसके आँसू बह निकले और उसने बड़ी ही चिन्ता प्रकट की। मैंने उसको हाथ पकड़कर अपने पास लिया और उसको प्रेमपूर्वक अपने सीने से लगाया। मैंने उसके प्रति कृपा की और उस पर ध्यान दिया। मैं आशा करता हूँ कि उसकी आयु और समृद्धि बढ़ेगी।

काँगड़ा की यात्रा

आगरे की दारुण गर्मी मेरे शरीर के लिए हितकर न थी। इसलिए मेरे शासन के सोलहवें वर्ष में 12 आबान को मैं उत्तर के पर्वतीय देश के लिए रवाना हुआ। मेरा यह विचार था कि यदि जलवायु अनुकूल हुई तो गंगा के तट पर कहीं एक नगर बसाऊँ जहाँ मैं ग्रीष्म ऋतु में रहा करूँ। यदि मुझे अपने अनुकूल कोई स्थान नहीं मिला तो मेरा इरादा कश्मीर की ओर आगे बढ़ने का था। तारीख 7 दे को मैं हरद्वार पहुँचा जो गंगा के तट पर स्थित है और वहाँ ठहरा। परन्तु पहाड़ों के नीचे की जलवायु सुखद नहीं थी। इसलिए मुझे अपने निवास के लिए कोई उचित स्थान नहीं मिला और मैंने जम्मू और काँगड़ा के पहाड़ों की ओर आगे बढ़ने का निश्चय किया। 14 तारीख को मैं बहलून नामक गांव में पहुँचा जो सीबा के अधीन है। मुझे काँगड़ा की हवा की बढ़ी अभिलाषा थी। इसलिए मैंने अपना डेरा यहाँ छोड़ा और थोड़े से सेवक और अनुचर अपने साथ लेकर मैं आगे दुर्ग की ओर चला।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इतिमाद्-उ-द्दौला बीमार था। इसलिए मैंने उसको सादिकखाँ मीर बख्शी के सुपुर्द करके डेरे में ही छोड़ा। अगले दिन खबर आई कि खान की तबियत और अधिक खराब हो गई है और उसकी मृत्यु के चिह्न बिल्कुल प्रकट हो गए हैं। मैं नूरजहाँ बेगम के दुःख से बड़ा प्रभावित हुआ। मैं भी खान से बहुत प्रेम करता था। इसलिए मैं आगे नहीं बढ़ सका और डेरे में लौट आया। सायंकाल मैं उससे मिलने गया। उस समय उसको कोई सुध नहीं थी। नूरजहाँ मेरे पास ही खड़ी थी। उसने इशारे से मुझसे पूछा कि क्या उसकी स्थिति नाजुक है। मैं दो घण्टे तक उसके तकिए के पास ठहरा। जब कभी उसको चेत होता था तो उसके शब्द समझ में आते थे और वह ठीक बात करता था। इस महीने की 17 तारीख को उसकी मृत्यु हो गई और मुझे ऐसे योग्य और स्वामिभक्त मन्त्री की मृत्यु पर अकथनीय शोक हुआ। वह बड़ा बुद्धिमान और कृपालु मित्र था।

इसके पश्चात मैं काँगड़े की ओर चला और चार दिन कूच करके मैंने बाणगंगा नदी पर डेरा लगाया। इस महीने की 24 तारीख को मैं दुर्ग देखने गया और आदेश दिया कि काजी प्रधान न्यायाधीश और अन्य लोग जो इस्लामी कानून के विद्वान हैं मेरे साथ चलें और अपने धर्म के अनुसार जो क्रियाएँ की जाती हैं करें। लगभग आध कोस जाने के बाद हम दुर्ग पर चढ़े और फिर ईश्वर की दया से प्रार्थना की गई, खुतुबा पढ़ा गया, एक गाय का वध किया गया और अन्य बातें की गई जो इस दुर्ग की स्थापना से अब तक कभी नहीं की गई थीं। यह सब काम मेरी उपस्थिति में हुआ और इस महान विजय के लिए मैंने सर्वशक्तिमान ईश्वर को धन्यवाद दिया। ऐसी विजय पहले किसी बादशाह को प्राप्त नहीं हुई थी। मैंने इस दुर्ग में एक बड़ी मस्जिद बनाने का आदेश दिया।

खुर्रम का एक पत्र आया जिसमें मुझे सूचित किया गया था कि उदरशूल से खुसरु की मृत्यु हो गई।

शासन का सत्रहवाँ वर्ष

मेरे शासन के सत्रहवें वर्ष का नौरोज जमादुल अव्वल 1031 हिजरी (मार्च 1622 ई०) को पड़ा। खान-ए-जहाँ के पुत्र ने एक सैनिक पत्र लिखकर सूचना दी कि ईरान नरेश शाह अब्बास ने ईराक और खुरासान की सेनाओं के साथ कंधार के दुर्ग को घेर लिया है। मैंने आदेश दिया कि कश्मीर से सेना मँगवाई जाय और दीवान ख्वाजा अबुल हसन और सादिकखाँ बख्शी को मुझसे आगे लाहौर भेजा गया। ताकि वे उन सेनाओं को व्यवस्थित करें जिनको शहजादे दक्खिन, गुजरात, बंगाल और बिहार से लावें तथा जिन्हें अपने-अपने जागीरों से अमीर लोग लावें और फिर उनको निरन्तर खानजहाँ लोदी के पास मुल्तान भेजें। तोपखाना, बड़ी तोपें, हाथी, कोष, शस्त्र और विविध सामान को वहाँ भेजने का आदेश दिया गया। ऐसी सेना के लिए एक लाख बैल या इससे भी अधिक आवश्यक थे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जेन-उल-आविदीन जिसको मैंने खुर्रम को बुलाने के लिए भेजा था उसने सूचना दी कि शाहजहाँ वर्षा ऋतु माँडू में व्यतीत करेगा और उसके वाद आएगा। जव मैंने शहजादे का पत्र पढ़ा और समझा तो मुझे प्रसन्नता नहीं हुई वल्कि मैं नाराज हुआ। इसलिए मैंने फरमान लिखाया कि यदि वह वर्षा-ऋतु के अन्त तक वहीं ठहरने का विचार करता है तो मेरे पास उन अमीरों और हाकिमों को तो भेज दे जो मैंने उसके नेतृत्व में रखे थे विशेषकर बरहा और बुखारा के सैयदों को, शेखजादों को, अफगानों को और राजपूतों को।

शाहजहाँ का विद्रोह

[यह खवर आई कि खुर्रम ने नूरजहाँ वेगम और शहजादे शहरयार की जागीरें दवा ली हैं। उसने अशरफ-उल-मुल्क से लड़ाई लड़ी थी जो शहरयार का एक हाकिम था और जिसको धौलपुर और आसपास के प्रदेश का फौजदार नियुक्त किया गया था। इस लड़ाई में उभय-पक्ष के कितने ही लोग मारे गए थे। उसने माँडू में विलम्ब किया था। इसलिए मैं नाराज था। उसने अपने पत्रों में अनुचित और मूर्खतापूर्ण बातें लिखी थीं। उसकी धृष्टता से मैं जान चुका था कि उसका मन फिर गया है। अव इस समाचार को सुनकर मैंने देखा कि यद्यपि मैंने उसके प्रति बड़ी कृपा की है तो भी उसका मन विकृत हो गया है। इसलिए मैंने अपने एक पुराने सेवक राजा रोज अफजू को इस साहस और धृष्टता के कारणों का पता लगाने के लिए भेजा। मैंने उसको एक फरमान भी लिखा कि वह अपने ही कामों पर ध्यान दे और कर्तव्य रेखा से विचलित न हो। शाही कोष से जो कुछ जागीरें उसको दी हुई हैं उनसे ही वह सन्तुष्ट रहे। मैंने उससे यह भी कहा कि वह मेरे पास न आवे और उस तमाम सेना को भेज दे जिसकी कंधार के विरुद्ध युद्ध करने की आवश्यकता है। उसने मेरे आदेश के प्रतिकूल काम किया। इसके लिए उसको पाश्चात्ताप करना पड़ेगा। जव खुर्रम का पुत्र बीमार था तो मैंने प्रण किया था कि यदि ईश्वर उसे जीवन दान देगा तो मैं अब अपने हाथ से किसी जानवर का बध नहीं करूँगा। यद्यपि मुझे शिकार का बड़ा शौक था तथापि मैंने अब तक पाँच साल से इस प्रण को निभाया है। परन्तु अब खुर्रम ने मुझे रुष्ट कर दिया है इसलिए मैंने फिर शिकार पर जाने का निश्चय कर लिया।

24 तारीख को मैंने झेलम नदी पार की। उसी दिन खुर्रम का दीवान अफजलखां एक पत्र लेकर आया जिसमें खुर्रम ने अपने कर्तव्य विमुख कार्यों के कारण वतलाने का प्रयत्न किया था। उसे यह भी आशा थी कि अफजलखाँ के समझाने-बुझाने से उसको क्षमा प्राप्त हो जाएगी। परन्तु मैंने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया और उसके प्रति कोई कृपा का व्यवहार नहीं किया।

इतिवारखां और मेरे दूसरे अफसरों के, जिन्हें मैं आगरे में छोड़ आया था, पत्र आये कि खुर्रम अव भी उलटे रास्ते पर चल रहा है और कर्तव्यपथ की अपेक्षा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आज्ञोल्लंघन का मार्ग अच्छा समझकर उसने विनाश मार्ग की ओर बढ़ने का निश्चय कर लिया है और आगरे की ओर कूच कर रहा है। इतिवारखाँ ने यह भी लिखा कि इसी कारण उसने कोष भेजना उचित नहीं समझा है और घेरे की तैयारी में वह लगा हुआ है। आसफखाँ का भी पत्र आया जिसमें लिखा था कि इस कृतघ्न पुत्र ने शिष्टता का पर्दा फाड़ दिया है और खुले तौर पर विद्रोह कर दिया है और उसे (खान को) उसकी गतिविधियों की पूरी खबर नहीं मिली है अतः खजाने को आगे भेजना अनुचित समझकर वह अकेला ही मुझसे मिलने के लिए रवाना हो गया है।

यह समाचार मिलने पर मैंने सुलतानपुर के पास नदी पार करके इस अभागे पुत्र को दण्ड देने के लिए कूच किया। मैंने आदेश दिया कि अव से उसको बेदौलत कहा जाय।

तारीख 1 इस्फन्दारमुज को इतिवारखाँ का पत्र मिला जिसमें यह सूचना थी कि विद्रोही अतिशीघ्र कूच करके मेरी राजधानी आगरे के समीप पहुँच गया है और उसको यह आशा है कि यह नगर तैयार होगा उससे पहले ही वह उसे ले लेगा। फतेहपुर पहुंचने पर उसने देखा कि उसकी आशा निष्फल थी। इसलिए वह वहीं ठहर गया। उसके साथ खानखाना और उसका पुत्र था। इसके अतिरिक्त अन्य कई ऐसे अमीर थे जो दक्खिन और गुजरात में अच्छे पदों पर थे। परन्तु अव ये लोग विद्रोह और बेईमानी के मार्ग का अनुसरण कर रहे थे। विद्रोहियों ने लश्करखाँ के मकान से नौ लाख रुपये छीन लिए और सर्वत्र जो कुछ भी उनको काम की चीज मिली वह मेरे सेवकों से छीन ली। खानखाना मेरा शिक्षक था और यह पद बड़ा ऊँचा माना जाता था। वह भी अव विद्रोही हो गया और उसने सत्तर वर्ष की आयु में कृतघ्नता से अपना मुंह काला कर दिया। परन्तु वह स्वभावतः घातक विद्रोही था। अपने अन्तिम दिनों में उसके पिता ने भी मेरे पूज्य पिता के प्रति ऐसा ही लज्जाजनक व्यवहार किया था। उसने केवल अपने पिता के मार्ग का अवलम्बन,करके अपने वार्धक्य को लजाया। भेड़िये का वच्चा भेड़िया ही होता है चाहे उसको मनुष्य के सहवास में पाला जाय।

जव मैं सरहिन्द में होकर गुजर चुका तो सब ओर से सेनाएँ आने लगीं और मेरे दिल्ली पहुँचने पर तो इतनी सेना एकत्र हो गई कि जहाँ तक दिखाई देता था वहाँ तक समस्त इलाके में सेना ही सेना थी। जव मुझे यह सूचना मिली कि विद्रोही ने फतहपुर से कूच कर दिया है तो मैंने दिल्ली की ओर प्रयाण किया। इस युद्ध में मैंने महावतखां को प्रधान सेनापति वनाया और कुछ चुने हुए अनुभवी सैनिकों के समूह के अग्रभाग का नेतृत्व अब्दुल्लाखाँ को दिया। उसका काम यह था कि एक कोस आगे चलकर जानकारी प्राप्त करे और सब मार्गों को अपने अधिकार में ले ले। मैं यह बात भूल गया कि वह विद्रोही था, पुराना साथी है और इसका परिणाम यह हुआ कि मेरी सेना की गतिविधि से उसने विद्रोही को पूर्ण परिचित कर दिया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शासन का अठारहवाँ वर्ष

[मेरे शासन का अठारहवां वर्ष 20 जमादल अव्वल 1032 हिजरी (10 मार्च 1623) को शुरू हुआ। इस दिन सूचना आई कि विद्रोही मथुरा तक बढ़ आया है और शाहपुर के परगने में उसका सेना-शिविर है। दूसरी खबर यह मिली कि वह सीधे रास्ते से नहीं आ रहा है बल्कि बीस कोस बाईं ओर चला गया है। सुन्दरराय इस विद्रोह का नेता था। उसको और खानखाना के पुत्र दराब को और अन्य अनेक अमीरों को सेना के साथ मेरे विरुद्ध भेजा गया था। नाम के लिए दराब सेनानायक था। परन्तु वास्तव में नेतृत्व सुन्दर के हाथ में था और वही इस विद्रोह का स्तम्भ था। उन्होंने बिलोचपुर के समीप डेरा लगाया। मैंने आसफखाँ के नेतृत्व में पच्चीस हजार सवार आगे भेजे। उसका कासिमखाँ और अन्य लोगों ने सामना किया। सर्व-शक्तिमान ईश्वर ने सदा और सर्वत्र मुझ पर अनुग्रह किया है। इसलिए अब्दुल्लाखाँ अपने अधीन दस हजार आदमियों के सहित शत्रु से जा मिला और मेरी सेना के समक्ष दारुण विपत्ति उपस्थित हो गई तो संयोगवश एक गोली से सुन्दर मर गया और उसके पतन के पश्चात् विद्रोही लोग डगमगाने लगे। ख्वाजा अबुलहसन ने अपने सामने की सेना को पीछे धकेल दिया। आसफखाँ भी यथावसर अपनी सेना पीछे ले आया और हमें एक बड़ी विजय प्राप्त हो गई।

जब विद्रोही आंबेर के पास होकर निकला जो राजा मानसिंह का जन्मस्थान और निवास-स्थान है, तो उसने कुछ लोगों को इसे लूटने और नष्ट करने के लिए भेजा। मुझे यह भी विदित हुआ कि उसने राजा बासु के पुत्र जगतसिंह को अपने देश पंजाब में उत्पात शुरू करने के लिए भेजा है।

तारीख 25 उर्दीबिहिश्त को मैंने अपने पुत्र शाह परवेज को उस सेना का अध्यक्ष बनाया जो विद्रोही के विरुद्ध काम कर रही थी। मुख्यतः नेतृत्व उसके हाथ में था परन्तु सेना का संचालन करना मुतमादुद्दौला अलकाहिर महावतखाँ के सुपुर्द था। उसके साथ खान-ए-आलम, महाराजा गजसिंह, फाजिरखाँ, रशीदशाँ, राजा गिरधर, राजा रामदास और अन्य लोग भी भेजे गए थे। इस सेना में चालीस हजार सवार थे और उनके साथ उपयुक्त तोपखाना और बीस लाख रुपए थे। 30 तारीख तदनुसार 19 रजब 1034 हिजरी को मैंने आनासागर की पाल पर डेरा लगाया जो अजमेर से दिखाई देता है।

जब शहजादे की सेना चाँदा के पर्वतों को पार करके मालवे में दाखिल हुई तो शाहजहाँ बीस हजार सवार, छः सौ हाथी और तोपखाने के साथ युद्ध करने के विचार से बाहर निकला। महावतखाँ ने उन कई लोगों के साथ पत्र-व्यवहार शुरू किया जो डर या दबाव से विद्रोही से मिल गए थे। जब उन्होंने देखा कि उनकी स्थिति निराशाजनक है तो उन्होंने सुरक्षा के आश्वासन के लिए प्रार्थना की। शाहजहाँ को युद्ध करने का साहस नहीं हुआ और पीछे हटने की बात सोचने लगा और उसने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अपने हाथी नर्वदा पार भेज दिए। फिर कालिया नामक गाँव के पास उसने अपनी सेना शाही सेना के विरुद्ध भेजी, परन्तु वह खानखाना के साथ एक कोस पीछे रहा। वरकंदाज महावतखाँ के साथ पत्र-व्यवहार कर चुका था और उसको वचन दिया जा चुका था। जब दोनों सेनाएँ मुकाबले में खड़ी हुईं तो वह मौका देखकर अपने बन्दूकचियों के साथ शाही सेना में आ मिला। ऐसा ही वचन महावतखाँ रुस्तम को दे चुका था जो विद्रोही का वड़ा विश्वस्त सेनानायक था। वह अन्य कई अफसरों के साथ शाही सेना में आ गया। जब शाहजहाँ ने यह बात सुनी तो उसने सामना करना छोड़ दिया। अब उसे किसी पर भरोसा नहीं रहा अतः उसने भागने का निश्चय कर लिया। अपनी अव्यवस्थित सेना के साथ उसने नर्वदा पार की तो उस गड़बड़ का लाभ उठाकर उसके कितने ही साथी शाही सेना में आ गए।

नदी पार करके शाहजहाँ ने सब नावें अपनी तरफ रख लीं और उतार घाट पर कड़ा पहरा लगा दिया। वेरम वेग वख्शी को अपनी विश्वस्त सेना के साथ तथा दक्खिनियों के साथ वहाँ छोड़कर वह 'असीर' और बुरहानपुर के किले की ओर चल दिया। खानखाना ने महावतखाँ के पास एक हरकारा भेजा था। उसको शाहजहाँ के आदमियों ने पकड़ लिया। उसने खान को बुलाया और हरकारे के पास से जो पत्र मिला था उसको दिखाया। खानखाना ने बहाना करने का प्रयास किया परन्तु वह सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे सका। अतः यह आदेश दिया गया कि वह और दराव तथा उसके पुत्र पहरे में रख दिए जावें।

रुस्तमखाँ, मोहम्मद मुराद और अन्य लोग जो विद्रोही की सेवा छोड़कर मेरे कर्तव्यनिष्ठ पुत्र के पास आ गए थे, आज्ञानुसार मेरे दरवार में भेजे गए और मैंने उनसे भेंट की। रुस्तमखाँ को पांच हजार मनसब-जात और चार हजार सवार मिले और मोहम्मद मुराद को एक हजार जात और पाँच सौ सवार दिए गए और दोनों को भविष्य में पदोन्नति की आशा दिलाई गई।

जब विद्रोही शाहजहाँ असीर पहुँचा तो उसने खानखाना, दराव और अन्य अपने बच्चों को दुर्ग के ऊपरी भाग में रख दिया। वह वहाँ तीन दिन ठहरा और दुर्ग में सामान जमाने में तथा उसको तैयार करने में लगा रहा। फिर उसने गोपाल दास नामक राजपूत के सुपुर्द कर दिया। जब वह रवाना हुआ तो अपनी स्त्रियों और फालतू चीजों को वह गोपालदास के सुपुर्द कर गया परन्तु वह अपनी तीन पत्नियों, बच्चों और आवश्यक दासियों को अपने साथ ले गया। उसका प्रथम विचार यह था कि अपने बच्चों और खानखाना को वहाँ कैद कर जावे। परन्तु उसका विचार बदल गया और उन्हें वह बुरहानपुर ले गया। महावतखाँ की बड़ी इच्छा थी कि खानखाना को विद्रोही से पृथक कर शान्ति स्थापित की जावे। शाहजहाँ ने भी अपनी स्थिति पर विचार करके खानखाना को कैद से निकाला और बफादार बना रहने के लिए उसको कुरान की शपथ दिलाई। इस शपथ और समझौते को दृढ़

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करने के लिए वह उसको अपने अन्तःपुर में ले गया और उसको एक निकट सम्बन्धी का सम्मान दिया, अपनी स्त्रियों और बच्चों को उसके समक्ष उपस्थित किया और अश्रुपूर्ण नेत्रों से उसने कहा, "यदि मुझ पर विपत्ति आई तो मेरी और मेरे कुटुम्ब की प्रतिष्ठा की रक्षा का भार तुम पर है। कोई ऐसा काम किया जाए कि इस दुखद और हीन मार्ग पर मैं आगे बढ़ूं।"

खानखाना उसे छोड़कर शान्ति के विचार से शाही सेना की ओर चला। ऐसी व्यवस्था की गई थी कि सन्धि-वार्ता के लिए वह नदी के उसी तट पर ठहरे। परन्तु वह नदी तट पर पहुँचा, उसके पूर्व ही शाही सेना के कुछ साहसी नवयुवकों को ऐसे स्थान का पता लग गया जो विद्रोहियों ने सूना छोड़ रखा था, वहाँ से उन्होंने नदी पार कर ली। इससे कुछ त्रास उत्पन्न हुआ परन्तु वेरमवेग ने रास्ते को वीरता-पूर्वक रोकने का निश्चय किया। जब वह अपनी सेना एकत्र कर रहा था तो कुछ लोग नदी पार कर गये और उसी रात्रि को विद्रोही लोग पीछे हट गए। खानखाना विषम स्थिति में रह गया। उसे नहीं सूझता था कि आगे बढ़े या पीछे हटे। परन्तु मेरे पुत्र की सेना के लोग निरन्तर आगे बढ़ते रहे और खानखाना बलवे के फन्दे से मुक्त हो गया। फिर महावतखाँ उसको लेकर मेरे पुत्र के पास आया।

जब शाहजहाँ ने सुना कि खानखाना ने उसका पक्ष त्याग दिया है और शाही सेना ने नदी पार कर ली है तथा बैरमखाँ पीछे हट गया है तो वह भी पीछे हट गया। यद्यपि घोर वर्षा हो रही थी और सब ओर पानी भरा हुआ था तो भी वह विपन्न अवस्था में माही नदी पार करके दक्खिन की ओर चला गया। इस गड़बड़ में जो भी अफसर इच्छा या अनिच्छा से उसके साथ थे, उससे अलग हो गए।

9 आबान को खवासखाँ शहजादा परवेज और महावतखाँ का पत्र लेकर आया जिसमें मुझे सूचित किया गया था कि वे बुरहानपुर पहुँच गए परन्तु वर्षा की प्रबलता के कारण बहुत से लोग पीछे रह गए थे। आज्ञा-पालन करते हुए उन्होंने विश्राम नहीं किया था और विद्रोही का पीछा करके वे ताप्ती नदी को पार कर चुके थे। उनके आगमन की खबर सुनकर विद्रोही अव्यवस्थित ढंग से भागते रहे और भारी वर्षा में तथा कीचड़ में उनके बहुत से जानवर नष्ट हो गए। तब शाही सेना ने बुरहानपुर से चालीस कोस अंकोट के परगने तक उनका पीछा जारी रखा। तब विद्रोही कुतुबुलमुल्क के इलाकों में चला गया। जब मेरे पुत्र परवेज को मालूम हुआ कि विद्रोही मेरे राज्य को छोड़ गया है तो वह और महावतखाँ तथा अन्य अमीर 1 आबान को बुरहानपुर लौट आए।

अब समाचार मिला कि शाहजहाँ दराब और दूसरे भागे हुए लोगों के साथ कुतुबुलमुल्क के इलाके से निकल गया है और उड़ीसा और बंगाल की ओर जा रहा है। मार्ग में उन्हें बड़ी कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं और विद्रोही के बहुत से साथी अवसर देखकर उसे छोड़ गए। बहुत लम्बी कूच करने के बाद शाहजहाँ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मछली (मुसलीपट्टम) पहुंचा जो कुतुबुलमुल्क के अधिकार में था। जब यह मालूम हुआ कि वह वहाँ आ गया है तो कुतुबुलमुल्क ने उसके पास अपना एक आदमी भेजा और उसको रुपए, सामान आदि सब प्रकार की सहायता की। उसने यह भी प्रबन्ध कर दिया कि शाहजहाँ को उसके राज्य में से सुरक्षित निकाल दिया जावे। उसने अन्न के व्यापारियों और जमींदारों को उसके डेरे में जाने के लिए और उसे अन्न देने के लिए और उसकी अन्य आवश्यकताएँ पूर्ण करने के लिए नियुक्त कर दिया।

शासन का उन्नीसवाँ वर्ष

मेरे शासन के उन्नीसवें वर्ष का नौरोज 29 जमादलअव्वल 1033 हिजरी (10 मार्च 1624 ई०) को पड़ा।

अब खबर आई कि विद्रोही उड़ीसा की सीमा पर पहुंच गया है। तब मैंने शहजादा परवेज, महावतखाँ और अन्य अमीरों को, जो उन्हें सहायता देने के लिए भेजे गए थे, फरमान जारी किया कि यथासम्भव उस प्रान्त की रक्षा करें और इलाहाबाद और बिहार की ओर कूच करें। इन आदेशों के आने पर यद्यपि भारी वर्षा हो रही थी तो भी शहजादा आदेश का पालन करने के लिए और इलाहाबाद की ओर कूच करने के लिए तैयार हो गया है। 6 फरवरदीन को उसने शाही सेना के साथ बुरहानपुर से लालबाग की ओर कूच किया। उसके पास यह सूचना थी कि शाहजहाँ उड़ीसा में घुस आया है। इसका अर्थ यह था कि उड़ीसा और दक्खिन के बीच में एक दुर्गम घाटी है जिसके एक ओर पर्वत है और दूसरी ओर दलदल और नदी है। यहाँ पर गोलकुण्डा के शासक ने एक दुर्ग बनवाया था और उसको तोपों और बन्दूकों से सुसज्जित किया था। कुतुबुलमुल्क की अनुमति के बिना इस स्थान को पार करना असम्भव था। परन्तु जिन लोगों को शाहजहाँ के साथ भेजा गया था उनकी सहायता से वह इस दुर्ग को पार करके उड़ीसा में घुस गया। विद्रोही के आगमन की खबर सुनकर स्वर्गीय आसफखाँ के भाई सालीह ने, जो बर्दवान का जागीरदार था, दुर्ग की सुरक्षा का प्रबन्ध किया। इब्राहीम ने डरकर अकबरनगर[1] में शरण ली, जहाँ वह सेना इकट्ठी करने और सामना करने की तैयारी में लग गया।

1 राजमहल—स्टीवर्ट कृत 'बंगाल' पृ० 186.

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ततिम्मा-ए-वाकियात-ए-जहाँगीरी

लेखक : **मोहम्मद हादी**

यह ग्रन्थ उन संस्मरणों का समापन करता है जिनका उल्लेख पिछले लेखों में किया जा चुका है। इसका लेखक मोहम्मद हादी है जिसका वर्णन पहले हो चुका है। भूमिका में वह अपनी उपाधि कामवारखाँ का उल्लेख नहीं करता परन्तु अपने दूसरे ग्रन्थों में वह यह उपाधि धारण करता है। वह कहता है कि जब उसकी आयु साठ वर्ष से अधिक हो चुकी थी तब उसने लिखना शुरू किया और अठारह वर्ष के संस्मरणों को उसने अपने हाथ से लिखा। यह काम पूरा कर चुकने पर उसे विचार आया कि इतिहास की मरुभूमि में प्यासे भटकने वाले पाठक शासन के अठारहवें वर्ष के अन्त पर पहुंच कर और यह देखकर कि यह ग्रन्थ अपूर्ण है उसी की भाँति बड़े असन्तुष्ट होंगे। उसको बचपन से ही ऐतिहासिक अध्ययन की लगन थी। इसलिए उसने निश्चय किया कि जहाँगीर के राज्य के अन्त तक का वृत्तान्त लिखकर इस ग्रन्थ को पूरा किया जाय और इन संस्मरणों में एक भूमिका जोड़ दी जाय जिसमें जहाँगीर के राज्याभिषेक के पहले की मुख्य-मुख्य घटनाएँ लिख दी जाएँ और इसके लिए अनेक विश्वसनीय हस्तलिखित पुस्तकों का उपयोग किया जाय। यह काम उसने सन्तोषजनक रीति से कर दिया है परन्तु इससे हमारे पिछले ज्ञान में कोई वृद्धि नहीं हुई है क्योंकि उसने प्रामाणिक ग्रन्थों की अक्षरशः नकल की है विशेषकर "इकबालनामा" की जिससे उसने बहुत सामग्री ली है। भूमिका के अन्त में वह कहता है कि वह आरम्भ से अन्त तक शाहजहाँ के पूरे शासनकाल का संक्षिप्त इतिहास किसी दिन लिखकर जहाँगीर के इतिहास में जोड़ देगा। ऐसा माना जा सकता है कि 'तारीख-ए-चगताई' लिखकर उसने यह काम पूरा किया हो।

इस ग्रन्थ की जितनी भी प्रतियाँ मैंने देखी हैं, वे प्रामाणिक संस्मरणों की हस्तलिखित प्रतियों के साथ नत्थी हैं। शायद अठारहवें वर्ष के बाद का भाग अलग नहीं मिलता। (यह संस्मरण की हस्तलिखित प्रति के साथ जो रायल एशियाटिक सोसायटी के अधिकार में है, लगी हुई है)।

यह ग्रन्थ संस्मरणों का पूरक है और उसके साथ लगा हुआ है। यह उसके तिथि-क्रम से अलग किया जा सकता है। इसकी ठीक तिथि ज्ञात नहीं है परन्तु लेखक का दूसरा ग्रन्थ तारीख-ए-चगताई 1137 हिजरी (1724 ई०) तक चलता है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भूमिका में संक्षेपतः जहाँगीर के जीवन की उन घटनाओं का वर्णन है जो उसके राज्याभिषेक से पूर्व घटी थीं और यह मिर्जा कामगार और दूसरे स्रोतों के आधार पर लिखा गया है। इस ग्रन्थ का अधिकांश भाग लगभग पूर्णतः इकबाल-नामा की पुनरावृत्ति है परन्तु सम्पादक ने कुछ ऐसे सन्दर्भों का अनुवाद कर दिया है जिसको लेखक ने किसी दूसरे आधार ग्रन्थ से लिया होगा। अन्तिम अवतरण उस संक्षिप्त प्रकरण से लिया गया है जो अन्त में जहाँगीर के मन्त्रियों के विषय में है। इसका अनुवाद किसी अज्ञात व्यक्ति ने किया है परन्तु सर एच० एम० ईलियट ने इसे बहुत बदल दिया है।

भूमिका में 28 पृष्ठ हैं और संस्मरण 88 पृष्ठों में जारी रखे गए हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर सत्रह पंक्तियाँ हैं।

अवतरण

शासन का उन्नीसवाँ वर्ष

नया वर्ष 29 जमादुलअव्वल 1033 हिजरी (10 मार्च 1624 ई०) को प्रारम्भ हुआ।

जब सुलतान परवेज और महावतखाँ इलाहाबाद के निकट पहुँचे तो अब्दुल्लाखाँ घेरा उठाकर झोंसी को लौट गया। दरियाखाँ सेना सहित नदी तट पर अधिकार किए रहा और तमाम नावों को अपनी ओर ले गया। इस प्रकार शाही सेना कुछ दिन नदी पार नहीं कर सकी। शहजादा और महावतखाँ का डेरा नदी के दूसरी ओर था। उतार घाटों पर दरियाखाँ का कब्जा था। परन्तु आसपास के जमींदारों ने वफादारी करके विभिन्न भागों से तीस नावें इकट्ठी कर लीं और कुछ कोस ऊपर की ओर शाही सेना को पार उतार दिया। रास्ता रोकने के लिए दरियाखाँ अपने स्थान पर डटा रहा। उसने सुना कि शाही सेना नदी पार कर चुकी है। अब उसने जान लिया कि कुछ नहीं हो सकता। इसलिए वह जौनपुर की ओर पीछे हट गया। अब्दुल्लाखाँ और राजा भीम ने जौनपुर की ओर आगे बढ़कर सलाह दी कि बनारस की ओर चलना चाहिए। इसलिए शाहजहाँ अपनी स्त्रियों और सेवकों को रोहतास भेजकर बनारस की ओर रवाना हुआ। अब्दुल्लाखाँ, राजा भीम और दरियाखाँ उसके साथ थे। बनारस पहुँचकर और गंगा पार करके वह तूनस नदी पर ठहरा। शहजादा परवेज और महावतखाँ दमदमा पहुँच गए और उन्होंने आका मोहम्मद जमा तहरानी को वहीं छोड़कर तूनस नदी के दूसरी ओर जाने के विचार से गंगा पार की। अपने स्थान को खानदौरा के सुपुर्द करके शाहजहाँ ने गंगा पार की और मोहम्मद जमा का सामना किया जो झाँसी की ओर हट गया। खानदौरा पूरे विश्वास के साथ आगे बढ़ा और मोहम्मद जमा भी उसका सामना करने के लिए जल्दी चला। एक तेज लड़ाई हुई जिसमें खानदौरा हार गया और उसके सैनिक उसे छोड़ भागे। जब वह अकेला रह गया तो वह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्राणों की आशा छोड़कर सब ओर लड़ा और मरते समय तक लड़ता रहा। उसका सिर काटकर शहजादा परवेज के पास भेजा गया। शाहजहाँ का एक वृद्ध सेवक रुस्तमखाँ अब उसे छोड़कर परवेज के पास चला गया। उसने कहा कि यह अच्छा हुआ कि हरामखोर (खानदौरा) मारा गया। खान-ए-आजम का पुत्र जहाँगीर कुली वहाँ उपस्थित था। उसने कहा, "उसे कोई विद्रोही या हरामखोर नहीं कह सकता। उससे अधिक स्वामिभक्त व्यक्ति कोई नहीं है। उसने मरते दम तक अपने स्वामी की सेवा की। इससे अधिक वह क्या कर सकता था? अब भी उसका सिर सबसे ऊँचा है।"

शाहजहाँ बंगाल से रवाना हुआ और दक्खिन की ओर चला। तब मुखलिसखाँ शीघ्रता के पंखों पर सवार होकर शहजादा परवेज के पास पहुंचा। वह उसे और उसके अमीरों को दक्खिन की ओर भेजना चाहता था। तब दक्खिन के बख्शी असदखाँ का बुरहानपुर से लिखा हुआ यह पत्र आया कि याकूबखाँ हब्शी दस हजार सवारों के सहित नगर से दस कोस दूर मलिकापुर आ पहुंचा है और सर बुलन्दराय उस पर आक्रमण करने के लिए नगर से बाहर निकल गया है। इस पर सख्त निर्देश दिया गया कि जब तक सहायक सेना न आ जाय, लड़ाई न की जाय।

1034 हिजरी के आरम्भ में शाहजहाँ दक्खिन पहुंचा। मलिक अम्बर ने उसकी सहायता की और याकूबखाँ हब्शी के नेतृत्व में एक सेना बुरहानपुर को लूटने के लिए भेजी। इस गति की सूचना उसने शाहजहाँ को दी जिसने उसी दिशा में कूच करके देवल गाँव में अपना डेरा लगाया। फिर शहजादे ने अब्दुल्लाखाँ को याकूबखाँ के पास भेजा कि वह बुरहानपुर का घेरा शुरू करे। शाहजादा भी पीछे से चला और नगर के पड़ौस में लालबाग में उसने अपना डेरा लगाया। राव रतन और अन्य शाही अफसरों ने जो उस स्थान पर थे, नगर की रक्षा के लिए सब कुछ तैयारी की और उसको बचाने के लिए सावधानी से काम लिया। शाहजहाँ ने आदेश दिया कि नगर पर एक ओर से अब्दुल्ला और दूसरी ओर से शाह कुलीखाँ आक्रमण करे। घिरे हुए लोगों ने अपनी संख्या के कारण और खूब लड़ाई करके अब्दुल्ला को रोका परन्तु शाह कुलीखाँ की सेना ने दीवार तोड़कर अन्दर प्रवेश किया।

सर बुलन्दराय ने अब्दुल्लाखाँ को रोके रखने के लिए एक सेना छोड़कर शीघ्रता से शाह कुलीखाँ पर आक्रमण किया। शाह कुलीखाँ के बहुत से आदमी गलियों और बाजारों में तितर-बितर हो गए परन्तु वह स्वयं थोड़े से आदमियों के साथ दुर्ग के सामने डटा रहा। उसके कई आदमी धराशायी हो गए। तब उसने दुर्ग में प्रवेश करके द्वार बन्द कर दिए। सर बुलन्दराय ने उसको घेर लिया और शाह कुलीखाँ ने दबकर आत्म-समर्पण कर दिया।

तब शाहजहाँ ने दूसरा आक्रमण करने के लिए आदेश दिया परन्तु यद्यपि यह बड़ी वीरता के साथ किया गया तो भी विफल हुआ और कई प्रसिद्ध हाकिम

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मारे गए। तब शाहजहाँ ने सवार होकर तीसरा आक्रमण करवाया। यह बड़े साहस के साथ किया गया और बहुत से अफसर और आदमी मारे गए परन्तु सफलता प्राप्त नहीं हुई। सईद जाफर की गर्दन में गोली का एक हल्का सा घाव लगा परन्तु वह इतना भयभीत हुआ कि भाग गया। उसके चले जाने से दक्खिनियों पर प्रभाव पड़ा और वे बिखर कर भाग गए और असफलता से हतोत्साह होकर उनके पीछे-पीछे चले गए।

अब समाचार मिला कि शहजादा परवेज और महावतखाँ शाही सेना के साथ लौटते हुए नर्वदा नदी पर जा पहुँचे हैं। इसलिए शाहजहाँ हटकर बालाघाट चला गया। अब्दुल्लाखाँ ने उससे अलग होकर इन्दौर नामक गाँव (मौजा) पर कब्जा कर लिया।

शासन का बीसवाँ वर्ष

जब बादशाह को सूचना मिली कि बुरहानपुर का घेरा उठा लिया गया है तो उसने सर बुलन्दराय पर बड़ा अनुग्रह किया। उसे पाँच हजार का मनसब और रामराज की उपाधि प्रदान की। इससे बढ़कर दक्खिन में कोई उपाधि नहीं मानी जाती। घेरा उठाकर शाहजहाँ ने दक्खिन का रास्ता लिया परन्तु मार्ग में ही वह बीमार हो गया। अब उसने समझा कि उसने ऐसा मार्ग ग्रहण करके भूल की है और उसने अनुभव किया कि अपने अपराधों के लिए उसे अपने पिता से क्षमा-याचना करनी चाहिए। इसलिए उचित भावना से प्रेरित होकर उसने अपने पिता को पत्र लिखा जिसमें खेद और पश्चात्ताप प्रकट किया और पिछले तथा वर्तमान अपराधों के लिए क्षमा माँगी। बादशाह ने अपने हाथ से पत्र लिखा कि यदि वह दाराशिकोह और औरंगजेब, अपने दोनों पुत्रों को दरबार में भेज दे और रोहतास तथा असीर के दुर्गों को, जो उसके सेवकों के पास हैं, समर्पण कर दे तो उसे पूरी तरह क्षमा प्रदान कर दी जाएगी और बालाघाट का परगना उसे दे दिया जाएगा। इस पत्र को पढ़कर शाहजहाँ ने यह अपना कर्तव्य समझा कि अपने पिता की इच्छानुकूल काम किया जावे। अतः यद्यपि अपने पुत्रों के प्रति उसका बड़ा प्रेम था, तो भी उसने उनको जवाहरात, शस्त्रास्त्र और हाथी, जिनका मूल्य दस लाख रुपए था, देकर अपने पिता के पास भेज दिया। उसने मुजफ्फरखाँ को आदेश दिया कि रोहतास का दुर्ग बादशाह द्वारा नियुक्त किए हुए आदमी के सुपुर्द कर दिया जाय और वह स्वयं सुलतान मुराद बख्शी के साथ आ जावे। शाहजहाँ ने हयातखाँ को भी असीरगढ़ का दुर्ग शाही हाथों को सुपुर्द कर देने के लिए लिखा और उसके बाद शाहजहाँ ने नासिक की ओर कूच किया।

अब बादशाह को सूचना मिली कि महावतखाँ ने नक्श बन्दी के ज्येष्ठ पुत्र ख्वाजा बरखुरदार के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दिया है। यह विवाह शाही अनुमति के बिना किया गया था। इसलिए बादशाह बहुत क्रुद्ध हुआ और उसने उस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नवयुवक को बुलाकर पूछा कि नियम के विरुद्ध उसने ऐसे बड़े अमीर की पुत्री से क्यों विवाह कर लिया। वह सन्तोषप्रद उत्तर न दे सका। इसलिए आदेश हुआ कि उसको पीटकर कैद में डाल दिया जाए।

महावतखाँ के साहसी कार्य की खबर जब शाहजहाँ को मिली तो उसको भी बड़ा क्रोध आया। यद्यपि वह इस समय शरीर से निर्बल था और उसके पास युद्ध-सामग्री की कमी थी तो भी उसने अपने पिता की सहायतार्थ जाने का और इस दु:साहस के लिए महावतखाँ को दण्ड देने का निश्चय किया। 23 रमजान 1035 हिजरी (7 जून 1626 ई०) को एक हजार सवारों के सहित वह नासिक से रवाना हुआ। उसको आशा थी कि ज्यों-ज्यों वह आगे बढ़ेगा त्यों-त्यों उसकी सेना में वृद्धि होती जाएगी। अजमेर पहुँचने पर राजा भीम के पुत्र राजा किशनसिंह की, जो उसके साथ था, मृत्यु हो गई और उसके पाँच सौ सवार भी इधर-उधर चले गए। अब शाहजहाँ के साथ केवल पाँच सौ आदमी रह गए और ये भी बड़ी विपन्न अवस्था में थे। जब वह अपना मूल विचार कार्यान्वित नहीं कर सका तो उसने विचार किया कि इस स्थिति में जो कुछ हो सकता है वही किया जाए और इसलिए ठट्ठा जाकर कुछ समय एकान्त स्थान में काटा जाय। इसलिए वह अजमेर से नागौर पहुँचा और वहाँ से जोधपुर और जैसलमेर होकर आगे गया।

वजीरों के संस्मरणों से

मिर्जा गयासबेग की प्रकृति इतनी पुण्यशील थी कि उसके दरवाजे से कोई असन्तुष्ट होकर नहीं जाता था। परन्तु वह रिश्वत लेने में निर्भय था और कभी नहीं हिचकता था। जब अकबर लाहौर में ठहरा हुआ था तो अली कुली बेग इस्तजलू जिसको शाह इस्माइल द्वितीय के निर्देशानुसार शिक्षा दी गई थी, आकर बादशाह की सेवा करने लगा और उसने मिर्जा गयासबेग की पुत्री से, जिसका जन्म कन्धार नगर में हुआ था, विवाह कर लिया। इस व्यक्ति ने फिर जहाँगीर की सेवा करना स्वीकार किया जिसने उसको शेर अफगन की उपाधि और बंगाल में जागीर देकर वहाँ जाने के लिए आदेश दिया। उसने कुतुबुद्दीनखाँ को किस प्रकार मारा और उसके जीवन का अन्त कैसे हुआ, इसका पहले ही यथास्थान उल्लेख किया जा चुका है। जब उसे अपना पुरस्कार प्राप्त हो गया और वह विनाश के मरुस्थल में चला गया तो बंगाल के हाकिमों ने मिर्जा गयासबेग इतिमाद्-उद्-द्दौला की पुत्री को बादशाह के पास भेज दिया। बादशाह को कुतुबुद्दीनखाँ की मृत्यु से बड़ा ही गहन दु:ख हुआ था। उसने मिर्जा ग्यासबेग की पुत्री को रुकिया-सुलताना के पास रख दिया। रुकिया सुलताना बाबर की पत्नियों में से थी। इसके पास वह काफी समय तक रही। परन्तु उसे कोई काम न मिला। फिर उसके दु:ख के दिनों का अन्त होने लगा और उसके भाग्य का सितारा गहन निद्रा से जगकर चमकने लगा। दुल्हन का कमरा तैयार हुआ, उसको सजाया गया और उसमें आशा जागृत होने लगी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बन्द दरवाजों की चाबी मिल गई। टूटे दिल को राहत मिली और एक नौरोजे के दिन उसे बादशाह का प्रेम प्राप्त हो गया। शीघ्र ही वह बादशाह की प्रियतमा बन गई। पहले उसे नूर महल की और कुछ दिन पश्चात् नूरजहाँ बेगम की उपाधि प्राप्त हो गई। उसके सब रिश्तेदारों को साम्राज्य में ऊँचे से ऊँचे पद पर नियुक्त किया गया। इतिमाद्-उद्-द्दौला प्रधान मन्त्री और उसका ज्येष्ठ भाई अबुल हसन विधि-नायक के पद पर नियुक्त हुए। अबुल हसन को इतिमादखाँ की उपाधि दी गई। अब बादशाह और उसके रिश्तेदार अधिकारहीन हो गए और इतिमाद्-उद्-द्दौला के सेवक और नाजिर खान और तुरखान बन गए। पहले हाजी कोका महल की सेविकाओं की अध्यक्षा थी। अब उसका स्थान दिलारानी को दे दिया गया। यह नूरजहाँ की धाय रह चुकी थी। अब इसकी मुहर के बिना सदरु-स-सदुर किसी को वृत्तिका नहीं दे सकता था। नूरजहाँ साम्राज्य के सब कामों का प्रवन्ध करती थी और सब प्रकार के सम्मान उसके हाथ में थे। उसके निरंकुश बादशाह होने में कोई कमी न थी परन्तु उसके नाम का खुतुबा नहीं पढ़ा जाता था।

कुछ समय तक वह झरोखे में बैठती थी और अमीर लोग उससे सलाम करने के और आदेश प्राप्त करने के लिए जाया करते थे। उसके नाम के सिक्के भी जारी होते थे और फरमानों पर लगाई जाने वाली मुहर पर उसके हस्ताक्षर होते थे। संक्षेप यह है कि शनैः-शनैः वह साम्राज्य की निर्विवाद शासक बन गई, मात्र नाम के लिए ही वह शासक न थी। परन्तु बादशाह स्वयं उसके हाथ का खिलौना हो गया था। वह कहा करता था कि "इस काम के लिए नूरजहाँ बेगम को चुन लिया गया है। उसमें साम्राज्य के कार्य-संचालन की बुद्धि है। मुझे तो शराब की एक बोतल और माँस का एक टुकड़ा चाहिए। मैं इसी में खुश हूँ।"

नूरजहाँ के प्रति सब लोगों के विचार बहुत अच्छे थे। जो कोई उससे सहायता माँगता था, उसके प्रति वह उदारता और न्याय करती थी। वह सब दुखियों को शरण देती थी और असहाय लड़कियों के विवाह के लिए अपने पास से रुपया दिया करती थी। उसने अपने जीवन में लगभग पाँच सौ लड़कियों को सहायता दी थी और उसकी उदारता के लिए उसके प्रति हजारों लोग कृतज्ञ थे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इकबालनामा-ए-जहाँगीरी

लेखक : मुतामदखाँ

यह महत्त्वपूर्ण इतिहास नवाव मुतामदखाँ का लिखा हुआ है जो प्रायः मोहम्मद शरीफ के नाम से प्रसिद्ध है। इस पुस्तक के एक हिस्से में वह अपने विषय में लिखता है कि वह वादशाह के द्वारा वख्शी नियुक्त किया गया था और उसे एक हजार का मनसव तथा सम्मानार्थ भेंटस्वरूप एक हाथी प्रदान हुआ था।

इकबालनामा तीन भागों में विभक्त है। पहले भाग में खाकान राजवंश का इतिहास है जिसमें वावर और हुमायूँ का शासन सम्मिलित है। दूसरे भाग में अकवर का शासन है और तीसरे में जहाँगीर का। प्रथम दो भाग तो सुलभ नहीं हैं परन्तु तीसरा भाग सर्वत्र मिलता है।

तीसरे भाग में जहाँगीर का समस्त शासन दिया हुआ है। इसमें संस्मरणों के प्रथम उन्नीस वर्ष का संक्षेप है जिसको जारी रखने के लिए और पूरा करने के लिए मुतामदखाँ को आदेश हुआ था। इस ग्रन्थ में वह लिखता है कि जहाँगीर ने उसको इकबालनामा लिखने का भी हुक्म दिया था। प्रायः ऐसा होता है कि सत्य का चाटुकारिता पर वलिदान कर दिया जाता है। इस देश के आलोचकों में इस ग्रन्थ का स्थान ऊँचा नहीं माना जाता परन्तु दूसरे भाग से अधिक कोई पुस्तक प्रचलित नहीं है। इस शासन में लेखक वहुत ऊँचे पदों पर था और बड़े-बड़े कामों में उसका हाथ था। इसलिए हमको मानना चाहिए कि यह पुस्तक बहुत उपयोगी है।

यह पुस्तक जहाँगीरनामा के नाम से प्रायः प्रसिद्ध है और डो (Dow) ने इस वादशाह के शासनकाल के मामलों के लिए इसको प्रमाण रूप में उद्धृत किया है। श्री एनक्विटिल ने भी इसका उल्लेख किया है। श्री मार्शल ने इस स्थल के विषय में लिखा है कि "श्री एनक्वेटिल के शब्दों से ऐसा जान पड़ता है कि जहाँगीर के संस्मरण ही उसके लिखे हुए हैं।" लेकिन श्री एनक्वेटिल के वाक्य का यह अर्थ नहीं है और यह उस गड़बड़ का दूसरा उदाहरण है जो जहाँगीर के संस्मरण के विषय में प्रचलित है।

इस जिल्द का मजहर अलीखाँ विला ने उर्दू में अनुवाद किया है। इसकी एक प्रति एशियाटिक सोसायटी वंगाल के पुस्तकालय में है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यह ग्रन्थ कथा के रूप में है, जैसे मआसिर-ए-जहाँगीरी और अन्य प्रामाणिक आत्म-कथाएँ हैं। प्रत्येक वर्ष की घटनाओं का प्रायः संक्षेप दिया हुआ है परन्तु यह इतना संक्षिप्त है कि उल्लेख के योग्य नहीं है। इस जिल्द का आरम्भ जहाँगीर के राज्यारोहण से और अन्त उसकी मृत्यु पर होता है। इसमें शाही परिवार के मन्त्रियों के, विद्वानों के, हाकिमों के और शासन-काल के कवियों के नाम दिए हुए हैं।

मुझे जहाँ तक मालूम है सर्वोत्तम प्रति सागर इलाके में दमोह के तहसीलदार मिर्जा अली अकबर के पास है। यह 1087 हिजरी (1676 ई०) में तैयार की गई थी।

(तीसरी जिल्द बिबलियोथिका इंडिका नामक ग्रन्थमाला में प्रकाशित हुई है। नीचे दिए हुए अवतरणों में कुछ ऐसे विषय हैं जो संस्मरणों में नहीं दिए हुए हैं, और शासन के उन्नीसवें वर्ष के बाद का वृत्तान्त इसमें पूरा जारी रखा गया है। इसका पूरा अनुवाद सम्पादक ने किया है। केवल तीन स्थलों का अनुवाद नहीं है क्योंकि इनके संशोधन की बड़ी आवश्यकता थी।)

अवतरण

शासन का प्रथम वर्ष

[तारीख 9 शफर को बादशाह लाहौर पहुँचा। खुसरु को हाथी पर बिठा कर उन सूलियों के बीच में घुमाया गया जिन पर उसके साथी लटकाए गए थे जिससे वह उनके दण्ड को देखकर अपने कुमार्ग का त्याग कर सके।]

शासन का दूसरा वर्ष

नूरजहाँ के पति शेर अफगन की मृत्यु

बंगाल से समाचार मिला कि अलीकुली बेग इस्तजलु ने, जिसको शेर अफगन की उपाधि प्राप्त हो चुकी थी, कुतुबुद्दीनखाँ और कई शाही अफसरों को, जो उसकी सेवा में थे, मार डाला। अलीकुली शाह इस्माइल का भोजन-सेवक था और इस्माइल शाह तँमास्प शफवी का पुत्र था। शाह इस्माइल की मृत्यु हो जाने पर वह कंधार के मार्ग से हिन्दुस्तान में आया और मुलतान में वह खानखाना के साथ हो लिया जो उस समय ठट्ठा के विरुद्ध कूच कर रहा था। खानखाना ने स्वेच्छा से उसको शाही सेवा में प्रविष्ट कर लिया और इस युद्ध में अलीकुली ने बड़ी योग्यता और साहस के साथ अच्छा काम किया। जब इस युद्ध में विजयी होकर खानखाना वापिस आया तो उसने उसकी सेवा का बादशाह से जिक्र किया और उसे उपयुक्त मनसब दिलाया। इसके पश्चात् मिर्जा गयासबेग की पुत्री का उससे विवाह हो गया। जब अकबर ने आगरे से दक्खिन के विरुद्ध प्रयाण किया और युवराज शहजादा सलीम को राणा के विरुद्ध रवाना किया गया तो अलीकुली बेग उसको सहायता देने के लिए नियुक्त किया गया था। उस पर बादशाह का अनुग्रह होता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

रहा और फिर उसे शेर अफगन की उपाधि मिली। जब जहांगीर तख्त पर बैठा तो उसकी जागीर की पुष्टि हुई और उसे बंगाल भेजा गया। इसके बाद यह सूचना आई कि वह आज्ञा भंग करता है और विद्रोह की ओर झुका हुआ है। जब कुतुबुद्दीन को बंगाल भेजा गया और उसे आदेश दिया गया कि शेर अफगन की निगरानी करता रहे। यदि वह स्वामिभक्त और कर्त्तव्यपरायण हो तो उसकी जागीर रहने दी जाय। अन्यथा उसे या तो दरबार में भेज दिया जाय और यदि वह न आवे तो उसे दण्ड दिया जाय। उसके कार्यों और ढंग के विषय में कुतुबुद्दीन की सम्मति अच्छी नहीं बनी। जब उसे सूबेदार के समक्ष उपस्थित होने के लिए बुलाया गया तो उसने असंगत बहाने किए क्योंकि उसके मन में दुष्ट विचार थे। कुतुबुद्दीन ने उसके व्यवहार के विषय में बादशाह को सूचित किया। तब शाही आदेश हुआ कि उसे दरबार में भेज दिया जाय। सूबेदार को यह भी आदेश हुआ कि उसे जो कुछ आदेश दिया गया है उसका पालन करे और यदि शेर अफगन किसी प्रकार का राजद्रोह प्रकट करे तो उसे दण्ड दिया जाय। इस आदेश के प्राप्त होने पर कुतुबुद्दीन तुरन्त वर्दमान की ओर चला जो शेर अफगन की जागीर में था। जब वह निकट आया तो उससे मिलने के लिए शेर अफगन दो आदमियों को साथ लेकर चला तो कुतुबुद्दीन के लोगों ने शेर अफगन को घेर लिया। कुतुबुद्दीन के आने के ढंग से शेर अफगन के मन में आशंका उत्पन्न हो गई। तब भी उसने शान्त भाव से पूछा कि इस कार्यवाही का क्या मतलब है। कुतुबुद्दीन ने उसके आदमियों को निकट न आने दिया और शेर अफगन से मिलकर वह बातों में लग गया। शेर अफगन को विश्वास हो गया कि उसके विरुद्ध कोई योजना है। इसलिए उसने तलवार निकाली और किसी के हस्तक्षेप करने से पहले ही कुतुबुद्दीन के पेट में घुसा दी जिससे उसकी आँतें निकल पड़ीं। कुतुबुद्दीन ने दोनों हाथों से अपनी आँतें दबा कर जोर से आवाज दी कि घातक बच कर न भाग जाय। तब पीरखां कश्मीरी नामक एक हाकिम शेर अफगन की ओर झपटा और उसके सिर पर उसने तलवार का वार किया परन्तु शेर अफगन ने इसका जवाब ऐसी भयंकरता से दिया कि आक्रमणकारी एक प्रहार से ही मर गया। तब बहुत से सेवक आगे बढ़े और उन्होंने अपनी तलवारों से शेर अफगन का काम पूरा कर दिया।

शासन का छठा वर्ष

जहांगीर का नूरजहां से विवाह

इस अवधि में जो बड़ी-बड़ी घटनाएँ हुईं उनमें एक यह थी कि बादशाह जहांगीर ने नूरजहां बेगम से विवाह करना चाहा। इस विषय पर कई जिल्दें लिखीं जा सकती हैं परन्तु भाग्य के विचित्र विधान का इस प्रकार वर्णन करने में हम विस्तार नहीं करेंगे। ख्वाजा मोहम्मद शरीफ का पुत्र मिर्जा गयासबेग तेहरान का निवासी था। प्रारम्भ में ख्वाजा मोहम्मद खुरासान के सूबेदार मोहम्मदखां तकलू

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

का वजीर था। मोहम्मदखाँ की मृत्यु के बाद उसने प्रसिद्ध बादशाह तहमास्प शफवी की सेवा में प्रवेश किया और उसको मज्द की वजारत दी गई। ख्वाजा के दो पुत्र थे—आका ताहिर और मिर्जा गयासबेग। अपने द्वितीय पुत्र के साथ ख्वाजा ने आकामुल्ला के पिता मिर्जा अलाउद्दीन की लड़की से विवाह करना चाहा। अपने पिता की मृत्यु के बाद मिर्जा गयासबेग अपने दो पुत्रों और एक पुत्री के साथ हिन्दुस्तान के लिए रवाना हुआ। रास्ते में जब वह कंधार में होकर गुजर रहा था तो ईश्वर के आशीर्वाद से उसकी दूसरी पुत्री का जन्म हुआ। फतहपुर नगर में उसको बादशाह अकबर के सामने हाजिर होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। थोड़े ही समय में बादशाह की निष्ठापूर्वक सेवा करने के कारण और अपनी बुद्धिमत्ता के कारण मिर्जा गयासबेग दीवान या बादशाह के राजपरिवार का अधीक्षक नियुक्त हो गया। वह लिखने में और काम करने में बड़ा ही चतुर माना जाता था। उसने प्राचीन कवियों का अच्छा अध्ययन किया था और शब्दों के अर्थ वह खूब समझता था। उसका अवकाश का समय कविता और शैली के अध्ययन में लगता था। उसकी उदारता और परोपकारता निर्धनों के प्रति ऐसी थी कि कोई भी उसके दरवाजे से असन्तुष्ट होकर नहीं जाया करता था। परन्तु रिश्वत लेने में वह बड़ा निर्भय और साहसी था। जब बादशाह अकबर लाहौर में ठहरा हुआ था तो अलीकुली बेग इस तजलू जिसकी परवरिश शाह इस्माइल द्वितीय के यहाँ हुई थी, ईराक से आया और शाही सेवकों में दाखिल कर लिया गया और भाग्यवश उसका विवाह मिर्जा गयासबेग की पुत्री के साथ हुआ जिसका जन्म कंधार में हुआ था। फिर जहाँगीर के राज्य में उसे उपयुक्त मनसब और शेर अफगन की उपाधि प्राप्त हो गई। फिर उसे बंगाल में जागीर मिली और वह वहाँ के लिए रवाना हो गया। उसके द्वारा कुतुबुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् बंगाल के हाकिमों ने शाही आदेश के अनुसार गयास बेग की पुत्री को दरबार में भेज दिया। इस समय गयासबेग को इतिमाद्-उद्-दौला की ऊँची उपाधि प्राप्त हो चुकी थी। कुतुबुद्दीन की मृत्यु से बादशाह को बड़ा शोक हुआ और उसने गयासबेग की पुत्री को अपनी माता के सुपुर्द कर दिया। वहाँ वह कुछ अर्से तक रही लेकिन उसकी ओर कोई ध्यान न गया। परन्तु भाग्य का विधान था कि वह उस जमाने की मलिका बने। इसलिए बादशाह के शासन के छठे वर्ष के नौरोज के दिन उस पर बादशाह की दृष्टि पड़ी और वह इतना मुग्ध हो गया कि उसने उसे अपने अन्तःपुर की चुनी हुई महिलाओं में सम्मिलित कर लिया।

दिन प्रतिदिन उसका पद और प्रभाव बढ़ता गया। पहले तो उसे नूरमहल की और फिर नूरजहाँ बेगम की उपाधि प्राप्त हुई। उसके सगे-सम्बन्धी लोगों का सम्मान और वैभव खूब बढ़ा। उसकी मोहर के बिना किसी स्त्री को कोई जमीन नहीं दी जाती थी। इन उपाधियों के अतिरिक्त जो दूसरे बादशाह भी दिया करते हैं जहाँगीर ने नूरजहाँ को राजसत्ता और शासन के अधिकार भी प्रदान कर दिए थे। कभी-कभी वह अपने महल के झरोखे में बैठकर अमीरों का सलाम लेती थी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और उनको आदेश दिया करती थी। उसके नाम के सिक्कों पर लिखा रहता था कि "बादशाह जहाँगीर के आदेश से सोने की चमक नूरजहाँ मलिका बेगम के नाम से सौगुनी हो गई है।" उन तमाम फरमानों पर जिन पर शाही दस्तखत होते थे नूरजहाँ मलिका बेगम का नाम जुड़ा रहता था। अन्त में उसकी सत्ता इतनी बढ़ गई कि बादशाह केवल नाम का रह गया। वह बारम्बार कहा करता था कि उसने राजसत्ता नूरजहाँ बेगम को प्रदान कर दी है। वह यह भी कहता था कि "मुझे सेर भर शराब और आधा सेर माँस के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहिए।" इस बेगम की सुन्दरता और बुद्धिमत्ता का वर्णन करना असम्भव है। जब कोई मामला उसके सामने प्रस्तुत किया जाता था और उसमें कोई झंझट होती थी तो वह शीघ्र ही उसको हल कर देती थी। जो कोई उसकी शरण ग्रहण करता था उसको अत्याचार और उत्पीड़न से बचाया जाता था। जब कभी उसे मालूम होता कि कोई पितृहीन लड़की अकिंचन और असहाय है तो वह उसका विवाह करवा कर दहेज दिया करती थी। यह बहुत सम्भव है कि उसके शासन-काल में कम से कम पाँच सौ पितृहीन लड़कियों का विवाह किया गया था और उन्हें दहेज दिया गया था।

शासन का ग्यारहवाँ वर्ष

महामारी

इस वर्ष हिन्दुस्तान के कुछ भागों में एक महामारी (वबा) फैल गई और शनैः-शनैः बढ़कर इसने बड़ा भयंकर रूप धारण कर लिया। यह भयंकर विपत्ति पंजाब के परगनों में प्रकट हुई। फिर लाहौर पहुँची और कितने ही मुसलमान और हिन्दू इसमें स्वाहा हो गये। फिर यह सरहिन्द की ओर चली और दोआब में होती हुई दिल्ली और उसके निकटवर्ती स्थानों में जा फैली। इस हिस्से के बहुत से गाँव और परगने इससे तबाह हो गये। जब यह प्रकट होने वाली होती थी तो एक चूहा अपने बिल में से इस भाँति दौड़कर निकलता था मानों वह पागल हो गया हो। फिर वह दरवाजे और दीवारों पर टक्करें मार कर मर जाता था। यदि इस सूचना के बाद लोग तुरन्त ही घर छोड़कर जंगल में चले जाते थे तो उनके प्राण बच जाते थे अन्यथा सारे गाँव के निवासियों को मृत्यु अपना ग्रास बना लेती थी। यदि कोई व्यक्ति मुर्दे को या उसके वस्त्रों को ही छूता तो भी वह इस घातक स्पर्श के बाद बच नहीं सकता था। इस रोग का प्रभाव हिन्दुओं पर अपेक्षाकृत अधिक हुआ था। लाहौर में इसकी भयंकरता इतनी प्रबल थी कि एक घर में दस या बीस व्यक्ति मरे पड़े रहते थे और उनके पास के जीवित लोग दुर्गन्ध से दुखी होकर अपने घरों को छोड़ जाते थे। मुर्दों से भरे हुए घरों के ताला लगाकर लोग छोड़ जाते थे और मृत्यु के भय से कोई व्यक्ति उनके निकट नहीं जाता था। कश्मीर में यह रोग और भी प्रचंड था। इसका प्रभाव ऐसा घातक था कि एक दरवेश जिसने अपने मित्र के मुर्दे को धोने का काम किया था दूसरे दिन ही मर गया। एक गाय ने उस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

घास को खा लिया जिस पर एक आदमी के शरीर को धोया गया था तो वह भी मर गई। जिन कुत्तों ने गाय का माँस खाया वे उसी स्थान पर मर कर गिर गये। हिन्दुस्तान में कोई भी स्थान इस रोग से मुक्त नहीं था। लगभग आठ वर्ष तक यह रोग देश को नष्ट करता रहा।

शासन का तेरहवाँ वर्ष

तारीख 16 दे को सूर्योदय से सवा घण्टा पूर्व वायुमण्डल में एक वाष्पमय पदार्थ प्रकट हुआ जिसका आकार स्तम्भ जैसा था। प्रत्येक अगली रात्रि को यह आध घण्टा और पहले प्रकट होने लगा। जब यह पूरे आकार में प्रकट हुआ तो यह भाले से मिलता-जुलता था। इसकी दोनों नोकें तीखी थीं और बीच में यह मोटा और दराँती की भाँति मुड़ा हुआ था। इसकी पीठ दक्षिण की ओर और इसका मुख उत्तर की ओर था। ज्योतिषियों ने इसके आकार को एक यन्त्र से नापा था और विभिन्न निरीक्षणों की तुलना करने पर यह पता लगा था कि यह चौबीस अंश तक फैला हुआ है। यह आकाश के ऊँचे से ऊँचे नक्षत्रों के साथ चलता था परन्तु इसकी गति अपनी ही थी। पहले यह वृश्चिक राशि में प्रकट हुआ और फिर उसे छोड़कर इसने तुला राशि में प्रवेश किया था। यह दक्षिण की ओर झुका हुआ था। ज्योतिषियों ने अपनी पुस्तकों में भाले के नाम से इस घटना का वर्णन किया है। इसके प्रकट होने के सोलहवीं रात के पश्चात् उसी दिशा में एक तारा दिखाई दिया जिसका सिर चमकीला था परन्तु उसकी पूँछ में से जो दो-तीन गज लम्बी थी, कोई प्रकाश नहीं निकलता था। इसके प्रकट होने के कारण ही हिन्दुस्तान जैसे विस्तृत देश में यह रोग (ववाओताऊन) फैला था। यह रोग तमाम ज्ञात रोगों से और जिनका पहले जमाने में होना लिखा हुआ है, अधिक भयंकर था। हिन्दुओं के प्रामाणिक ग्रन्थ में भी ऐसे रोग का उल्लेख नहीं है। इस तारे के प्रकट होने से एक वर्ष पूर्व यह रोग हुआ था और फिर आठ वर्ष तक चलता रहा। इस तारे के उदय के फलस्वरूप ही बादशाह और भाग्यशाली शहजादा में वैमनस्य प्रकट हुआ था और यह गड़बड़ सात आठ वर्ष तक चलती रही। देश में कैसा रक्तपात हुआ और कितने परिवार नष्ट हुए।

इस समय कन्धार के फौजदार बहादुरखाँ के निवेदन पत्र से यह प्रकट हुआ कि उस नगर के आसपास और उसके अधीन इलाकों में चूहों की संख्या इतनी बढ़ गई है कि उनके कारण फसल और फल का एक भी चिन्ह बाकी नहीं रहा है। बड़ी कठिनाई के बाद फसल का शायद एक चौथाई भाग किसानों के लिए बचा है। इसी भाँति खरबूजों के खेत और अंगूरों की बेलें सर्वथा नष्ट हो गई हैं और जब बागों में और खेतों में कोई फल या अन्न नहीं रहा तो चूहे भी शनैः-शनैः मर गये।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शासन का उन्नीसवाँ वर्ष

शाहजहाँ का विद्रोह

[जहाँगीर के शासन का उन्नीसवाँ वर्ष शुरू हुआ। शाहजहाँ की सेना की उड़ीसा और बंगाल की ओर कूच की जो सूचना मिली थी उसकी अब पुष्टि हो गई। शहजादा परवेज और महावतखाँ के नाम आदेश हुआ कि दक्खिन की सुरक्षा के साधन जुटावें और फिर इलाहाबाद और बिहार की ओर कूच करें जिससे यदि बंगाल का सूबेदार विद्रोही शाहजहाँ की गति को न रोक सके तो शहजादा शाही सेना के साथ उसको रोके। बादशाह ने खानजहाँ को भी राजधानी को इसलिए भेजा कि वह मामले की गति को देखता रहे और आवश्यक कार्यवाही करे।

महावतखाँ ने बुरहानपुर से आदिलखाँ के पास एक दूत भेजा जिसका उत्तर यह आया कि वह महावतखाँ से केवल गाँव में मिलेगा और शाही सेवा में पेश होने के लिए अपने पुत्र को भेज देगा। राजदूत ने भी लिखा कि आदिलखाँ राजभक्त है और उसने अपने मन्त्री मुल्ला मुहम्मद लारी को पाँच हजार सवारों के साथ महावतखाँ के पास भेजने का निश्चय कर लिया है। जब बार-बार फरमान आये तो यद्यपि भारी वर्षा हो रही थी और मालवा के कीचड़ के कारण बड़ी कठिनाइयाँ थीं तो भी शहजादे ने बंगाल की ओर कूच किया। महावतखाँ ने शहजादे को तो आगे भेज दिया और स्वयं बुरहानपुर ठहर कर मुल्ला मुहम्मद लारी के आगमन की प्रतीक्षा करने लगा।

इब्राहीमखाँ का भतीजा अहमदबेगखाँ, जो उड़ीसा का सूबेदार था, सेना लेकर गढ़ा के जमीदारों के विरुद्ध गया हुआ था। जब उसने शाहजहाँ के पहुँचने की खबर सुनी तो वह डर कर अपने निवास-स्थान पीपली को लौट आया और वहाँ अपनी सम्पत्ति एकत्र करके वह कटक पहुँच गया जो बंगाल की ओर बीस कोस की दूरी पर है। परन्तु जब उसने देखा कि वह वहाँ भी नहीं डट सकता तो वह बर्दवान चला गया और यह खबर जफर बेग के भतीजे सालीह को सुनाई। सालीह को अब्दुल्लाखाँ का एक पत्र मिला। यह पत्र उसको अब्दुल्ला ने अपनी ओर मिलाने के लिए लिखा था। परन्तु सालीह ने यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया और बर्दवान को आत्मरक्षा के लिए तैयार किया। जब इब्राहीम को यह धमकी भरा समाचार मिला तो यद्यपि उसकी सेना विभिन्न स्थानों पर पड़ी हुई थी तो भी वह भाग कर अकबर नगर पहुँच गया और वहाँ संघर्ष के लिए आदमी और सामग्री जुटाने लगा। अब उसे शाहजहाँ का पत्र मिला (जिसमें मेल करने का प्रस्ताव था) परन्तु उसने उत्तर लिखा कि वह अपने स्वामी के लिए मृत्यु-पर्यन्त लड़ेगा। जब शहजादे की सेना बर्दवान पहुँची तो अदूरदर्शी सालीह ने मूर्खता का कदम बढ़ाकर सामना किया। अब्दुल्लाखाँ ने उसकी परवाह नहीं की और उसने किले को घेर लिया और शीघ्र ही वहाँ निराशा की स्थिति उत्पन्न कर दी। जब सालीह ने देखा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कि अब कोई सहायता की आशा नहीं है तो वह खान से मिलने के लिए वाहर गया और खान ने उसके गले में दुपट्टा डाल कर उसको शहजादे के सामने उपस्थित किया। जब यह अड़चन हट गई तो शहजादे ने आगे अकवरनगर की ओर कूच किया। इब्राहीमखाँ का पहला इरादा यह था कि वह अकवर नगर में डटा रहे परन्तु दुर्ग इतना बड़ा था और उसके पास सेना इतनी कम थी कि उसकी रक्षा नहीं हो सकती थी। इसलिए वह हटकर अपने पुत्र की कब्र पर चला गया जो अपेक्षाकृत छोटी थी और अधिक सुरक्षित थी। यहाँ पर विभिन्न स्थानों से उसके पास सेना आ पहुँची।

शाहजहाँ की सेना ने अकवर नगर पहुँच कर उस मकवरे को घेर लिया। तव उसके अन्दर और वाहर कितने ही लोग मरने लगे। फिर अहमदखाँ वेग ने आकर उसमें प्रवेश किया जिससे उसके रक्षकों का उत्साह बहुत भंग हो गया। घिरे हुए लोगों की स्त्रियाँ और परिवार नदी के दूसरी ओर थे। इसलिए अब्दुल्लाखाँ और दरयाखाँ अफगान ने नदी पार करके उस ओर भी लड़ाई शुरू कर दी। इस गति से इब्राहीम डर गया और अहमदखाँ वेग को अपने साथ लेकर वह वहाँ पहुँचा और दूसरे लोगों को उस किलावंद जगह में छोड़ गया। अपने जाने से पहले उसने कुछ जंगी नावों को जिन्हें हिन्दी में निवारा कहते हैं, आगे भेज दिया जिससे शत्रु नदी पार न कर सके। परन्तु नावों के आने से पहले ही दरयाखाँ नदी पार कर चुका था। यह सुनकर इब्राहीमखाँ ने अहमदवेग को दरयाखाँ के विरुद्ध नदी पार भेजा। परन्तु जब वह उतरा तो नदी के तट पर लड़ाई होने लगी जिसमें उसके वहुत से आदमी मारे गये। इसलिए वह वापस मुड़ कर इब्राहीमखाँ के पास आ गया और उसे अपनी पराजय का हाल सुनाया। तब इब्राहीम ने किले में सहायक सेना बुलाई और उसकी सहायता करने के लिए कुछ अच्छे सवारों का एक दल आ गया। यह खबर सुनकर दरयाखाँ कुछ कोस पीछे हट गया और जमींदारों के पथ-प्रदर्शन से अब्दुल्लाखाँ ने कुछ कोस ऊपर की ओर नदी पार की और वह उससे जा मिला। दोनों सेनाओं ने मिलकर एक स्थान पर जमाव जमा लिया जिसके एक ओर नदी थी और दूसरी ओर घना जंगल था। तव नदी पार करके इब्राहीमखाँ ने लड़ाई लड़ी। उसकी अग्र सेना हार गई। गड़बड़ मच गई और वहुत से लोग भाग गए। इब्राहीमखाँ के साथ थोड़े से लोग रह गए। परन्तु उसने बचकर भागने को बुरा समझा। यद्यपि उसके कुछ लोगों ने उसके घोड़े की लगाम पकड़ कर उसको युद्ध में से खींचकर बाहर निकालना चाहा, तो भी उसने जोर से कहा, "मेरे जीवन को ऐसे मार्ग की आवश्यकता नहीं है। युद्धभूमि में मर जाने से और कौनसी बात अच्छी है।" उसके मुँह से ये शब्द निकले ही थे कि शत्रुओं ने उसे घेर कर मार डाला।

उसकी मृत्यु के समाचार से दुर्गरक्षक हतोत्साह हो गए और घेरा डालने वालों ने किले के नीचे आग लगाकर एक सुरंग उड़ा दी। फिर घेरने वाले लोगों के एक दल ने एकदम अन्दर घुस कर उस स्थान को ले लिया। कुछ दुर्गरक्षक नदी में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कूद पड़े और दूसरे लोग जिनके कुटुम्बी शत्रु के हाथ में थे, विजेता के अधीन हो गए। इब्राहीमखाँ के बच्चे और सम्पत्ति ढाका में थी। इसलिए शहजादे की सेना ने नदी के मार्ग से उधर की ओर प्रयाण किया। उस सेना के आने से पहले ही इब्राहीमखाँ का भतीजा अहमद वेग वहाँ आ गया परन्तु अधीन हो जाने के अतिरिक्त उसके सामने कोई अन्य मार्ग न था। उसने शहजादे के एक सेवक के द्वारा अनुग्रह प्राप्त कर लिया। विजेताओं ने सम्पत्ति पर अपना अधिकार कर लिया। इसमें चालीस लाख रुपए नकद, कई प्रकार का सामान और हाथी थे।

अब तक दराबखाँ कैद में था। अब उसे छोड़ दिया गया और उसे शपथ दिलवा कर बंगाल का सूबेदार बना दिया। परन्तु उसकी पत्नी, पुत्री, पुत्र और शाह नवाजखाँ के पुत्र को जमानत के रूप में रख लिया। राजा कर्ण के भाई राजा भीम को जिसने सब विपत्तियों में शाहजादे का साथ दिया था, अग्र सेना का नायक बना कर पटना की ओर आगे भेजा गया। पटना का प्रान्त शहजादे परवेज की जागीर में था और इसको शहजादे के दीवान मुखलिसखाँ और इफ्तिखारखाँ तथा शेरखाँ अफगान के सुपुर्द छोड़ दिया गया था जो उसके फौजदार थे। परन्तु राजा भीम के आने से पहले ही वे डर गए। उनको सहायता प्राप्ति की कोई आशा नहीं थी। उन्होंने पटना के दुर्ग की रक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं किया और शत्रु के आगमन की प्रतीक्षा भी नहीं की। वे स्थान को छोड़ कर इलाहाबाद की ओर भाग गए। उन्होंने इतने बड़े इलाके की रक्षा करना इतना आवश्यक नहीं समझा जितना अपनी रक्षा करना। इसलिए राजा भीम ने पटना के दुर्ग में प्रवेश करके विहार के प्रान्त पर अपना अधिकार कर लिया और किसी ने उसका सामना नहीं किया।

कुछ दिन बाद शहजादा शाहजहाँ वहाँ आया। उस सूबे के जागीरदार उसकी सेवा में उपस्थित हुए और उन्होंने अधीनता प्रकट की। सईद मुबारक ने रोहतास का किला उसके सुपुर्द कर दिया। उज्जैना का जमींदार भी आया और उससे भेंट की गई। आगे बढ़ने से पहले शाहजहाँ ने एक सेना के साथ अब्दुल्लाखाँ को इलाहाबाद की ओर और दूसरी सेना के साथ दरयाखाँ अफगान को अवध की ओर भेजा। कुछ दिन पश्चात् विहार को बैरम बेग के सुपुर्द छोड़ कर शहजादा स्वयं रवाना हुआ। अब्दुल्लाखाँ ने जोसा की थाह को पार किया उससे पहले ही आजमखाँ मिर्जा कोका का पुत्र जहाँगीर कुलीखाँ, जो जौनपुर का हाकिम था, उस स्थान को छोड़कर इलाहाबाद में मिर्जा रुस्तम से जा मिला। अब्दुल्ला उसका जोर से पीछा करता हुआ इलाहाबाद के सामने गंगा नदी पर स्थित झौंसी कस्बे में आ पहुंचा तब शाहजहाँ जौनपुर की ओर चला। बंगाल से जंगी नावें (नीवारा) मँगा ली गई थीं। अब्दुल्ला ने नदी पार करने के लिए इनका उपयोग किया। उस समय उस पर तोपें और बन्दूकें चल रही थीं। फिर उसने इलाहाबाद में अपना डेरा लगाया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दक्खिन

(अब हम दक्खिन के मामलों का वर्णन करेंगे)। अम्बर हब्शी ने अपना दूत अली शेर महावतखाँ के पास इसलिए भेजा कि वह उसकी ओर से स्वामिभक्ति और आज्ञापालन प्रकट करे। हब्शी को यह आशा थी कि दक्खिन का शासन उसके सुपुर्द कर दिया जाएगा। वह आदिलखाँ से युद्ध कर रहा था और उसे आशा थी कि शाही सहायता से वह अपने शत्रु पर विजय प्राप्त कर लेगा। उधर आदिलखाँ इसी भाँति आशा करता था कि वह भी प्रान्त पर अपना अधिकार करके अम्बर के आक्रमण को वापस धकेल देगा। अन्त में आदिलखाँ जीता। महावतखाँ ने अम्बर के प्रस्ताव स्वीकार नहीं किए और आदिलखाँ के पक्ष में निश्चय किया। अम्बर रास्ते में था और आदिलखाँ का राजदूत मुल्ला मोहम्मद उससे भयभीत था। इसलिए महावतखाँ ने शाही सेना का एक भाग बालाघाट इसलिए भेजा कि उसको बुरहानपुर ले जावे। जब अम्बर को इस बात की सूचना मिली तो वह निराश और परेशान होकर वापस मुड़ कर निजामुलमुल्क के साथ खिड़की से कंडहार की ओर चल दिया जो गोलकुण्डा की सीमा पर स्थित है। उसने अपने बच्चों को अपनी स्त्रियों और सेवकों के साथ दौलताबाद के दुर्ग में भेज दिया और खिड़की को खाली कर दिया। उसने यह प्रकट किया कि वह अपना नियत वेतन (जर-ए-मुकर्ररी) को लेने के लिए कुतुबुलमुल्क की सीमा पर जा रहा है।

जब मुल्ला मोहम्मद लारी बुरहानपुर के निकट पहुँचा तो महावतखाँ उससे मिलने के लिए शाहपुर तक गया और उसका बड़े ध्यान से स्वागत किया। तब वे शहजादा परवेज की सेवा में उपस्थित होने के लिए चले। महावतखाँ ने बुरहानपुर, सरबुलन्दराय के सुपुर्द छोड़ा और उसकी सहायता के लिए जादुराय और उदाराम राय को नियत किया। परन्तु वह जादुराय के पुत्र और उदाराम के भाई को अपने साथ एहतियात के लिए ले गया। जब मुल्ला मोहम्मद लारी शहजादा से मिला तो यह तय हुआ कि पाँच हजार सवारों के सहित वह सर बुलन्दराय की सहायता करने के लिए बुरहानपुर जाय और उसका पुत्र अमीनुद्दीन पाँच हजार सवारों के सहित शहजादे के साथ रहे।

दक्खिन की सेना के बख्शी फाजिलखाँ का सैनिक पत्र आया कि मुल्ला मोहम्मद लारी बुरहानपुर चला गया है और शाही सेनानायकों को ऐसा मालूम होता है कि दक्षिण सुरक्षित है। इसलिए शहजादा परवेज और महावतखाँ दोनों बिहार और बंगाल की ओर चले गए हैं। जब सेनानायकों ने खानखाना के विद्रोही कामों पर और इस बात पर विचार किया कि उसका पुत्र दराब शाहजहाँ की सेवा में है तो उन्होंने निश्चय कर लिया कि उसे पकड़ कर निगरानी में रखा जावे। उसका डेरा शहजादा के डेरे के पास लगाया गया और उसकी पुत्री जाना बेगम जिसका विवाह शहजादे दानियाल के साथ हुआ था और जो उसके पिता की बड़ी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

योग्य शिष्या थी, उसके साथ उसी स्थान पर रखी गई और उनके डेरे के चारों ओर विश्वस्त लोग पहरा देने लगे।

शाहजहाँ की हार

[तारीख 1 शहरयार को जब बादशाह कश्मीर में वीर-नाग में ठहरा हुआ था तो महावतखाँ ने सैनिक पत्र भेज कर सूचना दी कि शाहजहाँ ने गंगा के सारे मार्गों पर अधिकार कर रखा है और सारी नावें छीन ली हैं। इसलिए शाही सेना को नदी पार करने में कुछ विलम्ब हो गया है। परन्तु जमींदारों ने सहायता देकर तीस नावें दे दी हैं और सेना ने थाह से चालीस कोस ऊपर की ओर नदी पार कर ली है। दूसरा समाचार यह आया कि शाहजहाँ के यहाँ सेवा करने वाले जमींदार लोग सब जंगी नावों को तोपों और सामान सहित लेकर बंगाल की ओर भाग गए हैं। शाहजहाँ इस समय कम्पत के जंगल में था और वहाँ मिट्टी की दीवारें बनाकर उनके पीछे डट गया था और इन दीवारों पर उसने तोपें और बन्दूकें जमा दी थीं। परन्तु खाद्य-सामग्री उसके पास बहुत कम पहुंचती थी और उसका अभाव होने लग गया था।

शहजादा परवेज ने एक डाक चौकी द्वारा एक संदेशवाहक यह समाचार देने के लिए भेजा कि उसने शाहजहाँ पर, जो पटना और बिहार की ओर चला गया था, विजय प्राप्त कर ली है। इस लड़ाई का विवरण इस प्रकार है—दो सेनाएँ एक दूसरे को दिखाई देने लगीं और व्यवस्थित होकर कई दिन तक जमी रहीं। शाही सेना में चालीस हजार आदमी थे और शाहजहाँ के साथ दस हजार से अधिक सवार नहीं थे जिनमें पुराने और नए सब सैनिक शामिल थे। इनमें कुछ ऐसे परम स्वामिभक्त भी थे जो लड़ना नहीं चाहते थे। राणा का पुत्र राजा भीम सब लोगों की सम्मति के विरुद्ध लड़ने के लिए उत्सुक था। उसने यहाँ तक कह दिया था कि यदि वे नहीं लड़ेंगे तो उनको उसकी सहायता की आशा नहीं करनी चाहिए क्योंकि इधर-उधर दौड़े फिरना राजपूतों के नियमों के विरुद्ध है। इसलिए उसी की बात चली और युद्ध के लिए सेना व्यवस्थित की गई। बन्दूकें संभाली गईं और युद्ध शुरू हो गया। शाही सेनाओं ने तीन ओर से धनुष के समान रणभूमि को घेर लिया और बाण और गोलियाँ ओलों की भाँति बरसने लगीं। शत्रुओं की संख्या की उपेक्षा करके राजा भीम ने अपने राजपूतों सहित बड़ी वीरता के साथ बड़ा प्रहार किया। परन्तु जो चुनी हुई सेना शहजादा परवेज और महावतखाँ के साथ थी वह उस पर टूट पड़ी और उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले तथापि जब तक उसमें साँस थी तब तक वह भयंकरतापूर्वक लड़ता रहा। तोपची लोग तोपें छोड़ कर भाग गए और तोपें शाही सेना के हाथ में आ गईं। शाहजहाँ का घोड़ा एक तीर से आहत हो गया। अब्दुल्ला ने, जो उसके निकट था, लगाम पकड़ कर उसे लड़ाई से बाहर निकाल दिया। वह स्वयं शहजादे के आहत घोड़े पर बैठ गया और उसे अपना घोड़ा दे दिया। शाहजहाँ रोहतास के किले में पहुँच कर आगे भागने की बात सोचने लगा।]

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दक्खिन

अब दक्खिन से सूचना आई कि मलिक अम्बर कुतुबुलमुल्क की सीमा पर सेना का वार्षिक वेतन माँगने के लिए गया हुआ है। यह दो वर्ष से बाकी था। वेतन लेकर और शपथपूर्वक संधि करके उसने अपने आपको उधर से सुरक्षित समझा और फिर बीदर की ओर रवाना हुआ। वहाँ आदिलखाँ की सेना उस इलाके की निगरानी कर रही थी। परन्तु वह तैयार नहीं थी। अम्बर ने एकाएक उस पर आक्रमण कर दिया और बीदरनगर को लूट लिया। वहाँ से उसने बीजापुर की ओर कूच किया। आदिलखाँ ने अपनी अच्छी से अच्छी सेना और सेनाधिकारी मुल्ला मोहम्मद लारी के साथ बुरहानपुर भेजे थे। परन्तु वह सोचता था कि वह आक्रमणकारी का सामना नहीं कर सकता। इसलिए वह बीजापुर के किले में बन्द हो गया। उस स्थान की रक्षा के लिए यथासम्भव प्रयत्न करके मोहम्मद लारी और उसकी सेना को बुरहानपुर से वापस बुलाने के लिए एक सन्देश वाहक भेजा गया।

जब महावतखाँ और शहजादा परवेज इलाहाबाद के लिए रवाना हुए तो सर बुलन्दराय को बुरहानपुर सुपुर्द करके यह आदेश दिया था कि मुल्ला मोहम्मद लारी के सहयोग से वह दक्खिन का प्रशासन करे। मुल्ला अब दबाने लगा और सेना को वेतन देने के लिए उसने तीन लाख हूण, जो बारह लाख रुपए के बराबर होते हैं, दिए। जब महावतखाँ के पास मुल्ला के पत्र उसे वापस बुलाने के लिए पहुंचे तो उसने यह प्रार्थना स्वीकार कर ली और दक्खिन के हाकिमों को आदेश दिया कि आदिलखाँ की सहायता करने के लिए सब लोग शीघ्र मुल्ला के साथ जायें। सर बुलन्दराय थोड़े से आदमियों के साथ बुरहानपुर ही रहा। परन्तु उसने लश्करखाँ को और दक्खिन के सब अमीरों को मोहम्मद लारी के साथ मलिक अम्बर को रोकने के लिए रवाना किया।

जब मलिक को यह सूचना मिली तो उसने शाही अधिकारियों को लिखा कि "मैं शाही तख्त के प्रति स्वामिभक्त हूँ और मेरा निवेदन है कि निजामुलमुल्क और आदिल को स्वयं ही अपने मतभेद मिटाने दिए जाएँ और किसी प्रकार का हस्तक्षेप न किया जाय। अमीरों ने इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया और दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ते रहे। फिर भी वह उत्सुकतापूर्वक निवेदन करता रहा परन्तु वे लोग अपनी सेना का प्रदर्शन करते रहे और उसको बाध्य होकर बीजापुर से अपने इलाके में आना पड़ा। जब शाही सेना निकट आ गई तो अम्बर ने समझौता करने के लिए और समय टालने के लिए कोशिश की और युद्ध से बचने के लिए यथाशक्ति प्रयत्न किया। परन्तु मुल्ला मोहम्मद लारी और शाही अमीर उसका पीछा करते रहे और उसे विश्राम नहीं करने दिया। ज्यों-ज्यों वह अधीनता प्रकट करता था त्यों-त्यों मुहम्मद लारी उसे और अधिक नीचा दिखाता था तथा और अधिक दबाता था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अब उसके सामने कोई चारा न रहा और उसे बाध्य होकर निश्चित मार्ग ग्रहण करना पड़ा। एक दिन जब शाही सेना असावधान थी और उनका विचार था कि वह लड़ाई नहीं लड़ेगा तो वह एकाएक अहमदनगर से पाँच कोस की दूरी पर उनके डेरे के किनारे पर आ पहुँचा। आदिलखाँ की सेना से लड़ाई शुरू हो गई और भाग्य के विधान से मोहम्मद लारी, जो सेना का नेतृत्व कर रहा था, मारा गया। उसकी मृत्यु से बीजापुर की सेना में गड़बड़ मच गई। जादुराई और उदाराम ने एक भी प्रहार नहीं किया। वे भाग गए और फिर खूब भगदड़ मच गई। इख्लासखाँ और आदिलखाँ के 25 अन्य हाकिम जो उसके शक्ति के स्तम्भ थे कैद कर लिए गए। इनमें से फरीदखाँ जो मलिक अम्बर की मृत्यु के लिए प्रयत्न कर रहा था मार डाला गया और दूसरों को वन्दी बना लिया गया। लश्करखाँ और शाही सेना के अन्य नायक भी कैद कर लिए गए। खंजरखाँ बड़ा ओर लगाकर बचकर अहमद नगर भाग गया और वहाँ घेरे का सामना करने के लिए उसने दुर्ग को तैयार किया। जान सियरखाँ अपनी जागीर बीड़ को पहुंच गया और वहाँ अपने दुर्ग की व्यवस्था करने लगा, जो वध-भूमि से बचे उनमें से कुछ अहमदनगर को और कुछ बुरहानपुर को भाग गए।

मलिक अम्बर को आशातीत सफलता मिली। कैदियों को दौलताबाग के दुर्ग में भेजकर वह अहमदाबाद का घेरा डालने के लिए चला। यद्यपि वह अपनी तोपें ले आया और उसने जोरदार घेरा डाला परन्तु उसे सफलता न मिली। इसलिए घेरे को जारी रखने के लिए थोड़ी सेना छोड़ कर उसने बीजापुर के विरुद्ध कूच किया। आदिलखाँ ने पुनः दुर्ग में शरण ली और मलिक अम्बर ने बालाघाट में शाही इलाके की सीमा तक उसके सब मुल्क को दबा लिया। बहुत अच्छी सेना एकत्र करके उसने शोलापुर का घेरा डाला। इस नगर के विषय में निजामुलमुल्क और आदिलखाँ के बीच अर्से से संघर्ष चल रहा था। उसने बुरहानपुर के विरुद्ध सेना भेजी और दौलताबाद से तोपें मँगवा कर आक्रमण करके शोलापुर ले लिया।

इन विपत्तियों के कारण बादशाह बड़ा परेशान हुआ। महाबतखाँ की सलाह से उसने महाबतखाँ के पुत्र खानजादाखाँ को काबुल से बुला कर सेना सहित उसके पिता के पास भेज दिया। तब महाबतखाँ ने बादशाह के पास सैनिक समाचार भेजा कि शाहजहाँ पटना और बिहार छोड़कर बंगाल चला गया है। इस समय शाही सेना के साथ शहजादा परवेज बिहार में था और इस बात के आदेश की प्रतीक्षा कर रहा था कि भविष्य में उसे क्या करना चाहिए। यह पहले लिखा जा चुका है कि शाहजहाँ ने खानखाना के पुत्र दाराब को बंगाल का सूबेदार नियुक्त किया था और इससे पहले उसे शपथ दिला कर उसकी पत्नी, पुत्र और भतीजे को जमानत के रूप में वह अपने साथ ले गया था। हार जाने के बाद शाहजहाँ ने उसकी पत्नी को रोहतास के किले में रखा और दाराब को लिखा कि वह स्वयं उस किले में आए। दाराव ने इसका अनुचित और उलटा अर्थ लगाया और उत्तर लिखा कि वह आने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में असमर्थ है क्योंकि जगीरदारों ने उसको चारों ओर से घेर लिया है। जब शाहजहाँ ने देखा कि उसे दाराव के आगमन की आशा नहीं करनी चाहिए और उसके पास लड़ने के लिए पर्याप्त सेना नहीं है तो उसने दाराव के पुत्र को अब्दुल्लाखाँ के सुपुर्द किया और स्वयं अकवरनगर चला गया और जो शस्त्र और सामान उसने वहाँ पहले छोड़े थे उन्हें लेकर जिस रास्ते से आया था उसी से वापस दक्खिन लौट गया। दाराव ने अपने घृणित व्यवहार से अपने आपको बहुत नीचा कर दिया था। इसलिए अब्दुल्लाखाँ ने दाराब के पुत्र का वध करके अपने चित्त को शान्ति दी। यद्यपि शाहजहाँ ने मना किया था तो भी उसने बध करवा दिया।

शहजादा परवेज ने महावतखाँ और उसके पुत्र को बिहार जागीर में देकर वापस कूच किया। उसने बंगाल के जमींदारों को, जिनके पास दाराव कैद था, चेतावनी दी कि वे उसे हानि न पहुँचावें और उसे सेना में भेज दें। वह शीघ्र ही आ गया और उसके आने की खबर जब बादशाह को मिली तो उसने महावतखाँ के नाम आदेश जारी किया कि ऐसे निकम्मे आदमी को जीवित रखने से कोई लाभ नहीं है। इसलिए उसको मार कर उसका सिर दरबार में भेजा जाय। इसलिए महावतखाँ ने उसके टुकड़े-टुकड़े करवा दिए और उसका सिर बादशाह के पास भेज दिया। दक्खिन में सख्त हुक्म भेजा गया कि जब तक सहायक सेना न भेजी जाय तब तक कोई जंग की कार्यवाही न की जाय और सेना को किलों में सुरक्षित रक्खा जाय।)

श।सन का बीसवाँ वर्ष

शासन का बीसवाँ वर्ष तारीख 10 जुमादस्सानी 1033 हिजरी (10 मार्च 1624 ई०) को शुरू हुआ और बादशाह ने कश्मीर के लिए प्रयाण किया।

यह कई बार कहा जा चुका है और जखीरा ख्वारिज्म शाही में इसका उल्लेख है कि केसर खाने से हँसी आती है और यदि बहुत मात्रा में खाई जाय तो मृत्यु का भी भय है। बादशाह ने इस बात की जाँच करने का निश्चय किया और कैद खाने से एक ऐसे कैदी को बुलाया जिसको मृत्यु-दण्ड दिया जा चुका था। उसे पाव भर केसर दी गई जो चालीस मिसकल के बराबर होती है और अपने सामने ही उसे खाने के लिए कहा गया। इससे उस कैदी में कोई परिवर्तन न हुआ। अगले दिन उससे दुगुनी मात्रा दी गई परन्तु हँसना तो क्या वह मुस्कराया भी नहीं। तो केसर के खाने से आदमी का मरना कैसे सम्भव है!

[दक्खिन के बख्शी आसफखाँ ने सैनिक समाचार भेजा कि शाहजहाँ देवलगाँव में आ पहुँचा है और मलिक अम्बर की सेना के साथ यूसुफ हब्शी ने बुरहानपुर को घेर लिया है। सर बुलन्दराय दुर्ग के अन्दर डटा हुआ है और घेरने वाले अब तक कुछ नहीं कर पाए हैं। दूसरी खबर यह थी कि शाहजहाँ लालबाग (बुरहानपुर के सामने) आ गया है और उसने बुरहानपुर को लेने के लिए कई बार

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आक्रमण किए हैं परन्तु उसको सफलता नहीं मिली है। शाहजहाँ वीमार हो गया है और उसको बालाघाट में रोहनगढ़ जाना पड़ा है। मलिक अम्बर की सेना ने यह देखकर कि अब प्रयाण करना निष्फल है घेरा उठा लिया है और वह अपने मालिक के पास वापिस लौट गई है। शहजादा दानियाल का पुत्र हुशंग और अब्दुल रहीम खानखाना शहजादा परवेज के पास आ गए हैं। शहजादा दानियाल के पुत्र का सानुग्रह स्वागत किया गया है और उसके लिए बड़ी उदारतापूर्वक प्रवन्ध कर दिया गया है। खानखाना ने अपने कामों पर खेद और लज्जा प्रकट की है। शहजादे ने उसे सान्त्वना देकर उसको उपयुक्त स्थान में रखने के लिए आदेश दिया है।

फिदाईखाँ को शहजादा परवेज के पास भेजकर आदेश दिया गया कि महावतखाँ को छोड़ दिया जाए और स्वयं बंगाल की ओर कूच करे। खानजहाँ को गुजरात से वापिस आकर शहजादे के वकील की हैसियत से काम करना था। फिदाईखाँ सारंगपुर में शहजादे से मिला और उसने लिखा कि शहजादा न तो महावतखाँ को छोड़ने के लिए तैयार है और न खानजहाँ से भेंट करना चाहता है। तो भी फिदाईखाँ ने खानजहाँ के पास हरकारे भेजे हैं और वह शीघ्रतापूर्वक अपने स्थान पर जा रहा है। तब शहजादे को दूसरा फरमान लिखा गया और उसे खबरदार किया गया कि आज्ञा का उल्लंघन न करे। यह भी आदेश था कि यदि महावतखाँ बंगाल नहीं जाना चाहे तो वह दरबार में लौट आए और शहजादा अपने अमीरों के साथ बुरहानपुर ठहरे।

19 मोहर्रम 1035 हिजरी को बादशाह ने कश्मीर से वापिस लाहौर को कूच किया।]

शहजादा दावरबख्श ने एक ऐसा बाघ नजर किया जिसका एक बकरे के प्रति बड़ा प्रेम था और जो उसके साथ एक ही पिंजरे में रहता था। वे दोनों परस्पर इतने मिले-जुले रहते थे मानो वे दोनों एक ही जाति के पशु हों। तब यह आदेश दिया गया कि बकरे को कुछ दूर ले जाकर छिपा दिया जाय। जब ऐसा किया गया तो बाघ दुखी और परेशान हो गया। तब आदेश हुआ कि ठीक उसी रंग और आकार का बकरा पिंजरे में रख दिया जाए। बाघ ने पहले तो उसे सूंघना शुरू किया फिर उसे अपने मुँह से पकड़ लिया और उसकी पीठ तोड़ डाली। फिर एक भेड़ को पिंजरे में डाला गया जिसको भी बाघ तुरन्त खा गया। तब उस पुराने बकरे को पुनः पिंजरे में लाया गया तो बाघ उसी प्रेम से उससे मिला। बाघ सीधा लेट गया। उसने बकरे को अपने सीने पर बिठा लिया और उसका मुख चाटने लगा। ऐसी बात पहले पालतू या जंगली जानवरों में कभी नहीं देखी गई थी कि कोई पशु अपने साथी का मुँह चाटे।

[महावतखाँ ने अब तक उन हाथियों को दरबार में नहीं भेजा था जो उसे बंगाल में मिले थे। उसने रियासत का बहुत-सा रुपया संग्रह कर लिया था और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जागीरों से भी रुपया इकट्ठा कर लिया था। अब उसे लाने के लिए और हिसाब साफ करने के लिए अरब दस्तगैब नामक एक व्यक्ति को रवाना किया गया और उसे यह आदेश दिया गया कि यदि परिणाम सन्तोषप्रद हो तो वह वापस दरबार में लौट आए।

समाचार मिला कि खानजहाँ गुजरात से आकर शहजादा परवेज से जा मिला है। साथ ही खानजहाँ का भी पत्र आया जिसमें लिखा था कि अब्दुल्लाखाँ ने शाहजहाँ का साथ छोड़ दिया है और पश्चात्ताप और अधीनता से भरे हुए पत्र लिखकर क्षमा चाही है। खानजहाँ ने पत्र लिखकर स्वयं बीच-बचाव किया तो क्षमा दे दी गई।

8 जुमादउस्सानी को बादशाह ने काबुल की ओर कूच किया।]

शासन का इक्सीसवाँ वर्ष

[शासन का इक्सीसवाँ वर्ष 10 जुमाद उस्सानी 1035 हिजरी को शुरू हुआ। शाहजहाँ के कर्त्तव्यपूर्ण पत्र के उत्तर में एक पत्र भेजा गया और उसके साथ हीरों से जड़ी हुई एक गदा जिसका मूल्य एक लाख रुपया था और एक जड़ाऊ कमरबन्द आदि भी भेजे गए।]

महाबतखाँ का विद्रोह

[यह पहले ही लिखा चुका है कि अरब दस्तगैब को बंगाल में महाबतखाँ के पास इसलिए भेजा गया था कि वह खान को दरबार में लाए और हाथियों को भी साथ ले लाए। महाबतखाँ ने पहले तो हाथी भेज दिए और फिर वह स्वयं शाही डेरे के समीप आ गया। उसे आसफखाँ के कहने से बुलाया गया था और आसफखाँ का इसमें यह उद्देश्य था कि उसे लज्जित करके सम्मान, और सम्पत्ति तथा जीवन से वंचित कर दिया जाय। परन्तु महाबतखाँ बड़ी चतुराई से आसफखाँ की योजना को भाँप चुका था। इसलिए वह अपने साथ चार-पाँच हजार ऐसे वीर राजपूतों को लेकर आया था जो सब एक मन थे। वह इन लोगों की पत्नियों और परिवार को भी साथ ही ले आया था जिससे समझौते का कोई अन्य उपाय न सूझने पर ये लोग अपने और अपने परिवार के सम्मान के लिए अन्तिम क्षण तक युद्ध करें।

यद्यपि महाबतखाँ के आने के तरीके की बड़ी कड़ी आलोचना हुई परन्तु नवाब आसफखाँ ने इस मामले को उपेक्षा से देखा। जब उसके आगमन की सूचना बादशाह को मिली तो उसके पास एक सन्देश भेजा गया कि वह बिना बुलाये दरबार में हाजिर न हो। हाथियों के लिए यह आदेश हुआ कि वे दरबार में भेज दिए जाएँ।

महाबतखाँ ने शाही अनुमति के बिना ही अपनी लड़की की सगाई ख्वाजा उमरनक्स बन्दी के पुत्र के साथ कर दी थी। इस मामले में बादशाह ने बड़ा शोर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मचाया। उसने उस नवयुवक को बुलाया और उसके साथ बड़ा अपमानपूर्ण और कठोरतापूर्ण व्यवहार किया। उसके हाथ गर्दन से बँधवा दिए और उसको नंगे सिर कारावास में भेजा। फिदाईखाँ को आदेश दिया गया कि जो कुछ महावतखाँ ने उस नवयुवक को दिया हो उसे छीनकर शाही खजाने में जमा कर दे।

बादशाह का निवास-स्थान बेहत नदी के तट पर था। आसफखाँ को पता था कि वहाँ एक वीर और साहसी शत्रु विद्यमान है, तो भी उसने अपने स्वामी की सुरक्षा के प्रति ऐसी उपेक्षा की कि उसे नदी के उसी तट पर रहने दिया और स्वयं स्त्रियों, बच्चों, सेवकों तथा हाकिमों के साथ पुल के द्वारा दूसरे तट पर चला गया। इतना ही नहीं उसने सामान, कोष, शस्त्र, यहाँ तक कि निजी नौकर भी दूसरी पार भेज दिए। महावतखाँ ने देखा कि उसका जीवन और सम्मान खतरे में है और वह साधनहीन है तथा बादशाह के पास उसका एक भी मित्र नहीं है। इसलिए चार-पाँच हजार राजपूतों के साथ जिन्होंने उसके प्रति स्वामिभक्ति की शपथ ली थी वह पुल के सिरे पर पहुँचा और उसको दबाये रखने के लिए दो हजार घुड़सवार वहाँ नियत कर दिये और आदेश दिया कि इस पर से किसी को नहीं गुजरने दिया जाय और यदि आवश्यकता आ ही पड़े तो पुल जला दिया जाय। इसके बाद महावतखाँ शाही डेरे की ओर गया। उस समय इस इकबालनामे का लेखक बख्शी और मीर तुजक के पदों पर काम करता था। इसलिए उसने नदी पार नहीं की थी और रात पीछे के कमरे में व्यतीत की थी। नमाज के बाद और अपने साथियों से सलाम करने के पश्चात् वह निरीक्षण के लिए गया। उस समय यह शोर मच रहा था कि महावतखाँ आ रहा है। तब मेरे मन में यह बात आई कि शायद वह निजी आवास के दरवाजे पर चला गया है। तब यह कहा गया कि वह निजी आवास को छोड़ गया है और अपने मनोगत भावों को व्यक्त करने के लिए रियासत के डेरे में चला गया है। मेरे पिछले कमरे के दरवाजे पर आकर उसने पूछा कि क्या मामला है। जब उसकी आवाज मेरे कानों तक पहुँची तो मैंने अपनी तलवार म्यान से निकाली और मैं डेरे के बाहर गया। जब उसने मुझे देखा तो मेरा नाम लेकर पुकारा और बादशाह के विषय में मुझसे पूछा। मैंने देखा कि उसके साथ लगभग सौ राजपूत थे और उन सबके पास भाले और ढालें थीं और उसका घोड़ा उनके बीच में था। परन्तु धूल इतनी उड़ रही थी कि मैं किसी के मुख को स्पष्ट नहीं देख सका। तब वह शीघ्रता से मुख्य द्वार पर गया और बगल के दरवाजे से उसने सरकारी खेमे में प्रवेश किया। मैंने कुछ अंगरक्षक पीछे के कमरे में देखे। स्नानघर के दरवाजे पर तीन चार नाजिर खड़े थे। महावतखाँ रियासती खेमे के एक कमरे के दरवाजे पर पहुंच कर घोड़े से उतरा। जब वह स्नानघर की ओर जा रहा था तो उसके साथ दो सौ राजपूत थे। तब मैं आगे बढ़ा और अपनी सादगी के साथ मैंने जोर से पूछा—"यह धृष्टता सब नियमों का उल्लंघन कर रही है। यदि तुम एक मिनट ठहरो तो मैं अन्दर जाकर सूचना दूं।" उसने उत्तर देने का कष्ट नहीं किया। जब वह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्नानघर के द्वार पर पहुँचा तो उसके सेवकों ने उन तख्तों को तोड़ डाला जो दरवानों ने सुरक्षा के लिए खड़े किए थे और उनको कमरे के अन्दर फेंक दिया। वादशाह के पास के सेवकों ने इस साहसपूर्ण कार्य की उसे सूचना दी। तव वादशाह वाहर आया और पालकी में बैठ गया जो उसके लिए तैयार थी। महावतखाँ आदरपूर्वक पालकी के दरवाजे तक गया और वोला "मुझे यह विश्वास हो गया है कि आसफखाँ के द्वेष और दुर्निवार्य घृणा से वचना असम्भव है और मैं लज्जापूर्वक मारा जाऊँगा। इसलिए मैं साहस और धृष्टता करके वादशाह की शरण में आया हूँ। यदि मैं मृत्यु या किसी अन्य दण्ड का अधिकारी हूँ तो आज्ञा दीजिये और मैं उसे आपकी विद्यमानता में ही भोग लूंगा।" अब राजपूतों ने एकत्र होकर शाही निवास को घेर लिया। बादशाह के पास अरव दस्त गैव और कुछ अन्य सेवकों के अतिरिक्त कोई नहीं था। उस वेईमान कुत्ते के प्रवेश से वादशाह त्रस्त और क्रुद्ध हो गया था। इसलिए बार-बार उसने अपनी तलवार पर हाथ डाला और इस गन्दे कुत्ते को मारकर संसार को शुद्ध करना चाहा परन्तु हर बार मंसूर वदखशानी ने कहा "यह धैर्य धारण करने का समय है। इस वदमाश और वेईमान व्यक्ति का दण्ड न्यायशील भगवान के हाथ में छोड़ दो। बदले का दिन भी आएगा ही।" उसके शब्द दूरदर्शितापूर्ण थे। इसलिए बादशाह ने अपने आपको रोका। थोड़ी ही देर में राजपूतों ने शाही निवास के वाहर और भीतर कब्जा कर लिया जिससे सेवकों के अतिरिक्त अन्य कोई भी वादशाह के पास नहीं आ सकता था। तब वह नीच बोला—"यह समय घोड़े पर सवार होकर शिकार में जाने का है इसलिए आवश्यक और मामूली आदेश दिए जाएं ताकि आपका दास आपके साथ चले और यह जानें कि यह साहस का कदम आपके आदेश से ही उठाया गया है।" वह अपने घोड़े को आगे लाया और वादशाह को उस पर सवार होने के लिए प्रेरित किया। परन्तु यह शाही शान के विरुद्ध था कि वादशाह उसके घोड़े पर सवार होता। अतः वादशाह ने अपना ही घोड़ा मँगवाया और अपनी सवारी की पोशाक निजी निवास से मँगवाई परन्तु उस होशियार नीच व्यक्ति ने वादशाह को अन्दर न जाने दिया।

घोड़ा आया तब तक उनको प्रतीक्षा करनी पड़ी। तव वादशाह सवार हुआ और डेरे से दो तीर की मार के अन्तर तक चला गया। तव एक हाथी सामने लाया गया और महावत ने कहा कि लोगों की एक भीड़ इकट्ठी होकर शोर मचा रही है, इसलिए वादशाह को हाथी पर सवार होकर शिकारगाह की ओर जाना चाहिए। वादशाह ने कुछ नहीं कहा और हाथी पर सवारी की। एक वड़ा विश्वस्त राजपूत सामने वैठ गया और दो हौदे के पीछे वैठे। अव मुबारिकखाँ आगे आया और उसको सन्तुष्ट करने के लिए वादशाह के पास ही हौदे में वैठ गया। इस गड़वड़ में मुवारिकखाँ के लाट में घाव हो गया था जिसमें से वहुत खून वहा और उसकी छाती खून से भर गई। वादशाह का एक निजी सेवक, जिसके सुपुर्द शराव थी अपने हाथ में शाही मद्यपान लिए हुए हाथी के पास आया। राजपूतों ने अपने भाले संभाले

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और उसे रोकने की कोशिश की। परन्तु उसने हौदे को जोर से पकड़ लिया। वाहर तीन आदमियों के लिए बैठने का स्थान नहीं था इसलिए वह हौदे के बीच के हिस्से को पकड़ कर लटका रहा। लगभग आधा कोस जाने के वाद शाही फीलखाने का दरोगा गजपतखाँ बादशाह का ही हाथी ले आया। वह आगे बैठा हुआ था और उसका लड़का पीछे। इससे स्वभावतः महाबतखाँ की आशंका वढ़ गई और उसने राजपूतों की ओर संकेत किया कि इन दोनों निरपराध लोगों को मार दिया जाय।

महावतखाँ ऐसी पोशाक पहने हुए था मानो शिकार को जा रहा हो। परन्तु वह अपने ही निवास-स्थान की ओर गया। वादशाह भी वहीं गया और वहाँ कुछ समय ठहरा। महावतखाँ ने अपने नीच पुत्र वादशाह के चारों ओर खड़े कर दिए। अब तक उसने नूरजहाँ बेगम के विषय में नहीं सोचा था। अब उसके मन में आया कि वह बादशाह को वापस शाही निवास-स्थान पर ले जाय और वहाँ जाकर अपने आपको सुरक्षित करे। इस विचार से वह बादशाह को वापस ले गया। परन्तु ऐसा हुआ कि नूरजहाँ ने यह समझ कर कि बादशाह शिकार के लिए गया है जवाहरखाँ नाजिर के साथ नदी पार की। वह अपने भाई आसफखाँ से मिलना चाहती थी। जव महावतखाँ को नूरजहाँ की रवानगी का पता लगा तो उसे अपनी इस भूल पर वड़ा पश्चात्ताप हुआ कि उसने बेगम को अपने वश में नहीं किया। अव उसे शहरयार का ख्याल आया और सूझा कि उसको बादशाह से अलग रखना वड़ी भूल होगी। इसलिए उसने बादशाह को एक बार फिर सवार करवाया और उसको शहरयार के घर ले गया। अव इस धोखेवाज को अपने जीवन के विषय में इतना भय था कि उसके सब काम और शब्द मूर्खतापूर्ण होते थे। वह नहीं जानता था कि उसने क्या कहा और क्या किया और क्या करेगा। प्रति क्षण वह कुछ इरादा करता था और उसके दिमाग में कोई न कोई चिन्ता घुसा करती थी और उसे वड़ा अफसोस होता था। बादशाह ने उसके किसी भी प्रस्ताव का विरोध नहीं किया।

जब यह साहसी धोखेबाज शाही निवास-स्थान में घुसा तो वहाँ शुजातखाँ का पोता जहणू मौजूद था। यह अकबर बादशाह का एक मुख्य अमीर था। वह वादशाह के साथ इधर-उधर घूमा और फिर उसको शहरयार के निवास में ले गया। यह कोई नहीं बतला सकता कि उस धोखेबाज के हृदय में किन आशंकाओं ने प्रवेश किया परन्तु जब बादशाह अन्दर गया तो महावतखाँ ने राजपूतों को हुक्म दिया कि वे जहणू को पकड़कर मार डालें और उन्होंने तुरन्त ही उसको शहीद बना दिया।

जब नूरजहाँ नदी पार करके अपने भाई के मकान पर पहुँची तो उसने सब अमीरों को बुलाकर भला-बुरा कहा। वह बोली—"यह सब कुछ तुम लोगों की उपेक्षा और मूर्खतापूर्ण व्यवस्था के कारण हुआ है। जो बात किसी की कल्पना में नहीं आ सकती थी वह हो गई है और अब ईश्वर और इन्सान के सामने तुम लज्जित होकर खड़े हो। इस बुराई का निराकरण करने के लिए अब तुम्हें यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिए और बतलाना चाहिए कि किस मार्ग का अनुसरण किया जाय।" सब ने एक मन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और वचन से कहा कि अगले दिन सेना तैयार की जाए और वेगम के साथ नदी पार करके विद्रोही को हरा कर बादशाह को मुक्त किया जाय। इस वेसमझी के निश्चय की सूचना बादशाह के कानों तक पहुँची और उसने इसको बहुत गलत माना। रात्रि में उसने मुर्करिबखाँ और अन्य कई लोगों को लगातार आसफखाँ और अन्य अमीरों के पास भेजा और उन्हें चेतावनी दी कि लड़ाई करने के लिए वे नदी पार न करें क्योंकि ऐसा करना बड़ी भूल होगी और बुराई तथा पश्चात्ताप के अतिरिक्त कुछ प्राप्त नहीं होगा। जब वे नदी के दूसरी ओर के तट पर हैं तो वे किस आवेश और आशा से लड़ेगा। इस सलाह को पुष्ट और प्रमाणित करने के लिए उसने मीर मन्सूर के साथ अपनी अँगूठी भेजी परन्तु आसफखाँ ने समझा कि यह सब कुछ महावतखाँ के उकसाने से किया जा रहा है। इसलिए उसने कोई ध्यान नहीं दिया और अपने प्रस्ताव को कार्यान्वित करने का निश्चय किया।

इस घटना की सूचना मिलने पर फिदाईखाँ घोड़े पर सवार होकर नदी के नीचे की ओर चला परन्तु पुल जलाया जा चुका था और नदी पार करने का कोई साधन न था। जब कोई अन्य मार्ग नहीं दिखाई दिया तो अपने कुछ स्वामिभक्त अनुचरों के साथ उसने शाही निवास के सामने नदी तैर कर पार करना चाही। उसके छः आदमी तो पानी में समाप्त हो गए और शेष पानी की ठंड के कारण आगे नहीं बढ़ सके और अधमरे होकर वापस तट पर लौट आए। सात सवारों के साथ खान ने सामने के तट पर पहुँच कर एक वीरतापूर्ण प्रयास किया। उसके चार साथी मारे गए और फिर उसने देखा कि शत्रु बहुत प्रबल है। वह बादशाह तक नहीं पहुँच सकता और उसका प्रयास निष्फल होगा तो वह ऐसे वापस लौट गया जैसे पत्थर का टुकड़ा लोहे की दीवार पर गिरता है और फिर नदी को उसने उसी साहस से पार किया जैसे पहले पार किया था। बादशाह ने वह रात शहरयार के निवास-स्थान पर व्यतीत की।

रविवार तारीख 20 फरवरदीन इलाही संवत को और तदनुसार 21 जलाद-उस्सानी को आसफखाँ ने ख्वाजा अब्दुल हसन और अन्य अमीरों के सहित युद्ध करने के लिए नदी को पार करने का निश्चय किया। वे लोग नूरजहाँ की सेवा में थे और उस थाह से नदी पार करना चाहते थे जिसका नावों के दरोगा गाजी ने पता लगाया था परन्तु हुआ यह कि यह थाह सबसे खराब थी। तीन-चार गढ़ों को पार करना था जहाँ पानी बड़ा गहरा था। नदी पार करते समय सारी व्यवस्था बिगड़ गई और प्रत्येक दल ने ज्यों-त्यों कर नदी पार की। आसफखाँ ख्वाजा अबुल हसन और इरादतखाँ बेगम की अम्वारी के सहित शत्रु के प्रबल दल के सामने उतरे जिस पर उसका अधिकार था। शत्रु के सामने हाथी खड़े हुए थे। फिदाईखाँ ने ऐसी थाह से नदी पार की जो नीचे की ओर बाण की एक मार के लगभग दूर थी। आसफखाँ के पुत्र अबुल तालिब और बहुत से लोगों ने नीचे की ओर एक थाह से नदी पार की। कभी-कभी घोड़ों को तैरना पड़ा। उनके जीन भीग गए और अव्यवस्थित हो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गए। उनमें से कुछ तट पर पहुंचे और कुछ पानी में ही रह गए। उधर हाथियों को आगे रख कर शत्रु उन पर टूट पड़े। आसफखाँ और ख्वाजा हसन अभी नदी के बीच में ही थे कि उनके आगे के आदमी पीछे हटने लगे। इस दृश्य को देखकर मुझे लकवा सा मार गया और ऐसा जान पड़ा कि चक्की का पाट मेरे सिर पर घूम रहा है। न कोई किसी की बात सुनता था और न कोई किसी की चिन्ता करता था। कोई कुछ निश्चय नहीं कर सकता था। सबसे पहले करने की बात यह थी कि ऐसी थाह का पता लगाया जाय जहाँ से नदी पार करना सबसे आसान हो। और फिर वहाँ से सामने के तट पर अधिकार करने के लिए सेना भेजी जाय और शत्रु को दूर रखा जाय ताकि अमीर और उनके लोग निर्विघ्न नदी पार कर सकें और उन लोगों को सहायता दे सकें जो पहले ही दूसरे तट पर जा पहुंचे थे। यह ऐसा समय था जब अनुशासन, निश्चय और स्वामिभक्ति की बड़ी आवश्यकता थी। परन्तु इस समय जो आगे थे वे पीछे हटना चाहते थे, और जो आगे जाते थे, गिर जाते थे। सब सेनाधिकारी त्रस्त होकर इधर-उधर झपट रहे थे। उनको यही पता न था कि वे कहाँ जा रहे हैं और अपने आदमियों को कहाँ ले जा रहे हैं।

मैंने और ख्वाजा हसन ने नदी की एक शाखा पार कर ली थी और दूसरी शाखा के तट पर खड़े हुए हम अपनी किस्मत का खेल देख रहे थे। सवार, प्यादे, घोड़े, ऊँट गाड़ियाँ नदी के बीच में एक-दूसरे से रगड़ते हुए सामने के तट पर पहुँचने का प्रयास कर रही थीं। इस समय नूरजहाँ का एक नाजिर, जिसका नाम नदीम था, हमारे पास आकर बोला "बेगम यह जानना चाहती हैं कि क्या यह समय विलम्ब और अनिश्चय का है। साहस के साथ प्रहार करो ताकि तुम्हारे आगे बढ़ने से शत्रु पीछे हट जाय और भाग जाय।" मैंने और ख्वाजा ने उत्तर न दिया और हम दोनों पानी में कूद पड़े। दूसरे तट पर सात आठ सौ राजपूतों ने जिनके सामने कितने ही जंगी हाथी थे, खूब जमकर सामने के तट पर अधिकार कर रखा था। हमारे कुछ आदमी सवार और पैदल सामने के तट पर पहुँचे परन्तु उनकी दशा बड़ी अस्त-व्यस्त थी। शत्रु ने उन पर अपने हाथी धकेले और पीछे से सवार आकर पानी में कूद पड़े और तलवारें चलाने लगे। हमारे मुट्ठी भर आदमी जिनके साथ कोई नायक नहीं थे पीछे मुड़ कर भाग गए और शत्रु की तलवारों ने उनके खून से पानी रंग दिया। बेगम नूरजहाँ के साथ उसकी पालकी में शहरयार की पुत्री भी बैठी हुई थी। उसकी धाय (अंका) शाह नमाजखाँ की पुत्री थी। अंका की बाँह में तीर लगा परन्तु बेगम ने उसको अपने हाथ से खींच लिया जिससे उसके कपड़े खून में सन गए। बेगम के हाथी की सूंड पर तलवार के दो घाव लगे और जब वह वापस मुड़ा तो उसकी पीठ पर भी दो-तीन घाव लगे। नंगी तलवारें लिए हुए राजपूत उसके पीछे झपटे। महावत ने उसे गहरे पानी में धकेल दिया। तब सवारों को तैरना पड़ा और डूब कर मर जाने के भय से वापस लौट गए। हाथी तैर कर तट पर पहुंच गया और बेगम शाही निवास की ओर चली गई। ख्वाजा अब्बुलहसन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और मैं साथ-साथ थे। वह मुझे छोड़ कर शीघ्रता से बेगम के निवास की ओर गया और मैं अपने चालीस साथियों के सहित नदी के तट पर रहा। वे लोग तीर चलाते रहे और राजपूतों ने हमारी तरफ आने का प्रयत्न नहीं किया। अब आसफखाँ दिखाई देने लगा। उसके साथी भी तितर-बितर हो चुके थे। उसकी योजना विफल हो गई थी। इसलिए वह वहाँ से चल दिया। मैंने उसके साथियों को तलाश किया और जोर-जोर से उनको आवाजें दीं परन्तु मुझे उनका चिह्न भी दिखाई नहीं दिया।

जब ख्वाजा अबुल हसन मुझे छोड़ कर बड़ी शीघ्रता से घबराहट और भय के साथ चला तो उसने भी नदी में अपना घोड़ा डाल दिया। पानी गहरा था और बहाव तेज था। जब घोड़ा तैर रहा था तो ख्वाजा गिर पड़ा परन्तु उसने दोनों हाथों से काठी पकड़ ली। घोड़ा कई बार पानी में डूब गया। परन्तु ख्वाजा ने काठी नहीं छोड़ी तब एक कश्मीरी मल्लाह ने ज्यों-त्यों उसके पास पहुँच कर उसके प्राण बचाए।

फिदाईखाँ ने कुछ बादशाह के अनुचरों और कुछ अपने भी अनुचरों सहित जो बहुत समय से उसके साथ थे नदी पार करके अपने सामने की सेना पर आक्रमण किया। शत्रु को पीछे धकेल कर वह शहरयार के मकान पर पहुँच गया जहाँ बादशाह था। इस निवास-स्थान के अन्दर सवार और प्यादे खूब भरे हुए थे। फिदाईखाँ ने दरवाजे पर पहुँच कर अन्दर की ओर तीर चलाए। कुछ तीर बादशाह के समीप निजी निवास के मैदान में गिरे। तब मुखलिसखाँ तख्त के सामने खड़ा हो गया और बादशाह की रक्षा करने के लिए ढाल बन गया। फिदाईखाँ अपना प्रयास करता रहा परन्तु उसके कई सेवक मारे गए और कई आहत हो गए और स्वयं खान के घोड़े को चार घाव लगे। जब उसने देखा कि उसे सफलता नहीं मिल सकती और बादशाह तक पहुँचने की कोई सम्भावना नहीं है तो वह डेरे में होकर नदी की ऊपर की ओर चला गया। दूसरे दिन नदी पार करके वह रोहतास में अपने लड़कों के पास पहुँच गया। आसफखाँ इस विपत्ति का कारण था। उसकी मूर्खता और अदूरदर्शिता के कारण ही यह हाल हुआ था। जब उसने देखा कि अब महावतखाँ का सामना नहीं किया जा सकता तब वह अपने पुत्र अबूतालिब और दो-तीन सौ सवार, बारगीर तथा नौकरों के साथ अटक के किले में चला गया जो उसकी जागीर में था और उसने दुर्ग द्वार बन्द कर लिया। अटक दुर्ग को घेरने के लिए महावतखाँ ने कुछ शाही अहदी, कुछ अपने सेवक और आस-पास के ज़मींदार अपने पुत्र बिहरोज, एक राजपूत के नेतृत्व में रवाना किए। उन्होंने दुर्ग ले लिया और आसफखाँ को भाग्य के सामने झुकना पड़ा। उसने महावतखाँ के पक्ष का समर्थन करने का शपथपूर्वक वचन दिया। जब अटक के पास बादशाह ने नदी पार की तो शाही अनुमति प्राप्ति करके महावतखाँ दुर्ग में गया और उसने आसफखाँ और उसके पुत्र अबूतालिब को किले में से निकाल कर अपने सेवकों के सुपुर्द कर दिया। (आसफखाँ के बहुत से सेवकों का वध करवाया गया)। शाही डेरा कुछ अर्से तक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जलालावाद में लगा रहा और 21 शावान को काबुल पहुंचा और वादशाह अपने पूर्वजों की कब्रों पर गया। राजपूतों के एक दल ने अपने घोड़े काबुल के पास चरागाह में चरने के लिए छोड़ दिए तो वहाँ के रखवालों के साथ झगड़ा हो गया जिसमें एक अहदी मारा गया। अहदियों ने क्षतिपूर्ति के लिए प्रार्थना की परन्तु उन्हें सन्तोषजनक उत्तर न मिला। तव उन्होंने आक्रमण करके छः सात सौ राजपूतों को मार डाला।

मलिक अम्बर की मृत्यु

[(अब सूचना आई कि अम्वर हब्शी की अस्सी वर्ष की आयु में 31 उर्दीविहिश्त को मृत्यु हो गई। वह दास था परन्तु वड़ा योग्य आदमी था। युद्ध में, नेतृत्व में, निर्णय-शक्ति में और प्रशासन में वह अद्वितीय था। वह युद्ध की कज्जाकी पद्धति का वड़ा ज्ञाता था। दक्खिन की भाषा में इसको वरंगीगीरी कहते हैं। उसने उस देश के उत्पाती लोगों का दमन किया और जीवनपर्यन्त तक अपना स्थान ऊँचा बनाए रखा और उसके जीवन का अन्त सम्मान के साथ हुआ। इतिहास में किसी ऐसे दूसरे हब्शी दास का उल्लेख नहीं है जिसने ऐसा ऊँचा स्थान प्राप्त किया हो।

काबुल में बादशाह और नूरजहाँ वेगम दोनों शाह इस्माइल से मिलने गए। अब खबर मिली कि शाहजहाँ निजाम-उल-मुल्क की सीमा से रवाना होकर मालवे में होता हुआ अजमेर में गया था परन्तु वह वहाँ नहीं ठहरा और जैसलमेर के मार्ग से ठट्ठा की ओर चला गया। तारीख 1 शहरयूर को बादशाह ने काबुल से हिन्दुस्तान को कूच किया। इसी समय शहजादा परवेश की चिन्ताजनक बीमारी की सूचना आई। पहले उसके पेट में पीड़ा हुई, फिर वह अचेत हो गया और चिकित्सा के पश्चात् उसे गहरी नींद आ गई। हकीमों ने उसको सिर पर और ललाट पर पाँच जगह जलाया। उसकी बीमारी का कारण अत्यधिक मद्यपान वतलाया गया था। इसी बीमारी से उसके चाचा शाह मुराद और शहजादा दानियाल की मृत्यु हुई थी।

बादशाह का बचकर निकलना

वादशाह अपने अच्छे और कोमल स्वभाव के कारण महावतखां की ओर झुक गया था और उस पर वड़ा अनुग्रह किया करता था। इसलिए महावतखाँ इस ओर से अपने आपको सुरक्षित समझता था। जो कुछ नूरजहाँ वेगम बादशाह से गुप्त रूप से कहती थी उसको वह ज्यों का त्यों महावतखाँ से कह दिया करता था और यह भी कहता था कि बेगम उसकी ओर दुर्भावना रखती है। इसलिए उसे खबरदार रहना चाहिए। बादशाह ने महावतखाँ से यह भी कहा कि शाहनवाजखाँ की लड़की, जिसका विवाह आसफखाँ के पुत्र शायस्ताखाँ से हुआ था, मौका पाकर उसे गोली मारने की धमकी देती थी। इस प्रकार उसने महावतखाँ के हृदय को

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शान्त किया और उसके हृदय से सब शंका और सन्देह जो उसके मन में पहले थे, निकाल दिए। अब महावतखाँ उतना सतर्क नहीं था। पहले वह महल को घेरे रखने के लिए अपने साथ राजपूतों को लाया करता था। अब उनकी संख्या कम हो गई और नियन्त्रण रखने वाले दल शिथिल हो गए। इसके अतिरिक्त काबुल में अहदियों की लड़ाई में उसके कुछ अच्छे से अच्छे लोग काम आ चुके थे।

नूरजहाँ बेगम गुप्त और प्रत्यक्ष दोनों प्रकार से उसके विरुद्ध काम कर रही थीं। उसके पास बहुत से सेवक थे जिनको धन और वचन देकर अपने से मिला लिया था। कुछ समय बाद उसके पत्रों के अनुसार उसके नाजिर होशियारखाँ ने लाहौर में दो हजार आदमी एकत्र कर लिए और फिर उससे मिलने के लिए चला। बादशाह की रक्षा करने के निमित्त भी बहुत से आदमी एकत्र कर लिए गए थे। रोहतास से एक मंजिल के अन्तर पर बादशाह ने निश्चय किया कि रसाले की सलामी ली जाए। उसने आदेश दिया कि पुराने और नए सब सैनिक शाही स्थान से दो-दो की पंक्तियाँ बनाकर दूर तक खड़े हो जाएँ और फिर अपने एक सेवक बुलन्दखाँ को महावतखाँ के पास भेजकर कहलवाया कि बादशाह बेगम के सैनिकों की सलामी ले रहा है। इसलिए यह अच्छा होगा कि वह पहले दिन की क़वायद को स्थगित कर दे अन्यथा कहीं दोनों दलों में कहा-सुनी होकर झगड़ा न हो जाय। बुलन्दखाँ के बाद उसके ख्वाजा अबुल हसन को अपनी इच्छा को और भी दृढ़ता के साथ कार्यान्वित करने के लिए भेजा और महावत से कहलाया कि वह एक मंज़िल आगे चला जाय। ख्वाजा ने अच्छे कारण बतलाकर उसको मना लिया और धृष्टता किए बिना और अपनी शक्ति का अनुचित उपयोग किए बिना वह आगे चला गया। बादशाह ठीक उसके पीछे-पीछे चला और पहली मंजिल के बाद नहीं ठहरा। उसने दो मंजिल एक मंजिल के बराबर मानी और नदी पार करके रोहतास चला गया। वहाँ उसने देखा कि दरबार उसके स्वागत के लिए तैयार है।

अब बादशाह ने महावतखाँ के पास चार लिखित आदेश भेजे—1. शाहजहाँ ठट्ठा गया है इसलिए महावतखाँ भी उसके पीछे-पीछे जाय और वहाँ के मामलों को तय करने में मदद करे। 2. आसफखाँ और उसके पुत्र अबुतालिब को दरबार में भेजा जाए। 3. स्वर्गीय शहजादा दानियाल के पुत्र तहमुरास और हुशंग को जो उसके सुपुर्द हैं भेज दे और 4. मुखलिसखाँ के पुत्र लश्करी को जो उसकी जमानत है और अब तक दरबार में नहीं आया है भेज दे। उसको यह भी चेतावनी दी गई कि यदि उसने आसफखाँ को भेजने में विलम्ब किया तो उसके पीछे सेना रवाना की जाएगी।

अफजलखाँ शहजादा दानियाल के पुत्रों को ले आया परन्तु आसफखाँ के विषय में वह महावतखाँ से यह सन्देश लेकर आया कि वह ठट्ठा जा रहा है लेकिन जहाँ तक नूरजहाँ का सम्बन्ध है वह उस ओर से अपने को सुरक्षित नहीं समझता। उसको यह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

डर था कि यदि वह आसफखाँ को छोड़ देगा तो उसके पीछे सेना भेज दी जाएगी। इसलिए उसने नम्र निवेदन किया कि जब तक वह लाहौर पार न कर ले आसफखाँ को उसके पास रहने दिया जाए फिर उसको छोड़ दिया जावेगा। इस उत्तर से बेगम को बड़ा क्रोध आया। उसने अफजलखाँ को वापस भेजकर जो कुछ उसने देखा और सुना था उसकी सूचना महावतखाँ को दिलाई और कहलवाया कि आसफखाँ को भेजने में विलम्ब नहीं होना चाहिए और उसे खबरदार होना चाहिए कि आगे नाराज न करे। इस सन्देश से महावतखाँ डर गया। उसने आसफखाँ को बुलाया। उससे क्षमा माँगी और शपथ तथा वचन देकर उसे बाँध दिया। फिर उसकी ओर बहुत ध्यान देकर उसे दरबार में भेज दिया परन्तु उपर्युक्त कारण से उसने कुछ दिन के लिए आसफ के पुत्र अब्दुलतालिब को रोक लिया। फिर उसने कूच किया मानों उसका विचार ठट्ठा जाने का हो।

जब दरबार लाहौर पहुँचा तो आसफखाँ को पंजाब की सूबेदारी मिली। वह प्रधानमन्त्री भी नियुक्त हो गया और आदेश दिया गया कि राजस्व और राजनैतिक सब प्रकार के प्रशासनिक विषयों का वह अध्यक्ष रहेगा।

महावतखाँ ठट्ठा की ओर दूर नहीं गया परन्तु मुड़कर अपने भाग्य को उन्नत करने के लिए हिन्दुस्तान की ओर चला। इस समय खबर आई कि बंगाल से उसके लिए बाईस लाख रुपए आ रहे हैं और ये देहली के पास आ पहुँचे हैं। तब एक दल इस कोष को छीनने के लिए भेजा गया और शाहबाद के पास इसकी कोषरक्षकों के साथ मुठभेड़ हुई। कोषरक्षक रुपयों से भरी हुई गाड़ियों के साथ एक सराय में घुस गए और उन्होंने उसका दरवाजा रोक दिया और अन्त समय तक डटे रहने का निश्चय किया। बहुत लड़ाई होने के बाद शाही सैनिकों ने सराय का आग लगा दी। फिर उस पर अधिकार कर लिया। कोषरक्षक सब भाग गए।

दक्खिन का समाचार

[शहजादा परवेज 6 शफर 1035 हिजरी को मर गया। उसकी आयु 38 वर्ष की थी। दक्खिन से समाचार आया कि याकूबखाँ हब्शी शाही तख्त के प्रति अधीनता प्रकट करने का निश्चय कर चुका है। वह दक्खिन में मलिक अम्बर से दूसरे दर्जे का था और अम्बर के समय में वह महत्वपूर्ण सैनिक नेतृत्व कर चुका था। खानजहाँ ने याकूब को हार्दिक शब्दों में विश्वास दिलाया और अमीरों को आदेश दिया कि उसका आदरपूर्वक और आतिथ्यपूर्ण स्वागत किया जाय और उसे बुरहानपुर लाया जाय।]

शाहजहाँ

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि सेवकों के छोटे से दल के साथ शाहजहाँ ठट्ठा की ओर कूच कर चुका था। पिछले दिनों में उसका ईरान के शाह अब्बास के साथ मित्रभाव था और पत्र-व्यवहार चला करता था। अब उसने अपनी वर्तमान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कठिनाइयों में यह आशा की कि वहाँ उसका मित्रभाव से स्वागत होगा। इसलिए उसने वहाँ जाने का विचार किया। वह समझता था वहाँ किसी न किसी प्रकार वह अपनी विपत्तियों को पार कर लेगा। जब शाहजहाँ ठट्टा पहुँचा तो उस मुल्क का हाकिम शरीफ-उल-मुल्क, जो शहरयार का भक्त सेवक था, धृष्टतापूर्वक उस प्रदेश से तीन चार हजार सवार और दस हजार प्यादे एकत्र करके शाहजहाँ की गति को रोकने आया। शहजादे के साथ तीन या चार सौ सवार थे परन्तु शरीफ-उल-मुल्क उस पर आक्रमण करने से डरता था। इसलिए वह नगर के दुर्ग में जा घुसा। दुर्ग की अभी हाल ही में मरम्मत हुई थी और बहुत-सी तोपें उस पर चढ़ाई गई थीं। उसके विभिन्न बुर्जों पर चुने हुए आदमियों के दल नियुक्त थे और वे जोर से आत्म-रक्षा करने के लिए तैयार थे। शाहजहाँ ने दुर्ग पर आक्रमण नहीं करने दिया। वह चाहता था कि दुर्ग की तोपों की मार से जीवन बलिदान न किया जाय परन्तु उसके वीर साथियों के एक दल ने उसके निषेध की उपेक्षा करके हमला कर दिया। दीवारें बड़ी दृढ़ थीं, तोपों से अग्नि वर्षा की जा रही थी, इसलिए वे पीछे हटा दिए गए। कुछ दिन बाद एक दूसरे दल ने, जो अपने जोश को नहीं दबा सकता था, दूसरा आक्रमण किया। किले के चारों ओर की भूमि समतल और खुली हुई थी। उसमें न कहीं टीला था, न दीवार थी, न वृक्ष था और न कोई बचने का स्थान था। इसलिए सैनिक अपने सामने ढालें करके आगे दौड़े। तब वे एक चौड़ी और गहरी खाई पर पहुँच गये जो जल से भरी हुई थी। आगे बढ़ना असम्भव था और पीछे हटना और भी अधिक असम्भव। सर्वशक्तिमान ईश्वर को ही अपना दुर्ग मानकर वे वहीं ठहर गये। शाहजहाँ ने उन्हें वापस बुलाया परन्तु वे नहीं आये। तब उसके कुछ भक्त सेवक उन्हें वापस लाने को गये परन्तु जो गया उन्हीं में मिल गया। मृत्यु का मार्ग अच्छा समझकर वे वापस नहीं आये।

अब ऐसी विविध घटनाएँ घटीं जिनके कारण शाहजहाँ ईरान जाने से रुक गया। शहजादा परवेज बहुत ही बीमार था और ठट्टा को जीतने का प्रयास निष्फल मालूम होता था। इसलिए उसने गुजरात और बरार के मार्ग से दक्खिन को लौटने का निश्चय किया। यह निर्बल और रोगी था। इसलिए पालकी में बैठकर मुसाफिरी नहीं कर सकता था। अब उसे शहजादा परवेज की मृत्यु का समाचार मिल गया। तब वह और भी शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़ा। उसने उसी मार्ग का अनुसरण किया जिसका महमूद गजनी ने सोमनाथ को जीतने के लिए किया था। राजपीपलिया के पास से गुजरकर वह दक्खिन में नासिक तिरबंग पहुंच गया। यहाँ वह सामान छोड़ गया था।

दक्खिन

निजाम-उल-मुल्क ने मलिक अम्बर के पुत्र फतहखाँ से मिलकर शत्रुता की कार्यवाहियाँ कीं। इसलिए खानजहाँ ने बुरहानपुर को लश्करखाँ के सुपुर्द करके इस प्रयत्न को विफल करने के निमित्त खिड़की ओर कूच किया। निजाम-उल-मुल्क दौलताबाद के दुर्ग में था। उसने हामिदखाँ नामक हब्शी दास को अपना प्रधान सेनापति

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बना कर अपनी रियासत का सारा प्रवन्ध उसके सुपुर्द कर दिया। इस प्रकार निजाम-उल-मुल्क की दशा पिंजड़े के पक्षी की सी हो गई। बाहर तो वह हब्शी के वश में था और अन्दर अपनी पत्नी के वश में था।

जब खानजहाँ के आगमन का पता लगा तो हामिदखाँ तीन लाख हुण (सिक्का) लेकर उससे मिलने गया। हब्शी की चालाकियाँ और उसके रुपये के आकर्षण से खानजहाँ सत्य पथ से विचलित हो गया। उसने रुपया लेकर बालाघाट का सारा प्रदेश, जो अहमदाबाद के दुर्ग तक फैला हुआ था, निजाम-उल-मुल्क को देना स्वीकर कर लिया। इस बेईमान आदमी ने बड़ी ही शर्म की बात की। अपने कर्तव्य और स्वामिभक्ति को भूलकर उसने ऐसे मुल्क का सौदा तीन लाख हुण में कर लिया। खानजहाँ ने विभिन्न स्थानों के सेनानायकों को पत्र लिखकर उन्हें आदेश दिया कि अपने-अपने स्थान निजाम-उल-मुल्क के अफसरों के सुपुर्द करके वे दरबार में लौट आवें।

एक पत्र अहमदनगर के सेनानायक सिपहदारखाँ को भेजा गया था। जब निजाम-उल-मुल्क के अफसर वहाँ पहुँचे तो खान ने कहा—"इस प्रदेश पर अपना अधिकार कर लीजिए क्योंकि यह आपका है परन्तु मैं दुर्ग को शाही फरमान के बिना सुपुर्द नहीं करूँगा।" निजाम-उल-मुल्क के प्रतिनिधियों ने उसे राजी करने के लिए भरसक प्रयत्न किया परन्तु सब निष्फल हुआ। वह अपने निश्चय से नहीं डिगा और वहाँ सामान जुटाने में व्यस्त हो गया और दुर्ग में आत्मरक्षा की तैयारी करता रहा। दूसरे सेनानायकों ने खानजहाँ के आदेश पर सफलतापूर्वक बालाघाट का प्रदेश समर्पित कर दिया और वे बुरहानपुर चले गए।

इसी समय बैरमखाँ के पुत्र खानखाना की बहत्तर वर्ष की अवस्था में मृत्यु हो गई। यह बादशाह अकबर के समय का एक बड़े से बड़ा अमीर था। इसने बड़ी-बड़ी सम्मान-योग्य सेवाएँ की थीं और महत्वपूर्ण विजय प्राप्त की थीं।

जब महावतखाँ ठट्टा के मार्ग से मुड़ा तो उसने अपने आदमी, कोष लाने वाले कारवाँ से मिलने के लिए भेजे। यह कोष अभी रास्ते में था। उसने आदेश दिया कि या तो कोष उसके पास लाया जावे या उसको शाही प्रदेश से बाहर ले जाया जाय। वह कुछ समय तक राणा के मुल्क की पहाड़ियों में छिपा रहा और फिर उसने पाश्चात्ताप प्रकट करने के लिए अपने आदमी शाहजहाँ के पास भेजे। शाहजहाँ ने उसकी प्रार्थना कृपापूर्वक स्वीकार की और उसे अपने पास बुलाकर उसके साथ बड़ा कृपापूर्ण व्यवहार किया।

शासन का बाईसवाँ वर्ष

[जब बादशाह कश्मीर में ठहरा हुआ था तो उसकी बीमारी बढ़ने लगी और वह प्रतिदिन अधिकाधिक निर्बल होने लगा। वह घोड़े पर नहीं चढ़ सकता था। इसलिए उसको पालकी में बिठाकर ले जाया जाता था। उसको बड़ा ही कष्ट था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसे भूख बिल्कुल नहीं लगती थी। वह अफीम नहीं खाता था। यह अफीम वह पिछले चालीस वर्ष से खाया करता था। वह अंगूर की शराब के कुछ प्यालों के अतिरिक्त और कुछ ग्रहण नहीं करता था। ठीक इसी समय सुलतान शहरयार बीमार हो गया। उसके बाल गिरने लगे जिससे उसका सम्मान नष्ट हो गया। उसकी मूछें, भौंहें, पलकें सब गिर गईं। हकीमों की वतलाई हुई औषधियों से कोई लाभ नहीं हुआ। इसलिए वह वापस लाहौर आया।

बादशाह की मृत्यु

[बादशाह भी वापस लाहौर लौटने के लिए रवाना हुआ। जब वह वैरम कला पहुंचा तो उसमें शिकार का शौक जिनका इन पृष्ठों में प्राय: उल्लेख किया गया है जागृत हो गया। गाँव के लोग एक हिरन को खदेड़कर उस स्थान की ओर ले आए जहाँ बादशाह वैठा हुआ था। उसने अपनी बन्दूक उठाई और चलाई। गोली खाकर वह जानवर छलांग मारकर हिरनियों में चला गया और फिर मर गया। "जिस आदमी ने उसका पीछा किया वह भी एक खड़ी चट्टान से गिरकर मर गया।" इस गरीब आदमी की मृत्यु से बादशाह पर वड़ा असर पड़ा। उसे ऐसा जान पड़ा मानो मृत्यु का फरिश्ता उसे दिखाई दे रहा हो। उस समय से उसको आराम और चैन नहीं रहा। उसकी दशा बिल्कुल वदल गई। फिर राजोर की ओर दो मंजिल मुसाफिरी की गई। दिन के अस्त होते-होते वह वहाँ से रवाना हुआ। रास्ते में उसने शराब का एक प्याला माँगा परन्तु जब यह उसके होठों से लगाया गया तो उसको पी नहीं सका। जब रात होने लगी तो उसकी दशा और बिगड़ गई और दूसरे दिन 28 शफर 1037 हिजरी को अपने शासन के बाइसवें वर्ष में प्रात: काल उसकी मृत्यु हो गई।

खान-ए-आजम (इरादत्तखाँ) से मिलकर राज्य का प्रमुख अमीर आसफखाँ खुसरु के पुत्र दावर बख्श को कैदखाने से वाहर लाया और उसे बादशाह बनाने की आशा दिलाई। परन्तु दावर बख्श ने उन लोगों पर विश्वास नहीं किया और प्रस्तावों पर उस समय उसको भरोसा हुआ जब उन्होंने बड़ी से बड़ी शपथ खाई। तब उसे घोड़े पर सवार करवाया गया, उस पर शाही छत्र लगवाया गया और सब लोग शाही निवास-स्थान की ओर चले। नूरजहाँबेगम ने अपने भाई को मिलने के लिए कई लोगों को उसके पास भेजा परन्तु उसने कई बहाने बनाए और नहीं गया। अब आसफखाँ ने बनारसी नामक एक तेज हरकारे को जहाँगीर की मृत्यु की खबर देने के लिए शाहजहाँ के पास भेजा। जल्दी इतनी थी कि पत्र लिखने का भी समय नहीं था। इसलिए विश्वास दिलाने के लिए उसने अपने हाथ की अँगूठी भेजी। दूसरे दिन शाही अनुचर भिम्बार आए। वहाँ पर जनाजा तैयार किया गया और हिफाजत के साथ लाश को लाहौर भेज दिया गया और वहाँ इसको उस बाग में दफनाया गया जो नूरजहाँ ने बनवाया था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जब रियासत के अमीरों और हाकिमों को यह मालूम हुआ कि आसफखां दावर बख्श को बादशाह घोषित करने की युक्ति इसलिए रच रहा है कि शाहजहां का राज्यारोहण सुरक्षित हो जाय तो उन्होंने आसफखां की सहायता की और जो उसने कहा वही किया। वे जानते थे कि दावर बख्श तो केवल बलिदान का बकरा है। भिम्बार के निकट दावरबख्श के नाम का खुतुबा पढ़ा गया और सब लोग लाहौर के लिए रवाना हुए। आसफखाँ को नूरजहाँ से डर था इसलिए वह उसकी निगरानी करता रहता था और किसी को उससे मिलने नहीं देता था। बेगम शहरयार को गद्दी पर बिठाना चाहती थी। जब शहरयार ने बादशाह के मरने की खबर सुनी तो वह लाहौर में था। उसकी पत्नी बड़ी प्रपंची थी। उसके कहने से उसने शाही उपाधि धारण कर ली और शाही कोष छीन लिया और लाहौर में जो कुछ भी रियासत की चीजें थीं सब हथिया लीं। सेना को अपने पक्ष में करने के लिए उसने जो जिसने माँगा दिया और एक सप्ताह में पुराने और नए अमीरों में सत्तर लाख रुपए बाँट दिए। उसे आशा थी कि उसकी स्थिति सुरक्षित हो जायगी। स्वर्गीय शहजादे दानियाल का पुत्र मिर्जा बेसिंथर बादशाह की मृत्यु पर भाग कर लाहौर पहुँचा और शहरयार से मिल गया। उसने सेना का नेतृत्व अपने हाथ में ले लिया और उसको नदी के पास ले आया।

दूसरे किनारे पर आसफखाँ चला। एक हाथी पर दावर बख्श बैठा हुआ था और दूसरे पर वह स्वयं। इस प्रकार उन्होंने युद्ध के लिए कूच किया और दोनों सेनाएं लाहौर से तीन मील की दूरी पर एक-दूसरे के सामने आईं। पहले आक्रमण में ही शहरयार के वेतन भोगी सैनिक रियासत के पुराने और स्वामिभक्त सेवकों का सामना नहीं कर सके और इधर-उधर भाग गए। दो या तीन हजार सवारों के सहित शहरयार लाहौर के पड़ौस में खड़ा हुआ घटनाओं की गति को देख रहा था। तब एक तुर्की दास ने उसको भगदड़ की खबर दी। वह अपनी स्थिति और खतरे को नहीं समझ सका और वापस दुर्ग में घुस गया। इस प्रकार स्वयं उसने ही अपना पैर जाल में डाल दिया। दूसरे दिन अमीर आए और किले के सामने बैठ गए। उसके कुछ सेवकों ने आसफखाँ से भेंट कीं और कुछ शर्तें रक्खीं। आजमखाँ ने रात्रि में दुर्ग में प्रवेश किया और अगले दिन प्रातःकाल दूसरे अमीरों को भी दुर्ग में घुसा लिया। शहरयार ने स्वर्गीय बादशाह के अन्तःपुर में शरण ली परन्तु एक नाजिर उसको बाहर निकाल लाया और दावरबख्श के सामने हाथ-पैर बाँध कर उपस्थित किया। नियमानुसार सलाम करने के बाद उसे कैद में डाल दिया और दो तीन दिन बाद उसकी आँखें फोड़ दी गईं। शहजादा दानियाल के पुत्र ताहमुरास और हुशंग भी पकड़ कर कैद में डाल दिए गए। आसफखाँ ने शाहजहाँ को इस विजय की खबर दी।

संदेशवाहक बनारसी कश्मीर के पर्वतों में स्थित जंगजहटी से रवाना होकर बीस दिन में 19 रबी-उल-अव्वल 1037 हिजरी को निजाम-उल-मुल्क की सीमा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पर जुनीर पहुंचा। हरकारा सीधा महावतखां के निवास पर गया जिससे शाहजहाँ अभी हाल ही में मिला था। महावतखाँ ने शहजादे के निजी निवास में कहला भेजा तो उसने बाहर आकर आसफखाँ की अँगूठी प्राप्त की। शोक मनाकर और आवश्यक क्रियाएँ करके उसने 23 रवी-उल-अव्वल को यात्रा शुरू की और गुजरात के रास्ते से चला।

निमाज-उल-मुल्क से सन्धि हो जाने के वाद और बालाघाट का प्रदेश समर्पित होने पर बहुत से जागीरदार और अमीर खानजहाँ को बुरहानपुर जाकर मिले, अहमदनगर में सिपहदारखाँ ने निजाम-उल-मुल्क के हाकिमों के कहने से खानजहाँ का हुक्म नहीं माना और यह प्रण कर लिया कि शाही आदेश के विना वह दुर्ग समर्पित नहीं करेगा चाहे उसका सिर चला जाय। दरया रोहिला और दूसरे लोग बुरहानाबाद में खानजहाँ से आकर मिले। तव उसने माँडू की ओर कूच किया और मालवा के कई हिस्सों पर अपना अधिकार कर लिया और इसके वाद वह बुरहानपुर लौट गया।

शाहजहाँ ने यामिन-उद्दौला आसफखाँ को फरमान भेजा कि यह अच्छा होगा कि खुसरु के पुत्र दावरवख्श को और निकम्मे भाई शहरयार को और शहजादे दानियाल के पुत्रों को इस संसार से रवाना कर दिया जाय। तव जुमाद-उल-अव्वल 1037 हिजरी को जहाँगीर के शासनकाल के पच्चीसवें वर्ष की 10 बहमन को सब लोगों की सम्मति से शाहजहाँ को लाहौर में वादशाह घोषित किया गया और उसके नाम का खुतुबा पढ़ा गया। दावरवक्श को शाहजहाँ के सहायकों ने केवल इसलिए बादशाह वना दिया था कि गड़वड़ न मचे। अब उसको भी कैद में डाल दिया गया। 26 जुमाद-उल-अव्वल को दावर, उसके भाई गरशास्प, शहरयार और शहजादे दानियाल के पुत्र तहमुरास और होशंग सबका बध करवा दिया गया।

राणा की सीमा पर पहुंचने पर राणा करण कोकन्दा में शाहजहाँ के पास उपस्थित हुआ। उसने और उसके पिता राणा अमरसिंह ने वड़ी राजभक्ति प्रदर्शित की थी। उसने अपना खिराज दिया और उसे वड़ी अच्छी-अच्छी भेंटें और सम्मान प्राप्त हुए। नए वादशाह ने अव अपना अड़तीसवाँ सौर जन्म-दिन मनाया। 19 जुमाद-उल-अव्वल को वह अजमेर पहुंचा और अपने महापूर्वज के दस्तूर के अनुसार उसने सन्तों की कब्रों की पैदल यात्रा की। सेनापति महावतखाँ को अजमेर जागीर में मिला। 26 जुमाद-उल-अव्वल को शाहजहाँ आगरे पहुंचा और बाहर वाग में उसके डेरे लगे। अगले दिन उसने नगर में प्रवेश किया और सब लोगों ने उसे बादशाह मान लिया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मआसिर-ए-जहाँगीरी

लेखक : कामगारखां

ग्लेडविन ने ख्वाजा कामगार गैरतखाँ के ग्रन्थ का यह नाम रखा है। ग्लेड-विन ने अपनी "हिस्ट्री आफ जहाँगीर" नामक पुस्तक में जो सन् 1788 में कलकत्ते में प्रकाशित हुई थी इस ग्रन्थ से खूब उद्धरण लिए हैं। उसने लेखक का नाम कामगार हुसैनी लिखा है—"क्रिटिकल ऐसेज आन वेरियस मेनुस्क्रिप्ट वर्क्स" का लेखक और जेम्स फ्रेजर अपने संक्षिप्त मुगल इतिहास में, जो उसी द्वारा लिखी हुई नादिरशाह की जीवनी की भूमिका है, इस ग्रन्थ का नाम मासिर-ए-जहाँगीरी लिखता है। मुहम्मद ताहिर इनायतखाँ ने हिस्ट्री आफ शाहजहाँ लिखी है जिसकी भूमिका में वह लिखता है कि कामगारखाँ स्वयं भी उसको मासिर-ए-जहाँगीरी ही कहता है। परन्तु लेखक ने अपने ग्रन्थ का कोई नाम नहीं लिखा है। हिन्दुस्तानी इतिहास-कार जैसे मआसिर-उल-उमरा और मुन्तख्वाब-उल-लुबाव में इसका केवल जहाँगीर-नामा के नाम से ही उल्लेख करते हैं।

ख्वाजा कामगार कहता है कि बादशाह की आत्म-जीवनी पूरी न होने के परिणामस्वरूप वह बहुत समय से विचार कर रहा था कि पूरी जीवनी लिखकर इन त्रुटियों को पूरी कर दे। बादशाह शाहजहाँ के शासन के तीसरे वर्ष में उसको यह कार्य करने के लिए प्रेरित किया गया। ख्वाजा कामगार सरदारखाँ का पुत्र था जो जहाँगीर के शासन के चौदहवें वर्ष में दरबार में आया था। उसे मुंगेर में हाजीपुर की जागीर प्रदान की गई थी और बिहार के कुछ परगने भी मिले थे। वह अब्दुल्लाखाँ बहादुर फिरोज के भाई का पुत्र था और शाहजहाँ के शासन के तृतीय वर्ष में उसको एक हजार जात और चार सौ सवार का मनसब दिया गया था। उसने खानजहाँ लोदी का पीछा करने में बड़ी लगन से कार्य किया था। इसके शासन के चतुर्थ वर्ष में उसको और भी बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ था।

दक्खिन में विद्रोह करने के पश्चात् खानजहाँ अपने साथियों की पराजय से और उस देश में भयंकर रूप में फैले हुए रोग और दुर्भिक्ष से दब गया। इसलिए उसने पेशावर के अफगानों की शरण लेने का निश्चय किया। उत्तर-पूर्व की सब जातियाँ उस समय सशस्त्र विद्रोह कर रही थीं। इस उद्देश्य से उसने गुजरात की सीमा के समीप नर्बदा को पार करके मालवे में होकर बुन्देलखंड में प्रयाण किया। वहाँ विद्रोह की भावना को जाग्रत करने की उसे आशा थी। परन्तु वहाँ का राजा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसके विरुद्ध हो गया और उसके मित्र दरयाखां के नेतृत्व में जो सेना पीछे आ रही थी, उसको मुख्य सेना से पृथक कर दिया।

उसके चाचा अब्दुल्लाखां के साथ-साथ ख्वाजा कामगार ने एक सेना के साथ उसका पीछा किया। इस सेना में मुख्यतः सईद लोग थे और सैयद मुजफ्फरखां बारहा उनका अध्यक्ष था। पीछा ऐसी तेजी के साथ किया गया कि भागने वालों को कई बार बाध्य होकर शाही सैनिकों का सामना करके लड़ाई में अपने भाग्य की परीक्षा करनी पड़ी। खानजहां ने बलपूर्वक कालिंजर में प्रवेश करने का प्रयत्न किया परन्तु उसके पुत्र और कई सेवकों के मारे जाने पर उसको यह उद्देश्य त्यागना पड़ा।

जब वह कालिंजर से लगभग चालीस मील दूर था तो उसने 1 रजब 1040 हिजरी को प्राणपण से एक लड़ाई लड़ने का साहस किया जिसमें उसके और उसके साथियों के एक अग्रसेना भाग ने टुकड़े-टुकड़े कर डाले। यह सेना बूंदी के हाड़ा नरेश के पुत्र माधोसिंह के नेतृत्व में थी। खानजहां को अब्दुल्लाखां और मुजफ्फरखां के आने से पहले ही मार डाला गया।

घटनास्थल पर पहुंचने पर अब्दुल्लाखां ने ख्वाजा कामगार के हाथ खानजहां, उसके पुत्र अजीज और इस्माइलखां के सिर बादशाह के पास भेजे। जब कामगार दरबार में पहुंचा तो बादशाह ताप्ती नदी पर शिकार कर रहा था। इस खबर से बादशाह को असीम हर्ष हुआ और उसने ख्वाजा को एक सम्मानसूचक खिलत और गैरतखां की उपाधि प्रदान की और उसके मनसब में पाँच सौ जात और दो सौ सवार की वृद्धि की। ख्वाजा की बुद्धि परिपक्व थी और उसे बड़ा अनुभव था। उसकी सेवा भी बड़ी लम्बी थी और उसकी परीक्षा हो चुकी थी। इसलिए थोड़े दिन बाद ही उसे और भी अधिक उन्नत सम्मान प्राप्त हुआ।

शासन के दसवें वर्ष में ख्वाजा की पदोन्नति हुई और उसे दिल्ली का हाकिम नियुक्त किया गया। इस स्थान पर पहले असालतखां था। उसको पदच्युत करके यह स्थान ख्वाजा को दिया गया था। इसके अतिरिक्त उसे 2500 जात और 2000 सवार का मनसब प्रदान किया गया।

शासन के बारहवें वर्ष में दिल्ली नहर का निरीक्षण और शाहजहानाबाद नहर की स्थापना उसके सुपुर्द की गई।

9 मोहर्रम 1049 हिजरी को प्रथम योजना बदल दी गई और उसके स्थान पर एक नई योजना बनी। इसकी स्थापना ख्वाजा ने की। इसके लिए उसने अच्छी सामग्री एकत्र करली थी और यह उस थोड़े से समय में की थी जब वह दिल्ली में था। जब वह ठट्ठा का सूबेदार था और तीन हजार का मनसबदार था तो उसे यह काम छोड़कर अपने नये काम पर जाना पड़ा था। इस काम को शुरू किए हुए उसे बहुत समय नहीं हुआ था कि वह अपने प्रशासन स्थान पर ही 1050 हिजरी (1640-41 ई०) को संसार से चल बसा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मआसिर-ए-जहाँगीरी कई प्रकरणों में विभक्त है जो शासन के विभिन्न वर्षों में लिखे गए थे। इनके अतिरिक्त और कोई शीर्षक नहीं है। "क्रिटिकल ऐसेज' का लेखक लिखता है कि इसमें छोटी-छोटी बातों का विवरण नहीं है और इस विषय में यह ग्रन्थ इकबालनामा से मिलता-जुलता है। इस जिल्द के षडांश में जहाँगीर के उन कार्यों का वर्णन है जो उसने सिंहासन पर बैठने से पहले किए थे। इसके विषय में शाहनवाजखाँ का कहना है कि इसका ढंग बड़ा स्वतन्त्र और स्पष्ट है और इकबालनामा से तुलना करने पर यह अच्छा लगता है। इकबालनामा शाही अनुग्रह की प्राप्ति के लिए लिखा गया था परन्तु निम्नलिखित अवतरणों में जिस ढंग से अबुलफजल की मृत्यु का वर्णन किया गया है, उसको देखते हुए इस प्रशंसा की पुष्टि नहीं होती। घटना को तो स्वीकार किया गया है परन्तु इस कार्य की और अपकीर्ति को छिपाने के लिए प्रत्येक प्रकार की दरबारी चापलूसी और लीपापोती की गई है।

(सर एच० एम० ईलियट की हस्तलिखित प्रति में 382 पृष्ठ हैं और एक पृष्ठ पर ग्यारह पंक्तियाँ हैं।)

अवतरण

जब शहंशाह राज्याभिषेक के पूर्व इलाहाबाद में निवास कर रहा था तो कुछ राजद्रोही और उत्पाती लोगों का दल जिनको बादशाह अकबर के दरबार में बोलने का अधिकार था, प्रायः झूठे संवाद खुले तौर पर और द्वेश भावना से शाही ताज के अलंकार शहजादा सलीम के विरुद्ध फैलाया करते थे। कभी वे कहते थे कि उसने अपने सेवकों को खान और सुलतान की उपाधियाँ दे दी हैं और कभी कहते थे कि उसने अपने नाम के सिक्के चला दिए हैं। इस प्रकार के आरोपों से वे बादशाह के भय को उभारने का यत्न किया करते थे परन्तु बादशाह का मन बड़ा नेक और प्रकाशमान था। इसलिए इस प्रकार के लांछनों से वह प्रभावित नहीं हुआ करता था। वास्तव में पिता-पुत्र में प्रेम का ऐसा अच्छा बन्धन था जैसा जैकब और उसके पुत्र जोसफ में था।

उन दिनों की एक घटना शेख अबुलफजल की हत्या थी। यह अपनी उच्च बुद्धि और विस्तृत विद्वत्ता के कारण हिन्दुस्तान के शेखों में सबसे अधिक प्रसिद्ध था। इस घटना का विवरण इस प्रकार है—"यह शेख अपने भाग्य के मद से उन्नत हो गया। बादशाह पर इसका बड़ा प्रभाव था, जिससे उसमें बड़ा दम्भ था। यह अपना विवेक खो बैठा था। इसके हाथ से बुद्धि का सूत्र और आत्म-ज्ञान खिसक चुका था। उसको अपने पद का बड़ा अभिमान था और वह अपने स्वामी के पुत्र के प्रति द्वेश और शत्रुता का व्यवहार करता था। वह गुप्त रूप से और खुले तौर पर भी बादशाह से कहा करता था कि बादशाह के अतिरिक्त वह किसी को नहीं जानता और वह किसी की, यहाँ तक कि सबसे बड़े शहजादे की भी चाटुकारिता नहीं करेगा। इस विषय में उसने अपनी भावुकता के विषय में बादशाह को पूरा विश्वास करा दिया था। उन दिनों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में जब शहजादा इलाहाबाद में था तो कुछ प्रपंची लोग ऐसी बातें किया करते थे जिससे उसके विरुद्ध बादशाह की अप्रसन्नता और उत्तेजित हुआ करती थी। यदि कभी कोई दरबार का अमीर कोई कारण बतलाता या शहजादे के पक्ष में कोई बात कहता तो बादशाह समझता था कि ये लोग उसके प्रति दुर्भावना रखते हैं या शहजादा का पक्षपात करते हैं। सब कुछ सुनकर भी बादशाह समझता था कि शेख उसका मित्र है और शहजादा के प्रति भी उसकी सद्भावना है। इसलिए उसको एक फरमान भेजकर आदेश दिया गया कि वह अपने पुत्र को दक्षिण सेना के साथ छोड़कर अकेला ही दरबार में आवे।

शहजादा दूरदर्शिता और बुद्धि का स्वामी था। उसे यह समाचार मिला कि यदि शेख दरबार में पहुंच गया तो वह झूठी बातें कहकर बादशाह के मन में शहजादे के प्रति बुरे विचार उत्पन्न कर देगा। शहजादे ने यह भी सोचा कि जब तक शेख दरबार में रहेगा तब तक उसका वहाँ प्रवेश न होगा और उसको पूर्ण आनन्द से वंचित कर दिया जायगा। इस स्थिति में यह आवश्यक था कि विपत्ति को आने से पहले ही रोका जाय। जब शहजादे ने देख लिया कि इस सबका इलाज यह है कि शेख को नष्ट कर दिया जाय तो उसने राजा बुधकर के पुत्र राजा नृसिंह देव को बुलाया। इसी राजा के राज्य में होकर शेख का रास्ता था और यह राजा तख्त का एक सेवक था। शहजादे ने उससे कहा कि शेख दरबार में जाने वाला है और उसके साथ सेवक या सेना न होगी। यदि राजा उसका अस्तित्त्व मिटा दें तो उसे बड़े अनुग्रह और पुरस्कार प्राप्त होंगे। राजा ने स्वेच्छा से यह कार्य अपने हाथ में ले लिया और शीघ्रता से उस दिशा में कूच किया। जब शेख उसके राज्य में होकर जा रहा था तो दैवी शक्ति की सहायता से उसने शीघ्र ही उसका रास्ता रोक दिया। थोड़ी सी मुठभेड़ के पश्चात् शेख के सेवक छिन्न-भिन्न हो गए और वह स्वयं मारा गया। तब उसका सिर एक विश्वस्त नौकर के हाथ इलाहाबाद भेजा गया जिसने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। इस घटना के कारण लोगों के मन में बड़ा भय और त्रास उत्पन्न हो गया। यद्यपि इससे बादशाह को बहुत ही क्रोध हुआ तो भी नृसिंहदेव के कार्य की वजह से ही शहजादा निर्भय होकर अपने पिता के पास जा सका और थोड़े समय में ही बादशाह का दुःख शान्त हो गया और वह शहजादे से कृपापूर्वक मिला।

शासन का इक्कीसवाँ वर्ष

[जब शहजादा शाहजहाँ ने महावतखाँ की विद्रोही कार्यवाहियों का समाचार सुना तो उसने निश्चय किया कि यद्यपि वह युद्ध के लिए तैयार नहीं है और उसका स्वास्थ्य भी अच्छा नहीं है तो भी वह तुरन्त ही अपने पिता के पास जायगा। उसने अपनी योजना खानजहाँ और राजा नृसिहदेव को सुनाई और उसकी सहायता प्राप्त करने का यत्न किया परन्तु उन्होंने उसके प्रस्ताव स्वीकार नहीं किये और बहाने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बना दिये। शहजादे ने ईश्वर पर भरोसा करके नासिक से एक छोटी-सी सेना लेकर प्रयाण किया। उसको यह विश्वास था कि मार्ग में उसको सहायता मिल जायगी और वह सेना एकत्र कर लेगा। यद्यपि शहजादा परवेज समस्त शाही सेना के सहित बुरहानपुर में था तथापि वह चाँदा की घाटी में होकर चला गया। बुरहानपुर से बीस कोस दूर जाकर उसने नर्वदा नदी को मांडू के इलाके में पार किया। अजमेर पहुँचने पर राजा भीम का पुत्र राजा किशनसिंह, जो पाँच सौ सवारों के साथ नासिक से उसके साथ था, बीमार होकर मर गया। तब उसके अनुचर इधर-उधर चल दिए। शहजादे के पास अब केवल चार पाँच सौ आदमी रह गए। इतनी छोटी-सी सेना के साथ अब उसकी बादशाह के पास जाने की योजना पूरी होना असम्भव था। तब उसको यह ध्यान आया कि वह ठट्ठा जाय जो एक दूर कोने में है और वहाँ कुछ समय के लिए धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करे। वह अजमेर से नागौर और वहाँ से जोधपुर गया। फिर जोधपुर से वह उसी रास्ते से जिससे तख्त छोड़ने के बाद बादशाह हुमायूँ भाग कर सिन्ध गया था, ठट्ठा की ओर चला। रास्ते में बड़ी गर्मी थी और पानी का अभाव था। इसलिए यात्रा में बड़ा कष्ट हुआ। जब वह ठट्ठा के मुल्क में पहुँचा तो शरीफ मुल्क ने, जो शहजादा शहरयार के लिए इस स्थान पर कब्जा किए हुये था दुर्ग की रक्षा की तैयारी के लिए भरसक प्रयत्न किया और शहजादे की योजना विफल हो गई। उसको ऐसे विघ्नों का सामना करना पड़ा जिनके वर्णन करने से विस्तार हो जायगा। उस पर अपनी विफलता का बड़ा प्रभाव पड़ा और उसके अत्यन्त स्वामिभक्त सेवक आहत हो गए। ठीक इसी समय उसे नूरजहाँ का पत्र मिला जिसमें लिखा था कि उसकी कूच से महाबतखाँ भयभीत हो गया है और उसकी सेना तितर-बितर हो गई है। इसलिए अच्छा होगा कि शहजादा वापस दक्षिण को लौटकर भाग्य परिवर्तन की प्रतीक्षा करे। बेगम की सलाह शहजादा को अच्छी मालूम पड़ी। इसलिए उसने गुजरात के मार्ग से दक्षिण लौटने का निश्चय कर लिया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इन्तिखाब-ए-जहाँगीरशाही

यह उस पुस्तक का नाम है जिसके कुछ अवतरण बारह वर्ष के संस्मरणों के अन्त में दिए हुए हैं जो मेरे पास है। इन अवतरणों में केवल 41 पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठ पर तेरह पंक्तियाँ हैं और प्रत्यक्षत: ये किसी बड़े ग्रन्थ में से लिए हुए हैं, क्योंकि इसी जिल्द के दूसरे स्थान पर लेखक लिखता है कि उसने विक्रमाजीत का और बंगाल में उस्मान का हाल विस्तारपूर्वक लिखा है। यह वृत्तान्त इन अवतरणों में नहीं मिलता।

शायद यह वही पुस्तक हो जिसका सर डब्लू० ऊजिले के सूची-पत्र में नं० 345 पर उल्लेख है और वहाँ इसका नाम 'हिस्टोरिकल ऐनिकडोट्स ऑफ जहाँगीरी' लिखा हुआ है। परन्तु न तो कहीं संकलनकर्त्ता का नाम है और न कहीं संस्मरणों का ही नाम दिया हुआ है।

यह प्रत्यक्ष है कि इन्तिखाब का लेखक जहाँगीर का समकालीन और साथी था क्योंकि वह स्यालकोट निवासी एक धार्मिक जोशीले साधु शेख दूला से अपनी भेंट का उल्लेख करता है। इस साधु ने जहाँगीर का ध्यान आकर्षित किया था। उसने भिखारियों के निर्वाह के लिए बहुत रुपया खर्च किया था और इसी प्रकार मस्जिदों और कब्रों की मरम्मत कराने और नए भवन बनाने पर भी वह खर्च करता था। पंजाब में 'नये गुजरात' में उसने एक ऐसा भवन बनवाया था जिसमें पन्द्रह हजार रुपए से कम खर्च नहीं हुआ होगा और यह सब कुछ काम करने के लिए उसके पास कोई साधन भी नहीं दीखते थे, क्योंकि लोग केवल गुड़ या शक्कर ही उसको भेंट किया करते थे। इन बातों से लोग और बादशाह भी उसको मानने लग गए थे। दूसरे स्थान पर लेखक ने लिखा है कि जब शाह अब्बास ने इस्फहान से जहाँगीर के नाम एक शिष्टता का पत्र लेकर अपना राजदूत भेजा तो उस समय बादशाह अजमेर में था। इस पत्र के उत्तर में बादशाह जहाँगीर ने एक शेर (छन्द) भी बीच में लिखा था जिसका आशय यह था कि 'यद्यपि दिया गया स्पष्टीकरण सत्य नहीं है परन्तु यह बहुत सम्भव प्रतीत होता है इसलिए आनन्ददायक है।'

परन्तु बादशाह के संस्मरणों में इसका कोई हवाला नहीं है

ऐसा मालूम नहीं होता कि इस पुस्तक में बादशाह का इतिहास जारी रखा गया है। यह केवल किस्से-कहानियों का संग्रह है जिनमें से अधिकांश जहाँगीर के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उन इतिहासों में से ली हुई हैं जिनका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है, परन्तु लेखक हमको ऐसी भी जानकारी देता है जो उन पुस्तकों में नहीं मिलती। यदि यह पूरी हस्तलिखित प्रति मिल जाए तो उसको खोजने का प्रयास उचित होगा।

तबकात-ए-शाहजहानी का लेखक एक पुस्तक का जिक्र करता है जो शेख अब्दुल बहाब ने लिखी थी और जिसका नाम अखलाक-ए-जहाँगीरी था। सम्भव है कि यह वही पुस्तक हो जिसका हम वर्णन कर रहे हैं क्योंकि इसमें दी हुई कहानियाँ ऐसी हैं जिनको इस शीर्षक के नीचे लिखा जा सकता है। ऐसा बतलाया गया है कि शेख गद्य और पद्य दोनों का बड़ा परिष्कृत लेखक था। उसकी मृत्यु 1032 हिजरी (1622–23 ई०) में हुई।

निम्नलिखित अवतरणों का अनुवाद एक मुंशी ने किया है और सर एच० एम० ईलियट ने उसका संशोधन किया है।

अवतरण

चार या पाँच आदमी इसलिए नियुक्त किए गए थे कि उनके द्वारा भूमि और धन लोगों में विभक्त किया जाए। अजमतखाँ को दक्खिन के लोगों का, शेख मुइनुद्दीन राजगिर निवासी को बंगाल के लोगों का, शेख सिकन्दर गुजराती को गुजरात के लोगों का और काबुल निवासी काजी असलम को रस प्रान्त के लोगों का परिचय करवाने के लिए रखा गया था। सैयद अहमद कादरी ने उन लोगों को बादशाह के सामने उपस्थित किया जो लाहौर, दिल्ली और इनके आस-पास के इलाकों से आए थे। दारोगा फीलखाना शुजातखाँ ने महावत लोग हाजिर किए। यह आदेश दिया गया कि यदि किसी आदमी को कोई योग्य व्यक्ति मिले तो उसको बादशाह के सामने उपस्थित करने में उपेक्षा नहीं की जावे। हाजी कोका बेगम अन्तःपुर के मामलों का निरीक्षण करती थी। अब उसको आदेश दिया गया कि अपने कर्तव्य का पालन और भी अधिक परिश्रम से करे। कुछ दिन बाद कर-मुक्त भूमि के लिए इतने प्रार्थी आने लगे कि सल्तनत के कुछ मंत्रियों ने अवसर देखकर निवेदन किया कि यदि बादशाह की उदारता और भी आगे बढ़ी तो कुछ वर्ष में ऐसी भूमि कोई नहीं बचेगी जिसमें रियासत को भूमि-कर प्राप्त हो। बादशाह ने उत्तर दिया कि यह प्रार्थी लोग इसके लिए ईश्वर से प्रार्थना करने वालों की सेना है। इसलिए विरोध करने वाले शाही मन्त्रियों को चाहिए कि वे इस सेना की वृद्धि करने का प्रयास करें। ईश्वर से प्रार्थना है कि इस उदार बादशाह के जीवन की धारा कालान्तर तक चलती रहे। भिखारियों के प्रति अन्य कोई बादशाह इतना कृपालु और उदार नहीं था जितना जहाँगीर है। यह विवरण लिखने में मेरा उद्देश्य यह प्रकट करना है कि यद्यपि बादशाह और भिखारी की कोई तुलना नहीं हो सकती, तथापि बादशाह का सारा ध्यान ऐसी बातों की ओर था जिनसे लोगों के हृदय प्रसन्न हों।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुलतान खुसरु ने भागते हुए रास्ते में जिन लोगों को लूटा था, उनमें से प्रत्येक की बादशाह ने क्षतिपूर्ति की। जैसे सुलतान ने अपने हाथ से बादशाह के नाम यह लिखकर दिया था कि एक व्यक्ति के घोड़े लूट लिए गए हैं। बादशाह ने उसकी माँग पूरी कर दी। शहजादा स्वयं कहा करता था कि जब वह भाग रहा था तो एक दिन थक कर उसे जंगल में मुर्दे की भाँति जमीन पर लेटना पड़ा। उसके साथ के लोगों ने उसकी ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। उसके घोड़े भी जमीन पर पड़े हुए थे और कोई उनकी परवाह नहीं कर रहा था। कुछ समय बाद एक गीदड़ ने आकर उसका पैर पकड़ लिया। परन्तु उसके जूते के कारण उसे चोट नहीं आई। बादशाह ने आदेश दिया कि शहजादा खुसरु को अन्धा कर दिया जाय। जब उसकी आँखों में तार डाला गया तो उसे ऐसी वेदना हुई कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। अन्धा करके शहजादे को आगरा लाया गया तो पितृ-प्रेम पुनः जागृत हो गया और बड़े-बड़े अनुभवी हकीमों को आदेश हुआ कि शहजादे की आँखों का इलाज किया जाए, जिससे वह वैसी ही हो जायँ जैसी पहले थीं। तब ईरान के हकीम सदरा ने कहा कि वह छः महीने में शहजादे की आँखें ठीक कर देगा। उसकी निपुणता से शहजादे की एक आँख में तो पूर्ववत ज्योति आ गई परन्तु दूसरी में किंचित त्रुटि रह गई और वह पहले की अपेक्षा कुछ छोटी भी हो गई। निश्चित समय के बाद शहजादे को बादशाह के सामने प्रस्तुत किया गया तो उसने हकीम पर बड़ा अनुग्रह किया और उसको मसीह-उज-जमा की उपाधि से सम्मानित किया गया। बादशाह तीन साल और कुछ मास अजमेर में ठहरा। इस अवधि में प्रजा के सुख और शान्ति के लिए उसने कुछ नियम बनाये और सप्ताह में एक दिन एक विशेष कार्य के लिए रखा। उस दिन और कोई अन्य कार्य नहीं किया जाता था। बृहस्पतिवार के दिन त्यौहार मनाया जाता था। बादशाह ने इस दिन का नाम मुबारक शंबा रखा था। उस दिन आमोद-प्रमोद और बाग की सैर और लोगों की पदोन्नतियाँ करने के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य नहीं किया जाता था। शुक्रवार के लिए यह आदेश था कि इस्लाम धर्म को नियमपूर्वक और निरन्तर मानने वाले लगभग एक हजार आदमी बादशाह के सामने बुलाये जायँ और ऐसे अकिंचन लोगों के उपयुक्त सब प्रकार का भोजन उन्हें इतना दिया जाय कि सब सन्तुष्ट हो जाएँ। बादशाह का स्वभाव बहुत अच्छा था। जब ये लोग खाना खाते थे तो वह सदा यह आदेश देता था कि उन्हें दही भी खिलाया जाय जिससे वे अधिक खा सकें और इस संसार के रचयिता की पूजा करने में उनका ध्यान अधिक लग सके। इन दावतों में खाना खाने का असंख्य लोगों को सौभाग्य प्राप्त होता था। शनिवार के दिन बादशाह हाथियों की और तलवार वालों की लड़ाइयाँ देखा करता था। उस दिन जो लोग हाथियों की लड़ाई देखते हुए दृढ़तापूर्वक अपने-अपने स्थान पर खड़े रहते थे उनके नाम अमीरों में लिख लिए जाते थे। रविवार के दिन बहुत से लूले, लँगड़े, अन्धे और अंगहीन लोग झरोखे के नीचे एकत्र किये जाते थे और बादशाह जहाँगीर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अपने हाथ से उनको बहुत सा रुपया दान देता था इसके बाद वह अपने एक दरबारी को आदेश देता था कि गिन कर बतलाया जावे कि प्रत्येक आदमी को कितना रुपया मिला और यह ईश्वर की आश्चर्यजनक करामात थी कि अन्य लोगों की अपेक्षा अन्धों को अधिक मिलता था। बुद्धिमान बादशाह को इस पर आश्चर्य होता था और वह अपने सेवकों से कहा करता था कि अन्धे लोग ईश्वर की उदारता पर ही आश्रित रहते हैं। यही कारण है कि उनको अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक मिलता है। सोमवार के दिन यह आदेश होता था कि युवक अमीरों और सेना अधिकारियों का एक दल तीरन्दाजी का अभ्यास करे। कुछ अमीरों को चौगान खेलने का हुक्म दिया जाता था। उस दिन की भेंटें बेहिसाब होती थीं और वे हाफिज नादी-ए-अली को दे दी जाती थीं। मंगलवार को चीते हिरनों का और कुत्ते लोमड़ियों और खरगोशों का शिकार करते थे। ऐसे खरगोश और लोमड़ियों को जो इस शिकार में नहीं फंसते थे, जंगल में ले जाकर छोड़ दिया जाता था। इसी दिन हाथियों की दूसरे पशुओं के साथ लड़ाई होती थी और अपराधियों को फांसी लगती थी। बादशाह को बुधवार का दिन पसन्द नहीं था। इसी दिन बादशाह अकबर की मृत्यु हुई थी और शाहजहाँ की पुत्री जिसको जहाँगीर ने ही पाला था और जिसे वह अपने प्राणों के समान समझता था, अजमेर में बुधवार के दिन ही मरी थी। इसलिए बादशाह ने इस दिन का नाम कमशंबा रखा था। जिन लोगों के प्रति बादशाह क्रुद्ध होता था उन्हें इसी दिन कैद में भेजा जाता था या पीड़ा पहुँचाई जाती थी। सप्ताह के सभी दिनों पर बादशाह अपनी इच्छाओं की पूर्ति करता रहता था। दोपहर से मध्य रात्रि तक वह अपनी प्रजा की प्रार्थनाएँ स्वीकार करने में लगा रहता था।

शहरयार तमाम शहजादों में सबसे अधिक सुन्दर था। उसकी आंखों में पीड़ा हुई तो मुकर्रबखाँ को उसकी चिकित्सा करने का आदेश दिया गया। उसने कई उपयुक्त उपाय किये और उसका परिश्रम सफल हुआ। जब उसका इलाज हो गया तो बादशाह ने मुकर्रबखाँ से शहजादे के स्वास्थ्य के विषय में पूछा। खान ने उत्तर दिया कि उसकी आँखें बिल्कुल ठीक हैं। तब बादशाह ने कहा—"हाँ, यदि उसके भाइयों ने उसे नेत्र-ज्योति से वंचित नहीं किया तो उसकी आँखें ठीक रहेंगी।" सर्व शक्तिमान ईश्वर ने बादशाह जहाँगीर को बाह्य और आन्तरिक सब गुणों से अलंकृत किया था और उसे अपने ज्ञान का प्रकाश प्रदान किया था। प्रायः जैसी वह भविष्यवाणी करता था, वैसी ही परिस्थिति उपस्थित हो जाया करती थी।

एक दिन अहमदाबाद में बादशाह के पास यह समाचार आया कि बहुत से काफिर और अंधविश्वासी लोगों ने, जो गुजरात में सेवड़ा कहलाते हैं, कई बड़े-बडे भव्य मन्दिर बनाकर उनमें झूठे देवता स्थापित कर दिए हैं और उनके प्रति लोगों में श्रद्धा उत्पन्न कर दी है तथा जो स्त्रियां इन मन्दिरों में पूजा करने जाती हैं उन्हें ये लोग भ्रष्ट करते हैं। सेवड़ा एक सम्प्रदाय है जिनके धर्म में नंगे सिर और नंगे पैर रहना पूजा विधि मानी जाती है। गर्म जल पीना और सिर और दाढ़ी के बाल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उखाड़ना पुण्य कार्य माना जाता है। ये लोग लंगोटी के अतिरिक्त और कोई पोशाक नहीं पहनते हैं। बादशाह जहाँगीर ने आदेश दिया कि इन्हें देश से निकाल दिया जाय और उनके मन्दिर नष्ट कर दिए जायें। उनकी मूर्तियों को मस्जिद की सबसे ऊँची सीढ़ी पर डाल दिया गया ताकि जो लोग नमाज पढ़ने के लिए आएँ तो उन्हें कुचलते हुए जाएं। बादशाह के इस आदेश से काफिर लोगों का महान अपमान हुआ और इस्लाम ऊँचा हो गया।

इस समय नूरजहाँ बेगम का प्रभाव इतना बढ़ गया था कि साम्राज्य का समस्त शासन उसके हाथों में आ चुका था। इसलिए महावतखाँ ने निम्नलिखित निवेदन करना उचित समझा। "बादशाह को और सारे संसार को यह सर्व भाँति विदित है कि इस सेवक महावतखाँ की परवरिश बादशाह ने ही की है और इसको किसी अन्य व्यक्ति से कोई सरोकार नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि महावतखाँ बादशाह की कृपा पर बहुत भरोसा करता है। इसलिए अब वह सचाई और वफादारी से और बादशाह के यशस्वी नाम के लिए निवेदन करता है। बादशाह ने यदि प्राचीन बादशाहों का इतिहास पढ़ा है तो उसे मालूम होगा कि ऐसा कोई बादशाह नहीं हुआ जो अपनी बीवी की इच्छा के इतना अधीन हो। संसार को इस बात पर आश्चर्य है कि जहाँगीर जैसा बुद्धिमान बादशाह एक स्त्री से इतना अधिक प्रभावित हो गया है। आजकल के बादशाहों को रहने दीजिए। परन्तु सोचिए कि "भविष्य के बादशाह क्या कहेंगे।" उसने इसी प्रकार के भाव अनेक बार प्रकट किये और इनकी पुष्टि में ऐसी दलीलें दीं जो अकाट्य थीं। उसने यह भी कहा कि उसकी सम्मति में अब खुसरु को कैद से मुक्त कर देना और उसे तख्त के किसी विश्वस्त सेवक के सुपुर्द कर देना ठीक होगा। उसने बादशाह से यह भी कहा कि आपको स्मरण होगा कि इस सेवक महावतखाँ ने ही अपने हाथ से शहजादे की आँखें फोड़ी थीं और इसने ही उसे कैद करवाया था। अब बादशाह को विचार करना चाहिए कि स्थिति ने नया रूप धारण कर लिया है। अब बादशाह की सुरक्षा और देश की शान्ति शहजादे के जीवन पर आश्रित है। इस पर बादशाह ने दूसरे अमीरों को शपथ देकर उसके कथन की पुष्टि करवाई और खानजहाँ तथा खान-ए-आलम दोनों ने महावत की बात की पुष्टि की। अगले दिन बादशाह ने आदेश दिया कि शहजादे को खानजहाँ के सुपुर्द कर दिया जाय। उसकी शल्य-चिकित्सा की जाय और उसे सलाम करने के लिए आने दिया जाय तथा सवारी के लिए एक घोड़ा दिया जाय।" महावत के इस निवेदन पर बादशाह कुछ दिन के लिए बेगम के प्रति कुछ गम्भीरता का व्यवहार करने लगा। जब पखली के डेरे पर खान ने विदा माँगी तो उसने फिर निवेदन किया कि जो कुछ सुझाव उसने दिया है वह स्वामिभक्ति और कृतज्ञता से प्रेरित होकर दिया है। अब बादशाह उसको माने या न माने उसकी इच्छा है। कश्मीर पहुँचने तक बादशाह ने महावतखाँ की सलाह पर किसी अंश तक काम किया परन्तु नूरजहाँ बेगम का उसके मन पर इतना प्रभाव था कि यदि महावतखाँ जैसे दो सौ आदमी भी उससे साथ-साथ यही बात कहते तो भी उनके शब्दों का उस पर कोई स्थायी प्रभाव होने वाला न था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुबह-ए-सादिक

लेखक : सादिक इस्फहानी

यह वृहत् इतिहास प्रसिद्ध सादिक इस्फहानी का लिखा हुआ है और एशिया में इसकी बड़ी ख्याति है।

मोहम्मद सादिक अपने विषय में लिखता है कि "मुझे लड़कपन से ही इतिहास ग्रन्थों को पढ़ने का शौक था और ज्यों-ज्यों मैं पढ़ता था त्यों-त्यों उनका सारांश लिखा करता था। मैंने अपने जीवन का एक अंश इस ग्रन्थ की रचना में लगाया। मुझे आशा है कि यह ग्रन्थ बादशाहों के लिए बुद्धिमान मन्त्री का काम देगा और उन्हें सिखायेगा कि प्रजा पर शासन कैसे किया जाय। शत्रु को कैसे जीता जाय, युद्ध या शान्ति के लिए कैसे तैयारी की जाय या इसके अतिरिक्त शासन सम्बन्धी किसी भी काम के लिए क्या किया जाय। जिन सम्पन्न और विद्वान लोगों से बादशाहों को काम पड़ता है उनके लिए भी यह अनुभवी अध्यापक का काम देगा और जो दुनियाँ में काम करते हैं तथा जो विरक्त रहते हैं उन लोगों के लिए भी यह विश्वसनीय मित्र होगा। साथ ही संसार में इसके द्वारा मेरा नाम भी रहेगा। इसीलिए मैंने इसका नाम सुबह-ए-सादिक रखा है।

भाग प्रथम—भूमिका और आठ अध्याय। आदम से पहिले के लोग। पैगम्बर, ईरान के प्राचीन बादशाह, दार्शनिक, मोहम्मद, खलीफे, इमाम, उम्मैद और अब्बासाईद।

भाग द्वितीय—छः अध्याय। प्रथम पाँच अध्याय ईरान के मुसलमान बादशाह, चंगेजखाँ, तैमूर, शफवी, बादशाह रुम, शाम और अन्य स्थानों के बादशाहों के सम्बन्ध में है। छठे अध्याय में शाहजहाँ तक हिन्दुस्तान के बादशाहों का इतिहास है।

भाग तृतीय—बारह अध्याय। प्रथम दस शताब्दियों के प्रसिद्ध पुरुष। बारहवाँ अध्याय स्वयं लेखक के विषय में और उसके कुछ मित्रों के विषय में है।

भाग चतुर्थ—राष्ट्रों, देशों, नगरों, समुद्रों, नदियों, पहाड़ों और टापुओं की अकारादि क्रम से सूची। इस पुस्तक में संसार का भौगोलिक वृत्तान्त है और नगरों के अक्षांश और देशान्तर दिए हैं। विभिन्न देशों की उत्पत्ति, शिष्टाचार और रीति-रिवाज का भी वर्णन है। यह भाग वास्तव में प्रथम तीन भागों की अकारादि क्रम के अनुसार अनुक्रमणिका है। इस पुस्तक में भारत सम्बन्धी प्रकरणों में कोई ऐसी जानकारी नहीं है जो अन्यत्र उपलब्ध न हो।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परिशिष्ट

टिप्पणी—क

भारतवर्ष में बारूद का प्राचीन उपयोग

इस पुस्तक के दो सौ बीस पृष्ठ के आस-पास कहा गया है कि हिन्दू राजा का हाथी नेफ्था की गोलियों के प्रभाव से नियन्त्रण के बाहर हो गया था। इस पर मेजर जनरल ब्रिग्स ने निम्नलिखित टिप्पणी लिखी है :

"मैंने विभिन्न हस्तलिखित प्रतियाँ पढ़ी हैं। उनमें यह सन्दर्भ भिन्न-भिन्न ढंग से लिखा हुआ है। किसी में नुफ्थ (नेफ्था) के स्थान पर तोप और खुदंग (तीर) के स्थान पर तुफंस लिखा हुआ है। परन्तु बारूद के आविष्कार का समय सन् 1317 ई० माना गया है। इससे पहिले किसी ईरानी या अरबी इतिहास में इसका उल्लेख नहीं आता। युद्ध के लिए बारूद का उपयोग सन् 1317 के बहुत समय पश्चात् हुआ था। यह बहुत सम्भव प्रतीत होता है कि बाबर ही ऐसा प्रथम आक्रमणकारी था जिसने सन् 1526 में उत्तर भारत में बड़ी तोपों का प्रथम बार उपयोग किया हो। इसलिए ऐसा जान पड़ता है कि इस पुस्तक की वर्तमान प्रतियाँ बनाने वाले अज्ञानी लोगों ने तोप और तुफंग शब्दों का प्रयोग किया है। इन प्रतियों में आमतौर पर सर्वत्र अशुद्धियाँ हैं। इण्डिया हाऊस की प्रति में जो 1648 में तैयार हुई थी 'तोपों' और "बन्दूकों" शब्दों का उपयोग किया गया है। इस प्रति को तैयार करने वाले ने तो कोई भूल नहीं की, परन्तु यह बात असम्भव है।" विलकन ने तोप और तुफंग पाठ की पुष्टि करते हुए लिखा है कि उसने जो दो प्रतियाँ देखी हैं उनमें ये ही शब्द हैं। इतना ही नहीं उसमें तोप की गर्जन का भी उल्लेख है। उसके विचारानुसार यह असम्भव नहीं है कि महमूद ने यूनानी अग्नि का उपयोग किया हो। डो (Dow) ने भी अपने अनुवाद में स्पष्टत: "तोपें" लिखी हैं।

यह प्रकट नहीं होता कि फरिश्ता के कथन का क्या प्रमाण है। तारीख-ए-यामिनी, रशीदुद्दीन कृत जामी-उल-तवारीख, अबुल फिदा कृत तारीख-ए-गुजिन्दा, तबकात-ए-नासिरी, रोजत उस् सफा, तारीख-ए-अल्फी और तबकात-ए-अकबरी इन सबमें 1008 ई० की हिन्दुओं और मुसलमानों की लड़ाइयों का जिक्र है और तीस हाथियों के छीन लेने का भी उल्लेख है परन्तु इनमें से किसी में नफ्त या तोप का उल्लेख नहीं है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परन्तु इसके दस वर्ष बाद हमें यह उल्लेख मिलता है कि मुलतान के निकट महमूद और झूद की पहाड़ियों के जाटों में जो नौ-युद्ध हुआ उसमें नेफ्था का उपयोग किया गया था। इस अवसर पर महमूद ने 1400 नावें बनवाई थीं और प्रत्येक में लोहे की छः नोकदार कीले लगे हुए थे। ये इसलिए लगाए गए थे कि शत्रु नावों पर न चढ़ सके। प्रत्येक नाव में बीस तीरन्दाज थे और पाँच नेफ्था लोग थे। इनका काम था शत्रुओं की नावों पर आक्रमण करना और उनको आग लगाना। जाटों ने चार हजार नावों के साथ महमूद का सामना किया परन्तु वे हार गए और उनकी बहुत सी नावों पर नेफ्था लोगों ने आग लगा दी।

इसलिए हम इस परिणाम पर पहुंच सकते हैं कि पेशावर के निकट यदि कोई जलने वाली वस्तुओं का उपयोग हुआ होगा तो वे नेफ्था की बनाई गई होंगी और विचाराधीन सन्दर्भों में उन्हें तोप या तुफंग पढ़ना भूल है। इसकी सम्भावना इस बात से और बढ़ जाती है कि जिस देश में ये घटनाएँ हुई थीं वहाँ नेफ्था का बाहुल्य है। सिन्धु नदी के तट पर मुकेया घाट के निकट यह खेसोर के पर्वत श्रेणी में से झरता है। वहाँ के निवासयों को इसके व्यापारिक मूल्य का ज्ञान नहीं है। इसलिए वे इसका उपयोग ऊँटों की पीठ के जख्मों के इलाज के लिए करते हैं। पेशावर से तीस मील दूर कोहाट में भी नेफ्था का बाहुल्य है।

"अमीरखाँ ने कुछ खनिज-मद्य के लिए पहाड़ों में आदमी भेजे और उसने मुझसे कहा कि जहाँ यह जमीन में से झरता है वहाँ रुई भिगो ली जाती है। इस प्रकार इसका संग्रह होता है।"

खानपुर के निकट नरटोपा में भी एस्फाल्ट (डामर) के चश्मे हैं। मैंने सिन्धु नदी के पूर्व में लगभग दस मील दूर जब्बा के निकट पैंट्रोलियम देखा है। यह चट्टानों में से निकलता है जो कथा नदी के सिरे पर है। यह पैंट्रोलियम मारी से कुछ मील नीचे सिन्ध नदी में गिरता है और पानी के ऊपर तैरा करता है। यहाँ के निवासी इसे गन्धक का तेल कहते हैं और अपने लैम्पों में जलाते हैं। पशुओं की बीमारी में इसका औषधि के रूप में उपयोग किया जाता है। वे इसका कोई नाम तो नहीं बताते पर इसे 'लतीरा' या 'काला पानी' कहते हैं। वे इसे मुख्यतः राल के विलयन के लिए प्रयुक्त करते हैं और यह इसमें मिले नेफ्था के कारण ही सम्भव होता है। नेफ्था इसमें से आसवन क्रिया से प्राप्त होता है।

यूसुफजाई प्रदेश में धिर के पूर्व की ओर एक स्थान है जहाँ बहुत प्राचीन काल से आग जला करती है और यह इस समय भी एक गुम्बद के नीचे जलती है और एक ग्यूब्रियन[1] स्त्री के सुपुर्द है। सिन्ध में गन्धक[2] मिलता है।

---

1 एम० कोर्ट—जनरल एशियाटिक सोसायटी; बंगाल, जि० 8, पृ० 312.

2 बर्टन्स—अनहैपी वैली, जिल्द 2, पृ० 185-209.

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मूर्ति भंजक सिकन्दर ने कश्मीर में हिन्दू धर्म का विध्वंस किया था। उसने अपने राज्य के सब मन्दिरों को भूमिसात् कर देने का आदेश दिया था। जब पंच हजारा जिले में जगदेव के मन्दिर को भूमिसात् किया गया तो उसकी नींव में से धुआँ और आग निकलने लगी। हिन्दुओं ने कहा कि यह मूर्ति के प्रकोप का चिह्न है। लेकिन गम्भीरतापूर्वक सोचा जाय तो यह एस्फाल्ट का अग्नि-कुण्ड होगा।

कैप्टेन ए० कनिंघम ने इससे भी आगे की बात लिखी है। उन्होंने एशियाटिक सोसायटी के जरनल में एक मूल्यवान लेख लिखा है जिसमें यह विचार प्रकट किया है कि अपने विध्वंस कार्य में सिकन्दर ने बारूद का प्रयोग किया होगा। वे लिखते हैं—"कश्मीर के अधिकांश मन्दिर कम या ज्यादा तोड़े गए हैं परन्तु वंतीपुर के मन्दिरों का विशेष ध्वसं किया गया है। ये वर्बाद होकर ढेर पड़े हुए हैं।" इन मन्दिरों के विषय में ट्रेबेक[1] ने लिखा है—"यह कल्पना करना मुश्किल है कि ऐसा विनाश समय या मनुष्य ने किया हो क्योंकि ये मन्दिर मिश्र की पुरानी इमारतों के समान दृढ़ हैं। इनका विध्वंस भूकम्प के द्वारा हुआ होगा।" मैंने यह वाक्य यह वतलाने के लिए उद्धृत किया है कि अवन्तीपुर के मन्दिर नष्ट होकर अत्यन्त अस्तव्यस्त अवस्था में पड़े हैं। मेरी सम्मति में इनका विध्वंस इतना पूर्ण है कि यह भूकम्प का परिणाम नहीं हो सकता। यदि भूकम्प से हुआ होता तो ये भवन बड़े परिणाम में बिल्कुल भूमिगति हो जाते। परन्तु इन मन्दिरों का समस्त स्वरूप बिगड़ कर पत्थरों का ढेर लग गया है और ये सब पत्थर अलग-अलग हो गए हैं। इसलिए मेरा विश्वास है और मैं अपने औचित्य के साथ कह सकता हूँ और अनुभव के आधार पर भी कह सकता हूँ कि यह पूर्ण विध्वंस बारूद के द्वारा किया गया होगा। मैंने स्वयं एक दुर्ग को और कई इमारतों को, जो पत्थर और ईंटों से बनी हुई थीं बारूद से उड़ाया है और देखा है कि परिणामस्वरूप उनके विभिन्न भाग पृथक्-पृथक् हो गए थे और उनमें से अधिकांश बिल्कुल बैठ गई थीं। इनमें से दोनों प्रकार के विनाशों में से कोई भी भूकम्प से नहीं हो सकता। ट्रेबेक और मूर क्रोफ्ट, दोनों का यह विश्वास था कि उस समय बारूद का उपयोग जारी नहीं हुआ था। यदि उन्हें मालेम होता कि इसका उपयोग होने लग गया था तो वे अवश्य ही इस विनाश का कारण भूकम्प को नहीं समझते। मार्तण्ड के मन्दिर का विनाश करने का जो प्रयत्न शाह हमदान ने किया था उसका उल्लेख करते हुए इन दोनों लेखकों ने लिखा है कि यह सौभाग्य की बात थी कि "हमदान बारूद का प्रयोग करना नहीं जानता था।" मैं यह स्वीकार करता हूं कि हमदान के शाह मीरशाह के शासनकाल में कश्मीर में किसी ने यह सुना भी नहीं होगा कि बारूद से विनाश किया जा सकता है। परन्तु कश्मीर के मन्दिरों के विनाश का कारण इतिहास और परम्परा दोनों के अनुसार सिन्कदर की धर्मान्धता थी। उसमें मूर्ति-

---

1 ट्रेवेल्स, जि० 2, पृ० 245।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भंजन के लिए बड़ा आवेश था और इसलिए बुतशिकन (मूर्ति-भंजक) कहलाता था। जब तैमूर ने हिन्दुस्तान पर हमला किया तो सिकन्दर का शासन चल रहा था और उसने तैमूर को मित्र की हैसियत से भेंटें भी भेजी थीं और तैमूर ने इसके बदले में उसको शोरा भेजा था। यह बात बहुत सम्भव मालूम पड़ती है क्योंकि तैमूरलंग भी सिकन्दर के समान बड़ा ही मूर्ति-भंजक था। गिबन लिखता है कि मुगलों या तुर्कों को सन् 1402 में बारूद का ज्ञान नहीं था। परन्तु साथ ही वह यह भी लिखता है कि 1422 में जब तुर्कों ने कुस्तुनतुनिया का घेरा डाला तो उनके पास धातु की तोपें थीं।[1] मेरे ख्याल से यह माना जा सकता है कि 1400 और 1420 के लगभग बारूद का प्रयोग पूर्व में कश्मीर तक पहुँच गया होगा और सिकन्दर के शासनकाल में, जिसकी मृत्यु 1416 में हुई थी, इसका प्रयोग अवश्य होता होगा।

"यदि यह न माना जाय तो भी मैं अपने इस मत पर दृढ़ रहूँगा कि अवन्तीपुर के मन्दिरों का विध्वंस बारूद के द्वारा ही किया गया होगा और यह विनाश धर्मान्ध औरंगजेब के समय में हुआ होगा। फरिश्ता[2] का कथन है कि महादेव के मन्दिर के अतिरिक्त सारे मन्दिरों को सिकन्दर ने ही नष्ट करवाया था और महादेव का मन्दिर इसलिए बच गया था कि इसकी नींव पास के पानी के तल से भी नीची थी। अबुलफजल[3] ने लिखा है कि कुछ मन्दिर 1380, 90 में पूर्णतः सुरक्षित थे और फरिश्ता ने भी लिखा है कि इनमें ने बहुत से मन्दिर उसके समय में अर्थात् 1600 ई० में वर्तमान थे। इसके अतिरिक्त इनमें से कई मन्दिर अब भी खड़े हैं। कुछ थोड़े-बहुत गिर गए हैं। इससे यह निश्चित है कि ये सब सिकन्दर ने नष्ट नहीं किए थे। सम्भवतः उसने यह आदेश दिया होगा कि इन सबको उलट दिया जाए और निस्सन्देह बहुत से प्रधान मन्दिर उसके समय में गिरा दिए गए होंगे। श्रीनगर में उसकी बेगम की कब्र एक मन्दिर की नींव पर और उसी की सामग्री से बनी हुई है। उसके पुत्र जैनुलआबीदीन के कब्र का अहाता किसी समय एक हिन्दू मन्दिर का अहाता था। श्रीनगर में नौशेरा की मस्जिद का दरवाजा उसके पुत्र जैनुल आबीदीन के समय में बनाया गया था। यह एक हिन्दू मन्दिर के दो स्तम्भों से बना हुआ है। यह एक शिलालेख से स्पष्ट है। इन उदाहरणों से सिद्ध होता है कि राजधानी के कम से कम तीन मन्दिर या तो सिकन्दर ने या उसके किसी पूर्वज ने गिराए होंगे। परन्तु पुराने सुलतानों के विषय में यह नहीं लिखा हुआ है कि उन्होंने मन्दिर नष्ट करवाए थे। इसलिए हम निर्विवाद यह मान सकते हैं कि ये मन्दिर सिकन्दर ने ही नष्ट करवाए होंगे।"

---

1 डिक्लाइन एण्ड फाल, प्रकरण 65, नोट 93।

2 ब्रिग्ज—जि० 4, पृ० 465।

3 आइन-ए-अकबरी, जि० 2, पृ० 124

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पूर्वोक्त उद्धरणों से हमें प्रेरणा मिलती है कि हम यह विचार करें कि बारूद का आविष्कार और प्रयोग कब जारी हुआ। इस विषय पर सन् 1845 में पेरिस में रेनार्ड और फवे ने फ्रेंच भाषा में एक ग्रन्थ प्रकाशित किया था जिसके कारण इस शोध में और भी रुचि बढ़ गई है। परन्तु फिर भी यह मानना पड़ेगा कि अब भी इस विषय की बहुत सी बातें उतनी ही अनिश्चित हैं जितनी पहले थीं। इससे पता लगता है कि तेरहवीं शताब्दी में अरब लोगों में गन्धक, शोरा और कोयले को विविध अनुपातों में मिलाने के बहुत से नुस्खे प्रचलित थे। ये नुस्खे शुरू में चीन से नवीं शताब्दी में प्राप्त हुए होंगे और फिर अगली तीन शताब्दियों में इस समय के ज्ञान की वृद्धि हुई होगी और जब तेरहवीं शताब्दी में मुगलों के आक्रमण हुए तो इस विषय की ओर अधिक ज्ञान प्राप्त हुआ होगा। प्राचीन लेखक शोरे को चीनी, बर्फ या चीनी नमक कहते थे। इससे प्रकट होता है कि इसका आविष्कार चीन में हुआ होगा। संघ राजवंश के इतिहास में सन् 1259 के लगभग ऐसे अस्त्रों का स्पष्ट उल्लेख है जो आग के द्वारा चलाए जाते थे। खेकिंग युग के प्रथम वर्ष में एक अग्नि अस्त्र बनाया गया था जिसको तेज अग्नि बाण कहा जाता था। एक लम्बे बाँस की नली में बहुत से दाने भर दिए जाते थे और फिर उन्हें सुलगाया जाता था तब नल में से प्रबल ज्वाला निकलती थी और दाने बड़े जोर से निकलते थे जिनका शोर 150 कदम तक सुनाई देता था। तो भी कुछ ऐसी कहानियाँ हैं जिनसे मालूम होता है कि इतने प्राचीन समय में सम्भवतः चीनी लोग इन विनाशक शक्ति को नहीं जानते थे परन्तु यहाँ उनका उल्लेख करने का अवसर नहीं है। इन लेखकों का विचार है कि यूनानी अग्नि कभी शान्त नहीं हुई बल्कि यह अधिकाधिक उन्नत होती गई। फिर लोग इसका असली नाम भूल गए और इसके रूपान्तर होते गए। अन्त में इसने बारूद का रूप धारण कर लिया।

यहाँ इस विषय पर कोई लेख लिखने का विचार नहीं है क्योंकि इस विषय पर कितने ही योग्य और विवेकशील लेखक लिख चुके हैं। मैं अपने विचार वहीं तक सीमित रखूंगा जहाँ तक इस विषय का हिन्दुस्तान से सम्बन्ध है और उन उदाहरणों के विषय में भी लिखूंगा जिन पर इस रोचक शोध में प्रवेश करने वालों ने ध्यान दिया है।

जब हिन्दुस्तान के साथ मुसलमानों का प्रथम सम्बन्ध स्थापित हुआ तो प्राचीन और प्रामाणिक इतिहासकारों के अनुसार उन्होंने एक इंजन का प्रयोग किया था। यह मंजनिक कहलाता था और पत्थरों को फेंकने के काम में लिया जाता था। अरब लोग इस मशीन से खूब काम लेते थे। जब मोहम्मद ने हिजरी सन् 9 में ताईफ[1] का घेरा डाला था तो इसका उपयोग किया गया था परन्तु उन लोगों को इसका ज्ञान बहुत पहले से था। इब्निन कोताईबाह ने लिखा है कि इसका उपयोग सर्वप्रथम

1 हाजी खलीफा, जि० 1, पृ० 394। गिब्न, नोट 143।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हीराह के द्वितीय सुलतान जजीमाह ने सन् 200 ई० में किया था। अरव लोगों का विश्वास है कि इसका आविष्कार शैतान ने किया था और जब इब्राहीम को सताया गया तव उसने निमरोद को सुझाया था कि इसका उपयोग करे। ये शब्द मचीना या मंगानम से वना हुआ प्रतीत होता है। इस मशीन का प्रथम प्रयोग हीराह में हुआ था। इससे यह वहुत सम्भव मालूम होता है कि अरव लोगों ने इसका प्रयोग यूनानियों से नहीं ईरानियों से सीखा होगा।

मोहम्मद कासिम ने देवाल के वन्दरगाह पर आक्रमण करते समय (93 हिजरी, 711-12 ई०) में मंजनिक का विशेष प्रयोग किया था। विलादुरी ने इसका निम्नलिखित वर्णन किया है :

"ज्योंही मोहम्मद कासिम देवाल में पहुंचा तो उसने मिट्टी की एक खाई खुदवाई और उसकी रक्षा के लिए भाले वरदार खड़े कर दिए और अपना झण्डा फहराया। सैनिकों के विभिन्न दल अपने-अपने झण्डे के नीचे खड़े हुए थे। उसने एक मंजनिक जमा दी जिसका नाम उरुस था। इसको चलाने के लिए पाँच सौ आदमी आवश्यक थे। देवाल नगर में एक ऊँचा मन्दिर था जिसके ऊपर एक लम्वा लट्ठा लगा हुआ था और उस पर लाल कपड़ा था। जब हवा चलती थी तो वह नगर के ऊपर फहराया करता था।" इसके वाद फिर वह लिखता है कि "हजाज से मुहम्मद के नाम यह पत्र आया कि 'मंजिक जमाओ और उसका पैर छोटा करो तथा इसको पूर्व की ओर रखो। फिर मंजिक के नायक से कहो कि ध्वज पर निशाना लगावे जिसका तुमने वर्णन किया है। इस प्रकार उसने ध्वज को गिरा दिया और तोड़ दिया। तव काफिरों को वड़ा दुःख हुआ।"

विलादुरी फिर लिखता है कि "नगर को छीन लेने के वाद तीन दिन तक नर-वध हुआ और मन्दिर के पुजारियों का संहार किया गया। दूसरे लेखकों ने लिखा है कि मुहम्मद कासिम ने सत्रह वर्ष के ऊपर की आयु के सव ब्राह्मणों को मरवा दिया। युवा स्त्रियों तथा वालक-वालिकाओं को दास वना लिया।

इसके वाद के लेखक इस समय के विषय में लिखते हैं कि आलोर नगर को छीनने के लिए आग्नेय के अस्त्रों का प्रयोग किया गया था और इस नगर का पतन देवाल के वाद ही हो गया था। मीर मासूम भक्करी ने अपने सिन्ध के इतिहास में और हैदर राजी ने अपने सामान्य इतिहास में आतिशवाजी का उल्लेख किया है जिसको अरव लोगों ने ईरानी और यूनानियों को प्रयोग करते हुए देखा था। जब राजा दाहिर हाथी पर सवार था तो अरव लोगों ने आग से भरे हुए पात्र (हुक्का-ए-आतिशवाजी) उसके हौदे पर फेंके थे। यह होदा हाथी की पीठ पर कसा हुआ था। इससे चमककर हाथी वश में न रहा और भाग गया तथा हिन्दुओं की पंक्तियों को तोड़ता हुआ नदी में घुसने का प्रयत्न करने लगा। अगर यह वात सत्य है तो इस वार अरव लोगों ने यूनानियों के वनाए हुए अस्त्रों का प्रथम वार प्रयोग किया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था। अब तक तो इतिहास यह कहता था कि सन् 1099 ई० में जेरुसलम के घेरे से पहले ऐसा प्रयोग कभी नहीं हुआ।

इस बात का उल्लेख चचनामा और तुहफातुलकिराम में भी किया गया है। परन्तु मैंने चचनामे की जो उत्तम प्रतियाँ देखी हैं उनमें से एक में उरुस नामक पत्थर फेंकने वाली मशीन का तो उल्लेख है, इसे चलाने के लिए पाँच सौ आदमी आवश्यक थे, परन्तु आग फेंकने वाले इंजन का उल्लेख इस प्रति में नहीं है। दाहिर के हाथी के लिए यह स्पष्ट लिखा हुआ है कि वह नेफ्था का तीर लगने से भागा था। अरब सेनापति ने अपने प्रबल नेफ्था प्रक्षेपकों को आदेश दिया था कि दाहिर के हाथी के हौदे पर नेफ्था तीर चलाए जाएँ। अगर हम चचनामा की बात मानें तो इससे आगे के प्रमाणों का कोई विशेष मूल्य नहीं है। अग्नि अस्त्रों की कहानी को हमें अस्वीकार करना पड़ता है परन्तु चचनामा के आधार पर हम इतना स्वीकार कर सकते हैं कि नेफ्था के तीरों का उपयोग होता था। जिस जगह युद्ध हुआ था वहाँ इस प्रकार के अस्त्र का उपयोग होना बहुत सम्भव था। ऐसा ही महमूद गजनी ने किया था।

कुछ वर्ष बाद मुहम्मद कासिम के पीछे के लोगों ने एक विध्वंसक यन्त्र का उपयोग किया था।

"जुनैद ने किराज के विरुद्ध युद्ध किया। किराज ने विद्रोह किया था। जुनैद अपने साथ एक भित्ति-पातक यन्त्र ले गया जिसके शृंग बड़े प्रबल थे। इसके द्वारा उसने नगर प्राचीर को ध्वस्त कर डाला। वह टूटी हुई दीवार में होकर घुस गया और नगर-निवासियों का वध किया। उन्हें बन्दी बनाया और लूटा। तब उसने अपने हाकिम नर्वदा, माँडवी, झुन्ड और भड़ौच की ओर भेजे।"

तीन शताब्दी के पश्चात् हम महमूद के युग में प्रवेश करते हैं जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। उसके और गजनवी शासकों के राज्य के एक भी लेखक ने इस प्रकार के शस्त्रों का उल्लेख नहीं किया है। परन्तु संयोगवश ऐसा लिखा हुआ है कि जब अलतूनताश हिन्दुस्तान में था तो उसके पास एक मंजनिक भेजा गया था।

इसके दो सौ वर्ष बाद और सन् 1200 से कुछ पहले हम गौरी राजवंश के समय पर पहुँचते हैं। यद्यपि किसी मुसलमान लेखक ने ऐसे अग्नि अस्त्र का उल्लेख नहीं किया है जिसका उपयोग हिन्दू और मुसलमानों के युद्ध में हुआ हो तथापि यदि हम तत्कालीन हिन्दू भाट चन्द पर विश्वास करें तो उस समय तोप के गोलों के उपयोग का भी उल्लेख मिलता है। परन्तु मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जहाँ ऐसे अस्त्रों का उल्लेख है वे स्थल प्रक्षिप्त हैं और उनमें आगे की बातों का समावेश कर दिया गया है। कन्नौज खण्ड के 150वें छन्द में तातारखाँ मुहमद गौरी से कहता है, "हे गजनी के नरेश अपना कवच धारण करो और अग्नि यन्त्र तैयार करो।" इस स्थल का दूसरा अर्थ भी किया जा सकता है परन्तु यह खींचतान होगी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आतिश फारसी का शब्द है और काफिर और सुलतान भी, जिनका इस छन्द में प्रयोग किया गया है, विदेशी हैं परन्तु इसमें सन्देह नहीं है कि भारतवर्ष में इन मुस्लिम शब्दों का इससे पहले प्रयोग होने लग गया था। आतिश शब्द से ये छन्द संदिग्ध बन गया है। अन्यथा जिस छन्द में यह शब्द आया है वहाँ यह प्रकट नहीं होता कि यह आधुनिक प्रयोग है। 257वें छन्द में कहा गया है कि "जब तोपें चलीं तो उनका गर्जन जोर से हुआ और गोले का शब्द दस कोस तक सुनाई दिया।" जिन दो पंक्तियों में यह छन्द लिखा गया है वे प्रक्षिप्त प्रतीत होती हैं और जो पंक्तियाँ उनसे पहले या पीछे लिखी गई हैं उनकी प्राचीनता भी संदिग्ध है। मध्य पंक्तियों में जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है वे हैं तो हिन्दी के, परन्तु प्राचीन लेखक उनका कम प्रयोग करते हैं और तोप का प्रारम्भिक प्रयोग ही रचनाकाल का निर्णायक है।

416वें छन्द में लिखा है कि "उसकी छाती में जम्बूर लगा और वह अचेत हो गया। इस प्रकार राय गोविन्द जो दिल्ली का एक प्रमुख शक्ति-स्तम्भ था, धाराशायी हुआ।

जम्बूर शब्द का इस और पिछले स्थल में प्रयोग हुआ है। इस समय यह शुतुर्नाल अर्थात् ऊँट की काठी में कसी हुई बन्दूक के काम में आता है। इसका प्रयोग पहले तीर के लिए भी होता था और मस्कत, बेस्तन और बम्बारदे आदि अन्य शब्दों की भाँति इसका अर्थ अस्त्र के रूप में होता था जो नए ढंग के आतिश में काम में आने लगे थे और यह आतिश बारूद के आविष्कार के पश्चात् शुरू हुई थी। इस लिए इस शब्द का प्रयोग द्वयर्थक है और यह नहीं कहा जा सकता कि इसका अर्थ केवल अग्नि अस्त्र ही है। परन्तु यह बात अवश्य है कि इसका अर्थ यदि केवल बाण ही होता तो विदेशी शब्द प्रयोग करने की कोई आवश्यकता नहीं थी अन्यथा इस स्थल पर कोई सन्देह नहीं किया जा सकता।

बामियान में चंगेजखाँ के विरुद्ध जंगली आग का प्रयोग किया गया था और जहाँकुशा में लिखा है कि ख्वारिज्म के घेरे में चंगेजखाँ को विवश होकर तोप का प्रयोग करना पड़ा।

1258 ई० में जब देहली के सुलतान का वजीर चंगेजखाँ के पौत्र हलाकू के राजदूत से मिलने के लिए निकला तो उसके साथ आतिशबाजी की तीन हजार गाड़ियाँ थीं। आतिशबाजी का शब्द आतिश के खेलों के लिए और प्रहार की अग्नि के लिए भी होता था। इसलिए इस स्थल का अर्थ स्पष्ट नहीं होता।

खुसरु की मृत्यु 1315 ई० में हुई थी। उसकी पुस्तकें उदाहरणों से परिपूर्ण हैं। उनको देखने से कोई सन्देह नहीं रहता कि उसको बारूद का पता नहीं था। परन्तु इस बात का प्रयास किया गया है कि किरानुस्सादेन के हाशिये पर जो गरारा शब्द लिखा हुआ है उसका अर्थ तोप का गोला है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सन् 1368 में मोहम्मदशाह बहमनी प्रथम ने बहुत बड़ी लूट की थी जिसमें उसको तीन सौ तोपगाड़ियाँ मिली थीं। इस पर फरिश्ता का अनुवादक निम्नलिखित टिप्पणी लिखता है :

"यदि तोहफ़ुतु-उस-सलातीन के लेखक मुल्ला दाऊद विदूरी पर विश्वास किया जाय तो मानना पड़ेगा कि इस समय हिन्दू तोपों का प्रयोग करते थे। आगे के स्थल में यह भी कहा गया है कि मुसलमानों ने बारूद का प्रयोग सर्वप्रथम अगले युद्ध में किया था। परन्तु मुझे दोनों ही कथनों की सत्यता पर सन्देह होता है। अगले स्थल से यह सम्भव प्रतीत होता है कि मुसलमानों ने सन् 1368 में पश्चिम से तोपें मँगवाली होंगी क्योंकि इससे अठारह वर्ष पूर्व एडवर्ड तृतीय ने क्रेसी के युद्ध में उनका प्रयोग किया था। परन्तु यह बात भी बहुत अधिक सम्भव प्रतीत नहीं होती। फरिश्ता ने यह लिखते हुए कि मुसलमानों ने उस समय प्रथम बार इनका प्रयोग किया था, यह भी कहा है कि तुर्क और यूरोपियन लोग दोनों ही तोपें चलाने में दक्ष थे और आतिश के काम में उनको लगाया गया था। पुर्तगाली लोग हिन्दुस्तान में 1498 में आये थे। यह निश्चित प्रतीत होता है कि इससे पूर्व तोपों का प्रयोग प्रचलित हो गया था। इसका उल्लेख फारिया-ए-सौजा ने किया है।"[1]

यही लेखक लिखता है कि 1371 ई० में एक भयंकर प्रयोजन के लिए मंजनिक काम में लाई गई थी।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि अब्दुर्रज्जाक ने विजयनगर में बारूद के प्रयोग की ओर संकेत भी नहीं किया है। वहाँ आतिशबाजी के लिए नेफ्था फेंकने वालों से काम लिया जाता था। इससे प्रकट होता है कि बारूद का उपयोग इसके बाद होने लगा तथापि मतला-उस-सादेन के एक स्थल पर मुश्कसाज (आतिशबाजी) फुलझड़ियाँ बनाने का उल्लेख है।

पुर्तगाली लोगों के प्रथम आगमन के समय हिन्दुस्तानी लोग बारूद का प्रयोग जानते थे, इस विषय में मत विरोध है। मेफी ने जुआन डे बेरोज का संक्षेप किया है। वह कहता है कि पुर्तगाली लोगों से हिन्दुस्तानी बहुत आगे बढ़े हुए थे। वह लिखता है कि चित्तौड़ के घेरे 'बादौर' के पास चार तोपें इतनी बड़ी थीं कि प्रत्येक को खींचने के लिए सौ जोड़ी बैलों की आवश्यकता हुई थी और उसके नीचे भूमि लरजती जाती थी। दूसरा लेखक जिसको बोहलन ने उद्धृत किया है एक हिन्दुस्तानी राजा के विषय में लिखता है कि वह अपनी सेना के सामने पीतल की तोपें रखा करता था।

पुर्तगाली लोगों के आगमन से पूर्व गुजरात में तोपों का उपयोग होता होगा इस विषय में कुछ प्रमाण है। उस समय मिस्र के तुर्कों और अरब देश के साथ

---

1 ब्रिग्ज, जि० 2, पृ० 432।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गुजरात का निरन्तर सम्पर्क था। इस वात का उल्लेख मिलता है कि सन् 1482 में गुजरात के सुलतान महमूद शाह प्रथम ने वलसार के जल-दस्युओं के विरुद्ध एक जहाजी वेड़ा तैयार करवाया था और इन जहाजों पर खम्भात के वन्दूकची और तुवुकची चढ़ कर गये थे। यह भी पता चलता है कि दो वर्ष वाद इस सुलतान ने चम्पानेर की दुर्ग-प्राचीर को तोड़ने के लिए तोपों का उपयोग किया था और राजा के महल पर गोले चलाए थे। यह विचित्र वात है कि हिन्दुस्तान में मुसलमानों ने गोले वनाने में वारूद का उपयोग किया था। इसके कुछ वर्ष पश्चात् शेरशाह की मृत्यु उसकी आतिश में एक गोले के फट जाने से हुई थी। उस समय उसने कालिंजर का घेरा डाल रखा था।

सन् 1498 में कालीकट नगर में वास्कोडिगामा के प्रवेश का वर्णन करते हुए केस्टेनहेडा ने लिखा है कि "जुलूस फिर रवाना हुआ। इसके आगे विगुल और वाजा वजाने वाले चल रहे थे और एक नायर के पास एक अग्नि अस्त्र था जिसको वह ठहर-ठहर कर चलाया करता था।" इसके दो वर्ष पश्चात् जमोरिव ने पुर्तगाली लोगों के जहाजों पर गोले चलाए थे। केस्टेन्हैडा की पुस्तक में लिखा हुआ है कि सन् 1503 में दो पुर्तगाली तुपकची जो मिलान के रहने वाले थे जमोरिन से जा मिले थे और उन्होंने उसके लिए ऐसी तोपें वनाई थीं जो पुर्तगाली लोगों की तोपों से मिलती-जुलती थीं। इसके लिए उनको वहुत वड़ा पुरस्कार दिया गया था। जमोरिन की सेना में तीन हजार नायर थे जिनमें सात सौ तीरन्दाज थे और चालीस के पास वन्दूकें थीं। कई पलटनों के पास तोपें थीं।

वरटोमैन ने लिखा है कि जिन पुर्तगाली लोगों ने हिन्दुतानी राजाओं की नौकरी में प्रवेश किया उन्होंने उन्हें तोपों का उपयोग सिखाया।

फेरिया-ए-सोजा ने एक ऐसे गुजराती जहाज का उल्लेख किया है जिसने सन् 1500 ई० पुर्तगाली लोगों की तरफ कई तोपें चलाई थीं। उसने यह भी लिखा है कि सन् 1502 में कालीकट में हिन्दुस्तानियों ने तोप वाले जहाजों का उपयोग किया था और इससे अगले वर्ष जमोरिन के जहाजी वेड़े में तीन सौ अस्सी तोपें थीं।

सन् 1511 में पुर्तगाली लोगों ने मलक्का में ऐसे लोगों का सामना किया था जो तोपों का प्रयोग करते थे और जिन्होंने अपने वाजार की रक्षा करने के लिए उसमें वारूद विछा दिया था। समुद्र पर वे तैरती हुई आग काम लाते थे। जावा के सुलतान महमूद के पास आठ हजार तोपें थीं जिनमें से तीन हजार वह युद्ध में लाया था।

आगे चलकर हम देखते हैं कि वावर ने लिखा है कि वंगाल के लोग तोप-खाने में दक्ष थे और यह कला उन्होंने पुर्तगाली लोगों से सीखी थी। स्वयं उसके साथ एक वहुत वड़ी तोप थी जिससे वह वड़े-वड़े पत्थर फेंकता था और जिसको भरने में वड़ी देर लगती थी। उसके पास छोटी-छोटी तोपें भी थीं जिन्हें वह फिरंगी कहा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करता था। इससे प्रकट होता है कि इनका उद्‌गम योरोप से हुआ होगा। इस युद्ध में तीरों का भी उपयोग हुआ था। अपने संस्मरणों में दूसरे स्थान पर वावर ने लिखा है कि उसके समय में राजधानी में एक तोप ढाली गई थी परन्तु शाहजहाँ के समय में ढाका में झालने का काम होता था। इससे यह प्रकट नहीं होता है कि सौ वर्ष पहले बंगाल के लोग तोपखाने में बड़े दक्ष थे। 1526 में पानीपत के युद्ध में वावर ने तोपखाने से काम लिया था और इन तोपों को एक दूसरी से रूम की प्रथा के अनुसार बैल के वटे हुए चमड़ों से बाँधा गया था। उसने लिखा है कि सन् 1514 में सलीम ने शाह इस्माइल पर विजय प्राप्त की थी। इस युद्ध में इस रीति से काम लिया गया था और ये बड़ी कारगार सिद्ध हुई थीं। ऐसा प्रतीत होता है कि वावर के पास छोटी-छोटी तोपें नहीं थीं और भिड़न्त के समय तीरों से काम लिया जाता था। प्रति दो तोपगाड़ियों के बीच छः या सात तुवरा जमाए गए थे। इनसे सीने की रक्षा होती थी और ये एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाए जा सकते थे। वन्दूकची इन तोपों और तुवरा के पीछे खड़े रह कर वन्दूक़ें चलाते थे।

इसके थोड़े समय पश्चात् हुक्कों के प्रयोग का वार-वार उल्लेख मिलता है। यह माना जा सकता है कि पश्चिम की भाँति पूर्व में भी तोप से पहले हुक्कों (राकेटों) का प्रयोग शुरू हुआ था परन्तु यह विचित्र बात है कि योरोप में हुक्का या राकेट का आविष्कार विल्कुल आधुनिक माना जाता है। नवीं शताब्दी के अन्त में सम्राट लियो के सैनिक अपने ढालों में छोटी-छोटी नलकियाँ रखते थे जिनमें कृत्रिम आग भरी रहती थी और जो वड़ी तेजी के साथ हवा में दौड़ती थी। ये नलकियाँ लियो के निर्देश से वनाई गई थीं।

सन् 1232 में चीनियों ने हुक्कों का प्रयोग करके तारतार लोगों से अपनी रक्षा की थी।

योरोप में इस बात के प्रमाण हैं कि सन् 1380 में हुक्कों का प्रयोग होता था। योरोप में वम का प्रयोग भी बहुत पहले होने लग गया था। स्टोव के क्रानीकल में लिखा है कि 1543 में पीटरवॉन कालेट ने लोहे का एक पोला गोला ढाला था जिसमें आतिशवाजी भर दी गई थी।

तथापि अत्युत्तम अधिकारी विद्वानों ने लिखा है कि राकेट का प्रयोग सर्व-प्रथम 1807 में कोपनहेगन के घेरे में किया गया था। हिन्दुस्तान के वर्तमान इतिहास में भी राकेट या हुक्कों का प्रयोग वार-वार आता है जिससे हमको आश्चर्य हुए विना नहीं रहता। हिन्दुस्तानी इतिहासकारों के ग्रन्थों में लिखा है कि अकवर से शाह आदम के समय तक इनका उपयोग होता था। ऐसे एक हुक्के का लोहे का गोला पन्द्रह सेर वजन का था।

यह बहुत सम्भव है कि प्राचीन भारतवर्ष के युद्धों में जो अग्नि अस्त्रों का उल्लेख है वह राकेटों का है तोपों का नहीं। अव हम विचार करेंगे कि इन अस्त्रों का स्वरूप कैसा था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एलफिसटन ने मनु को उद्धृत करके लिखा है कि वह अग्नि वाणों का निषेध करता था। प्राचीन भारत में अग्नि अस्त्रों का निषेध था। इस विषय में मनु-संहिता को उद्धृत किया जाता है। उसमें निषेध है, "किसी धोखे के यन्त्र से युद्ध नहीं करना चाहिए और न विषाक्त शस्त्र या बन्दूक या किसी प्रकार के अग्नि अस्त्र से काम लेना चाहिए।" इस स्थल की आलोचना करते हुए हालहैड ने लिखा है कि, "बहुत अर्से से यह वात असंगत मानी जाती है कि एलेग्जेंडर महान को हिन्दुस्तान में अग्नि अस्त्रों का सामना करना पड़ा था। यह वात क्विटस कर्टियस की पुस्तक के एक स्थल से प्रकट होती है। चीन और हिन्दुस्तान में बारूद का प्रयोग बहुत प्राचीन काल में होता था और यह समय इतना प्राचीन है कि उसमें शोध नहीं हो सकता। संस्कृत में 'अग्नि अस्त्र' शब्द आता है। यह एक प्रकार तीर था जिसके अग्र भाग पर आग होती थी और यह बाँस के द्वारा शत्रु पर फेंका जाता था। इसका एक गुण यह था कि चलाने के बाद उसकी कई अग्नि ज्वालाएँ बन जाती थीं और प्रत्येक ज्वाला कारगर होती थी और यह बुझ नहीं सकती थी। परन्तु अब इस प्रकार का अस्त्र लुप्त हो चुका है।[1] इसके साथ ही हालहैड लिखता है कि तोप का नाम शतघ्नि है और पुराणों में लिखा हुआ है कि इसका आविष्कार विश्वकर्मा ने किया था और शायद इसी शब्द से फ्रेंच भाषा का शब्द वकर्मा बना है। इसी प्रकार से यह भी माना जा सकता है कि चरिवरी शब्द चक्रवर्ती से बना हो।

शकुन्तला नाटक में ऐसी अग्नि का वर्णन है जिसका नाम उर्वा है और जो समुद्र के जल के अन्दर जलती है। इसके लिए लिखा है कि यह ऐसी रहस्यमयी अग्नि है जो समुद्र की गहराई में जला करती है। ऐसा माना गया है कि यह अग्नि यूनानी अग्नि के समान होगी। श्री लेंगलाइस ने एक और दूसरे कथानक का हवाला दिया है जो हरिवंश में आया है और उसका कहना है कि यह समुद्र गर्भित अग्नि ज्वालामुखी पर्वत होगा जो समुद्र के अन्दर से निकलता है। रामायण में लिखा है कि विश्वामित्र ने राम को विभिन्न प्रकार के शस्त्र दिए थे जिनमें एक का नाम आग्नेय था और दूसरे का नाम शिखर।

केरी और मार्क्समैन शिखर का अर्थ करते हैं कोई ऐसा शस्त्र जो जल सकता हो और इस सन्दर्भ से इन दोनों का यह निष्कर्ष निकला है कि प्राचीनकाल से हिन्दू बारूद का उपयोग जानते थे परन्तु ऐसा मालूम होता है कि यह सन्दर्भ केवल कवि-कल्पना है। लेखक ने कई प्रकार के शस्त्रों का उल्लेख किया है जिनमें से कुछ प्रत्यक्षतः काल्पनिक थे जैसे वायव।

हरिवंश में आग्नेय अस्त्र के विषय में लिखा है कि "सगर राजा को आग्नेय अस्त्र भार्गव से प्राप्त हुआ था और इसके द्वारा उसने तालजंघ और हैहय लोगों को

---

1 कृपया अमरकोष और शब्द-कल्पद्रुम—भाग I, पृष्ठ 16 भी देखिए।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मार कर संसार विजित किया था।" इसके आगे लिखा है कि "राजकुमार के जन्म पर साधारण संस्कार करके और उसे वेद पढ़ाकर फिर उसे उर्व ने शस्त्र प्रयोग सिखाया और फिर उसे आग्नेय अस्त्र[1] दिया जिसका सामना देवता भी नहीं कर सकते थे।

श्रीमद्भागवत में ब्रह्मास्त्र चलाए जाने का निम्नलिखित लम्बा वर्णन कुछ विचित्र है। उसमें लिखा है कि "राजकुमारों का घातक अश्वत्थामा उसे दूर से आते हुए देखकर बहुत भयभीत हो गया और अपने प्राण बचाने के लिए रथ में भाग गया जैसे शिव के डर से ब्रह्मा पृथ्वी पर भागा था। जब उसके घोड़े थक गये तो उसने देखा कि वह असहाय है। तब ब्राह्मण के पुत्र ने अनुभव किया कि अब ब्रह्मास्त्र के अतिरिक्त उसके पास कोई अन्य उपाय नहीं है। अतः उसने अपने हाथ धोये, अपना मन स्थिर किया और ब्रह्मास्त्र को संभाल कर चलाया यद्यपि वह खतरे के समय इसे वापस लेना नहीं जानता था। अर्जुन ने देखा कि चारों ओर ऐसा प्रकाश व्याप्त हो गया जिसमें चकाचौंध हो रही है और उसका जीवन खतरे में है। तब उसने कृष्ण से कहा—"हे प्रलम्ब बाहु कृष्ण! आप अपने सेवकों को निर्भय बनाने वाले हैं। जो यह संसार में झुलसने लगते हैं उनको केवल आप ही मुक्त कर सकते हैं। आप परम पुरुष हैं और प्रकृति से ऊपर हैं। आप माया को छोड़कर ही आत्मा में निवास करते हैं। आप समस्त लोक का हित चाहते हैं परन्तु लोक माया से अन्धा हो रहा है। आप संसार का भार वहन करने के लिए अवतार धारण किए हुए हैं और अपने भक्तों की रक्षा करते हैं जो किसी अन्य को अपना आश्रय नहीं मानते। हे देवाधिदेव, मुझे मालूम नहीं है कि यह प्रबल प्रकाश कहाँ से आया और यह क्या है। सब दिशाओं से भयंकर अग्नि लपलपा रही है।" तब कृष्ण ने उत्तर दिया—"यह द्रोण के पुत्र का ब्रह्मास्त्र है। भय उपस्थित होने पर वह इसे वापस लेना नहीं जानता है। इसे प्रभावहीन करने के लिए उसके पास कोई दूसरा अस्त्र नहीं है। तुम्हें शस्त्रों का बहुत अच्छा ज्ञान है। अपने बाहुबल से इसकी शक्ति को नष्ट कर दो।" सूत कहता रहा कि शत्रुघातक अर्जुन ने कृष्ण का वाक्य सुनकर अपने हाथ धोये और अपने विरोधी पर ब्रह्मास्त्र चलाया। दोनों ओर से ब्रह्मास्त्र चल रहे थे। इनकी भयंकरता ने पृथ्वी और आकाश को व्याप्त कर दिया और सूर्य की

---

1 महाभारत में उल्लेख है कि भारद्वाज ऋषि ने अग्नि के पुत्र अग्निवेश को आग्नेयास्त्र दिया था और अग्निवेश ने वह शस्त्र फिर भारद्वाज के पुत्र द्रोण को दे दिया था। इस शस्त्र का जिस प्रकार वर्णन किया गया है उससे यह मान्यता उचित ही प्रतीत होती है कि यह शस्त्र अलौकिक मूल का कोई विशिष्ट अद्वितीय शस्त्र था। इस अनुच्छेद की टिप्पणी में विलसन ने लिखा है कि "हिन्दुओं ने सम्भवतः अत्यन्त प्राचीनकाल में और वर्तमान काल में भी अग्नि-अस्त्रों या राकेटों का प्रयोग किया था। इन्हीं से कुछ ऐसे रहस्यपूर्ण शस्त्रों की कल्पना की गई जो केवल देवताओं द्वारा ही चलाए जा सकते थे। महाभारत में ऐसे अनेक अस्त्रों का वर्णन है। इनके विषय में अधिक जानकारी के लिए कृपया देखें उत्तर-रामचरित का अनुवाद"—जान्सन कृत 'सिलेक्शन्स फ्रॉम द महाभारत', पृ० १।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रचंड किरणों की भाँति ये अधिकाधिक प्रबल होने लगे। इन दोनों अस्त्रों के महा-प्रकाश से तीनों लोक प्रकाशित हो गए। वहाँ के समस्त निवासी झुलसने लगे और उन्होंने समझा कि अब संसार का अन्त निकट आ गया है। अर्जुन ने देखा कि संसार पर महाविपत्ति आ गई है और समस्त लोक संतप्त है। तब उसने भगवान कृष्ण की इच्छानुसार दोनों अस्त्र वापस ले लिए।"

पादरी कृष्ण मोहमन बनर्जी ने एनसाइक्लोपीडिया बंगाल लेन्सेज नामक एक सुन्दर ग्रन्थ लिखा है। उसने पूर्वोक्त हवाले पर अपनी यह सम्मति प्रकट की है कि ब्रह्मास्त्र एक प्रकार की बन्दूक होगी और वर्तमान तोड़ेदार बन्दूक से बहुत भिन्न नहीं होगी। इसी ग्रन्थ से पूर्वोक्त संदर्भ उद्धृत किए गए हैं।[1]

श्री भागवत में यह भी लिखा है कि अश्वत्थामा ने गर्भवती उत्तरा पर भी ब्रह्मास्त्र चलाया था। वह उसके गर्भ को नष्ट करना चाहता था। कृष्ण पांडवों के अभिन्न मित्र थे। इसलिए उन्होंने अपनी अलौकिक शक्ति के द्वारा उत्तरा की रक्षा की थी। देवी पुराण में लिखा है कि ब्रह्मा ने नारायण का बध करने के लिए ब्रह्मास्त्र का निर्माण किया था।[2] पिछले सन्दर्भ में विचित्र अंश यह है कि इस अस्त्र को वापस भी लाया जा सकता था। इस विषय में यह आस्ट्रेलिया की जंगली जातियों के बूमरेंग नामक अस्त्र से मिलता जुलता है। यह एक जादू की लकड़ी मानी जाती थी जो फेंकने वाले के पास वापस आ जाती थीं।

महाभारत में एक ऐसे गोले का उल्लेख है जिसमें से बादल की सी गर्जना होती थी। बोप का मत है कि वर्णन पुच्छल तारे पर लागू होता है परन्तु साथ ही वह यह भी कहता है कि यह अग्नि अस्त्र का उल्लेख हो सकता है।

मुजमजु-ते-तवारीख के एक स्थल पर लिखा है कि ब्राह्मणों ने हॉल को सलाह दी कि एक मिट्टी का हाथी बनाया जाय और उसे सेना के अग्र भाग में रखा जाय और जब कश्मीर के सुलतान की सेना निकट आवे तो उसमें आग लगा दी जाय। इस तवारीख में लिखा है कि ऐसे हाथी ने आक्रमणकारी सेना के एक भाग को नष्ट कर दिया था। यह केवल बारुद को उड़ाने का ही वर्णन नहीं मालूम होता परन्तु इसमें बत्ती लगाने का भी प्रबन्ध था और बारूद को उस समय उड़ाया गया था जब उसकी आवश्यकता थी। यह प्रमाण महत्त्वपूर्ण है क्योंकि सन् 1126 ई० में इस पुस्तक का अरबी से अनुवाद किया गया था और अरबी भाषा में सौ वर्ष पहले मूल संस्कृत से अनुवाद किया गया था और उस समय भी यह बहुत प्राचीन मानी जाती थी।

---

1 भागवत के दशम अध्याय पर आधारित प्रेमसागर में कृष्ण के रक्षकों द्वारा बन्दूक छोड़ने का वर्णन है—"लगे तुपक छोड़ने"—अध्याय चार के अन्त में।

2 शब्द कल्पद्रुम—खण्ड तीन-पृ० 839।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्य पूर्वीय कथाएँ भी इस प्रकार की ही हैं। इन कथाओं की रचना बारूद के आविष्कार से बहुत पहले ही हो चुकी थी। इसलिए लेखक लोग प्राचीन काल के इतिहास को नहीं समझ सके और वर्तमान ज्ञान का उपयोग नहीं कर सके।

फिरदौसी की मृत्यु 1020 ई० में हुई थी। उसने लिखा है कि सिकन्दर या अलेग्जेंडर की सेना फुर पुरु (पोरस) के दो हजार हाथियों को देखकर, जो वह रणभूमि में लाया था बड़ी भयभीत हो गई थी और कुछ विद्वानों को एकत्र करके सलाह की गई थी कि इस महाशक्तिशाली बल का सामना करने के लिए कोई युक्ति बतलाई जाय। तब उन्होंने सुझाया कि एक लोहे का घोड़ा बनाया जाय और उस पर लोहे का ही आदमी बिठाया जाय और उसको गाड़ी के से पहियों पर रक्खा जाए तथा नेपथा से भर दिया जाय और जब वह हाथियों के सम्पर्क में आए तो वह एकदम से भभक उठे। सिकन्दर ने इस युक्ति को स्वीकार किया और उस देश के सब लोहारों को और कारीगरों को शीघ्रातिशीघ्र इस प्रकार के एक हजार यन्त्र बनाने का आदेश दिया। परिणाम यह हुआ कि जब पोरस आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ा तो यूनानियों ने ऐसे जलने वाले घोड़ों में आग लगा दी। उनका धमाका हुआ और बहुत से हाथी जल कर नष्ट हो गये और जो शेष रहे वे घबड़ा कर भाग गये।

एम० यूसेबे सालवर्टे ने भी इसी प्रकार की एक कहानी लिखी है। यह जे० बेकट्रियस लिखित "सिकन्दर की जीवनी" के आधार पर है जो अभी हाल प्रकाश में आई है।

यह भी बहुत असम्भव नहीं है कि भारतवर्ष के चीनी वृत्तान्त में जिन लुढ़कते हुए घोड़ों के उल्लेख हैं वे इसी ही काम में लाए जाते होंगे। "हिन्दुस्तानी लोग युद्ध में डरपोक हैं। उनके शस्त्र धनुष, बाण या ढाल हैं। चीनियों की भाँति उनके पास भी उड़ती हुई या पंखदार सीढ़ियाँ है और यदि भूमि अनुकूल होती है तो वे लकड़ी के बैलों का और लुढ़कते हुए घोड़ों का प्रयोग करते हैं।

तेरहवीं शताब्दी के अन्त में लिखते हुए कजवीनी ने भारतीय महासागर के टापुओं पर एक अध्याय में लिखा है कि किसी टापू के निवासियों ने सिकन्दर से प्रार्थना की कि उन्हें एक परदार अजगर (Dragon) से मुक्त किया जाय। यह अजगर प्रति दिन दो बैलों का भक्षण करता था और यदि उसे ये नहीं मिलते थे तो वह स्त्रियों और पुरुषों को मार कर और खेतों को बर्बाद करके बदला लिया करता था। जब सिकन्दर ने यह बात सुनी तो उसने दो बैलों के चमड़े मँगवाये और उन्हें गन्धक, चूने और तेजाब से भरा और उनमें लोहे की कीलें भी भर दीं और आदेश दिया कि उन्हें उस अजगर के सामने रख दिया जावे जो प्रति दिन अपने भोजन की तलाश में आता है। तब अजगर आया और उसको निगल गया परन्तु जब वह अपनी गुफा को लौट रहा था तो उसके पेट में एक ज्वाला उठी और कीलें उसकी आँतों में घुस गईं जिससे वह मर गया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

रोजत-उस-शफा में लिखा है कि जब सिकन्दर पोरस से मिला तो पोरस के पास भभकने वाले यन्त्र थे। पश्चिमी लेखकों ने लिखा है कि युद्ध के समय सिकन्दर ने कई अग्नि के अस्त्र तैयार करवाये थे। इन वृत्तान्तों को जब हिन्दुस्तानी लेखकों के वृत्तान्तों के साथ पढ़ा जाता है तो यह विश्वास करना पड़ता है कि प्राचीन काल में हिन्दुस्तानियों को कुछ ऐसे पदार्थ का ज्ञान था जिसमें बारूद की सी शक्ति थी। फिलोस्ट्रेट्स लिखता है कि "यदि सिकन्दर सतलज नदी को पार करता तो वह इन ज्ञानी लोगों के दुर्गरक्षित स्थानों का स्वामी नहीं बन सकता था। यदि कोई शत्रु उन पर आक्रमण करता था तो वे ऐसा तूफान उत्पन्न कर देते थे मानों वह आकाश से आया हो और इस प्रकार आक्रमण करने वालों को वापस धकेल देते थे। मिस्र के हरकुलीस ने और बैचस ने मिलकर उन पर आक्रमण किया और कई प्रकार के सैनिक यन्त्रों के द्वारा उनके स्थान को छीन लेने का प्रयास किया। परन्तु ये ज्ञानी लोग निश्चिन्त होकर देखते रहे : जब आक्रमण हुआ तो उन्होंने अग्नि के बबूलों से और गर्जन से उसको वापस धकेल दिया। यह तूफान आकाश से उतरा था जिसने आक्रमण करने वालों को नष्ट कर दिया।

थैमिसटियस ने भी लिखा है कि ब्राह्मण लोग दूर से बिजली और गर्जन के द्वारा लड़ा करते थे।

प्राचीन लेखकों के लिए सिकन्दर द्वारा अग्नि के अस्त्रों का उपयोग बड़ा लोकप्रिय विषय रहा है। ऐसा ही एक अस्त्र उसको अलकेज ने दिया था और इसके द्वारा उसने टायर नगर को उड़ा दिया था। शाहनामा में 'केद' नामक एक उस्ताद का उल्लेख है। 'मुज मलूत तवारीख' में केफन्द का नाम आया है और मसूदी ने 'केन्द' लिखा है।

आग का प्रयोग सेना में बहुत काम आ सकता है। हमको तो बल्कि आश्चर्य है कि इसका अधिक उल्लेख क्यों नहीं है। थ्यूसीडाइडीज ने लिखा है कि 'प्लेटा' के घेरे में इसका उपयोग किया गया था। ऐसी ही बात लीवी ने भी लिखी है। ऐनिज एक युद्ध-विशारद यूनानी था और अरस्तू (ऐरिसटोटल) का समकालीन था। उसने अपनी पुस्तक में अग्नि का उपयोग बतलाया है और लगभग ऐसी ही बात ओरेली और जोजेफस ने भी लिखी है।

सिकन्दर ने अरस्तू के नाम एक पत्र लिखा था जिसमें भयंकर ज्वालाओं का उल्लेख है। ऐसी ज्वालाएँ हिन्दुस्तान के मैदान में उसकी सेनाओं को निगल गई थीं और यह स्वयं उसने अपनी आँखों से देखा था। इटली के कवि दाँते ने भी इस परम्परा का उल्लेख किया है।

तेसियस ने लिखा है कि सिन्धु नदी के तट के निवासी हिन्दुस्तानी लोग एक प्रकार का तेल बनाते थे और उसको घड़ों में भर लेते थे। जब उसे किसी लकड़ी की बनी हुई चीज पर फेंका जाता था तो एक ज्वाला उठती थी जो बहुत सा कीचड़

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

डालने पर बुझती थी। यह तेल केवल राजा के लिए ही बनाया जाता था, अन्य कोई व्यक्ति इसे अपने पास नहीं रख सकता था।

ईलियन ने तेसियस को उद्धृत किया है परन्तु कुछ अधिक अच्छे ढंग से लिखा है। उसने लिखा है कि "इस तेल में ऐसी शक्ति है कि यह लकड़ी को ही नहीं, आदमियों और पशुओं को भी जला देता है वल्कि यह जिसको स्पर्श करता है, उसको ही जला देता है। हिन्दुस्तान का राजा इसी के द्वारा नगरों को जीत लेता है। कोई मशीन इसका प्रतिकार नहीं कर सकती। इसको मिट्टी के घड़ों में भरकर नगर द्वारों पर फेंका जाता है। घड़े फूट जाते हैं और तेल फैल जाता है। फिर यह बुझता नहीं है। यह शस्त्र और शस्त्रधारी दोनों को जला देता है।"

इसी तेल का जिक्र करते हुए फिलोसट्रेटस लिखता है कि सतलज नदी में एक सफेद रंग का कीड़ा होता है जो एक प्रकार का तेल उत्पन्न करता है। इसमें से ऐसी ज्वाला निकलती है कि यह कीचड़ से ही बुझ सकती है। यह कीड़ा ही राजा की एकमात्र सम्पत्ति है। इसके द्वारा ही घेरे हुए नगरों की दीवारों को वह नष्ट कर देता है क्योंकि ज्योंही यह नगर प्राचीर को स्पर्श करता है तो ऐसी ज्वाला उत्पन्न हो जाती है कि वह आग को बुझाने के साधारण उपायों से नहीं बुझ सकती।

ये तीनों लेखक इस वात पर सहमत हैं कि यह तेल एक कीड़े से निकाला जाता है। यह कीड़ा वहुत बड़ा और लम्बा होना चाहिए। यह छः-सात हाथ लम्बा और उसी अनुपात में चौड़ा होता था। इस पदार्थ की उपत्ति चाहे जितनी काल्पनिक हो तो भी हमें यह शंका नहीं हो सकती कि यह अतिशीघ्र ज्वलनशील और बड़ा विनाशक था। इस कीड़े के दो दाँत होते थे—एक ऊपर और एक नीचे और इनके द्वारा जो भी जन्तु उसके पास आता था उसे यह खा जाया करता था। दिन में यह कीचड़ में घुस जाता था और रात में भूमि पर आ जाता था। यह वैलों को, यहाँ तक कि ऊँटों को भी ले भागता था। इसको एक वड़े काँटे से पकड़ा जाता था जिसके साथ एक वकरे या भेड़ को जंजीर से बाँध दिया जाता था। पकड़ने के वाद इसको एक महीने तक लटकाया जाता था और उसके नीचे घड़े रख दिए जाते थे जिनमें बहुत-सा तेल भर जाया करता था। प्रोफेसर एच० एच० विलसन का ख्याल है कि यह घड़ियाल होगा। परन्तु उसे यह पता न था कि घड़ियाल से तेल निकाला जाता है। परन्तु जब एक घड़ियाल को उसके सामने चीरा गया तो उसके चमड़े के नीचे वहुत सारी पीली चरवी निकली जिसको तेल के रूप में बदल दिया जाता होगा। परन्तु घड़ियाल के तेल के विषय में या मगर के तेल के विषय में कोई सन्देह नहीं हो सकता। हिन्दुस्तानी औषध ग्रन्थों में इसका उल्लेख है और इसमें आश्चर्यजनक गुण वतलाए जाते हैं। मगर से तैयार की हुई चीजों में स्वाभाविक संत्रास छिपा रहता है। मगर में स्वाभाविक भारी भूख होती है। यही गुण इन पदार्थों में आता है। उस आदमी को भाग्यशाली मानना चाहिए जिसकी निर्बल खाल में मगर का तेल जलता है। यदि बकरे के सिर पर इसको मल दिया जाय तो वह उससे लड़ने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाले सब वकरों को भगा सकता है। इसी भाँति वह नगर भी भाग्यवान है जहाँ मगर का चमड़ा है। यदि नगर प्राचीर पर यह चमड़ा डाल दिया जाय तो वहाँ ओले नहीं पड़ते और वहाँ की फसल पर पाला नहीं पड़ता।

इसलिए हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि भारतीय इतिहास के प्रारम्भिक काल में किसी न किसी प्रकार के अग्नि अस्त्रों का प्रयोग होता था और इसको यथेच्छा जलाया जा सकता था और इससे ऐसे अस्त्र बनाये जाते थे जिनके द्वारा दूर से ही द्वारों और भवनों में आग लगाई जा सकती थी और यह भी वहुत सम्भव है कि इसमें शोरे का उपयोग किया जाता हो। बारूद बनाने में यह मुख्य अंश होता है। गंगा के मैदानों में यह भरा हुआ है और वहाँ आग के विना इसे निकाला जा सकता है। यह भी सम्भव है कि गन्धक का भी प्रयोग किया जाता होगा क्योंकि हिन्दुस्तान के उत्तर पश्चिमी हिस्से में यह बहुत मिलता है।

ऐसा मालूम होता है कि प्रामाणिक इतिहास लिखना प्रारम्भ होने से पहले ही इसका उपयोग बन्द हो गया होगा। इसके विपरीत कथन हैं तो भी हमें यह मानना चाहिए कि जब मुसलमानों के हमले प्रारम्भ हुए तो जलने वाला अस्त्र केवल नेफ्था से ही वनाया जाता था, जो वहुत वहुत पतला होता है और एस्फाल्ट का भी प्रयोग किया जाता था जो वहुत गाढ़ा होता है। ये दोनों चीजें वहुत भारी हैं और इनसे कोई कारगर आग भी उत्पन्न नहीं की जा सकती। इसलिए इन्हें बहुत ही कम काम में लिया जाता था।

यह निश्चित नहीं है कि दक्षिण भारत के मूल निवासी, पुर्तगाली लोगों के मुकावले में आतिशवाजी से ज्यादा परिचित थे और यदि होंगे तो उन्होंने यह कला मिस्र, ईरान और अरव से सीखी होगी। जब मुसलमानों की शक्ति बहुत बढ़ी-चढ़ी थी तो इन देशों के साथ निरन्तर सम्पर्क रहता था। इसलिए देशी या विदेशी किसी प्रमाण के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि वर्तमान काल में हिन्दुस्तान में आग्नेय अस्त्रों का ज्ञान था और वह यूरोप से पहले थे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

टिप्पणी 'ख'

अब्दुल हक देहलवी

ये अवतरण अब्दुल हक हक्की देहलवी के शोध-प्रबन्ध से लिए गए हैं। इनमें कुछ प्रसिद्ध दार्शनिक और कवियों के संस्मरण हैं। ये दिल्ली के निवासी थे। अवतरणों में इनके कुछ लेखों का उल्लेख है और स्वयं देहलवी के लिखे हुए अरबी और फारसी ग्रन्थों की सूची है जो बादशाह नुरुद्दीन जहाँगीर के राज्य में तैयार की गई थी। इस शोध-प्रबन्ध की एक प्रति लोहारु के नवाब जियाउद्दीनखाँ के पास थी। इसका मेजर ए०आर० फूलर, आर्टिलरी ने अँग्रेजी में अनुवाद किया है।

अवतरण

ज्योंही इन अमर ज्योतियों[1] ने मोहम्मद की प्रकाशमान किरणों का प्रतिबिम्ब डाला तो हिन्दुस्तान का प्रत्येक भाग और कोना चमचमा उठा और ये किरणें राजधानी दिल्ली पर भी चमकने लगीं जो पवित्रता के वृत्त का केन्द्र है और ईमान तथा धर्म का सच्चा आश्रय है, क्योंकि इस्लाम धर्म को मानने वाले सब वर्गों के अनेक लोग यहाँ रहते हैं। संसार के सब भागों से तथा अरब और ईरान से बड़े-बड़े शेख, मुल्ला और वक्ता आकर यहाँ बस गए हैं। फिर उन्होंने धर्म और बुद्धि की चमक से इस राज्य के समस्त भागों को प्रकाशित और सभ्य बना दिया है। ये भाग पहले अज्ञान और मूर्ति-पूजा के अन्धकार में छिपे हुए थे।

इन पंक्तियों के लेखक ने (जिसकी ईश्वर विपत्तियों से रक्षा करे) इस राज्य के इतिहास में बादशाहों और अमीरों की कथाओं का समावेश किया है। इस ग्रन्थ का नाम 'जिक्रुल मुल्क' है। इसमें ऐतिहासिक सामग्री भरी हुई है। धार्मिक शेखों का वृत्तान्त 'अखबार-उल-अख्तियार' नामक ग्रन्थ में दिया हुआ है जिस पर प्रसिद्धि की छाप लगी हुई है। निश्चय करने पर भी वह सर्वोत्तम दार्शनिकों और कवियों का वृत्तान्त नहीं लिख सका। यद्यपि उनकी संख्या बहुत बड़ी है तथापि उनके नामों और वंशों का अब कोई चिह्न शेष नहीं है और उनकी रचनाओं का भी अब कुछ पता नहीं लगता परन्तु कतिपय ऐसे व्यक्ति हैं जिनके नामों का उल्लेख किया गया है और उनके साहित्यिक प्रयास का वर्णन किया गया है और उनकी रचनाओं को उद्धृत भी

---

1 वे परम पवित्र और विद्वान लोग जिन्होंने मोहम्मद की मृत्यु के बाद उनका स्थान ग्रहण किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किया गया है। उन विद्वानों में से जिन्होंने सुलतान शमशुद्दीन अल्तमश के पुत्र सुलतान नासुरुद्दीन के शासन-काल को अलंकृत किया था, एक का नाम काजी मिनहाज जुज्जानी था। इसने तबकात-ए-नासीरी का संकलन किया था और यह ग्रन्थ उपर्युक्त सुलतान को भेंट किया गया था। यह पुस्तक लेखक की प्रतिभा का स्मारक है। यद्यपि लेखक को शुद्ध और सुन्दर गद्य पर अधिकार नहीं था तो भी उसकी शैली संक्षिप्त है और उसमें शक्ति और साहस का अभाव है। उसके विषय का कुछ विवरण उपर्युक्त शेखों की जीवनियों में दिया हुआ है और इनका समावेश 'अखबार-उल-अखियार' में हो गया है।

दूसरा लेखक जिया बरनी था। यह तारीख-ए-फिरोजशाही का प्रणेता है। इसने अपना इतिहास सुलतान गयासुद्दीन बलबन के शासन से शुरू किया है। जहाँ "तबकात-ए-नासिरी" समाप्त होती है। इसका इतिहास फिरोजशाह के शासनकाल के सातवें वर्ष तक चलता है। इसके अतिरिक्त इसने अन्य ग्रन्थ और तजकिरे भी लिखे हैं। यह शेख निजामुद्दीन ओलिया का शिष्य था और अखबार-उल-अखयार में उसकी कुछ कहावतों का और कामों का उल्लेख है। इसके बाद एक दूसरा व्यक्ति हुआ जिसने सुलतान फीरोज के शेष शासन-काल का वृत्तान्त लिखा और गुजराती सुलतानों का भी वृत्तान्त दिया। इसकी पुस्तक का शीर्षक 'तारीख-ए-बहादुरशाही' है।

"तारीख-ए-मोहम्मदी" एक ऐतिहासिक ग्रन्थ का नाम है। यह किसी ने लिखा था और "सीराज-ए-अफीफ" ऐसा ही दूसरा ग्रन्थ है। जो लोग अपने गद्य और पद्य दोनों प्रकार की साहित्यिक रचनाओं के लिए प्रसिद्ध हैं उनमें एक जिया-नकशाबी है जो बदायूँ का निवासी था। यद्यपि उसकी पुस्तकों में कोई ऐसा गुण नहीं है जो उल्लेख के योग्य हो। तो भी वह ऐसा व्यक्ति था जो विरक्त होकर एक कोने में जा बैठा था। उस पर निन्दा या स्तुति का कोई प्रभाव नहीं होता था। न वह कोई चीज ग्रहण करता था और न कभी इन्कार करता था। उसके प्रति विश्वास या अविश्वास दोनों एक थे। वह अपना मत खूब प्रकट करता था। अखबार-उल-अखयार में उसका उल्लेख है और उसके लिखे हुए "सिल्क-ए-सुलूक" से लिए हुए कुछ अवतरणों में भी उसका जिक्र है। उसका यह ग्रन्थ बहुत अच्छा है। बदायूँ में एक व्यक्ति और है जो "शहाब महमराह" कहलाता है। इसका उल्लेख अमीर खुसरु की कविताओं में आता है। खुसरु कहता है "इससे शहाब महमराह की कब्र पर कम्पन होता था। इससे प्रकट होता है कि यह व्यक्ति भूतकाल में हुआ था। परन्तु अब उसका कोई ग्रन्थ मौजूद नहीं है।

ताज रेजाह एक निम्न श्रेणी का कवि था जिसने शमशुल मुल्क से प्रतिभा प्राप्त की थी। शमशुल मुल्क सुलतान अलाउद्दीन के समय में सदर (मुख्य मन्त्री) था। उस समय के बहुत से विद्वान उसके शिष्य थे और शेख निजामुद्दीन ओलिया ने भी शिक्षा-प्राप्ति के समय में उससे "मकामात-ए-हरीरी" नामक पुस्तक पढ़ी थी। खुसरु ने लिखा है :

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"अपने अच्छे से अच्छे मित्रों की शुभ कामनाओं के अनुसार सदर को सफलता प्राप्त हो गई है क्योंकि वह हिन्दुस्तान का प्रधान मन्त्री बन गया है।" सुलतान अलाउद्दीन के समय में शमशुल मुल्क बड़े-बड़े विद्वानों का आश्रयदाता था। यद्यपि यह सुलतान विद्वान लोगों की उपेक्षा करता था और उनके प्रति कृपालु नहीं था तो भी जमाने का रंग एक-सा ही बना रहा।

उस समय के दार्शनिकों और कवियों में सबसे अधिक चतुर और प्रसिद्ध मीर हसन और मीर खुसरु थे। मीर खुसरु कवियों का राजा है और दार्शनिकों में अग्रगण्य है। वह आध्यात्मिक ज्ञान से परिपूर्ण था और प्रत्येक प्रकार की साहित्यिक रचना करने में दक्ष था। वह साधारण और असाधारण दोनों प्रकार की शब्द-योजना का पंडित था। वह सीधी-सादी भाषा भी लिखता था और जटिल भाषा भी। उसने बहुत से छंद लिखे हैं और कई दीवानों की रचना की है। अपने छंदों के संग्रह के विषय में उसने एक हास्यमयी पहेली कही है, "मेरे छन्द चार लाख से कम लेकिन तीन लाख से अधिक हैं।" मीर हसन के विषय में यह बात है कि यद्यपि उसने अधिक कविता नहीं लिखी परन्तु जो कुछ लिखा है वह सुखद संगीत है। प्रसिद्ध शेख ने दोनों की शैलियों के विषय में जो लिखा है वह पर्याप्त है। वह लिखता है कि खुसरु नमक का समुद्र है और हसन मधुर धारा है।

अलाउद्दीन के शासन के अन्त के बाद बुद्धि और विद्या का स्तर नीचे गिरने लगा और साहित्य ने बिल्कुल दूसरा ही रूप धारण कर लिया। यद्यपि सुलतान मोहम्मद तुगलक सब प्रकार की विद्याओं की कदर करता था तथापि उसके समय में उतने विद्वान नहीं थे जितने अलाउद्दीन के शासन-काल में एकत्र हो गए थे। उस समय देहली नगर का एक सबसे प्रसिद्ध संत और दार्शनिक मौलाना मुइनउद्दीन उमरानी था जो कंज, मीनार, हुसामी, तलखी और मिफता पर अच्छी और उपयोगी टीकाओं का लेखक था। सुलतान मोहम्मद ने उसे शिराज भेजा और काजी अब्दुल मिलत वादद्दीन अलीची को बुलवाया और उससे प्रार्थना करवाई कि कोई उपयुक्त ग्रन्थ तैयार करे जिसका नाम मुआकिफ हो और जो उस सुलतान को भेंट किया जाय। ज्योंही मौलाना काजी के निवास-स्थान पर पहुँचा तो वह उसको हिन्दुस्तान आने के लिए समझाने लगा और जो कुछ सुलतान मोहम्मद उससे करवाना चाहता था, उससे उसे अवगत किया। इस पर उस समय के शाह ने काजी से मिलकर अपना समस्त राज्य और सत्ता उसे दे देने का प्रस्ताव किया। काजी ने सद्बुद्धि और विनय का तकाजा समझ कर हिन्दुस्तान की यात्रा करने का विचार अपने मन से निकाल दिया और अपने ही शाह के दरबार में रहने का निश्चय कर लिया।

सुलतान फीरोज के शासनकाल में भी बहुत से सन्त, दार्शनिक और कानून के ज्ञाता थे जिनका अध्ययन और विद्वत्ता के सिंहासन पर स्थान था। "तातार-खानी" कानून और धर्म पर एक लम्बा और बड़ा ग्रन्थ है। यह उसी शुभ सुलतान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के समय में लिखा गया था और इसके लेखक मौलाना अलीम अन्धपथी ने तातारखाँ को भेंट किया था जो राज्य का एक मुख्य अधिकारी था। इस तातारखाँ के लिए कहा जाता है कि यह अलाउद्दीन का एक अमीर था। परन्तु इसकी वास्तविकता ईश्वर ही जाने। फीरोजशाह के समय का एक विद्वान पुरुष मौलाना ख्वाजगी था जो काजी शाहबुद्दीन दौलताबादी का उस्ताद था। मौलाना अहमद थानेसरी और काजी अब्दुल मुक्तदिर शनीही भी उस समय के प्रसिद्ध साहित्यिक व्यक्ति थे। इनमें शनीही का ज्ञान बड़ा विस्तृत था और वह उत्तम काव्य की रचना करता था। उसकी अरबी की कविताएँ फारसी की कविताओं से भी अच्छी होती थीं। ईरान और अरब के चतुर और प्रतिभावान लेखकों ने मिलकर यह विचार किया कि "लामियातुला अजम" जैसी रचना की जाय। यह बड़ा प्रसिद्ध दुखांत काव्य है। तब काजी शनीही ने भी इसकी प्रतिद्वन्द्विता करने का प्रयास किया और इसमें उसको बड़ी सफलता प्राप्त हुई। इसी प्रकार मौलाना अहमद थानेसरी ने भी अरबी भाषा में काव्य लिखा। उसकी दुखांत कविताओं की प्रतिलिपियाँ अखबार-उल-अखयार में दी हुई हैं और ये उसकी प्रसिद्ध प्रतिभा और बुद्धि के प्रमाण हैं। फीरोजशाह के शुभ शासन के बाद इस देश की सल्तनत का अन्त हो गया। वह हिन्द का अन्तिम बादशाह था। प्रत्येक जिले में, स्वाधीन शासक खड़े हो गए। सुलतान इब्राहीम शर्की के समय में जो जौनपुर की ओर राज्य करता था, काजी शाहबुद्दीन जावली दौलताबादी हुआ जो इस राज्य का एक चमकता हुआ सितारा था। उसके समकालीन लोग उसको 'संतों का बादशाह' कहते थे। उस समय विद्वान लोग तो कितने ही थे परन्तु इसकी सी प्रसिद्धि और लोकप्रियता और किसी की नहीं थी। यह कई ऐसे ग्रन्थों का लेखक है जिन पर प्रसिद्धि और लोकप्रियता की छाप है। जैसे ह्वांश-काफिया जो उसकी सर्वोत्तम कृति है और इरशाद तथा वादी-उल-बयान आदि। उसने पजहदानी पर एक अपूर्ण टीका लिखी है और फारसी भाषा में "बहर-ए-मव्वाज" नामक एक विवेचनात्मक ग्रन्थ लिखा है। वह अपने वाक्यों के सन्तुलन के लिए बड़ा परिश्रम करता है और इस उद्देश्य से उसने बहुत से बेहूदे और असंगत शब्दों का प्रयोग किया है। इस दोष के अतिरिक्त यह ग्रन्थ लाभप्रद और उपयोगी है और इससे ज्ञान तथा शिक्षा प्राप्त हो सकती है।

काजी शाहबुद्दीन की मृत्यु के बाद मौलाना शेख-उल-हदाद, जौनपुरी साहित्य रचना के लिए अपनी कलम चलाने लगा। यह धर्मात्मा और आडम्बरहीन फकीर था। इसने काजी की टीकाओं पर अपनी टिप्पणियाँ लिखीं और हिदाया, मदारिक और पजहदानी का भी भाष्य किया। परन्तु उसके उत्तरों की अपेक्षा उसके प्रश्न प्रत्यक्ष में अधिक जोरदार हैं। काजी की टीका पर उस देश के और भी लोगों ने टिप्पणियाँ लिखी हैं परन्तु औरों की अपेक्षा मियानुल हदाद की टिप्पणियाँ अधिक अच्छी और संगत हैं। उस देश के साहित्यिक लोग, व्याकरण, वाक्य-रचना और धार्मिक कानून पर तथा इन विषयों के मूल सिद्धान्तों पर ध्यान नहीं देते थे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और तर्कशास्त्र का तो अध्ययन बहुत ही कम किया जाता था। यह वास्तव में विलीन हो गया था। सुलतान फीरोज के राज्य का एक कवि मुहत्तर कुराह था। उसकी शैली में सौन्दर्य और माधुर्य की कमी नहीं थी। वह एक दीवान और कई दुखान्त कविताओं का लेखक था परन्तु उसकी दुखान्त कविताएँ अब अति दुर्लभ हैं। वास्तव में वर्तमान काल में ये कहीं मिलती ही नहीं हैं। उसने शेख नासिरुद्दीन मोहम्मद के वर्णन पर कई पंक्तियाँ लिखी हैं जो अखबार-उल-अखयार में दी हुई हैं। इसी थोड़े से समय में मुगीज हंसवी नामक एक व्यक्ति हुआ था, जिसका व्यावहारिक और दार्शनिक वार्ताओं के लिए साहित्यिक संसार में ऊँचा स्थान था। उसने एक ग्रन्थ लिखा था जो बहुत प्रचलित नहीं है। इस लेखक का उल्लेख शेख नासिरुद्दीन महमूद की जीवनी में किया जा चुका है।

एक और साहित्यकार जहीर देहलवी हुआ है। उसकी शैली में ताजगी की कमी थी। इसलिए शेख जमाली उसको जहीर कहा करता था। सुलतान सिकन्दर लोदी और नासिरुद्दीन हुमायूँ बादशाह के समय में यह शेख जमाली नगर के मुख्य अमीरों में गिना जाता था। यह एक दीवान का लेखक है जिसमें दुखांतक और उपदेशात्मक कविताएँ हैं। उसने एक मसनवी भी लिखी है जिसका नाम "मिहर-ओ-माह" है। यह भी एक उपदेश ग्रन्थ है। इसके पश्चात् उसके पुत्र ने भी बड़ी प्रतिभा और परिमार्जित बुद्धि का परिचय दिया। वह वर्तमान समय में यदि जीवित होता तो यह युग कविता का आदर्श युग बन जाता। लोग कहते हैं कि उसने सलीमशाह के संरक्षण में एक इतिहास संकलित करके प्रकाशित किया था। परन्तु यह नहीं मिलता है। आगे चलकर वर्तमान युग के ठीक पहले लेखक का पिता शेख सैफूद्दीन हुआ जिसका उपनाम सैफी था और जो अपनी शैली की सुन्दरता के लिए अपने समय के हिन्दुस्तानी साहित्यकारों में प्रसिद्ध था। इस महान व्यक्ति की मृत्यु पर आपके विनीत सेवक को जो धक्का लगा उसका अमीर खुसरु ने अपने पिता के मरसिये में वर्णन किया है :

"तलवार मेरे सिर पर चल गई है। मेरे हृदय के दो टुकड़े हो गए हैं, नदी बह गई और पितृहीन मोती पीछे पड़ा रह गया।" उसने ईश्वर विषय पर और ईश्वर की एकता पर कई पुस्तकें लिखी हैं। उसकी कविताएँ बहुत थीं। यदि वह उनका संग्रह और प्रकाशन करना चाहता तो एक पूरा दीवान बन जाता। परन्तु उसे लोकप्रियता पसन्द नहीं थी और प्रशंसा के प्रति उसकी उपेक्षा थी। इसलिए उसने इस बात पर ध्यान नहीं दिया। उसका मन ईश्वर की एकता के विचार में मग्न रहता था। अखबार-उल अखयार के अन्त में उसके जीवन की कुछ घटनाएँ दी हुई हैं जिससे उसकी प्रतिभा के क्षेत्र का कुछ ज्ञान होता है अन्यथा उसकी कल्पना करना असम्भव है।

इस विनीत सेवक का यशस्वी चाचा जिसका साहित्यिक नाम शेख रिज कुल्ला था, उस समय का आश्चर्य था। उसका चरित्र सब भाँति पूर्ण और ईमानदार था

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और वह सत्पथ पर चलता था। वह प्रेम और भक्ति का हार्दिक उपासक था। उसने फारसी और हिन्दी दोनों में कई सुखद रचनाएँ की हैं। उसकी हिन्दी रचनाएँ बड़ी प्रसिद्ध हैं। तारीख-ए-वाकियात-ए-मुश्ताकी, जिसमें सुलतान बहलोल लोदी और अन्य लोगों के साहस के कामों का वर्णन है, उसी का लिखा हुआ ग्रन्थ है। फारसी में उसका साहित्यिक नाम मुश्ताकी है और हिन्दी में रागन।

मौलाना हसन नकशी शेख ताजुद्दीन और मौलाना अली अहमद निशानी की गणना भी उस समय के सन्तों, कवियों और ज्ञानियों में थी। इसके अतिरिक्त इस नगर में और हिन्दुस्तान के अन्य नगरों में अनेक विद्वान् और प्रतिभावान पुरुष थे तथा अनेक कवि थे। उनका पूरा विवरण दिया जाय तो बहुत विस्तार हो जायगा। इस समय हमारा उद्देश्य केवल उन स्वर्गीय लेखकों की संक्षिप्त जीवनियाँ लिखना है जो अपने पीछे कुछ रचनाएँ छोड़ गए हैं। व्यक्तियों के अनेक नाम लिखना यहाँ उद्देश्य नहीं है।

उन लोगों में से जिन्होंने अभी हाल के युग में कविता की है और जो साहित्यिक शिखर पर पहुंच गए हैं एक नाम आगरे के फैजी का है। उस समय वह अपने लालित्य और प्रगल्भता के लिए बहुत प्रसिद्ध था। परन्तु यह खेद की बात है कि वह भूलों और अविश्वास में डूब गया। इसलिए उसकी बड़ी निन्दा हुई। सब धार्मिक लोग और मुसलमान मित्र उसका नाम भी नहीं लेते और उसकी निन्दनीय मण्डली का उल्लेख नहीं करते।

जिन्हें लोग आशीर्वाद देते हैं और जिन्हें अच्छा माना जाता है उनमें से एक व्यक्ति नूर-उल-हक है। इसे मशरीकी भी कहा जाता है। वह बुद्धि और प्रतिभा के नेत्रों का प्रकाश है। उसकी प्रतिभा और विद्या का प्रकाश उत्तमता के शिखर पर पहुंचा हुआ है। मुझे विश्वास है कि यदि वह इस समय के कवियों की भाँति अपनी समस्त शक्ति रात और दिन काव्य-रचना में लगा देता तो वह निजामी और खुसरु जैसी सुन्दर रचनाएँ कर सकता था। यही नहीं, बल्कि उनसे भी बढ़ कर निकलता। परन्तु उसका मन और ध्यान विज्ञान, धर्म और अन्य गुणों पर इतना लगा रहता था कि उसे काव्य रचना के लिए समय नहीं मिलता था। ईश्वर उसकी समृद्धि और सम्पत्ति के सितारे को विस्मृति में न डूबने दे। प्यारा बच्चा मोहम्मद हाशिम भी अपने भाई का अनुयायी है और उसकी बहुत अच्छी नकल कर सकता है। वह भी गुण और विज्ञान प्राप्ति में लगा रहता है। उसका स्वभाव उदारता और शक्ति के लिए प्रसिद्ध है। धार्मिक साहित्य का उसे बड़ा अभ्यास है। ईश्वर उसे अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता प्रदान करे।

"इसके बाद लेखक अपनी कलम से बातें करने लग जाता है और फिर उसकी प्रार्थना पर अन्त में अपना और अपनी कृतियों का विवरण लिखने लगता है।"

आपके विनीत दास का संक्षिप्त जीवन-चरित्र निम्नलिखित सन्दर्भ में है। कवि हक्की विनय और उच्चता के मार्ग पर भटका करता है। यह झक्की पुरुष

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था। बुद्धिमानों की संगति के प्रभाव से वह ज्ञान और विज्ञान की प्राप्ति में कुछ समय तक लग गया। लोग कहते हैं कि "पागलपन से विज्ञान में बड़ा आनन्द आता है।" यह भी लिखा है कि विज्ञान से पागलपन उत्पन्न होता है। इसलिए जब उसने देखा कि उसमें इस काम के लिए क्षमता नहीं है तो उसने पागलपन बिल्कुल छोड़ दिया।

[इसके बाद लेखक की कलम उससे प्रार्थना करती है कि कुछ धार्मिक और सन्त प्रकृति वाले लोगों का कुछ विवरण लिखें। तब वह इस प्रकार उत्तर देता है।]

कहीं-कहीं इन लोगों का पूरा वृत्तान्त दिया गया है। इन कहानियों का आरम्भ अखबार-उल-अखयार के अन्त में होता है। वहाँ इस देश के शेख लोगों की जीवनियाँ दी हुई हैं। यहीं जुजबुल कुलूब का मध्य भाग दिया हुआ है जो मदीना नगर का इतिहास है। यही जादुल मुताकीईन का अन्तिम भाग लिखा हुआ है जिसमें दोनों पवित्र स्थानों के शेखों की जीवनियाँ हैं। तथापि मैं इन सब बातों को संक्षेप में लिखूँगा और उन बातों का भी उल्लेख करूँगा जो उस पुस्तक में नहीं हैं जिससे इन जीवनियों के द्वारा मेरा मुख्य उद्देश्य पूरा हो जाय। मेरा उद्देश्य अपनी कृतियों का वर्गीकरण करना है।

[इसके बाद लेखक लिखता है कि अपनी युवावस्था में उसने अध्ययन में क्या उन्नति की। फिर वह अपनी मक्का की यात्रा और वहाँ उसे जो बुद्धि-लाभ हुआ उसका वर्णन करता है। पुनः वह लिखना जारी रखता है।]

जिन पुस्तकों का अब मैं वर्णन करूँगा उनकी रचना उस शुभ यात्रा में मेरी वापसी पर की गई थी परन्तु अखबार-उल-अखयार और अदावस सालिहिन तथा एक या दो पुस्तकें व्याकरण और तर्क पर पहिले ही लिखी जा चुकी थीं। इनका खाका उसी समय तैयार कर लिया था, जबकि मैं शिक्षा प्राप्त कर रहा था परन्तु बाद में इनको शुद्ध करके व्यवस्थापूर्वक जमाया गया था। अब मैं उपर्युक्त ग्रन्थों को उपस्थित करके अपने लेख को समाप्त करता हूँ। इनके नामों पर एक अलग ही पुस्तक लिखी जा चुकी है जिसका शीर्षक तालीफ-ए-कुलबिल अलिफ-बाकिताबती फहरिश्ति-तवालीफ है। ये पुस्तकें विभिन्न भाषाओं में लिखी गई हैं। कुछ अरबी में हैं और कुछ फारसी में है। अरबी की पुस्तकों का वर्णन अरबी में और फारसी की पुस्तकों का वर्णन फारसी में कर दिया गया है।

[इसके बाद वह अपने ग्रन्थों की विवरणात्मक सूची प्रारम्भ करता है।]

"तारीख-ए-सलानीन-ए-हिन्द" की मूल प्रति में तीन हजार छन्द थे परन्तु जब इसमें इस देश के विभिन्न भागों में राज करने वाले सुलतानों के नाम जोड़े गए तो चार हजार छन्द हो गए। पहिले के संग्रह में ये नाम नहीं लिखे गए थे। अब इस पुस्तक का नाम जिक्र-ए-मुलूक हो गया।

रिसारह नूरीयाह सुलतानयाह—इसमें सरकार के नियम, उपनियम, संस्थाओं और शासन की विधि का वर्णन है। इसमें महत्त्वपूर्ण मामलों की व्यवस्था भी इसमें दी हुई है। यह पुस्तक उस समय के बादशाह के नाम से अलंकृत है। इसमें एक हजार छन्द हैं।

बासठवें ग्रन्थ का नाम तलबूत नूर है। इसमें लाहौर यात्रा की घटनाओं का वर्णन है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परिशिष्ट 'ग'

जहाँगीर के आदेशों की समीक्षा

इन आदेशों की बादशाह के भक्तों ने बड़ी प्रशंसा की है। हमें देखना चाहिए कि वह इस प्रशंसा का कहाँ तक अधिकारी है, ये आदेश कहाँ तक मौलिक थे और वह स्वयं इनको कहाँ तक मानता था।

प्रथम आदेश

मैंने तमगा और मीर बहरी नाम के कर लगाने का निषेध कर दिया और साथ ही वे सब प्रकार के कर भी जिनको प्रत्येक सूबा और सरकार के जागीरदार अपनी ही ओर से लगाया करते थे, बन्द कर दिये।

समीक्षा—इससे उसके पिता के शासन की अनुदार आलोचना होती है। तमगा और मीर बहरी का निषेध उसने भी इसी प्रकार किया था। मुसलमानों से तमगा लेना बाबर ने भी बन्द कर दिया था। "आदेश जारी कर दिए गए हैं कि किसी नगर, कस्बे, मार्ग, बाजार या बन्दरगाह पर तमगा न लिया जाय।"[1]

"बादशाह अकबर ने अपनी जन-हितैषिता के आवेश में इस महकमे के सब कर माफ कर दिए हैं। इनसे एक रियासत की आमदनी के बराबर आय हुआ करती थी। अब निर्यात या आयात पर कोई कर नहीं लिया जाता है। बन्दरगाहों पर थोड़ा सा कर वसूल किया जाता है जो दो या ढाई प्रतिशत से अधिक नहीं होता। व्यापारी लोग इस कमी को पूरी माफी मानते हैं। "उपरोक्त अवतरणों में से एक से प्रकट होगा कि जहाँगीर की कमी का मतलब भी यही था अर्थात् दो या ढाई प्रतिशत कर लिया जाता था।"

"मुकर्रबखाँ ने (जो खंभात का सूबेदार था और जिसको सूरत में शाही कर के संग्रह के अतिरिक्त और कोई अधिकार न था) मेरे सामान पर कब्जा करने के लिए जो सामान चाहा लिया और जो चाहा छोड़ा तथा मुझे ऐसी कीमत दी, जो उसकी जंगली अन्तरात्मा कहती थी। जब 35 रुपये तय हो गये तो उसने मुझे केवल 18 रुपये दिए।[2]

---

1 ग्लेडविन, आइन-ए-अकबरी, जि॰ 1, पृ॰ 233।

2 केप्टेन हाकिन्स-नेरेटिस इन पुर्चास पिलग्रिम्ज, जि॰ 1, पृ॰ 208।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सभी काफिलों को मुलतान में दस या बारह दिन ठहरना पड़ता था। तब सूबेदार उनको आगे चलने की अनुमति देता था। इसका प्रयोजन यह था कि उनको वहाँ ठहरने से नगर को लाभ हो। हम पाँच दिन तक वहाँ ठहरे और फिर कुछ भेंट देकर वहाँ से प्रस्थान करने की अनुमति प्राप्त कर सके।"[1]

मैंने देखा कि जो अँग्रेज अहमदाबाद में बस गए थे उनको वहाँ का सूबेदार उनके और उनके सामान के मामले में बहुत उत्पीड़ित किया करता था। उससे अर्थदण्ड लिया जाता था, मनमाना धन एकत्र किया जाता था और उन्हें कारावास में रख दिया जाता था और जब उनका सामान बन्दरगाह पर आता था तो उस पर प्रत्येक कस्बे में कर वसूल किया जाता था।

दूसरा आदेश

मैंने आदेश दिया कि जिन रास्तों पर लुटेरों का डर है वहाँ अधिकांश शून्य स्थानों पर एक मस्जिद और सराय बना दी जाय और एक कुआं खुदवाया जाय जिससे वह प्रदेश आवाद हो और लोग वहाँ निवास करने के लिए प्रेरित हों। जहाँ ये स्थान जागीर के क्षेत्र में हों वहाँ सारी व्यवस्था जागीरदार के खर्चे से करवाई जाय। परन्तु जहाँ खालसा हो वहाँ इस काम को सरकार करे।

समीक्षा—इससे जागीरों की कीमत बहुत घट गई होगी। दसवें आदेश में बादशाह कहता है कि उसने उन जागीरों की पुष्टि की जो उसके पिता के समय से चली आई थीं। आगे चलकर अच्छे आबाद रास्तों पर भी सरकार ने खालसा के इलाकों में सरायें आदि बनाने पर खर्च नहीं किया और सारा भार बेचारे जमींदारों पर डाल दिया।[2] सरायों का निर्माण उसके समय से पहले ही प्रायः हो चुका था। जहांगीर ने सोचा था उससे भी अधिक पास-पास शेरशाह और सलीमशाह ने सराएँ बनवाई थीं।

"सर आर० शिरले ठट्ठा में ठहरा रहा और जब उपयुक्त अवसर आया तो उसने आगरे के लिए प्रस्थान किया जहाँ वह बड़े लम्बे और टेढ़े रास्ते से पहुंचा। इन रास्तों में चोर बहुत तंग करते थे।[3] उसके पिता ने भी ऐसा ही आदेश दिया था। उसने सेनापति को आदेश दिया था कि "उसे तालाब और कुए के बनाने पर, बाग लगाने पर, सराएँ और अन्य उपयोगी धार्मिक निर्माणों पर ध्यान देना चाहिए और देखना चाहिए कि जो गिरने लग गए हैं, उनकी मरम्मत की जाय।[4]

"इस राज्य में यात्रियों और नये आए हुए लोगों के सुख के लिए सराएँ या मकान नहीं हैं परन्तु नगरों और कस्बों में उनके स्वागत को सुन्दर इमारतें हैं जो

---

1 जर्नी आफ आइरन स्टील एण्ड जे० क्राऊथर, पृ० 521।
2 प्राइस-मेमोयर्स, पृ० 90।
3 केप्टेन वाल्टर पेटन-पुर्चास पिलग्रिम्स, पृ० 530।
4 ग्लेडविन-आइन-ए-अकबरी, जि० 1, पृ० 297।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सराएँ कहलाती हैं। इनका निर्माण जनता के लोगों ने करवाया है। बहुत से हिन्दू अपना धन, दान, सराएँ बनाने में, कुंए बनाने में और तालाब या रास्ते बनाने में लगाते हैं।[1] इस प्रबन्ध के कारण राजकोष पर बड़ा जोर पड़ा होगा क्योंकि उस समय पुलिस की दशा ठीक नहीं थी। इसका चित्र हमारे यात्रियों ने खींचा है। "इस समय इलाका चोरों से और डाकुओं से इतना भरा हुआ है कि बादशाह के राज्य के किसी भी भाग में लोग अपनी हिफाजत किए बिना बाहर नहीं निकलते। ऐसा मालूम होता है कि सब ही लोग विद्रोह कर रहे हों।"[2]

"उस महीने के शेष भाग में मैं इस काफिले की प्रतीक्षा करता रहा जो आगरे से सूरत जाता है। मैं उसके साथ अपने कागज सुरक्षित रूप से भेजना चाहता था।[3] जिस रास्ते पर बहुत आवागमन था, उसके विषय में कहा गया है कि खंभात अहमदाबाद से 38 कोस है।[4] "रास्ते में डाकुओं ने मेरे कपड़े और जो कुछ मेरे पास था, सब कुछ छीन लिया। आगरे से सिन्ध जाना इतना ही कठिन है जितना सूरत जाना। परन्तु सिन्ध के मार्ग पर चोरियाँ अधिक होती हैं।[5] आगरे से लाहौर का मार्ग और अधिक बड़ा और प्रसिद्ध था। इसके दोनों ओर वृक्ष लगे हुए थे। इसके विषय में रिचर्ड्स स्टील और जॉन क्राऊथर लिखते हैं, "रात में इस रास्ते में चोरों का बड़ा खतरा है परन्तु दिन में यह सुरक्षित है।"[6] ऐसे दिनों में इन सरायों का निर्माण किया गया होगा अन्यथा यात्रा और व्यापार असम्भव हो जाता।

तीसरा आदेश

रास्ते पर किसी व्यापारी के सामान की गठरी को कोई आदमी नहीं खोलेगा और यदि खोलेगा तो मालिक की आज्ञा से खोलेगा। साम्राज्य भर में कोई सरकारी अफसर किसी मृतक काफिर या मुसलमान की सम्पत्ति पर कब्जा नहीं करेगा। मृतक की समस्त निजी और वास्तविक सम्पत्ति केवल उसके उत्तराधिकारियों को ही मिलेगी। यदि उत्तराधिकारी न होंगे तो इस काम के लिए नियत किए हुए हाकिम सामान को अपनी सुपुर्दगी में लेंगे, और उसकी कीमत सरायों के निर्माण पर, पुलों के जीर्णोद्वार पर और तालाब तथा कुए खुदवाने पर खर्च की जाएगी।

समीक्षा—यह तैमूर के आदेशों की आवृत्ति है, परन्तु इस पर कहाँ तक आचरण होता था, यह जहाँगीर के पौत्र औरंगजेब के इतिहास को देखने से मालूम

---

1 रेवेरेण्ड टेरा-पुर्तगोज पिलग्रिम्ज, पृ० 1470-75।

2 विलियम हाकिन्स-पुर्चास पिलग्रिम्ज, जि० 1, पृ० 230।

3 सर टी० रो-कर्स कलेक्शस आफ वाइजेज एण्ड ट्रेवल्स, जि० 9, पृ० 320।

4 विलियम फिंच-पुर्चास पिलग्रिम्ज, जि० 1, पृ० 230।

5 निकोलस वीटिंगटन-कर कलेक्शन्स, जि० 9, पृ० 131।

6 जर्नी फ्राम अजमेर टू इस्फहाल-पुर्चास पिलग्रिम्ज, जि० 1, पृ० 520

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

होता है । औरंगजेब ने पुनः आदेश दिया था कि मृतक प्रजा की सम्पत्ति को जब्त करने का रिवाज बन्द होना चाहिए जो उसके पूर्वजों के समय में जारी था[1] ।

"दौलतखाँ मेरे पिता के अन्तःपुर में प्रधान नाजिर था और उसे नाजिर-उद्दौला की उपाधि प्राप्त हुई थी । इस आदमी के विषय में मैं कहूँगा कि रिश्वत लेने में और कर्तव्य सिद्धान्तों की उपेक्षा में साम्राज्य भर में वह अद्वितीय था । उसकी मृत्यु के समय नकद के रूप में वह दस करोड़ अशर्फियाँ छोड़ कर मरा था और प्रत्येक अशर्फी पाँच मिथकल के बराबर थी । इनमें जवाहरात शामिल नहीं थे, जिनकी कीमत तीन करोड़ रुपए थी । यह सारी सम्पत्ति मेरे पिता के कोष में पहुँची थी ।"[2]

मेरे पिता का आदेश और भी अधिक उदार था । "हाकिम मृतकों के सामान की देखरेख करें और उनके रिश्तेदारों या उत्तराधिकारियों को दे दें । परन्तु यदि सम्पत्ति पर दावा करने वाला कोई न हो तो उसको सुरक्षित रखा जाय और उसका हिसाब दरबार में भेजा जाय, ताकि जब कोई सच्चा उत्तराधिकारी आए तो यह इसे ले ले । हाकिम को चाहिए कि इस मामले में अपनी आत्मा को साक्षी करके धर्मपूर्वक काम करे अन्यथा कहीं वही हाल न हो जाय जो कुस्तुनतुनिया में होता है ।

कस्बों में व्यापारी सामान की गाँठों को खोलने में लोग आगा-पीछा कम करते थे । लाहौर के निवासियों को शहजादे का अधिक से अधिक भव्य स्वागत करने के लिए प्रोत्साहन दिया गया था और उनसे कहा गया था कि बाजारों को और सड़कों को सुनहरी काम के कालीनों से, तस्वीरों वाले पर्दों से, जो यूरोपीय और चीनी दोनों प्रकार के हों, जरदोजी की छतरियों से सजाया जाय और यह सजावट नगर के बाहर चार कोस तक हो । कोतवाल को आदेश दिया गया था कि ऐसी सजावट चार पाँच दिन तक तैयार रखी जाय ।

"मुगल बादशाहों की यह प्रथा थी कि जब उनके अमीर मरते थे तो उनका सारा कोष सरकार में ले लिया जाता था और बादशाह की जो इच्छा होती थी उतना उस अमीर के बच्चों को दिया जाता था । परन्तु बच्चों के साथ दयापूर्ण व्यवहार होता था । मेरे समय में राजा गजनाथ की, जो मूर्ति पूजकों में बड़ा सरदार या शहजादा माना जाता है, मृत्यु हो गई । उसकी सम्पत्ति राज में जब्त कर ली गई । जवाहरात, चाँदी और अन्य कीमती चीजों के अतिरिक्त उसके पास केवल सोना ही साठ मन था । उस समय एक मन चौबीस पौंड[3] का होता था ।"

1 मीरातुल आलम ।

2 प्राइस—मेमोयर्स, p. 34 । दौलतखाँ की मृत्यु जहाँगीर के शासनकाल के सातवें वर्ष में हुई थी । इसलिए मृतक मुसलमान की यह प्रभूत सम्पत्ति पिता के कोष में पहुँची होगी । देखो केवलराम का "तजकिरात-उल-उमरा" हस्तलिखित प्रति ।

3 विलियम हाकिन्स—पुर्चास पिलग्रिम्स, जि॰ 1, p. 220 ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"पिछली रात को गुजलफान ने लाहौर में सूवेदार शेख फरीद के जवाहरात बादशाह के सामने प्रस्तुत किए। शेख फरीद अभी मरा ही था।"[1]

"मेरा विचार था कि इसका सम्बन्ध उसके सेवक हरगोनेन से है जो अभी हाल में मरा था और जिसकी सम्पत्ति बादशाह के लिए जब्त कर ली गई थी।"[2]

"इस साम्राज्य में किसी व्यक्ति को भूमि उत्तराधिकार में प्राप्त नहीं होती। लोगों को कोई अधिकार ही नहीं था। यह बादशाह की इच्छा पर निर्भर है। इसलिए बहुत से अमीर जितना कमाते हैं उतना खर्च कर देते हैं। व्यापारी लोग और अन्य लोग अपना धन छिपाने में बड़ी सावधानी करते हैं अन्यथा उनको निचोड़ लिया जाता है। बड़े आदमियों के लड़कों के लिए निर्वाह के निमित्त बादशाह कुछ छोड़ देता है परन्तु ये लड़के अपनी स्थिति को उसी अवस्था में सुधार सकते हैं जब उन पर भी बादशाह की वैसी ही कृपा हो जैसी उनके पिता पर थी।"[3]

"वन्दरगाहों में और सीमाशुल्क चौकियों पर बड़ा भ्रष्टाचार है। सूवेदार मनमानी कीमत पर सामान छीन लेता है। रो के साथ आतिथ्य और आदरपूर्वक वर्ताव किया गया था परन्तु सूवेदार ने उसके सामान की भी तलाशी लिवाई थी और कुछ सामान भी ले लिया गया था।[4] उसके शब्द ये हैं "हम वहाँ 30 अक्टूबर तक रहे। सूवेदार ने हमको बहुत तंग किया। उसने हमारे कितने ही सन्दूकों और पेटियों की तलाशी लिवाई और जो चाहा ले लिया।"[5]

शहजादे ने रास्ते में भेंटों और सामान को रोक लिया था क्योंकि वह अपनी अधम और लोभी प्रवृत्ति को सन्तुष्ट करना चाहता था। इस देश में यह प्रथा है कि यहाँ के भले आदमी बादशाह से भी पहले व्यापारी सामान को देखा करते हैं ताकि उन्हें जो पसन्द हो उसे ले लें।[6]

"इसी अर्से में बादशाह ने अपने तौर पर सन्दूक मंगवा कर खुलवा लिए थे।"[7] "उसने सन्दूक खुलवाया और पादरी को बुलवाकर पत्र पढ़वाया और सन्दूकों में जो कुछ था देखा, परन्तु उसे कोई चीज पसन्द न आई। इसलिए उसने सब चीजें लौटा दीं।"[8]

---

1 सर टी० रो—केर्स कलेक्शन, जि० 9, p. 346।
2 उपर्युक्त, p. 346।
3 उपर्युक्त, p. 414।
4 एलफिन्सटन—हिस्ट्री आफ इण्डिया, जि० 2, p. 323।
5 सर टी० रो०—केर्स कलेक्शन, जि० 9, p. 255।
6 उपर्युक्त, p. 327।
7 उपर्युक्त, p. 329।
8 उपर्युक्त, p. 341।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"मैंने कहा कि यदि किसी प्रकार हमसे वलपूर्वक सामान लिया जाता रहा और यदि वह हमें वापस न मिला और न उसकी कीमत मिली तो हमारा निर्वाह असम्भव हो जायगा। यह वात मैंने कुछ गरम होकर कही। वादशाह ने "वलपूर्वक" शब्द पर ध्यान दिया और उसे दोहराकर अपने पुत्र से बुरा भला कहा। तव शहजादे ने वायदा किया कि जो कुछ मुझसे लिया गया है उसका मूल्य दे दिया जायगा। उसने यह भी कहा कि उसने कुछ नहीं लिया है केवल भेंटों पर मुहर लगाई गई है। इनका महसूल अफसरों को नहीं दिया गया है। इसलिए ये चीजें उसने अपने सामने खुलवाई हैं।"[1]

"निजी सामान को देखने का यह तरीका अपमानजनक था परन्तु स्थानीय अधिकारी इसके पक्ष में थे। इसके साथ ही वे सामान को सिद्धान्तहीन तरीके से जांचा करते थे और इस भाँति वहुत कीमती चीजों को मामूली कीमत पर ले लिया करते थे और अधीन अफसर सोना या कोई अन्य मूल्यवान वस्तु लिए विना ऐसे मौके को हाथ से नहीं जाने देते थे। ऐसे मौकों पर अधिकारी की पसन्द, रुचि और लोभ का दौरदौरा होता था। इससे पहले के यात्रियों की भी यही शिकायत थी कि उनसे जवरदस्ती चीजें ले ली जाती थीं।"[2]

"एक वार ऐसा हुआ कि सूरत से राजदूत के पास एक कारवाँ आ रहा था तो उसने उसको पकड़ लिया। इसमें ऐसी चीजें थीं जो उसको और उसके दरवारियों को भेंट की जाने वाली थीं और इस कारवाँ का लाभ उठाकर कुछ दूसरे व्यापारियों ने भी अपना सामान इसके साथ भेज दिया था। उसने तमाम दागियों को स्वयं देखा। उसमें वालोचित कौतूहल था। "रो" को शान्त करने के लिए और समझाने के लिए वह माफी भी माँगता रहा परन्तु रो की ईमानदारी पर उसको विश्वास नहीं था इसलिए रो बहुत उत्तेजित हुआ।"[3]

"पिछले वादशाह ने एक नियम वनाया था। उसकी पुष्टि में जेहत नामक कर माफ कर दिया गया था। इससे प्रति वर्ष कई करोड़ दाम की आय हुआ करती थी। अव जहाँगीर ने कावुल में भी सायरजेहत कर लगाना वन्द कर दिया इससे एक करोड़ और तेईस लाख की आमदनी हुआ करती थी। जव जेहत लिया जाता था तो कावुल और कंधार पर इसका बड़ा भार पड़ता था। जव इसको और सायर जेहत को वन्द किया गया तो ईरान और तूफान के व्यापारियों को बड़ा प्रोत्साहन मिला। अव वे उन हिस्सों में व्यापार करने लगे जहाँ हिन्दुस्तान को बड़ा लाभ होता था।

---

1 सर टी० रो—केर्स, अवजेज।

2 ब्रिग्ज—सिटीज आफ गुज-राष्ट्र, p. 63।

3 एलफिन्सटन—हिस्ट्रा आफ इण्डिया, जि० 2, p. 326।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चौथा आदेश

किसी व्यक्ति को यह अनुमति नहीं है कि वह शराब या कोई ऐसा दूसरा निषिद्ध द्रव्य बेचे, जिससे मादकता उत्पन्न होती है। यद्यपि मुझे मद्यपान की आदत है और अठारह वर्ष की आयु से अब तक, जब मैं अड़तीस वर्ष का हो गया हूँ, हमेशा मद्यपान करता रहा हूँ। आरम्भ में जब मुझे इसका बड़ा व्यसन था तो मैं पन्द्रह से तीस प्याले तक दुबारा खिंची हुई शराब पिया करता था। शनैः शनैः जब इसका मेरे जीवन पर प्रत्यक्ष प्रभाव होने लगा तो मैंने निश्चय किया कि मैं इसकी मात्रा को घटाऊँ। तब घटाते-घटाते मैंने केवल छः या सात प्याले कर दिए। मेरे मद्यपान का समय भी भिन्न था। कभी मैं तीसरे पहर, कभी रात में और कभी दिन में पिया करता था। यह स्थिति मेरे तीसवें वर्ष तक चलती रही। अब उसके बाद मैं केवल रात्रि में ही मद्यपान करता हूँ और अब केवल पाचन-शक्ति को बनाए रखने के लिए पीता हूँ।

समीक्षा—"ईसाई धर्म उसको अच्छा लगता था विशेषकर इसलिए कि इसमें शराब पीने की और सब प्रकार के पशुओं का माँस खाने की अनुमति थी। इस धर्म के विषय में जहाँगीर की भी यही सम्मति थी। धैर्य, विनय, उदारता और संयम ईसाई धर्म की आत्मा है। परन्तु इस विषय पर वह कभी विचार नहीं करता था। इस प्रकार के अपवित्र उपदेश के कारण ही उसने घोषित किया था कि उसे ईसाइयों का धर्म पसन्द है और इस प्रकार वह मोहम्मद के धर्म का खूब उल्लंघन करता था। वह अपने दरबार में बैठा हुआ भी खूब शराब पिया करता था।"[1]

"बादशाह और शहजादे के लिए लाल शराब के चार-पाँच सन्दूक भेंट स्वरूप भेजने चाहिए क्योंकि इन दो व्यक्तियों की भाँति किसी को ऐसी शराब पीने का शौक नहीं है। ये दोनों जवाहरात से भी अधिक इसको पसन्द करते हैं।"[2]

"जब हुमायूँ ने राणा सांगा के विरुद्ध चढ़ाई की तो उसने व्रत लिया था कि यदि काफिरों पर उसे विजय प्राप्त हो गई तो भविष्य में वह हमेशा शराब से बचेगा। शाहजहाँ ने विजय से पहिले इस प्रकार का प्रस्ताव किया था और इस प्रकार वह अपने पितामह से भी आगे बढ़ना चाहता था। अतः उसने आदेश दिया कि डेरे में जितनी भी शराब है वह सब नदी में डाल दी जाए।"[3]

"इस मंडली पर कोई रोक-टोक नहीं थी। उनमें से सर टोमस के सिवाय और कुछ इने-गिने अन्य गम्भीर लोगों के अतिरिक्त जो पीते हुए भी अपने आपको काबू में रखना चाहते थे कोई भी ऐसा नहीं था जो शराब पीकर बहक नहीं गया

1 केट्रो—हिस्ट्री आफ दी मुगल डायनेस्टी, p. 138।
2 सर टी॰ रो—ट्रेवेल्स।
3 ग्लेडविन—रेन आफ जहाँगीर, p. 52।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हो। जहाँगीर ने भी पीना उस समय पसन्द किया जब उसे नींद आने लगी। तब रोशनी बुझा दी गई और मंडली विसर्जित हो गई। ऐसे अवसरों पर उसकी कृपालुता खूब प्रकट होती थी और ज्यों-ज्यों शराब का नशा चढ़ता था त्यों-त्यों वह अधिक कृपालु होता जाता था। एक बार वह बड़ी उदारता के साथ विभिन्न धर्मों के विषय में बात करते-करते रोने लगा और अन्य प्रकार भी उसने जोश प्रकट किया यह स्थिति आधी रात तक चलती रही।"[1]

"विशेषकर रात में ही अपनी मित्र-मंडली में बैठा हुआ बादशाह मद्यपान करता था। आगरा में तमाम यूरोपियन लोगों को महल में जाने की अनुमति थी। वह सूर्योदय तक उनकी मंडली में बैठा हुआ शराब पिया करता और उन दिनों में भी मद्यरात्रि में विलास और व्यसन में डूबा रहता था जब मुसलमान लोग रोजे रक्खा करते हैं। जब कोई अपने सिद्धान्तों पर पक्का मुसलमान ऐसी ही सभाओं में उपस्थित होता था तो वह उसको भी अपना रोजा तोड़ने पर बाध्य किया करता था और यदि उसकी आज्ञा को वह नहीं मानता था तो उसको वह दो शेरों के सामने डाल देता था जो उसकी खिड़की के नीचे जंजीरों से बँधे रहते थे।"[2]

"अब मुकर्रबखाँ आ मिला और उसे हाथी पर बैठने की अनुमति दी गई। परन्तु सवार होने से पहले उसको एक राजपूत ने आहत कर दिया। जहाँगीर का जामबरदार किदमित पीरेस्ट ज्यों-त्यों आगे आया। उसके हाथ में एक बोतल और शराब का प्याला था और वह भीड़ को चीरता हुआ बादशाह के पास पहुंचा।"[3]

"तब वह अपने निजी कमरे में प्रवेश करता है। वहाँ पर दो वर्ष से मैं उसका सेवक था। यहाँ पर वह तेज शराब के पाँच प्याले और पीता है। इसके बाद वह अफीम खाता है और जब उसे नशा चढ़ आता है तो वह सो जाता है।"[4]

"इस प्रकार उसने खूब पी और औरों को भी पीने का आदेश दिया। वह और उसके दरबारी खूब मस्त हो गए और हजारों प्रकार का मजाक करने लगे।"[5]

"बादशाह 25 तारीख की शाम को वापस शहर में लौट आया। वह पिछली रात से शराब में धुत हो रहा था।"[6]

"एक दिन जहाँगीर विश्राम कर रहा था। कुछ गायक और नर्तकियाँ उसके साथ थीं। नूरजहाँ ने उसके प्यालों की संख्या नौ नियत कर रक्खी थी। परन्तु आज

1 एलफिन्सटन—हिस्ट्री आफ इण्डिया, जि० 2, p. 325।
2 केट्रो—हिस्ट्री आफ दी मुगल डायनेस्टी, p. 139।
3 ग्लेडविन—रेन आफ जहांगीर, p. 81।
4 हाकिन्स-नेरेटिव-पुर्चगीज पिलग्रिम्स, जि० 1।
5 सर टी० रो—केर्स कलेक्शन आफ वोयेजेज एण्ड ट्रेवेल्स, जि० 9, p. 290।
6 उपर्युक्त, p. 307।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसने उनकी संख्या बढ़ा दी। बेगम ने मना किया परन्तु बादशाह ने सुनी-अनसुनी कर दी और पीता ही गया। आखिर उसे खूब नशा चढ़ा।"[1]

"जब यह निश्चय कर लिया गया कि बेगम को वहाँ से भेज दिया जाय तो महावतखाँ ने बादशाह से पूछा कि उसकी खुशी के लिए क्या किया जाय। बादशाह ने उत्तर दिया "मुझे बेगम और शराब चाहिए।" उदार मन्त्री ने दोनों के लिए इन्कार किया और कहा कि शराब मोहम्मद के कानून के अनुसार निषिद्ध है और बेगम को इसलिए नहीं आने दिया जायगा कि कहीं उसके आने पर बादशाह की बुद्धि फिर नष्ट हो जाय जो धीरे-धीरे उसको प्राप्त होने लग गई थी।"[2]

"वह प्रायः सायंकाल अपने महल से गायब हो जाता था और अज्ञात घरों में चला जाता था। वहाँ वह कुछ घण्टे मद्यपान करने में और छोटे लोगों की संगति में बिताया करता था। वह अपने दरबार-ए-आम में बैठता था और सब लोग उसके पास जा सकते थे। परन्तु अपना दैनिक काम करने के बाद वह रात में इधर-उधर घूमा करता था। उसने अपने साथियों से कह रक्खा था कि शराब पीते समय उससे कोई दया की प्रार्थना न करे क्योंकि यह सम्भव है कि शराब पीते समय वह हाँ कर दे और जब अच्छी हालत में तो न कह दे। जब उस पर शराब का असर होने लगता था उसको नशा नहीं पागलपन आ जाता था।"[3]

"अब उसको अफीम से घृणा हो गई जो वह पिछले चालीस वर्ष से खाया करता था। अब वह केवल अंगूर का रस पीया करता था।"[4]

"8 तारीख को मैंने देखा कि बादशाह पर शराब का लगभग पूरा असर हो गया था और आध घण्टे में वह खूब मस्त हो गया। इसलिए मैं उससे कुछ काम नहीं करवा सका। काम वास्तव में रात में ही होता है। उस समय बादशाह गुसलखाने में होता है और उस समय भी मौका नहीं मिलता क्योंकि मद्यपान के कारण बादशाह ऊँघा करता है।"[5]

"अकबर के समय से राजधानी में शराब घर खुल गए हैं। बादशाह एक कलाविद के पास बैठ गया जो बड़ी मस्ती के साथ पी रहा था। फिर बादशाह के भी मन में आई और पीकर वह भी कुछ गाने लगा। ऐसी संगति में जहाँगीर को बड़ा आनन्द आता था। फिर उन दोनों में खूब मेल जोल हो गया और अपने नये अतिथि की उदारता से कलाविद भी मुग्ध हो गया। फिर उसने उसको खूब पिलायी।"[6]

---

1 केट्रो—हिस्ट्री आफ दी मुगल डायनेस्टी, p. 146।
2 उपर्युक्त, p. 153।
3 डो—हिस्ट्री फ्राम हिन्दुस्तान, जि० 3 p. 108।
4 मोहम्मद हादी।
5 सर टी० रो—केर्स कलक्शन आफ वोयेजेज एण्ड ट्रेवेल्स जि० 9, p. 321।
6 केट्रो—हिस्ट्री आफ दी मुगल डायनेस्टी, p. 158।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पाँचवाँ आदेश

"मैंने आदेश दिया कि किसी को यह अधिकार नहीं है कि वह किसी दूसरे व्यक्ति के मकान में निवास करे। मैंने फौजदारों को आदेश दिया कि किसी अपराधी के नाक या कान न काटे जाएँ, उनका अपराध कुछ भी हो और मैंने ईश्वर को समक्ष करके यह व्रत लिया कि मैं किसी व्यक्ति को इस प्रकार का दण्ड नही दूंगा।"

समीक्षा—"तब मैंने आदेश दिया कि परवेज के स्वागत के लिए महावतखाँ के महल को खाली करवाया जाय। उस समय खान अनुपस्थित था। वह काबुल की सीमा पर कुछ विद्रोह को दबाने में लगा हुआ था। मेरे आदेश से उसके कुटुम्ब को दूसरे स्थान पहुंचा दिया गया।"[1]

यह कोई नया निषेध नहीं था। यह उसके पिता ने भी जारी किया था। "इस बात को देखना चाहिए कि कोई सैनिक या अन्य व्यक्ति किसी के मकान में अनुमति के बिना प्रवेश न करे। इसी आदेश के छठे अंश में हाथ-पैर काटने का निषेध किया गया था।"[2]

इस आदेश का कोई विशेष असर नहीं पड़ा क्योंकि अपने शासन-काल के छठे वर्ष में भी उसने इसको दोहराया था।

जब उस नगरों को जलाने की धुन आती थी तो वह निर्धन लोगों के मकानों की कोई चिन्ता नहीं करता था। सर टी० रो ने लिखा है कि "बादशाह को यह धुन आई कि अजमेर के सारे लश्कर में आग लगा दी जाय। इसलिए मुझे आवश्यकतावश दूसरे स्थान पर जाना पड़ा। नगर को जलाकर बिल्कुल नष्ट कर दिया गया और मेरे लिए चोरों का बड़ा खतरा हो गया।" वह पुनः लिखता है कि "जिस नगर के पास बादशाह ठहरा हुआ था। उसको जलाने का उसने हुक्म दे दिया और एक नया सूबेदार नियुक्त कर दिया गया।"[3] "माँडू के गरीब लोग नगर छोड़ गए। घोषणा करके बहुतों को निकाल दिया।"[4]

अब हाथ पैर कटवाने के विषय में लिखा जाता है। यद्यपि नाक और कान नहीं काटे गए होंगे तथापि दूसरी पाशविक यातनायें प्रायः दी जाती थीं। हमें ऐसे उत्पीड़क लोगों की याद आती है जो बड़े-बड़े डंडों से ठोक कर लोगों को मार दिया करते थे क्योंकि ईसामसीह ने तलवार का निषेध किया था। ऐसा विधान है कि ब्राह्मणों का खून नहीं किया जाय। इसलिए दौलतराव सिंधिया उनको हुक्कों से उड़ा दिया करता था।

---

1 प्राइसिस—मेमोयर्स, p. 122।

2 बर्ड—हिस्ट्री आफ गुजरात, p. 391, 394।

3 कर्स—कलेक्शन आफ वोयेजेज एण्ड ट्रैवेल्स, जि० 9, p. 317, 325।

4 उपर्युक्त, p. 335।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"मैंने इसी समय लुटेरों की एक जाति का दमन किया जो लोगों को आगरे के पास रास्ते में सताया करती थी। जब ये लोग मेरे वश में आ गए तो मैंने उनको हाथियों के पैरों से कुचलवा दिया।"[1]

"भगवान दास के पुत्रों को अपने दुष्कर्मों का पुरस्कार मिला। मैंने अपने हाथियों के नीचे उनके सिर कुचल दिए और इस प्रकार उनको उस नर्क में भेज दिया जो उनके लिए तैयार किया गया था।"[2]

"बादशाह ने एक चोर के लिए आदेश दिया कि उसको हाथी से कुचलवा दिया जाय और फिर उसी अपराधी की प्रार्थना पर उसको हाथी से लड़ने की अनुमति दे दी गई। जब उसने हाथी को हरा दिया तो उसको पुरस्कार दिया गया परन्तु जब वह भाग गया तो उसको फाँसी दी गई।"

"बादशाह ने अपने भाई के लड़कों में से एक को आदेश दिया कि वह शेर को सिर पर छुए। परन्तु उसने डर कर ऐसा करने से मना किया। तब बादशाह ने अपने सबसे छोटे पुत्र को शेर को स्पर्श करने का आदेश दिया। उसने शेर को छुआ और उसको कोई नुक्सान नहीं हुआ। तब बादशाह ने आदेश दिया कि उसके भतीजे को कैद में डाल दिया जाय। ऐसा मालूम होता है कि उसको कभी मुक्त नहीं किया जायगा।"[3]

"गुजरात के दुर्गम भागों में एक जाति निवास करती है जिसको कोली कहते हैं। ये लोग आवाद इलाकों के लोगों पर वड़ी क्रूरताएँ करते थे और उनको लूट लिया करते थे। अब इनकी क्रूरताएं वहुत ही वढ़ गई थीं। तव जहाँगीर ने आदेश दिया कि इनकी जाति को समूल नष्ट कर दिया जाय। वहुतसों का बध किया गया और शेष लोगों को मार कर पर्वतों में और रेतीले मैदानों में भगा दिया गया।"[4]

"उस समय के बाद वह अपने सेवकों के पुत्रों का वड़ी निर्दयता से वध करवा रहा है। जब मैं दरवार में जाता था तो उसके अनेक निर्दय कामों को देखा करता था। सप्ताह में पाँच बार अपने वहादुर से बहादुर हाथियों को अपने सामने लड़वाया करता था और ऐसे मौके पर कई आदमियों को हाथी या तो मार डालते थे या आहत कर देते थे। यदि किसी को गहरी चोट लगती थी तो उसे भी वह नदी में फिकवा दिया करता था। चाहे वह पुनः स्वस्थ हो जाने की हालत में हो। जहाँगीर कहा करता था, "इसको समाप्त करो क्योंकि यह जीवित रहेगा तब तक मुझे शाप देता रहेगा। इसलिए यह अधिक अच्छा है कि वह तत्काल मर जाय।" जब हाथी

1 प्राइस—मेमोयर्स, p. 34।
2 उपर्युक्त, p. 37।
3 सर टी० रो—केर्स कलेक्शन आफ वोयेजेज एण्ड ट्रेवेल्स, जि० 9, p. 275।
4 मिल—हिस्ट्री आफ ब्रिटिश इन्डिया, जि० 2, p. 359।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आदमियों को मार डालते हैं या चीर डालते हैं तो उन्हें देखकर वह बड़ा खुश होता है।"[1]

"कोई भली महिला किसी नाजिर के साथ अनुचित कर्म कर रही थी। उसे बादशाह के महल में लाया गया। तब उसी प्रकार के एक दूसरे प्राणी ने जो उसके साथ प्रेम करता था, उसके प्रेमी को मार डाला। इस बेचारी स्त्री को गर्दन तक जमीन में गाड़ दिया और उसके चारों ओर खूब मिट्टी ठोक दी। बिना खाये पीये उसको उस दशा में तीन दिन और तीन रात रखा। उसका सिर और हाथ कड़ी धूप में निकले हुए थे। आदेश यह था कि यदि वह जीवित रहे तो छोड़ दी जाय। नाजिर को हाथियों से कुचलवा दिया गया।"[2]

"बुरी सलाह के कारण या मद्यपान के कारण या अपने कोई स्वभाव दोष के कारण वह प्रायः बहुत ही निर्दय आदेश दिया करता था। उसने एक नाजिर को ऐसी स्त्री को चूमते हुए देखा जिसको उसने (जहाँगीर) ने त्याग दिया था। उसने स्त्री को जमीन में गड़वा दिया। केवल उसका सिर बाहर रखा जो सूर्य की तेज किरणों से जलता रहा और नाजिर के उसके सामने ही टुकड़े-टुकड़े करवा डाले।"[3]

"बादशाह ने फिर भी जिद्द की और उस बेचारे व्यक्ति के टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए उससे भी उसको सन्तोष नहीं हुआ। वह कुछ खेल और देखना चाहता था। इसलिए उसने अपने दस घुड़सवार बुलवाये जो उस दिन पहरा दे रहे थे और एक के बाद दूसरे को हुक्म दिया कि शेर से लड़े। वे सब बुरी तरह जख्मी हो गए और उनमें से तीन तो मर ही गए। बादशाह को तीन मास तक यह निर्दय शोक बना रहा। इस अर्से में केवल उसके आनन्द के लिए बहुत से आदमी अपनी जान से हाथ धो बैठे और बहुत से बुरी तरह घायल हो गए।"[4]

"9 अगस्त के दिन एक सौ डाकुओं का झुण्ड महामुगल के सामने जंजीरों से बाँधकर उपस्थित किया गया। उन पर मुकद्दमा चलाए बिना ही आदेश दे दिया गया कि उनका बध करवा दिया जाय और उनके मुखिया के लिए हुक्म हुआ कि उसे कुत्तों से फड़वा कर मार दिया जाय। इन कैदियों को नगर के कई हिस्सों में बध करने के लिए भेजा गया और बाजारों में ही उनको मार डाला गया। मेरे मकान के पास ही उनके मुखिया के बारह कुत्तों ने फाड़कर टुकड़े कर दिए और उसके तेरह आदमियों के हाथ-पैर बाँध दिए गए और फिर तलवार से उनकी गर्दनें

---

1 विलियम हाकिन्स—नेरेटिव पुर्चास पिलग्रिम्स, जि॰ 1, p. 220।

2 सर टी॰ रो—कर कलेक्शन आफ वोयेजेज एण्ड ट्रैवेल्स, जि॰ 9, p. 278।

3 माडर्न यूनिवर्सल हिस्ट्री, जि॰ 5, p. 399।

4 विलियम हाकिन्स—नेरेटिव-पुर्चास पिलग्रिम्स, जि॰ 1, p. 220।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काट दी गई। परन्तु गर्दनें पूरी नहीं काटी गईं और फिर उनके नंगे और खून सने हुए शरीरों को सड़ने के लिए बाजारों में छोड़ दिया गया।"[1]

लगभग चार हजार लोगों को पकड़ लिया गया और ऐसे लोगों के लिए जो उनके पदचिन्हों पर चलना चाहते हों उदाहरण उपस्थित करने के लिए आदेश दिया गया कि उन्हें हाथियों से कुचलवा कर मार दिया जाय।[2] सैफी ने उसके पास गुजरात के 44 विद्रोही भेजे जिनमें से दो को हाथियों से कुचलवा दिया गया और शेष को कैद में डाल दिया।[3]

"उसे खून देखकर प्रसन्नता होती है, इसलिए वह अपराधियों को हाथियों से कुचलवा कर मरवाता है और इसे स्वयं देखा करता है।"[4]

"मैंने निश्चय कर लिया कि ऐसी भयनाक बदमाशी करने वालों को तुरन्त ही बड़े मैदान में भेज दिया जाय और भयंकर उदाहरण के लिए उसे लाल सुर्ख चिमटों से खंड-खंड कर मार दिया जाय।"[5]

उसकी खुशी का एक ढंग यह था कि ईरान से आने वाले नए लोगों के धैर्य की वह परीक्षा किया करता था। वह अपनी कमरबन्धे में एक तीखा काँटा रखा करता था। जब नवागन्तुक बेखबर होता था तो वह उसके कान छेद देता था। उसके चिल्लाने से या उसकी शान्ति से अर्थात् उसके अधैर्य या धैर्य से जो उस समय प्रकट होता था, जहाँगीर ईरानियों की हिम्मत के विषय में अपनी सम्मति बनाया करता था और इस अनुभव के अनुसार वह कृपा करता था।"[6]

चिनाब के तट पर बादशाह को विद्रोही एहदाद का सिर मिला। यह जफरखाँ ने भेजा था। बादशाह ने आदेश दिया कि इसे लाहौर के मुख्य द्वार पर लटका दिया जाय।"[7]

"बादशाह ने एक दिन अपने पुत्र को बुलाया। इसका नाम सुलतान शहरयार था और यह केवल सात वर्ष का था, मैं वहाँ पर उपस्थित था। शाहजादे ने अपने दिल से यह नहीं कहा कि वह बादशाह के साथ जायगा। तब बादशाह ने उसको बहुत मारा परन्तु वह चिल्लाया नहीं। तब उसके बाप ने एक सुई लेकर उसके गाल में घुसा दी। यद्यपि खून बहुत निकला तो भी शहजादा नहीं चिल्लाया।"[8]

---

1 सर टी० रो—कर कलेक्शन आफ वोएजेज एण्ड ट्रेवेल्स, जि० 9, p. 281।
2 प्राइस—मेमोयर्स आफ जहाँगीर, p. 40।
3 ग्लेडविन—रेन आफ जहाँगीर, p. 70।
4 सर टी० रो—कर कलक्शन, जि० 9, p. 261।
5 प्राइस—मेमोयर्स आफ जहाँगीर, p. 119।
6 केट्रेव—हिस्ट्री आफ दी मुगल डायनेस्टी, p. 140।
7 ग्लेडविन—रेन आफ जहाँगीर, p. 79।
8 विलियम हाकिन्स—नेरेटिव-पुर्चाज पिलग्रिम्स, जि० 9, p. 307।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"कुछ अमीर उसके पास उपस्थित थे। उसने अपने सामने ही हर एक के कोड़े लगाए। यह कोड़ा बड़ा भयंकर उत्पीड़क था। इसके सिरे पर चार रस्से थे जिनमें लोहे के से काँटे थे। इसलिए एक चोट से चार घाव लगते थे। जब वे मरे जैसे होकर गिर गए तो उसने पास खड़े हुए लोगों को हुक्म दिया कि उनको ठोकरें लगाई जाएँ और दरवानों को आज्ञा हुई कि वे उन पर इतनी लाठियां चलाएँ कि वे टूट जाएँ। इस प्रकार उनको जख्मी करके भेज दिया गया। उनमें से एक तो वहीं मर गया।[1]

"दूसरे दिन प्रातःकाल खुसरु को अपने पिता के सामने उपस्थित किया गया। उसका बाँया हाथ बाएँ पैर से जंजीर से बँधा हुआ था। यह चंगेजखाँ का तरीका था। शहजादे के दाईं ओर हसन वेग और बाईं ओर अब्दुल रहीम खड़ा था। खुसरु काँप रहा था और रो रहा था। उसको कैद में डाल देने का हुक्म हुआ परन्तु उसके विद्रोही साथियों का बड़ी निर्दयतापूर्वक वध करवाया गया। हसन वेग को बैल के कच्चे चमड़े में सीं दिया गया और अब्दुल रहीम को गधे के चमड़े में सीं दिया। दोनों का मुंह पूंछ की तरफ करके तथा उनको गधों पर बिठाकर नगर में घुमाया गया। बैल का चमड़ा सूख कर इतना सिकुड़ गया कि सायंकाल से पहले ही हसन वेग का दम घुट गया और वह मर गया। परन्तु अब्दुल रहीम के मित्र गधे के चमड़े पर निरन्तर पानी छिड़कते रहे और उसे गीला रखते रहे। इससे वह इस दण्ड के बाद भी जीवित रह गया और फिर बादशाह ने उसको क्षमा कर दिया। कामरान के बाग से लाहौर नगर तक जमीन पर सूलियों की दो पंक्तियाँ गाड़ी गईं जिन पर दूसरे विद्रोहियों को जीवित ही टाँग दिया गया और बेचारे खुसरु को हाथी पर बिठा कर इन भाग्यहीन दुखियों की पंक्तियों के बीच में ले जाया गया।

"सेफ अल्ला की कहानी उसके पाशविक न्याय की स्मारक है। प्रिय सुलताना की बहिन के अपने पति इब्राहीम से जो बंगाल का सूबेदार था, एक लड़का था जिसको बचपन से ही बेगम ने दरबार में पाला था। बेगम के जहाँगीर से कोई लड़का नहीं था। इसलिए उसने सेफ अल्ला को गोद ले लिया था। बादशाह भी इस बच्चे को बहुत चाहता था और उसको प्रायः तख्त पर बिठा दिया करता था। बारह वर्ष की आयु में अल्ला अपने पिता के पास बंगाल को लौट गया। जहाँगीर ने सूबेदार के नाम पत्र दिया कि उसको बर्दवान का हाकिम नियुक्त कर दिया जाय। अल्ला कुछ वर्ष तक शासन करता रहा। फिर दुर्भाग्यवश एक दिन जब वह हाथी पर बैठ कर बाजार जा रहा था तो इत्तिफाक से एक बच्चा कुचल कर मर गया। अल्ला ने शाही आदेश का पालन किया परन्तु उसको जहाँगीर के विचार का ज्ञान नहीं था। जहाँगीर ने अपना विचार अपने ही दिल में छिपा रखा था। नवयुवक अपने साथियों के साथ आया। उस रात्रि को नदी के दूसरे तट पर ठहरा और बादशाह

1 सर टी॰ रो—कर कलेक्शन आफ वोएजेज एण्ड ट्रैवेल्स, जि॰ 9, p. 307।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

को अपने आगमन की सूचना देने के लिए एक संदेशवाहक भेजा। जहाँगीर ने आदेश दिया कि उसका एक हाथी प्रातःकाल तैयार रखा जाय। उसने बच्चे के माँ बाप को भी आदेश दिया कि वे उस समय उपस्थित रहें। जहाँगीर सूर्योदय से पहले उठा और नदी पार करके अल्ला के डेरे में पहुंचा और उसने आदेश दिया कि अल्ला को बाँध दिया जाय। तब हाथी पर उस बच्चे के माता-पिता बिठाए गए और बादशाह ने आदेश दिया कि हाथी उस बेचारे नवयुवक को कुचल डाले। परन्तु महावत सुलताना के कोप से डरता था। इसलिए उसने हाथी को नवयुवक के ऊपर से कई बार निकाल दिया और हाथी को आवश्यक हुक्म नहीं दिया। तब बादशाह ने उसको धमकाया और आज्ञापालन के लिए उसको बाध्य किया।"[1]

"मुखिया की टोपी और तुर्रा जिसमें बीस लाख रुपए के रत्न लगे हुए थे और विद्रोहियों के दस हज।र सिर भालों पर टाँग कर उन सेनानायकों के साथ जो जीवित पकड़ लिए गए थे, मेरे सामने उपस्थित किए गए। अब्दुल्लाखाँ का दबाए हुए जिलों पर पूरा अधिकार बना रहा। अन्य लोगों को अपने बादशाह के प्रति ऐसा विद्रोह करने से रोकने के लिए और अपने साथ उपकार करने वाले के प्रति उनको कृतघ्नता करने से हटाने के लिए मैंने आदेश दिया कि कन्नौज की रक्षा करने के लिए जो दस हजार आदमी मारे गए हैं, उनको सिर के बल वृक्षों से पास ही रास्ते के विभिन्न स्थानों पर लटका दिया जाय। मुझे यहाँ खेद के साथ कहना पड़ता है कि यद्यपि हिन्दुस्तान के लोग बार-बार इस प्रकार मरवा दिए जाते हैं तो भी विद्रोही लोगों की संख्या घटती नहीं है क्योंकि मेरे पिता के शासनकाल में और फिर मेरे समय में साम्राज्य में ऐसा कोई प्रान्त नहीं है जहाँ लड़ाई में या जल्लाद की तलवार से पाँच या छः हजार आदमी विभिन्न समय पर विद्रोह या उपद्रव के कारण नहीं मारे गए हों। सदा ही किसी न किसी स्थान पर कोई बदमाश विद्रोह का झण्डा खड़ा कर देता है और हिन्दुस्तान में पूर्ण शान्ति का समय कभी नहीं गुजरा है।"[2]

"कोतवाल मेरे सामने एक अपराधी को लाया जिसका चोरी के अपराध में पहले कई बार अंग-भंग किया जा चुका था। प्रथम अवसर पर उसका दाहिना हाथ काट दिया गया था। फिर बाँए हाथ का अँगूठा काटा गया था। इसके पश्चात् बाँया कान, फिर ऐड़ी और अन्त में उसकी नाक काटी गई। इस अवसर पर मैंने उसको उन लोगों के सुपुर्द कर दिया जिनको उसने लूटा था और हुक्म दिया कि वे उसको मार डालें।"[3]

---

1 डो—हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, जि॰ 3, p. 110-12।

2 प्राइस—मेमोयर्स आफ जहांगीर, p. 128।

3 ओथेन्टिक मेमोयर्स—शासन का बारहवां वर्ष।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"लगभग इसी समय अहदाद और उसके विद्रोही अफगानों को कावुल में छोड़ दिया गया। तब मुत्तामदखाँ ने उनके छः सौ सिरों का एक मिनारा बनवाया। इसके लिए उसको लश्करखाँ की उपाधि दी गई।[1]

"एक दिसम्बर को मैं छः मील चलकर रामसोर पहुंचा। वहाँ बादशाह ने सौ आदमियों की नंगी लाशें डाल रखी थीं। इन लोगों का डकैती के अपराध में बध करवाया गया था।"

"4 तारीख को मैं आगे जाकर एक ऊँट के पास पहुंचा जिस पर 300 सिर लदे हुए थे। यह कंधार से बादशाह के पास भेजे गए थे और उन लोगों के सिर थे जिन्होंने विद्रोह किया था।"[2]

"मैंने आदेश दिया कि उसकी जीभ काट कर उसे आजन्म कैद में डाल दिया जाय और उसे भंगियों और कुत्ते वालों के साथ खाना खिलाया जाय।"[3]

"इस स्थिति में मैंने हुक्म दिया कि ऊँट को मेरे सामने लाया जाय। फिर नुरुद्दीन कुली को बुला कर मैंने कहा कि उस हिन्दू की पोशाक और उसकी गर्दन की मोतियों की माला नुरुद्दीन की है परन्तु नुरुद्दीन उस हिन्दू को नगर के बाहर ले जाय और वहाँ उसकी आंतें काट कर निकाले और फिर उसको ऊँट के एक तरफ बांध कर डेरे में घुमाए।"[4]

जहाँगीर कहता था कि उसमें निर्दयता नहीं है परन्तु उसके स्वभाव में निर्दयता बहुत पहिले से थी।

"सलीम के एक वाकियानवीस ने उसको मारने के लिए षड़यंत्र किया। उनका पता लग गया तो उन्होंने भाग कर दक्खिन में सुलतान दानियाल के पास शरण लेने का प्रयत्न किया। परन्तु उनके भागने के इरादे का पता लग गया। इसलिए उनका पीछा करने के लिए कुछ घुड़सवार रवाना किए गए जो शीघ्र ही उनको वापिस ले आए। सलीम उनसे इतना क्रुद्ध हुआ कि उसने आवेश में आकर एक वाकियानवीस की खाल खिचवा डाली, एक को वाघी करवा दिया और एक को खूब पिटवाया। यह निर्दय दण्ड उसकी विद्यमानता में दिया गया। इससे षडयंत्र का अन्त हो गया और फिर उसके युद्ध शिविर में से कोई नहीं भागा। यह कार्य अत्यन्त निर्दय था। इसकी सूचना बादशाह को और भी अत्युक्ति के साथ दी गई। अपराधियों को निर्दोष प्रकट किया गया और यह वतलाया गया कि शहजादा मद्यपान से उन्मत्त होकर ऐसी पाशविक क्रियाएँ करता है। अपने दो भाइयों के समान उसको भी मद्यपान का बहुत ही व्यसन था। जव अकवर ने अपने पुत्र की

---

1 ग्लेडविन—हिस्ट्री आफ जहाँगीर, p. 29।

2 सर सर टी० रो—कर कलेक्शन आफ वोएजेज एण्ड ट्रेवेल्स, जि० 9, p. 320।

3 ओथेन्टिक मेमोयर्स—शासन का दूसरा बर्ष।

4 प्राइस—मेमोयर्स ऑफ जहाँगीर, p. 124.

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पाशविकता की वात सुनी तो उसको बड़ा आघात पहुंचा क्योंकि उसके मन में मानवता और परोपकारता की भावना भरी हुई थी। उसने अपने पुत्र को पत्र लिखकर उसके व्यवहार के लिए बहुत फटकारा और कहा, "मैं तो किसी भेड़ की भी खाल खिचते हुए देखकर धक्का लगे बिना नहीं रह सकता पर न जाने क्यों मेरे पुत्र की स्वाभाविक भावना इतनी कुंठित हो गई है कि वह अपने समक्ष मनुष्य की खाल खिचवा सकता है।"[1]

"मुकदमे बहुत जल्दी चलते हैं और दण्ड भी तुरन्त दे दिए जाते हैं। अपराधियों को या तो फाँसी दी जाती है या उनके सिर काट दिए जाते हैं या सूली पर लटका दिया जाता है या उन्हें कुत्ते फाड़ डालते हैं या हाथी नष्ट कर देते हैं या उन्हें साँपों से डसवा दिया जाता है या अपराध के अनुसार उन्हें और प्रकार से मारा जाता है। वध-दण्ड प्राय. खुले बाजार में दिया जाता है। प्रान्त के और नगरों के अधिकारी भी इसी प्रकार न्याय करते हैं।"[2]

"खानदौरा के पुत्र ने मानपूर्ण भाषा का उपयोग नहीं किया। इस ओर आँख नहीं बन्द की जा सकती थीं। इसलिए मैंने आदेश दिया कि उसके सिर और चेहरे की एक बाजू का चमड़ा उतार लिया जाय और उस दशा में उसको डेरे में घुमाया जाए और साथ ही यह घोषणा की जाय कि जो अपने बादशाह और उपकार-कर्ता के प्रति ऐसी आदरहीन भाषा का प्रयोग करेगा उन्हें ऐसा ही दण्ड मिलेगा।"[3]

छठा आदेश

मैंने आदेश दिया कि सरकार के अधिकारी और जागीरदार कोई भी मेरी प्रजा की जमीनें बलपूर्वक छीन कर अपने लाभ के लिए न जोतें।

समीक्षा—"अकबर के समय से अब देश का प्रशासन बड़ी शीघ्रता के साथ गिर गया था। प्रशासन ठेके पर दे दिया जाता था और हाकिम लोग बड़े निर्दय और उत्पीड़क थे।[4]

किसानों के प्रति कृपा और अनुग्रह करने का उसके पिता का आदेश इससे भी आगे बढ़ा हुआ है।"[5]

"बंगाल, गुजरात और दक्खिन में भी बागी लोग इसी प्रकार भरे पड़े हैं। इन लुटेरों के कारण सुरक्षित रूप से कोई यात्रा नहीं कर सकता। इस सब का कारण सरकार की पाशविकता और निर्दय उत्पीड़न है जो किसानों पर किए जाते हैं और जिसके कारण वे विद्रोह करते हैं।"[6]

---

1 ग्लेडविन—रेन ऑफ जहांगीर, p. 9.
2 रेवेरेन्ड ईटेरी—पुर्चास पिलग्रिम्स, जि॰ 2, p. 1476.
3 प्राइस—मेमोयर्स ऑफ जहांगीर, p. 131.
4 एलफिसटन—हिस्ट्री आफ इण्डिया, जि॰ 2, p. 325.
5 बर्ड—हिस्ट्री आफ गुजरात, p. 394.
6 विलियम हाकिन्स—नेरेटिव—पुर्चास पिलग्रिम्स, जि॰ 1, p. 230.

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"यह बात समस्त देश पर लागू होती है कि सर्वत्र विनाश फैला हुआ है। समस्त प्रजा की सम्पत्ति बादशाह की मानी जाती है। इसलिए कोई किसी चीज की रक्षा नहीं कर सकता। सर्वत्र युद्ध जनित विनाश दृष्टिगोचर होता है और किसी चीज की सँभाल नहीं होती। बड़े-बड़े आदमी प्रशासन का ठेका लेकर निर्वाह करते हैं और इसमें ये लोग प्रजा को कई प्रकार से सताते हैं और उन्हें निरन्तर चूसा करते हैं।"[1]

सातवाँ आदेश

मैंने सरकार के आमिलों और जागीरदारों को आदेश दिया कि अपने जिले के किसी निवासी के साथ मेरी अनुमति के बिना कोई विवाह-सम्बन्ध न करे।

समीक्षा—यह निषेध और बातों के लिए भी था।

"खोजा बर्कदार ने महावतखाँ की लड़की से विवाह किया। बादशाह को इसका पता न था। पता लगने पर उसको बुलाया, पीटा और कैद में डाल दिया।"[2]

"अपने आने से पहिले उसने अपनी लड़की की सगाई बर्कदार नामक एक नवयुवक से कर दी और बादशाह से अनुमति प्राप्त नहीं की जो बड़े-बड़े अमीर किया करते थे। इस नियमोल्लंघन के कारण जहांगीर बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने बर्कदार को बुलाया। पाशविकता के आवेश में आकर उसने आदेश दिया कि उसे नंगा करके उसके सामने ही कांटों से मारा जाय। फिर महावतखाँ ने जो कुछ दहेज दिया था, वह ही नहीं, उसकी समस्त सम्पत्ति भी छीन ली गई।"[3]

आठवाँ आदेश

मैंने मुख्य-मुख्य नगरों में औषधालय स्थापित किए और रोगियों की चिकित्सा करने के लिए हकीम नियुक्त कर दिए और आदेश दिया कि इसका खर्चा शाही कोष से दिया जाय।

समीक्षा—जहांगीर के भूठे पूर्वज तैमूर ने भी एक ऐसा ही आदेश जारी किया था और जैसे वह इसका पालन करता था वैसे ही जहाँगीर भी करता था।

नवाँ आदेश

मेरे पिता की भाँति मैंने भी आदेश दिया कि 18 रबी-उल-अव्वल को, जो मेरा जन्म दिन है, किसी पशु का वध नहीं किया जाए। निषेध के दो दिन और भी थे—वृहस्पतिवार, जिस दिन मैं राजसिंहासन पर बैठा और रविवार, जिस दिन मेरे पिता का जन्म हुआ। मेरा पिता इस दिन का असाधारण सम्मान करता था,

---

1 सर टी-रो—कर कलेक्शन आफ वोयेजेज एण्ड ट्रैवल्स. जि॰ 9, pp. 321-338.

2 ग्लेडविन—रेन आफ जहांगीर, p. 79.

3 एलफिंसटन—हिस्ट्री आफ इण्डिया, जि॰ 2. p. 339.

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इसीलिए नहीं कि यह सूर्य का दिन था, परन्तु इसलिए भी कि उस दिन सृष्टि का आरम्भ हुआ था। इसी कारण से वह रविवार के दिन पशुओं का वध नहीं होने देता था।

समीक्षा—पोप पायस पंचम ने एवरदीन के निवासियों को रविवार और व्रत के दिन मछली पकड़ने का विशेष अधिकार इस शर्त पर दे रखा था कि पहली मछली गिरजाघर को भेंट की जाय।

"मुसलमान पूरे एक मास तक उपवास करते हैं। यह उसके उपहास का विषय था। वह ऐसे आदमियों को अपने साथ खाना खाने के लिए बुलाया करता था जो हृदय से अपने धर्म के पक्के थे और फिर अपनी मंडली में उन्हें खूब शराब पीने के लिए तथा मांस खाने के लिए प्रेरित किया करता था। कसी और इमाम जो इस्लाम के कानून के विशेषज्ञ थे, उससे कहा करते थे कि अलकुरान में विशेष प्रकार के मांस खाने का निषेध है। परन्तु इसका उस पर कोई प्रभाव नहीं होता था। इन लोगों की बातों से तंग आकर उसने पूछा कि ऐसा कौनसा धर्म है जिसमें सब प्रकार के पेयों और खाद्यों की अनुमति है। उसे उत्तर मिला कि ऐसा धर्म केवल ईसाई धर्म ही है। तब जहांगीर ने कहा कि, "हम सबको ईसाई हो जाना चाहिए। दर्जियों को बुलाओ कि वे हमारे कपड़ों के तंग कोट और पगड़ियों के टोप बना दें।" इन शब्दों को सुनकर इस्लामी धर्म के धर्म गुरु कांपने लगे। अब भय और स्वार्थवश उन्होंने ऐसी तीव्र भाषा का प्रयोग करना छोड़ दिया और घोषित किया कि बादशाह अलकुरान के बन्धनों से मुक्त है और वह बिना संकोच अपनी मर्जी का माँस खा सकता है और अपनी पसन्द का पेय पी सकता।[1]

दसवाँ आदेश

मैंने यह आम आदेश दिया कि मेरे पिता की दी हुई जागीरें और मनसब सम्बन्धित लोगों के लिए बहाल कर दिए जाय। कुछ समय बाद मैंने प्रत्येक व्यक्ति का मनसब उसकी योग्यता के अनुसार बढ़ा दिया। इस प्रकार दस का मनसब बारह कर दिया और अन्य मनसबों में भी वृद्धि की गई। अहदियों को दस से पन्द्रह तक बढ़ा दिया और मेरे पिता के सब नौकरों का वेतन दस से बारह कर दिया गया। शाही घर की महिलाओं का सामान भी दस से बारह और दस से बीस कर दिया गया।

समीक्षा—"कई सूबों को अपनी-अपनी सरकारों से दूसरे प्रान्तों में भेज दिया गया। कुछ इसलिए पदच्युत कर दिए गए कि बादशाह के मित्रों के लिए और उसे उकसाने वालों के लिए स्थान करना था। ऐसे बरखास्त किए गए सूबेदार धन और प्रपंच के द्वारा अपने स्थानों को पुनः प्राप्त करने के लिए दरबार में पहुंचे।

---

1 केट—हिस्ट्री आफ दी मुगल डायनेस्टी, p. 138।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किसी-किसी का मनोरथ पूर्ण हो गया और दूसरे विफल होकर निराश हो गए। ऐसे लोग खोई हुई शक्ति और प्रभाव को पुनः प्राप्त करने के लिए विद्रोहात्मक युक्तियाँ रचने लगे।"[1]

सर टी० रो इस उद्घोषित उदारता पर हमसे सन्देह करवाता है।

"उसके सामने कई प्रकार की खाद्य सामग्री थी। उसने मुझे आधा हिरन काट कर दिया और कहा कि शेष अन्तःपुर की महिलाओं के लिए भेज दिया जाय। फिर इसके दो-दो सेर के टुकड़े किए गए और उसका छोटा पुत्र और दो स्त्रियाँ अपने नंगे हाथों में उन्हें उठाकर अन्तःपुर में ले गए। मानो ये छोटे-छोटे टुकड़े गरीब लोगों को दान में दिए जा रहे हों।[2]

"हुसैन वेग बदखशी, जो वहुत अर्से तक अकवर के शासन-काल में कावुल का सूबेदार था, इस वादशाह ने अलहदा कर दिया। वह अव दरवार में आ रहा था।"[3]

ग्यारहवाँ आदेश

आइमा और मददमाश पाने वालों की एक सेना बनी हुई थी। इन लोगों का काम आशीर्वाद देने का था। मैंने प्रत्येक व्यक्ति के फरमान के अनुसार उसकी प्राप्ति की पुष्टि कर दी और मीरान-ए-सदर जहाँ को, जो हिन्दुस्तान में एक शुद्ध वंशीय सैयद था और जो मेरे पिता के शासनकाल में कुछ समय के लिए सदर के पद पर था, आदेश दिया कि वह प्रति दिन गरीव लोगों की देख-रेख करता रहे।

समीक्षा—मीरान-ए-सदर जहाँ को अकवर ने भी यही आदेश दिया था। "वादशाह गरीब लोगों को रुपया और प्रत्येक प्रकार की आवश्यक चीजें दिया करता है। वहुतसों को दैनिक, मासिक या वार्षिक वृत्तियाँ मिलती हैं। ये ठीक समय और अविलम्व दी जाती हैं और इनमें कोई कमी नहीं की जाती।[4]

"इस मामले में सब बातों पर स्पष्ट सहमति की आवश्यकता थी और अधिक औपचारिक और साधिकार पुष्टि चाहिए थी। अभी साधारण फरमान जारी हुए थे जो अस्थायी थे और जिनको अस्थायी रूप से माना जाता था।"[5]

"एक दिन शहजादे ने हमें एक फरमान दिया जिसमें लिखा था कि हमारे साथ अच्छा व्यवहार किया जाय और हमको विशेष अधिकार दिए जाएँ। इससे

1 डो—हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, जि० 3, p. 6।
2 फर—कलेक्शन आफ वोयेजेज एण्ड ट्रेवेल्स, जि०9, p. 333।
3 डो—हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, जि० 3, p. 8।
4 ग्लेडविन-आइन-ए-अकवरी जि० 1, p. 221-225।
5 सर टी० रो—कर-कलेक्शन आफ वोयेजेज एण्ड ट्रेवेल्स, जि० 9, p. 267।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तमाम आदेश रद्द हो गए जिनका न आदर होता था और न जिन पर विश्वास किया जा सकता था।"[1]

बारहवाँ आदेश

मैंने आदेश दिया कि साम्राज्य के समस्त कैदी चाहें वे किले में हों या कारावास में हों, छोड़ दिए जाएँ।

समीक्षा—यह मूर्खतापूर्ण आदेश था और इससे उसके पिता की पुलिस व्यवस्था के प्रति घृणा उत्पन्न हो सकती थी।

जहाँगीर को कैदियों के प्रति कोई अधिक सहानुभूति न थी।

"बादशाह की शिकार करने की विधि इस प्रकार थी—नवम्बर मास के आरम्भ में वह कई हजार आदमियों के सहित आगरे से चलता था और तीस चालीस कोस आसपास के प्रदेश में आखेट किया करता था। यह मार्च मास के अन्त तक हुआ करता था। तब घोर गर्मी पड़ने लगती थी और उसको वापिस घर लौटना पड़ता था। वह छटे हुए लोगों के द्वारा जंगल या रेतीले मैदान के एक हिस्से को घेर लेता था। ये लोग सुकड़ कर उस प्रदेश को छोटा बना लेते थे और जो कुछ इस घेर में आ जाता था, वह शाही शिकार कहलाता था। चाहे वे मनुष्य हों या पशु हों और घेरने वालों में से यदि कोई किसी को भाग जाने देता था तो उसकी जान की खैर नहीं थी। यदि बादशाह क्षमा कर दे तो दूसरी बात थी। इस प्रकार मारे हुए जानवर यदि खाने के योग्य होते थे तो बेच दिए जाते थे और इनकी कीमत का रुपया गरीब लोगों को दे दिया जाता था। यदि आदमी घिर जाते थे तो वे बादशाह के दास बना लिए जाते थे और उनको प्रतिवर्ष काबुल भेज दिया जाता था जहाँ उनको घोड़ों और कुत्तों से बदल दिया जाता था। ये गरीब लोग चोरियाँ किया करते थे और जंगलों और रेतीले मैदानों में रहते थे तथा पशुओं से विशेष भिन्न नहीं थे।

---

1 उपरोक्त जि॰ 9, p. 359।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परिशिष्ट 'घ'

शश फतेह-ए-कांगड़ा

यह छोटी-सी पुस्तक लेखक ने यह प्रकट करने के लिए लिखी थी कि वह कांगड़ा विजय का वृत्तान्त लिखने में छः विभिन्न शैलियों का उपयोग करने की कला जानता था । इससे आगे कोई नहीं वढ़ा है । इस पुस्तक का लेखक संदेहास्पद है । कोई कहता है कि नियामतखाँ आली है और कोई कहते हैं कि जलाला तिवा-तिवा है । इसकी शैली अति कठिन है और नियामतखाँ आली की शैली से मिलती-जुलती है । इसमें अलंकार की भरमार है । इसी के कारण लेखक हिन्दुस्तान में लोकप्रिय है । यह कभी-कभी चिकित्सा-शास्त्र के वाक्यांशों का भी प्रयोग करता है । इस आन्तरिक प्रमाण से प्रकट होता है कि इसका लेखक नियामतखाँ आली है । यह ग्रन्थ अवश्य ही जहाँगीर के समय के वाद का लिखा हुआ है । इसमें जहाँगीर का उल्लेख जिन्नत मकानी के नाम से किया गया है । यह सम्मानप्रद उपाधि मृत्यु के वाद दी जाती है । इस दृष्टि से यह पुस्तक दोनों लेखकों में से किसी की भी लिखी हुई हो सकती है परन्तु मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इसका लेखक मोहम्मद जलाला तिवा-तिवा है । प्रायः लोकमत भी यही है । एक साधारण-सी पुस्तक में, जो मेरे पास है और जो एक सौ वर्ष पुरानी होनी चाहिए, जलाला की रचनाओं का उल्लेख है और इनमें उसकी लिखी हुई प्रथम और अन्तिम विजय का उल्लेख है ।

उसमें सब प्रकार की शैलियों का उपयोग करने की क्षमता थी । वह शाहजहाँ का मुंशी था । इसीलिए उसने इस फतह का श्रेय व्यक्तिगत उसी को दिया है । नियामतखाँ उसके पीछे हुआ है और उसके लिए सत्य की हत्या करके एक गुजरे हुए शासक की इतनी चाटुकारिता करने का उतना कारण नहीं है ।

जलाला तिवा तिवा शाहजहाँ के इतिहास का लेखक है । उसके विषय में आगे चलकर लिखा जाएगा । उसने 'तोकियाती किसरवीया' का फारसी में अनुवाद किया है । यह पुस्तक 'खुसरु अनुशेरवाँ पैहलवी' भाषा में लिखी गई थी और इसका फिर अरवी में अनुवाद किया गया था और जलाला ने अरवी से फारसी में अनुवाद किया था । यह पुस्तक हिन्दुस्तान में वड़ी प्रसिद्ध है । यह पहले 1824 में कलकत्ते में छपी थी और फिर लखनऊ में लिथो से छापी गई थी ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विषय-सूची

प्रथम विजय	1—64
दूसरी विजय	64—110
तीसरी विजय	111—152
चौथी विजय	153—176
पांचवी विजय	177—201
छठी विजय	202—220

अत:. यह प्रकट होता है कि प्रथम विजय सवसे लम्बी है जिसका अनुवाद निम्नलिखित है। चाहे यह वात असंगत प्रतीत हो परन्तु इससे मूल के आडम्बर का अनुमान नहीं हो सकता। इसके पश्चात् अन्य पाँच विजयों का आरम्भ दिया हुआ है और यह इस बात को बतलाने के लिए है कि विभिन्न कहानियाँ का क्या स्वरूप है। (यह अनुवाद प्रत्यक्षत: किसी मुंशी ने किया होगा परन्तु सर एच० एम० ईलियट ने इसको दोहराया है।)

अवतरण

महाशासक के प्रसिद्ध दरबार के गुमाश्तों ने सृष्टि-साम्राज्य के प्रान्तों की भेंट की। उसमें पहले और प्रारम्भ के बरामदे में भाग्य लेखकों ने कोई चित्र बनाया, उससे पहले जब समय और स्थान की कोई परिभाषा नहीं बनी थी जब शरीर में आत्मा के समान और शब्दों में अर्थ के समान सारी वस्तुएँ जिनको हम अपने सब ओर देखते हैं उस ईश्वर के विचारों में छिपी हुई थी और जब पूर्ण एकान्त की स्थिति थी और आकाश से नीचे पानी और पृथ्वी तक सारे स्वरूप उसकी कल्पना में निहित थे तब नियम और व्यवस्था की रक्षा करने के लिए और इस विचार से कि महान और कठिन काम मनुष्य के हाथ से होना चाहिए इस निमित्त उसको उच्च प्रतिभा प्रदान की। उसने कुछ कठिनाइयों को पार करना सिखाया और प्रत्येक काम की पूर्ति के लिए समय निश्चित किया। जब वह समय आता है तो विजय के मार्ग के विघ्न और बाधाएँ दूर हो जाती हैं और काम को आसानी से करने की कुंजी मिल जाती है। जब कोई ऐसा व्यक्ति जिसको भाग्य ने महान बनाया है इस संसार में आता है तो सब परिस्थितियाँ उसके प्रयोजनों की सिद्धि में जुट जाती हैं जिससे अन्य लोगों को दुख होता है उससे उसको हर्ष होता है और धूल उसकी आँखों में काजल का काम देती है। समस्त कठिनाइयाँ स्वत: ही विलीन हो जाती हैं। कालाजंग आईना बन जाता है जिसमें वह संसार को देख सकता है। उसके भाग्य के द्वारा समृद्धि का सितारा सारी कौम पर चमकता है और उसकी उदारता का हाथ लोगों के अभावों को नष्ट कर देता है। उसे न्यायशास्त्र के सिद्धान्तों का पूर्ण ज्ञान होता है। इसके द्वारा सर्वशक्तिमान ईश्वर उसके मन को प्रकाशित कर देता है और वह अपने सरकार की सन्तोषप्रद व्यवस्था कर सकता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

है। वह लोगों को सुस्ती की नींद से जगाता है और अपनी वुद्धिपूर्ण योजनाओं के द्वारा सब गड़बड़ें मिटा देता है। जैसे आत्मा शरीर पर शासन करती है उसी प्रकार वह पृथ्वी के सात आसमानों पर राज्य करता है और अपनी उच्च वुद्धि के द्वारा मानव समाज के मामलों पर आसमान के चक्कर को भी वदल सकता है। उसके हर्ष और क्रोध से जो मनुष्य पर शासन करने पर प्रकट होता है वह लोगों के चरित्र को पूर्ण कर सकता है। सूर्य की गर्मी भी फलों को पकाने में इतनी सहायक नहीं होती। उसका न्याय कठोरता, उदारता और मितव्ययता लोगों के लिए इतनी लाभप्रद है जितनी मीठी या कड़वी औषधि या हकीम की पट्टी या जर्र के खूनी औजार भी रोगी के लिए हितकर नहीं हैं। उसका क्रोध लोगों के लिए उतना ही लाभकारी है जितनी शरीर के लिए गरमी। उसका असन्तोष दार्शनिकों के कड़वे नुस्खे के समान है जिससे लोग सचेत हो जाते हैं। उसके गुणों का वर्णन न्याय और पवित्रता के ग्रन्थ की भूमिका वनने के योग्य है और उसकी उदारता के वर्णन से वादशाहों का इतिहास प्रारम्भ होना चाहिए। उसका चरित्र वादशाहों के लिए उदाहरण है और उसकी न्याय प्रणाली उनके लिए कानून है। इसके लिए निम्न-लिखित वर्णन का उदाहरण दिया जा सकता है :

जव शाहजहाँ के भाग्यशाली सितारे के प्रभाव से राणा पर विजय प्राप्त हो गई और शाही सेना ने गुजरात में जाम और भारा की जातियों को दवा दिया तो वादशाह जहाँगीर को, जो मनुष्य के चेहरे के देखते ही उसकी योग्यता को भांप लिया करता था, यह जानकर वड़ा हर्ष हुआ कि शहजादे में प्रत्येक प्रकार का उत्तम गुण है। उसके कामों को देखकर वादशाह को भली-भाँति विश्वास हो गया कि यह शहजादा अपने समय का सबसे अधिक शक्तिशाली शासक वनेगा। उसके उत्तम गुण और स्वभाव से वादशाह को पता लग गया कि वह उसका उत्तराधिकारी वनने का सर्वथा अधिकारी है और उसे यह जानकर वड़ा ही सन्तोष हुआ कि ऐसा योग्य शहजादा उसका पुत्र है। इसलिए वादशाह जिसकी अमीर और गरीव सव पर कृपा थी सव लोगों के सामने शहजादे के उत्तम गुणों का जिक्र किया करता था। वादशाह उसे उन सव कामों में, जो कठिन और संदिग्ध प्रतीत होते थे सलाह और सहायता लिया करता था जिससे सव लोग जान गए थे कि संसार में ऐसे कई काम हैं जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति नहीं कर सकता और प्रत्येक ताले में एक कुंजी नहीं लग सकती। विशेष कठिनाइयों को पार करने के लिए विशेष पुरुष उत्पन्न किए जाते हैं। प्रत्येक महान कार्य किसी विशेष सरदार के प्रयास से किया जाता है। समृद्धि की जंजीर को हिलाने से वे सव वातें उत्पन्न हो जाती हैं जो किसी महान् कार्य की पूर्ति के लिए आवश्यक हैं। इसलिए सर्वशक्तिमान ईश्वर ने निश्चय किया कि अपने गुप्त पक्षों में से एक आश्चर्य प्रकट किया जाय और शहजादे की ओर से एक करिश्मा दिखाया जाए। इसी के कन्धों पर वास्तव में ईश्वर के उत्तराधिकार का भार है। यह वात राजा वासु के पुत्र सूरजमल के विद्रोह में प्रकट हुई। सूरजमल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अत्यधिक अभिमानी था। कल्पित विचारों के प्रभाव से उसकी बुद्धि नष्ट हो गई थी और उन्माद की आग से वह विक्षिप्त बन चुका था। इसमें उसकी बुद्धि नष्ट हो गई थी। आज्ञोल्लंघन की अँगुलियों ने स्वामिभक्ति के वृक्ष को निर्मूल कर दिया था। उसके हास्यास्पद विचारों के कारण आज्ञा-पट में छेद हो गया था। उसके दुर्भाग्य के जाग जाने से उसकी समृद्धि का मुख कुरूप बन गया था। उसकी उपेक्षा के उन्माद से उसका चेहरा काला पड़ गया था। इन कारणों से उसने ईमान के प्याले को तोड़ डाला। अपनी ही मूर्खता के कारण वह दुर्गों की निर्बल शरण पर विश्वास करने लगा और पहाड़ियों को अपना आश्रय समझने लगा। उसको यह ज्ञान नहीं था कि शाही सेना के वीर इतने शक्तिशाली हैं कि यदि वे आग और पानी से भागकर बच जाएँ और पत्थरों के नीचे छिप जाएँ तो भी वे अपने चमकीले भालों से और पानी की घास से उसे ऐसी आसानी से नष्ट कर देंगे जैसे एक क्षणिक आग का पंतगा उड़कर सब कुछ नष्ट कर देता है या एक क्षुद्र जलबिन्दु जैसे पृथ्वी में व्याप्त हो जाता है। सारांश यह है कि जब बादशाह को जिसने अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् अपनी उदारता और कृपालुता के द्वारा शहजादे को पैतृक राज्य का युवराज बना दिया था, यह खबर मिली कि सूरजमल ने विद्रोह कर दिया है और अपने अभिमान के पित्त द्वारा अपने आज्ञापालन के मधु के स्वाद को खट्टा कर डाला है और अपनी अदूरदर्शिता के कारण अपना पैर अपने कम्बल के आगे फैला दिया है और स्वामिभक्ति के मार्ग का त्याग करके विद्रोह के मैदान में प्रवेश किया है तथा पंजाब के कुछ परगनों पर लूट का हाथ बढ़ाया है, तो बादशाह ने स्वेच्छानुसार इस विद्रोही को दण्ड देने का कर्तव्य भी शहजादे के हाथ में सोंपा। शहजादा संसार का अलंकार था और विजय तथा प्रशासन का संचालक था। उसने अपनी व्यवस्था की उत्तमता को प्रकट करने के लिए राजा विक्रमाजीत को, जो वृद्ध, वीर और अनुभवी सरदार था, जो राजसिंहासन के प्रति बड़ा स्वामिभक्त था और जिसकी उन्नति के लिए शहजादे ने सब प्रकार का प्रयास किया था, जिसकी मित्रता सुवर्ण कसौटी पर कसने पर शुद्ध और लाल सिद्ध हो चुका था, जिसने पिछली बार तथा जाम और भारा की जातियों पर विजय प्राप्त करने में जिनका उल्लेख पहले हो चुका है, बादशाह की बड़ी सेवा की थी, सेना का संचालन सौंपा। जाम और भारा की जातियों के विरुद्ध पहले सेना का संचालन अच्छा नहीं हुआ था। अब उनको हराने में सरकार राजा विक्रमाजीत के प्रयास और बहादुरी के लिए बड़ी कृतज्ञ थी। शहजादे के आदेश के अनुसार विक्रमाजीत ने दृढ़ हृदय, अनुभूत निर्णय, स्वामिभक्तिपूर्ण विचार, शुद्ध, मित्रता और बड़ी सावधानी के साथ विजय प्राप्त करने के लिए बहुत बड़ी सेना साथ लेकर विद्रोही के विरुद्ध गुजरात से 12 शहरयार को बादशाह के शासन के तेहरवें वर्ष में तदनुसार 1 शाबान 1027 हिजरी को प्रयाण किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जब सूरजमल को यह समाचार मिला कि विक्रमाजीत की सेना उसकी ओर आ रही है तो वह भयभीत हुआ। उसका विचार पंजाब को लूटने का था परन्तु अब वह उस सम्पन्न प्रान्त पर लूट का हाथ नहीं डाल सका। एकदम भागकर उसने मऊ के दुर्ग में शरण ली जो सब ओर से पहाड़ियों और जंगलों से घिरा हुआ है और जो इस प्रदेश में सबसे अधिक विशाल और दृढ़ दुर्ग माना जाता है। प्राचीनकाल से यह इस प्रदेश के राजाओं की राजधानी था और इसको कई बार घेरा गया था परन्तु कोई शत्रु इसको जीत नहीं सका था। बहुत बड़ी शाही सेना का नेतृत्व करते हुय राजा विक्रमाजीत ने उस स्थान पर पहुँच कर दुर्ग को घेर लिया। शरणार्थियों ने उसका सामना किया परन्तु उन्हें शीघ्र ही हरा दिया गया और उनके पक्ष के सात सौ स्त्री-पुरुष मार डाले गए और बहुत से कैद कर लिए गए। स्वयं सूरजमल और कुछ अन्य लोग भागकर नूरपुर के किले में जा घुसे जिसको राजा बसु ने खड़ा किया था। दुर्ग-निर्माण से पूर्व इस स्थान का नाम "घमरी" था। विजय के पश्चात् इसको बादशाह नुरुद्दीन जहाँगीर के यशस्वी नाम के पीछे नूरपुर कहा जाने लगा। विक्रमाजीत ने मऊ का दुर्ग छीनकर युद्ध-सामग्री एकत्र कर ली थी और अब यह काँगड़ा की विजय करके सूरजमल का नाश करने पर तुला हुआ था। इस विचार से उसने अविलम्ब सूरजमल का पीछा किया। सूरजमल शाही सेना की प्रबल धाराओं के सामने नहीं टिक सका और परेशान हो जाने से वह वहाँ पर एक क्षण भी नहीं ठहरा। सेना के आगमन से पहले ही वह आधी रात को पहाड़ों की ओर भाग गया और चम्बा के राजा के राज्य में घुसकर तारागढ़ के किले में छिप गया। यह किला बहुत पुराना, बहुत ऊँचा और बहुत मजबूत है तथा सब ओर से जंगलों और पर्वतों से घिरा हुआ है। शाहीसेना ने उसको वहाँ पर घेर लिया। राजा ने तीन दिन किले पर एक के बाद दूसरा हमला किया और चौथे दिन अपने वीर योद्धाओं के साथ उसको छीनने की कोशिश की। वीर सिपाहियों की बड़ी क्षति हुई। बहुत से मारे गए या जख्मी हो गए। फिर भी अपने शस्त्र-बल से और वीरता से उन्होंने विजय प्राप्त की और किले पर कब्जा करके सूरजमल को वहाँ से भाग जाने पर बाध्य किया। जब उसके पक्ष के एक हजार से ज्यादा आदमी मारे गए और बहुत-से लोग घेरा डालने वालों के हाथ में आ गए तो वह तारागढ़ से भागकर चम्बा के राजा के पास चला गया और उसने उस किले में शरण ली जहाँ राजा और उसका परिवार रहता था और उसने समझा कि उसको दो या तीन-दिन के लिए सौभाग्यवश विश्राम मिल गया। तारागढ़ को छीन लेने पर और विद्रोही सरदार के भाग जाने पर विक्रमाजीत ने नूरपुर के दुर्ग की ओर कूच किया जहाँ वह कुछ दिन ठहरकर फिर अपनी शक्तिशाली सेना के साथ आगे बढ़ना और आस-पास के स्थानों को अपना शिकार करना चाहता था। उसने शीघ्र ही हारा, पहाड़ी, ठट्ठा, फकरोटा, सूर और जवाली के दुर्गों को जीत लिया जो नूरपुर के समीप स्थित थे और जंगलों से घिरे हुए थे तथा बड़े दृढ़ थे। अपने काम

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में इतनी सफलता प्राप्त करने के बाद उसने सूरजमल को पकड़कर कांगड़ा के दुर्ग को जीतने का निश्चय किया। जब वह इसके लिए तैयारी करने में लगा हुआ था तो सूरजमल के भाई माधोसिंह ने अवसर से लाभ उठाकर उसी प्रदेश में विद्रोह खड़ा कर दिया। परन्तु राजा विक्रमाजीत के डर से वह कोटिला के दुर्ग में बन्द हो गया जो कांगड़ा और नूरपुर के मध्य में स्थित है। इसके तीन ओर एक बड़ी नदी है और चौथी ओर भूमि है जो सूरजमल की समझ के समान तंग और अँधेरी है। इस किले की प्राचीर पर ऐसी तोपें रखी हुई हैं जो आग के आसमान के समान चमकती रहती हैं। राजा विक्रमाजीत बड़ा दूरदर्शी था। इसलिए उसने समझा कि ऐसे नए विद्रोही को दण्ड दिए बिना नहीं छोड़ना चाहिए। इसलिए बड़ी शीघ्रता के साथ उसने उधर कूच किया और वहाँ पहुँचकर एकाएक किले को घेर लिया। शत्रु ने साहसपूर्वक सामना किया परन्तु अन्त में वह हरा दिया गया और बड़े रक्त-पात के पश्चात् वह दुर्ग शाही अधिकारियों के हाथ में आया। सारांश यह है कि सूरजमल और उसके गुमाश्तों से सारे प्रदेश को छीनकर राजा विक्रमाजीत बादशाह की ओर से वहाँ का स्वामी बन गया। उसने विभिन्न स्थानों से विद्रोही अधिकारियों को निकाल दिया और अपने थाने जमा दिए। उसने राजसिंहासन के सेवकों को कई परगने जागीर में दिए। सूरजमल को अपनी धृष्टता और विद्रोहात्मक व्यवहार के लिए उचित दण्ड मिला और उसने बड़ी क्षति उठाई। अब वह अपने आचरण पर खेद करने लगा। उसने देखा कि थोड़े से समय में इतने दृढ़ दुर्ग आसानी से जीत लिए गए। बहुत से आदमी मारे गए और बहुत से कैद हो गए। जब वह धूल में मिल गया और दुख और सन्ताप से दब गया तो उसे एक घातक रोग हो गया और कुछ दिन बाद ही चम्बा के राजा के दुर्ग में उसकी मृत्यु हो गयी। इस विद्रोही की मृत्यु के बाद इस राजा ने समझा कि बादशाह की आज्ञा मानने से ही वह सुरक्षित रह सकता है। इस विश्वास के साथ उसने राजा विक्रमाजीत से सन्धि के लिए प्रार्थना की और उसका अनुग्रह प्राप्त होने पर उससे यह याचना की कि पिछले दुर्व्यवहार के लिए बादशाह से क्षमा दिलवा दी जाए। राजा विक्रमाजीत ने उससे कहा कि सूरजमल की समस्त सम्पत्ति अर्पण की जाए और बिना शर्त के आत्म-समर्पण का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाए। इसके अनुसार चम्बा के राजा ने सूरजमल की सारी सम्पत्ति दे दी जिसको विक्रमाजीत ने एक बड़े जाब्ते के साथ बादशाह के पास भेज दिया। इस सम्पत्ति में कितनी ही बहुमूल्य वस्तुएँ थीं और चौदह बड़े-बड़े हाथी तथा दो सौ अरबी और तुर्की घोड़े थे। इस प्रकार विद्रोहियों को नष्ट करके उसने कांगड़ा की विजय के लिए प्रयाण किया।

दुर्ग के निकट पहुँचते ही उसने अपनी सेना द्वारा उसे घेर लिया। यद्यपि अपने धर्म के कारण ऐसे काम के प्रति उसके मन में विद्रोह होता था तथापि अपने स्वामी के कारण उसने उस दुर्ग को जीतने के लिए भरसक प्रयास किया। वह अपने धर्म का बड़ा पक्का था। तो भी उसने इसके विरुद्ध आचरण किया क्योंकि वह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्वामिद्रोह और कृतघ्नता का अपराध नहीं करना चाहता था। वह समझता था कि स्वामी की सेवा ईश्वर की सेवा के समान है। दुर्ग के अन्दर देवी का मन्दिर था और यह हिन्दुओं की एक सबसे बड़ी देवी मानी जाती थी। इसकी पूजा करने के लिए देश के दूर-दूर के स्थानों से बहुत लोग आया करते थे। राजा विक्रमाजीत बादशाह का बड़ा ही आज्ञाकारी और स्वामिभक्त सेवक था। उसको बादशाह के हितों से इतना प्रेम था कि उसकी वृद्धि के लिए वह किसी खतरे से नहीं डरता था और वह किसी भी काम को दुष्कर नहीं समझता था। यद्यपि उसके पूर्वजों को राजा की उपाधि नहीं थी और वंशानुगत सम्मान के कारण उसमें कोई आत्म-विश्वास नहीं था तो भी उसकी प्रशंसनीय सेवाओं के कारण उसने विक्रमाजीत की उपाधि प्राप्त कर ली थी और उसे पाँच हजार का मनसब मिल चुका था। उसकी सेना का नेतृत्व पूर्णरूपेण उसके हाथों में था। वास्तव में, अपने स्वामी के प्रति कृतज्ञता और आज्ञापालन से असीम और अनन्त लाभ होते हैं। सारांश यह है कि विक्रमाजीत ने दुर्ग को घेर लिया और यथास्थान खाइयाँ खदवाईं और सुरंगें बनवाईं। प्रत्येक सेनाधिकारी को स्थान-स्थान पर नियुक्त किया और वह सबका निरीक्षण करने लगा। उसने दुर्ग पर कई जोरदार आक्रमण किए। शाही सेना के वीरों ने शत्रु के साथ बड़ी बहादुरी से लड़ाई की और राजपूतों ने शक्ति के आश्चर्यजनक कार्य किए, दुर्ग को घेरने वालों ने अन्त में दुर्ग प्राचीर को एक जगह से तोड़ डाला और वे अन्दर घुस गए। तब लड़ाई हुई जिसमें बड़ा रक्तपात हुआ। शाही सेना के वीर सैनिकों ने कितने ही विरोधियों को तीरों से छेद डाला और बिजली के समान उन पर आग बरसाई। सैनिक ऐसी वीरता से लड़े कि वीरता के कार्यों में उन्होंने प्रसिद्ध साम और नरीमान की बराबरी की। बन्दूकचियों ने ऐसे गोले बरसाए कि आकाश बादलों में छिपा हुआ मालूम होने लगा। सारा वातावरण तोपों के धुएँ से भर गया। तीरन्दाजों के तीरों से शत्रुओं की ढालों में इतने छेद हो गए कि वे मक्खी के छत्तों की सी मालूम होने लगीं और घावों के कारण सैनिकों के सीने तराजू के पलड़े के भाँति पोले हो गए। घेरा डालने वालों ने शत्रु पर इतने फन्दे फेंके मानो वे आकाश-गंगा में से आए हों। बन्दूक की गोलियाँ बड़ी दूर और तेजी से चलने लगीं। उनकी संख्या पानी की बूंदों से भी अधिक थी। ढोलों की ध्वनि ने बिजली के गरज को दबा दिया। विजयनाद और रणभेरियों की ध्वनि आसमान तक फैल गई और पाँचवे आकाश में वृहस्पति को भी परेशान कर दिया। अन्त में शत्रु बिल्कुल हारकर अपनी रक्षा करने के लिय भाग गया। यद्यपि उन्होंने जोर का सामना किया और आत्म-रक्षा में साहस और वीरता का परिचय दिया तथापि वीर सैनिकों ने ऐसे जोश के साथ आक्रमण किया और उनका आवेश ऐसा बना रहा कि दिन के अन्त में विजय-पवन शाही झंडों की ओर चलने लगी और शत्रु को बिल्कुल उखाड़ दिया गया। शाहीसेना के प्रबल हाथ ने उनको दुर्ग की कुंजियाँ अर्पित करने के लिए बाध्य किया। राजा विक्रमाजीत ने विजयोल्लास के साथ दुर्ग

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में प्रवेश किया और वहाँ की सम्पत्ति की रक्षा करने के लिए विश्वस्त अधिकारी नियुक्त किए और यथा-आवश्यक विभिन्न स्थानों पर आमिल रखे। इस महत्त्वपूर्ण विजय के पश्चात् उसने धन्यवाद देकर सैनिकों के विजय कार्यों की प्रशंसा करके और प्रत्येक पुरुष को उसके पद और काम के अनुसार पुरस्कार देकर समस्त सेना को प्रसन्न किया। जिन योद्धाओं ने इस युद्ध में उल्लेख के योग्य काम किया उनका उसने मनसब वढ़ाया। उसने उस तमाम कोष पर अधिकार कर लिया जो वहाँ के राजाओं ने प्राचीन-काल से अव तक एकत्र किया था। इस धन से उसने सेना के अधिकारियों और अमीरों को पुरस्कृत किया और सब खर्चा करने के वाद जो शेष बचा वह वादशाह के पास भेज दिया और जो विजय प्राप्त हुई थी उसका समाचार भी लिख भेजा। विजयवृत्त प्राप्त होने पर वादशाह ने विश्व-सृष्टा को धन्यवाद दिया तथा गरीब लोगों को वहुत-सा दान दिया।

(कांगड़ा की विजय का वृत्तान्त लिखने पर लेखक अपने वचनानुसार अव दुर्ग का वर्णन करता है।)

कांगड़ा का दुर्ग वड़ा विशाल है और एक ऊँची पहाड़ी पर स्थित है। इसकी इमारतें वड़ी सुन्दर हैं। यह इतना प्राचीन है कि कोई यह नहीं वतला सकता कि इसका निर्माण कव हुआ था। यह दुर्ग इतना दृढ़ है कि इसको कोई राजा कभी नहीं जीत सका और प्राचीन राजाओं के इतिहास को जानने वाले सव लोग इस विपय पर एक मत हैं कि आरम्भ से अव तक यह दुर्ग एक ही कुटुम्ब के अधिकार में रहता आया था। इस मुल्क में राज करने वाले मुसलमान सुलतानों के इतिहासों से भी इस वात की पुष्टि होती है। सन् 720 हिजरी और सुलतान गयासुद्दीन की शक्ति के आरम्भ से 963 हिजरी तक जव वादशाह अकवर समस्त हिन्दुस्तान का स्वामी वना, इस दुर्ग को वड़े-वड़े शक्तिशाली शासकों ने वावन वार घेरा था परन्तु इसको कोई जीत नहीं सका। फीरोज दिल्ली का एक सवसे वड़ा सुलतान था। उसने भी इस दुर्ग को एक वार घेरा था। परन्तु उसका प्रयास विफल हुआ क्योंकि अन्त में उसने इसी वात पर सन्तोष कर लिया कि राजा से उसकी मुलाकात हो गई और वह असफल होकर वापस चला गया। वादशाह अकवर के शासन-काल में उसके एक सवसे वड़े अमीर हसन कुलीखाँ तुर्कीमान ने, जिसको खान-ए-जहाँ की उपाधि थी और जो बंगाल प्रान्त का सूवेदार था, पंजाव का सूवेदार वनने के वाद एक वहुत वड़ी सेना के साथ इस दुर्ग को घेरा था। यद्यपि यह घेरा लम्वे अर्से तक चलता रहा तथापि वह इस दुर्ग को नहीं जीत सका। ऐसे महान और कठिन कार्य में सफ़ल होना आशा के परे था। परन्तु ईश्वर ने सव कामों के लिए एक समय निश्चित कर रखा है, उस समय वे पूरे हो जाते हैं। यही कारण था कि सव कुछ प्रयत्न करने पर भी वादशाह उस पर अधिकार प्राप्त नहीं कर सका। इस दुर्ग को वादशाह जहाँगीर की प्रबल सेना के हाथों पड़ना था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसके नक्षत्र के प्रभाव से सब कठिनाइयों पर विजय हो गई और सब विघ्न दूर हो गए।

दूसरी विजय

जब सृष्टि का पृष्ठ खाली था और किसी वस्तु का स्वरूप नहीं बना था तो संसार में व्यवस्था की रक्षा करने के लिए उस महान प्रभु ने प्रत्येक मनुष्य का भाग्य निश्चित कर दिया और प्रत्येक कठिनाई को खोलने की चावी उसने ऐसे व्यक्ति के हाथ में दे दी जिसमें उपयुक्त प्रतिभा थी। प्रत्येक काम के लिए समय नियुक्त है और जब वह समय आता है तो सब विघ्न दूर हो जाते हैं। जब उस काम को करने वाले का जन्म होता है और वह अपने मन के प्रकाश से संसार को प्रकाशित करता है तो अपने कार्य को सम्यक रूप से करना उसके लिए सरल हो जाता है। यह बात निम्नलिखित वृत्तान्त से स्पष्ट हो जाएगी :

बादशाह जहाँगीर ने आम रिवाज के अनुसार अपने राज्य की शासन-व्यवस्था अपने पुत्र शहजादा शाहजहाँ की अचूक बुद्धि के सुपुर्द कर दी थी। इस शहजादे में इतनी शक्ति थी कि वह समस्त कठिनाइयों को पार कर सकती थी। उसने पहले तो राणा पर विजय प्राप्त की और फिर अपनी तलवार के बल से उसने जाम और भारा की जातियों का दमन किया। इसलिए कि उस अनन्त बुद्धि वाले ईश्वर की गुप्त योजनाएँ और विधाता के रहस्य प्रकट हो जाए और ईश्वरीय प्रकाश जो इस शहजादे के मस्तिष्क को अलंकृत करता है, सब लोगों पर प्रकाश फैला सके। उन समृद्धशाली दिनों में बादशाह के पास यह खबर आई कि सूरजमल जिसको उसके पिता राजा वसु की जमींदारी अभी उदारतापूर्वक मिली थी दुष्ट विचारों से प्रेरित होकर देश में उपद्रव खड़ा कर दिया है और बुरे नक्षत्रों के प्रभाव से राजसिंहासन के विरुद्ध उपद्रव कर रहा है, अपनी सीमा से बाहर निकल कर उसने पंजाब के परगनों के लोगों को सताना शुरू कर दिया है और लूटमार शुरू कर दी है। बादशाह को शहजादे की प्रतिभा का पूरा पता था और वह जानता था कि कोई ऐसी कठिनाई नहीं है जिसको वह पार न कर सके और कोई ऐसा कठिन कार्य नहीं है जिसे वह सम्पन्न न कर सके।

इसलिए नए विद्रोही को दण्ड देने का कर्त्तव्य उसके सुपुर्द किया गया। जिससे उसकी तलवार की तीक्ष्ण धारा से सब प्रकार की गड़बड़ों का दमन हो सके। इसके अनुसार शहजादे ने अपने सुपुर्द किए हुए काम की पूर्ति के लिए साधनों का उपयोग करने का निश्चय किया और इसके लिए राजा विक्रमाजीत को, जो बादशाह का एक बहुत पुराना और सबसे अधिक अनुभवी सेवक था, आदेश दिया।

तीसरी विजय

ईश्वर के मार्ग प्रदर्शन से बादशाह की दृष्टि इस बात पर थी कि उसके राज्य के समस्त विद्रोहियों को निर्मूल किया जाए। सब काफिरों को समूल नष्ट

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किया जाए और उनके सारे मन्दिरों को भूमिसात कर दिया जाए। दैवी शक्ति से सम्पन्न होकर उसने अपना समस्त प्रयास मुसलमान धर्म के प्रचार में लगा दिया और सर्वशक्तिमान ईश्वर की सहायता से और अपनी तलवार की शक्ति से उसने अपने राज्य का विस्तार करने में और मोहम्मद के धर्म की कीर्ति की वृद्धि करने में सारी शक्ति लगा दी। उसकी तलवार के भय से, जिसमें अग्नि का गुण था, मुसलमान धर्म की भाँति हिन्दुस्तान ने भी क्षण-क्षण नया वैभव प्राप्त किया। उसके शक्तिशाली शासन में इस्लाम का तराना जोर की आवाज से फिर गाया जाने लगा और धार्मिक सिद्धान्त रूपी गुलाब के पुष्प ने खिलकर अपना सौरभ दूर-दूर तक फैला दिया। सर्वशक्तिमान ईश्वर के इस प्रतिनिधि के प्रयत्न से इस्लाम को प्रति पल नया प्रकाश प्राप्त होने लगा और उसकी भाग्य रूपी दुलहन उसके प्रतिभा के अलंकारों से विभूषित होकर सारे संसार में चमकने लगी और हर घण्टे उसका वैभव नया-सा मालूम होने लगा। भगवान के अनुग्रह से इस प्रकार पुष्ट होकर सन् 1027 हिजरी में अर्थात् अपने शासन के तेरहवें वर्ष में बादशाह अपनी विजयी सेना को गुजरात के प्रान्त में ले गया। जब फासला तय हो चुका तो उसके कीर्ति-सूर्य की किरणें अहमदाबाद के निवासियों पर पड़ने लगीं और उस सुखद नगर को उन्होंने न्याय, उदारता और शान्ति की ज्योति से परिपूर्ण कर दिया। वहाँ जाकर उसके उस स्थान का पद सातवें आकाश से भी ऊँचा कर दिया। जब वह इस नगर में था, उसे सूचित किया गया कि राजा बासु के पुत्र सूरजमल ने अपनी मूर्खता और कुबुद्धि के कारण विद्रोह कर दिया है और अपने दुर्भाग्य और दुराचार के वश होकर औचित्य की सीमा का उल्लंघन करके पंजाब के परगनों के लोगों को सताना शुरू कर दिया है। बादशाह को इससे पहले मालूम हो चुका था कि शहजादा शाहजहाँ ने राणा पर विजय प्राप्त कर ली है और जाम और भारा की जातियों को दबाने में भी उसे सफलता प्राप्त हो चुकी है। इससे बादशाह को विश्वास हो गया था कि शहजादे की समृद्धि में वृद्धि होगी। इसलिए उसने सूरजमल के विद्रोह को उन्मूलन करने का और कांगड़ा दुर्ग को जीतने का कार्य उसके सुपुर्द कर दिया जिसका संक्षिप्त विवरण इस पुस्तक के अन्त में दिया जाएगा। इसलिए शहजादे ने इस काम को अपने हाथ में लेकर अपनी सेना तैयार करना शुरू की और इसका नेतृत्व राजा विक्रमाजीत को दिया। इस राजा का भाग्यरूपी वृक्ष शहजादे के संरक्षण में विकसित हो चुका था और शहजादा सर्वशक्तिमान ईश्वर की कृपालुता से पुष्ट हो चुका था।

चौथी विजय

बादशाह जहाँगीर के शासन के तेरहवें वर्ष में ऐसे समय का आरम्भ हुआ जिसमें कई बड़ी-बड़ी विजय प्राप्त होने वाली थीं। इस वर्ष का प्रत्येक दिन नौरोज था और प्रत्येक प्रातःकाल ईद के त्यौहार के समान सुखद था तथा आशा के समान प्रसन्न था। प्रत्येक रात्रि सूर्य के समान प्रकाशित और लेलातुलकदर जैसी सुखद

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

थी। सारांश यह है कि यह ऐसा समय था जब इस उत्तम शासन की समृद्धि की कली पूर्णतया खिल गई थी। इन हर्ष दिवसों में बादशाह ने गुजरात पहुँचकर अहमदाबाद के नगर को अपनी उपस्थिति से अलंकृत किया। जब वह वहीं था तो उसे सूचना मिली कि राजा बासु के पुत्र सूरजमल ने, जिसको उसके पिता की जमींदारी प्रदान की गई थी, अपनी अदूरदर्शिता के कारण राजसिंहासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया है और अपनी मूर्खता के आदेश को मानकर तथा बुद्धिमत्ता के पथ से विचलित होकर उसने पंजाब के परगनों पर अपना लुटेरा हाथ बढ़ाने का विचार किया है। बादशाह का हमेशा यह प्रयत्न होता था कि कुफ्र की आग को बुझाया जाए और विद्रोह का निवारण किया जाए। इसलिए उसने तुरन्त ही शहजादे को आदेश दिया कि विद्रोही को दन्ड देने के लिए काम किया जाए। परमात्मा के पथ प्रदर्शन से उसका विचार हमेशा विद्रोहियों का और काफिरों का उन्मूलन करना था। इसलिए उसने शहजादे को, जो बुद्धिमान और दूरदर्शी था, आदेश दिया कि काँगड़ा दुर्ग को छीन लिया जाए। यह दुर्ग स्थापित हुआ तब से कोई सुलतान इसके निकट नहीं पहुँचा था। शहजादे ने इससे पहले ही राणा पर विजय प्राप्त कर ली थी और जाम और भारा नामक जातियों को दबा दिया था। इसलिए बादशाह के आदेशानुसार उसने सेना तैयार करने में देर नहीं लगाई और उसका नेतृत्व राजा विक्रमाजीत को दे दिया। शहजादे ने इससे पहले ही राजा विक्रमाजीत की पदवृद्धि कर दी थी। इस राजा ने पिछले कई अवसरों पर राजसिंहासन की प्रशंसनीय सेवा की थी और अभी कुछ दिन पहले जाम और भारा आदि जातियों के विरुद्ध वह सफलतापूर्वक युद्ध कर चुका था।

पाँचवीं विजय

जब अपने शासन के तेरहवें वर्ष में बादशाह जहाँगीर अपनी सतत विजयी सेना को गुजरात के प्रदेश में ले गया और अहमदाबाद पहुँचकर उसने अपने शुभागमन के द्वारा उस नगर के पथ को नवें आसमान से भी ऊंचा कर दिया तो उसको सूचना मिली कि राजा बासु के पुत्र सूरजमल ने दूरदर्शिता के पथ से विचलित होकर देश में गड़बड़ मचा दी है और राजसिंहासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया है और अपनी सीमा का उल्लंघन करके पंजाब के परगनों के निवासियों को सताना शुरू कर दिया है। बादशाह ने शहजादा शाहजहाँ को बाल्यकाल से ही देख लिया था कि उसके मुख पर भाग्य और महानता की ज्योति चमका करती है और उसकी समृति का सूर्य प्रतिदिन अधिकाधिक ऊँचा उठता जाता है। बादशाह को पूर्ण आशा थी कि ऐसी कोई कठिनता नहीं है, जिसको अपने साहस के द्वारा शहजादा पार न कर सके और ऐसा कोई कठिन कार्य नहीं है जो उसके बल से पूरा न हो सके। सूरजमल के विद्रोह से पहले ही उसने राणा पर विजय प्राप्त कर ली थी और जाम तथा भारा की जातियों का पूर्णतया दमन कर दिया था। इस नए

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विद्रोही को दण्ड देने का कर्तव्य और कांगड़ा दुर्ग का विनाश जो इतना दृढ़ था कि अब तक कोई भी सुलतान उसको नहीं जीत सका था, उसके सुपुर्द किए गए। इसलिए उसको अपना सारा ध्यान इस चढ़ाई पर देना पड़ा। उसने अपनी सेना का नेतृत्व राजा विक्रमाजीत के सुपुर्द किया जो अपने शुभ नक्षत्र के कारण सब अवसरों पर शहजादे की बहुमूल्य सेवाएँ कर चुका था।

छठी विजय

बादशाह ने देखा कि शहजादे में ऐसे सब गुण हैं जो राजा में होने चाहिए और जो भावी समृद्धि के सूचक हैं। इसलिए बादशाह को विश्वास हो गया कि यह शहजादा अपने प्रशंसनीय चरित्र के कारण बड़ा भाग्यशाली और शक्तिशाली शासक बनेगा। इसलिए बादशाह ने हमेशा ऐसा काम किया जिससे यह प्रकट हो कि वह उसको अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता है। यही कारण था कि सब बड़े-बड़े काम शहजादे की सेना के सुपुर्द किए गए और प्रत्येक कठिन प्रस्ताव को हल करने का काम उसकी प्रतिभा को सौंपा गया। जब शहजादे की सफल सेना ने राणा पर विजय प्राप्त कर ली तो अपने शासन के तेरहवें वर्ष में बादशाह जहाँगीर ने सूबा गुजरात की ओर प्रयाण किया और अहमदाबाद नगर, जो सदैव वसन्त ऋतु में उपवन की भाँति सुखद है, उसके चरण चिन्हों से अलंकृत हुआ। इस समय जब शहजादा जाम और भारा की जातियों को दबा चुका था तो तुरन्त ही बादशाह को सूरजमल के विद्रोह की और पंजाब में परगनों के निवासियों को सताने की सूचना मिली। तब इस नए विद्रोही को दण्ड देने का काम भी शहजादे के सुपुर्द किया गया जिसको उस समय कांगड़ा दुर्ग को जीतने का आदेश मिल चुका था। बादशाह को बहुत अर्से से अभिलाषा थी कि इस दुर्ग को जीता जाए। शाही आदेश के अनुसार शहजादे ने एक सेना तैयार की और उसका नेतृत्व राजा विक्रमाजीत को सौंपा गया जो शाही सिंहासन की अनेक बहुमूल्य सेवाएँ कर चुका था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परिशिष्ट 'ङ'

फरिश्ता के इतिहास की भूमिका

जरनल ब्रिग्ज ने लिखा है कि फरिश्ता के इतिहास के शुरू में एक भूमिका है जिसमें मुसलमानों के आक्रमण से पहले का अपूर्ण और संक्षिप्त हिन्दू इतिहास दिया हुआ है। फरिश्ता के इतिहास के इस भाग की सर एच० एम० ईलियट ने बड़ी निन्दा की है और लीवी के प्रथम दस भागों के साथ या डाक्टर हेनरी के "ग्रेट ब्रिटेन" के इतिहास की प्रथम जिल्द के साथ जो ओसियन की कविताओं पर आश्रित है, इसकी तुलना की है। जरनल ब्रिग्ज ने भूमिका का थोड़ा-सा अनुवाद किया था और इसके मूल्य के विषय में उसकी सम्मति अच्छी नहीं थी। फिर भी सर एच० एम० ईलियट की स्पष्ट निन्दात्मक सम्मति के होते हुए भी प्रायः यह इच्छा प्रकट की गई है कि इसका पूरा अनुवाद होना चाहिए। भूमिका में जिस विषय का विवेचन है वह वहुत ही अन्धकारमय है और जो लोग हिन्दुओं के प्राचीन इतिहास के अन्धकार में प्रवेश करने का प्रयत्न कर रहे हैं उनको छोटी-सी किरण या चिनगारी के लिए भी बड़ी उत्सुकता है। फरिश्ता ने इस विषय का विवरण बड़े साहस और निश्चित रूप से किया है। उसको इसमें कुछ भी शंका नहीं है। जरनल ब्रिग्ज के संक्षेप के पढ़ने से या फारसी के लिखे हुए मूल की परीक्षा से पाठकों में पूर्ण अनुवाद के लिए इच्छा जाग्रत होगी। इसलिए सम्पादक ने भूमिका के समस्त ऐतिहासिक भाग का निम्नलिखित पूरा अनुवाद किया है। यदि इससे पाठकों को सन्तोष न होगा तो उनकी आशा को तो यह बुझा देगा और फिर पाठक यह न समझेंगे कि इस खान को अधूरे ढंग से खोदा गया है और इसमें ऐसे प्रकाश-रत्न भरे हुए हैं जिनका अब तक पता नहीं लगा है और जिनका मूल्यांकन नहीं किया गया है। साहित्यिक कृति की दृष्टि से यह भूमिका वास्तव में विचित्र है। बिखरी हुई हिन्दू परम्पराएँ जो विविध स्रोतों से लेखक ने एकत्र की थीं, उनको कुरान की शिक्षाओं से विना हिचके ही जोड़ दिया गया है और इसी भाँति शाहनामे की कहानियाँ भी इससे मिला दी गई हैं। ईसाई लोक में भी ऐसे लेखक हुए हैं जिन्होंने समस्त इतिहास को बाइविल से मिलाने करने का प्रयास किया है। मुसलमानों को और उनके मूर्तिपूजक पूर्व-पुरुषों को बड़े आग्रह के साथ हिन्दुस्तान और कुफ्रिस्तान का स्वामी वतलाया गया है। वे लोग यहाँ से नियमपूर्वक और दबाव डालकर खिराज लिया करते थे। यह हो सकता है कि इस वर्णन में तथ्य का भी कुछ धुंधला-सा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आभास हो और ईरानी और हिन्दुस्तानी वीरों में सर एच० एम० ईलियट के कथनानुसार किंचित सामंजस्य हो। परन्तु ऐसा सामंजस्य है या नहीं इसका पता लगाने में हिन्दुस्तानी इतिहास का शोध करने वाले के मार्ग में अब फारसी भाषा के अज्ञान के कारण कोई बाधा नहीं आएगी क्योंकि प्राचीन भारत के इतिहास के मुस्लिम कृत संक्षेप की पूरी जाँच से यह विघ्न दूर हो सकता है। यह अनुवाद जनरल ब्रिग्ज के लीथोग्राफ संस्करण से किया गया है परन्तु रॉयल ऐशियाटिक सोसायटी की हस्तलिखित प्रति का भी उपयोग किया गया है।

अनुवाद

इस भूमिका में हिन्दुस्तान के लोगों के सिद्धान्त, उनके राजाओं का इतिहास और इस देश में मुस्लिम शक्ति के उदय का वर्णन है। इस समय महाभारत की अपेक्षा हिन्दुओं में कोई दूसरा अधिक विस्तृत और विश्वसनीय ग्रन्थ नहीं है। बादशाह जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर के शासन-काल में शेख मुबारक के पुत्र शेख अबुलफजल फैंजी ने इस पुस्तक का हिन्दी से फारसी में अनुवाद किया था। इसमें एक लाख से अधिक श्लोक हैं। इन पंक्तियों के लेखक ने इस पुस्तक का संक्षेप लिखने का कार्य अपने हाथ में लिया है और यहाँ उसका सारांश दिया जाता है जिससे शोध करने वालों को आरम्भ से अन्त तक इसकी विषय-सूची का ज्ञान हो सके। यह कोई भेद की बात नहीं है कि इस देश में सृष्टि की रचना के विषय में दार्शनिकों भक्तों और विद्वानों में बड़ा मतभेद है। इन विभिन्न मतों में से तेरह का उल्लेख महाभारत में किया गया है। परन्तु इन लेखकों में से कोई भी इस विषय में जाँच करने वालों को सन्तुष्ट नहीं कर सका और उनकी अभिलाषा बिल्कुल भी पूरी नहीं हो सकी।

हिन्दुओं के दूषित विश्वासों के अनुसार इस परिवर्तनशील संसार के कालचक्र में चार युग हैं—प्रथम सतयुग कहलाता है, दूसरा त्रेता, तीसरा द्वापर और चौथा कलियुग है। जब भी कलियुग पूरा हो जाता है तो सतयुग पुनः आ जाता है और कलियुग का अन्त हो जाता है। इसी प्रकार संसार की गति चलती आई है। इसके आरम्भ का या अन्त का कोई चिह्न नहीं है। एक प्रमाणित ग्रन्थ में यह लिखा हुआ है कि एक समय किसी तुच्छ चरित्र वाले ने धर्मनेता से पूछा—"आदम के तीन हजार वर्ष पहिले किसका अस्तित्व था", तो हजरत ने उत्तर दिया—"आदम"। यह उत्तर तीन बार दिया गया तो वह आदमी सिर झुकाकर चुप हो गया। अब हजरत कहते रहे, "यदि तुम मुझे तीन हजार बार भी पूछो कि, आदम से पहले कौन था, तो मैं फिर भी उत्तर दूंगा कि 'आदम'।" इसलिए संसार का समय निश्चित नहीं किया जा सकता और इस विषय पर हिन्दू लोगों के विचार केवल असंगत हैं। एक प्राचीन ब्राह्मण के कथनानुसार इस संसार का दिन अन्त हो जाएगा और फिर इसके उदय का समय आएगा। इनके बड़े प्रामाणिक विद्वान इस मत की पुष्टि करते हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सतयुग का समय 17,28,000 वर्ष माना गया है। इस युग में पृथ्वी पर निवास करने वाले लोगों के कर्म अच्छे और धार्मिक थे। छोटे और बड़े, निर्धन और धनवान सत्य के मार्ग से विचलित नहीं होते थे और ईश्वर की इच्छानुसार काम करते थे। इस युग में मनुष्य की स्वाभाविक आयु एक लाख वर्ष की थी। हे भगवान, यह कैसी उक्ति है और क्या आयु है। त्रेता युग का समय 12,96,000 वर्ष है। इस युग में तीन चौथाई मनुष्यों का जीवन ईश्वर के नियमों के अनुसार था और मनुष्य की स्वाभाविक आयु दस हजार वर्ष की थी। तीसरे या द्वापर युग का समय 8,64,000 वर्ष का है। इस युग में इस संसार के निवासी ईमानदारी की बातें करते थे और उनके चरित्र में सच्चाई थी। इस युग में मनुष्य की आयु एक हजार वर्ष की होती थी। आदम, नूह और अन्य पूर्व पुरुषों की आयु एक हजार या लगभग एक हजार वर्ष की थी। हिन्दुस्तान के निवासियों का कहना है कि ये पूर्व पुरुष द्वापर युग के अन्त में हुए थे। इसलिए इनकी आयु इतनी अल्प थी। चौथे या कलियुग का समय 4,32,000 वर्ष का है। इस युग में तीन चौथाई मनुष्य अधार्मिक और हीन-जीवन व्यतीत करते हैं और मनुष्य की स्वाभाविक आयु सौ वर्ष की है। प्रत्येक युग के समय की व्यवस्था इस प्रकार है—कलियुग का दुगुना द्वापर है, और द्वापर में कलियुग का समय जोड़ने से त्रेतायुग का समय बनता है। इसी प्रकार त्रेता युग का समय बढ़ाने से सतयुग बनता है। इस समय अर्थात् हिजरी सन् 1015 में हिन्दुस्तान के लोग कलियुग का 4684वाँ वर्ष मानते हैं।

हिन्दुस्तान के लोगों के विश्वास के अनुसार सर्वशक्तिमान ईश्वर ने आरम्भ में पाँच तत्वों की रचना की जिनमें चार परिचित (पार्थिव) तत्व हैं और पाँचवाँ आकाश है। फिर उसने ऐसा व्यक्ति बनाया जिसका कोई आकार नहीं था। परन्तु वह बुद्धि का घनीभूत पुंज था और ब्रह्म कहलाता था। विविध वर्णनों के अनुसार ईश्वर ने उसको शून्य में से उत्पन्न करके यह अस्तित्व दिया था और वह ही सृष्टि का आदि कारण था। उसी से संसार की स्थापना हुई थी। हिन्दुस्तान के साधारण लोगों की भाषा में आकाश का अर्थ आसमान है परन्तु कुछ चुने हुए लोग इस बात को स्वीकार नहीं करते और कहते हैं कि भारतवर्ष के ऋषियों के विश्वास के अनुसार स्वर्ग का अस्तित्व है और इस मृत्युलोक के चारों ओर वायु है। तारे मृतक महापुरुषों के स्वर्गीय आकार हैं। इन्होंने अपनी स्वाभाविक इच्छाओं का दमन करके भक्ति के द्वारा यह प्रकाशमय आकार प्राप्त कर लिए हैं और उनके स्वभाव और गुण ईश्वर जैसे बन गए हैं और बड़ी ऊँचाई पर चलते-फिरते हैं तथा साधारण लोगों की भाषा में वे परलोक के पक्षी हैं। कुछ लोग पूर्णता प्राप्त करके तारे बन गए हैं। ऐसे लोग इस नीचे संसार में फिर कभी नहीं आते। जो इतने पूर्ण नहीं हैं वे आकाश में अपने गुणकर्मों के अनुसार कुछ समय बिताकर पुनः नीचे के संसार में लौट आते हैं एवं हिन्दुओं के शास्त्रों में आकाश के कई अर्थ हैं परन्तु यहाँ इस लम्बे विवेचन में प्रवेश करना उचित प्रतीत नहीं होता।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जगत सृष्टा की इच्छा से ब्रह्मा ने शून्य में से मनुष्य की सृष्टि की और उसको साकार बनाकर फिर चार वर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र बनाए। प्रथम वर्ण की सृष्टि उसने धर्मयुद्ध, तपश्चर्या, धर्मरक्षा और संयम के निमित्त की। इन्हीं लोगों को इस मृत्यु लोक का संचालन सुपुर्द किया गया। दूसरे वर्ण को उसने शासन के सिंहासन पर विठाया और जगत का शासन उनके सुपुर्द करके लोक-व्यवस्था की। तीसरे वर्ण को कृषि, वाणिज्य और कला का कार्य करने के लिए नियुक्त किया और चौथे वर्ण को उच्च वर्ण की सेवा के निमित्त बनाया। ईश्वर के आदेश और पवित्र प्रेरणा से ब्रह्मा के वर्तमान और भावी जीवन के लिए एक ग्रन्थ उत्पन्न किया जिसको वेद कहा जाता है। परमात्मा के आदेश से ब्रह्मा की सक्रिय और विवेकमय चेतनशक्ति ने मनुष्य की सब अवस्थाओं में पय-प्रदर्शन के नियम बनाए और अपने सब नियमों और उपदेशों को ग्रन्थ का आकार देकर उसका नाम पवित्र ग्रन्थ रखा। इस प्रकार मनुष्य जाति को एक नियंत्रण शक्ति प्राप्त हुई जो आगे और पीछे उनका पथ-प्रदर्शन करती रहे और वे लोग सीधे मार्ग पर चलें और विचलित न हों। वेद में एक लाख श्लोक हैं। श्लोक चार चरण का छन्द होता है और एक चरण में चौबीस से अधिक या कम अक्षर नहीं हो सकते। अक्षर एक हर्फ को कहते हैं। भारत के ऋषियों का इस विषय पर एकमत है कि इस पुस्तक के लेखक की आयु सौ वर्ष की थी। परन्तु ये वर्ष असाधारण थे क्योंकि प्रत्येक वर्ष में 360 दिन थे और एक दिन में उपरोक्त युग के चार हजार वर्ष थे। एक रात में एक हजार युग थे और इसी प्रकार दिन में। हिन्दुस्तान के ब्राह्मण विद्वानों का कथन है कि इस समय तक जब मैं यह पुस्तक लिख रहा हूँ, इस संसार में कई ब्रह्मा हो चुके हैं। मैंने अपने ब्राह्मण मित्रों से सुना है कि वर्तमान ब्रह्मा 1001 वाँ है। इसकी आयु के पचास वर्ष और आधा दिन व्यतीत हो चुका है और वह अब अपने जीवन के उत्तर पक्ष में प्रवेश कर रहा है।

कथा-लेखकों का कहना है कि द्वापर के उत्तर पक्ष में हिन्दुस्तान में हस्तिनापुर में एक क्षत्रिय राजा था जो न्याय के आसन पर बैठकर अपनी प्रजा के अधिकारों की रक्षा किया करता था। उसका नाम राजा भरत था। उसके बाद लगातार सात उत्तराधिकारी हुए जो इस संसार का शासन करके दूसरे संसार को चल बसे। उसका आठवाँ उत्तराधिकारी राजा कुरु था। कुरुक्षेत्र या थानेश्वर एक बड़ा नगर है। यही उसी के नाम पर है। उसके उत्तराधिकारी कौरव कहलाते थे। पाँच पीढ़ी के बाद एक पुत्र हुआ जो चतुर्भुज के नाम से विख्यात हुआ। इस बड़े राजा के दो पुत्र थे—एक का नाम धृतराष्ट्र और दूसरे का नाम पाण्डु। धृतराष्ट्र बड़ा था परन्तु वह अन्धा था, इसलिए राजसत्ता उसके छोटे भाई पाण्डु को प्राप्त हुई। उसकी शक्ति इतनी बढ़ी कि उसके पीछे उसके पुत्र पाण्डव कहलाए। उसके पाँच पुत्र थे—युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल तथा सहदेव। इनमें प्रथम तीन पुत्रों युधिष्ठिर, भीमसेन और अर्जुन की माता का नाम कुन्ती था और दो पुत्रों नकुल तथा सहदेव की माता का नाम माद्री था। धृतराष्ट्र के गांधारी से सौ पुत्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुए। यह कंधार के राजा की पुत्री थी। ज्येष्ठ पुत्र दुर्योधन था। उसके एक अन्न के व्यापारी की पुत्री से एक और भी पुत्र हुआ था जो युयुच्छ कहलाता था। ये सब पुत्र कौरव नाम से प्रसिद्ध थे। जब पाण्डु की मृत्यु हो गयी तो सम्बन्ध के अधिकार से धृतराष्ट्र ने राज्य प्राप्त किया और उसके पुत्र उसके साथ-साथ शासन करने लगे। ज्येष्ठ पुत्र दुर्योधन अपने राज्य की शत्रुओं से रक्षा करने के औचित्य और कर्त्तव्य को समझता था। इसलिए वह पाण्डवों पर सन्देह करने लगा और उसने उनको उखाड़ फेंकने का निश्चय किया। धृतराष्ट्र को भी पाण्डवों की शत्रुता का पता था। इसलिए उसने उन्हें आदेश दिया कि नगर से दूर वे अपने लिए निवास-स्थान बना लें और वहाँ जाकर रहें जिससे वैमनस्य का अन्त हो जाए। दुर्योधन ने भवन निर्माताओं को और कारीगरों को आदेश दिया कि इस भवन की दीवारें और छतें लाख की बनाई जावें ताकि एक चिनगारी से ही उसमें आग लग जाए और पाण्डवों का चिह्न भी न रहे। पाण्डवों को इसकी सूचना मिल गई तो अपनी रक्षा करने के लिए वे अपने घर में आग लगाकर अपनी माता के साथ वन में चले गए। एक स्त्री जिसका नाम भील था, अपने पाँच पुत्रों के साथ वहाँ अवसर की प्रतीक्षा कर रही थी। दुर्योधन ने उसको वहाँ आग लगाने के लिए भेजा था। उस रात्रि को वह और उसके पाँच पुत्र वहाँ जल गए। दुर्योधन के गुप्तचरों ने समझा कि यह स्त्री और उसके पुत्र कुन्ती और पाण्डव हैं और सब पाण्डव जल चुके हैं। उन्होंने यह हर्ष समाचार कौरवों को सुनाया और वे बड़े प्रसन्न हुए।

इस विपत्ति के बाद जैसा कि महाभारत के अनुवाद से प्रकट होता है, पाण्डव लोग अपने नाम और भेष बदलकर अपने ऊजड़ घर को छोड़कर कम्पिला नामक कस्बे में चले गए। वहाँ उन्होंने तरकीब से कम्पिला के राजा की पुत्री द्रोपदी से विवाह किया और वह उन पाँचों भाइयों की पत्नी बन गई। यह ठहरा कि वह प्रत्येक भाई के पास सत्रह दिन रहेगी। इस समझौते के अनुसार उनमें शान्ति और मेल बना रहा। कुछ हिन्दुओं का मत है कि यह धर्म-विरुद्ध था। इसलिए वे इसका कुछ और ही अर्थ लगाते हैं। सत्य का पता ईश्वर को है परन्तु उनके चरित्र की उज्ज्वलता प्रत्यक्ष थी और उनकी कीर्ति चारों ओर फैलकर दुर्योधन तक पहुंच गई थी। उसने पता लगाया तो जान पड़ा कि पाण्डवों के भस्मसात हो जाने की कथा असत्य है। उसने मित्रता का वचन देकर स्वार्थमय योजना बनाई और उन्हें हस्तिनापुर बुलाया। उनके साथ शिष्टता का व्यवहार करके उसने वंशानुगत राज्य को इस प्रकार विभक्त कर दिया जैसे भाइयों में विभक्त किया जाता है। अतः इन्द्रपथ (इन्द्रप्रस्थ) जो पुरानी दिल्ली के निकट है, आधे राज्य के साथ पाण्डवों के हिस्से में आया और हस्तिनापुर राज्य के दूसरे भाग के साथ कौरवों के हाथ में रहा।

इसी समय बहुत से सामन्तों ने पाण्डवों के उत्तम गुण और ज्ञान को देखकर उनकी सेवा में प्रवेश किया। प्रत्यक्ष में वे कौरवों के स्वामिभक्त थे परन्तु हृदय में उनके प्रति शत्रुता थी। इस समय युधिष्ठिर के मन में विचार आया कि वह राजसूय

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नामक यज्ञ करे। इस यज्ञ में बहुत-सी आग जलाई जाती है। इसमें सब प्रकार के सुगन्धित पदार्थ, फल और अन्न डाले जाते हैं जो अग्नि में भस्म हो जाते हैं। अग्नि को तत्वों की माता माना जाता है। युधिष्ठिर समझता था कि विधिपूर्वक इस यज्ञ को करने से वह ईश्वर के निकट पहुंच जाएगा। राजसूय यज्ञ में एक बात यह आवश्यक मानी जाती है कि समस्त संसार के राजा लोग एकत्र होकर यज्ञ के समय अधीनता प्रकट करें। इसलिए युधिष्ठिर ने अपने चारों भाइयों को दिग्विजय के लिए चारों दिशाओं में भेजा। सर्वशक्तिमान परमात्मा की कृपा से थोड़े ही समय में यह उद्देश्य पूरा हो गया। ईश्वर के पथ-प्रदर्शन से साहसी भाइयों ने सारे संसार में प्रयाण किया और खताई, रूम, एबीसिनिया, अर्बस्तान, ईरान, तुर्किस्तान, मवरोन नहर और संसार के प्रत्येक अन्य भागों के राजाओं को बड़े कोष के सहित वे इन्द्रपथ ले आए और राजसूय यज्ञ करके उन्होंने अपनी इच्छाएँ पूर्ण कीं।

इस महानता, कीर्ति और शक्ति को देखकर दुर्योधन आपा भूल गया। उसके हृदय में ईर्ष्या की आग सुलग रही थी। वह अब धधक उठी। उसने उस समय के चालाक आदमियों से परामर्श किया। उस समय जुए का बड़ा प्रचार था। यह निश्चय किया गया कि जुआ खेला जाए। यह ठहरा कि दुर्योधन युधिष्ठिर और उसके भाइयों के साथ जुआ खेले। इसके अनुसार पाण्डवों को अपनी राजधानी हस्तिनापुर में बुलाया गया। उनका बड़ा आथित्य किया गया और जब वे खेल में रम गए तो एक विशेष प्रकार का जुआ खेला गया। पाण्डवों के हृदय में ईमानदारी थी। उनको यह कभी कल्पना भी नहीं थी कि वे धोखेबाज लोगों के साथ जुआ खेल रहे हैं। इसलिए वे धन, राज्य और सर्वस्व खो बैठे। दुर्योधन उनको नष्ट करना चाहता था। इसलिए उसने अपना समग्र ध्यान जुए पर केन्द्रित रक्खा। फिर अन्तिम बाजी लगाई गई जो यह थी कि यदि पाण्डव जीत जाएं तो जो कुछ वे हार चुके हैं वह उन्हें फिर प्राप्त हो जाए परन्तु यदि वे हार जाएँ तो वे बारह वर्ष के लिए घर छोड़कर जायें और साधु भेष में जंगलों में घूमें और पशु और पक्षियों के साथ निवास करें। इस समय के व्यतीत होने पर वे किसी नगर में जाएं और वे एक वर्ष तक जीविका कमाएँ परन्तु वे अज्ञात रहें। यदि यह शर्त पूरी न हो तो फिर उतने ही समय के लिए वे पुनः वन में जाएँ और पूर्ववत् कष्ट भोगें। खेल फिर शुरू हुआ। पासे उनके विपरीत पड़े और वे हार गए। इसलिए जुए की शर्त के अनुसार पाँचों भाई अपने देश से निकलकर बारह वर्ष तक वन में रहे। तेरहवें वर्ष में वे वेन राजा के राज्य में पहुंचे जो दक्षिण का एक जिला है। वहां उन्होंने एक वर्ष इस भाँति व्यतीत किया कि यद्यपि दुर्योधन ने उनको बहुत ही तलाश करवाया परन्तु उनका पता न चला।

निश्चित समय के अन्त में उन्होंने वसुदेव के पुत्र कृष्ण को अपना दूत बनाकर राज्य की वापसी की माँग करने के लिए भेजा। दुर्योधन ने यह शिकायत

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

की कि शर्त पूरी नहीं हुई है। उसके चरित्र में ईमानदारी नहीं थी। इसलिए उसने समझौते की शर्त पूरी नहीं कीं। पाण्डवों का हाल-चाल देश के सब सामन्तों को ज्ञात हो गया और निश्चय किया गया कि युद्ध किया जाए। पाण्डवों ने अपनी सेना एकत्र की और दोनों विरोधी सेनाएँ कुरुक्षेत्र के मैदान में एक-दूसरे के सामने आईं। यह थानेश्वर के निकट स्थित है। यह घटना कलियुग के आरम्भ काल की है। दोनों सेनाएँ युद्ध के नियमों के अनुसार व्यवस्थित हुईं और युद्ध आरम्भ हुआ, जो अठारह दिन तक चला और ऐसा घमासान युद्ध हुआ कि विजयी और पराजित का अन्तर नहीं मालूम होता था। परन्तु दुष्ट लोगों का अन्त लज्जाजनक होता है, इसलिए अन्त में दुर्योधन और उसके साथी दबा दिए गए और धराशायी हो गए। हिन्दुओं का विश्वास है कि इस युद्ध में कौरवों की ओर ग्यारह कुशाण (अक्षौहिणी) थे और पांडवों की ओर सात कुशाण। हिन्दू लोग कुशाण शब्द का प्रयोग 21670 हाथियों के लिए, इतने ही रथों के लिए और पैंसठ हजार छः सौ सवारों के लिए और 1,09,625 प्यादों के लिए करते हैं। ऐसा कहा जाता है कि दोनों पक्ष के केवल बारह आदमी जीवित बचे थे। दुर्योधन के चार आदमी बचे थे। पहला कृपाचार्य ब्राह्मण था, जो दोनों पक्ष का गुरु था और सैनिक तथा विद्वान था। दूसरा आदमी द्रोणऋषि का पुत्र अश्वत्थामा था। यह भी दोनों पक्षों का गुरु था। तीसरा यादव कुल का किरातु वर्मा था और चौथा संजय था जो अपनी बुद्धि के लिए धृतराष्ट्र की राजसभा में प्रसिद्ध था। पाण्डवों के आठ आदमी बचे। युधिष्ठिर और उसके शेष भाई। छठा शानक जो यादव कुल का था और जो अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध था। सातवाँ जुजूताष था जो दुर्योधन का सौतेला भाई था, आठवाँ कृष्ण था जिसके यश का प्रकाश अवर्णनीय है परन्तु उसके विषय में थोड़ा ही लिखा जाएगा।

कृष्ण का जन्म मथुरा में हुआ था। उसके विषय में हिन्दुओं में विभिन्न प्रकार के विचार प्रचलित हैं। कुछ लोग कहते हैं कि वह संसार में सबसे बड़ा दुष्ट था और "आदम" के पुत्रों में सबसे अधिक चालाक और धोखेबाज था। कुछ लोगों का विश्वास है कि वह बड़ा दार्शनिक था। कुछ लोग उसको ईश्वर के समान मानते हैं। यह सर्वविदित है कि ज्योतिषियों ने उसकी कुंडली देखकर जान लिया था कि उसका चरित्र अच्छा नहीं होगा और यादवों के राजा कंस को उन्होंने इसकी सूचना भी दे दी थी। उसने आदेश जारी किया था कि कृष्ण को मार दिया जाय। कृष्ण ने ग्यारह वर्ष नन्द के घर में व्यतीत किये जो ग्वाला और दूध बेचने वाला था। अन्त में चालाकियों और युक्तियों से तथा जादू से कृष्ण ने राजा कंस को मारा और कंस के पिता राजा उग्रसेन को राजा बनाया परन्तु वह स्वयं ही खुले तौर पर शासन का संचालन करता था। शनैः-शनैः कपट और द्रोह के द्वारा वह ईश्वर होने का दावा करने लगा। उसके असंगत दावे में कुछ लोगों को विश्वास हो गया। नन्द का घर छोड़कर जाने के बाद बत्तीस वर्ष उसने मथुरा की वैश्याओं में व्यतीत किए।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसकी आश्चर्यजनक लीलाएँ और कार्य बड़े कुख्यात हैं। बिहार और पटना के राजा ने बहुत बड़ी सेना के साथ मथुरा पर चढ़ाई की। वह कृष्ण को मिटा देना चाहता था। मलेच्छ जाति का एक दूसरा राजा, जो कालयवन कहलाता था और जो हिन्दू धर्म को नहीं मानता था, पश्चिम से फिर आक्रमण करने के लिए चला। ऐसा कहा जाता है कि यह राजा अर्बस्तान से आया था। कृष्ण दोनों राजाओं के आक्रमण का सामना नहीं कर सका। इसलिए वह भाग कर द्वारका चला गया जो गुजरात में अहमदाबाद से सौ कोस की दूरी पर समुद्र तट पर स्थित है। वहाँ उसने अपने लिए एक दुर्ग का निर्माण करवाया और उसमें अठहत्तर वर्ष तक निवास किया। उसने अपने छुटकारे के लिए प्रयत्न किया परन्तु वह सफल नहीं हुआ और फिर उसकी आयु 120 वर्ष की हो गई। तब दुर्योधन की माता गान्धारी के द्वेष के कारण उसको कपट से मार डाला गया। कुछ लोगों का विश्वास है कि वह जान-बूझकर निवृत्त हो गया और वह इस समय भी जीवित है।

गांधारी की घृणा का कारण बहुत विचित्र है। इसलिए मैं उसको लिखूंगा। कथा इस प्रकार है—जब गांधारी का प्रसवकाल निकट आया तो उसने विचार किया कि उसका पति धृतराष्ट्र अन्धा है और वह पुत्र को कभी नहीं देख सकेगा। इसलिए अपने पति के प्रति सहानुभूति दिखाने के लिए उसने भी इस पुत्र को नहीं देखना चाहा और अपनी आँखें बाँध लीं। इसलिए जिस दिन दुर्योधन का जन्म हुआ उस दिन उसकी आँखें बँधी हुई थीं और कितने ही वर्ष तक वे इसी प्रकार बँधी रहीं। जब दुर्योधन बड़ा होकर पाण्डवों से युद्ध करने के लिए गया तब तक उसने अपनी आँखें बँधी रक्खीं। जब सेनाएँ एकत्र हुईं और दोनों लड़ने के लिए आगे बढ़े तो एक दिन पहले गांधारी ने अपने पुत्र से कहा, "हे मेरे नेत्रों के प्रकाश, माता-पिता की आँखें उनके पुत्र को सब प्रकार की विपदाओं से बचाती हैं। कल युद्ध का आरम्भ होगा और यदि तुम्हारे कोमल शरीर को इस कवच ने नहीं बचाया तो मुझे भय है कि तुम्हारे ऊपर कोई विपत्ति न आ जाए। इसलिए तुम नंगे होकर मेरे सामने आओ ताकि मैं अपनी आँखें खोलकर तुम्हारे शरीर को देख सकूं।" दुर्योधन ने प्रश्न किया कि वह उसके सामने किस प्रकार उपस्थित हो? तो उसने उत्तर दिया—"हे पुत्र पाण्डवों के समान समझ, बुद्धि, उत्तमता, सत्यता और ईमानदारी में इस संसार में कोई नहीं है। उनके पास जाओ और उनसे पूछो।" दुर्योधन अकेला ही पाण्डवों के पास गया और उन्हें अपने आने का कारण सुनाया। उन्होंने उसका बड़ा आथित्य किया और यद्यपि वे जानते थे कि उनके बीच बड़ी प्रबल शत्रुता है, तो भी उन्होंने अपने हाथ से सत्य का धागा नहीं गिराया और हार्दिकता से बोले—"बच्चा अपनी माँ के गर्भ से नंग्न निकलता है और उसी अवस्था में उसके माता-पिता उसे देखते हैं। तुम्हारी माँ प्रथम बार ही तुम्हें इस संसार में देखेंगीं। इसलिए यह तुम्हारे जीवन का प्रथम दिन है। इसलिए यह उचित है कि तुम बिल्कुल नंगे होकर अपनी माँ के सामने जाओ ताकि वह तुम्हारे समस्त शरीर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

को देख सके और तुम्हें भय से बचा सके।" दुर्योधन विदा लेकर वापस आया। मार्ग में वह कृष्ण से मिला जिसने उससे पूछा कि शत्रु की सेना में इस प्रकार अकेले आने का क्या कारण था ? दुर्योधन ने उसको सूचित किया। कृष्ण ने अपने मन में कहा "कैसी बुरी बात है कि यदि वह पाण्डवों की सलाह पर आचरण करता है तो उसका शरीर पीतल का बन जाएगा और फिर कोई शस्त्र इस पर नहीं चलेगा और वह हमको जीत लेगा।" इसलिए वह जोर से हँसा और कपट के साथ बोला— "अरे सीधे-सादे आदमी, जो लोग अपने शत्रुओं से सलाह लेते हैं और उनकी बात मानते हैं वे वास्तव में विनाश के गर्त में गिरते हैं। ये लोग तुमसे खेल कर रहे हैं। जब तुम उत्पन्न हुए थे तो तुम्हारे अंग प्रत्यंग छोटे और कोमल थे। अब तुम बड़े और बलवान हो गए हो। तुम लज्जित हुए बिना अपनी माँ के सामने कैसे जा सकते हो।" जब दुर्योधन ने यह बात सुनी तो उसको कपट का सन्देह नहीं हुआ। उसने कृष्ण का वस्त्र पकड़कर कहा—"पांडवों ने मुझसे सच बात कही थी परन्तु मैं अपने कन्धों पर लम्बा पटुका डाल लूंगा जिससे मेरे शरीर के गुप्तांग छिप जायेंगे। दुर्योधन ने वैसा ही किया और अपनी माँ के सामने उपस्थित होकर कहा— "देखो मैं खड़ा हूँ, अपनी आँखें खोलो।" उसकी माँ को विश्वास था कि पाण्डवों ने उसको सिखा दिया होगा और उन्होंने कोई अनुचित बात नहीं कही होगी। यह समझकर उसने अपनी आँखें खोलीं। जब उसने तलवार का पटुका देखा तो वह चीख उठी और अचेत होकर गिर गई। जब उसने संज्ञा प्राप्त की तो वह फूट-फूट कर रोई और बोली—"पुत्र क्या पाण्डवों ने तुमको सलाह दी थी कि इस तलवार के पटके की युक्ति करना।" उसने उत्तर दिया कि यह सलाह कृष्ण ने दी थी। तब गांधारी ने हाथ उठाकर प्रार्थना की और अति संतप्त होकर कृष्ण को शाप दिया और फिर शोक से हाथ मलते हुए उससे कहा—"पुत्र, जो स्थान तुमने मेरी आंखों से छिपाया है वहीं तुम्हारे घाव लगेगा और उसी से तुम्हारी मृत्यु होगी।" कृष्ण की घोर कष्ट के बाद मृत्यु हुई जिसका उल्लेख किया जा चुका है।

दुर्योधन की मृत्यु के और कौरवों के उन्मूलन के पश्चात् युधिष्ठिर का हिन्दुस्तान पर और दूसरे स्थानों पर राज्य जम गया और उसने एक राजा की भांति शासन किया। इस घटना के 36 वर्ष पश्चात् ईश्वर की प्रेरणा से उसको संसार की निस्सारता और अस्थिरता पर विश्वास हो गया। इसलिए परलोक में प्रवेश करने से पहले ही उसने सांसारिक अभिमान का परित्याग कर दिया और अपने चार भाइयों के साथ वह एकान्त में चला गया और अन्त में इस संसार से चल बसा।

कौरवों और पाण्डवों ने मिलकर छिहत्तर वर्ष तक राज्य किया। केवल दुर्योधन का शासन छत्तीस वर्ष तक रहा और युद्ध का अन्त हो जाने पर युधिष्ठिर ने समस्त संसार पर 36 वर्ष तक राज्य किया। इस प्रकार सब मिलाकर उनका राज्य 136 वर्ष तक चला। हे भगवान यह कैसी असंगत कहानी है। हिन्दुस्तान के अतिरिक्त सारे संसार के इतिहास में ऐसी घटना नहीं मिल सकती।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्राचीन इतिहासकारों ने लिखा है कि अगले दिनों में अर्जुन के पुत्र के पुत्र हुआ और राजसिंहासन पर बैठकर उसने न्याय और दया के साथ शासन चलाया। उसने पिछली घटनाओं से आगे की घटनाओं के लिए उपदेश लिया और ईश्वर की इच्छा का पालन किया। एक दिन उसके मन में यह जानने की इच्छा हुई कि उसके पूर्वजों में फूट होने का क्या कारण था और उनमें युद्ध हुआ उसकी क्या वास्तविकता थी। उसने उस समय के एक विद्वान भीष्मवैन (वैषमपायन) से प्रश्न किया तो उसने उत्तर दिया कि उसके गुरू व्यास ऋषि ने विविध घटनाओं को आँखों से देखा है और उनके कारणों को वह भली-भाँति जानते हैं। इसलिए अच्छा होगा कि उससे पूछा जाए। तब राजा ने व्यास के प्रति राज्योचित शिष्टता का बर्ताव किया और उनसे ये सब बातें जाननी चाहीं। व्यास ने वृद्धावस्था की निर्बलता के कारण और आध्यात्मिक क्रियाओं में व्यस्त रहने के कारण बात करना छोड़ दिया था परन्तु उसने इस कहानी को लेखबद्ध करके ग्रन्थ का स्वरूप दिया। उसने इसका नाम महाभारत रक्खा जिसका अर्थ लोगों के कहने के अनुसार यह है कि महा अर्थात् बड़ा और भारत अर्थात् युद्ध। इस पुस्तक में महायुद्धों का वर्णन है। इसलिए इसका नाम महाभारत रखा गया। परन्तु इस पर एक आपत्ति है। हिन्दुस्तान की भाषा में भारत का अर्थ युद्ध नहीं होता। इस पुस्तक में उस जाति का इतिहास है जिसका पूर्वज भारत था। इसलिए इस ग्रन्थ का नाम उसके नाम पर रखा गया है और अभ्यास से अ का उच्चारण आ हो गया है परन्तु सच बात ईश्वर ही जाने। इस व्यास को ईश्वर का अंश माना गया है और ऐसा विश्वास है कि यह अब तक जीवित है। कुछ हिन्दुओं का कहना है कि व्यास नामक पुरुष का प्रत्येक द्वापर युग में प्रादुर्भाव होता है और वह मनुष्य जाति में घटने वाली घटनाओं का वर्णन लिखता है। परन्तु अन्य लोगों का विश्वास है कि वह युद्ध के समय ही प्रकट होता है।

यह सब लोग मानते हैं कि व्यास ने वेदों का संकलन किया है। वेद, ब्रह्मा की जिह्वा से निकले हैं और इनकी चार पुस्तकें हैं—(१) ऋृग्वेद, (२) यजुर्वेद, (३) सामवेद, (४) अथर्ववेद। इस कार्य को करने के कारण ही वह व्यास कहलाया क्योंकि इस शब्द का अर्थ संकलन या व्यवस्थापक होता है। दोआब के मध्य में उसका मूल नाम ददीवान (द्वैपायन) था। इस व्यास के विषय में कई आश्चर्यजनक और अविश्वसनीय कहानियाँ हैं परन्तु विस्तार के भय से मैंने उनको यहाँ नहीं दोहराया है। इस आश्चर्यजनक ग्रन्थ में साठ लाख श्लोक हैं। इसको पूर्ण करने के बाद व्यास थानेश्वर के निकट सरस्वती नदी के तट पर चला गया और जब उसका कार्य समाप्त हो गया तो उसने एक भोज दिया जिसमें संसार के प्रत्येक देश और भाग से विद्वान पुरुषों को बुलाया। यह उत्सव लम्बे समय तक चलता रहा और उसने बहुमूल्य दान देकर लोगों को मालामाल कर दिया। साठ लाख श्लोकों को इस प्रकार विभक्त किया गया है। तीस लाख देवताओं के लिए हैं। ये आकाश में रहने वाले देव हैं। पन्द्रह लाख श्लोक सतर (सत्य) लोक के निवासियों के लिए

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हैं। ये ऊपर के संसार में निवास करते हैं। चौदह लाख गन्धर्व लोगों के लिए हैं। ये उत्पन्न किए हुए जीव हैं और प्राणी कहलाते हैं। एक लाख श्लोक उसने मानव जाति के कल्याण के लिए छोड़े हैं। इसने उसको अठारह पर्वों में गुणवान लोगों के हित के लिए विभक्त किया है। ये एक लाख श्लोक इस समय भी मनुष्यों में विद्यमान हैं और यह महाभारत कहलाता है। चौबीस हजार श्लोक कौरव पांडव युद्ध पर हैं। शेष श्लोकों में उपदेश वार्ताएँ, कथाएँ, व्याख्यान और पिछले लोगों के युद्धों और वैमनस्यों का वर्णन है। ब्राह्मण लोगों का विश्वास है कि प्रत्येक युग में कोई पैगम्बर या शिष्य एक ग्रन्थ की रचना करता है और यद्यपि बड़े-बड़े युग व्यतीत हो गए हैं तथापि ये ग्रन्थ अभी तक विद्यमान हैं।

खता, खुतान, चीन और हिन्द के काफिर लोग इस वात के इन्कार करते हैं कि नूह का प्रलय उनके देश तक पहुंचा था, वल्कि उनका इस प्रलय पर बिल्कुल विश्वास नहीं है। कुछ हिन्दुओं का विश्वास है कि ब्राह्मण और क्षत्रिय जातियाँ बड़े प्राचीन-काल से चली आई हैं। इनके अतिरिक्त अन्य ऐसी जातियाँ हैं जिनका द्वापर युग के अन्त में और कलियुग के आरम्भ में उदय हुआ। प्रथम युग में राजपूत नहीं थे उनका आगे के युगों में उदय हुआ। राजा विक्रमाजीत क्षत्रिय था जो मेरे लिखने के 1600 वर्ष पूर्व राज्य करता था। उसकी मृत्यु के वाद राजपूतों के हाथों में शासन सत्ता आई। इसकी प्राप्ति की विधि का वर्णन इस प्रकार किया गया है। ऐसी प्रथा अव भी प्रचलित है कि क्षत्रिय जाति के राजा दिन में अपनी युवतियों से सेवा करवाते हैं और रात्रि में उनको वे चाहें जो करने की अनुमति देते हैं। इसलिए प्रत्येक युवती जिसे चाहे पसन्द कर लेती है और इस प्रकार वच्चे उत्पन्न करती है। इनका सावधानतापूर्वक पालन किया जाता है और ये बड़े-वड़े राजाओं के वच्चे माने जाते हैं। ये अपने आपको कुलीन समझते हैं और राजा के पुत्र कहलाते हैं। यदि इनमें से किसी से पूछा जाए कि वह किसका पुत्र है तो वे सव अपने आपको राजपूत अर्थात् राजा के पुत्र बतलाते हैं क्योंकि राज और राजा का अर्थ एक ही है और पूत का अर्थ पुत्र है। ऐसा लिखा हुआ है कि राजा सूर्य के पुत्र जिसका इतिहास आगे चलकर लिखा जाएगा राजपूत कहलाते थे।

हिन्दुओं का दूसरा विश्वास यह है कि मिट्टी का वना हुआ आदम सृष्टि के आरम्भ में था और अव भी उसका अस्तित्व चल रहा है। यह संसार कदीम या प्राचीन है और कभी लुप्त नहीं होता। परन्तु बुद्धिमान लोगों से यह वात छिपी हुई नहीं है कि सृष्टि उत्पन्न हुई तव से अर्थात् आठ लाख वर्ष पहले से अव तक कितने ही हजार आदम उत्पन्न होकर लुप्त हो चुके हैं। अपवाद केवल जानबिन अबुलजान है जिसका इतिहास कुरान में दिया हुआ है। परन्तु वह मिट्टी का बना हुआ नहीं था। कोई वायु का और कोई अग्नि का बना हुआ था परन्तु यह जाति हमेशा विद्रोह और आज्ञोल्लंघन किया करती थी। इसलिए ईश्वर ने बदला लिया और इसको नष्ट कर दिया। फिर एक दूसरी जाति उत्पन्न हुई जो मिट्टी की बनी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुई नहीं थी। वास्तव में ऐसा प्रकट होता है कि हिन्दू इन लोगों को मिट्टी के बने हुए मानते थे परन्तु यह कैसे हो सकता है क्योंकि इन लोगों की आयु और उनके शरीर के परिणाम के विषय में जो बातें हिन्दू लोग कहते हैं और राम-लक्ष्मण और अन्य लोगों की आश्चर्यकारी और अलौकिक शक्तियों का जो ये वर्णन करते हैं वे साधारण लोगों पर लागू नहीं हो सकतीं। बुद्धि की तुला पर तौलने से ये सब कुछ केवल गप्पें मालूम होती हैं। यदि संयोगवश कोई ऐसे लोग हैं तो वे उस वर्ग के होने चाहिए जिनका उल्लेख किया जा चुका है। अबुल बशर (मनुष्य जाति के पिता) से पहले मिट्टी का बना हुआ कोई आदम नहीं था और आदम के समय से अब तक जब मैं लिख रहा हूँ सात हजार वर्ष से अधिक नहीं हुए हैं इसलिए हिन्दू लोग जो लाखों वर्षों की बातें करते हैं वे अत्युक्ति और असत्य हैं। सच बात यह है कि आबाद संसार के अन्य भागों की भाँति हिन्दुस्तान में भी आदम के वंशज रहते थे। इस बात को इस प्रकार समझाया जा सकता है कि प्रलय के पश्चात् पृथ्वी और आकाश के रचयिता के आदेश से नहू ने अपने पुत्र साम जफेत और हैम को संसार के विभिन्न भागों में भेजा और उन्हें आदेश दिया कि वे कृषि कार्य करें।

नहू के पुत्रों का इतिहास

साम ज्येष्ठ पुत्र था और नहू का प्रतिनिधि था। उसके नौ पुत्र हुए। अर्शद, अर्फखशाद, काई, नूद, यूद, आराम, कव्ता, आद और कहतान उनके नाम थे। अरबिस्तान की सब जातियाँ और उनसे मिले-जुले लोग अपने को इन्हीं के वंशज समझते हैं। इस प्रकार हूद सालीह और अब्रहम अर्फखशाद से निकले हैं। अर्फखशाद का द्वितीय पुत्र कायुभर था जो ईरान के बादशाहों का महापूर्वज था। उसके छः पुत्र थे—सियामक, फार्स, ईराक, तुज, शाम और दमघान। इनमें से सियामक अपने पिता का उत्तराधिकारी हुआ। अन्य पुत्र अलहदा हो गए और जिन-जिन देशों में वे जाकर बसे उन देशों के नाम उन्हीं के नाम पर हो गए। कुछ लोगों का विश्वास है कि नूह के एक पुत्र का नाम अजम था और अजम देश का नाम उसके वंशजों के नाम पर है। सियामक का ज्येष्ठ पुत्र हुशंग था। ईरान के बादशाह यजदर्जिद और शहरयार तक सब उसी के वंशज हैं।

याफत के बच्चे

अपने पिता के आदेशानुसार याफत पूर्व और उत्तर की ओर गया। वहाँ उसके सन्तानें हुईं। उसके ज्येष्ठ पुत्र का नाम तुर्क था। तुर्क, मुगल, उजबेक, चगताई और ईरान तथा अरबेनिया के सब तुर्कमान उसी के वंशज हैं। याफत के दूसरे पुत्र का नाम चिन था। चीन देश का नाम उसी पर रखा गया है। याफत का तृतीय पुत्र अर्देश था। इसके वंशज उत्तर के देशों में अन्धकारमय प्रदेशों तक बस गए। ताजिक और गौर के लोग उसी से निकले हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हाम के वंशजों का वृत्तान्त और हिन्दुस्तान में बसने का संक्षिप्त वर्णन

अपने पिता की आज्ञा से हाम दक्षिण की ओर गया और उस देश को बसाने में लग गया। उसके छः पुत्र उत्पन्न हुए। हिन्द, सिन्ध, जश, अफरन्ज, हुरमुतज, और बूया। दक्षिण के देशों के नाम इनके नामों पर पड़े। हाम का ज्येष्ठ पुत्र हिन्द उस देश में चला गया। इसलिए इसका नाम हिन्द हो गया और वह इस देश में बसने लगा। उसका भाई सिन्ध, सिन्ध में बस गया। वहाँ उसने ठट्ठा और मुलतान नामक नगर बसाए। इनके नाम उसके पुत्रों पर हुए। हिन्द के चार पुत्र थे। (१) पूर्व, (२) बंग, (३) दक्षिण, (४) नहरवाल। ये लोग उन देशों में बस गए जिनके नाम उन्हीं के नामों से प्रसिद्ध हुए। हिन्द के पुत्र दक्षिण के तीन पुत्र थे। इनमें उसने दक्षिण के देश विभक्त कर दिए। इनके नाम महरात, कनहार और तिलंग थे। ये तीनों जातियाँ इस समय भी दक्षिण में हैं। नहरवाल के तीन पुत्र थे—बहरोच, कम्बाच और मालराज। उसने इनके नामों पर इन नगरों के नाम रख दिए। बंग के भी कई पुत्र थे जिन्होंने बंगाल बसाया। पूर्व हिन्द का ज्येष्ठ पुत्र था और उसके बयालीस पुत्र थे। थोड़े ही समय में उनके सन्तानों की संख्या खूब बढ़ गई। उन्होंने अपने में से एक को अपना राजा बना लिया और उसने परिश्रम करके अपने देश में व्यवस्था स्थापित कर दी। उसका नाम किशन था।

किशन के राज्य का इतिहास

यह बात गुप्त नहीं रखी जा सकती कि हिन्द में राजगद्दी पर बैठने वाला प्रथम पुरुष किशन था। यह वह प्रसिद्ध कृष्ण नहीं था जिसके विषय में अद्भुत कहानियाँ कही जाती हैं और जिसके आश्चर्यजनक साहसी कार्यों का वर्णन किया जा चुका है और जिसको ईश्वर का अंश बतलाया जाता है। यह किशन बुद्धिमान विद्वान, वीर और उदार था। उसका शरीर बड़ा विशाल था। वह घोड़े पर नहीं बैठ सकता था। इसलिए उसने खूब विचार करके आदेश दिया कि हाथी और दूसरे जंगली पशुओं को जालों के द्वारा पकड़ा जाए। उसकी युक्ति सफल हो गई और उसे चढ़ने के लिए पशु मिल गए। उसके राज्यकाल में ब्राह्मण नामक कोई पुरुष, जो हिन्द के पुत्र बंग का वंशज था, प्रकट हुआ। वह अति बुद्धिमान और समझदार था। किशन ने उसे अपना मन्त्री बना लिया। उसकी बुद्धि से लकड़ी और लोहे का काम और अन्य कलाएँ उत्पन्न हुईं और कुछ लोग यह भी कहते हैं कि उसी से लिखने और पढ़ने का प्रादुर्भाव हुआ। उन्हीं दिनों में अवध नामक नगर बसाया गया। यह हिन्दुस्तान में सर्वप्रथम नगर था। किशन तहमूरासप का समकालीन था। वह चार सौ वर्ष से अधिक जीवित रहा। उसके राज्यकाल में लगभग दो हजार कस्बे और गाँव बसाए गए। वह सैंतीस पुत्र छोड़कर मरा। ज्येष्ठ पुत्र का नाम महाराज था जो उसका उत्तराधिकारी बना।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किशन के पुत्र महाराज का इतिहास

अपने भाइयों और जाति बन्धुओं की अनुमति से महाराज राजसिंहासन पर बैठा और देश की व्यवस्था करने में और अपने राज्य को जमाने में वह अपने पिता से भी अधिक काम करने लगा। पूर्व के वंशजों को उसने अपने शासन कार्य करने के लिए नियुक्त किया और ब्राह्मण के वंशजों को उसने मन्त्री और लेखक तथा ज्योतिषी और वैद्य नियुक्त किया। एक जाति को उसने व्यापार और कृषि कार्य में लगाया और दूसरी को कला-कौशल और वाणिज्य करने में। वह कृषि कार्य का प्रचार करने में लग गया जिससे हिन्दुस्तान के दूर-दूर के हिस्सों में कृषि होने लगी और कई नगर स्थापित हो गए। इन नगरों में उसने चरित्रवान और ज्ञानवान लोगों को बसाया। ऐसे लोग उसने सब हिस्सों से एकत्र किए। उसने कई मन्दिरों और विद्यालयों का निर्माण करवाया और उनके पास की जमीनों का कर उनके भेंट कर दिया। सन्यासी, योगी और ब्राह्मणों को सत्कार्य और वैज्ञानिक व्यवसायों में लगाया गया। उसका शासन सत्तर वर्ष तक चला। भारतवर्ष का राज्य उसके समय में समृद्धि और कीर्ति के ऊँचे शिखर पर पहुंच गया और जमशेद तथा फरीदून के साम्राज्य की होड़ करने लगा। अपने शासक की स्थिरता और सैनिकों और जनता की सुख वृद्धि के लिए उसने उदार नियम और उपनियम बनाए जिनमें से कुछ पर अब तक व्यवहार होता है। उसने प्रत्येक जाति का अलग-अलग नाम रक्खा जिनमें से इस समय राठौर, चौहान, पंवार आदि मिलते हैं। ईरान के शाहों के साथ उसका मित्रता का सम्बन्ध था। परन्तु उसके भाइयों के पुत्रों में से एक उससे नाराज होकर फरीदून के पास चला गया तो इस भागे हुए आदमी की सहायता करने के लिए शाह अतरूद के पुत्र गुरशास्प को एक वीर सेना के साथ सहायता करने के लिए भेजा। इसलिए गुरशास्प ने हिन्दुस्तान की ओर प्रयाण किया और उस देश को दस वर्ष तक लूटा और बर्बाद किया। महाराज ने अपने भतीजे को अपने राज्य का एक हिस्सा देकर सन्तुष्ट किया और गुरशास्प के द्वारा फरीदून को बहुमूल्य भेंटे भेजीं। उसके शासन के अन्तिम समय में सिंघल द्वीप और कर्नाटक के जमींदार अपनी सेनाओं के सहित आए और उन्होंने दक्खिन के राजा शिवराय को निकाल भगाया। उसने आकर महाराज से सहायता माँगी। तब महाराज ने शिवराय के साथ अपने ज्येष्ठ पुत्र को एक बहुत बड़ी सेना और बड़े-बड़े हाथी लेकर रवाना किया। दक्खिन के जमींदार मिलकर बहुत बड़ी और शक्तिशाली सेना के सहित युद्ध के लिए तैयार हो गए। तब एक भयंकर लड़ाई हुई जिसमें महाराज का पुत्र मारा गया। सब सामान और हाथी लुट गए और शिवराय आहत और पराजित होकर अपनी सेना के साथ भाग गया। इस पराजय की सूचना से महाराज साँप की भाँति बल खाने लगा और दुःख के साथ हाथ काटने लगा क्योंकि अब तक दूर-दूर के जमींदारों में से किसी ने भी जैसे तेलंग, पीगू और मलाबार के राजा ने कभी विद्रोह करने का या आज्ञा भंग करने का साहस नहीं किया था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लगभग इसी समय ईरान के शाह के आदेश से साम नरीमान ने हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने के लिए कूच किया और वह पंजाब तक आ पहुँचा । तब सेनापति मालचन्द बड़ी उत्तम हिन्दुस्तानी सेना साथ लेकर उसका सामना करने के लिए गया । परन्तु वह उसकी गति को नहीं रोक सका । मालचन्द सन्धि के लिए बाध्य हो गया और उसने सोना, जवाहरात और हाथी लेकर चतुर राजपूतों को भेजा और पंजाब, साम नरिमान को देकर उसके सन्धि कर ली । कुछ लेखकों का कहना है कि फरीदून के राज्यकाल से ही पंजाब आजम के बादशाहों के अधिकार में था और गुरशास्प के वंशज जिनमें रुस्तम और उसके पूर्वज गिने जाते थे उनके हाथ में पंजाब, काबुल, जाबुल, सिन्ध और निमरोज जागीर के रूप में थे । मालचन्द बड़ा प्रसिद्ध सेनापति था और मालवा देश का नाम उसी के नाम पर रक्खा गया है । महाराज के पास वापस आकर उसने एक बड़ी सेना के सहित अविलम्ब दक्खिन पर प्रयाण किया । ज्योंही शत्रु को उसके आगमन की सूचना मिली तो उनका दिल बैठने लगा और वे तितर-बितर हो गए । मालचन्द ने उनके विरुद्ध अपनी तलवार का ऐसा प्रयोग किया कि उनका चिन्ह भी शेष नहीं रहा । उसने कई स्थानों पर अपनी सेनाएँ नियत कर दीं और फिर ग्वालियर और बयाना के दुर्ग बनवाए । मालचन्द तेलंगाना और दक्षिण से संगीत शास्त्र अपने साथ लाया । उसने ग्वालियर दुर्ग में अपना बहुत सा समय व्यतीत किया और अपने साथ जो अनेक गायिकायें लाया था उनसे उसके बच्चे उत्पन्न हुए । इसलिए उस देश में संगीत का बहुत प्रचार रहा । सात सौ वर्ष के बाद महाराज की मृत्यु हो गई । वह चौदह पुत्र छोड़कर मरा और उसका ज्येष्ठ पुत्र केशूराज उसका उत्तराधिकारी बना । वह हिन्दुस्तान के कीर्तिमान राजसिंहासन पर बैठा ।

महाराज के पुत्र केशूराज का इतिहास

उसके राज्य के आरम्भ में उसने अपने भाइयों को विभिन्न दिशाओं में सेवा करने के लिए भेजा और उसने स्वयं काल्पी के मार्ग से गोंडवाना को प्रयाण किया । फिर उसने दक्खिन का रास्ता लिया और सिंघल द्वीप की सीमा तक पहुंच गया । वहाँ उसने विद्रोही राजाओं से कर प्राप्त किया और विभिन्न जातियों का दमन करने के लिए प्रयास किया । जब वह वापस आ गया तो दक्खिन के जमींदारों ने एक होकर विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया । प्रतिदिन उनकी संख्या बढ़ने लगी और वे ऐसे शक्तिशाली हो गए कि केशूराज के लिए खतरा उत्पन्न हो गया । वह उनका सामना नहीं कर सका । इसलिए सन्धि करके वह वापस घर आ गया । फिर उसने मीनूचिहर को पत्र और अनेक भेंटें भेजीं और सहायता के लिए प्रार्थना की । तब मीनूचिहर ने एक बड़ी शक्तिशाली सेना के सहित शाम नरीमान को भेजा । अपने साथी से मिलने के लिए केशूदाज जालंधर गया और उसका सत्कार करके फिर उसने उसके साथ दक्खिन की ओर प्रयाण किया । ईरान की सेना के आगमन से दक्खिन के राजा भयभीत हो गए । इसलिये वह देश पुनः हिन्द के राजा के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अधिकार में आ गया। केशूराज ने साम नरीमान का वड़ा सत्कार किया और उसके साथ वह पंजाव की सीमा तक गया। फिर उसने मीनूचिहर के लिए कई दुर्लभ भेंटें भेजीं। तदनन्तर वह अवध के नगर में निवास करने के लिए चला गया। वहाँ उसने हिन्दुस्तान के राज्य में रक्षा और न्याय प्रचलित किया और लोगों के सुख का प्रवन्ध किया। दो सौ बीस वर्ष राज्य करके वह मर गया और उसका ज्येष्ठ पुत्र उसका उत्तराधिकारी वना।

केशूराज के पुत्र फिरोजराय का इतिहास

फिरोजराय की हिन्दू शास्त्रों में बड़ी अच्छी गति थी। उसको विद्वानों और धार्मिक पुरुषों की संगति से प्रेम था और सवारी या युद्ध की ओर उसका ध्यान नहीं था। उसका धार्मिक पुरुषों की ओर पूरा ध्यान था और गरीबों को वहुत दान दिया करता था। विहार के नगर में दो बार जाकर उसने वहुत दान दिया था। मुनीर नगर का निर्माण उसी के शासनकाल में हुआ था। उसने एक अनुचित कार्य करने का अपराध किया था। जब साम नरीमान की मृत्यु के कारण मीनूचिहर की सरकार निर्वल हो गई तो अवसर देखकर अफरासियार ने उसके विरुद्ध सेना भेज कर उसको हरा दिया। तव फिरोजराय मीनूचिहर साम नरीमान के एहसान को भूल गया और उसने पंजाब की ओर प्रयाण करके उस देश को साम नरीमान के पुत्र जाल से छीन लिया। फिर उसने जालंधर नगर को अपनी राजधानी वनाया और भेंटें लेकर अपने एक राजपूत को अफरासियार की सेवा में भेजा और चाहा कि उसके करद सामन्तों में उसको भी सम्मिलित कर लिया जाए। तव केकूवाद के शासनकाल तक पंजाव हिन्द के राजाओं के अधिकार में रहा। जव दास्तान के पुत्र रुस्तम ने अपने कार्यों के द्वारा ख्याति प्राप्त कर ली तो उसने पंजाव को पुनः प्राप्त करने के लिए प्रयाण किया। फिरोजराय उसके आक्रमण को नहीं रोक सका और तिरहुत की पहाड़ियों में भाग गया। तब सिन्ध, मुल्तान और पंजाव को छीनकर रुस्तम ने तिरहुत की ओर कूच किया। तव डरकर फिरोजराय वन मार्ग से झारखण्ड और गोंडवाना की पहाड़ियों में चला गया। फिर उसने कभी सुख का दिन नहीं देखा। 137 वर्ष राज्य करने के बाद उसकी मृत्यु हो गई।

रुस्तम का सूरज को हिन्दुस्तान का राज्य देना

लोग कहते हैं कि जव फिरोजराय की मृत्यु का समाचार दास्तांन के पुत्र रुस्तम को मिला तो उस मृतक राजा की वेईमानी के कारण उसने राजसिंहासन पर उसके किसी पुत्र को भी बैठने की अनुमति नहीं दी और उसने हिन्दुस्तान के एक सरदार को, जिसका नाम सूरज था, राजा वना दिया। इसने शुरू में ही अधीनता स्वीकार कर ली थी। तव रुस्तम वापस ईरान को लौट गया। सूरज अपनी सत्ता जमाकर शक्तिशाली राजा बन गया। वंगाल के समुद्र तट से दक्खिन की सीमा तक उसके सूवेदार और अधिकारी लोग काम करते थे। वह कृषि का प्रचार करने में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और भवन निर्माण करने में लगा रहता था। उसके शासनकाल में झारखण्ड की पहाड़ियों से एक ब्राह्मण आया और उसकी सेवा में उपस्थित हुआ। वह मन्त्र-शास्त्र में दक्ष था। उसने सूरज को पूर्णतया प्रभावित करके मूर्तिपूजक बना दिया।

मूर्ति-पूजा की स्थापना

लोग कहते हैं कि हिन्द सच्चे परमात्मा की पूजा करता था और आज्ञा मानता था। यही उसने नूह के पुत्र और अपने पिता हाम के विषय में सुना था। उसके वंशजों ने भी पीढ़ी दर पीढ़ी यही प्रथा जारी रक्खी। अन्त में महाराज के शासन-काल में ईरान से एक व्यक्ति आया और उसने सूर्य-पूजा फैलाई। यह पूजा दूर-दूर तक फैल गई और कुछ लोग तारों और आग की पूजा करने लगे। परन्तु जब मूर्ति-पूजा का उदय हुआ तो यह बड़ी जल्दी फैल गई। क्योंकि उस ब्राह्मण ने सूरज से कहा था कि जो कोई अपने पूर्वज की सोना, चांदी या पत्थर की बहुत बड़ी मूर्ति बनाएगा उसको मुक्ति का मार्ग मिलेगा। इसलिए बहुत से लोगों ने अपने पूर्वजों की छोटी और बड़ी मूर्तियाँ बनायीं और लोग उनकी पूजा में लग गए। गंगा के तट पर कन्नौज नगर का निर्माण करके सूरज मूर्ति-पूजा में निरत हो गया। यह भ्रम लोगों में फैल गया और प्रत्येक व्यक्ति अपनी युक्ति के अनुसार मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करने लगा। इस प्रकार नव्वे जातियाँ अपने-अपने ढंग से मूर्ति की पूजा करने लगीं। सूरज ने कन्नौज नगर को अपनी राजधानी बनाकर वहाँ कई वर्ष तक निवास किया। उसके शासन-काल में यह नगर पच्चीस कोस के फासले तक फैल गया। फिर 250 वर्ष तक राज्य करने के बाद सूरज की मृत्यु हो गई। वह केकूवाद का समकालीन था और प्रतिवर्ष उसको खिराज भेजा करता था। वह दास्तान के पुत्र रुस्तम को भी मानता था। उसके साथ उसने बहिन का विवाह किया था और उसको निरन्तर दुर्लभ भेटें भेजा करता था। उसके पैंतीस पुत्र थे जिनमें सबसे बड़ा बाहराज उसका उत्तराधिकारी बना।

सूरज के पुत्र बाहराज के पुत्र का इतिहास

जब बाहराज राजसिंहासन पर बैठा तो उसने एक नगर का निर्माण कराया और अपने नाम पर बाहराज रखा। उसने कई वर्ष तक संगीत का अध्ययन किया। उसके पिता ने अपने पिछले दिनों में बनारस नगर की स्थापना की थी परन्तु वह उसको पूरा नहीं कर सका। अब बाहराज ने बहुत परिश्रम करके उसको पूरा कर दिया। उसकी अपने भाइयों पर बड़ी कृपा और प्रीति थी। उन्हें उपयुक्त जागीरें देकर उसने प्रसन्न किया। कुछ लोगों का कहना है कि सूरज के पुत्रों को अर्थात् अपने भाइयों को बाहराज राजपूत कहने लगा। उसने दूसरी जातियों के भी नाम रखे परन्तु उसने महाराज के नियम रद्द कर दिए जिन पर राज्य टिका हुआ था। इसलिए राजकाज में अव्यवस्था हो गई और सबके दिमाग पागल हो गए। केदार नाम के एक ब्राह्मण ने शिवालिक पहाड़ियों से नीचे आकर उसके विरुद्ध विद्रोह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

खड़ा कर दिया। कुछ लड़ाई के बाद ब्राह्मण ने राज्य पर काबू कर लिया और हिन्द की सत्ता बाहराज के हाथ से जाती रही। उसका शासन 36 वर्ष तक चला।

केदार ब्राह्मण के राज्य का इतिहास

जब इस आदमी ने हिन्द की सत्ता-रूपी दुल्हन को अपने सीने से लगाया तो वह शासन विज्ञान से परिचित था। इसलिए वह एक बड़ा राजा हो गया। वह अपने आपको कैंकोस और कैंखुसरु का सामन्त मानता था और उनको खिराज भेजा करता था। उसने कालिंजर के दुर्ग का निर्माण करवाया। अपने शासन के अन्त में शंकल नामक एक बलवान पुरुष ने कच्छ से आकर विद्रोह खड़ा कर दिया। पहले तो उसने बंग और बिहार पर अपना अधिकार कर लिया। फिर एक विशाल-सेना एकत्र करके केदार के साथ कई युद्ध किए और उस पर विजय प्राप्त की। केदार ने उन्नीस वर्ष राज्य किया।

शंकल के राज्य का इतिहास

राजसिंहासन प्राप्त करने के पश्चात् शंकल ने बड़ा आडम्बर किया। उसने लखनौती नगर की स्थापना की जो गौंड के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। दो हजार वर्ष तक यह नगर बंग के राजाओं की राजधानी बना रहा। परन्तु तैमूर के वंशजों के दिनों में यह स्थान नष्ट हो गया। तब इसके स्थान पर टांडा राजधानी बना। शंकल ने चार हजार हाथियों की, एक लाख सवारों की और चार लाख पैदलों की सेना बनाई। वह बड़ा अभिमानी था और शान से रहता था। उसके समय के अफ़रासियाब ने एक सन्देशवाहक भेजकर खिराज माँगा परन्तु शंकल ने घृणा और उपेक्षा के साथ उसको वापस लौटा दिया। इस पर अफ़रासियाब को बड़ा क्रोध आया और उसने अपने सेनापति पीरान वसिया को पचास हजार भयंकर तुर्कों की सेना के साथ हिन्दुस्तान में भेजा। शंकल ने युद्ध करने का निश्चय करके एक बड़ी सेना एकत्रित की और सामना करने के लिए प्रयाण किया। दोनों सेनाओं का बंगाल की सीमा के निकट कूच की पहाड़ियों में मुकाबला हुआ और युद्ध शुरू हुआ। पूरे दो दिन तक लड़ाई होती रही। तुर्कों ने बड़ी दृढ़ता और वीरता दिखाई और अपने पचास हजार विपक्षियों को तलवार के घाट उतार दिया परन्तु शत्रु की संख्या इतनी अधिक थी कि उन पर इसका कुछ भी असर नहीं हुआ। तुर्कों के पक्ष के सत्रह हजार आदमी मारे गए थे और उनकी स्थिति इतनी बिगड़ चुकी थी कि तीसरे दिन उनको पीछे हटने पर बाध्य होना पड़ा। उनका देश बहुत दूर था और शत्रु बड़े प्रबल थे। इसलिए वे पास की पहाड़ियों में भाग गए और इन्होंने एक दुर्ग पर अधिकार कर लिया। पिरानवासिया ने अपनी दशा का वर्णन एक पत्र में लिखकर कुछ वीर पुरुषों के द्वारा अफ़रासियाब के पास भेजा। पिरान रात-दिन युद्ध करने में लगा हुआ था क्योंकि हिन्दुओं के झुंड चारों ओर से उसे जोर के साथ दबा रहे थे। बाणों की वर्षा करते हुए उन्होंने बलपूर्वक प्रवेश करने का प्रयत्न किया तो सब लोग हैरान हो गए कि इसका अन्त क्या होगा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पिरान वसिया की सहायतार्थ अफरासियाब का हिन्द में आगमन

इस समय अफरासियाव कंकदाज नगर में था जो चीन और खुतन के बीच में स्थित है और जहाँ खान बालिग से एक महीने में पहुँचा जा सकता है। जब पिरान वसिया की स्थिति से उसको अवगत किया गया तो एक लाख चुने हुए सवारों के साथ उसने उसको बचाने के लिए कूच करने का निश्चय किया। बड़ी द्रुतगति से चलता हुआ वह जब आया तो शंकल अपने राजाओं को बुलाकर और बहुत बड़ी सेना एकत्र करके पिरान वसिया को दबा रहा था। अफरासियाव ने तुरन्त ही आक्रमण कर दिया और हिन्दू ऐसे भयभीत हो गए कि वे भूसे की भाँति बिखर गए। उनका सब सामान उसके हाथ में पड़ गया। अपने शत्रु के चंगुल से मुक्त होकर पिरान वसिया अपने स्वामी की सेवा में उपस्थित हुआ। तब अफरासियाव ने शंकल का पीछा किया और जब भी वह उसके निकट पहुँचा तभी उसके आदमियों को क्षति पहुँचाई। शंकल वंग देश के गौंड नगर में भाग गया परन्तु तुर्क लोग उसका ऐसी तेजी से पीछा कर रहे थे कि वहाँ पर वह केवल एक ही दिन ठहर सका और फिर तिरहुत के पहाड़ों में भाग गया। तुर्क लोगों ने वंग देश को ऐसा नष्ट किया कि वहाँ किसी कस्वे का चिन्ह भी शेष नहीं रहा। अफरासियाव को शंकल के विषय में सूचना मिली तो उसने पीछा करने की तैयारी की परन्तु शंकल बहुत ही दब गया था। इसलिए उसने कुछ बुद्धिमान लोगों को अफरासियाव के पास भेजकर क्षमा चाही और अधीनता स्वीकार करने का प्रस्ताव किया। अफरासियाव ने यह बात मान ली तो शंकल उसकी सेवा में उपस्थित हुआ। उसके गले में तलवार लटकी हुई थी और कफन बंधा हुआ था। उसने प्रार्थना की कि उसे साथ-साथ तूरान जाने की इजाजत दी जाए। अफरासियाव ने उसके प्रस्ताव को स्वीकार किया और राजसिंहासन शंकल के पुत्र को प्रदान किया। इस प्रकार अफरासियाव शंकल को अपने साथ ले गया और शंकल ने उसकी स्वामिभक्तिपूर्वक सेवा की। फिर हमावरान के युद्ध में वह रुस्तम के हाथ से मारा गया। शंकल ने 36 वर्ष तक राज्य किया।

अफरासियाब ने शंकल के पुत्र राहत को राजसिंहासन पर बिठाया

राहत बड़ा अच्छा राजा था। उसका राज्य गढ़ी से मालवा तक फैला हुआ था। उसने इस राज्य की आय को तीन भागों में विभक्त किया। एक भाग उसने दान में लगाया और दूसरा भाग अपने पिता के निर्वाह के लिए और अफरासियाब को खिराज देने में खर्च किया और तीसरे से उसने सेना और पशुओं का खर्च चलाया। इस व्यवस्था से उसकी सेना कम हो गई और मालवे के राजा ने, जो उसके अधीन था और उसको खिराज दिया करता था उसकी आज्ञा मानना बन्द करके उसके अधिकारियों से ग्वालियर का किला छीन लिया। राजा राहत ने रोहतास का किला बनवाया था और वहाँ एक बहुत बड़ा मन्दिर बनवाकर वह पूजा किया करता था। वह मालवा के राजा पर सेना चढ़ाकर ले गया परन्तु

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

असफल होकर वापस लौट आया। मरते समय राहत 81 वर्ष राज्य कर चुका था। उसके कोई ऐसा पुत्र नहीं था जिसकी आयु ऐसी हो जब आदमी समझदार हो जाता है। इसलिए उसकी राजधानी कन्नौज में गड़बड़ मच गई। कछावा जाति के एक पुरुष ने, जो मारवाड़ का रहने वाला था, और जिसका नाम महाराज था, विद्रोह करके राजधानी कन्नौज छीन ली और राजा की उपाधि धारण कर ली।

महाराज कछवाह के राज्य का इतिहास

कुछ समय के पश्चात् जब महाराज ने अपनी शक्ति दृढ़ कर ली तो उसने नहरवाला पर अपनी सेना चढ़ाई। उसने जमींदारों से इलाका छीन लिया और व्यापार के लिए समुद्र तट पर बन्दरगाह स्थापित किए। यह जमींदार अहीर लोग थे। वहाँ पर उसने जहाज बनाकर समुद्र पर चलाए और फिर वह वापस लौट गया। चालीस वर्ष राज्य करने के बाद उसकी मृत्यु हो गई। गुश्तास्प उसका समकालीन था जिसको वह प्रतिवर्ष कर भेजा करता था।

कैंदराज के राज्य का इतिहास

कैंदराज महाराज की बहिन का पुत्र था। उसकी इच्छा और अनुमति से वह राजगद्दी पर बैठा। इस समय दास्तान का पुत्र रुस्तम मारा जा चुका था और पंजाब में कुछ अर्से से कोई अच्छा शासक नहीं था। इसलिए कैंदराज वहाँ अपनी सेनाएँ ले गया और उसने आसानी से उस मुल्क पर अपना कब्जा कर लिया। वह बहरा नामक एक प्राचीन नगर में रहता था और वहीं उसने जम्मू दुर्ग का निर्माण करवाया था। इसके अन्दर उसने अपने एक सेवक को, जो गक्खड़ जाति का था और जिसका नाम दुर्ग था, दुर्गरक्षक बनाकर रख दिया। तब से अब तक यह दुर्ग इस जाति के अधिकार में बना हुआ है। कुछ समय के बाद गक्खड़ जाति और चौबेह जाति, जो पंजाब में प्रभावशाली जमींदार हैं, जंगल के निवासियों से और काबुल तथा कंधार के बीच की पहाड़ियों के निवासियों से मिल गये। इन सब साथियों ने मिलकर कैंदराज के विरुद्ध प्रयाण किया। वह इनका सामना नहीं कर सका और उसने पंजाब उनको दे दिया। तब से यह जाति फैलने लगी और इसने प्रत्येक ऐसी पहाड़ी पर जहाँ कोई सरदार रहता था, अधिकार कर लिया। ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय के अफगान इसी जाति के हैं। कैंदराज ने 43 वर्ष तक राज्य किया।

जयचन्द के राज्य का इतिहास

जयचन्द कैंदराज का प्रधान सेनापति था। अपने आपको शक्तिशाली बनाकर वह राजसिंहासन पर बैठ गया। उसके राज्य में बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा। वह राजवंश का नहीं था, इसलिए दुःखी लोगों के साथ उसको सहानुभूति नहीं थी। वह बयाना के दुर्ग में भोग-विलास करता रहा और उसके सैनिक और प्रजाजन नष्ट होते रहे। कितने ही गाँव और कस्बे नष्ट-भ्रष्ट हो गए। उसकी उपेक्षा के परिणामों से हिन्दुस्तान को सँभलने में बड़ा समय लगा। जयचन्द ने 60 वर्ष तक राज्य किया।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दाराव उसका समकालीन था जिसके पास वह प्रतिवर्ष खिराज भेजा करता था। वह कुछ ही वर्ष के वाद एक पुत्र को छोड़कर मर गया जिसकी माता ने उसे गद्दी पर बैठाया और उसकी प्रतिनिधि वनकर शासन का संचालन किया। परन्तु जयचन्द के भाई दिहलू ने कुछ सरदारों के साथ षड्यन्त्र करके वच्चे को अलग कर दिया और राजमुकुट अपने सिर पर रख लिया।

राजा दिहलू के विद्रोह का इतिहास

राजा दिहलू बड़ा साहसी और अपनी प्रजा के प्रति कृपालु था। उसका उद्देश्य लोगों की सुख वृद्धि करना था। उसने देहली नगर वसाया और अपने नाम पर उसका नाम रखा। जव वह चालीस वर्ष तक राज्य कर चुका तो एक व्यक्ति ने, जिसका नाम फुर था और जो कुमायूँ के राजा का रिश्तेदार था; जो उसी मुल्क में रहता था, विद्रोह कर दिया। पहले तो उसने कुमायूँ पर अधिकार किया और फिर कन्नौज के दुर्ग के विरुद्ध प्रयाण किया। तव उसमें और राजा दिहलू में वड़ा युद्ध हुआ जिसमें दिहलू को कैद कर लिया गया और फुर ने उसको रोहतास दुर्ग के कारावास में भेज दिया।

राजा फुर का राज्य

तव तुरन्त ही फुर ने वंग देश पर सेना चढ़ाई और हिन्द महासागर के तट तक अपना राज्य बढ़ा दिया। वह वहुत वड़ा राजा हो गया। मुनव्वरखाँ का कहना है कि उसके वरावर कोई दूसरा राजा नहीं था। जव वह राजसिंहासन पर वैठ गया तो उसने ईरान के शाह को खिराज भेजना वन्द कर दिया। सिंकन्दर ने हिन्दुस्तान पर अपनी सेना चढ़ाई परन्तु फुर अधीन नहीं हुआ। इसलिए सिकन्दर ने अपनी सेना के साथ, जो टिड्डी दल या चींटियों के समान थी, उसका सामना किया। सरहिन्द के निकट एक वहुत वड़ा युद्ध हुआ जिसमें फुर मारा गया। फुर ने 73 वर्ष तक राज्य किया था। यह वात छिपाने की नहीं है कि दक्षिण के राजा भी अव शक्तिशाली वन गए थे और उनके राज्य बढ़ रहे थे। इनमें एक कुलचन्द था जिसने गुलवर्गा नगर वनाया था। दूसरा मिरिच चन्द था जिसने मिरिच नामक नगर वसाया और जिसका नाम उसने अपने ही नाम पर रखा। तीसरा राजा बिजीचन्द था जिसने विजयनगर का निर्माण करवाया और उसे दक्षिण की राजधानी वनाया। इनके अतिरिक्त और भी कई राजा थे परन्तु उन सवके नाम लिखना एक लम्वा काम हो जायगा। जव सिकन्दर हिन्दुस्तान में आया तो यहाँ विदर नाम का एक राजा था। इसने बिदर के दुर्ग का निर्माण करवाया था। राज-बिदर नाम की जाति इस समय भी विद्यमान है और यह दक्षिण की सवसे वहादुर जातियों में गिनी जाती है। यह उसी के वंश में है। भाग्य के विधान से दक्षिण का राज्य स्थापित हो गया है। जव इस राजा ने सिकन्दर के आने की और फुर की मृत्यु का समाचार सुना तो इसने वहुमूल्य भेंटों और हाथियों के साथ अपने पुत्र को सिकन्दर के पास इस उद्देश्य से भेजा कि वह उसके राज्य को विजित न करे और वापस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ईरान लौट जाय। फुर की मृत्यु के और सिकन्दर की वापसी के वाद सिंसारचन्द नामक एक पुरुष ने हिन्दुस्तान का शासन-सूत्र अपने हाथ में ले लिया और थोड़े ही समय में वह समस्त देश का (जहाँ अराजकता फैली हुई थी) स्वामी बन गया। उसने अपनी आँखों से फुर का विनाश देखा था, इसलिए डरकर वह गुदुर्ज को माँगने से पहले ही कर भेज दिया करता था। गुदुर्ज उस समय ईरान का शाह था। सिंसारचन्द का राज्य 70 वर्ष रहा। इसके वाद जूनाह नामक एक व्यक्ति ने वलपूर्वक राजसिंहासन छीन लिया।

जूनाह के विद्रोह

कुछ लोग कहते हैं कि जूनाह फुर की पुत्री का पुत्र था। राजा बनने के पश्चात् उसने वहुत से सत्कार्य किए और उसमें अनेक सद्गुण प्रगट हुए। उसने अपने राज्य की समृद्धि वढ़ाने का प्रयत्न किया और गंगा और जमुना के तटों पर बहुत से कस्वे और गाँव बसाए। उसने न्याय करने के लिए भी वड़ा प्रयत्न किया। वह **अर्धशिर-बा-बगान** का समकालीन था। एक दिन अर्धशिर ने हिन्दुस्तान के विरुद्ध कूच किया और सरहिन्द के समीप तक आ पहुँचा। जूनाह वहुत डर गया और उसके प्रति अधीनता प्रकट करने के लिए वह तुरन्त आगे वढ़ा। उसके खिराज के रूप में मोती, सोना और जवाहरात भेंट किए और अर्धशिर को वापस लौट जाने के लिए राजी कर दिया। तव जूनाह ने वापस कन्नौज जाकर कुछ समय शान्तिपूर्वक व्यतीत किया। नव्वे वर्ष राज्य करके वह दो पुत्रों को छोड़कर मर गया। इनमें से वड़ा पुत्र कल्याणचन्द उसका उत्तराधिकारी बना।

कल्याणचन्द का राज्य

कल्याणचन्द एक क्रूर राजा था और छोटे-छोटे अपराधों के लिए लोगों को प्राणदण्ड दिया करता था। केवल सन्देह होने पर वह निरपराध लोगों की सम्पत्ति छीन लेता था और वलपूर्वक अपनी प्रजा से धन एकत्र करता था। इसलिए लोग दूसरे भागों में जा वसे और हिन्दुस्तान ऊजड़ हो गया। राजधानी कन्नौज की ऐसी बुरी हालत हो गई कि वहाँ केवल राजा और थोड़े से निवासी रह गए। उसके दरवार का वैभव विलीन हो गया और हिन्दुस्तान के राज्य में दुख छा गया। सव ओर राजा शक्तिशाली हो गए। उनका कुछ वर्णन करना आवश्यक है परन्तु हिन्द और कन्नौज के राजाओं की सव वातें लिखना आवश्यक नहीं है। इसलिए मैं राजा विक्रमाजीत के विषय में कुछ लिखूंगा जो मालवे में राज्य करता था।

मालवे के न्यायशील राजा विक्रमाजीत का इतिहास

विक्रमाजीत पंवार जाति का था। उसके विषय में वहुत सी कहानियाँ हिन्दुओं में प्रचलित हैं जिनसे उसका उत्तम चरित्र प्रकट होता है। युवावस्था में वह साधू का वेष धारण करके भक्तों के साथ-साथ अनेक देशों में घूमा और उनके नियमों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

का पालन किया। जब वह पचास वर्ष का हुआ तो ईश्वर के पथ-प्रदर्शन स्वीकार करके अपनी सेना का अध्यक्ष वन गया। सर्वशक्तिमान ईश्वर की इच्छा थी कि उसे उच्च पद प्राप्त हो और वह ईश्वर के सेवकों को राजाओं के अत्याचार और उत्पीड़न से बचाए। दिन-प्रतिदिन उसकी शक्ति और समृद्धि बढ़ती गई और थोड़े ही समय में मालवा और नहरवाल पर उसका अधिकार हो गया। उसने प्रत्येक नगर के निवासियों के प्रति न्याय, कृपा और औचित्य का व्यवहार किया। अत्याचार का दमन किया और लोगों की रक्षा की। हिन्दुओं का विश्वास है कि उसको भविष्य का ज्ञान था और उसकी भविष्यवाणी सत्य होती थी। रात के समय जो बुराई-भलाई या लाभ-हानि उसके राज्य में होती थी वह प्रातःकाल उसके सामने प्रकाशित हो जाती थी। अपने राजसी पद पर होते हुए भी वह अपने लोगों से भाई की भाँति मिला करता था। उसके महल में मिट्टी के बर्तन और मामूली चटाइयाँ थीं। उसके शासन-काल में उज्जैन नगर का निर्माण हुआ था। उसने ही धार का दुर्ग बनवाया था और वहीं पर रहा करता था। उज्जैन के महाकाल का मन्दिर भी उसने बनवाया था। उसने ब्राह्मणों और जोगियों को वृत्तियाँ देकर इस मन्दिर में पूजा के लिए नियुक्त किया था। वह अपना अधिकांश समय सृष्टा और सृष्टि की सेवा में लगाया करता था। लोगों का उस पर अपार विश्वास है और वे उसके विषय में आश्चर्यजनक कहानियाँ कहा करते हैं। दस्तावेजों में उसकी मृत्यु का सम्वत लिखा जाता है। मेरे लिखते समय अर्थात् 1015 हिजरी में उसका 1663वाँ सम्वत है। राजा विक्रमाजीत अरदाशिर का समकालीन था। कुछ लोगों का मत है कि वह शाहपुर के समय में हुआ था। उसके राज्य के अन्तिम दिनों में शालीवाहन नामक एक दक्षिण के जागीरदार ने उसके विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया और उन दोनों में नर्वदा के तट पर युद्ध हुआ जिसमें शालीवाहन विजयी हुआ और विक्रमाजीत मारा गया। विक्रमाजीत के राज्यकाल के विषय में अनेक कथन हैं परन्तु उनमें से कोई भी बुद्धि संगत नहीं है विक्रमाजीत की मृत्यु के पश्चात् बहुत समय तक मालवे की बड़ी दुर्दशा रही और वहाँ कोई न्यायशील और उदार राजा नहीं हुआ। अन्त में भोज नामक एक राजा ने वह राज्य छीन लिया।

राजा भोज का राज्य

यह राजा भी पंवार जाति का था। न्याय और उदारता में उसकी विक्रमाजीत से होड़ थी और लोगों की भाँति वह रात में सोता नहीं था। परन्तु नगर में घूमकर निर्धन लोगों की स्थिति को देखा करता था। अपनी प्रजा की दशा को सुधारने की उसे निरन्तर चिन्ता रहा करती थी। उसी के शासन-काल में गागरोन, बीजागढ़ और हिन्दयाँ नगर का निर्माण हुआ था। स्त्रियों को एकत्र करने का उसे बड़ा शौक था। वर्ष में दो बार वह बड़ा उत्सव करता था। इसमें हिन्दुस्तान के सब भागों से गायक और गायिकाएँ एकत्र होते थे। ये आनन्द प्रमोद चालीस दिन तक चला करता था। इन दिनों में नत्य, संगीत और कथाओं के अतिरिक्त कुछ नहीं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

होता था। इन दिनों में भोजन, शराब और पान सबको राज से मिलते थे और विदा होते समय प्रत्येक व्यक्ति को वस्त्र और दस सुवर्ण मुद्राएँ दी जाती थीं। भोज की मृत्यु पचास वर्ष राज्य करने के बाद हुई। उन दिनों में बासदेव नामक एक राजा कन्नौज के राजसिंहासन पर था। बिहार और बंगाल के देश उससे पहिले कन्नौज के राज्य से निकल गए थे। ये उसने पुनः अपने राज्य में मिला दिए। वह बड़ा शक्तिशाली और प्रतिष्ठावान राजा था। उसके शासन-काल में बहराम गुर व्यापारी का वेश बनाकर हिन्दुस्तान के राज्य के विषय से सचाई जानने के लिए और हिन्दुओं के रीति-रिवाज की जाँच करने के लिए कन्नौज पहुँचा। ऐसा कहा गया है कि उन दिनों में कन्नौज के पड़ौस में एक भयंकर हाथी आया करता था और कोई ऐसा दिन नहीं निकलता था कि उस नगर में आने-जाने वाले लोगों में से कुछ लोगों को वह न कुचल दे। बासदेव ने उसको नष्ट करने के लिए बार-बार प्रयत्न किया परन्तु वह हमेशा असफल हुआ। अब ऐसा हुआ कि जिस दिन बहराम कन्नौज पहुँचा उसी दिन वह हाथी नगर के बाहर के मोहल्लों में आया। उसने बहुत शोर मचाया। राजा ने आदेश दिया कि नगर के द्वार बन्द कर दिए जाएँ। परन्तु बहराम अकेला नगर के बाहर गया और आक्रमण करके उसने लकड़ी के एक ही तीर से उसको मार डाला। नगर के छोटे और बड़े सब लोग जो इस तमाशे को देखने के लिए बाहर गए थे बहराम के चरणों में गिरे और उन्होंने इतना जयजयकार किया कि आकाश गूँज उठा। जब बासदेव ने 'यह बात सुनी तो उसने बहराम को अपने पास बुलाया। जब बहराम राजा के पास पहुँचा तो उसकी सभा के एक सेवक ने जो पिछले वर्ष में कर लेकर बहराम के देश में गया था उसको पहचान लिया और राजा को सूचित किया। तब राजा सिंहासन से उतरा और उसने बहराम का आदर किया। इसके पश्चात् उसे अपनी लड़की ब्याह कर आदरपूर्वक वापस भेज दिया। जीवनपर्यन्त वह प्रतिवर्ष उसको दुर्लभ भेंटें भेजता रहा और सत्तर वर्ष तक राज्य करने पर उसकी मृत्यु हुई। काल्पी का नगर और दुर्ग उसी के राज्यकाल में बने थे। वह बत्तीस पुत्र छोड़कर मरा था। उसकी मृत्यु के बाद दस वर्ष तक राज्य प्राप्त करने के लिए उसके पुत्रों में निरन्तर संघर्ष होता रहा। अन्त में बासदेव के सेनापति ने अन्य सैनिक अधिकारियों की सहायता से राजसिंहासन पर अधिकार कर लिया और वह शक्तिशाली राजा बन गया।

रामदेव राठौर का राज्य

रामदेव राठौर जाति का था। वह बड़ा साहसी, बलवान और दृढ़ पुरुष था। शनैः-शनैः उसने तमाम विद्रोही सामन्तों का दमन कर दिया। उसके घरेलू उत्पात नष्ट हो गए और वह सुरक्षित हो गया। तब एक सेना खड़ी करके उसने मारवाड़ पर कूच किया और कछवाहों की जाति से उस देश को छीनकर उनके स्थान पर उसने अपनी राठौर जाति को स्थापित कर दिया। तब से अब तक यह देश उनके हाथ में है। उसने कछवाहा जाति को वहाँ से हटाकर रोहतास दुर्ग के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समीप बसाया और उस जाति के एक सरदार की लड़की से विवाह किया। इसके पश्चात् उसने लखनौती के विरुद्ध प्रयाण किया और उस पर अधिकार करके उसे अपने भतीजे को दे दिया और वहाँ से बहुत-सा लूट का माल ले गया। तीन वर्ष के अन्त में वह कन्नौज वासस लौटा और वहाँ दो वर्ष तक रहा। फिर उसने मालवे पर सेना चढ़ाई। उसने देश में ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि वहाँ से भूमि-कर आसानी से वसूल होने लगा। तत्पश्चात् उसने अनेक गांव और कस्बे स्थापित किए। उसने नरवर दुर्ग की मरम्मत करवाकर एक राठौर को वहाँ का दुर्गाध्यक्ष बनवाया। फिर उसने बीजानगर के राजा से लड़की माँगी। उस समय शिवराय दक्षिण का शासन करता था। वह रामदेव की शक्ति से भयभीत हो गया और उसने बहुत अच्छा दहेज देकर अपनी लड़की उसको भेज दी। रामदेव दो वर्ष तक गोंडवाड़ा में रहा और उसने अनेक शक्तिशाली जमींदारों को मार डाला। फिर वह कन्नौज लौट आया और वहाँ सात वर्ष तक उसने सुखपूर्वक निवास किया। उसके पश्चात् वह शिवालिक पहाड़ियों में पहुँचा और वहाँ के जमींदारों को अपने अधीन किया। इन पहाड़ियों में कुमाऊँ का राजा सबसे अधिक प्रसिद्ध था उसके पूर्वज वहाँ दो हजार वर्ष से राज्य करते आए थे। उसने बाहर आकर रामदेव से युद्ध किया। प्रातःकाल से सायंकाल तक संघर्ष हुआ। अन्त में विजयश्री रामदेव के हाथ लगी। कुमाऊँ के राजा ने अपने हाथी और सामान को छोड़कर पहाड़ों में शरण ली। रामदेव ने उसकी लड़की और खिराज लेकर उसका देश उसी को दे दिया और फिर उसने नगरकोट की ओर प्रयाण किया। उसने तमाम देश को नष्ट कर डाला और इस प्रकार विनाश करता संकोटपिंडी तक पहुंच गया। वहाँ पहुंचकर वह आगे नहीं बढ़ा क्योंकि नगरकोट के निकट दुर्गा का मन्दिर था जो बड़ा पवित्र माना जाता था। उसने उस स्थान के राजा को बुलाया परन्तु उसने आने से इन्कार किया तब कुछ ब्राह्मणों ने आकर रामदेव को विश्वास दिलाया कि यदि वह स्वयं मन्दिर में चला जाए तो राजा आकर उससे मिलेगा। इस प्रकार दोनों राजाओं की परस्पर भेंटें हुई। रामदेव ने मन्दिर के पुजारियों को बहुत-सा स्वर्ण दान में दिया और राजा से उसकी पुत्री को अपने पुत्र के लिए माँगकर वह जम्मू के दुर्ग की ओर चला। जम्मू के राजा को अपनी सेना के बल पर, दुर्ग की दृढ़ता पर, अपने देश की दुर्गमता पर, जंगल की गहनता और सामान की प्रचुरता पर विश्वास था। इसलिए उसने आत्म-समर्पण नहीं किया और युद्ध के लिए उद्यत हो गया। परन्तु वह रामदेव के सामने नहीं टिक सका और उसकी सेना भाग गई। रामदेव ने उसका पीछा करने के लिए एक सेना रवानी की और उसने स्वयं दुर्ग को घेर लिया और शीघ्र ही जीत लिया। उसने बहुत से आदमी कैद कर लिए और बहुत-सा माल लूट लिया। तत्पश्चात् जम्मू का राजा विनीत होकर उसके पास उपस्थित हुआ। तब रामदेव ने अपने दूसरे पुत्र के लिए राजा की पुत्री माँगी और वहाँ से रवाना हो गया। बेहत नदी से, जो स्वर्गोपम कश्मीर देश से निकलकर पंजाब में आती है, वह बंगाल के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सागर तट की ओर चला जो शिवालिक पहाड़ियों से इतना दूर है कि वहाँ पहुँचने पर पाँच मास लगते हैं। पहाड़ियों में निवास करने वाले लगभग पाँच सौ राजाओं को हराकर उन्हें कर देने पर बाध्य किया। फिर सुवर्ण, रत्न, सामान और हाथियों के साथ वह अपनी राजधानी कन्नौज को लौटा। वहाँ राजसिंहासन पर बैठकर उसने बड़ा उत्सव किया। तब अपने सैनिकों को एकत्र करके उनके वेतन में बीस प्रतिशत की वृद्धि की। अपने वीरों को पुरस्कृत करके उसने लूट का तृतीयांश अपने लोगों में वितरित कर दिया। इसके पश्चात् वह सुखपूर्वक अपने स्थान पर रहा और कभी कहीं नहीं गया। फिर अन्य मरणशील लोगों की भाँति चौवन वर्ष राज्य करके वह मर गया। हिन्दू लोग मानते हैं कि रामदेव से बढ़कर उनमें कोई राजा नहीं हुआ। वह केकूबाद के पुत्र फिरोजशाह कामानी का समकक्ष था और उसको प्रतिवर्ष कर भेजता था और उसकी आज्ञापालन करने से कभी नहीं चूकता था।

प्रतापचन्द सिसोदिया का राज्य

रामदेव की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्रों में झगड़ा खड़ा हो गया और फिर रक्तपात और युद्ध हुआ। कन्नौज राज्य पर अनेक विपत्तियाँ आईं और रामदेव का प्रभूत धनकोष व्यर्थ नष्ट हो गया। रामदेव के एक सेनापति ने, जिसका नाम प्रतापचन्द था, भाइयों के झगड़े से लाभ उठाकर, एक बड़ी सेना तैयार कर ली और कन्नौज को कूच करके उसने बड़ी आसानी से राजसिंहासन पर अधिकार कर लिया। उसका पहला कार्य था रामदेव के उत्तराधिकारियों को समाप्त करना। उसने उनका चिन्ह भी नहीं रहने दिया। फिर उसने उन तमाम जमींदारों का दमन किया जिन्होंने राज्य के विभिन्न भागों में सत्ता की अवहेलना करके शक्ति प्राप्त कर ली थी। इन सब लोगों को अधीन करके वह शक्तिशाली राजा बन गया। वह अपने बहुत से कामों में सफल हुआ। इसलिए वह अपने को महान समझकर दम्भ करने लगा और उसने ईरान के शाहों को खिराज देना बन्द कर दिया। जब नौशेरखाँ ने खिराज प्राप्त करने के लिए एक आदमी को भेजा तो उसको उसने खाली हाथ वापस कर दिया। तब नौशेरखाँ ने ईरान की सेना भेजी और मुहतान तथा पंजाब को दबा दिया। प्रतापचन्द ने त्रस्त होकर अपने बर्ताव पर पश्चाताप किया और क्षमा की याचना की और लूट-खसोट को बन्द करवाने के लिए उसने स्वर्ण और रत्न भेंट स्वरूप भेजे। फिर वह जीवन पर्यन्त प्रतिवर्ष खिराज भेजता रहा। उसकी मृत्यु के पश्चात् विभिन्न भागों के राजा लोगों ने शक्तिशाली होकर बहुत-सा राज्य दबा लिया और उसके बच्चों के लिए थोड़ा-सा राज्य बाकी बचा। अब वे राणा कहलाने लगे क्योंकि हिन्दी भाषा में छोटे से राज्य के राजा को और थोड़ी शक्ति वाले को राणा कहा जाता है। मेरे इस ग्रन्थ को लिखते समय प्रतापचन्द के उत्तराधिकारी राजसत्ता का उपभोग कर रहे हैं परन्तु उनके पास केवल अब कुम्भलमेलू का पहाड़ी प्रदेश और आस-पास का इलाका बाकी रह गया है। चित्तौड़, मन्दसौर और उनके बहुत से इलाके अमीर तैमूर के वंशजों ने जीत लिए हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आनन्द देव राजपूत का राज्य

आनन्द देव बेस जाति का था। राजा प्रतापचन्द की मृत्यु के पश्चात् उसने मालवे में विद्रोह खड़ा कर दिया और दिन-प्रतिदिन उसकी शक्ति बढ़ने लगी। यहाँ तक कि वह मालवा, नहरवाला, महराठ और दक्षिण तथा बरार का स्वामी बन गया। उसने रामगढ़ और माहूर के दुर्गों का निर्माण करवाया। मांडू का दुर्ग भी उसी के समय का है। उसका समकालीन खुसरु परवेज था। वह सोलह वर्ष राज्य करके मर गया। उसी वर्ष मालदेव नामक एक हिन्दू ने दोआव में विद्रोह किया। एक बड़ी सेना खड़ी कर ली और प्रतापचन्द के पुत्रों के हाथों से देहली छीन ली। देहली छीनने के बाद उसने कन्नौज पर सेना चढ़ाई और उसको भी जीत लिया। लोग कहते हैं कि उसके राज्य में कन्नौज की समृद्धि इतनी बढ़ी कि पान बेचने वालों की दुकानें तीस हजार हो गई और गाने बजाने वालों के उस समय साठ हजार घर थे। इन उदाहरणों से शेष समृद्धि का अनुमान किया जा सकता है। मालदेव का बयालीस वर्ष राज्य करने के पश्चात् देहान्त हो गया। उसके कोई पुत्र नहीं था। इसलिए राज्य के प्रत्येक भाग में राजा लोग स्वतन्त्र हो गए। यहाँ तक कि मुसलमानों की महान और कीर्तिवान शक्ति का उदय हुआ, उस समय हिन्दुस्तान के राजसिंहासन पर कोई सार्वदेशिक राजा नहीं था। जब गजनी के सुलतान महमूद ने हिन्दुस्तान के विरुद्ध धर्म युद्ध किया तो कन्नौज में एक राजा राज्य करता था जो कुर कहलाता था। मेरठ का राजा धर्मदत्त, महावन का कुलचन्द, लाहौर का हठपाल का पुत्र जयपाल, और कालिंजर का बाजीराव था। इसी प्रकार मालवा, अजमेर, गुजरात और ग्वालियर में भी विभिन्न राजा थे। मैं इन पर विशेष ध्यान नहीं दूंगा और अब मुसलमान साम्राज्य के उदय और विस्तार का और यहाँ के सुलतान के कार्यों का वर्णन करूँगा।

हिन्दुस्तान में इस्लाम का उदय

इस्लाम का प्रथम नेता जिसने हिन्दुस्तान की भूमि पर पैर रखा और वहाँ के लोगों के साथ जिहाद या धर्मयुद्ध किया वह सफरा का पुत्र मुहलाब था। अट्ठाइस हिजरी में बसरा के सूबेदार उमर के पुत्र अब्दुल्ला ने खलीफा उस्मान के पक्ष से ईरान के विरुद्ध कूच किया क्योंकि खलीफा उमर की मृत्यु के पश्चात् वहाँ के लोगों ने उनकी अधीनता त्याग दी थी। वह वहाँ पर सेना ले गया और विजयी होकर वापस बसरा लौट आया। सन् 30 हिजरी में खलीफा उस्मान ने वलीद अकबा को कूफा के शासन से हटा दिया क्योंकि उसको शराब पीने की आदत थी। उसके बाद उसने आस के पुत्र सईद को नियुक्त किया। उसी वर्ष सईद तबरिस्तान की ओर रवाना हुआ। हसन और हुसैन खलीफों ने भी इस आक्रमण में योग दिया और उनके शुभ प्रभाव से जुर्जान नामक देश, जिसकी राजधानी असतराबाद है, जीत लिया। अपने यहाँ शान्ति रखने के लिए जुर्जान के दो लाख आदमियों ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया और इस प्रकार अपने देश की समृद्धि बढ़ाई। सन् 31 हिजरी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में खलीफा उस्मान ने अब्दुल्ला विन उमर को खुरासान जीतने का आदेश दिया। इसलिए एक बड़ी सेना के सहित किरमान के मार्ग से उसने उस देश के विरुद्ध प्रयाण किया। उसकी सेना का अग्रभाग हनीफबिन केस के नेतृत्व में था। फिर उसने सीस्ता, खुतंग और नईशापुर का दमन किया। तुसका मर्जिवान उसके साथ हो गया और फिर सर्खस, हिरात, वदगीस, गोर, गुर्जिस्तान, मर्व, तालिकान और वलख मुसलमानों के राज्य में आ गए। अब्दुल्ला ने इन तमाम देशों को बहुत थोड़े समय में जीत लिया और फिर उसने खुरासान में केसविन हाशिम को, मर्व, तालिकान, तथा नैशापुर में कैस को और हिरात, गोर, और गुर्जिस्तान में खलीद विन अब्दुल्ला को नियुक्त किया। इन शासकों को वहाँ छोड़कर वह मक्का के पवित्र स्थानों को लौट गया।

सन् 32 हिजरी में उस्मान के नेतृत्व में अब्दुर्रहमान विन रविया वलख में युद्ध करने गया। परन्तु वह और उसके बहुत से आदमी मारे गए। जो उनमें से तलवार से बचे वे जुर्जयान और जिलान में भाग गए। उसी वर्ष आजम के एक अमीर काऊ को मालूम हुआ कि अब्दुल्ला उमर पवित्र स्थानों की यात्रा करने गया और खुरासान में कोई ईरानी मुसलमान नहीं है। तब उसने तवास, हिरात, वदगीस खूतान, गौर और अन्य स्थानों में चालीस हजार आदमी एकत्र करके विद्रोह कर दिया। उस समय अब्दुल्ला अजीम हनीफ के साथ नैशापुर में था और उसके साथ चालीस हजार आदमी थे। उसने इस विद्रोह का दमन किया और इस सेवा के पुरस्कार स्वरूप उसको खुरासान का शासन प्राप्त हुआ।

सन् 44 हिजरी में अबू सूफियान के पुत्र मुआवियाँ ने जियाद विन उम्मैया को बसरा, खुरासान और सीस्तान का हाकिम नियुक्त किया और उसी वर्ष जिहाद की अनुमति से अब्दुर्रहमान विन समर ने काबुल की विजय करके वहाँ के निवासियों को अपने अधीन कर लिया। इसी समय एक बड़ा अरब अमीर मोहलाब विन अबू मर्व सफरा से काबुल और जाबुल आया और फिर वह काफिरों के विरुद्ध जिहाद करने के लिए हिन्दुस्तान गया। उसने दस या बीस हजार लड़कों और लड़कियों को दास बना लिया। उस समय ईश्वर की इच्छा से हिन्दुस्तान के बहुत से लोग मुसलमान हो गए।

सन् 53 हिजरी में जियाद-विन-उमैया की उँगलियों में एक रोग प्रकट हुआ जिससे उसकी मृत्यु हो गई। तब मुआविआ ने उसके पुत्र अब्दुल्ला को कूफा का हाकिम नियुक्त किया। उस समय के बाद उसने मावरौन-नहर की ओर प्रयाण किया और कई नगरों को जीतकर वह वापस आया, तो उसको बसरा का शासन प्राप्त हुआ। उसने अपने आगे खुरासान को अपने हाथ में लेने के लिए इस्लाम-बिन-जिरा-अत-अल-गिलानी को रवाना किया।

सन् 59 हिजरी में मुआविआ ने खुरासान का शासन करने के लिए साद बिन उस्मान अफ्फान को नियुक्त किया। सन् 62 हिजरी में यजीदबिन मुआविआ ने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सलाम विन जियाद को खुरासान और सीस्तां का शासन करने के लिए नियुक्त किया। जिन लोगों को यजीद ने सलाम के साथ भेजा था उनमें अवूसफरा का पुत्र महल्लाव था। उसने अपने छोटे भाई यजीद विन जियाद के पुत्र सलाम को सीस्तां का शासन करने के लिए नियुक्त किया। जव उसने सुना कि कावुल के वादशाह ने विद्रोह करके अरवी हाकिम अव्दुल्ला विन जियाद को कैंद कर लिया है तो एक सेना खड़ी करके उसने तुरन्त ही कावुल के लोगों के विरुद्ध प्रयाण किया। जोरदार लड़ाई के वाद वह हार गया और उसकी बड़ी क्षति हुई। जव इसकी सूचना सलामजियाद को मिली तो उसने तलाह विन अव्दुल्ला विन हनीफ खुजाई को, जो तलाहों का तलाह की उपधि से प्रसिद्ध है, इस उद्देश्य से कावुल भेजा कि पाँच लाख दिरम देकर अवू उवैयदा को छुड़ा लावे। इसके पश्चात् सलाम ने सीस्तां का शासन तलाह को दे दिया। फिर उसने गौर और वादगीस की सेनाएँ कावुल पर चढ़ाईं और वहाँ के लोगों को आज्ञा मानने के लिए वाध्य किया तथा वहाँ शासन करने के लिए खालिद विन अव्दुल्ला को नियुक्त किया। कुछ लोगों का मत है कि वह खालिद वलीद का वंशज था। परन्तु दूसरे लोगों के मतानुसार वह अवू जहल के वंश में था। जव कावुल के शासन से खालिद विन अव्दुल्ला को पृथक किया गया तो मजद के हाकिम के डर से उसने सोचा कि ईराक अजमी में होकर मुसाफिरी करना कठिन और खतरनाक होगा। इसलिए अपनी वीवियों और बच्चों के सहित और कुछ अरव लोगों को साथ लेकर कावुल के कुछ मुखिया लोगों के पथ-प्रदर्शन से वह सुलेमान पहाड़ की ओर चला और वहाँ उसने अपना निवास किया। सुलेमान मुलतान और पेशावर के वीच में स्थित है। उसने अपनी पुत्री का एक ऐसे प्रसिद्ध अफगान के साथ विवाह कर दिया जिसने मुसलमान धर्म स्वीकार कर लिया था। इस स्त्री से पुत्र हुए और उनमें से दो ऐसे व्यक्ति हुए जिन्होंने बड़ी कीर्ति प्राप्त की। इनमें एक लोदी और दूसरा सूर था। लोदी और सूर अफगान जातियाँ इस स्रोत से निकली हैं। मतला उल अनवार नामक ग्रन्थ एक विश्वसनीय लेखक ने लिखा है। मैंने यह पुस्तक खानदेश में वुरहानपुर में देखी थी। इसमें लिखा है कि अफगान लोग फरोह के अमीरों के वंशज हैं। क्योंकि जब पैगम्बर मूसा ने फरोह को हरा दिया तो उसके बहुत से सरदारों ने पश्चात्ताप प्रकट किया और उनको मूसा का धर्म स्वीकार करवाया गया। कुछ सरदार फरोह और उसके ईश्वर के भक्त थे। उनका अज्ञान बहुत बढ़ा हुआ था। इसलिए उन्होंने इस्लाम धर्म त्याग दिया और अपने देश को छोड़कर वे हिन्दुस्तान में चले गए और वहाँ सुलेमान पहाड़ में वस गए। वहाँ उनकी जाति की वड़ी वृद्धि हुई और वे अफगान कहलाने लगे। जव अब्रहा ने कावा पर हमला किया तो दूर-दूर के बहुत से काफिर उसके साथ हो लिए। इनमें अफगान भी थे जो कुछ समय के लिय उसके साथ हो लिए थे। जब वे मक्का पहुंचे तो उन्हें दण्ड मिला और उनका नाश हो गया। मुसलमान अफगान कृषि और अन्य व्यवसाय करके जीविका कमाने लगे। इन लोगों के पास खूब घोड़े, पशु और भेड़ें हो गई। इन लोगों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ने उन मुसलमानों के साथ सम्पर्क और सम्बन्ध स्थापित किया जो मुहम्मद कासिम के साथ सिन्ध में होकर मुलतान चले गए थे और वहाँ बस गए थे।

सन् 143 हिजरी में जब उनके वंशजों की संख्या बहुत बड़ी हो गई तो उन्होंने पहाड़ों से नीचे उतरकर करमाज, पेशावर और शानूरान जैसे हिन्दुस्तानों के कुछ स्थानों पर अपना अधिकार कर लिया। लाहौर के राजा ने जिसका अजमेर के राजा से सम्बन्ध था, उनके आक्रमणों को रोकने का निश्चय किया और एक हजार सवार देकर अपने एक सामन्त को उनके विरुद्ध रवाना किया। उसका सामना करने के लिए अफगान आगे बढ़े और उन्होंने बहुत से हिन्दुओं को मार गिराया। इसके पश्चात् लाहौर के राजा ने दो हजार सवार और पाँच हजार प्यादों के साथ, जो खूब सजे हुए थे, अपने भतीजे को, अतिक्रमण करने वाले अफगानों को रोकने के लिए भेजा। इस अवसर पर खिलज और गौर तथा काबुल के लोगों ने जो इस्लाम की कीर्ति से अब अलंकृत हो चुके थे, अपने देशवासियों की सहायता करना अपना कर्त्तव्य समझा और इस निमित्त उन्होंने चार हजार आदमी रवाना किए। जब ये लोग आकर शामिल हो गए तो प्रतिरोध का झण्डा खड़ा किया गया। पाँच महीने के अन्दर काफिरों के साथ सत्तर लड़ाइयाँ हुईं और बहुत-सी लड़ाइयों में साथियों की विजय हुई। परन्तु जब शीत की दारुणता बढ़ी तो काफिर लोग उसे सहन न कर सके और विपत्ति में पड़ गए। इसलिए संघर्ष छोड़कर वे अपने घरों को लौट गए। शीतकाल के अन्त में लाहौर के राजा के भतीजे ने ताजा सेना के सहित फिर आक्रमण किया। इस अवसर पर भी काबुल और खिलज के लोगों ने सैनिक सहायता दी। दोनों सेनाओं का मुकाबला करमाज और पेशावर के बीच में हुआ। कभी काफिर लोग लड़ाई करके मुसलमानों को पहाड़ियों में धकेल देते थे और कभी मुसलमान लोग आगे बढ़कर काफिरों को तलवार के बल से पीछे हटा देते थे। जब वर्षा ऋतु आई तो काफिरों को सिन्ध नदी के बाढ़ की चिन्ता होने लगी। अब हार जीत का विचार न करके वे अपने घरों को लौट गए। काबुल और खिलज के लोग भी चले गए और जब उनसे कोहिस्तान के मुसलमानों के विषय में प्रश्न किया जाता था और पूछा जाता था कि वहाँ क्या हाल हुआ तो वे उत्तर देते थे कि "इसको कोहिस्तान मत कहो। यह अफगिस्तान है क्योंकि वहाँ अफगानों और झगड़ों के सिवाय कुछ नहीं है।" इस प्रकार यह स्पष्ट है कि उस देश के लोग अपने निवास-स्थान को अपनी भाषा में अफगिस्तान और अपने आपको अफगान कहते हैं। हिन्दुस्तानी लोग उनको पठान कहते है। परन्तु इसका कारण मालूम नहीं है। परन्तु मुझे ऐसा जँचता है कि मुसलमान सुलतानों के राज्य में जब प्रथम बार मुसलमान पटना नगर में पहुँचे और वहाँ रहने लगे तो हिन्दुस्तान के लोग उनको पठान कहने लगे परन्तु सच क्या है इसको ईश्वर ही जानता है।

जब लाहौर के राजा और काफिर गक्खड़ों में सन्धि हो जाने से युद्ध समाप्त हो गया तो गक्खड़ों ने अपने पड़ोसी अफगानों के साथ मेल कर लिया। लाहौर के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

राजा ने सन्धि कर ली और झगड़े का अन्त करने के लिए उसने लम्घानात के कुछ जिले उनको दे दिए और खिलजी जाति को उनके साथ मिला लिया जो अफगानों के प्रारम्भिक दिनों में उस रेतीले मैदानों में वस गए थे। शर्त्त यह थी कि ये लोग सीमा की रक्षा करेंगे और इस्लाम की सेनाओं को हिन्दुस्तान में घुसने से रोकेंगे। अफगानों ने पेशावर के पहाड़ों में एक दुर्ग वनाया और उसका नाम खैबर रखा। उन्होंने रोह के प्रदेश पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। सामानियों की उन्नति के समय अफगान और गक्खड़ों ने उन्हें लाहौर के प्रदेशों को क्षति नहीं पहुँचाने दी। यही कारण है कि सामानी लोग आरम्भ से अन्त तक सिन्ध और भाटिया के मार्ग से घुसे थे। रोह एक विशेष पर्वत का नाम है जो लम्बाई में स्वाद और वाजौर से सीवी कस्वे तक चला गया है। यह सीवी कस्वा भक्खर का है। चौड़ाई में यह हसन अब्दाल से कावुल तक फैला हुआ है। कन्धार इसी प्रदेश में स्थित है।

जव गजनी का सिंहासन अल्पतीगीं को प्राप्त हुआ तो उसके सेनापति सुवुक्तगीन ने लम्घान और मुलतान पर कई हमले किए और वहुत से लोगों को वह वन्दी वनाकर ले गया। अफगान लोग इन आक्रमणों को नहीं सह सके और दुखी होकर उन्होंने लाहौर के राजा जयपाल से सहायता के लिए प्रार्थना की और सुवुक्तगीन के आक्रमणों की शिकायत की। इन हिस्सों में दारुण शीत पड़ता था और जयपाल जानता था कि हिन्दुस्तान की सेना इन पर अपना अधिकार निरन्तर नहीं रख सकती। इसलिए उसने भाटिया के राजा से सलाह लेकर शेख हमीद को वुलाया जिसकी अफगानों में वड़ी प्रतिष्ठा थी और उसको अमीर बना दिया। इस भाँति शेख हमीद को लम्घान और मुलतान के प्रदेश पर अधिकार प्राप्त हो गया और वह अपनी ओर से वहाँ शासन चलाता रहा। इस भाँति उस दिन से अफगानों को अपना ही अमीर मिल गया और उन लोगों का महत्त्व वढ़ गया। जब अल्पतीगीं की मृत्यु हो गई और सुवुक्तगीन उसका उत्तराधिकारी वना तो शेख हमीद ने युद्ध से वचना उचित समझा और सुवुक्तगीन को कहलाया, "मैं और आप दोनों मुसलमान हैं और हम दोनों में एकता का वन्धन है। यदि आप मेरे लोगों को अपने लोग समझें तो यह औचित्य और उदारता का मार्ग होगा। आप अपनी विजयी सेना को यह निर्देश दें कि हिन्दुस्तान पर आक्रमण करते समय हमको जो आपके हितैषी हैं, क्षति न पहुँचाए।" जमाने का रुख देकर सुवुक्तिगीन ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। जयपाल की मृत्यु के पश्चात् सुवुक्तगीन ने शेख हमीद के साथ मित्रता वनाए रखी और मुलतान का इकता उसको प्रदान किया। सुलतान महमूद का तरीका अपने पिता से भिन्न था। उसने अफगान जातियों का दमन किया। उनके नेताओं को मार डाला और उन लोगों से अधीनता और सेवा स्वीकार कराई।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परिशिष्ट 'च'

इस काल के ग्रन्थों पर संदर्भात्मक टिप्पणियाँ

तारीख उल जन्नाबी-अखबारुद दवल

इस ग्रन्थ का शुद्ध नाम बहरूज जक्खाल माना जाता है। इसमें संसार के आरम्भ से 997 (1589 ई०) तक का इतिहास है। डी० हरबीलोट ने कशफुल जनून के लेखक को उद्धृत किया है जो कहता है कि इस इतिहास को कुछ लोग इलमुज जखार कहते हैं और मुसलमानों के पास यह सबसे बड़ा और विस्तृत इतिहास है। हाजी खलीफा लिखता है कि इसके शीर्षक का पता नहीं है परन्तु अखबारुद-दवल इसका बहर के नाम से उल्लेख करता है और कुछ विद्वान लोग इसको अईलेमुज जाखिर फी अहवालुल अवाइल वाअुल अवाखीर के नाम से पुकारते हैं।

इसमें सृष्टि के उत्पत्ति का, पैगम्बरों का, सीरिया निवासियों का, सैबियन लोगों का, यहूदियों का, ईसाइयों का, ईरान के प्राचीन राजवंशों का, यूनान के राजाओं का, मिश्र के सुलतानों का, अरब जातियों का, मुहम्मद का, प्रथम चार खलीफों का, उमई और अब्बासी वंशों का, सीरिया के शासक ममलूकों का और सफरी समानी गौरी गजनवी दिलाभी ववेही सलजुकी, ख्वारिजमशाही, चंगेजखाँ तैमूर और उनके वंशजों का तथा ओटोमन सम्राटों और अन्य लोगों का वृत्तान्त है। आरम्भ में यह ग्रन्थ अरबी भाषा में लिखा गया था फिर लेखक ने इसका तुर्की भाषा में अनुवाद किया और उसी ने इसी भाषा में इसको संक्षिप्त भी कर दिया। इसलिए इसका वृत्तान्त लिखने में कुछ गड़बड़ हो गई है और भूल का दूसरा कारण यह है कि इसी नाम का एक अन्य लेखक है जिसने तैमूर का इतिहास लिखा है।

यह 82 प्रकरणों में विभक्त है और प्रत्येक प्रकरण में भिन्न-भिन्न राजवंश का वृत्तान्त है। यद्यपि हाजी खलीफा ने लिखा है कि कई ऐसे राजवंश जिनका जहानआरा में उल्लेख है इस ग्रन्थ में नहीं दिए गए हैं तथापि इसके समान कोई दूसरा विस्तृत ग्रन्थ नहीं है। इसलिए खलीफा ने इसका बहुत-सा अंश अपने इतिहास में ले लिया है और उसने विभिन्न राजवंशों की संख्या 150 कर दी है। इसके इतिहास का नाम फजला है, वह लिखता है कि अखबारुद दवल व असारुल अव्वल जिसको अहमदबिन युसूफबिन अहमद ने 1008 हिजरी में लिखा था, जियानवी के इतिहास का संक्षेप है और संक्षेपकर्त्ता ने इसमें कुछ अपनी ओर से मिला दिया है और साथ ही जियानवी के दिए हुए कुछ राजवंश छोड़ दिये हैं।

लेखक के नाम के विषय में डीहर्बिलोट भिन्न-भिन्न बातें लिखता है। जियानवी शीर्षक वाले लेख में वह लेखक का नाम अबू मुहम्मद मुस्तफा बिन सईद-बिन सैयद हसनअल हुसैनी लिखता है और तारीख अल जियानवी के नीचे वह लेखक का नाम जियानवी बिन सईद हसन अल रूमी लिखता है। "उरी ने उसका पूरा नाम अबू मुहम्मद मुस्तफा बिन अल सईद सेनान बिन अल सईद अहमद अल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुसैनी अलहशमी अलकर्शी लिखा है। इस लेखक की मृत्यु 999 हिजरी (1591) में हुई। मुझे इस ग्रन्थ की हस्त लिखित प्रति भारतवर्ष में नहीं मिली। परन्तु सरगौर उजले के संग्रह में एक प्रति थी। बहरुल जखार का नाम प्रचलित है और यह मुसलमान सन्तों की जीवनियों के एक भारी ग्रन्थ का शीर्षक है। यह एक वर्तमान संग्रह का भी नाम है जिसको मजूम-उल-मुलूक कहा जाता है।

यह अरबी इतिहास ऑक्सफोर्ड और सेन्टपीटर्सबर्ग में मौजूद है और तुर्की भाषा में इसकी एक प्रति वियना की रायल लाइब्रेरी में है। बोडेलिन में भी दो प्रतियाँ हैं परन्तु इनकी दो जिल्दें हैं एक प्रति में 553 पन्ने हैं। परन्तु इसमें केवल 76 प्रकरण हैं। दूसरी प्रति में 880 पन्ने हैं।

तारीख-ए-हाजी-मुहम्मद कन्धारी

इस ग्रन्थ को फरिश्ता ने अपने सामान्य इतिहास में और बंगाल, सिन्ध के इतिहास में तथा गुजरात के इतिहास में और महमूद गजनी से अकबर के राज्याभिषेक तक खूब उद्धृत किया है। इसलिए प्रत्यक्ष में यह सामान्य इतिहास है। गुलाम बसीत ने भी इसको उद्धृत किया है परन्तु ये उद्धरण किसी दूसरे ग्रन्थ से लिए गए हैं।

शाही हुल अखबार में सरूपचन्द ने हाजी मुहम्मद कन्धारी कृत तारीख-ए-सदरे-जहाँ को उद्धृत किया है और उसके प्रति कृतज्ञता भी प्रकट की है। इसमें उसने दो नामों को गड़बड़ कर दिया है और ऐसी शंका होती है कि शायद उसने ऐसे ग्रन्थों से उद्धरण दे दिए हैं जो उसने कभी देखे भी नहीं होंगे। वर्तमान इतिहासकारों में यह प्रथा चली आई है।

मेरा विचार है कि इस पुस्तक की कोई प्रति इस समय नहीं मिलती। (देखो ब्रिग्ज का फरिश्ता जि० 1, पृ० 52 और 408 जि० 4, पृ० 48, 345 और 401।)

फुतुहुस सलातीन

इस ग्रन्थ के शीर्षक से यह सामान्य इतिहास मालूम होता है। तबकात-ए-अकबरी की भूमिका में इसको उद्धृत किया गया है और इसको एक आधार ग्रन्थ माना गया है। गयासुद्दीन तुगलक के शासन के इतिहास में फरिश्ता ने इससे निम्नलिखित कहानी उद्धृत की है।

"जब सुलतान तिरहुत की पहाड़ियों के निकट पहुँचा तो राजा सेना सहित प्रकट हुआ। परन्तु उसका जंगलों में पीछा किया गया। यह देखकर कि सेना उस जंगल में प्रवेश नहीं कर सकती सुलतान के घोड़े से उतर कर एक कुल्हाड़ी मंगवाई और अपने ही हाथ से एक वृक्ष को काट डाला। यह देखकर सैनिक इस काम में ऐसे उत्साह से लग गए कि जंगल उनके सामने विलीन होता हुआ मालूम होने लगा। अन्त में वे दुर्ग पर पहुँचे जिसके चारों ओर पानी से भरी हुई सात खाइयाँ थीं और जिसकी रक्षा के लिए एक ऊँची दुर्ग प्राचीर थी। सुलतान ने उस स्थान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

को घेर लिया, खाइयों को भर दिया और दीवार को तीन सप्ताह में नष्ट कर दिया। राजा और उसके कुटुम्ब को पकड़ लिया और वहुत सा लूट का माल प्राप्त किया। फिर तिरहुत का शासन अहमदखाँ को दे दिया।

तारीख-ए-हाकिमान-ए-हिन्द

यह हिन्दुस्तान का इतिहास है जिसमें भूमिका, 12 प्रकरण और एक अनुपूरक है।

भूमिका—हिन्दुस्तान के शासक—नोह के पुत्र शेम से आनन्द देव तक।

प्रथम प्रकरण—लाहौर के सुलतान नासिरुद्दीन सुवुक्तगीन से खुसरुशाह के पुत्र खुसरु तक।

द्वितीय प्रकरण—दिल्ली के सुलतान मुईजुद्दीन मुहम्मद साम से अकवर तक।

तृतीय प्रकरण—दक्षिण के सुलतानों पर छः अध्याय, जिनमें कुलबर्गा, वीजापुर, अहमदनगर, तेलिंगाना, वरार और विदर के सुलतानों का वृत्तान्त है।

चतुर्थ प्रकरण—गुजरात के सुलतान।

पाँचवा प्रकरण—मालवा के सुलतान।

छठा प्रकरण—वुरहानपुर के सुलतान।

सातवाँ प्रकरण—बंगाल के सुलतान।

आठवाँ प्रकरण—सिन्ध और ठट्ठा के सुलतान।

नवाँ प्रकरण—मुलतान के शहजादे।

दसवाँ प्रकरण—कश्मीर के सुलतान।

ग्यारहवाँ प्रकरण—मलावार के शासक।

वारहवाँ प्रकरण—हिन्दुस्तान के पवित्र पुरुष।

अनुपूरक—हिन्दुस्तान का वर्णन।

लेखक ज्ञात नहीं है। इस ग्रन्थ में भी वही व्यवस्था है। इसलिए फरिश्ता के ग्रन्थ का यह संक्षेप जान पड़ता है।

तारीख-ए-हैदर राज

यह पुस्तक संसार का अच्छा सामान्य इतिहास है जो 1611 ई० में प्रारम्भ किया गया था और पूरा करने में लेखक को वीस वर्ष लगे। लेखक पूर्वी ईरान का निवासी और फरिश्ता का समकालीन था। वह इस वात को स्वीकार करता है कि वह केवल प्रतिलिपिकार है। वह लिखता है कि उसके भारतीय इतिहास का आधार तारीख-ए-अलफी है जिसमें से उसने कम से कम साठ हजार पंक्तियाँ ली हैं। विलकैन ने गजनवी सम्राटों के इतिहास के अनुवाद में इस लेखक का अपनी टिप्पणियों में वहुत उपयोग किया है और लिखता है कि इस पुस्तक की प्रथम जिल्द में जो वर्लिन की रॉयल लाइब्रेरी में है, 737 पृष्ठों से कम नहीं है और यह जिल्द भी पूरी नहीं है। मैंने हिन्दुस्तान में इस पुस्तक का नाम नहीं सुना है परन्तु निजामुद्दीन अहमद वख्शी ने इसको तारीख-ए-मिर्जा हैदर के नाम से उद्धृत किया है और अपना आधार ग्रन्थ माना है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पारिभाषिक शब्दावली

अग्रिम	Advance	चुस्त	Smart
अधीन	Subordinate	जटिल	Complicated
अंतःपुर	Seraglio	जीवनी	Biography
अपहारी	Usurper	जीविका	Livelihood
अभिशाप	Imprecation	झपटें	Skirmishes
अवसर	Opportunity	टकसाल	Mint
अवयस्क	Minor	टीका	Commentary
आकृतिविज्ञान	Physiognomy	ढोंग	Hypocrisy
अग्न्यांस्त्र	Fire-arms	तुला	Scales, balance
आत्म-प्रशंसा	Self-praise	दमन	Repression
आतिशबाजी	Fire works	दरार	Breach
आतंक	Panic	दुर्गरक्षक	Garrison
आदेश	Order	दूरदर्शिता	Fore-sight
इतिहास	History	धूमकेतु	Comet
इतिहासकार	Historian	नाबालिग	Minor
उपसंहार	Conclusion	नास्तिक	Atheist
उत्तराधिकारी	Heir	निर्णायक	Decisive
उल्लेख	Mention	निष्कर्ष	Conclusion
ऊबड़-खाबड़	Rugged	पतन	Fall
ऐतिहासिक	Historical	पदोन्नति	Promotion
अंगरक्षक	Bodyguard	परिशिष्ट	Appendix
कृषि	Cultivation	पराजय	Defeat
गतिविधि	Movement	पलायन	Flight
गदा	Mace	प्रशासनिक	Administrative
गंधक	Sulphur	प्रहर	Watch
गरेबान	Collar	प्रक्षिप्त	Spurious
गोपनीय	Confidential	पार्श्व	Wing

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पूर्वज	Ancestor
पूरक	Supplementary
बृहस्पति	Jupiter
बंदी	Prisoner
बहरूपिया	Impostor
वालिश्त	Palm
वारूद	Gun powder
वारूदखाना	Magazine
भगोड़ा	Fugitive
मंत्री	Minister
मरणोपरान्त	Posthumous
महत्वाकांक्षा	Ambition
मृग	Antelope
माफी	Semission
मार्गदर्शक	Guide
माँग	Demand
मीनराशि	Pisces
मूर्ति भंजक	Iconoclast
मेष राशि	Aries
यशस्वी	Illustrious
युद्ध-स्थल	Battle-field
राज्यारोहण	Coronation
राजकोष	Exchequer
राजस्व	Revenue
रोजनामचा	Day book
लेखक	Author
लू	Sun stroke
लूट	Booty, spoil
व्यवसाय	Occupation
वंशज	Descendant
वृश्चिक	Scorpion
विद्रोह	Rebel
विद्रोही	Rebellion
विनिमय	Regulation
विलम्वन	Procrastination
विश्वासघात	treachery
स्तम्भ	Pillar
स्थगन	Postponement
स्वामिभक्त	Loyal
संतोषजनक	Satisfactory
संदर्भ	Reference
संदेशवाहक	Messenger
संरचना	Structure
संरक्षण	Patronage
संस्करण	Edition
संस्मरण	Memoirs
सम्पर्क	Contact
संभावना	Possibility
समर्पण	Dedication
सहयोग	Cooperation
सामान्य	General
साम्राज्य	Empire
साहित्य	Literature
सिद्ध	Proved
सुरक्षित	Safe
सेनानायक	Commander
शर्तें	Terms
शत्रु	Enemy
शासन	Reign
हस्तलिखित प्रति	Manuscript
क्षतिपूर्ति	Compensation

7471

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भारतीय राजदूतावास
काठमांडौ 7517

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai